पिछले थालीलें सालों से उर्दू थाषा में ताखों
की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को
बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेवज़ीर तफ़सीर

मआरिफ़ुल क़ुरआन

4

तफ़सीर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह०
(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

Copyright OfflineDeeniApp

पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर

मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन

जिल्द (4)

उर्दू तफ़सीर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

हिन्दी अनुवादक

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (एम. ए. अलीग.)

रीडर अ़ल्लामा इक़बाल यूनानी मैडिकल कॉलेज मुज़फ़्फ़र नगर (उ.प्र.)

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

सर्वाधिकार प्रकाशक के लिए सुरक्षित हैं

****

तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन

हज़रत मौलाना **मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान)

हिन्दी अनुवाद

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी एम. ए. (अ़लीग.)

मौहल्ला महमूद नगर, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 09456095608

जिल्द (4) सूरः आराफ़ —— सूरः हूद

(पारा 9, रुकूअ़ 2 से पारा 12 रुकूअ़ 10 तक)

मार्च 2013

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

بسم الله الرحمن الرحيم

وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيعًا وَلَا تَفَرَّقُوا

WA'A TASIMOO BIHAB LILLAHI JAMEE-'AN WA LAA TAFARRAQOO

समर्पित

○ अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला के कलाम क़ुरआन मजीद के प्रथम व्याख्यापक, हादी-ए-आ़लम, आख़िरी पैग़म्बर, तमाम नबियों में अफ़ज़ल हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नाम, जिनका एक-एक क़ौल व अ़मल कलामें रब्बानी और मन्शा-ए-इलाही की अ़मली तफ़सीर था।

○ दारुल-उलूम देवबन्द के नाम, जो क़ुरआन मजीद और उसकी तफ़सीर (हदीसे पाक) की अ़ज़ीमुश्शान ख़िदमत और दीनी रहनुमाई के सबब पूरी इस्लामी दुनिया में एक मिसाली संस्था है। जिसके इल्मी फ़ैज़ से मुस्तफ़ीद (लाभान्वित) होने के सबब इस नाचीज़ को इल्मी समझ और क़ुरआन मजीद की इस ख़िदमत की तौफ़ीक़ नसीब हुई।

○ उन तमाम नेक रूहों और हक़ के तलाश करने वालों के नाम, जो हर तरह के पक्षपात से दूर रहकर और हर प्रकार की कठिनाईयों का सामना करके अपने असल मालिक व ख़ालिक़ के पैग़ाम को क़ुबूल करने वाले और दूसरों को कामयाबी व निजात के रास्ते पर लाने के लिये प्रयासरत हैं

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

दिल की गहराईयों से शुक्रिया

⚙ मोहतरम जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ साहिब (मालिक फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली) का, जिनकी मुहब्बतों, इनायतों, क़द्रदानियों और मुझे अपने इदारे से जोड़े रखने के सबब क़ुरआन मजीद की यह अहम ख़िदमत अन्जाम पा सकी।

⚙ मेरे उन बच्चों का जिन्होंने इस तफ़सीर की तैयारी में मेरा भरपूर साथ दिया, तथा मेरे सहयोगियों, सलाहकारों, शुभ-चिन्तकों और हौसला बढ़ाने वाले हज़रात का, अल्लाह तआ़ला इन सब हज़रात को अपनी तरफ़ से ख़ास जज़ा और बदला इनायत फ़रमाये। आमीन या रब्बल्-आ़लमीन।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

प्रकाशक के क़लम से

अल्लाह तआला का लाख-लाख शुक्र व एहसान है कि उसने मुझे और मेरे इदारे (**फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली**) को इस्लामी, दीनी और तारीख़ी किताबों के प्रकाशन के ज़रिये दीनी व दुनियावी उलूम की ख़िदमत की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई।

अल्हम्दु लिल्लाह हमारे इदारे से क़ुरआन पाक, हदीस मुबारक और दीनी विषयों पर बेशुमार किताबें शाया हो चुकी हैं। बल्कि अगर यह कहा जाये कि आज़ाद हिन्दुस्तान में हर इल्म व फ़न के अन्दर जिस क़द्र किताबें **फ़रीद बुक डिपो देहली** को प्रकाशित करने का सौभाग्य नसीब हुआ है उतना किसी और इदारे के हिस्से में नहीं आया तो यह बेजा न होगा। कोई इदारा फ़रीद बुक डिपो के मुक़ाबले में पेश नहीं किया जा सकता। यह सब कुछ अल्लाह के फ़ज़्ल व करम और उसकी इनायतों का फल है।

फ़रीद बुक डिपो देहली ने उर्दू, अरबी, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दी और बंगाली अनेक भाषाओं में किताबें पेश करके एक नया रिकॉर्ड बनाया है। हिन्दी ज़बान में अनेक किताबें इदारे से शाया हो चुकी हैं। हिन्दी भाषा हमारी मुल्की ज़बान है। पढ़ने वालों की माँग और तलब देखते हुए तफ़सीरे क़ुरआन के उस अहम ज़ख़ीरे को हिन्दी ज़बान में लाने का फ़ैसला किया गया जो पिछले कई दशकों से इल्मी जगत में धूम मचाये हुए है। मेरी मुराद **तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन** से है। इस तफ़सीर के परिचय की आवश्यकता नहीं, दुनिया भर में यह एक मोतबर और विश्वसनीय तफ़सीर मानी जाती है।

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी ने फ़रीद बुक डिपो के लिये बहुत सी मुफ़ीद और कारामद किताबों का हिन्दी में तर्जुमा किया है। हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी के **इस्लाही ख़ुतबात** की 15 जिल्दें और **तफ़सीर तौज़ीहुल-क़ुरआन** उन्होंने हिन्दी में मुन्तक़िल की हैं जो इदारे से छपकर मक़बूल हो चुकी हैं। उन्हीं से यह काम करने का आग्रह किया गया जिसे उन्होंने क़ुबूल कर लिया और अब अल्हम्दु लिल्लाह यह शानदार तफ़सीर आपके हाथों में पहुँच रही है। हिन्दी भाषा में क़ुरआनी ख़िदमत की यह अहम कड़ी आपके सामने है। उम्मीद है कि आपको पसन्द आयेगी और क़ुरआन पाक के पैग़ाम को समझने और उसको आम करने में एक अहम रोल अदा करेगी।

मैं अल्लाह करीम की बारगाह में दुआ करता हूँ कि वह इस ख़िदमत को क़ुबूल फ़रमाये और हमारे लिये इसे ज़ख़ीरा-ए-आख़िरत और रहमत व बरकत का सबब बनाये आमीन।

ख़ादिम-ए-क़ुरआन

मुहम्मद नासिर ख़ान

मैनेजिंग डायरेक्टर, फ़रीद बुक डिपो, देहली

अनुवादक की ओर से

الحمد لله رب العالمين. والصلوة والسلام على رسوله الكريم. وعلى آله وصحبه اجمعين.

برحمتك يا ارحم الراحمين.

तमाम तारीफ़ों की असल हक़दार अल्लाह तआ़ला की पाक ज़ात है जो तमाम जहानों की पालनहार है। वह बेहद मेहरबान और बहुत ही ज़्यादा रहम करने वाला है। और बेशुमार दुरूद व सलाम हों उस ज़ाते पाक पर जो अल्लाह तआ़ला की तमाम मख़्लूक़ में सब से बेहतर है, यानी हमारे आक़ा व सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम। और आपकी आल पर और आपके सहाबा किराम पर और आपके तमाम पैरोकारों पर।

अल्लाह करीम का बेहद फ़ज़्ल व करम है कि उसने मुझ नाचीज़ को अपने पाक कलाम की एक और ख़िदमत की तौफ़ीक़ बख़्शी। उसकी ज़ात तमाम ख़ूबियों, कमालात, तारीफ़ों और बन्दगी की हक़दार है।

इससे पहले सन् 2003 ईसवी में नाचीज़ ने हकीमुल-उम्मत हज़रत **मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी रह.** का तर्जुमा हिन्दी भाषा में पेश किया जिसको काफ़ी मक़बूलियत मिली, यह तर्जुमा इस्लामिक बुक सर्विस देहली ने प्रकाशित किया। उसके बाद **तफ़सीर इब्ने कसीर मुकम्मल** हिन्दी भाषा में पेश करने की सआ़दत नसीब हुई, जो रमज़ान (अगस्त 2011) में प्रकाशित होकर मन्ज़रे आ़म पर आ चुकी है। इसके अ़लावा **फ़रीद बुक डिपो** ही से मौजूदा ज़माने के मशहूर आ़लिम **शैख़ुल-इस्लाम** हज़रत **मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी** उस्मानी दामत बरकातुहुम की मुख़्तसर तफ़सीर **तौज़ीहुल-क़ुरआन** शाया होकर पाठकों तक पहुँच रही है।

उर्दू भाषा में जो मक़बूलियत क़ुरआनी तफ़सीरों में तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन के हिस्से में आयी शायद ही कोई तफ़सीर उस मक़ाम तक पहुँची हो। यह तफ़सीर हज़ारों की संख्या में हर साल छपती और पढ़ने वालों तक पहुँचती है, और यह सिलसिला तक़रीबन चालीस सालों से चल रहा है मगर आज तक कोई तफ़सीर इतनी मक़बूलियत हासिल नहीं कर सकी।

हिन्द महाद्वीप की जानी-मानी इल्मी शख़्सियत हज़रत **मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब देवबन्दी (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) की यह तफ़सीर क़ुरआनी तफ़सीरों में एक बड़ा क़ीमती सरमाया है। दिल चाहता था कि हिन्दी जानने वाले हज़रात तक भी यह उलूम और क़ुरआनी मतालिब पहुँचें मगर काम इतना बड़ा और अहम था कि शुरू करने की हिम्मत न होती थी।

जो हज़रात इल्मी काम करते हैं उनको मालूम है कि एक ज़बान से दूसरी ज़बान में तर्जुमा करना कितना मुश्किल काम है, और सही बात तो यह है कि इस काम का पूरा हक़ अदा होना बहुत ही मुश्किल है। फिर भी मैंने कोशिश की है कि इबारत का मफ़्हूम व मतलब तर्जुमे में उतर आये। कहीं-कहीं ब्रेकिट बढ़ाकर भी इबारत को आसान बनाने की कोशिश की है। तर्जुमे में जहाँ तक संभव हुआ कोई छेड़छाड़ नहीं की गयी क्योंकि उलेमा-ए-मुहक़्क़िक़ीन ने इस तर्जुमे को इल्हामी तर्जुमा क़रार

दिया है। जहाँ बहुत ही ज़रूरी महसूस हुआ वहाँ आसानी के लिये कोई लफ़्ज़ बदला गया या ब्रकिट के अन्दर मायनों को लिख दिया गया।

अ़रबी और फ़ारसी के शे'रों का मफ़्हूम अगर मुसन्निफ़ की इबारत में आ गया है और हिन्दी पाठकों के लिये ज़रूरी न समझा तो कुछ अश्आ़र को निकाल दिया गया है, और जहाँ ज़रूरत समझी वहाँ अ़रबी, फ़ारसी शे'रों का तर्जुमा लिख दिया है। ऐसे मौक़ों पर अहक़र ने उस तर्जुमे के अपनी तरफ़ से होने की वज़ाहत कर दी है ताकि अगर तर्जुमा करने में ग़लती हुई हो तो उसकी निस्बत साहिबे तफ़सीर की तरफ़ न हो बल्कि उसे मुझ नाचीज़ की इल्मी कोताही गरदाना जाये।

हल्ले लुग़ात और **क़िराअतों का इख़्तिलाफ़** चूँकि इल्मे तफ़सीर पर निगाह न रखने वाले, क़िराअतों के फ़न से ना-आशना और अ़रबी ग्रामर से नावाक़िफ़ शख़्स एक हिन्दी जानने वाले के लिये कोई फ़ायदे की चीज़ नहीं, बल्कि बहुत सी बार कम-इल्मी के सबब इससे उलझन पैदा हो जाती है लिहाज़ा तफ़सीर के इस हिस्से को हिन्दी अनुवाद में शामिल नहीं किया गया।

हिन्दी जानने वाले हज़रात के लिये यह हिन्दी तफ़सीर एक नायाब तोहफ़ा है। अगर ख़ुद अपने मुताले से वह इसे पूरी तरह न समझ सकें तब भी कम से कम इतना मौक़ा तो है कि किसी आ़लिम से सबक़न् सबक़न् इस तफ़सीर को पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं। जिस तरह उर्दू तफ़सीरें भी सिर्फ़ उर्दू पढ़ लेने से पूरी तरह समझ में नहीं आतीं बल्कि बहुत सी जगह किसी आ़लिम से रुजू करके पेश आने वाली मुश्किल को हल किया जाता है, इसी तरह अगर हिन्दी जानने वाले हज़रात पूरी तरह इस तफ़सीर से फ़ायदा न उठा पायें तो हिम्मत न हारें, हिन्दी की इस तफ़सीर के ज़रिये उन्हें क़ुरआन पाक के तालिब-इल्म बनने का मौक़ा तो हाथ आ ही जायेगा। जो बात समझ में न आये वह किसी मोतबर आ़लिम से मालूम कर लें और इस तफ़सीरी तोहफ़े से अपनी इल्मी प्यास बुझायें। अल्लाह का शुक्र भेजिये कि आप तफ़सीर के तालिब-इल्म बनने के अहल हो गये वरना उर्दू न जानने की हालत में तो आप इस मौक़े से भी मेहरूम थे।

फ़रीद बुक डिपो से मेरी वाबस्तगी पच्चीस सालों से है। इस दौरान बहुत सी किताबें लिखने, प्रूफ़ रीडिंग करने और हिन्दी में तर्जुमा करने का मुझ नाचीज़ को मौक़ा मिला है। इदारे के संस्थापक **जनाब मुहम्मद फ़रीद ख़ाँ मरहूम** से लेकर मौजूदा मालिक और मैनेजिंग डायरेक्टर **जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ** तक सब ही की ख़ास इनायतें मुझ नाचीज़ पर रही हैं। मैंने इस इदारे के लिये बहुत सी किताबों का हिन्दी तर्जुमा किया है, हज़रत **मौलाना क़ारी मुहम्मद तैयब** साहिब मोहतमिम दारुल-उलूम देवबन्द की किताबों और मज़ामीन पर किया हुआ मेरा काम सात जिल्दों में इसी इदारे से प्रकाशित हुआ है, इसके अ़लावा **"मालूमात का समन्दर"** और **"तज़किरा अ़ल्लामा मुहम्मद इब्राहीम बलियावी"** वग़ैरह किताबें भी यहीं से शाया हुई हैं। जो किताबें मैंने उर्दू से हिन्दी में इस इदारे के लिये की हैं उनकी तायदाद भी पचास से अधिक है, इसी सिलसिले में एक और कड़ी यह जुड़ने जा रही है।

इस तफ़सीर को उर्दू से मिलती-जुलती हिन्दी भाषा (यानी हिन्दुस्तानी ज़बान) में पेश करने की कोशिश की गयी, हिन्दी के संस्कृत युक्त अलफ़ाज़ से परहेज़ किया गया है। कोशिश यह की है कि मजमूई तौर पर मज़मून का मफ़्हूम व मतलब समझ में आ जाये। फिर भी अगर कोई लफ़्ज़ या

किसी जगह का कोई मज़मून समझ में न आये तो उसको नोट करके किसी आलिम से मालूम कर लेना चाहिये।

तफ़सीर की यह चौथी जिल्द आपके हाथों में है इन्शा-अल्लाह तआ़ला बाक़ी की जिल्दें भी बहुत जल्द आपकी ख़िदमत में पेश की जायेंगी। इस तफ़सीर की तैयारी में कितनी मेहनत से काम लिया गया है इसका कुछ अन्दाज़ा उसी वक़्त हो सकता है जबकि उर्दू तफ़सीर को सामने रखकर मुक़ाबला किया जाये। तब मालूम होगा कि पढ़ने वालों के लिये इसे कितना आसान करने की कोशिश की गयी है। अल्लाह तआ़ला हमारी इस मेहनत को क़ुबूल फ़रमाये और अपने बन्दों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये आमीन।

इस तफ़सीर से फ़ायदा उठाने वालों से आ़जिज़ी और विनम्रता के साथ दरख़्वास्त है कि वे मुझ नाचीज़ के ईमान पर ख़ात्मे और दुनिया व आख़िरत में कामयाबी के लिये दुआ़ फ़रमायें। अल्लाह करीम इस ख़िदमत को मेरे माँ-बाप और उस्ताज़ों के लिये भी मग़फ़िरत का ज़रिया बनाये, आमीन।

आख़िर में बहुत ही आ़जिज़ी के साथ अपनी कम-इल्मी और सलाहियत के अभाव का एतिराफ़ करते हुए यह अ़र्ज़ है कि बेऐब अल्लाह तआ़ला की ज़ात है। कोई भी इनसानी कोशिश ऐसी नहीं जिसके बारे में सौ फ़ीसद यक़ीन के साथ कहा जा सके कि उसके अन्दर कोई ख़ामी और कमी नहीं रह गयी है। मैंने भी यह एक मामूली कोशिश की है, अगर मुझे इसमें कोई कामयाबी मिली है तो यह महज़ अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम, उसके पाक नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये लाये हुए पैग़ाम (क़ुरआन व हदीस) की रोशनी का फ़ैज़, अपनी मादरे इल्मी दारुल-उलूम देवबन्द की निस्बत और मेरे असातिज़ा हज़रात की मेहनत का फल है, मुझ नाचीज़ का इसमें कोई कमाल नहीं। हाँ इन इल्मी जवाहर-पारों को समेटने, तरतीब देने और पेश करने में जो ग़लती, ख़ामी और कोताही हुई हो वह यक़ीनन मेरी कम-इल्मी और नाक़िस सलाहियत के सबब है। अहले नज़र हज़रात से गुज़ारिश है कि अपनी राय, मश्विरों और नज़र में आने वाली ग़लतियों व कोताहियों से मुत्तला फ़रमायें ताकि आईन्दा किये जाने वाले इल्मी कामों में उनसे लाभ उठाया जा सके। वस्सलाम

तालिबे दुआ़

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

79, महमूद नगर, गली नम्बर 6, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 251001

10 मार्च 2013

फ़ोन:- 0131-2442408, 09456095608, 09012122788

E-mail: imranqasmialig@yahoo.com

एक अहम बात

क़ुरआन मजीद के मतन को अ़रबी के अ़लावा हिन्दी या किसी दूसरी भाषा के रस्मुलख़त (लिपि) में बदलने पर अक्सर उलेमा की राय इसके विरोध में है। कुछ उलेमा का ख़्याल है कि इस तरह करने से क़ुरआन मजीद के हर्फ़ों की अदायगी में तहरीफ़ (कमी-बेशी और रद्दोबदल) हो जाती है और उनको भय (डर) है कि जिस तरह इन्जील और तौरात तहरीफ़ का शिकार हो गईं वैसे ही ख़ुदा न करे इसका भी वही हाल हो। यह तो ख़ैर नामुम्किन है, इसकी हिफ़ाज़त का वायदा अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद किया है और करोड़ों हाफ़िज़ों को क़ुरआन मजीद मुँह-ज़बानी याद है।

इस सिलसिले में नाचीज़ **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी** (इस तफ़सीर का हिन्दी अनुवादक) अ़र्ज़ करता है कि हक़ीक़त यह है कि अ़रबी रस्मुलख़त के अ़लावा दूसरी किसी भी भाषा में क़ुरआन मजीद को क़तई तौर पर सौ फ़ीसद सही नहीं पढ़ा जा सकता। इसलिए कि हर्फ़ों की बनावट के एतिबार से भी किसी दूसरी भाषा में यह गुंजाईश नहीं कि वह अ़रबी ज़बान के तमाम हुरूफ़ का मुतबादिल (विकल्प) पेश कर सके। फिर अगर किसी तरह कोई निशानी मुक़र्रर करके इस कमी को पूरा करने की कोशिश भी की जाए तो **'मख़ारिजे हुरूफ़'** यानी हुरूफ़ के निकालने का जो तरीक़ा, मक़ाम और इल्म है वह उस वैकल्पिक तरीक़े से हासिल नहीं किया जा सकता। जबकि यह सब को मालूम है कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ के निकालने में फ़र्क़ होने से अ़रबी ज़बान में मायने बदल जाते हैं। इसलिये अ़रबी मतन की जो हिन्दी दी गयी है उसको सिर्फ़ यह समझें कि वह आपके अन्दर अ़रबी क़ुरआन पढ़ने का शौक़ पैदा करने के लिये है। तिलावत के लिये अ़रबी ही पढ़िये और उसी को सीखिये। वरना हो सकता है कि किसी जगह ग़लत उच्चारण के सबब पढ़ने में सवाब के बजाय अ़ज़ाब के हक़दार न बन जायें।

मैंने अपनी पूरी कोशिश की है कि जितना मुझसे हो सके इस तफ़सीर को आसान बनाऊँ मगर फिर भी बहुत से मक़ामात पर ऐसे इल्मी मज़ामीन आये हैं कि उनको पूरी तरह आसान नहीं किया जा सका, मगर ऐसी जगहें बहुत कम हैं, उनके सबब इस अहम और क़ीमती सरमाये से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। अगर कोई मक़ाम समझ में न आये तो उस पर निशान लगाकर बाद में किसी आ़लिम से मालूम कर लें। तफ़सीर पढ़ने के लिये यक्सूई और इत्मीनान का एक वक़्त मुक़र्रर करना चाहिये, चाहे वह थोड़ा सा ही हो। अगर इस लगन के साथ इसका मुताला जारी रखा जायेगा तो उम्मीद है कि आप इस क़ीमती

ख़ज़ाने से इल्म व मालूमात का एक बड़ा हिस्सा हासिल कर सकेंगे। यह बात एक बार फिर अ़र्ज़ किये देता हूँ कि असल मतन को अ़रबी ही में पढ़िये तभी आप उसका किसी क़द्र हक़ अदा कर सकेंगे। यह ख़ालिक़े कायनात का कलाम है अगर इसको सीखने में थोड़ा वक़्त और पैसा भी ख़र्च हो जाये तो इस सौदे को सस्ता और लाभदायक समझिये। कल जब आख़िरत का आ़लम सामने होगा और क़ुरआन पाक पढ़ने वालों को इनामात व सम्मान से नवाज़ा जायेगा तो मालूम होगा कि अगर पूरी दुनिया की दौलत और तमाम उम्र ख़र्च करके भी इसको हासिल कर लिया जाता तो भी इसकी क़ीमत अदा न हो पाती।

हमने रुकूअ़, पाव, आधा, तीन पाव और सज्दे के निशानात मुक़र्रर किये हैं इनको ध्यान से देख लीजिये।

रुकूअ़	✿	पाव	❖
आधा	●	तीन पाव	▲
सज्दा	◎		

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (मुज़फ़्फ़र नगर उ. प्र.)

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

पेश-लफ़्ज़

वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब मद्द ज़िल्लुहुम की तफ़सीर **'मआरिफ़ुल्-क़ुरआन'** को अल्लाह तआला ने अवाम व ख़्वास में असाधारण मक़बूलियत अता फ़रमाई, और जिल्दे अव्वल का पहला संस्करण हाथों हाथ ख़त्म हो गया। दूसरे संस्करण की छपाई के वक़्त हज़रत मुसन्निफ़ मद्द ज़िल्लुहुम ने पहली जिल्द पर मुकम्मल तौर से दोबारा नज़र डाली और उसमें काफ़ी तरमीम व इज़ाफ़ा अमल में आया। इसी के साथ हज़रते वाला की इच्छा थी कि दूसरी बार छपने के वक़्त पहली जिल्द के शुरू में क़ुरआनी उलूम और उसूले तफ़सीर से मुताल्लिक़ एक मुख़्तसर मुक़द्दिमा भी तहरीर फ़रमायें, ताकि तफ़सीर के मुताले (अध्ययन) से पहले पढ़ने वाले हज़रात उन ज़रूरी मालूमात से लाभान्वित हो सकें, लेकिन लगातार बीमारी और कमज़ोरी की बिना पर हज़रत के लिये बज़ाते ख़ुद मुक़द्दिमे का लिखना और तैयार करना मुश्किल था, चुनाँचे हज़रते वाला ने यह ज़िम्मेदारी अहक़र के सुपुर्द फ़रमाई।

अहक़र ने हुक्म के पालन में और इस सौभाग्य को प्राप्त करने के लिये यह काम शुरू किया तो यह मुक़द्दिमा बहुत लम्बा हो गया, और क़ुरआनी उलूम के विषय पर ख़ास मुफ़स्सल किताब की सूरत बन गई। इस पूरी किताब को 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' के शुरू में बतौर मुक़द्दिमा शामिल करना मुश्किल था, इसलिये हज़रत वालिद साहिब के इशारे और राय से अहक़र ने इस मुफ़स्सल किताब का ख़ुलासा तैयार किया और सिर्फ़ वे चीज़ें बाक़ी रखीं जिनका मुताला तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन के मुताला करने वाले के लिये ज़रूरी था, और जो एक आम पाठक के लिये दिलचस्पी का सबब हो सकती थी। उस बड़े मज़मून का यह ख़ुलासा 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' पहली जिल्द के इस संस्करण में मुक़द्दिमे के तौर पर शामिल किया जा रहा है, अल्लाह तआला इसे मुसलमानों के लिये नाफ़े और मुफ़ीद (लाभदायक) बनाये और इस नाचीज़ के लिये आख़िरत का ज़ख़ीरा साबित हो।

इन विषयों पर तफ़सीली इल्मी मबाहिस (बहसें) अहक़र की उस विस्तृत और तफ़सीली किताब में मिल सकेंगे जो इन्शा-अल्लाह तआला जल्द ही एक मुस्तक़िल किताब की सूरत में प्रकाशित होगी (अब यह किताब 'उलूमुल-क़ुरआन' के नाम से प्रकाशित हो चुकी है)। लिहाज़ा जो हज़रात तहक़ीक़ और तफ़सील के तालिब हों वे उस किताब की तरफ़ रुजू फ़रमायें। व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाह, अ़लैहि तवक्कलतु व इलैहि उनीब।

अहक़र

मुहम्मद तक़ी उस्मानी

दारुल-उलूम कोरंगी, कराची- 14

23 रबीउल-अव्वल 1394 हिजरी

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर के बारे में एक ज़रूरी तंबीह

"मआरिफ़ुल-क़ुरआन" में ख़ुलासा-ए-तफ़सीर सय्यिदी हकीमुल-उम्मत हज़रत थानवी क़ुद्दि-स सिर्रुहू की तफ़सीर "बयानुल-क़ुरआन" से ज़ूँ-का-तूँ लिया गया है। लेकिन उसके कुछ मौक़ों में ख़ालिस इल्मी इस्तिलाहात आई हैं जिनका समझना अ़वाम के लिये मुश्किल है, नाचीज़ ने अ़वाम की रियायत करते हुए ऐसे अलफ़ाज़ को आसान करके लिख दिया है, और जो मज़मून ख़ालिस इल्मी था उसको "मआरिफ़ व मसाईल" के उनवान में लेकर आसान अन्दाज़ में लिख दिया है। वल्लाहुल्-मुस्तआ़न।

बन्दा मुहम्मद शफ़ी

मुख़्तसर विषय-सूची

मआरिफ़ुल-क़ुरआन जिल्द नम्बर (4)

उनवान	पेज
✪ समर्पित	5
✪ दिल की गहराईयों से शुक्रिया	6
✪ प्रकाशक के क़लम से	7
✪ अनुवादक की ओर से	8
✪ एक अहम बात	11
✪ पेश-लफ़्ज़	13
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर के बारे में एक ज़रूरी तंबीह	14
सूरः आराफ़ का बाक़ी हिस्सा	**29**
✪ आयत नम्बर 94-99 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	30
✪ मआरिफ़ व मसाईल	31
✪ आयत नम्बर 100-102 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	36
✪ मआरिफ़ व मसाईल	37
✪ आयत नम्बर 103-110 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	41
✪ मआरिफ़ व मसाईल	42
✪ मोजिज़े और जादू में फ़र्क़	45
✪ आयत नम्बर 111-122 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	47
✪ मआरिफ़ व मसाईल	48
✪ आयत नम्बर 123-127 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	53
✪ मआरिफ़ व मसाईल	54
✪ जादूगरों में ईमानी इन्क़िलाब मूसा अ़लैहिस्सलाम के लाठी वाले और चमकते हाथ के मोजिज़े से भी बड़ा मोजिज़ा था	57
✪ फ़िरऔन पर हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम की दहशत का असर	58
✪ आयत नम्बर 128-132 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	60
✪ मआरिफ़ व मसाईल	61
✪ मुश्किलों व मुसीबतों से छुटकारे का नुस्ख़ा-ए-अक्सीर	62

उनवान	पेज
हुकूमत व सल्तनत हुक्मराँ तब्के का इम्तिहान है	63
आयत नम्बर 133-136 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	66
मआरिफ़ व मसाईल	67
आयत नम्बर 137-141 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	72
मआरिफ़ व मसाईल	73
आयत नम्बर 142 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	77
मआरिफ़ व मसाईल	77
इबादतों में चाँद का हिसाब मोतबर है, दुनियावी मामलों में सूरज के हिसाब की गुंजाईश है	79
नफ़्स की इस्लाह में चालीस दिन-रात को ख़ास दख़्ल है	80
इनसान को अपने सब कामों में तदरीज और आहिस्तगी की तालीम	80
प्रबंधक और ज़िम्मेदार को ज़रूरत के वक़्त अपना उत्तराधिकारी तजवीज़ करना	81
आयत नम्बर 143-145 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	83
मआरिफ़ व मसाईल	84
मूसा अ़लैहिस्सलाम से अल्लाह तआ़ला का कलाम	85
आयत नम्बर 146-151 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	88
मआरिफ़ व मसाईल	89
तकब्बुर इनसान को सही समझ और दीनी उलूम से मेहरूम कर देता है	90
आयत नम्बर 152-156 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	94
मआरिफ़ व मसाईल	96
बाज़े गुनाहों की कुछ सज़ा दुनिया में भी मिलती है	97
सत्तर बनी इस्राईल के चयन और उनके हलाक होने का वाक़िआ	98
आयत नम्बर 157 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	102
मआरिफ़ व मसाईल	103
ख़ातमुन्नबिय्यीन मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और उनकी उम्मत की मख़्सूस सिफ़ात व फ़ज़ाईल	103
तौरात व इंजील में रसूलुल्लाह सल्ल. की सिफ़ात और निशानियाँ	104
क़ुरआन के साथ सुन्नत की पैरवी भी फ़र्ज़ है	111
रसूल की सिर्फ़ पैरवी भी काफ़ी नहीं, अदब व एहतिराम और मुहब्बत भी फ़र्ज़ है	111
आयत नम्बर 158-159 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	114
मआरिफ़ व मसाईल	115

उनवान	पेज
✪ हुज़ूरे पाक की नुबुव्वत तमाम आलम के लिये और ता क़ियामत है, इसी लिये आप पर नुबुव्वत ख़त्म है	115
✪ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की चन्द अहम विशेषताएँ	116
✪ हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की कौम में एक हक् परस्त जमाअ़त	118
✪ आयत नम्बर 160-162 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	121
✪ आयत नम्बर 163-166 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	123
✪ आयत नम्बर 167-169 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	125
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	126
✪ आयत नम्बर 170-171 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	132
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	132
✪ 'दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं' इसका सही मतलब और शुब्हे का जवाब	134
✪ आयत नम्बर 172-174 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	135
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	136
✪ अ़हद-ए-अलस्त की तहक़ीक़	136
✪ बैअ़त लेने की हक़ीक़त	139
✪ अज़ल के अ़हद के बारे में चन्द सवाल व जवाब	142
✪ आयत नम्बर 175-177 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	146
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	146
✪ बनी इस्राईल के एक पेशवा आ़लिम की गुमराही का सबक् लेने वाला वाक़िआ़	147
✪ आयत नम्बर 178-179 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	152
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	152
✪ आयत में काफ़िरों के न समझने, न देखने और न सुनने का मतलब	154
✪ आयत नम्बर 180 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	157
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	157
✪ अस्मा-ए-हुस्ना की वज़ाहत	157
✪ दुआ़ के कुछ आदाब	158
✪ अल्लाह के नामों में टेढ़ी चाल चलने की मनाही और उसकी मुख़्तलिफ़ सूरतें	160
✪ किसी शख़्स को अल्लाह तआ़ला के मख़्सूस नाम से नामित या मुख़ातब करना जायज़ नहीं	161
✪ आयत नम्बर 181-185 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	163
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	163

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 186-187 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	168
✪ मआरिफ़ व मसाईल	169
✪ आयत नम्बर 188-193 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	174
✪ मआरिफ़ व मसाईल	176
✪ आयत नम्बर 194-198 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	181
✪ मआरिफ़ व मसाईल	182
✪ आयत नम्बर 199-202 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	184
✪ मआरिफ़ व मसाईल	184
✪ क़ुरआनी अख़्लाक़ का एक मुकम्मल हिदायत-नामा	184
✪ एक अ़जीब फ़ायदा	187
✪ आयत नम्बर 203-204 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	189
✪ मआरिफ़ व मसाईल	189
✪ क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त ख़ामोश रहकर सुनने के मुताल्लिक़ चन्द ज़रूरी मसाईल	192
✪ आयत नम्बर 205-206 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	194
✪ मआरिफ़ व मसाईल	194
✪ आहिस्ता और आवाज़ से ज़िक्र करने के अहकाम	195
✪ सज्दे के कुछ फ़ज़ाईल और अहकाम	198
सूरः अनफ़ाल	**200**
✪ आयत नम्बर 1	201
✪ सूरत के मज़ामीन	201
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	202
✪ मआरिफ़ व मसाईल	202
✪ आयत की पूरी तफ़सीर	204
✪ लोगों के आपसी इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता की बुनियाद तक़वा और ख़ौफ़-ए-ख़ुदा है	206
✪ आयत नम्बर 2-4 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	208
✪ मआरिफ़ व मसाईल	208
✪ मोमिन की ख़ास सिफ़ात	208
✪ पहली सिफ़त ख़ौफ़-ए-ख़ुदा	208
✪ दूसरी सिफ़त ईमान में तरक़्क़ी	209

उनवान	पेज
✪ तीसरी सिफ़त अल्लाह पर भरोसा	210
✪ चौथी सिफ़त नमाज़ का क़ायम करना	210
✪ पाँचवीं सिफ़त अल्लाह की राह में ख़र्च करना	211
✪ आयत नम्बर 5-6 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	212
✪ मआरिफ़ व मसाईल	212
✪ आयत नम्बर 7-10 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	220
✪ मआरिफ़ व मसाईल	220
✪ आयत नम्बर 11-14 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	225
✪ मआरिफ़ व मसाईल	226
✪ आयत नम्बर 15-19 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	230
✪ मआरिफ़ व मसाईल	232
✪ आयत नम्बर 20-24 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	237
✪ मआरिफ़ व मसाईल	239
✪ आयत नम्बर 25-28 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	245
✪ मआरिफ़ व मसाईल	246
✪ आयत नम्बर 29-33 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	251
✪ मआरिफ़ व मसाईल	253
✪ आयत नम्बर 34-38 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	262
✪ मआरिफ़ व मसाईल	264
✪ आयत नम्बर 39-40 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	268
✪ मआरिफ़ व मसाईल	268
पारा नम्बर 10 (वअ्लमू)	**272**
✪ आयत नम्बर 41 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	273
✪ मआरिफ़ व मसाईल	273
✪ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से की तक़सीम	278
✪ ख़ुम्स में क़रीबी रिश्तेदारों का हिस्सा	279
✪ बदर की लड़ाई के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया गया	280
✪ आयत नम्बर 42-44 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	281
✪ मआरिफ़ व मसाईल	283

उनवान	पेज
आयत नम्बर 45-47 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	288
मआ़रिफ़ व मसाईल	289
जंग व जिहाद में कामयाबी के लिये क़ुरआनी हिदायतें	289
आयत नम्बर 48-49 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	294
मआ़रिफ़ व मसाईल	295
शैतानी धोखा व फ़रेब और उससे बचने का तरीक़ा	297
कामयाबी के लिये सिर्फ़ नीयत ही का सही होना काफ़ी नहीं, उससे पहले रास्ता सीधा होना ज़रूरी है	297
आयत नम्बर 50-53 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	299
मआ़रिफ़ व मसाईल	300
आयत नम्बर 54-58 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	305
मआ़रिफ़ व मसाईल	306
इस्लामी सियासत का पहला क़दम इस्लामी क़ौमियत	308
दूसरा क़दम यहूदियों के साथ समझौता	308
सुलह के समझौते को ख़त्म करने की सूरत	309
अ़हद पूरा करने का एक अ़जीब वाक़िआ़	310
आयत नम्बर 59-62 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	312
मआ़रिफ़ व मसाईल	313
जिहाद के लिये हथियार और जंग के सामान की तैयारी फ़र्ज़ है	313
आयत नम्बर 63-66 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	318
मआ़रिफ़ व मसाईल	319
मुसलमानों का आपस में वास्तविक और पायदार इत्तिफ़ाक़ अल्लाह तआ़ला की इताअ़त-गुज़ारी पर मौक़ूफ़ है	319
आयत नम्बर 67-69 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	323
मआ़रिफ़ व मसाईल	324
आयत नम्बर 70-71 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	331
मआ़रिफ़ व मसाईल	331
आयत नम्बर 72-75 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	335
मआ़रिफ़ व मसाईल	336

उनवान	पेज
सूरः तौबा	**345**

✪ आयत नम्बर 1-5 मय-ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	347
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	348
✪ मक्का फ़तह होने के वक़्त मग़लूब दुश्मनों के साथ बेमिसाल करीमाना सुलूक	352
✪ फ़त्ह-ए-मक्का के वक़्त मुश्रिकों की चार क़िस्में और उनके अहकाम	353
✪ काफ़िरों से समझौते ख़त्म हो जाने पर भी उनको मोहलत देने का करीमाना सुलूक	355
✪ समझौता ख़त्म करने के लिये एक अहम हिदायत	355
✪ ज़िक्र हुई पाँच आयतों से संबन्धित चन्द मसाईल और फ़ायदे	356
✪ काफ़िरों से माफ़ी व दरगुज़र के यह मायने नहीं कि उनके नुक़सान से बचने का एहतिमाम भी न किया जाये	357
✪ आयत नम्बर 6-11 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	360
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	362
✪ इस्लाम के हक़ और सच्चा होने को दलीलों के साथ समझाना उलेमा-ए-दीन का फ़र्ज़ है	363
✪ बाहरी ग़ैर-मुस्लिमों को ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये	363
✪ काफ़िरों के मुक़ाबले में भी सच्चाई पर क़ायम रहें	364
✪ इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने की तीन शर्तें	365
✪ आयत नम्बर 12-16 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	367
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	368
✪ इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों को इस्लाम को बुरा-भला कहने की इजाज़त नहीं	369
✪ आयत नम्बर 17-18 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	372
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	373
✪ सच्चे मुसलमान की दो निशानियाँ	373
✪ किसी ग़ैर-मुस्लिम को हमराज़ दोस्त बनाना दुरुस्त नहीं	373
✪ इस आयत से संबन्धित कुछ और मसाईल	377
✪ आयत नम्बर 19-23 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	379
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	380
✪ अल्लाह का ज़िक्र जिहाद से अफ़ज़ल है	382
✪ उक्त आयतों से संबन्धित चन्द फ़ायदे और मसाईल	384
✪ असल रिश्ता इस्लाम व ईमान का रिश्ता है नसबी व वतनी ताल्लुक़ात सब इस पर क़ुरबान करने हैं	385

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 24 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	386
✪ मआरिफ़ व मसाईल	386
✪ हिजरत से संबन्धित मसाईल	387
✪ सच्चे ईमान की निशानी	388
✪ आयत नम्बर 25-27 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	391
✪ मआरिफ़ व मसाईल	391
✪ हुनैन की फ़तह, हवाज़िन व सक़ीफ़ के सरदारों का मुसलमान होकर हाज़िर होना और क़ैदियों की वापसी	397
✪ हुक़ूक़ के मामले में राय कैसे ली जाये, इसकी तालीम	398
✪ अहकाम व मसाईल	399
✪ पराजित व मग़लूब काफ़िरों के मालों में अ़दल व इन्साफ़ और एहतियात	399
✪ आयत नम्बर 28 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	401
✪ मआरिफ़ व मसाईल	401
✪ मुश्रिकों के मस्जिदे हराम में दाख़िले की मनाही का मतलब	402
✪ आयत नम्बर 29-30 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	407
✪ मआरिफ़ व मसाईल	407
✪ आयत नम्बर 31-35 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	413
✪ मआरिफ़ व मसाईल	414
✪ आयत नम्बर 36-37 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	418
✪ मआरिफ़ व मसाईल	419
✪ अहकाम व मसाईल	423
✪ आयत नम्बर 38-42 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	425
✪ मआरिफ़ व मसाईल	426
✪ दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फ़लत तमाम जुर्मों की बुनियाद है	429
✪ आयत नम्बर 43-52 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	433
✪ मआरिफ़ व मसाईल	435
✪ माक़ूल और नामाक़ूल उज़्र में फ़र्क़	436
✪ तक़दीर पर यक़ीन के साथ तदबीर का इस्तेमाल होना चाहिये, बेतदबीरी का नाम तवक्कुल रखना ग़लत है	439
✪ आयत नम्बर 53-59 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	441
✪ मआरिफ़ व मसाईल	442

उनवान	पेज
✪ क्या सदक़ों का माल काफ़िर को दिया जा सकता है?	443
✪ आयत नम्बर 60 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	444
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	444
✪ सदक़ात के ख़र्च करने की जगहें	444
✪ तीसरा मस्रफ़ 'सदक़े के आ़मिलीन'	448
✪ एक और सवाल- इबादत पर उजरत	451
✪ एक बड़ा फ़ायदा	454
✪ मसला-ए-तमलीक	460
✪ ज़कात अदा करने के मुताल्लिक़ कुछ अहम मसाईल	463
✪ आयत नम्बर 61-66 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	466
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	468
✪ आयत नम्बर 67-70 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	470
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	471
✪ आयत नम्बर 71-73 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	473
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	474
✪ आयत नम्बर 74-78 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	477
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	478
✪ मसला	482
✪ आयत नम्बर 79-80 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	483
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	483
✪ आयत नम्बर 81-83 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	485
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	485
✪ आयत नम्बर 84 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	487
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	487
✪ ज़िक्र हुए वाक़िए पर चन्द शुब्हात और उनके जवाब	488
✪ आयत नम्बर 85-89 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	492
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	493
✪ आयत नम्बर 90 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	493
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	494
✪ आयत नम्बर 91-93 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	495
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	496

उनवान	पेज
पारा (11) यअ्तज़िरू-न	**497**
✪ आयत नम्बर 94-96 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	498
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	498
✪ आयत नम्बर 97-99 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	500
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	501
✪ आयत नम्बर 100 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	503
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	503
✪ सहाबा-ए-किराम सब के सब बिना किसी को अलग किये जन्नती और अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं	504
✪ आयत नम्बर 101 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	505
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	506
✪ आयत नम्बर 102-107 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	507
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	508
✪ अच्छे और बुरे मिले-जुले अ़मल क्या थे?	509
✪ जिन मुसलमानों के आमाल अच्छे-बुरे मिले-जुले हों क़ियामत तक वे भी इस हुक्म में दाख़िल हैं	510
✪ इस्लामी हुकूमत की एक ज़िम्मेदारी	511
✪ ज़कात हुकूमत का टैक्स नहीं बल्कि इबादत है	512
✪ एक सवाल और उसका जवाब	513
✪ आयत नम्बर 107-110 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	515
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	516
✪ आयत नम्बर 111-112 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	522
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	523
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	523
✪ शान-ए-नुज़ूल	523
✪ जिहाद की सबसे पहली यही आयत है	524
✪ आयत नम्बर 113-114 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	527
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	527
✪ आयत नम्बर 115-116 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	530
✪ आयत नम्बर 117-119 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	531

उनवान	पेज
✪ मआरिफ़ व मसाईल	532
✪ इन तीनों अन्सारी बुज़ुर्गों के वाक़िए की तफ़सील सही हदीसों की रोशनी में	534
✪ हज़रत कअ़ब बिन मालिक की हदीस से संबन्धित फ़ायदे	541
✪ आयत नम्बर 120-121 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	544
✪ मआरिफ़ व मसाईल	545
✪ आयत नम्बर 122 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	546
✪ मआरिफ़ व मसाईल	546
✪ दीनी इल्म को हासिल करने का फ़र्ज़ होना और उसके आदाब व फ़राईज़	547
✪ इल्मे दीन के फ़ज़ाईल	547
✪ इल्मे दीन के फ़र्ज़े-ऐन और फ़र्ज़े-किफ़ाया की तफ़सील	548
✪ फ़र्ज़-ए-ऐन	549
✪ तसव्वुफ़ का इल्म भी फ़र्ज़े-ऐन में दाख़िल है	549
✪ फ़र्ज़े-ए-किफ़ाया	550
✪ दीनी इल्म का कोर्स	550
✪ दीनी इल्म हासिल करने के बाद आ़लिम के फ़राईज़	551
✪ आयत नम्बर 123-127 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	554
✪ मआरिफ़ व मसाईल	555
✪ आयत नम्बर 128-129 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	556
✪ मआरिफ़ व मसाईल	557
सूरः यूनुस	**559**
✪ आयत नम्बर 1-4 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	561
✪ मआरिफ़ व मसाईल	562
✪ आयत नम्बर 5-6 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	567
✪ मआरिफ़ व मसाईल	567
✪ आयत नम्बर 7-10 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	572
✪ मआरिफ़ व मसाईल	573
✪ अहकाम व मसाईल	577
✪ आयत नम्बर 11-17 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	579
✪ मआरिफ़ व मसाईल	581
✪ एक अहम फ़ायदा	584

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 18-20 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	585
✪ मआरिफ़ व मसाईल	586
✪ काफ़िर व मुस्लिम दो अलग-अलग क़ौमें हैं, नस्ली और वतनी क़ौमियत बेकार है	586
✪ आयत नम्बर 21-24 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	589
✪ मआरिफ़ व मसाईल	590
✪ आयत नम्बर 25-32 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	593
✪ मआरिफ़ व मसाईल	594
✪ आयत नम्बर 33-36 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	598
✪ आयत नम्बर 37-40 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	600
✪ मआरिफ़ व मसाईल	601
✪ आयत नम्बर 41-44 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	602
✪ आयत नम्बर 45-56 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	605
✪ मआरिफ़ व मसाईल	607
✪ आयत नम्बर 57-61 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	609
✪ मआरिफ़ व मसाईल	610
✪ फ़ायदा	613
✪ आयत नम्बर 62-64 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	614
✪ मआरिफ़ व मसाईल	615
✪ आयत नम्बर 65-66 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	620
✪ आयत नम्बर 67-70 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	622
✪ आयत नम्बर 71-73 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	623
✪ आयत नम्बर 74 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	624
✪ आयत नम्बर 75-82 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	626
✪ आयत नम्बर 83-86 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	627
✪ आयत नम्बर 87-91 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	629
✪ मआरिफ़ व मसाईल	630
✪ आयत नम्बर 92-98 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	636
✪ मआरिफ़ व मसाईल	638
✪ हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का तफ़सीली वाक़िआ	646
✪ आयत नम्बर 99-100 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	649
✪ आयत नम्बर 101-103 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	649

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 104-107 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	651
✪ आयत नम्बर 108-109 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	652
सूरः हूद	**653**
✪ आयत नम्बर 1-5 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	655
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	656
पारा (12) व मा मिन् दाब्बतिन्	**660**
✪ आयत नम्बर 6-8 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	661
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	662
✪ रिज़्क़ की ख़ुदाई ज़िम्मेदारी पर एक सवाल और जवाब	663
✪ सारी मख़्लूक़ को रिज़्क़ पहुँचाने का अ़जीब व ग़रीब क़ुदरती निज़ाम	665
✪ आयत नम्बर 9-14 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	668
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	670
✪ आयत नम्बर 15-17 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	675
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	676
✪ आयत नम्बर 18-24 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	681
✪ आयत नम्बर 25-35 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	685
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	687
✪ आयत नम्बर 36-40 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	693
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	694
✪ नूह अ़लैहिस्सलाम को कश्ती बनाने का प्रशिक्षण	695
✪ तमाम ज़रूरी उद्योगों की शुरूआ़त वही के ज़रिये हुई	696
✪ आयत नम्बर 41-44 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	699
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	700
✪ कश्तियों और दूसरी सवारियों पर सवार होने के आदाब	700
✪ हर सवारी का चलना और ठहरना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत से है	701
✪ आयत नम्बर 45-49 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	705
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	706
✪ काफ़िर और ज़ालिम के लिये दुआ़ जायज़ नहीं	707
✪ मोमिन व काफ़िर में बिरादराना रिश्ता नहीं हो सकता	708

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 50-68 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	715
✪ मआरिफ़ व मसाईल	718
✪ वअ़ज़ व नसीहत और दीन की दावत पर उजरत	719
✪ आयत नम्बर 69-73 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	723
✪ मआरिफ़ व मसाईल	724
✪ अहकाम व मसाईल	726
✪ 'सलाम' की सुन्नत	726
✪ मेहमानी और मेहमानदारी के चन्द उसूल	727
✪ आयत नम्बर 74-83 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	730
✪ मआरिफ़ व मसाईल	732
✪ आयत नम्बर 84-95 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	739
✪ मआरिफ़ व मसाईल	742
✪ अहकाम व मसाईल	745
✪ नाप-तौल की कमी का मसला	745
✪ आयत नम्बर 96-101 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	747
✪ आयत नम्बर 102-111 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	750
✪ आयत नम्बर 112-113 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	751
✪ मआरिफ़ व मसाईल	752
✪ 'इस्तिक़ामत' का मतलब और अहम फ़ायदे व मसाईल	753
✪ आयत नम्बर 114-123 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	758
✪ मआरिफ़ व मसाईल	760
✪ क़ुरआनी अन्दाज़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बड़ाई वाली शान की तरफ़ इशारा	760
✪ अच्छा और बुरा इख़्तिलाफ़ (मतभेद)	766

मक्तबा-ए-अशरफ़

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(सूरः आराफ़ का बाक़ी हिस्सा)

وَمَآ اَرْسَلْنَا فِيْ قَرْيَةٍ مِّنْ نَّبِيٍّ اِلَّآ اَخَذْنَآ اَهْلَهَا بِالْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ لَعَلَّهُمْ
يَضَّرَّعُوْنَ ۞ ثُمَّ بَدَّلْنَا مَكَانَ السَّيِّئَةِ الْحَسَنَةَ حَتّٰى عَفَوْا وَّقَالُوْا قَدْ مَسَّ اٰبَآءَنَا الضَّرَّآءُ وَالسَّرَّآءُ
فَاَخَذْنٰهُمْ بَغْتَةً وَّهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ ۞ وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْقُرٰٓى اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَفَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَرَكٰتٍ
مِّنَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ وَلٰكِنْ كَذَّبُوْا فَاَخَذْنٰهُمْ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۞ اَفَاَمِنَ اَهْلُ الْقُرٰٓى اَنْ يَّاْتِيَهُمْ
بَاْسُنَا بَيَاتًا وَّهُمْ نَآئِمُوْنَ ۞ اَوَاَمِنَ اَهْلُ الْقُرٰٓى اَنْ يَّاْتِيَهُمْ بَاْسُنَا ضُحًى وَّهُمْ يَلْعَبُوْنَ ۞ اَفَاَمِنُوْا
مَكْرَ اللّٰهِ فَلَا يَاْمَنُ مَكْرَ اللّٰهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْخٰسِرُوْنَ ۞ ع

व मा अर्सल्ना फ़ी क़र्यतिम् मिन् नबिय्यिन् इल्ला अख़ज़्ना अह़्लहा बिल्बअ्सा-इ वज़्ज़र्रा-इ लअ़ल्लहुम् यज़्ज़र्रअ़ून (94) सुम्-म बद्दल्ना मकानस्सय्यि-अतिल् ह-स-न-त हत्ता अ़फ़व्-व क़ालू क़द् मस्-स आबा-अनज़्ज़र्रा-उ वस्सर्रा-उ फ़-अख़ज़्नाहुम् बग़्त-तंव्-व हुम् ला यश्अ़ुरून (95) व लौ अन्-न अह़्लल्क़ुरा आमनू वत्तक़ौ ल-फ़तह़्ना अ़लैहिम् ब-रकातिम् मिनस्समा-इ वल्अर्ज़ि व लाकिन् कज़्ज़बू फ़-अख़ज़्नाहुम् बिमा कानू यक्सिबून (96) अ-फ़अमि-न अह़्लुल्क़ुरा

और नहीं भेजा हमने किसी बस्ती में कोई नबी कि न पकड़ा हो हमने वहाँ के लोगों को सख़्ती और तकलीफ़ में ताकि वे गिड़गिड़ायें (94) फिर बदल दी हमने बुराई की जगह भलाई यहाँ तक कि वे बढ़ गये और कहने लगे कि पहुँचती रही है हमारे बाप दादाओं को भी तकलीफ़ और ख़ुशी फिर पकड़ा हमने उनको अचानक और उनको ख़बर न थी (95) और अगर बस्तियों वाले ईमान लाते और परहेज़गारी करते तो हम खोल देते उन पर नेमतें आसमान और ज़मीन से लेकिन झुठलाया उन्होंने पस पकड़ा हमने उनको उनके आमाल के बदले (96) अब क्या बेडर हैं बस्तियों वाले इससे कि आ पहुँचे

अंय्यअ्ति-यहुम् बअ्सुना बयातंव्-व हुम् ना-इमून (97) अ-व अमि-न अह्लुल्क़ुरा अंय्य्ति-यहुम् बअ्सुना जुहंव्वहुम् यल्अ़बून (98) अ-फ़अमिनू मक्रल्लाहि फ़ला यअ्मनु मक्रल्लाहि इल्लल् क़ौमुल्-ख़ासिरून (99) ✿	उन पर आफ़त हमारी रातों रात जब सोते हों (97) या बेडर हैं बस्तियों वाले इस बात से कि आ पहुँचे उन पर हमारा अ़ज़ाब दिन चढ़े जब खेलते हों (98) क्या बेडर हो गये अल्लाह के दाव से, सो बेडर नहीं होते अल्लाह के दाव से मगर ख़राबी में पड़ने वाले। (99) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने (इन ज़िक्र हुई और इनके अ़लावा और भी दूसरी बस्तियों में से) किसी बस्ती में कोई नबी नहीं भेजा मगर यह कि वहाँ के रहने वालों को (उस नबी के न मानने पर पहले शुरू में तंबीह न की हो, और चेतावनी की ग़र्ज़ से उनको) हमने मोहताजी और बीमारी में पकड़ा ताकि वे ढीले पड़ जाएँ (और अपने कुफ़्र व झुठलाने से तौबा करें)। फिर (जब उससे न चेते तो ढील देने या इस ग़र्ज़ से कि मुसीबत के बाद जो नेमत होती है उसकी ज़्यादा क़द्र होती है और तबई तौर पर आदमी नेमत देने वाले की इताअ़त करने लगता है) हमने उस बदहाली की जगह ख़ुशहाली बदल दी, यहाँ तक कि उनको (ख़ुशहाली और सेहत के साथ माल व औलाद में) ख़ूब तरक़्क़ी हुई और (उस वक़्त अपनी उल्टी समझ की वजह से) कहने लगे कि (वह पहली मुसीबत हम पर कुफ़्र व झुठलाने के सबब न थी वरना फिर ख़ुशहाली क्यों होती, बल्कि यह इत्तिफ़ाक़ी तौर पर ज़माने के हालात से है, चुनाँचे) हमारे बाप-दादा को भी (ये दो हालतें कभी) तंगी और (कभी) राहत पेश आई थी (इसी तरह हम पर ये हालतें गुज़र गयीं। जब वे इस भूल में पड़ गये) तो (उस वक़्त) हमने उनको अचानक (घातक अ़ज़ाब में) पकड़ लिया और उनको (उस अ़ज़ाब के आने की) ख़बर भी न थी (यानी अगरचे उनको अम्बिया ने ख़बर दी थी मगर चूँकि वे उस ख़बर को ग़लत समझते थे और ऐश व आराम में भूले हुए थे इसलिये उनको गुमान न था)। और (हमने जो उनको हलाक करने वाले अ़ज़ाब में पकड़ा तो इसका सबब सिर्फ़ उनका कुफ़्र और मुख़ालफ़त थी, वरना) अगर उन बस्तियों के रहने वाले (लोग, पैग़म्बरों पर) ईमान ले आते और (उनकी मुख़ालफ़त से) परहेज़ करते तो हम (बजाय ज़मीनी व आसमानी आफ़तों के) उन पर आसमान और ज़मीन की बरकतें खोल देते (यानी आसमान से बारिश और ज़मीन से पैदावार को बरकत के साथ अ़ता फ़रमाते, और अगरचे इस हलाकत से पहले उनको ख़ुशहाली एक हिक्मत के लिये दी गयी लेकिन इस ख़ुशहाली में इसलिये बरकत न थी कि आख़िर वह जान की मुसीबत हो गयी, बख़िलाफ़ उन नेमतों के जो ईमान व इताअ़त के साथ मिलती हैं कि उनमें यह ख़ैर व बरकत होती है कि वो वबाल कभी नहीं होतीं, न दुनिया में न आख़िरत में। हासिल यह कि अगर वे ईमान व परहेज़गारी इख़्तियार करते तो उनको भी ये बरकतें देते)

लेकिन उन्होंने तो (पैग़म्बरों को) झुठलाया तो हमने (भी) उनके (बुरे) आमाल की वजह से उनको पकड़ लिया। (जिसको ऊपर "अख़ज़्नाहुम बग़्ततन्" से ताबीर फ़रमाया है। आगे मौजूदा काफ़िरों को इब्रत दिलाते हैं) क्या (इन क़िस्सों को सुनकर) फिर भी इन (मौजूदा) बस्तियों के रहने वाले (जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नुबुव्वत के दौर में मौजूद हैं) इस बात से बेफ़िक्र हो गये हैं कि उन पर (भी) हमारा अ़ज़ाब रात के वक़्त आ पड़े, जिस वक़्त वे (पड़े) सोते हों। और क्या इन (मौजूदा) बस्तियों के रहने वाले (अपने कुफ़्र व झुठलाने के बावजूद जो कि पहले काफ़िरों के हलाक व तबाह होने का सबब था) इस बात से बेफ़िक्र हो गये हैं कि (उन्हीं पहले गुज़रे काफ़िरों की तरह) उन पर हमारा अ़ज़ाब दिन-दोपहर आ पड़े, जिस वक़्त कि वे अपने बेकार के क़िस्सों में मशग़ूल हों (इससे दुनियावी कारोबार मुराद हैं)। हाँ तो क्या अल्लाह की इस (अचानक) पकड़ से (जिसका ऊपर बयान हुआ है) बेफ़िक्र हो गये, सो (समझ लो कि) ख़ुदा तआ़ला की पकड़ से सिवाय उनके जिनकी शामत ही आ गई हो और कोई बेफ़िक्र नहीं होता।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी क़ौमों के इतिहास और उनके इब्रतनाक हालात व वाक़िआ़त में से जिनका सिलसिला कई रुकूअ़ पहले से चल रहा है, यहाँ तक पाँच हज़राते अम्बिया के वाक़िआ़त का बयान हुआ है। छठा क़िस्सा हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम बनी इस्राईल का है जो तफ़सील के साथ नौ आयतों के बाद आने वाला है।

यह बात पहले बयान हो चुकी है कि क़ुरआने करीम विश्व-इतिहास और दुनिया की क़ौमों के हालात बयान करता है मगर बयान का अन्दाज़ यह रहता है कि आ़म ऐतिहासिक किताबों और क़िस्से-कहानियों की किताबों की तरह किसी क़िस्से को तरतीब और तफ़सील के साथ लाने के बजाय हर जगह के मुनासिब किसी क़िस्से का एक हिस्सा बयान किया जाता है, उसके साथ उससे हासिल होने वाले नसीहत भरे परिणाम ज़िक्र किये जाते हैं। इसी अन्दाज़ पर यहाँ उन पाँच क़िस्सों के बयान के बाद इन आयतों में जो ऊपर लिखी गयी हैं कुछ तंबीहात मज़कूर हैं।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि क़ौमे नूह और आ़द व समूद क़ौमों के साथ जो वाक़िआ़त पेश आये वो कुछ उन्हीं के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि अल्लाह तआ़ला शानुहू की आ़म आ़दत यही है कि क़ौमों की हिदायत और उनकी बेहतरी व कामयाबी के लिये हज़राते अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को भेजते हैं, जो लोग उनकी नसीहत पर कान नहीं धरते तो पहले उनको दुनिया की मुसीबतों व तकलीफ़ों में मुब्तला कर दिया जाता है ताकि तकलीफ़ व मुसीबत उनका रुख़ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ फेर दें, क्योंकि इनसान को फ़ितरी तौर पर मुसीबत के वक़्त ख़ुदा ही याद आता है। और यह ज़ाहिरी तकलीफ़ व मुसीबत हक़ीक़त में रहमान व रहीम की रहमत व इनायत होती है जैसा कि मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया है:

ख़ल्क़ रा बा तू चुनीं बदख़ू कुनन्द
ता तुरा नाचार रू आँ सू कुनन्द

यानी मख़्लूक़ से जो तुझे परेशानी व तकलीफ़ पहुँचती है यह भी दर असल इसकी एक तदबीर है कि इनसान अपने पैदा करनें वाले की तरफ़ मुतवज्जह हो और ग़ैरुल्लाह से अपनी उम्मीदें तोड़ ले। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

उक्त आयत में:

اَخَذْنَآ اَهْلَهَا بِالْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ لَعَلَّهُمْ يَضَّرَّعُوْنَ.

का यही मतलब है। 'बुअ्स' और 'बअ्सा' के मायने फ़क़्र व फ़ाक़े और 'ज़ुर्र' व 'ज़र्रा-अ' के मायने बीमारी व रोग के आते हैं। क़ुरआन मजीद में यह लफ़्ज़ जगह-जगह इसी मायने में आया है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इसके यही मायने बयान फ़रमाये हैं। लुग़त के कुछ आ़लिमों ने कहा कि 'बुअ्स' और 'बअ्सा' माली नुक़सान के लिये बोला जाता है और 'ज़ुर्र' व 'ज़र्रा-अ' जानी नुक़सान के लिये। इसका हासिल भी यही है।

आयत का मतलब यह है कि जब कभी हम किसी क़ौम की तरफ़ अपने रसूल भेजते हैं और वे उनकी बात नहीं मानते तो हमारी आ़दत यह है कि पहले उनको दुनिया ही में माली और जानी तंगी व बीमारी वग़ैरह में मुब्तला कर देते हैं ताकि वे कुछ ढीले हो जायें और अन्जाम पर नज़र करके अल्लाह की तरफ़ रुजू हों। उसके बाद दूसरी आयत में फ़रमायाः

ثُمَّ بَدَّلْنَا مَكَانَ السَّيِّئَةِ الْحَسَنَةَ حَتّٰى عَفَوْا.

इसमें "सय्यिआ" से मुराद वह फ़क़्र व फ़ाक़ा या बीमारी की बुरी हालत है जिसका ज़िक्र ऊपर आया, और "ह-सना" से मुराद उसके मुक़ाबले में माल में वुस्अ़त व फ़राख़ी और बदन में सेहत व सलामती है। और लफ़्ज़ "अ़फ़व्" 'अ़फ़्व' से बना है जिसके एक मायने बढ़ने और तरक़्क़ी करने के भी हैं। कहा जाता है "अ़फ़न्नबाति" घास या दरख़्त बढ़ गये। 'अ़फ़श्शह्मु वल्वब्रु' जानवर की चर्बी और बाल बढ़ गये। इसी मायने से इस जगह "अ़फ़व्" के मायने हैं "बढ़ गये और तरक़्क़ी कर गये"।

मतलब यह है कि पहला इम्तिहान उन लोगों को फ़क़्र व फ़ाक़े और बीमारी वग़ैरह में मुब्तला करके लिया गया था, जब उसमें नाकामयाब हुए यानी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू न हुए तो दूसरा इम्तिहान इस तरह लिया गया कि उनके फ़क़्र व फ़ाक़े (तंगी और बदहाली) के बजाय माल व दौलत की वुस्अ़त, और बीमारी के बजाय सेहत व सलामती उनको अ़ता कर दी गयी, यहाँ तक कि वे ख़ूब बढ़ गये और हर चीज़ में तरक़्क़ी कर गये। इस इम्तिहान का हासिल यह था कि मुसीबत के बाद राहत और दौलत मिलने पर वे शुक्रगुज़ार हों और इस तरह वे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करें, लेकिन यह ग़फ़लत के आ़दी माद्दी राहतों और लज़्ज़तों में डूबे हुए इससे भी होशियार (सचेत) न हुए बल्कि यह कहने लगे:

وَقَالُوْا قَدْ مَسَّ اٰبَآءَنَا الضَّرَّآءُ وَالسَّرَّآءُ.

यानी यह कोई नई बात नहीं और न यह किसी अच्छे या बुरे अ़मल का नतीजा है, बल्कि ज़माने का मिज़ाज और चलन ही यही है कि कभी राहत कभी रंज, कभी बीमारी कभी सेहत,

कभी तंगी कभी फ़राख़ी हुआ ही करती है। हमारे बाप-दादों को भी ऐसे ही हालात पेश आये हैं।

ख़ुलासा यह कि पहला इम्तिहान तकलीफ़ व मुसीबत के ज़रिये किया गया, उसमें नाकाम हुए। दूसरा इम्तिहान राहत व दौलत से किया गया उसमें नाकाम रहे, और किसी तरह अपनी गुमराही से बाज़ न आये, तब अचानक अ़ज़ाब में पकड़े गयेः

فَاَخَذْنٰهُمْ بَغْتَةً وَّهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ.

"बग़्ततन्" के मायने हैं अचानक। मतलब यह है कि जब ये लोग दोनों क़िस्म की आज़माईशों में नाकाम रहे और होश में न आये तो फिर हमने उनको अचानक इस तरह अ़ज़ाब में पकड़ लिया कि उनको उसकी ख़बर भी न थी।

तीसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْقُرٰٓى اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَفَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَرَكٰتٍ مِّنَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ وَلٰكِنْ كَذَّبُوْا فَاَخَذْنٰهُمْ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ.

यानी अगर उन बस्तियों के रहने वाले ईमान ले आते और नाफ़रमानी से परहेज़ करते तो हम उन पर आसमान और ज़मीन की बरकतें खोल देते, लेकिन उन्होंने झुठलाया तो हमने उनको उनके आमाल की वजह से पकड़ लिया।

बरकत के लफ़्ज़ी मायने ज़्यादती और बढ़ोतरी के हैं। आसमान और ज़मीन की बरकतों से मुराद यह है कि हर तरह की भलाई हर तरफ़ से उनके लिये खोल देते। आसमान से पानी ज़रूरत के मुताबिक़ वक़्त पर बरसता, ज़मीन से हर चीज़ इच्छा के मुताबिक़ पैदा होती। फिर उन चीज़ों से नफ़ा उठाने और राहत हासिल करने के सामान जमा कर दिये जाते कि कोई परेशानी और फ़िक्र लाहिक़ न होती, जिसकी वजह से बड़ी से बड़ी नेमत बेमज़ा हो जाती है। हर चीज़ में बरकत यानी ज़्यादती होती।

फिर बरकत का ज़हूर दुनिया में दो तरह से होता है- कभी तो असल चीज़ वास्तव में बढ़ जाती है जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मोजिज़ों में एक मामूली बरतन के पानी से पूरे क़ाफ़िले का सैराब होना, या थोड़े से खाने से एक मजमे का पेट भर जाना सही रिवायतों में बयान हुआ है। और कभी ऐसा भी होता है कि अगरचे ज़ाहिरी तौर पर उस चीज़ में कोई बढ़ोतरी नहीं हुई, मात्रा उतनी ही रही जितनी थी, लेकिन उससे काम इतने निकले जितने उससे दोगुनी चौगुनी चीज़ से निकलते। और यह आ़म तौर से देखा जाता है कि कोई बरतन कपड़ा घर या घर का सामान ऐसा मुबारक होता है कि उससे उम्र भर आदमी राहत उठाता है और वह फिर भी क़ायम रहता है। और कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं कि बनाते ही टूट गयीं, या सालिम भी रहीं मगर उनसे नफ़ा उठाने का मौक़ा हाथ न आया, या नफ़ा भी उठाया लेकिन पूरा नफ़ा न उठा सके।

और यह बरकत इनसान के माल में भी होती है जान में भी, काम में भी और वक़्त में भी। बाज़ मर्तबा एक लुक़्मा ऐसा होता है कि इनसानों की क़ुव्वत व सेहत का सबब बन जाता है

और कई बार बड़ी से बड़ी ताक़तवर गिज़ा और दवा काम नहीं देती। इसी तरह बाज़ वक़्त में बरकत होती है तो एक घण्टे में इतना काम हो जाता है कि दूसरे वक़्तों में चार घण्टों में भी नहीं होता। इन सब सूरतों में अगरचे मात्रा के एतिबार से न माल बढ़ा है न वक़्त मगर बरकत का ज़हूर इस तरह हुआ कि उससे काम बहुत निकले।

इस आयत ने यह बात वाज़ेह कर दी कि आसमान और ज़मीन की तमाम मख़्लूक़ात व मौजूदात की बरकतें ईमान और तक़्वे (नेकी व परहेज़गारी) पर मौक़ूफ़ हैं, इनको इख़्तियार किया जाये तो आख़िरत की फ़लाह (कामयाबी) के साथ दुनिया की फ़लाह व बरकतें भी हासिल होती हैं, और ईमान व तक़्वे को छोड़ने के बाद उनकी बरकतों से मेहरूमी हो जाती है। आज की दुनिया के हालात पर ग़ौर किया जाये तो यह बात एक ज़िन्दा हक़ीक़त बनकर सामने आ जाती है कि आजकल ज़ाहिरी तौर पर ज़मीन की पैदावार पहले की तुलना में बहुत ज़्यादा है और प्रयोग होने वाली चीज़ों की बोहतात और नई-नई ईजादें तो इस क़द्र हैं कि पिछली नस्लों को इनका तसव्वुर (कल्पना व ख़्याल) भी न हो सकता था, मगर इस तमाम साज़ व सामान की बोहतात और फ़रावानी (अधिकता) के बावजूद आज का इनसान सख़्त परेशान, बीमार, तंगदस्त नज़र आता है, आराम व राहत और अमन व इत्मीनान का कहीं वजूद नहीं। इसका सबब इसके सिवा क्या कहा जा सकता है कि सामान सारे मौजूद और अधिकता के साथ मौजूद हैं मगर उनकी बरकत मिट गयी है।

यहाँ एक यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि सूरः अन्आम की एक आयत के अन्दर काफ़िरों व गुनाहगारों के बारे में आया है:

فَلَمَّا نَسُوْا مَاذُكِّرُوْا بِهٖ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ اَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ

यानी जब उन लोगों ने अल्लाह के अहकाम को भुला दिया तो हमने उन पर हर चीज़ के दरवाज़े खोल दिये, और फिर अचानक उनको अ़ज़ाब में पकड़ लिया। इससे मालूम होता है कि दुनिया में हर चीज़ के दरवाज़े किसी पर खुल जाना कोई असली इनाम नहीं बल्कि वह एक तरह का अल्लाह का क़हर भी हो सकता है। और यहाँ यह बतलाया गया है कि अगर ईमान व तक़्वा इख़्तियार करते तो हम उन पर आसमान व ज़मीन की बरकतें खोल देते। जिससे मालूम होता है कि आसमान व ज़मीन की बरकतें अल्लाह तआ़ला के इनामात और उसकी रज़ा की अ़लामात (निशानियाँ) हैं।

बात यह है कि दुनिया की नेमतें और बरकतें कभी गुनाहों और नाफ़रमानी में हद से गुज़र जाने पर उनके जुर्म को और ज़्यादा स्पष्ट करने के लिये महज़ अस्थायी चन्द दिन की होती हैं, वो क़हर व ग़ज़ब की निशानी होती हैं, और कभी रहमत व इनायत से हमेशा की बेहतरी व कामयाबी के लिये होती हैं, वह ईमान व नेकी का नतीजा होती हैं। सूरत (ज़ाहिर में देखने) के एतिबार से उनमें फ़र्क़ करना मुश्किल होता है, क्योंकि अन्जाम और परिणाम का हाल किसी को मालूम नहीं, मगर अल्लाह के नेक बन्दों ने निशानियों के ज़रिये यह पहचान बतलाई है कि जब माल व दौलत और ऐश व आराम के साथ अल्लाह तआ़ला के शुक्र व इबादत की और ज़्यादा

तौफ़ीक़ हो तो यह समझा जायेगा कि यह रहमत है, और अगर माल व दौलत और इज़्ज़त व राहत के साथ अल्लाह तआ़ला से विमुख होना, बेतवज्जोही और गुनाहों की अधिकता बढ़े तो यह अ़लामत (पहचान) इसकी है कि यह अल्लाह के क़हर की एक सूरत है। अल्लाह तआ़ला इससे हमें अपनी पनाह में रखे।

चौथी आयत में फिर दुनिया की सब क़ौमों को तंबीह करने के लिये इरशाद फ़रमाया कि उन बस्तियों के बसने वाले इस बात से बेफ़िक्र हो बैठे कि हमारा अ़ज़ाब उनको उस हालत में आ पकड़े जबकि वे रात को सो रहे हों। और क्या ये बस्ती वाले इससे बेख़ौफ़ हो गये कि हमारा अ़ज़ाब उनको उस हालत में आ पकड़े जबकि वे दिन चढ़े अपने खेल-तमाशों में मशग़ूल हों। क्या ये लोग अल्लाह तआ़ला की ख़ुफ़िया तदबीर व तक़दीर से मुत्मईन हो बैठे? सो ख़ूब समझ लो कि अल्लाह तआ़ला की ख़ुफ़िया तदबीर व तक़दीर से बेफ़िक्र वही क़ौम हो सकती है जो ख़सारे (नुक़सान और घाटे) में पड़ी हुई हो।

ख़ुलासा यह है कि ये लोग जो दुनिया की ऐश व राहत में मस्त होकर ख़ुदा तआ़ला को भुला बैठते हैं इनको इस बात से बेफ़िक्र न होना चाहिये कि अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब उन पर रात के वक़्त या दिन के वक़्त किसी भी हालत में आ सकता है, जैसा कि पिछली क़ौमों के अ़ज़ाब के वाक़िआ़त का ज़िक्र ऊपर आ चुका है। अ़क़्लमन्द का काम यह है कि दूसरों के हालात से इब्रत (सबक़) हासिल करे और जो काम दूसरों के लिये हलाकत व बरबादी का सबब बन चुके हैं उनके पास जाने से बचे।

أَوَلَمْ يَهْدِ لِلَّذِينَ يَرِثُونَ الْأَرْضَ مِنْ بَعْدِ أَهْلِهَا أَنْ لَوْ نَشَاءُ أَصَبْنَاهُمْ بِذُنُوبِهِمْ ۚ وَنَطْبَعُ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ۝ تِلْكَ الْقُرَىٰ نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ أَنْبَائِهَا ۚ وَلَقَدْ جَاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوا بِمَا كَذَّبُوا مِنْ قَبْلُ ۚ كَذَٰلِكَ يَطْبَعُ اللَّهُ عَلَىٰ قُلُوبِ الْكَافِرِينَ ۝ وَمَا وَجَدْنَا لِأَكْثَرِهِمْ مِنْ عَهْدٍ ۖ وَإِنْ وَجَدْنَا أَكْثَرَهُمْ لَفَاسِقِينَ ۝

अ-व लम् यह्दि लिल्लज़ी-न यरिसूनल्-अर्-ज मिम्-बअ़्दि अह्लिहा अल्लौ नशा-उ असब्नाहुम् बिज़ुनूबिहिम् व नत्बअ़ु अ़ला क़ुलूबिहिम् फ़हुम् ला यस्मअ़ून (100) तिल्कल्क़ुरा नक़ुस्सु अ़लै-क मिन् अम्बा-इहा व ल-क़द् जाअत्हुम्	क्या नहीं ज़ाहिर हुआ उन लोगों पर जो वारिस हुए ज़मीन के वहाँ के लोगों के हलाक होने के बाद कि अगर हम चाहें तो उनको पकड़ लें उनके गुनाहों पर, और हमने मुहर कर दी है उनके दिलों पर सो वे नहीं सुनते। (100) ये बस्तियाँ हैं कि सुनाते हैं हम तुझको इनके कुछ

रुसुलुहुम् बिल्बय्यिनाति फ़मा कानू लियुअ्मिनू बिमा कज़्ज़बू मिन् क़ब्लु, कज़ालि-क यत्बअुल्लाहु अ़ला क़ुलूबिल्-काफ़िरीन (101) व मा वजद्ना लिअक्सरिहिम् मिन् अ़ह्दिन् व इंव्-वजद्ना अक्स-रहुम् लफ़ासिक़ीन (102)	हालात, और बेशक उनके पास पहुँच चुके उनके रसूल निशानियाँ लेकर, फिर हरगिज़ न हुआ कि ईमान लायें उस बात पर जिसको पहले झुठला चुके थे। यूँ मुहर कर देता है अल्लाह काफ़िरों के दिल पर। (101) और न पाया उनके अक्सर लोगों में हमने अ़हद का निबाह, और अक्सर उनमें पाये नाफ़रमान। (102)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे इसका सबब और वजह बतलाते हैं कि उनको अ़ज़ाब से क्यों डरना चाहिये, और वह वजह उनका पहली उम्मतों के साथ कुफ़्र के जुर्म में शरीक होना है। यानी) और उन (गुज़रे हुए) ज़मीन पर रहने वालों के बाद जो लोग (अब) ज़मीन पर उनकी जगह रहते हैं, क्या (इन ज़िक्र हुए वाक़िआ़त ने) उनको यह बात (अभी) नहीं बतलाई कि अगर हम चाहते तो उनको (भी पहली उम्मतों की तरह) उनके जुर्मों (कुफ़्र व झुठलाने) के सबब हलाक कर डालते, (क्योंकि पहली उम्मतें इन ही जराईम के सबब हलाक की गयीं) और (वाक़ई ये वाक़िआ़त तो ऐसे ही हैं कि इनसे सबक़ लेना चाहिये था, लेकिन असल यह है कि) हम उनके दिलों पर बन्द लगाये हुए हैं, इससे वे (हक़ बात को दिल से) सुनते (भी) नहीं (और मानना तो दरकिनार रहा, पस इस बन्द लगाने से उनकी दिल की सख़्ती बढ़ गयी कि ऐसे सबक़ लेने वाले वाक़िआ़त से भी सीख नहीं लेते, और इस बन्द लगाने का सबब उन्हीं का शुरू में कुफ़्र करना है, जैसा कि अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ

आगे शायद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तसल्ली के लिये ज़िक्र हुए सारे मज़मून का ख़ुलासा है कि) उन (ज़िक्र हुई) बस्तियों के कुछ-कुछ क़िस्से हम आप से बयान कर रहे हैं, और उन सब (बस्तियों में रहने वालों) के पास उनके पैग़म्बर मोजिज़े लेकर आये थे (मगर) फिर (भी उनकी ज़िद और हठधर्मी की यह हालत थी कि) जिस चीज़ को उन्होंने अव्वल (ही मर्तबा में एक बार) झूठा कह दिया, यह बात न हुई कि फिर उसको मान लेते। (और जैसे ये दिल के सख़्त थे) अल्लाह तआ़ला इसी तरह काफ़िरों के दिलों पर बन्द लगा देते हैं। और (उनमें से बाज़े लोग मुसीबतों में ईमान लाने का अ़हद भी कर लेते थे लेकिन) ज़्यादातर लोगों में हमने अ़हद को पूरा करना न देखा (यानी मुसीबत दूर हो जाने के बाद फिर वैसे के वैसे ही हो जाते थें), और हमने अक्सर लोगों को (रसूलों के भेजने, मोजिज़ों के ज़ाहिर करने, निशानियों के

नाज़िल होने और मज़बूत अ़हद करने के बावजूद) नाफ़रमान ही पाया (पस काफ़िर हमेशा से ऐसे ही होते रहे हैं, आप भी ग़म न कीजिए)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी पिछली क़ौमों के वाक़िआ़त व हालात सुनाकर अ़रब व अ़जम (अ़रब से बाहर की) मौजूदा क़ौमों को यह बतलाना मक़सूद है कि इन वाक़िआ़त में तुम्हारे लिये सीख लेने का बड़ा सामान है कि जिन कामों की वजह से पिछले लोगों पर अल्लाह का ग़ज़ब और अ़ज़ाब नाज़िल हुआ उनके पास न जायें, और जिन कामों की वजह से अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके पैरोकारों को कामयाबी हासिल हुई उनको इख़्तियार करे। चुनाँचे पहली आयत में इरशाद है:

اَوَلَمْ يَهْدِ لِلَّذِيْنَ يَرِثُوْنَ الْاَرْضَ مِنْ م بَعْدِ اَهْلِهَآ اَنْ لَّوْ نَشَآءُ اَصَبْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ.

"हदा, यहदी" के मायने निशानदेही करने और बतलाने के आते हैं। इस जगह इसका फ़ाअ़िल (काम करने वाला) वो वाक़िआ़त हैं जिनका ऊपर ज़िक्र किया गया है। मायने ये हैं कि मौजूदा ज़माने के लोग जो पिछली क़ौमों के हलाक होने के बाद उनकी ज़मीनों मकानों के वारिस बने या आगे बनेंगे, क्या उनको पिछले सबक़ लेने वाले वाक़िआ़त ने यह नहीं बतलाया कि कुफ़्र व इनकार और अल्लाह के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी के नतीजे में जिस तरह उनके पूर्वज (यानी पिछली क़ौमें) हलाक व बरबाद हो चुके हैं इसी तरह अगर ये भी उन्हीं जराईम (बुराईयों और अपराधों) के करने वाले रहे तो इन पर भी अल्लाह तआ़ला का क़हर व अ़ज़ाब आ सकता है।

इसके बाद फ़रमायाः

وَنَطْبَعُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُوْنَ.

"त-ब-अ़" के मायने छापने और मुहर लगाने के हैं। और मायने ये हैं कि ये लोग पहले गुज़रे वाक़िआ़त से भी कोई सबक़ और हिदायत हासिल नहीं करते। जिसका नतीजा यह होता है कि अल्लाह के ग़ज़ब से इनके दिलों पर मुहर लग जाती है, फिर ये कुछ नहीं सुनते। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब कोई इनसान पहले पहल गुनाह करता है तो उसके दिल पर एक नुक़्ता (धब्बा) सियाही का लग जाता है, दूसरा गुनाह करता है तो दूसरा और तीसरा गुनाह करता है तो तीसरा नुक़्ता लग जाता है, यहाँ तक कि अगर वह बराबर गुनाहों में बढ़ता गया, तौबा न की तो ये सियाही के नुक़्ते (धब्बे और बिन्दू) उसके सारे दिल को घेर लेते हैं और इनसान के दिल में अल्लाह तआ़ला ने जो फ़ितरी माद्दा भले-बुरे की पहचान और बुराई से बचने का रखा है वह फ़ना या मग़लूब हो जाता है, और उसका यह नतीजा होता है कि वह अच्छी चीज़ को बुरा और बुरी को अच्छा, मुफ़ीद को नुक़सानदेह और नुक़सानदेह को मुफ़ीद ख़्याल करने लगता है। इसी हालत को क़ुरआन में "रा-न" यानी दिल के ज़ंग (मैल) से ताबीर फ़रमाया है, और इसी हालत का आख़िरी नतीजा वह है जिसको त-ब-अ़ यानी मुहर लगाने से इस आयत में और बहुत सी दूसरी आयतों में ताबीर किया गया है।

यहाँ यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि दिल पर मुहर लग जाने का नतीजा तो अ़क्ल व समझ का ख़त्म हो जाना है, कानों की सुनने की सलाहियत पर तो उसका कोई असर आ़दतन नहीं हुआ करता, तो इस आयत में मौक़ा इसका था कि इस जगह "फ़हुम ला यफ़्क़हून" फ़रमाया जाता, यानी वे समझते नहीं। मगर क़ुरआने करीम में यहाँ "फ़हुम ला यस्मऊ़न" आया है, यानी वे सुनते नहीं। सबब यह है कि सुनने से मुराद इस जगह मानना और इताअ़त करना है जो नतीजा होता है समझने का। मतलब यह है कि दिलों पर मुहर लग जाने के सबब वे किसी हक़ बात को मानने पर तैयार नहीं होते। और यह भी कहा जा सकता है कि इनसान का दिल उसके तमाम बदनी अंगों और हिस्सों का मर्कज़ (केन्द्र) है, जब दिल के कामों में ख़लल आता है तो सारे अंगों के कामों में ख़लल आ जाता है। जब दिल में किसी चीज़ की भलाई या बुराई समा जाती है तो फिर हर चीज़ में उसको आँखों से भी वही नज़र आता है और कानों से भी वही सुनाई देता है। बुरा चाहने वाले की निगाह अपने मुख़ालिफ़ के हुनर और कमाल को भी ऐब ही की शक्ल में देखती है।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

تِلْكَ الْقُرٰى نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ اَنْۢبَآئِهَا.

"अम्बा" "न-बउन्" की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं कोई अ़ज़ीमुश्शान ख़बर। मायने ये हैं कि हलाक व बरबाद होने वाली बस्तियों के कुछ वाक़िआ़त हम आप से बयान करते हैं। इसमें हर्फ़ "मिन" से इशारा कर दिया गया कि पिछली क़ौमों के हालात व वाक़िआ़त जो ज़िक्र किये गये हैं उन सारे वाक़िआ़त को बयान नहीं किया बल्कि हज़ारों वाक़िआ़त में से चन्द अहम वाक़िआ़त का बयान है।

उसके बाद फ़रमायाः

وَلَقَدْ جَآءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَمَا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْا بِمَا كَذَّبُوْا مِنْ قَبْلُ.

यानी उन सब लोगों के अम्बिया व रसूल उनके पास मोजिज़े लेकर पहुँचे जिनके ज़रिये हक़ व बातिल का फ़ैसला हो जाता है, मगर उनकी ज़िद और हठधर्मी का यह आ़लम था कि जिस चीज़ के बारे में एक मर्तबा उनकी ज़बान से यह निकल गया था कि यह ग़लत और झूठ है, फिर उसके हक़ व सच्चा होने पर कितने ही मोजिज़े, दलीलें और हुज्जतें सामने आ गयीं मगर वे उसकी तस्दीक़ व इक़रार के लिये तैयार न हुए।

इस आयत से एक तो यह बात मालूम हुई कि मोजिज़े तमाम अम्बिया व रसूलों को अ़ता फ़रमाये गये हैं, जिनमें से कुछ अम्बिया के मोजिज़ों का क़ुरआन में ज़िक्र आया है, बहुत सों का नहीं आया। इससे यह समझना सही नहीं हो सकता कि जिनके मोजिज़ों का ज़िक्र क़ुरआन में नहीं आया उनसे कोई मोजिज़ा साबित ही नहीं। और सूरः हूद में जो हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम की क़ौम का यह क़ौल ज़िक्र हुआ है कि "मा जिअ्-तना बिबय्यि-नतिन्" यानी आप कोई मोजिज़ा नहीं लाये, इस आयत से मालूम हुआ कि उनका यह कहना पूरी तरह दुश्मनी और हठधर्मी की बिना पर था, या यह कि उनके मोजिज़ों को मामूली समझकर ऐसा कहा।

दूसरी बात यह क़ाबिले तवज्जोह है कि इस आयत में उन लोगों का जो हाल बतलाया गया है कि ग़लत बात ज़बान से निकल गयी तो उसी पर अड़े रहे और अपनी उसी बात को पानी देते रहे, उसके ख़िलाफ़ कितनी ही स्पष्ट दलीलें आ जायें, अपनी बात की पच करते रहे, यह ख़ुदा की इनकारी और काफ़िर क़ौमों का हाल है जिसमें बहुत से मुसलमान बल्कि कुछ उलेमा व ख़्वास भी मुब्तला पाये जाते हैं, कि किसी चीज़ को पहली बार में ग़लत या झूठ कह दिया तो अब उसकी सच्चाई की हज़ारों दलीलें भी सामने आ जायें तो अपनी ग़लत बात की पैरवी करते रहें। यह हालत अल्लाह के क़हर और ग़ज़ब का सबब और उसको लाने वाली है।

(मसाईलुस्सुलूक)

इसके बाद फ़रमायाः

كَذٰلِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِ الْكٰفِرِيْنَ.

यानी जिस तरह उन लोगों के दिलों पर मुहर लगा दी गयी, इसी तरह आ़म काफ़िर व मुन्किर लोगों के दिलों पर अल्लाह तआ़ला मुहर लगा देते हैं कि फिर नेकी क़ुबूल करने की सलाहियत बाक़ी नहीं रहती।

तीसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَمَا وَجَدْنَا لِاَكْثَرِهِمْ مِّنْ عَهْدٍ.

यानी उनमें से अक्सर लोगों को हमने अ़हद पूरा करने वाला न पाया।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अ़हद से मुराद 'अ़हद-ए-अलस्त' (यानी रूहों के आ़लम में किया गया वह इक़रार व अ़हद) है जो अज़ल में तमाम मख़्लूक़ात के पैदा करने से पहले उन सब की रूहों को पैदा फ़रमाकर लिया गया था, जिसमें हक़ तआ़ला ने फ़रमाया 'अलस्तु बिरब्बिकुम' यानी क्या मैं तुम्हारा परवर्दिगार नहीं? उस वक़्त तमाम इनसानी रूहों ने इक़रार और अ़हद के तौर पर जवाब दिया 'बला' यानी ज़रूर आप हमारे रब हैं। दुनिया में आकर अक्सर लोग पहले दिन के इस अ़हद को भूल गये, ख़ुदा तआ़ला को छोड़कर मख़्लूक़ परस्ती की लानत में गिरफ़्तार हो गये। इसलिये इस आयत में फ़रमाया कि हमने उनमें से अक्सर लोगों में अ़हद न पाया, यानी अ़हद की पाबन्दी और उसका पूरा करना न पाया। (तफ़सीरे कबीर)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अ़हद से मुराद 'ईमान का अ़हद' है जैसा कि क़ुरआने करीम में फ़रमायाः

اِلَّا مَنِ اتَّخَذَ عِنْدَ الرَّحْمٰنِ عَهْدًا.

इसमें अ़हद से ईमान व फ़रमाँबरदारी का अ़हद मुराद है। तो आयत के मतलब का हासिल यह है कि उन लोगों में से अक्सर ने ईमान व नेकी का अ़हद हमसे बाँधा था फिर उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) की। अ़हद बाँधने से मुराद यह है कि उमूमन इनसान जब किसी मुसीबत में मुब्तला होता है तो उस वक़्त कितना ही फ़ासिक़ फ़ाजिर (गुनाहगार व बद-आमाल) हो,

उसको भी ख़ुदा ही याद आता है, और अक्सर दिल या ज़बान से अ़हद करता है कि इस मुसीबत से निजात मिल गयी तो अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी व इबादत में लग जाऊँगा, नाफ़रमानी से बचूँगा, जैसा कि क़ुरआने करीम में बहुत से लोगों का यह हाल ज़िक्र किया गया है। लेकिन जब उनको निजात हो जाती है और आराम व राहत मिलती है तो फिर नाफ़रमानी और अपनी इच्छाओं पर चलने में मुब्तला हो जाते हैं, और उस अ़हद को भूल जाते हैं।

उक्त आयत में लफ़्ज़ "अक्सर" से इसकी तरफ़ इशारा भी पाया जाता है, क्योंकि बहुत से लोग तो ऐसे बदबख़्त होते हैं कि मुसीबत के वक़्त भी उन्हें ख़ुदा याद नहीं आता और उस वक़्त भी वे ईमान व नेक आमाल का अ़हद नहीं करते, तो उनसे अ़हद के तोड़ने की शिकायत के कोई मायने नहीं, और बहुत से लोग वे भी हैं जो अ़हद को पूरा करते हैं, ईमान व नेकी के हुक़ूक़ अदा करते हैं, इसलिये फ़रमायाः

وَمَا وَجَدْنَا لِأَكْثَرِهِمْ مِّنْ عَهْدٍ.

यानी हमने उनमें से अक्सर लोगों में अ़हद व इक़रार का पूरा करना न पाया।

इसके बाद फ़रमायाः

وَإِنْ وَّجَدْنَآ أَكْثَرَهُمْ لَفٰسِقِيْنَ.

यानी हमने उनमें से अक्सर लोगों को इताअ़त व फ़रमाँबरदारी से ख़ारिज पाया।

यहाँ तक पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी क़ौमों के पाँच वाक़िआ़त का बयान करके मौजूदा लोगों को उनसे सबक़ व नसीहत हासिल करने के लिये तंबीहात फ़रमाई गयी हैं।

इसके बाद छठा क़िस्सा हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का तफ़सील के साथ बयान होगा, जिसमें वाक़िआ़त के तहत में सैंकड़ों अहकाम व मसाईल और सीख व नसीहत के बेशुमार मौक़े हैं, और इसी लिये क़ुरआने करीम में इस वाक़िए के हिस्से व अंश बार-बार दोहराये गये हैं।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْۢ بَعْدِهِمْ مُّوْسٰى بِاٰيٰتِنَآ اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۟ئِهٖ فَظَلَمُوْا بِهَا ۚ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ
عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِيْنَ ۝ وَقَالَ مُوْسٰى يٰفِرْعَوْنُ اِنِّيْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ حَقِيْقٌ عَلٰٓى اَنْ لَّآ اَقُوْلَ
عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ ۚ قَدْ جِئْتُكُمْ بِبَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ فَاَرْسِلْ مَعِيَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ ۝ قَالَ اِنْ كُنْتَ جِئْتَ
بِاٰيَةٍ فَأْتِ بِهَآ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ فَاَلْقٰى عَصَاهُ فَاِذَا هِيَ ثُعْبَانٌ مُّبِيْنٌ ۝ وَّنَزَعَ يَدَهٗ فَاِذَا
هِيَ بَيْضَآءُ لِلنّٰظِرِيْنَ ۝ قَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اِنَّ هٰذَا لَسٰحِرٌ عَلِيْمٌ ۝ يُّرِيْدُ اَنْ يُّخْرِجَكُمْ مِّنْ ع ۱۳ ۹ ۳
اَرْضِكُمْ ۚ فَمَاذَا تَاْمُرُوْنَ ۝

सुम्-म बअ़स्ना मिम्-बअ़्दिहिम् मूसा बिआयातिना इला फ़िर्औ़-न व	फिर भेजा हमने उनके पीछे मूसा को अपनी निशानियाँ देकर फ़िरऔ़न और

म-लइही फ़-ज़-लमू बिहा फ़न्ज़ुर् कै-फ़ का-न आ़कि-बतुल् मुफ़्सिदीन (103) व क़ा-ल मूसा या फ़िर्औनु इन्नी रसूलुम् मिर्रब्बिल्-आ़लमीन (104) हक़ीक़ुन् अ़ला अल्ला अक़ू-ल अ़लल्लाहि इल्लल्हक़्-क़, क़द् जिअ्तुकुम् बिबय्यि-नतिम् मिर्रब्बिकुम् फ़-अर्सिल् मअ़ि-य बनी इस्राईल (105) क़ा-ल इन् कुन्-त जिअ्-त बिआयतिन् फ़अ्ति बिहा इन् कुन्-त मिनस्सादिक़ीन (106) फ़अल्क़ा अ़साहु फ़-इज़ा हि-य सुअ्बानुम् मुबीन (107) व न-ज़-अ़ य-दहू फ़-इज़ा हि-य बैज़ा-उ लिन्नाज़िरीन (108) ✿	उसके सरदारों के पास, पस कुफ़्र किया उन्होंने उनके मुक़ाबले में, सो देख क्या अन्जाम हुआ फ़साद फैलाने वालों का। (103) और कहा मूसा ने ऐ फ़िरऔन! मैं रसूल हूँ परवर्दिगारे आ़लम का। (104) क़ायम हूँ इस बात पर कि न कहूँ अल्लाह की तरफ़ से मगर जो सच है, लाया हूँ तुम्हारे पास निशानी तुम्हारे रब की, सो भेज दे मेरे साथ बनी इस्राईल को। (105) बोला अगर तू आया है कोई निशानी लेकर तो ला उसको अगर तू सच्चा है। (106) तब डाल दिया उसने अपना अ़सा (लाठी) तो उसी वक़्त हो गया खुला अज़्दहा (बहुत बड़ा ज़बरदस्त साँप) (107) और निकाला अपना हाथ तो उसी वक़्त वह सफ़ेद नज़र आने लगा देखने वालों को। (108) ✿
क़ालल्म-लउ मिन् क़ौमि फ़िर्औ-न इन्-न हाज़ा लसाहिरुन् अ़लीम (109) युरीदु अंय्युख़्रि-जकुम् मिन् अर्ज़िकुम् फ़-माज़ा तअ्मुरून (110)	बोले सरदार फ़िरऔन की क़ौम के- यह तो कोई बड़ा वाक़िफ़ जादूगार है। (109) निकालना चाहता है तुमको तुम्हारे मुल्क से, अब तुम्हारी क्या सलाह है? (110)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर उन (ज़िक्र हुए पैग़म्बरों) के बाद हमने (हज़रत) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को अपनी दलीलें (यानी मोजिज़े) देकर फ़िरऔन और उसके सरदारों के पास (उनकी हिदायत व तब्लीग़ के लिये) भेजा, सो (जब मूसा अ़लैहिस्सलाम ने वो मोजिज़े और निशानियाँ ज़ाहिर कीं तो) उन लोगों ने उन (मोजिज़ों) का हक़ बिल्कुल अदा न किया (क्योंकि उनका हक़ और तक़ाज़ा यह था कि ईमान ले आते), सो देखिए उन फ़सादियों और बिगाड़ करने वालों का क्या (बुरा) अन्जाम हुआ? (जैसा कि दूसरी जगह पर उनका डूबना और हलाक होना बयान हुआ है। यह तो सारे क़िस्से

का मुख़्तसर बयान था आगे तफ़सील है, यानी) और मूसा (अलैहिस्सलाम) ने (अल्लाह के हुक्म से फ़िरऔन के पास जाकर) फ़रमाया कि ऐ फ़िरऔन! मैं रब्बुल-आलमीन की तरफ़ से (तुम लोगों की हिदायत के वास्ते) पैग़म्बर (मुक़र्रर हुआ) हूँ। (जो मुझको झूठा बतलाये उसकी ग़लती है, क्योंकि) मेरे लिए (यही) मुनासिब है कि सिवाय सच के ख़ुदा की तरफ़ कोई बात मन्सूब न करूँ, (और मैं रिसालत का ख़ाली दावा ही नहीं करता बल्कि) मैं तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से एक बड़ी दलील (यानी मोजिज़ा) भी लेकर आया हूँ (जो तलब के वक़्त दिखला सकता हूँ), सो (जब मैं दलील व निशानी के साथ रसूल हूँ तो मैं जो कहूँ उसका पालन करो। चुनाँचे उन सब बातों में से एक यह कहता हूँ कि) तू बनी इस्राईल को (अपनी बेगार से छुटकारा देकर) मेरे साथ (मुल्के शाम को जो उनका असली वतन है) भेज दे। (फ़िरऔन ने कहा) अगर आप (अल्लाह की तरफ़ से) कोई मोजिज़ा लेकर आये हैं तो उसको पेश कीजिये, अगर आप (इस दावे में) सच्चे हैं? पस आपने (फ़ौरन) अपना असा "यानी लाठी" (ज़मीन पर) डाल दिया, सो वह देखते ही देखते साफ़ एक अज़्दहा बन गया। (जिसके अज़्दहा होने में कोई शक व शुब्हा नहीं हो सकता था)। और (दूसरा मोजिज़ा यह ज़ाहिर किया कि) अपना हाथ (गिरेबान के अन्दर बग़ल में दबाकर) बाहर निकाल लिया, सो वह एकदम सब देखने वालों के सामने बहुत ही चमकता हुआ हो गया (कि उसको भी सबने देखा)।

(हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के जो ये बड़े मोजिज़े ज़ाहिर हुए तो फ़िरऔन ने दरबार वालों से कहा कि यह शख़्स बड़ा जादूगर है, इसका असल मक़सद यह है कि अपने जादू से तुम लोगों पर ग़ालिब आकर यहाँ का सरदार हो जाये और तुमको यहाँ आबाद न रहने दे। सो इस बारे में तुम्हारा क्या मश्विरा है? चुनाँचे सूरः शु-अरा में फ़िरऔन का यह क़ौल मन्क़ूल है। इसको सुनकर जैसा कि बादशाहों के साथ रहने वालों की आदत उनकी हाँ में हाँ हिलाने की होती है, फ़िरऔन के क़ौल की तस्दीक़ व मुवाफ़क़त के लिये) फ़िरऔन की क़ौम में जो सरदार "यानी बड़े" (और दरबारी) लोग थे, उन्होंने (एक दूसरे से) कहा कि वाक़ई (जैसा हमारे बादशाह कहते हैं कि) यह शख़्स बड़ा माहिर जादूगर है (ज़रूर) यह (यही) चाहता है कि (अपने जादू के ज़ोर से ख़ुद मय बनी इस्राईल के सरदार हो जाये और) तुमको (इस वजह से कि तुम बनी इस्राईल की नज़र में काँटा हो) तुम्हारे (इस) मुल्क से बाहर कर दे। सो तुम लोग (जैसा कि बादशाह मालूम कर रहे हैं) क्या मश्विरा देते हो?

मआरिफ़ व मसाईल

इस सूरत में जितने क़िस्से और वाक़िआत अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के ज़िक्र किये गये हैं यह उनमें से छठा क़िस्सा है। इसको ज़्यादा विस्तार व तफ़सील के साथ बयान करने का सबब यह भी है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिज़े दूसरे पहले गुज़रे नबियों की तुलना में तायदाद में भी ज़्यादा हैं और ताक़त के ज़ाहिर होने में भी। इसी तरह इसके साथ-साथ उनकी क़ौम बनी इस्राईल की जहालत और हठधर्मी भी पिछली उम्मतों के मुक़ाबले में ज़्यादा

सख़्त है, और यह भी है कि इस क़िस्से के अन्तर्गत बहुत से मआरिफ़ व मसाईल और अहकाम भी आये हैं।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि उनके बाद यानी नूह और हूद और सालेह और लूत और शुऐब अलैहिमुस्सलाम के या उनकी क़ौमों के बाद हमने मूसा अलैहिस्सलाम को अपनी आयतें (निशानियाँ) देकर फ़िरऔन और उसकी क़ौम की तरफ़ भेजा। आयतों से मुराद तौरात की आयतें भी हो सकती हैं और मूसा अलैहिस्सलाम के मोजिज़े भी। और फ़िरऔन उस ज़माने में मिस्र के हर बादशाह का लक़ब (उपाधि और उपनाम) होता था। मूसा अलैहिस्सलाम के ज़माने के फ़िरऔन का नाम क़ाबूस बयान किया जाता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

"फ़-ज़-लमू बिहा" में जिस पर ज़ुल्म करने का इशारा है वो आयतें हैं। मायने यह हैं कि उन लोगों ने हमारी आयतों पर ज़ुल्म किया, और अल्लाह की आयतों पर ज़ुल्म करने से मुराद यह है कि उन लोगों ने अल्लाह की आयतों की क़द्र न पहचानी, उन पर शुक्र के बजाय नाशुक्री, इक़रार के बजाय इनकार, ईमान के बजाय कुफ़्र इख़्तियार किया। क्योंकि ज़ुल्म के असली मायने ही यह हैं कि किसी चीज़ को उसके मक़ाम और मौक़े के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करना।

फिर फ़रमायाः

فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِيْنَ.

यानी देखो तो सही कि फिर उन फ़साद करने वालों का क्या अन्जाम हुआ। मुराद यह है कि उनके हालात और बुरे अन्जाम पर ग़ौर करो और सबक़ हासिल करो।

दूसरी आयत में फ़रमाया कि मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़िरऔन से कहा कि मैं रब्बुल-आलमीन का रसूल (भेजा हुआ और पैग़म्बर) हूँ, मेरे हाल और नुबुव्वत के पद का तक़ाज़ा यही है कि मैं अल्लाह तआला की तरफ़ कोई बात सिवाय सच के मन्सूब न करूँ, क्योंकि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को जो पैग़ाम हक़ तआला की तरफ़ से दिये जाते हैं वो उनके पास ख़ुदाई अमानत होते हैं, उसमें अपनी तरफ़ से कमी-बेशी करना ख़ियानत (बददियानती) है, और तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम ख़ियानत और हर गुनाह से पाक और सुरक्षित हैं। इसका हासिल यह है कि तुम लोगों को मेरी बात पर इसलिये यक़ीन करना चाहिये कि मेरी सच्चाई तुम सब के सामने है, मैंने कभी न झूठ बोला है और न बोल सकता हूँ। इसके अलावाः

قَدْ جِئْتُكُمْ بِبَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ فَأَرْسِلْ مَعِيَ بَنِيْٓ إِسْرَآءِيْلَ.

यानी सिर्फ़ यही बात नहीं कि मैंने कभी झूठ नहीं बोला बल्कि मेरे दावे पर मेरे मोजिज़े भी हैं। इसलिये इन सब चीज़ों का तक़ाज़ा यह है कि आप मेरी बात सुनें और मानें। बनी इस्राईल को ज़बरदस्ती की ग़ुलामी से निजात देकर मेरे साथ कर दें। फ़िरऔन ने और किसी बात पर तो कान न धरा, मोजिज़ा देखने का मुतालबा करने लगा और कहाः

إِنْ كُنْتَ جِئْتَ بِاٰيَةٍ فَأْتِ بِهَآ إِنْ كُنْتَ مِنَ الصّٰدِقِيْنَ.

यानी अगर तुम वाक़ई कोई मोजिज़ा लाये हो तो पेश करो अगर तुम सच बोलने वालों में

से हो।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उसके मुतालबे को मानते हुए अपनी लाठी ज़मीन पर डाल दी वह अज़्दहा (बहुत बड़ा ख़तरनाक साँप) बन गयी, जैसा कि क़ुरआन में फ़रमायाः

فَإِذَا هِيَ ثُعْبَانٌ مُّبِينٌ.

सुअ़बान बड़े अज़्दहे को कहा जाता है और उसकी सिफ़त (विशेषता) "मुबीन" ज़िक्र करके बतला दिया कि उस लाठी का साँप बन जाना कोई ऐसा वाक़िआ न था कि किसी अंधेरे या पर्दे के कोने में ज़ाहिर हुआ हो, जिसको कोई देखे कोई न देखे, जैसे उमूमन करतब दिखाने वालों या जादूगरों का तरीक़ा होता है, बल्कि यह वाक़िआ भरे दरबार में सब के सामने पेश आया।

कुछ तारीख़ी रिवायतों में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि उस अज़्दहे ने फ़िरऔन की तरफ़ मुँह फैलाया तो उसने घबराकर शाही तख़्त से कूदकर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की पनाह ली और दरबार के हज़ारों आदमी उसकी दहशत से मर गये। (कबीर)

लाठी का सचमुच साँप बन जाना कोई नामुम्किन या मुहाल चीज़ नहीं, हाँ आ़म आ़दत के ख़िलाफ़ होने की वजह से हैरत-अंगेज़ और क़ाबिले ताज्जुब ज़रूर है। और मोजिज़े व करामत का मन्शा ही यह होता है कि जो काम आ़म आदमी न कर सकें वह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के हाथों पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से जारी कर दिया जाता है ताकि अ़वाम समझ लें कि इनके साथ कोई ख़ुदाई ताक़त काम कर रही है, इसलिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की लाठी का साँप बन जाना कोई इनकार करने वाली और क़ाबिले ताज्जुब बात नहीं हो सकती।

इसके बाद फ़रमायाः

وَنَزَعَ يَدَهُ فَإِذَا هِيَ بَيْضَآءُ لِلنّٰظِرِيْنَ.

"न-ज़-अ़" के मायने एक चीज़ को दूसरी चीज़ में से किसी क़द्र सख़्ती के साथ निकालने के हैं। मुराद यह है कि अपने हाथ को खींचकर निकाला। यहाँ यह ज़िक्र नहीं कि किस चीज़ में से निकाला। दूसरी आयतों में दो चीज़ें मज़कूर हैं, एक जगहः

اَدْخِلْ يَدَكَ فِيْ جَيْبِكَ.

आया है, जिसके मायने यह हैं कि अपना हाथ अपने गिरेबान में डालो। दूसरी जगहः

وَاضْمُمْ يَدَكَ اِلٰى جَنَاحِكَ.

बयान हुआ है, जिसके मायने यह हैं कि अपना हाथ अपने बाज़ू के नीचे दबा लो। इन दोनों आयतों से मालूम हुआ कि हाथ का निकालना गिरेबान के अन्दर से या बाज़ू के नीचे से होता था। यानी कभी गिरेबान में हाथ डालकर निकालने से और कभी बाज़ू के नीचे दबाकर निकालने से यह मोजिज़ा ज़ाहिर होता था किः

فَإِذَا هِيَ بَيْضَآءُ لِلنّٰظِرِيْنَ.

यानी वह हाथ चमकने वाला हो जाता है देखने वालों के लिये।

"बैज़ा-उ" के लफ़्ज़ी मायने सफ़ेद के हैं और हाथ का सफ़ेद हो जाना कभी बरस (बदन के सफ़ेद होने) की बीमारी के सबब भी हुआ करता है, इसलिये एक दूसरी आयत में इस जगह "मिन ग़ैरि सूइन्" का लफ़्ज़ भी आया है, जिसके मायने यह हैं कि यह हाथ की सफ़ेदी किसी बीमारी के सबब न थी। और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मालूम होता है कि यह सफ़ेदी भी मामूली सफ़ेदी न थी बल्कि इसके साथ रोशनी होती थी जिससे सारी फ़िज़ा रोशन हो जाती थी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इस जगह लफ़्ज़ 'लिन्नाज़िरीन" बढ़ाकर उस रोशनी के अ़जीब व ग़रीब होने की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया गया है, कि यह ऐसी अ़जीब रोशनी थी कि उसके देखने के लिये नाज़िरीन (देखने वाले) जमा हो जाते थे।

उस वक़्त फ़िरऔ़न के मुतालबे पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने दो मोजिज़े दिखलाये- एक लाठी का अज़्दहा बन जाना, दूसरे हाथ को गिरेबान या बग़ल में डालकर निकालने से उसमें रोशनी पैदा हो जाना। पहला मोजिज़ा मुख़ालिफ़ों में दहशत पैदा करने और डराने के लिये, और दूसरा मोजिज़ा उनकी दिलचस्पी और क़रीब करने के लिये है। जिसमें इशारा था कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की तालीम हिदायत का एक नूर रखती है इसका मानना और पैरवी करना कामयाबी का ज़रिया है।

قَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اِنَّ هٰذَا لَسٰحِرٌ عَلِيْمٌ

लफ़्ज़ "म-लउ" किसी क़ौम के रसूख़दार सरदारों के लिये बोला जाता है। मायने यह हैं कि क़ौमे फ़िरऔ़न के सरदार ये मोजिज़े देखकर अपनी क़ौम को ख़िताब करके कहने लगे कि यह तो बड़ा माहिर जादूगर है। वजह यह थी कि हर आदमी की सोच की परवाज़ उसकी हिम्मत के मुताबिक़ होती है। उन बेचारों को ख़ुदा तआ़ला और उसकी कामिल क़ुदरत की क्या ख़बर थी जिन्होंने सारी उम्र फ़िरऔ़न को अपना ख़ुदा और जादूगरों को अपना रहबर समझा और जादूगरों के करतबों ही को देखा था। वे इस हैरत-अंगेज़ वाक़िए को देखकर इसके सिवा कह ही क्या सकते थे कि यह भी कोई बड़ा जादू है। लेकिन उन लोगों ने भी यहाँ "साहिर" के साथ 'अ़लीम' का लफ़्ज़ बढ़ाकर यह ज़ाहिर कर दिया कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े के मुताल्लिक़ यह एहसास उनको भी हो गया था कि यह काम आ़म जादूगरों के काम से अलग, विशेष और भिन्न है, इसी लिये इतना इक़रार किया कि यह बड़े माहिर जादूगर हैं।

मोजिज़े और जादू में फ़र्क़

अल्लाह तआ़ला हमेशा अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के मोजिज़ों को इसी अन्दाज़ से ज़ाहिर फ़रमाते हैं कि अगर देखने वाले ज़रा भी ग़ौर करें और हठधर्मी इख़्तियार न करें तो मोजिज़े और जादू का फ़र्क़ ख़ुद-बख़ुद समझ लें। जादू करने वाले उमूमन नापाकी और गन्दगी में रहते हैं और जितनी ज़्यादा गन्दगी और नापाकी में हों उतना ही उनका जादू ज़्यादा कामयाब होता है,

बख़िलाफ़ अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के कि तहारत व पाकीज़गी उनकी तबीयत का लाज़िमी हिस्सा होती है, और यह भी अल्लाह की जानिब से खुला हुआ फ़र्क़ है कि नुबुव्वत का दावा करने के साथ किसी का जादू चलता भी नहीं।

और अ़क्ल व समझ रखने वाले तो असल हक़ीक़त को जानते हैं कि जादू से जो चीज़ें ज़ाहिर की जाती हैं वो सब तबई असबाब के दायरे के अन्दर होती हैं, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना होता है कि वो असबाब आ़म लोगों पर ज़ाहिर नहीं होते, बल्कि छुपे असबाब होते हैं, इसलिये वे यह समझते रहते हैं कि यह काम बग़ैर किसी ज़ाहिरी सबब के हो गया, बख़िलाफ़ मोजिज़े के कि उसमें तबई असबाब का बिल्कुल भी कोई दख़ल नहीं होता, वह डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत का फ़ेल होता है, इसी लिये क़ुरआने करीम में उसको हक़ तआ़ला की तरफ़ मन्सूब किया गया है। एक जगह फ़रमायाः

وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى.

(लेकिन अल्लाह ने फैंका) इससे मालूम हुआ कि मोजिज़े और जादू की हक़ीक़तें बिल्कुल अलग-अलग और एक दूसरे के विपरीत हैं। वास्तविकता से आगाह के लिये तो कोई शक व शुब्हे और धोखा खाने की वजह ही नहीं, अ़वाम को धोखा हो सकता था, मगर अल्लाह तआ़ला ने इस धोखे व शक को दूर करने के लिये भी ऐसे फ़र्क़ व निशानात रख दिये हैं कि जिसकी वजह से लोग धोखे से बच जायें।

खुलासा यह है कि फ़िरऔ़न की क़ौम ने भी मूसा अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़ों को अपने जादूगरों के करतबों और कमाल से कुछ अलग और विशेष पाया, इसलिये इस पर मजबूर हुए कि यह कहें कि यह बड़ा माहिर जादूगर है कि आ़म जादूगर इस जैसे कामों का प्रदर्शन नहीं कर सकते।

يُرِيْدُ اَنْ يُّخْرِجَكُمْ مِّنْ اَرْضِكُمْ فَمَاذَا تَاْمُرُوْنَ.

यानी यह माहिर जादूगर यह चाहता है कि तुमको तुम्हारे मुल्क से निकाल दे, तो अब बतला दो कि तुम्हारी क्या राय है? क्या मश्विरा देते हो?

قَالُوْٓا اَرْجِهْ وَاَخَاهُ وَاَرْسِلْ فِى الْمَدَآئِنِ حٰشِرِيْنَ ﴿۱۱۱﴾ يَاْتُوْكَ بِكُلِّ سٰحِرٍ
عَلِيْمٍ ﴿۱۱۲﴾ وَجَآءَ السَّحَرَةُ فِرْعَوْنَ قَالُوْٓا اِنَّ لَنَا لَاَجْرًا اِنْ كُنَّا نَحْنُ الْغٰلِبِيْنَ ﴿۱۱۳﴾ قَالَ نَعَمْ وَاِنَّكُمْ لَمِنَ
الْمُقَرَّبِيْنَ ﴿۱۱۴﴾ قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِمَّآ اَنْ تُلْقِىَ وَاِمَّآ اَنْ نَّكُوْنَ نَحْنُ الْمُلْقِيْنَ ﴿۱۱۵﴾ قَالَ اَلْقُوْا ۚ فَلَمَّآ اَلْقَوْا
سَحَرُوْٓا اَعْيُنَ النَّاسِ وَاسْتَرْهَبُوْهُمْ وَجَآءُوْ بِسِحْرٍ عَظِيْمٍ ﴿۱۱۶﴾ وَاَوْحَيْنَآ اِلٰى مُوْسٰٓى اَنْ اَلْقِ عَصَاكَ ۚ فَاِذَا
هِىَ تَلْقَفُ مَا يَاْفِكُوْنَ ﴿۱۱۷﴾ فَوَقَعَ الْحَقُّ وَبَطَلَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۱۸﴾ فَغُلِبُوْا هُنَالِكَ وَانْقَلَبُوْا
صٰغِرِيْنَ ﴿۱۱۹﴾ وَاُلْقِىَ السَّحَرَةُ سٰجِدِيْنَ ﴿۱۲۰﴾ قَالُوْٓا اٰمَنَّا بِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ﴿۱۲۱﴾ رَبِّ مُوْسٰى وَهٰرُوْنَ ﴿۱۲۲﴾

क़ालू अरजिह् व अख़ाहु व अर्सिल् फ़िल्मदाइनि हाशिरीन (111) यअ्तू-क बिकुल्लि साहिरिन् अ़लीम (112) व जाअस्स-ह-रतु फ़िर्औ-न क़ालू इन्-न लना लअज्रन् इन् कुन्ना नह्नुल्-ग़ालिबीन (113) क़ा-ल नअ़म् व इन्नकुम् लमिनल्-मुक़र्रबीन (114) क़ालू या मूसा इम्मा अन् तुल्कि-य व इम्मा अन्नकू-न नह्नुल्-मुल्क़ीन (115) क़ा-ल अल्क़ू फ़-लम्मा अल्क़ौ स-हरू अअ्युनन्नासि वस्तर्हबूहुम् व जाऊ बिसिह्रिन् अ़ज़ीम (116) व औहैना इला मूसा अन् अल्कि अ़सा-क फ़-इज़ा हि-य तल्क़फ़ु मा यअ्फ़िकून (117) फ़-व-क़अ़ल्-हक़्क़ु व ब-त-ल मा कानू यअ़मलून (118) फ़ग़ुलिबू हुनालि-क वन्क़-लबू साग़िरीन (119) व उल्कियस्स-ह-रतु साजिदीन (120) क़ालू आमन्ना बिरब्बिल्-आ़लमीन (121) रब्बि मूसा व हारून (122)

बोले ढील दे इसको और इसके भाई को और भेज परगनों में जमा करने वालों को। (111) कि जमा कर लायें तेरे पास जो हो कामिल जादूगर। (112) और आये जादूगर फ़िरऔन के पास, बोले हमारे लिये कुछ मज़दूरी है अगर हम ग़ालिब हुए? (113) बोला हाँ और बेशक तुम मुक़र्रब हो जाओगे। (114) बोले ऐ मूसा! या तो तू डाल और या हम डालते हैं। (115) कहा डालो, फिर जब उन्होंने डाला, बाँध दिया लोगों की आँखों को और उनको डरा दिया और लाये बड़ा जादू। (116) और हमने हुक्म भेजा मूसा को कि डाल दे अपना अ़सा सो वह जभी लगा निगलने जो साँग उन्होंने बनाया था। (117) पस ज़ाहिर हो गया हक़ और ग़लत हो गया जो कुछ उन्होंने किया था। (118) पस हार गये उस जगह और लौट गये ज़लील होकर। (119) और गिर पड़े जादूगर सज्दे में। (120) बोले हम ईमान लाये परवर्दिगारे आ़लम पर। (121) जो रब है मूसा और हारून का। (122)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ग़र्ज़ कि मश्विरा तय कर-कराकर) उन्होंने (फ़िरऔन से) कहा कि आप इन (मूसा अ़लैहिस्सलाम) को और इनके भाई को थोड़ी मोहलत दीजिये और (अपनी हुकूमत के) शहरों में (अहलकारों यानी) चपरासियों को (हुक्म नामे देकर) भेज दीजिए कि वे (सब शहरों से) सब

माहिर जादूगरों को (जमा करके) आपके पास लाकर हाज़िर कर दें। (चुनाँचे ऐसा ही इन्तिज़ाम किया गया) और वे जादूगर फ़िरऔन के पास हाज़िर हुए (और) कहने लगे कि अगर हम (मूसा अ़लैहिस्सलाम पर) ग़ालिब आये तो (क्या) हमको कोई (बड़ा) सिला (और इनाम) मिलेगा? (फ़िरऔन ने) कहा कि हाँ! (बड़ा इनाम मिलेगा) और (उसके अ़लावा यह कि) तुम (हमारे) क़रीबी और ख़ास लोगों में दाख़िल हो जाओगे। (ग़र्ज़ कि मूसा अ़लैहिस्सलाम को फ़िरऔन की तरफ़ से इसकी इत्तिला दी गयी और मुक़ाबले के लिये तारीख़ तय हुई और तारीख़ पर सब एक मैदान में जमा हुए। उस वक़्त) उन जादूगरों ने (मूसा अ़लैहिस्सलाम से) अ़र्ज़ किया- ऐ मूसा! (हम आपको इख़्तियार देते हैं) चाहे आप (पहले अपनी लाठी मैदान में) डालिए (जिसको आप अपना मोजिज़ा बतलाते हैं) और या (आप कहें तो) हम ही (अपनी रस्सियाँ और लाठियाँ मैदान में) डालें। (मूसा अ़लैहिस्सलाम ने) फ़रमाया कि (पहले) तुम ही डालो। जब उन्होंने (अपनी रस्सियों और लाठियों को) डाला तो (जादू से देखने वाले) लोगों की नज़र-बन्दी कर दी (जिससे वो लाठियाँ और रस्सियाँ साँप की शक्ल में लहराती नज़र आने लगीं) और उन पर दहशत ग़ालिब कर दी और एक (तरह का) बड़ा जादू दिखलाया। और (उस वक़्त) हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को (वही के ज़रिये) हुक्म दिया कि आप अपनी लाठी डाल दीजिए (जैसे डाला करते हैं) सो लाठी का डालना था कि) उसने अचानक (अज़्दहा बनकर) उनके सारे बने-बनाए खेल को निगलना शुरू किया। पस (उस वक़्त) हक़ (का हक़ होना) ज़ाहिर हो गया, और उन्होंने (यानी जादूगरों ने) जो कुछ बनाया था सब (आता-) जाता रहा। पस वे लोग (यानी फ़िरऔन और उसकी क़ौम) उस मौक़े पर हार गये और ख़ूब ज़लील हुए (और अपना-सा मुँह लेकर रह गये) और वे जो जादूगर थे सज्दे में गिर गये (और पुकार-पुकारकर) कहने लगे कि हम ईमान लाये रब्बुल-आ़लमीन पर। जो मूसा और हारून (अ़लैहिमस्सलाम) का भी रब है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का बक़ीया क़िस्सा ज़िक्र हुआ है कि जब फ़िरऔन ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का खुला मोजिज़ा देखा कि लाठी का साँप बन गया और फिर जब उसको हाथ में पकड़ा तो फिर लाठी बन गयी, और हाथ को गिरेबान में डालकर निकाला तो चमकने लगा। क़ुदरत की इस खुली निशानी का अ़क़्ली तक़ाज़ा यह था कि मूसा अ़लैहिस्सलाम पर ईमान ले आता, मगर जैसा कि बातिल वालों का आ़म तरीक़ा है कि हक़ पर पर्दा डालने और मुकरने के लिये सही चीज़ को ग़लत उनवान दिया करते हैं। फ़िरऔन और उसकी क़ौम के सरदारों ने भी लोगों से यही कहा कि यह बड़े माहिर जादूगर हैं और इनका मक़सद यह है कि तुम्हारे मुल्क पर क़ब्ज़ा करके तुम्हें निकाल दें, तो अब तुम बतलाओ क्या करना चाहिये?

फ़िरऔन की क़ौम ने यह सुनकर जवाब दियाः

اَرْجِهْ وَاَخَاهُ وَاَرْسِلْ فِى الْمَدَآئِنِ حٰشِرِيْنَ. يَاْتُوْكَ بِكُلِّ سٰحِرٍ عَلِيْمٍ.

इसमें लफ़्ज़ 'अरजिह' 'इरजाउन' से निकला है जिसके मायने ढील देने और उम्मीद दिलाने के आते हैं, और "मदाईन' "मदीनतुन" की जमा (बहुवचन) है जो हर बड़े शहर के लिये बोला जाता है, "हाशिरीन" "हाशिरुन" की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं उठाने और जमा करने वाला, मुराद इससे सिपाही हैं जो मुल्क के हर कोने से जादूगरों को जमा करके लायें।

आयत का मतलब यह है कि क़ौम के लोगों ने यह मश्विरा दिया कि अगर यह जादूगर है और जादू के ज़रिये हमारा मुल्क फ़तह करना चाहता है तो इसका मुक़ाबला हमारे लिये कुछ मुश्किल नहीं, हमारे मुल्क में बड़े-बड़े माहिर जादूगर हैं, इसको अपने जादू से शिकस्त दे देंगे। कुछ सिपाही मुल्क के हर इलाक़े में भेज दीजिये जो हर शहर के जादूगरों को बुला लायें।

वजह यह थी कि उस ज़माने में जादू, सेहर का रिवाज आ़म था और आ़म लोगों पर जादूगरों का क़ब्ज़ा था, और शायद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को अ़सा (लाठी) और यदे-बैज़ा (चमकते हाथ) का मोजिज़ा इसी लिये अ़ता फ़रमाया कि जादूगरों से मुक़ाबला हो और मोजिज़े के मुक़ाबले में जादू की रुस्वाई सब लोग आँखों से देख लें जैसा कि अल्लाह तआ़ला की पुरानी आ़दत भी यही है कि हर ज़माने के पैग़म्बर को उस ज़माने के मुनासिब मोजिज़े अ़ता फ़रमाते हैं। हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के ज़माने में यूनानी हिक्मत और यूनानी पद्धति शिखर पर थी तो उनको मोजिज़ा यह दिया गया कि माँ के पेट से पैदा हुए अन्धों को बीना बना दें और जुज़ामी कोढ़ियों को तन्दुरुस्त कर दें। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर में अ़रब का सबसे बड़ा कमाल फ़साहत व बलाग़त (कलाम व बयान में महारत और भाषा व साहित्य में कामिल दक्षता) था तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का सबसे बड़ा मोजिज़ा क़ुरआन बनाया गया, जिसके मुक़ाबले से सारा अ़रब व अ़जम आ़जिज़ हो गया।

وَجَآءَ السَّحَرَةُ فِرْعَوْنَ قَالُوْٓا اِنَّ لَنَا لَاَجْرًا اِنْ كُنَّا نَحْنُ الْغٰلِبِيْنَ. قَالَ نَعَمْ وَاِنَّكُمْ لَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ.

यानी लोगों के मश्विरे के मुताबिक़ मुल्क भर से जादूगरों के जमा करने का इन्तिज़ाम किया गया, और ये जादूगर फ़िरऔ़न के पास पहुँच गये तो इन्होंने फ़िरऔ़न से पूछा कि अगर हम मूसा पर ग़ालिब आ गये तो हमें इसकी कुछ उजरत और इनाम भी मिलेगा? फ़िरऔ़न ने कहा कि हाँ उजरत भी मिलेगी और इस पर मज़ीद यह इनाम होगा कि तुम सब हमारे मुक़र्रबीन (ख़ास लोगों) में दाख़िल हो जाओगे।

ये जादूगर जो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले के लिये मुल्क भर से जमा किये गये थे, इनकी तायदाद में तारीख़ी रिवायतें विभिन्न हैं। नौ सौ से लेकर तीन लाख तक की रिवायतें हैं। इनके साथ लाठियों और रस्सियों का एक अंबार था जो तीन सौ ऊँटों पर लादकर लाया गया था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

फ़िरऔ़नी जादूगरों ने आते ही पहली बात सौदेबाज़ी की शुरू की कि हम मुक़ाबला करें और ग़ालिब आ जायें तो हमें क्या मिलेगा? वजह यह थी कि अहले बातिल (ग़ैर-हक़ वालों) के

सामने सिर्फ़ दुनिया के फ़ायदे होते हैं इसलिये कोई भी काम करने से पहले मुआवज़े और उजरत का सवाल सामने आता है, बख़िलाफ़ अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके नायबों के, कि वे हर क़दम पर यह ऐलान करते हैं:

وَمَآ اَسْئَلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِىَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ.

यानी हम जो पैग़ामे हक़ तुम्हारे फ़ायदे के लिये तुम्हें पहुँचाते हैं इस पर तुमसे किसी मुआवज़े के तालिब नहीं, बल्कि हमारा मुआवज़ा सिर्फ़ रब्बुल-आ़लमीन ने अपने ज़िम्मे लिया है। फ़िरऔ़न ने उनको बतलाया कि तुम लोग उजरत चाहते हो, हम उजरत भी देंगे और इससे बढ़कर यह भी कि तुम्हें शाही दरबार का मुक़र्रब (ख़ास) बना लेंगे।

फ़िरऔ़न से यह गुफ़्तगू करने के बाद जादूगरों ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से मुक़ाबले की जगह और वक़्त का निर्धारण कराया। चुनाँचे एक खुला मैदान और ईद के दिन सूरज बुलन्द होने के बाद का वक़्त इस काम के लिये तय हुआ, जैसा कि क़ुरआन की दूसरी आयतों में है:

قَالَ مَوْعِدُكُمْ يَوْمُ الزِّيْنَةِ وَاَنْ يُّحْشَرَ النَّاسُ ضُحًى.

कुछ रिवायतों में है कि इस मौक़े पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जादूगरों के सरदार से गुफ़्तगू फ़रमाई कि अगर मैं तुम पर ग़ालिब आ गया तो क्या तुम मुझ पर ईमान ले आओगे? उन्होंने कहा कि हमारे पास ऐसे जादू हैं कि उन पर कोई ग़ालिब आ ही नहीं सकता, इसलिये हमारे मग़लूब होने (हारने) का कोई सवाल ही नहीं हो सकता। और अगर मान लो तुम ग़ालिब आ गये तो हम खुलेआम फ़िरऔ़न की नज़रों के सामने तुम पर ईमान ले आयेंगे। (तफ़सीरे मज़हरी व तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِمَّآ اَنْ تُلْقِىَ وَاِمَّآ اَنْ نَّكُوْنَ نَحْنُ الْمُلْقِيْنَ.

"इलक़ाउन्" के मायने डालने के हैं। मुराद यह है कि जब मुक़ाबले के मैदान में पहुँचे तो जादूगरों ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से कहा कि या तो आप पहले डालें या हम पहले डालने वालों में से हो जायें। जादूगरों का यह कहना अपनी बेफ़िक्री और बड़ाई जताने के लिये था कि हमें इसकी परवाह नहीं कि शुरूआ़त हमारी तरफ़ से हो, क्योंकि हम हर हालत में अपने फ़न पर इत्मीनान रखते हैं। उनके अन्दाज़े बयान से महसूस होता है कि चाहते तो यही थे कि पहला वार उनका हो मगर क़ुव्वत के प्रदर्शन के लिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से मालूम किया कि पहल आप करना चाहते हो या हम करें?

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उनकी मन्शा को महसूस करके अपने मोजिज़े पर मुकम्मल इत्मीनान होने के सबब पहला मौक़ा उनको दे दिया और फ़रमाया "अल्क़ू" यानी तुम ही पहले डालो।

और अ़ल्लामा इब्ने कसीर ने फ़रमाया कि जादूगरों ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के साथ अदब व एहतिराम का मामला किया कि पहला मौक़ा उनको देने की पेशकश की, इसी का यह असर था कि उनको ईमान की तौफ़ीक़ हो गयी।

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि अव्वल तो जादू ख़ुद ही एक हराम फ़ेल है, फिर जब कि वह किसी पैग़म्बर को शिकस्त देने के लिये इस्तेमाल किया जाये तो बिला शुब्हा कुफ़्र है, फिर मूसा अ़लैहिस्सलाम ने कैसे उन लोगों को इसकी इजाज़त देने के लिये फ़रमाया "अल्क़ू" यानी तुम डालो। लेकिन हक़ीक़ते हाल पर ग़ौर करने से यह सवाल ख़त्म हो जाता है, क्योंकि यहाँ तो यक़ीनी था कि ये लोग अपना जादू मुक़ाबले पर ज़रूर पेश करेंगे, गुफ़्तगू सिर्फ़ पहले और पिछले की थी, इसमें हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी बहादुरी और हिम्मत का सुबूत देने के लिये उनको ही मौक़ा अ़ता फ़रमाया। इसके अ़लावा इसमें एक फ़ायदा यह भी था कि पहले जादूगर अपनी लाठियों और रस्सियों के साँप बना लें तो फिर मूसा अ़लैहिस्सलाम की लाठी का मोजिज़ा, सिर्फ़ यही नहीं कि वह भी साँप बन जाये बल्कि इस तरह ज़ाहिर हो कि वह जादू के सारे साँपों को निगल भी जाये, ताकि जादूगरी की खुली शिकस्त पहले ही क़दम पर सामने आ जाये। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

और यह भी कहा जा सकता है कि मूसा अ़लैहिस्सलाम का यह इरशाद उनको जादूगरी करने की इजाज़त के लिये नहीं बल्कि उनकी रुस्वाई को वाज़ेह करने के लिये था कि अच्छा तुम डालकर देखो कि तुम्हारे जादू का क्या अन्जाम होता है।

فَلَمَّآ اَلْقَوْا سَحَرُوْٓا اَعْيُنَ النَّاسِ وَاسْتَرْهَبُوْهُمْ وَجَآءُوْ بِسِحْرٍ عَظِيْمٍ.

यानी जब जादूगरों ने अपनी लाठियाँ और रस्सियाँ डालीं तो लोगों की नज़र-बन्दी कर दी और उन पर हैबत (घबराहट) ग़ालिब कर दी और बड़ा जादू दिखलाया।

इस आयत से मालूम हुआ कि उन लोगों का जादू एक क़िस्म की नज़र-बन्दी और ख़्याली असर था जिससे देखने वालों को यह महसूस होने लगा कि ये लाठियाँ और रस्सियाँ साँप बनकर दौड़ रहे हैं, हालाँकि वे वास्तव में उसी तरह लाठियाँ और रस्सियाँ ही थीं, साँप नहीं बने थे। यह एक क़िस्म का मिस्मरेज़्म (ज़ेहन व ख़्याल पर असर डालना) था जिसका असर इनसानी ख़्याल और नज़र को मग़लूब कर देता है। लेकिन इससे यह लाज़िम नहीं आता कि जादू सिर्फ़ इसी क़िस्म में सीमित है, जादू के द्वारा किसी चीज़ की शक्ल व हक़ीक़त को नहीं बदला जा सकता। क्योंकि कोई शरई या अ़क़्ली दलील इसकी नफ़ी पर क़ायम नहीं है, बल्कि जादू की विभिन्न क़िस्में वाक़िआ़त से साबित हैं। कहीं तो सिर्फ़ हाथ की चालाकी होती है जिसके ज़रिये देखने वालों को धोखा लग जाता है, कहीं सिर्फ़ ख़्याल पर असर और नज़र-बन्दी होती है जैसे मिस्मरेज़्म से। और अगर कहीं किसी चीज़ की हक़ीक़त व सूरत भी बदल जाती हो कि इनसान का पत्थर बन जाये तो यह भी किसी शरई या अ़क़्ली दलील के ख़िलाफ़ नहीं।

وَاَوْحَيْنَآ اِلٰى مُوْسٰٓى اَنْ اَلْقِ عَصَاكَ فَاِذَا هِيَ تَلْقَفُ مَا يَاْفِكُوْنَ.

यानी हमने मूसा को हुक्म दिया कि अपना अ़सा (लाठी) डाल दो। वह ज़मीन पर गिरते ही सबसे बड़ा साँप बनकर उन तमाम साँपों को निगलने लगा जो जादूगरों ने जादू से (बनाये और) ज़ाहिर किये थे।

तारीख़ी रिवायतों में है कि हज़ारों जादूगरों की हज़ारों लाठियाँ और रस्सियाँ जब साँप बनकर दौड़ने लगीं तो सारा मैदान साँपों से भर गया और एक अजीब दहशत सारे मजमे पर छा गयी थी, लेकिन जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की लाठी एक बड़े अज़्दहे की सूरत में सामने आई तो उन सब साँपों को निगल कर ख़त्म कर दिया।

فَوَقَعَ الْحَقُّ وَبَطَلَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ.

यानी हक़ ज़ाहिर हो गया और जो कुछ जादूगरों ने बनाया था वह सब बातिल और हवा हो गया।

فَغُلِبُوْا هُنَالِكَ وَانْقَلَبُوْا صٰغِرِيْنَ.

यानी इस मौक़े पर वे सब हार गये और ख़ूब रुस्वा (ज़लील) हुए।

وَاُلْقِيَ السَّحَرَةُ سٰجِدِيْنَ، قَالُوْٓا اٰمَنَّا بِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ، رَبِّ مُوْسٰى وَهٰرُوْنَ.

यानी जादूगर सज्दे में डाल दिये गये और कहने लगे कि हम रब्बुल-आ़लमीन यानी मूसा व हारून के रब पर ईमान ले आये।

"सज्दे में डाल दिये गये" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि मूसा अ़लैहिस्सलाम का मोजिज़ा देखकर ये लोग कुछ ऐसे भौंचक्के और मजबूर हो गये कि बेइख़्तियार सज्दे में गिर गये, और इसकी तरफ़ भी इशारा हो सकता है कि अल्लाह तआ़ला ने तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाकर उनको सज्दे में डाल दिया। और 'रब्बुल-आ़लमीन' के साथ 'रब्बि मूसा व हारून' बढ़ाकर अपनी बात को फ़िरऔ़न के मुक़ाबले में वाज़ेह कर दिया, क्योंकि वह बेवक़ूफ़ तो अपने आप ही को रब्बुल-आ़लमीन कहता था, इसलिये 'रब्बि मूसा व हारून' कहकर उसको बतला दिया कि हम तेरी ख़ुदाई के क़ायल नहीं रहे।

قَالَ فِرْعَوْنُ اٰمَنْتُمْ بِهٖ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ ۚ اِنَّ هٰذَا لَمَكْرٌ مَّكَرْتُمُوْهُ فِى الْمَدِيْنَةِ لِتُخْرِجُوْا
مِنْهَآ اَهْلَهَا ۚ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۝ لَاُقَطِّعَنَّ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِّنْ خِلَافٍ ثُمَّ لَاُصَلِّبَنَّكُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝
قَالُوْٓا اِنَّآ اِلٰى رَبِّنَا مُنْقَلِبُوْنَ ۝ وَمَا تَنْقِمُ مِنَّآ اِلَّآ اَنْ اٰمَنَّا بِاٰيٰتِ رَبِّنَا لَمَّا جَآءَتْنَا ۚ رَبَّنَآ اَفْرِغْ
عَلَيْنَا صَبْرًا وَّتَوَفَّنَا مُسْلِمِيْنَ ۝ وَقَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اَتَذَرُ مُوْسٰى وَقَوْمَهٗ لِيُفْسِدُوْا فِى ع ۱۴
الْاَرْضِ وَيَذَرَكَ وَاٰلِهَتَكَ ۚ قَالَ سَنُقَتِّلُ اَبْنَآءَهُمْ وَنَسْتَحْيٖ نِسَآءَهُمْ ۚ وَاِنَّا فَوْقَهُمْ قٰهِرُوْنَ ۝

का-ल फ़िर्औ़नु आमन्तुम् बिही क़ब्-ल अन् आज़-न लकुम् इन्-न हाज़ा लमक्रुम्-मकर्तुमूहु फ़िल्-	बोला फ़िरऔ़न- क्या तुम ईमान ले आये इस पर मेरी इजाज़त से पहले, यह तो मक्र है जो बनाया तुम सब ने इस शहर में ताकि निकाल दो इस शहर से इसके

-मदीनति लितुख़्रिजू मिन्हा अह्लहा फ़सौ-फ़ तअ्लमून (123) ल-उक़त्तिअन्-न ऐदियकुम् व अर्जु-लकुम् मिन् ख़िलाफ़िन् सुम्-म ल-उसल्लिबन्नकुम् अज्मअ़ीन (124) क़ालू इन्ना इला रब्बिना मुन्क़लिबून (125) व मा तन्क़िमु मिन्ना इल्ला अन् आमन्ना बिआयाति रब्बिना लम्मा जाअत्ना, रब्बना अफ़्रिग़ अ़लैना सब्रंव्-व तवफ़्फ़ना मुस्लिमीन (126) ✿	रहने वालों को, सो अब तुमको मालूम हो जायेगा। (123) मैं ज़रूर काटूँगा तुम्हारे हाथ और दूसरी तरफ़ के पाँव, फिर सूली पर चढ़ाऊँगा तुम सब को। (124) वे बोले हमको तो अपने रब की तरफ़ लौट कर जाना ही है। (125) और तुझको हमसे यही दुश्मनी है कि मान लिया हमने अपने रब की निशानियों को जब वे हम तक पहुँचीं। ऐ हमारे रब! दहाने खोल दे हम पर सब्र के और हम को मार मुसलमान (यानी हमारा ईमान पर ख़ात्मा फ़रमा)। (126) ✿
व क़ालल्म-लउ मिन् क़ौमि फ़िर्औ़-न अ-त-ज़रु मूसा व क़ौमहू लियुफ़्सिदू फ़िल्अर्ज़ि व य-ज़-र-क व आलि-ह-त-क, क़ा-ल सनुक़त्तिलु अब्ना-अहुम् व नस्तह्यी निसा-अहुम् व इन्ना फ़ौक़हुम् क़ाहिरून (127)	और बोले सरदार क़ौमे फ़िरऔ़न के, क्यों छोड़ता है तू मूसा और उसकी क़ौम को कि धूम मचायें मुल्क में, और मौक़ूफ़ कर दे तुझको और तेरे बुतों को। बोला अब हम मार डालेंगे उनके बेटों को और ज़िन्दा रखेंगे उनकी औ़रतों को, और हम उन पर ज़ोरावर हैं। (127)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फ़िरऔ़न (बड़ा घबराया कि कहीं ऐसा न हो कि सारी पब्लिक ही मुसलमान हो जाये तो एक मज़मून गढ़कर जादूगरों से) कहने लगा कि हाँ तुम इस पर (यानी मूसा अ़लैहिस्सलाम पर) ईमान लाये हो इसके बग़ैर ही कि मैं तुमको इजाज़त दूँ? बेशक (मालूम होता है कि) यह (जो कुछ मुक़ाबले के तौर पर हुआ है) एक कार्रवाई थी जिस पर इस शहर में तुम्हारा अ़मल दरामद हुआ है (ख़ुफ़िया साज़िश हो गयी है कि तुम यूँ करना हम यूँ करेंगे, फिर इस तरह हार-जीत ज़ाहिर करेंगे और यह कार्रवाई मिली-भगत इसलिये की है) ताकि तुम सब (मिलकर) इस (शहर) के रहने वालों को इससे बाहर निकाल दो (फिर दिली सुकून के साथ सब मिलकर यहाँ हुकूमत करो) सो (बेहतर है) अब तुमको हक़ीक़त मालूम हुई जाती है (और वह यह है कि) मैं तुम्हारे

एक तरफ़ के हाथ और दूसरी तरफ़ के पाँव काटूँगा, फिर तुम सब को सूली पर टाँग दूँगा (ताकि औरों को सबक़ मिले)। उन्होंने जवाब दिया कि (कुछ परवाह नहीं) हम मरकर (किसी बुरे ठिकाने तो न जायेंगे बल्कि) अपने मालिक ही के पास जाएँगे (जहाँ हर तरह अमन व राहत है, सो हमारा नुक़सान ही क्या है) और तूने हममें कौन-सा ऐब देखा (जिस पर इस क़द्र शोर व हंगामा है) सिवाय इसके कि हम अपने रब के अहकाम पर ईमान ले आये (सो यह कोई ऐब की बात नहीं। फिर उससे रुख़ फेरकर हक़ तआ़ला से दुआ़ की कि) ऐ हमारे रब! हमको सब्र अ़ता फ़रमा (कि अगर यह सख़्ती करे तो हम अपनी हालत पर जमे रहें) और हमारी जान इस्लाम की हालत पर निकालिये (कि इसकी सख़्ती से परेशान होकर कोई बात ईमान के ख़िलाफ़ न हो जाये)।

और (जब मूसा अ़लैहिस्सलाम का यह ज़बरदस्त मोजिज़ा सार्वजनिक तौर पर ज़ाहिर हुआ और जादूगर ईमान ले आये और कुछ और लोग भी आपके ताबे हो गये, उस वक़्त) फ़िरऔ़न की क़ौम के सरदारों ने (जो कि हुकूमत के ज़िम्मेदार और पदाधिकारी थे, यह देखकर कि कुछ आदमी मुसलमान हो चुके फ़िरऔ़न से) कहा कि क्या आप मूसा (अ़लैहिस्सलाम) और उनकी क़ौम (यानी उनके पैरोकारों) को यूँ ही (अपनी मर्ज़ी के मालिक बनाकर बेलगाम और आज़ाद) रहने देंगे कि वे मुल्क में फ़साद करते फिरें (फ़साद यह कि अपनी तायदाद बढ़ायें जिसका परिणाम यह है कि इससे बग़ावत का अन्देशा है) और वे (यानी मूसा अ़लैहिस्सलाम) आपको और आपके (तजवीज़ किये हुए) माबूदों को छोड़े रहें (यानी उनके माबूद होने के मुन्किर रहें और मूसा अ़लैहिस्सलाम के साथ उनकी क़ौम भी ऐसा ही करे। यानी आप इसका इन्तिज़ाम कीजिये) फ़िरऔ़न ने कहा कि (फ़िलहाल यह इन्तिज़ाम मुनासिब मालूम होता है कि) हम अभी इन लोगों के बेटों को क़त्ल करना शुरू कर दें (ताकि इनका ज़ोर न बढ़ने पाये) और (चूँकि औ़रतों के बढ़ने से कोई अन्देशा नहीं तथा हमको अपने कामों और ख़िदमत के लिये भी ज़रूरत है इसलिये) उनकी औ़रतों को ज़िन्दा रहने दें, और हमको उन पर हर तरह का ज़ोर (और ताक़त हासिल) है (इस इन्तिज़ाम में कोई दुश्वारी न होगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में बयान हुआ था कि फ़िरऔ़न ने अपनी क़ौम के सरदारों के मश्विरे से मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले के लिये जिन जादूगरों को पूरे मुल्क से जमा किया था वे मुक़ाबले के मैदान में हार गये, और सिर्फ़ यही नहीं कि अपनी हार मान ली बल्कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर ईमान ले आये।

तारीख़ी रिवायतों में है कि जादूगरों के सरदार मुसलमान हो गये तो उनको देखकर क़ौमे फ़िरऔ़न के छह लाख आदमी हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर ईमान ले आये और ऐलान कर दिया।

इस मुक़ाबले और मुनाज़रे से पहले तो सिर्फ़ दो हज़रात मूसा और हारून अ़लैहिमस्सलाम

फ़िरऔन के मुख़ालिफ़ थे, इस वक़्त सबसे बड़े जादूगर जो क़ौम में ताक़त व अहम मक़ाम के मालिक थे और उनके साथ छह लाख अ़वाम मुसलमान होकर एक बहुत बड़ी ताक़त मुक़ाबले पर आ गयी।

उस वक़्त फ़िरऔन की परेशानी और चिंता बेजा न थी, मगर उसने उसको छुपाकर एक चालाक होशियार राजनेता के अन्दाज़ में पहले तो जादूगरों पर यह बाग़ियाना इल्ज़ाम लगाया कि तुमने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के साथ ख़ुफ़िया साज़िश करके यह काम अपने मुल्क व मिल्लत को नुक़सान पहुँचाने के लिये किया हैः

اِنَّ هٰذَا لَمَكْرٌ مَّكَرْتُمُوْهُ فِى الْمَدِيْنَةِ.

यानी यह एक साज़िश है जो तुमने मुक़ाबले के मैदान में आने से पहले शहर के अन्दर आपस में कर रखी थी। और फिर जादूगरों को ख़िताब करके कहाः

اٰمَنْتُمْ بِهٖ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ.

यानी क्या तुमने मेरी इजाज़त से पहले से ही ईमान क़ुबूल कर लिया? यह सवाली अन्दाज़ में इनकार तंबीह व डाँट के तौर पर था। और अपनी इजाज़त से पहले ईमान लाने का ज़िक्र करके लोगों को यह यक़ीन दिलाने की कोशिश की है कि हम ख़ुद भी यही चाहते थे कि अगर मूसा अ़लैहिस्सलाम का हक़ पर होना वाज़ेह हो जाये तो हम भी उनको मानें और लोगों को भी इजाज़त दें कि वे मुसलमान हो जायें, लेकिन तुम लोगों ने जल्दबाज़ी की और हक़ीक़त को सोचे समझे बग़ैर एक साज़िश का शिकार हो गये।

इस चालाकी से एक तरफ़ तो लोगों के सामने मूसा अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े और जादूगरों के इस्लाम लाने को एक साज़िश क़रार देकर उनको पुरानी गुमराही में मुब्तला रखने का इन्तिज़ाम किया और दूसरी तरफ़ सियासी चालाकी यह की कि मूसा अ़लैहिस्सलाम का अ़मल और जादूगरों का इस्लाम जो ख़ालिस फ़िरऔन की गुमराही को खोलने के लिये था, क़ौम और अ़वाम से उसका कोई ताल्लुक़ न था, उसको एक मुल्की और सियासी मसला बनाने के लिये कहाः

لِتُخْرِجُوْا مِنْهَآ اَهْلَهَا.

यानी तुम लोगों ने यह साज़िश इसलिये की है कि तुम चाहते हो कि मिस्र देश पर तुम ग़ालिब आ जाओ और इसके रहने वालों को यहाँ से निकाल दो। इन चालाकियों के बाद उन सब पर अपनी हैबत और हुकूमत का रौब व ख़ौफ़ जमाने के लिये जादूगरों को धमकियाँ देनी शुरू कीं। पहले तो अस्पष्ट अन्दाज़ में कहाः

فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ.

यानी तुम अभी देख लोगे कि तुम्हारी इस साज़िश का क्या अन्जाम होता है। उसके बाद इसको वाज़ेह करके बतलायाः

لَاُقَطِّعَنَّ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِّنْ خِلَافٍ ثُمَّ لَاُصَلِّبَنَّكُمْ اَجْمَعِيْنَ.

यानी मैं तुम सबके हाथ पैर विपरीत दिशाओं के काटकर तुम सबको सूली पर चढ़ा दूँगा। विपरीत दिशाओं से काटने का मतलब यह है कि दायाँ हाथ और बायाँ पैर जिससे दोनों दिशाएँ ज़ख़्मी, बद-शक्ल और बेकार हो जायें।

फ़िरऔन ने इस बदहाली पर क़ाबू पाने और अपने दरबारियों और अवाम को क़ाबू में रखने की काफ़ी तदबीर कर ली थी और उसकी ज़ालिमाना सज़ायें पहले से मशहूर और लोगों को दहशत में लाने के लिये काफ़ी थीं, लेकिन इस्लाम व ईमान एक ऐसी ज़बरदस्त क़ुव्वत है कि जब वह किसी दिल में उतर जाती है तो फिर इनसान सारी दुनिया और उसके संसाधनों का मुक़ाबला करने के लिये तैयार हो जाता है।

ये जादूगर जो अब से चन्द घण्टे पहले फ़िरऔन को अपना ख़ुदा मानते और इसी गुमराही की लोगों को तालीम व हिदायत करते थे, चन्द मिनट में कलिमा-ए-इस्लाम पढ़ते ही उनमें क्या चीज़ पैदा हो गयी थी कि वे फ़िरऔन की सारी धमकियों के जवाब में कहते हैं:

إِنَّا إِلَىٰ رَبِّنَا مُنقَلِبُونَ.

यानी अगर तू हमें क़त्ल कर देगा तो कोई हर्ज नहीं, हम अपने रब के पास चले जायेंगे, जहाँ हमको हर तरह की राहत मिलेगी। जादूगर चूँकि फ़िरऔन की ताक़त व ज़ोर से नावाक़िफ़ न थे इसलिये यह नहीं कहा कि हम तेरे क़ाबू में नहीं आयेंगे, या हम मुक़ाबला करेंगे, बल्कि उसकी धमकी को सही मानकर यह जवाब दिया कि माना कि तू हमें हर क़िस्म की सज़ा देने पर दुनिया में क़ादिर है मगर हम दुनिया की ज़िन्दगी ही को ईमान लाने के बाद कोई चीज़ नहीं समझते। दुनिया से गुज़र जायेंगे तो इस ज़िन्दगी से बेहतर ज़िन्दगी मिलेगी और अपने रब की मुलाक़ात नसीब होगी। और यह मायने भी हो सकते हैं कि इस ज़िन्दगी में जो तेरा दिल चाहे कर ले, आख़िरकार हम और तुम सब रब्बुल-आलमीन के सामने पेश होंगे और वह ज़ालिम से मज़लूम का बदला लेंगे, उस वक़्त अपने इस अमल का नतीजा तेरे सामने आ जायेगा। चुनाँचे एक दूसरी आयत में इस मौक़े पर उन जादूगरों के ये अलफ़ाज़ मन्क़ूल हैं:

فَاقْضِ مَا أَنتَ قَاضٍ. إِنَّمَا تَقْضِي هَٰذِهِ الْحَيَاةَ الدُّنْيَا.

यानी जो तेरा जी चाहे हमारे बारे में हुक्म दे दे। बस इतना ही तो है कि तेरा हुक्म हमारी इस दुनियावी ज़िन्दगी पर चल सकता है और तेरे गुस्से के नतीजे में यह ज़िन्दगी ख़त्म हो सकती है, मगर ईमान लाने के बाद हमारी नज़र में इस दुनियावी ज़िन्दगी की वह अहमियत ही बाक़ी नहीं रही जो ईमान लाने से पहले थी, क्योंकि हमें मालूम हो गया कि यह ज़िन्दगी राहत या मुसीबत के साथ गुज़र ही जायेगी, फ़िक्र उस ज़िन्दगी की करनी चाहिये जिसके बाद मौत नहीं और जिसकी राहत भी हमेशा की है और मुसीबत भी।

ग़ौर करने का मक़ाम है कि वे लोग जो कल तक बदतरीन कुफ़्र में मुब्तला थे कि फ़िरऔन जैसे बेहूदा इनसान को ख़ुदा मानते थे, ख़ुदा तआ़ला की शान व अ़ज़मत से बिल्कुल ना-आशना थे, उनमें एक दम से ऐसी तब्दीली कैसे आ गयी कि अब पिछले सब अ़क़ीदों व आमाल से पूरी

तरह तौबा करके दीने हक़ पर इतने पुख़्ता हो गये कि उसके लिये जान तक देने को तैयार नज़र आते हैं, और दुनिया से रुख़्सत होने को इसलिये पसन्द करते हैं कि अपने रब के पास चले जायें। और सिर्फ़ यही नहीं कि ईमान की क़ुव्वत और अल्लाह के रास्ते में जिहाद की हिम्मत उनमें पैदा हो गयी बल्कि मालूम होता है कि हक़ीक़ी (वास्तविक) इल्म व मारिफ़त (अल्लाह की पहचान) के दरवाज़े उन पर खुल गये थे। यही वजह है कि फ़िरऔन के मुक़ाबले में इस जुर्रत भरे बयान के साथ यह दुआ भी करने लगेः

رَبَّنَآ اَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَّتَوَفَّنَا مُسْلِمِيْنَ.

यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! हमें कामिल सब्र अ़ता फ़रमा और मुसलमान होने की हालत में हमें वफ़ात दे।

इसमें इशारा इस मारिफ़त की तरफ़ है कि अगर अल्लाह तआ़ला न चाहे तो इनसान का इरादा व हिम्मत कुछ काम नहीं आता, इसलिये उसी से साबित-क़दमी (जमाव और पुख़्तगी) की दुआ़ की गयी। और यह दुआ़ जैसे मारिफ़ते हक़ का फल और नतीजा है इसी तरह उस मुश्किल के हल का बेहतरीन ज़रिया भी है जिसमें ये लोग उस वक़्त मुब्तला थे, क्योंकि सब्र और साबित-क़दमी ही वह चीज़ है जो इनसान को अपने दुश्मन व प्रतिद्वंदी के मुक़ाबले में कामयाब करने का सबसे बड़ा ज़रिया है।

यूरोप के पिछले विश्व युद्ध के कारणों और परिणामों पर ग़ौर करने वाले आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि मुसलमान जो अल्लाह और आख़िरत पर ईमान रखने वाले हैं, यही वह क़ौम है जो मैदाने जंग में सबसे ज़्यादा बहादुर और मुसीबत व मशक़्क़त पर सब्र करने में सबसे आगे है।

यही वजह है कि उस वक़्त जर्मनी क़ौमों में लड़ाई के फ़न के माहिरीन इसकी ताकीद करते थे कि फ़ौज में दीनदारी और ख़ौफ़े आख़िरत पैदा करने की कोशिश की जाये, क्योंकि इससे जो क़ुव्वत हासिल होती है वह किसी दूसरी चीज़ से हासिल नहीं हो सकती। (तफ़सीरुल-मनार)

जादूगरों में ईमानी इन्क़िलाब मूसा अ़लैहिस्सलाम के लाठी वाले और चमकते हाथ के मोजिज़े से भी बड़ा मोजिज़ा था

अफ़सोस है कि आज मुसलमान और मुस्लिम हुकूमतें अपने आपको मज़बूत बनाने के लिये सारी ही तदबीरें इख़्तियार कर रहे हैं मगर उस गुर को भूल बैठे हैं जो ताक़त व एकता की रूह है। फ़िरऔ़नी जादूगरों ने भी पहले मर्हले में इसको समझ लिया था, और उम्र भर के ख़ुदा को न पहचानने वाले इनकारी काफ़िरों को दम भर में न सिर्फ़ मुसलमान बल्कि एक आ़रिफ़े कामिल (पूरा अल्लाह वाला) और मुजाहिद व ग़ाज़ी बना देने का यह मोजिज़ा हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के लाठी वाले और चमकते हाथ के मोजिज़े से कुछ कम न था।

फ़िरऔ़न पर हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम की दहशत का असर

फ़िरऔ़न की चालाकी और सियासी झूठ ने उसकी जाहिल क़ौम को उसके साथ पुरानी गुमराही में मुब्तला रहने का कुछ सामान तो कर दिया मगर यह अ़जूबा उनके लिये भी नाक़ाबिले समझ था कि फ़िरऔ़न के ग़ुस्से का सारा ज़ोर जादूगरों पर ख़त्म हो गया, मूसा अ़लैहिस्सलाम जो असल मुख़ालिफ़ थे उनके बारे में फ़िरऔ़न की ज़बान से कुछ न निकला। इस पर उनको कहना पड़ा।

أَتَذَرُ مُوسَىٰ وَقَوْمَهُ لِيُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ وَيَذَرَكَ وَآلِهَتَكَ.

यानी क्या आप मूसा (अ़लैहिस्सलाम) और उनकी क़ौम को यूँ ही छोड़ देंगे कि वे आपको और आपके माबूदों को छोड़कर हमारे मुल्क में फ़साद करते फिरें।

इस पर मजबूर होकर फ़िरऔ़न ने कहाः

سَنُقَتِّلُ أَبْنَاءَهُمْ وَنَسْتَحْيِي نِسَاءَهُمْ وَإِنَّا فَوْقَهُمْ قَاهِرُونَ.

यानी उनका मामला हमारे लिये कुछ चिंता का विषय नहीं, हम उनके लिये यह काम करेंगे कि उनमें जो लड़का पैदा होगा उसको क़त्ल कर देंगे सिर्फ़ लड़कियों को रहने देंगे, जिसका नतीजा कुछ समय में यह हो जायेगा कि उनकी क़ौम मर्दों से ख़ाली होकर सिर्फ़ औ़रतें रह जायेंगी जो हमारी ख़िदमतगार बाँदियाँ बनेंगी, और हम तो उन सब पर पूरा ज़ोर व ताक़त रखते हैं, जो चाहें करें ये हमारा कुछ नहीं कर सकते।

उलेमा-ए-मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि क़ौम के इस तरह झिंझोड़ने पर भी फ़िरऔ़न ने यह तो कहा कि हम बनी इस्राईल के लड़कों को क़त्ल कर देंगे, लेकिन हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम के बारे में उस वक़्त भी उसकी ज़बान पर कोई बात न आई। वजह यह है कि इस मोजिज़े और वाक़िए ने फ़िरऔ़न के दिल व दिमाग़ पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का सख़्त डर और दहशत बिठला दी थी।

हज़रत सईद बिन जुबैर रह. फ़रमाते हैं कि फ़िरऔ़न का यह हाल हो गया था कि जब मूसा अ़लैहिस्सलाम को देखता तो पेशाब निकल जाता था, और यह बिल्कुल सही है ख़ुदाई हैबत का यही हाल होता हैः हैबत-ए-हक़ अस्त ईं अज़ ख़ल्क़ नेस्त

यह रौब व दहशत अल्लाह की तरफ़ से है किसी मख़्लूक़ की ओर से नहीं। (हिन्दी अनुवादक)

और मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमायाः

हर कि तरसद् अज़ हक़ व तक़वा गज़ीद
तरसद् अज़ वे जिन्न व इन्स व हर कि दीद

यानी जो अल्लाह से डरता है सारी मख़्लूक़ उससे डरने लगती है।

इस जगह फ़िरऔन की क़ौम ने जो यह कहा कि मूसा (अ़लैहिस्सलाम) आपको और आपके माबूदों को छोड़कर फ़साद करते फिरें। इससे मालूम हुआ कि फ़िरऔन अगरचे अपनी क़ौम के सामने ख़ुद ख़ुदाई का दावेदार था और 'अ-न रब्बुकुमुल-अअ़्ला' कहता था, लेकिन वह ख़ुद बुतों की पूजा-पाठ भी किया करता था।

और बनी इस्राईल को कमज़ोर करने के लिये यह ज़ालिमाना क़ानून कि जो लड़का पैदा हो उसे क़त्ल कर दिया जाये, यह सब दूसरी मर्तबा नाफ़िज़ किया गया। इसका पहला नम्बर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश से पहले हो चुका था, जिसके नाकाम होने को यह इस वक़्त तक देख रहा था, मगर जब अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम को ज़लील करना चाहते हैं तो उसकी तदबीरें ऐसी ही हो जाया करती हैं जो आख़िरकार उनके लिये तबाही का सामान कर देती हैं। चुनाँचे आगे मालूम होगा कि फ़िरऔन का यह जुल्म व ज़्यादती आख़िरकार उसको और उसकी क़ौम को ले डूबा।

قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ اسْتَعِينُوا بِاللّٰهِ وَاصْبِرُوا ۚ إِنَّ الْأَرْضَ لِلّٰهِ ۙ يُورِثُهَا مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ ۖ وَ
الْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ ﴿١٢٨﴾ قَالُوا أُوذِينَا مِنْ قَبْلِ أَنْ تَأْتِيَنَا وَمِنْ بَعْدِ مَا جِئْتَنَا ۚ قَالَ عَسَىٰ رَبُّكُمْ
أَنْ يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْأَرْضِ فَيَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ ﴿١٢٩﴾ وَلَقَدْ أَخَذْنَا آلَ فِرْعَوْنَ ع ١٥ ٥
بِالسِّنِينَ وَنَقْصٍ مِنَ الثَّمَرَاتِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٣٠﴾ فَإِذَا جَاءَتْهُمُ الْحَسَنَةُ قَالُوا لَنَا هَٰذِهِ ۖ وَإِنْ
تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَطَّيَّرُوا بِمُوسَىٰ وَمَنْ مَعَهُ ۗ أَلَا إِنَّمَا طَائِرُهُمْ عِنْدَ اللّٰهِ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا
يَعْلَمُونَ ﴿١٣١﴾ وَقَالُوا مَهْمَا تَأْتِنَا بِهِ مِنْ آيَةٍ لِتَسْحَرَنَا بِهَا فَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ ﴿١٣٢﴾

क़ा-ल मूसा लिक़ौमिहिस्तअ़ीनू बिल्लाहि वस्बिरू इन्नल्-अर्-ज़ लिल्लाहि यूरिसुहा मंय्यशा-उ मिन् अ़िबादिही, वल्आ़कि-बतु लिल्मुत्तक़ीन (128) क़ालू ऊज़ीना मिन् क़ब्लि अन् तअ्ति-यना व मिम्-बअ़्दि मा जिअ्तना, क़ा-ल अ़सा रब्बुकुम् अंय्युह्लि-क अ़दुव्वकुम् व यस्तख़्लि-फ़कुम्	मूसा ने कहा अपनी क़ौम से- मदद माँगो अल्लाह से और सब्र करो, बेशक ज़मीन है अल्लाह की, इसका वारिस कर दे जिसको वह चाहे अपने बन्दों में, और आख़िर में भलाई है डरने वालों के लिये। (128) वे बोले हम पर तकलीफ़ें रहीं तेरे आने से पहले और तेरे आने के बाद, कहा नज़दीक है कि तुम्हारा रब हलाक कर दे तुम्हारे दुश्मन को और ख़लीफ़ा (जानशीन) कर दे तुमको मुल्क में, फिर

फ़िल्अर्ज़ि फ़-यन्ज़ु-र कै-फ़ तअ्मलून (129) ✿ व ल-क़द् अख़ज़्ना आ-ल फ़िर्ऑ-न बिस्सिनी-न व नक़्सिम्-मिनस्स-मराति लअ़ल्लहुम् यज़्ज़क्करून (130) फ़-इज़ा जाअत्हुमुल् ह-स-नतु क़ालू लना हाज़िही व इन् तुसिब्हुम् सय्यि-अतुंय्यत्तय्यरू बिमूसा व मम्-म-अ़हू, अला इन्नमा ताइरुहुम् अ़िन्दल्लाहि व लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यअ्लमून (131) व क़ालू मह्मा तअ्तिना बिही मिन् आयतिल्-लितस्ह-रना बिहा फ़मा नह्नु ल-क बिमुअ्मिनीन (132)	देखे तुम कैसे काम करते हो। (129) ✿ और हमने पकड़ लिया फ़िरऔन वालों को क़हतों (काल और सूखे) में और मेवों के नुक़सान में ताकि वे नसीहत मानें। (130) फिर जब पहुँची उनको भलाई कहने लगे यह है हमारे लायक़, और अगर पहुँची बुराई तो नहूसत बतलाते मूसा की और उसके साथ वालों की, सुन लो कि उनकी नहूसत तो अल्लाह के पास है पर अक्सर लोग नहीं जानते। (131) और कहने लगे जो कुछ तू लाएगा हमारे पास निशानी कि हम पर उसकी वजह से जादू करे, सो हम हरगिज़ तुझ पर ईमान न लायेंगे। (132)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इस मज्लिस की गुफ़्तगू की ख़बर जो बनी इस्राईल को पहुँची तो बड़े घबराये और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रियाद की तो) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि ख़ुदा तआ़ला का सहारा रखो और मुस्तक़िल "यानी जमे" रहो (घबराओ मत)। यह ज़मीन अल्लाह तआ़ला की है, अपने बन्दों में से जिसको चाहें इसका मालिक (व हाकिम) बना दें, (सो चन्द दिन के लिये फ़िरऔन को दे दी है) और अख़ीर कामयाबी उन्हीं (लोगों) की होती है जो ख़ुदा तआ़ला से डरते हैं (सो तुम ईमान व तक़वे पर क़ायम रहो, इन्शा-अल्लाह तआ़ला यह सल्तनत तुम ही को मिल जायेगी, थोड़े दिनों इन्तिज़ार की ज़रूरत है)। क़ौम के लोग (हद से ज़्यादा हसरत व ग़म से जिसका तबई तक़ाज़ा अपने शिकवे को दोहराना है) कहने लगे कि (हज़रत) हम तो (हमेशा) मुसीबत ही में रहे, आपके तशरीफ़ लाने से पहले भी (कि फ़िरऔन बेगार लेता था और मुद्दतों हमारे लड़कों को क़त्ल करता रहा) और आपके तशरीफ़ लाने के बाद भी (कि तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचाई जा रही हैं, यहाँ तक कि अब भी औलाद को क़त्ल करने की तजवीज़ तय हो गयी है)। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (घबराओ मत) बहुत

जल्द अल्लाह तआ़ला तुम्हारे दुश्मन को हलाक कर देंगे, और उनकी जगह तुमको इस ज़मीन का मालिक बना देंगे, फिर तुम्हारे अ़मल का तरीक़ा देखेंगे (कि शुक्र व क़द्र और नेकी व फ़रमाँबरदारी का मामला करते हो या बेक़द्री और ग़फ़लत व नाफ़रमानी करते हो। इसमें नेकी इख़्तियार करने की तरफ़ शौक़ व तवज्जोह दिलाना और गुनाह व नाफ़रमानी से डराना व सचेत करना है)।

और (जब फ़िरऔ़न और उसके पैरोकारों ने इनकार व मुख़ालफ़त पर कमर बाँधी तो) हमने फ़िरऔ़न वालों को (मय फ़िरऔ़न के अल्लाह के क़ानून के अनुसार इन मुसीबतों और बलाओं में) मुब्तला किया- क़हत-साली (सूखा पड़ने) में और फलों की कम पैदावारी में ताकि वे (हक़ बात को) समझ जाएँ (और समझकर क़ुबूल कर लें), सो (वे फिर भी न समझे बल्कि यह कैफ़ियत थी कि) जब उन पर ख़ुशहाली (यानी चीज़ों का सस्ता होना और ज़्यादा पैदावारी) आ जाती तो कहते कि यह तो हमारे लिये होना ही चाहिए (यानी हम अच्छी क़िस्मत वाले हैं, यह हमारी नेकबख़्ती का असर है, यह न था कि उसको ख़ुदा की नेमत समझकर शुक्र अदा करते और इताअ़त इख़्तियार करते) और अगर उनको कोई बदहाली (जैसे सूखा और पैदावार की कमी) पेश आती तो मूसा (अ़लैहिस्सलाम) और उनके साथियों की नहूसत बतलाते (कि यह इनकी नहूसत से हुआ, यह न हुआ कि उसको अपने बुरे आमाल और कुफ़्र व झुठलाने की नहूसत और सज़ा समझकर तौबा करते, हालाँकि यह सब उनके बुरे आमाल की नहूसत थी, जैसा कि फ़रमाते हैं कि) याद रखो कि उनकी (इस) नहूसत (का सबब) अल्लाह तआ़ला के इल्म में है (यानी उनके कुफ़्रिया आमाल तो अल्लाह को मालूम हैं, यह नहूसत उन्हीं आमाल की सज़ा है) लेकिन (अपनी बेतमीज़ी से) उनमें अक्सर लोग (इसको) नहीं जानते थे। और (बल्कि ऊपर से) (यूँ) कहते थे (चाहे) कैसी ही अ़जीब बात हमारे सामने लाओ, कि उसके ज़रिये से हम पर जादू चलाओ (तब भी) हम तुम्हारी बात हरगिज़ न मानेंगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

फ़िरऔ़न ने मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले में शिकस्त खाने के बाद बनी इस्राईल पर इस तरह गुस्सा उतारा कि उनके लड़कों को क़त्ल करके सिर्फ़ औ़रतों को बाक़ी रखने का क़ानून बना दिया तो बनी इस्राईल घबराये कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश से पहले जो अ़ज़ाब फ़िरऔ़न ने उन पर डाला था वह फिर आ गया, और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने भी इसको महसूस फ़रमाया तो पैग़म्बराना शफ़क़त और हिक्मत के मुताबिक़ इस बला से निजात हासिल करने के लिये उनको दो चीज़ों की तालीम व हिदायत फ़रमाई- एक दुश्मन के मुक़ाबले में अल्लाह तआ़ला से मदद तलब करना, दूसरे अपनी हिम्मत के मुताबिक़ सब्र व बरदाश्त से काम लेना। और यह भी बतला दिया कि इस नुस्ख़े का इस्तेमाल करोगे तो यह मुल्क तुम्हारा है, तुम्हीं ग़ालिब आओगे। यही मज़मून है पहली आयत का जिसमें फ़रमाया हैः

اِسْتَعِيْنُوْا بِاللّٰهِ وَاصْبِرُوْا.

यानी अल्लाह से मदद तलब करो और सब्र करो। और फिर फ़रमायाः

إِنَّ الْأَرْضَ لِلَّهِ يُورِثُهَا مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ.

यानी सारी ज़मीन अल्लाह की है वह जिसको चाहे उसको इस ज़मीन का वारिस व मालिक बनायेगा। और यह बात तय है कि परिणाम के तौर पर कामयाबी मुत्तक़ी परहेज़गारों ही को हासिल होती है। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि अगर तुमने तक़्वा इख़्तियार किया जिसका तरीक़ा ऊपर बयान हुआ है कि अल्लाह से मदद तलब की और सब्र को अपनाया तो अन्जामकार तुम ही मिस्र देश के मालिक व क़ाबिज़ होगे।

मुश्किलों व मुसीबतों से छुटकारे का नुस्ख़ा-ए-अक्सीर

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल को दुश्मन पर ग़ालिब आने के लिये हर हकीमाना नुस्ख़ा तालीम फ़रमाया था। ग़ौर किया जाये तो यही वह अक्सीर नुस्ख़ा है जो कभी ख़ता नहीं होता। जिसके बाद कामयाबी यक़ीनी होती है। इस नुस्ख़े का पहला भाग अल्लाह से मदद तलब करना है, जो असल रूह है इस नुस्ख़े की। वजह यह है कि ख़ालिक़े कायनात जिसकी मदद पर हो तो सारी कायनात का रुख़ उसकी मदद की तरफ़ फिर जाता है, क्योंकि सारी कायनात उसके फ़रमान के ताबे है:

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा-मन व तू मुर्दा बा-हक़ ज़िन्दा अन्द

"कि मिट्टी, हवा, पानी और आग फ़रमाँबरदार हैं। अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।" **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

हदीस में है कि जब अल्लाह तआ़ला किसी काम का इरादा करते हैं तो उसके असबाब ख़ुद बख़ुद मुहैया होते चले जाते हैं। इसलिये दुश्मन के मुक़ाबले में कोई बड़ी से बड़ी ताक़त इनसान के लिये इतनी कारामद नहीं हो सकती जितनी अल्लाह तआ़ला से इमदाद की तलब, बशर्ते कि तलब सच्ची हो, सिर्फ़ ज़बान से कुछ कलिमात बोलना न हो।

दूसरा भाग इस नुस्ख़े का सब्र है। सब्र के मायने असल लुग़त के एतिबार से ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ों पर जमे रहने और नफ़्स को क़ाबू में रखने के हैं। किसी मुसीबत पर सब्र करने को भी इसी लिये सब्र कहा जाता है कि उसमें रोने पीटने और शोर व हंगामा करने के तबई जज़्बे को दबाया जाता है।

हर तजुर्बेकार अ़क़्लमन्द जानता है कि दुनिया में हर बड़े मक़सद के लिये बहुत सी ख़िलाफ़े तबीयत मेहनत व मशक़्क़त बरदाश्त करनी लाज़िमी है, जिस शख़्स को मेहनत व मशक़्क़त की आ़दत और ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ों की बरदाश्त हासिल हो जाये वह अक्सर मक़ासिद में कामयाब होता है। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि सब्र

ऐसी नेमत है कि इससे ज़्यादा बड़ी और विस्तृत नेमत किसी को नहीं मिली। (अबू दाऊद)

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की इस हकीमाना नसीहत और इस पर मुरत्तब होने वाली फ़तह व नुसरत का संक्षिप्त वायदा टेढ़ी चाल चलने की आ़दी बनी इस्राईल की समझ में क्या आता, यह सब कुछ सुनकर बोल उठेः

اُوْذِيْنَا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَاْتِيَنَا وَمِنْ م بَعْدِ مَا جِئْتَنَا.

यानी आपके आने से पहले भी हमें तकलीफ़ें दी गयीं और आपके आने के बाद भी।

मतलब यह था कि आपके आने से पहले तो इस उम्मीद पर वक़्त गुज़ारा जा सकता था कि कोई पैग़म्बर हमें छुटकारा दिलाने के लिये आयेगा, अब आपके आने के बाद भी यही तकलीफ़ों और मुसीबतों का सिलसिला रहा तो हम क्या करेंगे।

इसलिये फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने असल हक़ीक़त को स्पष्ट करने के लिये फ़रमायाः

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُّهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِى الْاَرْضِ.

यानी यह बात दूर नहीं कि अगर तुमने हमारी नसीहत को माना तो बहुत जल्द तुम्हारा दुश्मन हलाक व बरबाद होगा और मुल्क पर तुमको क़ब्ज़ा व इख़्तियार मिलेगा। मगर साथ ही यह भी फ़रमा दियाः

فَيَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُوْنَ.

जिसमें बतला दिया कि इस दुनिया में किसी ज़मीन की हुकूमत व सल्तनत ख़ुद कोई मक़सद नहीं बल्कि ज़मीन में अ़दल व इन्साफ़ क़ायम करने और अल्लाह की बतलाई हुई नेकी को फैलाने और बदी को रोकने के लिये किसी इनसान को किसी मुल्क की हुकूमत दी जाती है, इसलिये जब तुमको मुल्क मिस्र पर क़ब्ज़ा व इख़्तियार हासिल हो तो होशियार रहो, ऐसा न हो कि तुम भी हुकूमत व ताक़त के नशे में अपने से पहले लोगों के अन्जाम को भुला बैठो।

हुकूमत व सल्तनत हुक्मराँ तब्क़े का इम्तिहान है

इस आयत में ख़िताब अगरचे ख़ास बनी इस्राईल को है लेकिन अल्लाह जल्ल शानुहू ने हुक्मराँ तब्क़े को इसमें यह तंबीह फ़रमा दी है कि दर हक़ीक़त हुकूमत व सल्तनत अल्लाह तआ़ला का हक़ है, इनसान को ख़लीफ़ा होने की हैसियत से वही हुकूमत देता है और जब चाहता है छीन लेता हैः

تُؤْتِى الْمُلْكَ مَنْ تَشَآءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَآءُ.

का यही मतलब है। और यह कि जिसको किसी ज़मीन पर हुकूमत अ़ता की जाती है वह दर हक़ीक़त हुक्मराँ (हुकूमत करने वाले) व्यक्ति या हुक्मराँ जमाअ़त का इम्तिहान होता है कि वह हुकूमत के मक़सद यानी अ़दल व इन्साफ़ के क़ायम करने, नेक क़ामों के हुक्म करने और बुराईयों से रोकने के अ़मल को जारी करने की ज़िम्मेदारी को किस हद तक पूरा करता है।

तफ़सीर बहरे मुहीत में इस जगह नक़ल किया है कि बनू अ़ब्बास के दूसरे ख़लीफ़ा मन्सूर के पास ख़िलाफ़त मिलने से पहले एक दिन अमर बिन अ़बीद आ पहुँचे तो यह आयत पढ़ीः

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُّهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِى الْاَرْضِ.

जिसमें उनके लिये ख़िलाफ़त मिलने की ख़ुशख़बरी थी। इत्तिफ़ाक़न इसके बाद मन्सूर ख़लीफ़ा बन गये और फिर अ़मर बिन अ़बीद उनके यहाँ पहुँचे तो मन्सूर ने उनकी भविष्यवाणी जो उक्त आयत के तहत इससे पहले फ़रमाई थी याद दिलाई, तो अ़मर बिन अ़बीद ने ख़ूब जवाब दिया कि हाँ ख़लीफ़ा होने की भविष्यवाणी तो पूरी हो गयी मगर एक चीज़ बाक़ी हैः

فَيَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُوْنَ.

मतलब यह था कि मुल्क का ख़लीफ़ा व अमीर बन जाना कोई फ़ख़्र व ख़ुशी की चीज़ नहीं क्योंकि उसके बाद अल्लाह तआ़ला यह भी देखते हैं कि ख़िलाफ़त व हुकूमत में उसका रवैया क्या और कैसा रहा। अब उसके देखने का वक़्त है।

इसके बाद ज़िक्र हुई आयत में किये गये वायदे का पूरा होना और क़ौमे फ़िरऔ़न का तरह तरह के अ़ज़ाबों में गिरफ़्तार होना और आख़िरकार दरिया में डूबकर ख़त्म हो जाना किसी क़द्र तफ़सील के साथ बयान फ़रमाया है, जिसमें सबसे पहले सूखे और अकाल और आवश्यक चीज़ों के अभाव और महंगाई का अ़ज़ाब था, जो क़ौमे फ़िरऔ़न पर मुसल्लत हुआ।

तफ़सीरी रिवायतों में है कि यह क़हत (अकाल और सूखा) उन पर लगातार सात साल रहा, और आयत में जो इस क़हत के बयान में दो लफ़्ज़ आये हैं- एक सिनीन, दूसरे नक़्से-समरात, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास और क़तादा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा वग़ैरह ने फ़रमाया कि क़हत और ख़ुश्क साली (बारिश न होने और सूखा पड़ने) का अ़ज़ाब तो गाँव वालों के लिये था और फलों की कमी शहर वालों के लिये। क्योंकि उमूमन देहात में ग़ल्ले की पैदावार ज़्यादा होती है और शहरों में फलों के बाग़ होते हैं। तो इशारा इस तरफ़ हुआ कि न ग़ल्ले के खेत बाक़ी रहे न फलों के बाग़ात।

लेकिन जब किसी क़ौम पर अल्लाह तआ़ला का क़हर नाज़िल होता है तो सही बात उसकी समझ में नहीं आती, क़ौमे फ़िरऔ़न भी इसी क़हर में मुब्तला थी, अ़ज़ाब के इस शुरूआती झटके से भी उनको कोई तंबीह न हुई बल्कि उसको और बाद में आने वाली हर मुसीबतों को यह कहने लगे कि यह नहूसत हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों की हैः

فَاِذَا جَآءَتْهُمُ الْحَسَنَةُ قَالُوْا لَنَا هٰذِهٖ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَّطَّيَّرُوْا بِمُوْسٰى وَمَنْ مَّعَهٗ.

यानी जब उन लोगों को कोई भलाई और राहत व आराम मिलता तो यह कहते थे कि यह हमारा हक़ है, हमें मिलना ही चाहिये। और जब कोई मुसीबत और बुराई पेश आती तो कहते कि यह मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों की नहूसत के असर से है, हक़ तआ़ला ने उनके जवाब में इरशाद फ़रमायाः

اَلَاۤ اِنَّمَا طٰٓئِرُهُمْ عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ.

लफ़्ज़ ताइर के लुग़वी मायने परिन्दे जानवर के हैं। अ़रब परिन्दे जानवरों के दाईं बायीं तरफ़ उतरने से अच्छी बुरी फ़ालें (शगुन) लिया करते थे। इसलिये मुतलक़ फ़ाल को भी "ताइर" कहने लगे। इस आयत में ताइर के यही मायने हैं। और आयत का मतलब यह है कि उनकी फ़ाल (शगुन लेना) अच्छी या बुरी जो कुछ भी हो वह सब अल्लाह तआ़ला के पास से है, जो कुछ इस जहान में ज़ाहिर होता है सब अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत व मर्ज़ी से अ़मल में आता है, न उसमें किसी की नहूसत का दख़ल है न बरकत का। यह सब उनकी अ़क़ीदे की ग़लती, ग़लत सोच और जहालत है जो परिन्दों के दाहिने या बायें उड़ जाने से अच्छी बुरी फ़ालें लेकर अपने कामों और अ़मल की बुनियाद उस पर रखते हैं।

और आख़िरकार क़ौमे फ़िरऔ़न ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के तमाम मोजिज़ों को जादू कहकर नज़र-अन्दाज़ करते हुए यह ऐलान कर दिया कि:

مَهْمَا تَاْتِنَا بِهٖ مِنْ اٰيَةٍ لِّتَسْحَرَنَا بِهَا فَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِيْنَ.

यानी आप अपनी नुबुव्वत की कितनी ही अ़लामतें (निशानियाँ) पेश करके हम पर अपना जादू चलाना चाहें तो सुन लीजिये हम कभी आप पर ईमान लाने वाले नहीं।

فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوْفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَ
الدَّمَ اٰيٰتٍ مُّفَصَّلٰتٍ فَاسْتَكْبَرُوْا وَكَانُوْا قَوْمًا مُّجْرِمِيْنَ ۞ وَلَمَّا وَقَعَ عَلَيْهِمُ الرِّجْزُ قَالُوْا يٰمُوْسَى
ادْعُ لَنَا رَبَّكَ بِمَا عَهِدَ عِنْدَكَ ۚ لَئِنْ كَشَفْتَ عَنَّا الرِّجْزَ لَنُؤْمِنَنَّ لَكَ وَلَنُرْسِلَنَّ مَعَكَ بَنِيْٓ
اِسْرَآءِيْلَ ۞ فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُمُ الرِّجْزَ اِلٰٓى اَجَلٍ هُمْ بٰلِغُوْهُ اِذَا هُمْ يَنْكُثُوْنَ ۞ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ فَاَغْرَقْنٰهُمْ
فِى الْيَمِّ بِاَنَّهُمْ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَكَانُوْا عَنْهَا غٰفِلِيْنَ ۞

फ़-अर्सल्ना अ़लैहिमुत्तूफ़ा-न वल्जरा-द वल्क़ुम्म-ल वज़्ज़फ़ादि-अ़ वद्द-म आयातिम् मुफ़स्सलातिन्, फ़स्तक्बरू व कानू क़ौमम् मुज्रिमीन (133) व लम्मा व-क़-अ़ अ़लैहिमुर्रिज्ज़ु क़ालू या मूसद्अ़ु लना रब्ब-क बिमा अ़हि-द अ़िन्द-क ल-इन् कशफ़्-त अ़न्नर्रिज्-ज लनुअ्मिनन्-न ल-क व लनुर्सिलन्-न	फिर हमने भेजा उन पर तूफ़ान और टिड्डी और चिचड़ी और मेंढक और ख़ून बहुत सी निशानियाँ अलग-अलग, फिर भी तकब्बुर करते रहे और थे वे लोग गुनाहगार। (133) और जब पड़ता उनपर कोई अ़ज़ाब तो कहते ऐ मूसा! दुआ़ कर हमारे वास्ते अपने रब से जैसा कि उसने बतला रखा है तुझको, अगर तूने दूर कर दिया हम से ये अ़ज़ाब तो बेशक हम ईमान ले आयेंगे तुझ पर और जाने देंगे

म-अ्-क बनी इस्राईल (134) फ़-लम्मा कशफ़्ना अ़न्हुमुर्रिज्-ज इला अ-जलिन् हुम् बालिग़ूहु इज़ा हुम् यन्कुसून (135) फ़न्तक़म्ना मिन्हुम् फ़-अग़्रक़्नाहुम् फ़िल्यम्मि बिअन्नहुम् कज़्ज़बू बिआयातिना व कानू अ़न्हा ग़ाफ़िलीन (136)	तेरे साथ बनी इस्राईल को। (134) फिर जब हमने उठा लिया उनसे अ़ज़ाब एक मुद्दत तक कि उनको उस मुद्दत तक पहुँचना था उसी वक़्त अ़हद तोड़ डालते। (135) फिर हमने बदला लिया उनसे सो डुबो दिया हमने उनको दरिया में इस वजह से कि उन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और उनसे लापरवाही करते थे। (136)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(जब ऐसी सरकशी इख़्तियार की तो) फिर हमने (इन दो बलाओं के अ़लावा ये बलायें मुसल्लत कीं कि) उन पर (बारिश की अधिकता का) तूफ़ान भेजा (जिससे माल व जान बरबाद होने का अन्देशा हो गया) और (उससे घबराये तो मूसा अ़लैहिस्सलाम से अ़हद व पैमान किया कि हमसे यह बला दूर कराईये तो हम ईमान लायें और जो आप कहें उस पर अ़मल करें। फिर जब वह बला दूर हुई और दिल-चाहा ग़ल्ला वग़ैरह निकला फिर बेफ़िक्र हो गये कि अब तो जान भी बच गयी माल भी ख़ूब होगा, और बदस्तूर अपने कुफ़्र व नाफ़रमानी पर अड़े रहे तो हमने उनके खेतों पर) टिड्डियाँ (मुसल्लत कीं) और (जब फिर खेतों को तबाह होते देखा तो घबराकर फिर वैसे ही अ़हद व पैमान किये और फिर जब आपकी दुआ़ से वह बला दूर हुई और ग़ल्ला वग़ैरह तैयार करके अपने घर ले आये फिर बेफ़िक्र हो गये कि अब तो ग़ल्ला क़ब्ज़े में आ गया और बदस्तूर अपने कुफ़्र व मुख़ालफ़त पर जमे रहे तो हमने उस ग़ल्ले में) घुन का कीड़ा (पैदा कर दिया) और (जब घबराकर फिर उसी तरह अ़हद व पैमान करके दुआ़ कराई और वह बला भी दूर हुई और उससे मुत्मईन हो गये कि अब पीस-कूटकर खायें पियेंगे, फिर वही कुफ़्र और वही मुख़ालफ़त, तो उस वक़्त हमने उनके खाने को यूँ बेलुत्फ़ कर दिया कि उन पर) मेंढक (हुजूम करके उनके खाने के बरतनों में हण्डियों में गिरना शुरू हुए जिससे सब खाना बरबाद हुआ और वैसे भी घर में बैठना मुश्किल कर दिया) और (पीना यूँ बेलुत्फ़ कर दिया कि उनका पानी) ख़ून, (हो जाता, मुँह में लिया और ख़ून बना। ग़र्ज़ कि उन पर ये बलायें मुसल्लत हुई) कि ये सब (मूसा अ़लैहिस्सलाम के) खुले-खुले मोजिज़े थे (कि उनकी झुठलाने व मुख़ालफ़त पर इनका ज़हूर हुआ और ये सातों तथा लाठी और चमकता हाथ मिलाकर "आयाते तिस्आ़" कहलाते हैं) सो (चाहिये था कि इन मोजिज़ों और क़हर की निशानियों को देखकर ढीले पड़ जाते मगर) वे (फिर भी) तकब्बुर (ही) करते रहे, और वे लोग कुछ थे ही अपराधी क़िस्म के (कि इतनी सख़्ती पर भी बाज़ न आते थे)।

और जब उन पर (ज़िक्र की गयी बलाओं में से) कोई अ़ज़ाब आता तो (यूँ) कहते कि ऐ मूसा! हमारे लिए अपने रब से दुआ़ कर दीजिये, जिसका उसने आप से अ़हद कर रखा है (वह बात क़हर का दूर कर देना है हमारे बाज़ आ जाने पर, सो हम अब वायदा करते हैं कि) अगर आप इस अ़ज़ाब को हमसे हटा दें (यानी दुआ़ करके हटवा दें) तो हम ज़रूर आपके कहने से ईमान ले आएँगे और हम बनी इस्राईल को भी (रिहा करके) आपके साथ कर देंगे। फिर जब (हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ की बरकत से) उनसे उस अ़ज़ाब को एक ख़ास वक़्त तक कि उनको पहुँचना था हम हटा देते तो वे फ़ौरन ही अ़हद तोड़ने लगते (जैसा कि ऊपर बयान हुआ)। फिर (जब हर-हर तरह देख लिया कि वे अपनी शरारत से बाज़ ही नहीं आते तब उस वक़्त) हमने उनसे (पूरा) बदला लिया, यानी उनको दरिया में डुबो दिया (जैसा कि दूसरी जगह है) इस सबब से कि वे हमारी आयतों को झुठलाते थे, और उनसे बिल्कुल ही लापरवाही बरतते थे (और झुठलाना व लापरवाही बरतना भी ऐसा-वैसा नहीं बल्कि हठधर्मी व दुश्मनी के साथ, कि फ़रमाँबरदारी व बात मानने का वायदा कर लें और तोड़ दें)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में क़ौमे फ़िरऔ़न और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का बाक़ी क़िस्सा बयान हुआ है कि फ़िरऔ़न के जादूगर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले में हार गये और ईमान लाये, मगर क़ौमे फ़िरऔ़न उसी तरह अपनी सरकशी और कुफ़्र पर जमी रही।

इस वाक़िए के बाद तारीख़ी रिवायतों के मुताबिक़ हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम बीस साल मिस्र में मुक़ीम रहकर उन लोगों को अल्लाह का पैग़ाम सुनाते और हक़ की तरफ़ दावत देते रहे, और इस मुद्दत में अल्लाह तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम को नौ मोजिज़े अ़ता फ़रमाये, जिनके ज़रिये क़ौमे फ़िरऔ़न को सचेत करके रास्ते पर लाना मक़सूद था, क़ुरआने करीम की आयतः

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍ.

में उन्ही नौ मोजिज़ों का बयान है।

इन नौ मोजिज़ों में से सबसे पहले दो मोजिज़े- अ़सा (लाठी) और यदे-बैज़ा (चमकते हुए हाथ) का ज़हूर फ़िरऔ़न के दरबार में हुआ और इन्हीं दो मोजिज़ों के ज़रिये जादूगरों के मुक़ाबले में मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़तह हासिल की। उसके बाद एक मोजिज़ा वह था जिसका ज़िक्र इससे पहली आयतों में आ चुका है कि क़ौमे फ़िरऔ़न पर उनकी ज़िद और ग़लत चलन के सबब क़हत (सूखा पड़ने को) मुसल्लत कर दिया गया। उनकी ज़मीनों और बाग़ों में पैदावार बहुत घट गयी जिससे वे सख़्त परेशान हुए और आख़िरकार हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से क़हत (सूखा) दूर होने के लिये दुआ़ कराई, मगर जब क़हत दूर हो गया तो फिर अपनी सरकशी में मुब्तला हो गये और लगे यह कहने कि यह क़हत तो मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों की नहूसत के सबब हुआ था। अब जो क़हत (बारिश न होना) दूर हुआ तो यह हमारे हाल का तक़ाज़ा है।

बाक़ी छह निशानियों और मोजिज़ों का बयान मज़कूरा आयतों में है:

فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوْفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَالدَّمَ اٰيٰتٍ مُّفَصَّلٰتٍ.

यानी फिर हमने उनपर तूफ़ान भेजा और टिड्डियाँ और घुन का कीड़ा और मेंढक और ख़ून।

इसमें क़ौमे फ़िरऔन पर मुसल्लत होने वाले पाँच क़िस्म के अ़ज़ाबों का ज़िक्र है और उनको इस आयत में "आयातिम् मुफ़स्सलातिन्" फ़रमाया है, जिसके मायने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ यह हैं कि इनमें से हर अ़ज़ाब एक निर्धारित वक़्त तक रहा फिर बन्द हो गया, और कुछ मोहलत दी गयी। उसके बाद दूसरा और तीसरा अ़ज़ाब, इसी तरह अलग-अलग होकर उन पर आया। इसी को तर्जुमा शैख़ुल-हिन्द में इख़्तियार किया गया है।

इब्ने मुन्ज़िर ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायतों से नक़ल किया है कि इनमें से हर अ़ज़ाब क़ौमे फ़िरऔन पर सात दिन तक मुसल्लत रहता था, हफ़्ते (शनिवार) के दिन शुरू होकर दूसरे हफ़्ते के दिन दूर हो जाता और फिर तीन हफ़्ते की मोहलत उनको दी जाती थी।

इमाम बग़वी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जब पहली मर्तबा क़ौमे फ़िरऔन पर क़हत (सूखे) का अ़ज़ाब मुसल्लत हुआ, और मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से दूर हो गया मगर ये लोग अपनी सरकशी से बाज़ न आये तो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने दुआ़ की कि ऐ मेरे परवर्दिगार! ये ऐसे सरकश लोग हैं कि सूखे और अकाल के अ़ज़ाब से भी मुतास्सिर न हुए और अ़हद व पैमान करके फिर गये, अब इन पर कोई ऐसा अ़ज़ाब मुसल्लत फ़रमा दीजिए जो इनके लिये दर्दनाक हो, और हमारी क़ौम के लिये एक नसीहत व सीख का काम दे, और बाद में आने वालों के लिये सबक़ लेने का ज़रिया बने, तो अल्लाह तआ़ला ने पहले उन पर तूफ़ान का अ़ज़ाब भेज दिया। मशहूर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक तूफ़ान से मुराद पानी का तूफ़ान है, क़ौमे फ़िरऔन के सब घरों और ज़मीनों को पानी के तूफ़ान ने घेर लिया, न कहीं बैठने लेटने की जगह रही न ज़मीन में कुछ खेती वग़ैरह करने की। और अ़जीब बात यह थी कि क़ौमे फ़िरऔन के मकानों और ज़मीनों के साथ ही क़ौमे बनी इस्राईल के मकानात और ज़मीनें थीं, बनी इस्राईल के मकानात और ज़मीनें सब बदस्तूर ख़ुश्क थीं कहीं तूफ़ान का पानी न था और क़ौमे फ़िरऔन के सारे घर और ज़मीन उस तूफ़ान से लबरेज़ थे।

इस तूफ़ान से घबराकर क़ौमे फ़िरऔन ने मूसा अ़लैहिस्सलाम से इल्तिजा की कि अपने परवर्दिगार से दुआ़ कीजिए कि यह अ़ज़ाब हमसे दूर फ़रमा दें तो हम ईमान ले आयेंगे और बनी इस्राईल को आज़ाद कर देंगे। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से यह तूफ़ान दूर हुआ और उसके बाद उनकी खेतियाँ पहले से ज़्यादा हरी-भरी हो गयीं, तो अब यह कहने लगे कि दर हक़ीक़त यह तूफ़ान कोई अ़ज़ाब नहीं था बल्कि हमारे फ़ायदे के लिये आया था, जिसका नतीजा यह निकला कि हमारी ज़मीनों की पैदावार बढ़ गयी, इसलिये मूसा अ़लैहिस्सलाम का इसमें कुछ

दख़ल नहीं, और यह कहकर सब अ़हद व पैमान नज़र-अन्दाज़ कर दिये।

इस तरह ये लोग एक महीने अमन व आ़फ़ियत से रहते रहे, अल्लाह ने इनको ग़ौर व फ़िक्र की मोहलत दी, मगर ये होश में न आये तो अब दूसरा अ़ज़ाब टिड्डियों का उन पर मुसल्लत कर दिया गया। टिड्डी-दल ने उनकी सारी खेतियों और बाग़ों को खा लिया। कुछ रिवायतों में है कि लकड़ी के दरवाज़ों और छतों को और सारे घरेलू सामान को टिड्डियाँ खा गयीं, और उस अ़ज़ाब के वक़्त भी मूसा अ़लैहिस्सलाम का यह मोजिज़ा सामने था कि यह सारा टिड्डी-दल सिर्फ़ क़िब्ती यानी क़ौमे फ़िरऔ़न के बाग़ों, खेतियों, घरों पर छाया हुआ था, पास मिले हुए इस्राईलियों के मकानात, ज़मीनें, बाग़ सब इससे महफ़ूज़ थे।

उस वक़्त फिर क़ौमे फ़िरऔ़न चिल्ला उठी और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से दरख़्वास्त की कि इस मर्तबा आप अल्लाह तआ़ला से दुआ़ कर दें, यह अ़ज़ाब हट जाये तो हम पुख़्ता वायदा करते हैं कि ईमान ले आयेंगे और बनी इस्राईल को आज़ाद कर देंगे। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फिर दुआ़ की और यह अ़ज़ाब हट गया, मगर अ़ज़ाब के हटने के बाद उन्होंने देखा कि हमारे पास अब भी इतना ज़ख़ीरा ग़ल्ले का मौजूद है कि हम साल भर खा सकते हैं तो फिर सरकशी और अ़हद तोड़ने पर आमादा हो गये, न ईमान लाये न बनी इस्राईल को आज़ाद किया।

एक महीना फिर अल्लाह तआ़ला ने मोहलत दी। उस मोहलत के बाद तीसरा अ़ज़ाब "क़ुम्मल" का मुसल्लत हुआ। लफ़्ज़े क़ुम्मल उस जूँ के लिये भी बोला जाता है जो इनसान के बालों और कपड़ों में पैदा हो जाती है, और उस कीड़े को भी कहते हैं जो ग़ल्ले में लग जाता है जिसको घुन भी कहा जाता है। क़ुम्मल का यह अ़ज़ाब मुम्किन है कि दोनों किस्म के कीड़ों पर मुश्तमिल हो कि ग़ल्लों में घुन लग गया और इनसानों के बदन और कपड़ों में जुओं का तूफ़ान उमड़ आया।

ग़ल्लों का हाल उस घुन ने ऐसा कर दिया कि दस सैर गेहूँ पीसने के लिये निकालें तो उसमें तीन सैर आटा भी न निकले, और जुओं ने उनके बाल और पलकें और भौहें तक खा लीं।

आख़िर फिर क़ौमे फ़िरऔ़न बिलबिला उठी और मूसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रियाद की कि अब की मर्तबा हम हरगिज़ वायदे से न फिरेंगे, आप दुआ़ कर दें। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से यह अ़ज़ाब भी टल गया, मगर जिन बदनसीबों को हलाक ही होना था वे कहाँ अ़हद को पूरा करते। फिर सुकून मिलते ही सब कुछ भूल गये और इनकारी हो गये।

फिर एक माह की मोहलत इसी आराम व राहत के साथ उनको दी गयी मगर उस मोहलत से भी कोई फ़ायदा न उठाया तो चौथा अ़ज़ाब मेंढकों का उन पर मुसल्लत कर दिया गया, और इस अधिकता से मेंढक उनके घरों में पैदा हो गये कि जहाँ बैठते तो उनके गले तक मेंढकों का ढेर लग जाता, सोने के लिये लेटते तो सारा बदन उनसे दब जाता, करवट लेना नामुम्किन हो जाता, पकती हुई हण्डिया में, रखे हुए खाने में, आटे में और हर चीज़ में मेंढक भर जाते। इस अ़ज़ाब से आ़जिज़ आकर सब रोने लगे और पहले से पुख़्ता वायदों के साथ अ़हद व इक़रार किया तो फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से यह अ़ज़ाब भी दूर हो गया।

मगर जिस क़ौम पर अल्लाह का क़हर मुसल्लत हो उसकी अ़क़्ल और होश व हवास काम नहीं देते। इस वाक़िए के बाद भी अ़ज़ाब से निजात पाकर ये फिर अपनी हठधर्मी पर जम गये और कहने लगे कि अब तो हमें और भी यक़ीन हो गया कि मूसा अ़लैहिस्सलाम बड़े जादूगर हैं, यह सब इनके जादू के करिश्मे हैं, रसूल नबी कुछ नहीं।

फिर एक महीने की मोहलत अल्लाह तआ़ला ने अ़ता फ़रमाई मगर उस मोहलत से भी कोई काम न लिया तो पाँचवाँ अ़ज़ाब ख़ून का मुसल्लत कर दिया गया कि उनके हर खाने और पीने की चीज़ ख़ून बन गयी। कुएँ से, हौज़ से, जहाँ कहीं से पानी निकालें ख़ून बन जाये, खाना पकाने के लिये रखें ख़ून बन जाये और इन सब अ़ज़ाबों में हज़रत मूसा का यह मोजिज़ा मुसलसल था कि हर अ़ज़ाब से इस्राईली हज़रात बिल्कुल मामून व महफ़ूज़ थे। ख़ून के अ़ज़ाब के वक़्त क़ौमे फ़िरऔ़न के लोगों ने बनी इस्राईल के घरों से पानी माँगा, जब वह उनके हाथ में गया तो ख़ून हो गया। एक ही दस्तरख़्वान पर बैठकर क़िब्ती और इस्राईली खाना खाते तो जो लुक़्मा इस्राईली उठाता वह अपनी हालत पर खाना होता और जो लुक़्मा या पानी का घूँट क़िब्ती के मुँह में जाता ख़ून बन जाता। यह अ़ज़ाब भी पहले की तरह सात दिन रहा आख़िरकार फिर यह बदकार बद-अ़हद क़ौम चिल्ला उठी और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रियाद की और पहले से ज़्यादा पक्के वायदे किये। दुआ़ की गयी, अ़ज़ाब हट गया मगर ये लोग अपनी उसी हठधर्मी पर जमे रहे। इस तरह ये पाँच लगातार अ़ज़ाब उन पर आते रहे मगर ये लोग अपनी गुमराही पर क़ायम रहे, इसी को क़ुरआने करीम ने फ़रमायाः

فَاسْتَكْبَرُوْا وَكَانُوْا قَوْمًا مُّجْرِمِيْنَ.

यानी इन लोगों ने तकब्बुर से काम लिया और ये लोग बड़े आ़दी मुजरिम थे।

इसके बाद एक छठे अ़ज़ाब का ज़िक्र बाद की आयत में 'रिज्ज़' के नाम से आया है। यह लफ़्ज़ अक्सर ताऊन के लिये बोला जाता है। चेचक वग़ैरह महाभारी बीमारियों के लिये भी इस्तेमाल होता है। तफ़सीरी रिवायतों में है कि उन लोगों पर ताऊन की वबा मुसल्लत कर दी गयी, जिसमें उनके सत्तर हज़ार आदमी हलाक हो गये। उस वक़्त फिर उन लोगों ने फ़रियाद की और फिर दुआ़ करने पर यह अ़ज़ाब हटा और फिर बदस्तूर उन लोगों ने अ़हद तोड़ा। इतनी निरंतर आज़माईशों और मोहलतों के बाद जब उनमें कोई एहसास पैदा ही न हुआ तो अब आख़िरी अ़ज़ाब आ गया कि सब के सब अपने मकानों, ज़मीनों और सामान को छोड़कर मूसा अ़लैहिस्सलाम का पीछा करने में निकले और आख़िरकार दरिया-ए-क़ुल्ज़ुम का लुक़्मा बन गये। इसी को ऊपर दर्ज हुई आख़िरी आयत में फ़रमाया है:

فَاَغْرَقْنٰهُمْ فِى الْيَمِّ بِاَنَّهُمْ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَكَانُوْا عَنْهَا غٰفِلِيْنَ.

सो डुबो दिया हमने उनको दरिया में इस वजह से कि उन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और उनसे लापरवाही करते थे।

وَاَوْرَثْنَا الْقَوْمَ الَّذِيْنَ كَانُوْا يُسْتَضْعَفُوْنَ مَشَارِقَ الْاَرْضِ وَمَغَارِبَهَا الَّتِيْ بٰرَكْنَا فِيْهَا ۭ
وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنٰى عَلٰى بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ ڏ بِمَا صَبَرُوْا ۭ وَدَمَّرْنَا مَا كَانَ يَصْنَعُ فِرْعَوْنُ وَ
قَوْمُهٗ وَمَا كَانُوْا يَعْرِشُوْنَ ۝ وَجٰوَزْنَا بِبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ الْبَحْرَ فَاَتَوْا عَلٰي قَوْمٍ يَّعْكُفُوْنَ عَلٰٓي الربع
اَصْنَامٍ لَّهُمْ ۚ قَالُوْا يٰمُوْسَى اجْعَلْ لَّنَآ اِلٰهًا كَمَا لَهُمْ اٰلِهَةٌ ۭ قَالَ اِنَّكُمْ قَوْمٌ تَجْهَلُوْنَ ۝ اِنَّ هٰٓؤُلَاۗءِ
مُتَبَّرٌ مَّا هُمْ فِيْهِ وَبٰطِلٌ مَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ قَالَ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْغِيْكُمْ اِلٰهًا وَّهُوَ فَضَّلَكُمْ
عَلَي الْعٰلَمِيْنَ ۝ وَاِذْ اَنْجَيْنٰكُمْ مِّنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُوْمُوْنَكُمْ سُوْۗءَ الْعَذَابِ ۚ يُقَتِّلُوْنَ اَبْنَاۗءَكُمْ ع ١٦
وَيَسْتَحْيُوْنَ نِسَاۗءَكُمْ ۭ وَفِيْ ذٰلِكُمْ بَلَاۗءٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ عَظِيْمٌ ۝ ٢

व औरस्नल् क़ौमल्लज़ी-न कानू युस्तज़्अफ़ू-न मशारिक़ल्-अर्ज़ि व मग़ारि-बहल्लती बारक्ना फ़ीहा, व तम्मत् कलि-मतु रब्बिकल्-हुस्ना अ़ला बनी इस्राई-ल बिमा स-बरू, व दम्मर्ना मा का-न यस्नअु फ़िर्औनु व क़ौमुहू व मा कानू यअ्रिशून (137) ❖ व जावज़्ना बि-बनी इस्राईलल्-बह्-र फ़-अतौ अ़ला क़ौमिंय्यअ्कुफ़ू-न अ़ला अस्नामिल्-लहुम् क़ालू या मूसज्अ़ल्-लना इलाहन् कमा लहुम् आलि-हतुन्, क़ा-ल इन्नकुम् क़ौमुन् तज्हलून (138) इन्-न हाउला-इ मुतब्बरुम् मा हुम् फ़ीहि व बातिलुम् मा कानू यअ्मलून (139) क़ा-ल अग़ैरल्लाहि अब्ग़ीकुम् इलाहंव्-व हु-व

और वारिस कर दिया हमने उन लोगों को जो कमज़ोर समझे जाते थे, उस ज़मीन के पूरब और पश्चिम का कि जिसमें बरकत रखी है हमने, और पूरा हो गया नेकी का वायदा तेरे रब का बनी इस्राईल पर, उनके सब्र करने की वजह से, और ख़राब कर दिया हमने जो कुछ बनाया था फ़िरऔ़न और उसकी क़ौम ने, और जो ऊँचा करके छाया था। (137) ❖ और पार उतार दिया हमने बनी इस्राईल को दरिया से, तो पहुँचे एक क़ौम पर जो पूजने में लग रहे थे अपने बुतों के। कहने लगे- ऐ मूसा! बना दे हमारी इबादत के लिये भी एक बुत जैसे इनके बुत हैं। कहा तुम लोग तो जहालत दिखाते हो। (138) ये लोग, तबाह होने वाली है वह चीज़ जिसमें वे लगे हुए हैं, और ग़लत है जो वे कर रहे हैं। (139) कहा- क्या अल्लाह के सिवा ढूँढूँ तुम्हारे वास्ते कोई और

फ़ज़्ज़-लकुम् अ़लल्-आ़लमीन (140) व इज़् अन्जैनाकुम् मिन् आलि फ़िर्औ-न यसूमूनकुम् सूअल्-अ़ज़ाबि युक़त्तिलू-न अब्ना-अकुम् व यस्तह्यू-न निसा-अकुम्, व फ़ी ज़ालिकुम् बलाउम् मिर्रब्बिकुम् अ़ज़ीम (141) ✿	माबूद? हालाँकि उसने तुमको बड़ाई दी तमाम जहान पर। (140) और वह वक़्त याद करो जब निजात दी हमने तुमको फ़िरऔन वालों से कि देते थे तुमको बुरा अ़ज़ाब, कि मार डालते थे तुम्हारे बेटों को और ज़िन्दा रखते थे तुम्हारी औ़रतों को, और इसमें एहसान है तुम्हारे रब का बड़ा। (141) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (फ़िरऔन और फ़िरऔन वालों को ग़र्क़ करके) हमने उन लोगों को जो कि बिल्कुल कमज़ोर ही गिने जाते थे (यानी बनी इस्राईल) उस सरज़मीन "यानी मुल्क" के पूरब-पश्चिम (यानी तमाम इलाक़ों) का मालिक बना दिया, जिसमें हमने बरकत रखी है (ज़ाहिरी बरकत तो यह कि वहाँ पैदावार की कसरत है, और बातिनी व रूहानी बरकत यह कि वह ज़मीन बड़े फ़ज़ाईल वाली है, बहुत से नबी वहाँ रहे और कितने ही नबियों की वहाँ क़ब्रें हैं)। और आपके रब का अच्छा वायदा बनी इस्राईल के हक़ में उनके सब्र की वजह से पूरा हो गया (जिसका हुक्म उन्हें दिया गया था 'कि सब्र करो') और हमने फ़िरऔन को और उसकी क़ौम के तैयार किये और सजाये हुए कारख़ानों को और जो कुछ वे ऊँची-ऊँची इमारतें बनवाते थे, सब को उलट-पुलट कर दिया। और (जिस दरिया में फ़िरऔन को ग़र्क़ किया गया) हमने बनी इस्राईल को (उस) दरिया से पार उतार दिया (जिसका क़िस्सा सूरः शुअ़रा में है)। पस (पार होने के बाद) उन लोगों का एक क़ौम पर गुज़र हुआ जो अपने चन्द बुतों को लगे बैठे थे (यानी उनकी पूजा-पाठ कर रहे थे) कहने लगे कि ऐ मूसा! हमारे लिए भी एक (जिस्म वाला) माबूद ऐसा ही मुक़र्रर कर दीजिए जैसे इनके ये माबूद हैं। आपने फ़रमाया कि वाक़ई तुम लोगों में बड़ी जहालत है। ये लोग जिस काम में लगे हैं यह (अल्लाह की तरफ़ से भी) तबाह किया जाएगा (जैसा कि अल्लाह की आ़दत व दस्तूर हमेशा से जारी है कि हक़ को बातिल पर ग़ालिब करके उसको तबाह व बरबाद कर देते हैं) और (अपने आप में भी) इनका यह काम बिल्कुल बेबुनियाद है (क्योंकि शिर्क का ग़ैर-हक़ और बातिल होना यक़ीनी और आसानी से समझ में आने वाली चीज़ है। और) फ़रमाया- क्या अल्लाह तआ़ला के सिवा और किसी को तुम्हारा माबूद बना दूँ? हालाँकि उसने तुमको (कुछ नेमतों में) तमाम दुनिया-जहान वालों पर बरतरी दी है। और (अल्लाह तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम के क़ौल की ताईद के लिये इरशाद फ़रमाया कि) वह वक़्त याद करो जब हमने तुमको फ़िरऔन वालों (के ज़ुल्म व तकलीफ़ पहुँचाने) से बचा लिया,

जो तुमको बड़ी सख़्त तकलीफ़ें पहुँचाते थे। तुम्हारे बेटों को (कसरत से) क़त्ल कर डालते थे और तुम्हारी औरतों को (अपनी बेगार और ख़िदमत के लिये) ज़िन्दा छोड़ देते थे। और इस (वाक़िए) में तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से बड़ी भारी आज़माईश थी।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में क़ौमे फ़िरऔन की निरन्तर सरकशी और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से विभिन्न अ़ज़ाबों के ज़रिये उनकी तंबीहात का बयान था। इन आयतों में उनके बुरे अन्जाम और बनी इस्राईल की फ़तह व कामयाबी का ज़िक्र है।

पहली आयत में इरशाद है:

وَاَوْرَثْنَا الْقَوْمَ الَّذِيْنَ كَانُوْا يُسْتَضْعَفُوْنَ مَشَارِقَ الْاَرْضِ وَمَغَارِبَهَا الَّتِىْ بٰرَكْنَا فِيْهَا.

यानी जिस क़ौम को कमज़ोर ज़ईफ़ समझा जाता था उनको हमने उस ज़मीन के पूरब व पश्चिम का मालिक बना दिया जिसमें हमने बरकतें रखी हैं।

क़ुरआनी अलफ़ाज़ में ग़ौर कीजिये। यह नहीं फ़रमाया कि जो क़ौम ज़ईफ़ व कमज़ोर थी बल्कि यह फ़रमाया कि जिसको क़ौमे फ़िरऔन ने ज़ईफ़ व कमज़ोर समझा था, इशारा इसकी तरफ़ है कि अल्लाह तआ़ला जिस क़ौम की मदद पर हों वह हक़ीक़त में कभी कमज़ोर व ज़लील नहीं होती चाहे किसी वक़्त उसके ज़ाहिरी हाल से दूसरे लोग धोखा खायें और उनको कमज़ोर समझें मगर अंततः सब को मालूम हो जाता है कि वे कमज़ोर व ज़लील न थे, क्योंकि दर हक़ीक़त क़ुव्वत व इज़्ज़त हक़ तआ़ला शानुहू के क़ब्ज़े में है, वह जिसको चाहता है इज़्ज़त देता है और जिसको चाहता है ज़िल्लत देता है।

और ज़मीन का मालिक बना देने के लिये लफ़्ज़ "औरसना" इरशाद फ़रमाया कि हमने उनको वारिस बना दिया। इसमें इशारा इसकी तरफ़ है कि जिस तरह वारिस ही अपने मूरिस के माल का मुस्तहिक़ होता है इसी तरह अल्लाह के इल्म में बनी इस्राईल पहले ही से क़ौमे फ़िरऔन के मुल्क व माल के मुस्तहिक़ (पात्र) थे।

"मशारिक़" मश्रिक़ की जमा (बहुवचन) है और "मग़ारिब" मग़रिब की। सर्दी गर्मी के विभिन्न मौसमों में मग़रिब व मश्रिक़ (पूरब व पश्चिम) के बदलने की वजह से जमा का लफ़्ज़ लाया गया, और ज़मीन से मुराद इस जगह मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के क़ौल के मुताबिक़ मुल्के शाम और मिस्र की सरज़मीन है जिस पर अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल को क़ौमे फ़िरऔन और क़ौमे अ़मालिक़ा के हलाक होने के बाद क़ब्ज़ा और हुकूमत अ़ता फ़रमाई। और 'अल्लती बारक्ना फ़ीहा' से यह बतला दिया कि इन ज़मीनों में अल्लाह तआ़ला ने विशेष तौर पर अपनी बरकतें नाज़िल फ़रमाई हैं। मुल्के शाम के बारे में तो क़ुरआने करीम की अनेक आयतों में बरकतों का स्थान होने का ज़िक्र है "अल्लती बारक्ना फ़ीहा" में इसी का बयान है। इसी तरह मिस्र की ज़मीन के बारे में भी बरकतों व फलों वाली होना अनेक रिवायतों से तथा अनुभव व मुशाहदों से साबित है। हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि

मिस्र का दरिया-ए-नील "सय्यिदुल-अन्हार" यानी दरियाओं का सरदार है, और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि बरकतों के दस हिस्सों में से नौ मिस्र में हैं और बाक़ी एक पूरी ज़मीन में। (बहरे मुहीत)

ख़ुलासा यह है कि जिस क़ौम को ग़ुरूर व तकब्बुर के नशे में मस्त लोगों ने अपनी कोताह नज़री से ज़लील व कमज़ोर समझ रखा था, हमने उसी को उन घमण्डियों की दौलत व सल्तनत और मुल्क व माल का मालिक बनाकर दिखला दिया कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूलों का वायदा सच्चा होता है। इरशाद फ़रमायाः

وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنٰى عَلٰى بَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ.

यानी आपके रब का अच्छा वायदा बनी इस्राईल के हक़ में पूरा हो गया।

इस अच्छे वायदे से मुराद या तो वह वायदा है जो मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से किया था किः

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُّهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِى الْاَرْضِ.

यानी क़रीब है कि तुम्हारा रब तुम्हारे दुश्मन को हलाक कर दे और उनकी ज़मीन का तुम्हें मालिक बना दे। और या वह वायदा है जो क़ुरआने करीम में दूसरी जगह ख़ुद हक़ तआ़ला ने बनी इस्राईल के बारे में फ़रमायाः

وَنُرِيْدُ اَنْ نَّمُنَّ عَلَى الَّذِيْنَ اسْتُضْعِفُوْا فِى الْاَرْضِ وَنَجْعَلَهُمْ اَئِمَّةً وَّنَجْعَلَهُمُ الْوٰرِثِيْنَ. وَنُمَكِّنَ لَهُمْ فِى الْاَرْضِ وَنُرِىَ فِرْعَوْنَ وَهَامٰنَ وَجُنُوْدَهُمَا مِنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَحْذَرُوْنَ.

यानी हम यह चाहते हैं कि उस क़ौम पर एहसान करें जिनको इस मुल्क में कमज़ोर व ज़लील समझा गया है, और उनको ही सरदार और हाकिम बना दें और उनको ही इस ज़मीन का वारिस क़रार दें और इस ज़मीन पर क़ब्ज़े और इख़्तियार चलाने का हक़ दें और फ़िरऔ़न व हामान और उनके लश्करों को वह चीज़ ज़ाहिर करके दिखला दें जिसके डर से वे मूसा अ़लैहिस्सलाम के ख़िलाफ़ तरह-तरह की तदबीरें कर रहे हैं।

और हक़ीक़त यह है कि ये दोनों वायदे एक ही हैं, अल्लाह तआ़ला के वायदे ही की बिना पर मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से वायदा किया था। इस आयत में उस वायदे का पूरा होना लफ़्ज़ "तम्मत" से बयान किया गया, क्योंकि वायदे का पूरा करना और तकमील उसी वक़्त होती है जब वह पूरा हो जाये।

इसके साथ ही बनी इस्राईल पर इस इनाम व एहसान की वजह भी बयान फ़रमा दी "बिमा स-बरू" यानी इस वजह से कि उन लोगों ने अल्लाह के रास्ते में तकलीफ़ें बरदाश्त कीं और उन पर साबित-क़दम (जमे) रहे।

इसमें इशारा कर दिया कि हमारा यह एहसान व इनाम सिर्फ़ बनी इस्राईल ही के साथ मख़्सूस न था बल्कि उनके सब्र व साबित-क़दमी वाले अ़मल का नतीजा था, जो शख़्स या जो

क़ौम इस अ़मल को इख़्तियार करे हमारा इनाम हर जगह हर वक़्त उसके लिये मौजूद है:

फ़िज़ा-ए-बदर पैदा कर फ़रिश्ते तेरी नुसरत को
उतर सकते हैं गरदूँ से क़तार अन्दर क़तार अब भी

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जब अल्लाह की मदद का वायदा अपनी क़ौम से किया था उस वक़्त भी उन्होंने क़ौम को यही बतलाया था कि अल्लाह तआ़ला से मदद माँगना और मुसीबतों व आफ़तों का जमाव व सब्र के साथ मुक़ाबला करना ही कामयाबी की कुन्जी है।

हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि इस आयत में इशारा पाया जाता है कि जब इनसान का मुक़ाबला किसी ऐसे शख़्स या जमाअ़त से हो जिससे अपनी रक्षा और बचाव करना उसकी क़ुदरत में न हो तो ऐसे वक़्त कामयाबी और फ़लाह का सही तरीक़ा यही है कि मुक़ाबला न करे बल्कि सब्र करे। उन्होंने फ़रमाया कि जब कोई आदमी किसी के तकलीफ़ देने का मुक़ाबला उसको तकलीफ़ पहुँचाने से करता है यानी अपना बदला ख़ुद लेने की फ़िक्र करता है तो अल्लाह तआ़ला उसको उसी के हवाले कर देते हैं, कामयाब हो या नाकाम। और जब कोई शख़्स लोगों के सताने और तकलीफ़ देने का मुक़ाबला सब्र और अल्लाह की मदद के इन्तिज़ार से करता है तो अल्लाह तआ़ला ख़ुद उसके लिये रास्ते खोल देते हैं।

और जिस तरह अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल से सब्र व साबित-क़दमी पर यह वायदा फ़रमाया था कि उनको दुश्मन पर फ़तह और ज़मीन पर हुकूमत अ़ता करेंगे इसी तरह उम्मते मुहम्मदिया से भी वायदा फ़रमाया है जो सूरः नूर में बयान किया गया है:

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِى الْاَرْضِ.

और जिस तरह बनी इस्राईल ने अल्लाह के वायदे को देख लिया था, उम्मते मुहम्मदिया ने उनसे ज़्यादा वाज़ेह तौर पर अल्लाह तआ़ला की मदद को देखा, पूरी ज़मीन पर उनकी हुकूमत व सल्तनत आ़म हो गयी। (तफ़सीर रूहुल-बयान)

यहाँ यह शुब्हा न किया जाये कि बनी इस्राईल ने तो सब्र से काम नहीं लिया, बल्कि जब मूसा अ़लैहिस्सलाम ने सब्र की हिदायत फ़रमाई तो ख़फ़ा होकर कहने लगे "ऊज़ीना" (हमको सताया गया....) वजह यह है कि अव्वल तो उनका सब्र फ़िरऔ़नी तकलीफ़ों के मुक़ाबले में और ईमान पर साबित-क़दम रहना मुसलसल साबित है, अगर एक दफ़ा शिकायत का लफ़्ज़ निकल भी गया तो उस पर नज़र नहीं की गयी। दूसरे यह भी मुम्किन है कि बनी इस्राईल का यह क़ौल शिकायत के तौर पर न हो बल्कि रंज व ग़म के ज़ाहिर करने के तौर पर हो।

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में इसके बाद फ़रमायाः

وَدَمَّرْنَا مَا كَانَ يَصْنَعُ فِرْعَوْنُ وَقَوْمُهٗ وَمَا كَانُوْا يَعْرِشُوْنَ.

यानी हमने तबाह व बरबाद कर दिया उन सब चीज़ों को जो फ़िरऔ़न और उसकी क़ौम बनाया करती थी, और उन इमारतों या दरख़्तों को जिनको वह ऊँचा किया करती थी। फ़िरऔ़न और क़ौमे फ़िरऔ़न की बनाई हुई चीज़ों में उनके मकानात, इमारतें और घरेलू ज़रूरत के

सामान, तथा वो मुख़्तलिफ़ किस्म की तदबीरें जो वे मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले के लिये करते थे, सब दाख़िल हैं। और "व मा कानू यअ़रिशून" यानी जिसको वे बुलन्द करते थे, इसमें ऊँचे महल और मकानात भी दाख़िल हैं और बुलन्द दरख़्त और वो अंगूर की बेलें भी जिनको छतों पर चढ़ाया जाता है।

यहाँ तक क़ौमे फ़िरऔ़न की तबाही का ज़िक्र था, आगे बनी इस्राईल की फ़तह व कामयाबी के बाद उनकी नाफ़रमानी, जहालत और ग़लत चलन का बयान शुरू होता है जो अल्लाह तआ़ला की बेशुमार नेमतों के देखने और बरतने के बावजूद उन लोगों से सर्ज़द हुई, जिसका मक़सद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली देना है कि पिछले नबियों ने अपनी उम्मत के हाथों कैसी-कैसी तकलीफ़ें उठाई हैं, उनको सामने रखने से मौजूदा सरकशों की ईज़ा (सताना) हल्की हो जायेगी।

وَجَاوَزْنَا بِبَنِيٓ اِسْرَآءِيْلَ الْبَحْرَ.

यानी हमने बनी इस्राईल को दरिया से पार उतार दिया, बनी इस्राईल को क़ौमे फ़िरऔ़न के मुक़ाबले में चमत्कारिक कामयाबी हासिल हुई और इत्मीनान मिला तो उसका वही असर हुआ जो आ़म क़ौमों पर ऐश व आराम और इ़ज़्ज़त व दौलत का हुआ करता है, कि उनमें जाहिलाना चीज़ें पैदा होना शुरू हुईं।

वाक़िआ़ यह पेश आया कि यह क़ौम अभी-अभी मूसा अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े के साथ दरिया से पार हुई और पूरी क़ौमे फ़िरऔ़न के दरिया में डूबने का तमाशा अपनी आँखों से देखकर ज़रा आगे बढ़ी तो एक क़बीले पर गुज़र हुआ जो मुख़्तलिफ़ बुतों की पूजा में मुब्तला था। बनी इस्राईल को कुछ उनका ही तरीक़ा पसन्द आने लगा और मूसा अ़लैहिस्सलाम से दरख़्वास्त की कि जैसे इन लोगों के बहुत से माबूद हैं आप हमारे लिये भी कोई ऐसा ही माबूद बना दीजिए कि हम भी एक महसूस चीज़ को सामने रखकर इबादत किया करें, अल्लाह तआ़ला की ज़ात तो सामने नहीं। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

اِنَّكُمْ قَوْمٌ تَجْهَلُوْنَ.

यानी तुम लोगों में बड़ी जहालत है। ये लोग जिनके तरीक़े को तुमने पसन्द किया इनके आमाल सब ज़ाया व बरबाद हैं, यह बातिल की पैरवी करने वाले हैं, तुम्हें इनकी हिर्स न करनी चाहिये। क्या मैं तुम्हारे लिये अल्लाह के सिवा किसी को माबूद बना दूँ? हालाँकि अल्लाह तआ़ला ने ही तुमको तमाम जहान वालों पर फ़ज़ीलत (रुतबा व इ़ज़्ज़त) बख़्शी है। मुराद उस वक़्त के दुनिया वाले हैं, कि उस वक़्त मूसा अ़लैहिस्सलाम पर ईमान लाने वाले ही दूसरे सब लोगों से अफ़ज़ल व आला थे।

उसके बाद बनी इस्राईल को उनकी पिछली हालत याद दिलाई गयी कि वे फ़िरऔ़न के हाथों में ऐसे मजबूर व ज़लील थे कि उनके लड़कों को क़त्ल किया जाता था सिर्फ़ लड़कियाँ अपनी ख़िदमत के लिये रखी जाती थीं। अल्लाह तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम की बरकत व

दुआ से इस अ़ज़ाब से निजात दी, क्या इस एहसान का असर यह होना चाहिये कि तुम उसी रब्बुल-आ़लमीन के साथ दुनिया के ज़लील-तरीन (घटिया) पत्थरों को शरीक ठहराओ? यह कैसा भारी ज़ुल्म है, इससे तौबा करो।

وَوٰعَدْنَا مُوْسٰى ثَلٰثِيْنَ لَيْلَةً وَّاَتْمَمْنٰهَا بِعَشْرٍ فَتَمَّ مِيْقَاتُ رَبِّهٖٓ اَرْبَعِيْنَ
لَيْلَةً ۚ وَقَالَ مُوْسٰى لِاَخِيْهِ هٰرُوْنَ اخْلُفْنِيْ فِيْ قَوْمِيْ وَاَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيْلَ الْمُفْسِدِيْنَ ۝

व वाअ़द्ना मूसा सलासी-न लै-लतंव् -व अत्मम्नाहा बिअ़शिरन् फ़-तम्-म मीक़ातु रब्बिही अर्बअ़ी-न लै-लतन् व क़ा-ल मूसा लिअख़ीहि हारूनख़्लुफ़्नी फ़ी क़ौमी व अस्लिह् व ला तत्तबिअ़् सबीलल्-मुफ़्सिदीन (142)	और वादा किया हमने मूसा से तीस रात का और पूरा किया उनको और दस से पस पूरी हो गई मुद्दत तेरे रब की चालीस रातें, और कहा मूसा ने अपने भाई हारून से कि मेरा ख़लीफ़ा रह मेरी क़ौम में और इस्लाह करते रहना और मत चलना फ़साद मचाने वालों की राह। (142)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जब बनी इस्राईल सब परेशानियों से मुत्मईन हो गये तो मूसा अ़लैहिस्सलाम से दरख़्वास्त की कि अब हमको कोई शरीअ़त मिले तो उस पर इत्मीनान के साथ अ़मल करें। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने हक़ तआ़ला से दरख़्वास्त की, हक़ तआ़ला उसका क़िस्सा इस तरह बयान फ़रमाते हैं कि) हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) से तीस रात का वायदा किया (कि तूर पहाड़ पर आकर एतिकाफ़ करें तो आपको शरीअ़त और किताब यानी तौरात दी जायेगी) और दस रात को उन (तीस रात) का पूरा करने वाला बनाया (यानी तौरात देकर उनमें दस रातें इबादत के लिये और बढ़ा दीं जिसकी वजह सूरः ब-क़रह में बयान हो चुकी है)। सो उनके परवर्दिगार का (मुक़र्रर किया हुआ) वक़्त (सब मिलकर) पूरी चालीस रातें हो गया। और मूसा (अ़लैहिस्सलाम तूर पहाड़ पर आने लगे तो चलते वक़्त) उन्होंने अपने भाई हारून (अ़लैहिस्सलाम) से कह दिया था कि मेरे बाद मेरी क़ौम का इन्तिज़ाम रखना और इस्लाह करते रहना और बद-नज़्म "यानी बिगाड़ व ख़राबी पैदा करने वाले" लोगों की राय पर अ़मल मत करना।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस आयत में मूसा अ़लैहिस्सलाम और बनी इस्राईल का वह वाकिआ़ बयान हुआ है जो फ़िरऔ़न के दरिया में डूबने और बनी इस्राईल के मुत्मईन होने के बाद पेश आया कि बनी इस्राईल ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से दरख़्वास्त की कि अब हम मुत्मईन हैं, अब हमें कोई

किताब और शरीअ़त मिले तो हम बेफ़िक्री के साथ उस पर अ़मल करें। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने हक़ तआ़ला से दुआ़ की।

इसमें लफ़्ज़ "वाअ़द्ना" वायदे से निकला है, और वायदे की हक़ीक़त यह है कि किसी को नफ़ा पहुँचाने से पहले उसका इज़हार कर देना कि हम तुम्हारे लिये फ़ुलाँ काम करेंगे।

इस मौक़े पर अल्लाह तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम पर अपना कलाम नाज़िल करने का वायदा फ़रमाया और उसके लिये यह शर्त लगाई कि तीस रातें तूर पहाड़ पर एतिकाफ़ और ज़िक्रुल्लाह में गुज़ार दें और फिर उन तीस पर और दस रातों का इज़ाफ़ा करके चालीस कर दिया।

लफ़्ज़ "वाअ़द्ना" के असली मायने दो तरफ़ से वायदे और मुआ़हदे के आते हैं। यहाँ भी अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से तौरात के अ़ता होने का वायदा था और मूसा अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ से तीस चालीस रातों के एतिकाफ़ का, इसलिये बजाय "वअ़द्ना" के "वाअ़द्ना" फ़रमाया।

इस आयत में चन्द मसाईल और अहकाम ध्यान देने के क़ाबिल हैं। अव्वल यह कि जब अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर ही यह था कि एतिकाफ़ चालीस रातों का कराया जाये तो पहले तीस और बाद में दस का इज़ाफ़ा करके चालीस करने में क्या हिक्मत थी? पहले ही चालीस रातों के एतिकाफ़ का हुक्म दे दिया जाता तो क्या हर्ज था। सो अल्लाह तआ़ला की हिक्मतों का इहाता तो कौन कर सकता है, कुछ हिक्मतें उलेमा ने बयान की हैं।

तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि इसमें एक हिक्मत तदरीज और आहिस्तगी की है कि कोई काम किसी के ज़िम्मे लगाया जाये तो शुरू ही में काम की ज़्यादा मिक़्दार (बोझ और मात्रा) उस पर न डाली जाये ताकि वह आसानी से बरदाश्त करे, फिर मज़ीद काम दिया जाये।

और तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि यह अन्दाज़ इख़्तियार करने में हाकिमों और इख़्तियार वालों को इसकी तालीम देना है कि अगर किसी को कोई काम एक निर्धारित वक़्त में पूरा करने का हुक्म दिया जाये और उस निर्धारित मियाद में वह पूरा न कर सके तो उसको कुछ और मोहलत दी जाये, जैसा कि मूसा अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए में पेश आया कि तीस रातें पूरी करने के बाद जिस कैफ़ियत का हासिल होना मतलूब था वह पूरी न हुई इसलिये मज़ीद दस रातों का इज़ाफ़ा किया गया, क्योंकि उन दस रातों के इज़ाफ़े का जो वाक़िआ़ मुफ़स्सिरीन ने ज़िक्र किया है वह यह है कि तीस रातों के एतिकाफ़ में मूसा अ़लैहिस्सलाम ने क़ायदे के मुताबिक़ लगातार तीस रोज़े भी रखे, बीच में इफ़्तार नहीं किया। तीसवाँ रोज़ा पूरा करने के बाद इफ़्तार करके मुक़र्ररा मक़ाम तूर पर हाज़िर हुए तो हक़ तआ़ला की तरफ़ से इरशाद हुआ कि रोज़ेदार के मुँह से जो एक ख़ास क़िस्म की पेट के ख़ाली रहने और उससे भाप उठने की गंध पैदा हो जाती है वह अल्लाह तआ़ला को पसन्द है। आपने इफ़्तार के बाद मिस्वाक करके उस गंध (बू) को दूर कर दिया, इसलिये दस रोज़े और रखिये ताकि वह बू फिर पैदा हो जाये।

और तफ़सीर की कुछ रिवायतों में जो इस जगह यह नक़ल किया गया है कि तीसवें रोज़े के

बाद मूसा अ़लैहिस्सलाम ने मिस्वाक कर ली थी जिसके ज़रिये रोज़े की वह गंध (बू) दूर हो गयी थी, इससे इस बात पर तर्क नहीं लिया जा सकता कि रोज़ेदार के लिये मिस्वाक करना मक्रूह या वर्जित है, क्योंकि अव्वल तो इस रिवायत की कोई सनद ज़िक्र नहीं की गयी, दूसरे यह भी हो सकता है कि यह हुक्म हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की ज़ात से मुताल्लिक़ हो, आ़म लोगों के लिये न हो, या मूसा अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त में ऐसा ही हुक्म सब के लिये हो कि रोज़े की हालत में मिस्वाक न की जाये, लेकिन शरीअ़ते मुहम्मदिया में तो रोज़े की हालत में मिस्वाक करने का मामूल हदीस से साबित है जिसको इमाम बैहक़ी ने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

خَيْرُ خِصَالِ الصَّائِمِ السِّوَاكُ.

यानी रोज़ेदार का बेहतरीन अ़मल मिस्वाक है। इस रिवायत को जामे सग़ीर में नक़ल करके हसन फ़रमाया है।

फ़ायदाः इस रिवायत पर एक सवाल यह होता है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम जब ख़ज़िर अ़लैहिस्सलाम की तलाश में सफ़र कर रहे थे तो आधे दिन भूख पर सब्र न हो सका और अपने साथी से फ़रमाने लगेः

اٰتِنَا غَدَآءَ نَا لَقَدْ لَقِيْنَا مِنْ سَفَرِنَا هٰذَا نَصَبًا.

यानी हमारा नाश्ता लाओ क्योंकि इस सफ़र ने हमको थकान में डाल दिया। और तूर पहाड़ पर लगातार तीस रोज़े इस तरह रखे कि रात को भी इफ़्तार नहीं, यह अ़जीब बात है?

तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि यह फ़र्क़ इन दोनों सफ़रों के अन्दाज़ के सबब से था, पहला सफ़र मख़्लूक़ के साथ मख़्लूक़ की तलाश में था, और तूर पहाड़ का सफ़र मख़्लूक़ से अलग होकर एक पाक ज़ात यानी अल्लाह तआ़ला की जुस्तजू में, इसका यही असर होना था कि इनसानी तक़ाज़े बहुत ही कमज़ोर व बेजान हो गये, खाने पीने की हाजत इतनी घट गयी कि तीस रोज़ तक कोई तकलीफ़ महसूस नहीं फ़रमाई।

इबादतों में चाँद का हिसाब मोतबर है, दुनियावी मामलों में सूरज के हिसाब की गुंजाईश है

एक और मसला इस आयत से यह साबित हुआ कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की शरीअ़तों में तारीख़ का हिसाब रात से होता है, क्योंकि इस आयत में भी तीस दिन के बजाय तीस रातों का ज़िक्र फ़रमाया है। वजह यह है कि नबियों की शरीअ़तों में महीने क़मरी (चाँद के) मोतबर हैं और क़मरी महीने की शुरूआत चाँद देखने से होती है, वह रात ही में हो सकता है, इसलिये महीना रात से शुरू होता है। फिर उसकी हर तारीख़ सूरज गुरूब होने से शुमार होती है। जितने आसमानी मज़हब हैं उन सब का हिसाब इसी तरह क़मरी (चाँद के) महीनों से और शुरू तारीख़

सूरज छुपने से शुमार की जाती है।

इमाम क़ुर्तुबी ने इब्ने अ़रबी के हवाले से नक़ल किया है कि:

حِسَابُ الشَّمْسِ لِلْمَنَافِعِ وَحِسَابُ الْقَمَرِ لِلْمَنَاسِكِ.

यानी शम्सी (सूरज का) हिसाब दुनियावी फ़ायदों के लिये और क़मरी (चाँद का) हिसाब इबादतों के अदा करने के लिये।

और ये तीस रातें हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ ज़ीक़ादा (इस्लामी साल के ग्यारहवें महीने) की रातें थीं और फिर उन पर दस रातें ज़िलहिज्जा की बढ़ाई गयीं। इससे मालूम हुआ कि तौरात का अ़तीया हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को क़ुरबानी (यानी बक़र-ईद) के दिन मिला। (तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी)

नफ़्स की इस्लाह में चालीस दिन-रात को ख़ास दख़ल है

इस आयत के इशारे से यह भी मालूम हुआ कि चालीस रातों को बातिनी हालात की इस्लाह (सुधार) में कोई ख़ास दख़ल है, जैसा कि एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जो शख़्स चालीस दिन इख़्लास के साथ अल्लाह तआ़ला की इबादत करे तो अल्लाह तआ़ला उसके दिल से हिक्मत के चश्मे जारी फ़रमा देते हैं। (रूहुल-बयान)

इनसान को अपने सब कामों में तदरीज और आहिस्तगी की तालीम

इस आयत से साबित हुआ कि अहम कामों के लिये एक ख़ास मियाद मुक़र्रर करना, और आसानी व तदरीज से अन्जाम देना अल्लाह की सुन्नत है। तेज़ी और जल्दबाज़ी अल्लाह तआ़ला को पसन्द नहीं।

सबसे पहले ख़ुद हक़ तआ़ला ने अपने काम यानी दुनिया की पैदाईश के लिये एक मियाद छह दिन की मुतैयन फ़रमाकर यह उसूल बतला दिया है, हालाँकि हक़ तआ़ला को आसमान ज़मीन और सारे आ़लम को पैदा करने के लिये एक मिनट की भी ज़रूरत नहीं, जब वह किसी चीज़ को पैदा करने के लिये फ़रमा दें कि हो जा वह फ़ौरन हो जाती है, मगर इस ख़ास तरीक़ा-ए-अ़मल में मख़्लूक़ को यह हिदायत देनी थी कि अपने कामों को ग़ौर व फ़िक्र और तदरीज के साथ (थोड़ा-थोड़ा करके) अन्जाम दिया करें। इसी तरह हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को तौरात अ़ता फ़रमाई तो उसके लिये भी एक मियाद मुक़र्रर फ़रमाई, इसमें इसी उसूल की तालीम है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और यही वह उसूल था जिसको नज़र-अन्दाज़ कर देना बनी इस्राईल की गुमराही का सबब बना, क्योंकि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के पहले हुक्म के मुताबिक़ अपनी क़ौम से यह

कहकर गये थे कि तीस दिन के लिये जा रहा हूँ, यहाँ जब दस दिन की मुद्दत बढ़ गयी तो वे लोग अपनी जल्दबाज़ी के सबब यह कहने लगे कि मूसा अ़लैहिस्सलाम तो कहीं गुम हो गये, अब हमें कोई दूसरा पेशवा बना लेना चाहिये। इसका यह नतीजा हुआ कि सामरी के जाल में फंसकर "गौसाला परस्ती" (गाय के बछड़े को पूजना) शुरू कर दी, अगर अपने कामों में आहिस्तगी, दर्जा-ब-दर्जा करने और सोच-विचार के आ़दी होते तो यह नौबत न आती। (क़ुर्तुबी)

आयत के दूसरे जुमले में इरशाद हैः

وَقَالَ مُوْسٰى لِاَخِيْهِ هٰرُوْنَ اخْلُفْنِىْ فِىْ قَوْمِىْ وَاَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيْلَ الْمُفْسِدِيْنَ.

इस जुमले से भी चन्द मसाईल और अहकाम निकलते हैं।

प्रबंधक और ज़िम्मेदार को ज़रूरत के वक़्त अपना उत्तराधिकारी तजवीज़ करना

अव्वल यह कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह तआ़ला के वायदे के मुताबिक़ तूर पहाड़ पर जाकर एतिकाफ़ करने का इरादा किया तो अपने साथी हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम से फ़रमायाः

اُخْلُفْنِىْ فِىْ قَوْمِىْ.

यानी मेरे पीछे (बाद में) आप मेरी क़ौम में मेरी क़ायम-मक़ामी के फ़राईज़ अन्जाम दें।

इससे साबित हुआ कि जो शख़्स किसी काम का ज़िम्मेदार हो वह अगर किसी ज़रूरत से कहीं जाये तो उस पर लाज़िम है कि उस काम का इन्तिज़ाम करके जाये।

साथ ही यह साबित हुआ कि हुकूमत के ज़िम्मेदार हज़रात जब कहीं सफ़र करें तो अपना क़ायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा (नायब और उत्तराधिकारी) मुक़र्रर करके जायें।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़म आ़दत यही थी कि जब कभी मदीना से बाहर जाना हुआ तो किसी शख़्स को ख़लीफ़ा बनाकर जाते थे। एक मर्तबा हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़लीफ़ा बनाया, एक मर्तबा अ़ब्दुल्लाह बिन उम्मे मक्तूम को, इसी तरह विभिन्न वक़्तों में विभिन्न और अनेक सहाबा को मदीना में ख़लीफ़ा बनाकर बाहर तशरीफ़ ले गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने हारून अ़लैहिस्सलाम को ख़लीफ़ा बनाने के वक़्त उनको चन्द हिदायत दीं। इससे मालूम हुआ कि जिसको क़ायम-मक़ाम (जानशीन) बनाया जाये उसकी सहूलत के लिये ज़रूरी हिदायतें देकर जाये। उन हिदायतों में से पहली हिदायत यह है कि "अस्लिह" (इस्लाह और सुधार करो) इसमें "अस्लिह" का मफ़ऊल ज़िक्र नहीं फ़रमाया कि किसकी इस्लाह करो। इससे इशारा इस उमूम की तरफ़ है कि अपनी भी इस्लाह करो और अपनी क़ौम की भी। यानी जब उनमें कोई बात फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) की महसूस करो

तो उनको सही रास्ते पर लाने की कोशिश करो। दूसरी हिदायत यह दी किः

لَا تَتَّبِعْ سَبِيْلَ الْمُفْسِدِيْنَ.

यानी फ़साद करने वालों के रास्ते की पैरवी न करो।

ज़ाहिर है कि हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के नबी हैं, उनसे फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) में मुब्तला होने का तो ख़तरा न था, इसलिये इस हिदायत का मतलब यह था कि फ़साद फैलाने और ग़लत राह पर चलने वालों की मदद या हिम्मत बढ़ाने का कोई काम न करो।

चुनाँचे हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम ने जब क़ौम को देखा कि "सामरी" के पीछे चलने लगे यहाँ तक कि उसके कहने से गौसाला (गाय के बछड़े) की पूजा शुरू कर दी तो क़ौम को इस बेहूदगी से रोका और सामरी को डाँटा। फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने वापसी के बाद जब यह ख़्याल किया कि हारून अ़लैहिस्सलाम ने मेरे पीछे अपने फ़र्ज़ अदा करने में कोताही की तो उनसे पूछताछ और पकड़ फ़रमायी।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के इस वाक़िए से उन लोगों को सबक़ लेना चाहिये जो अव्यवस्था और बेफ़िक्री ही को सबसे बड़ी बुज़ुर्गी समझते हैं।

وَلَمَّا جَآءَ مُوْسٰى لِمِيْقَاتِنَا وَكَلَّمَهٗ رَبُّهٗ ۙ قَالَ
رَبِّ اَرِنِيْٓ اَنْظُرْ اِلَيْكَ ؕ قَالَ لَنْ تَرٰىنِيْ وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ فَاِنِ اسْتَقَرَّ مَكَانَهٗ فَسَوْفَ
تَرٰىنِيْ ۚ فَلَمَّا تَجَلّٰى رَبُّهٗ لِلْجَبَلِ جَعَلَهٗ دَكًّا وَّخَرَّ مُوْسٰى صَعِقًا ۚ فَلَمَّآ اَفَاقَ قَالَ سُبْحٰنَكَ تُبْتُ
اِلَيْكَ وَاَنَا اَوَّلُ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝ قَالَ يٰمُوْسٰٓى اِنِّى اصْطَفَيْتُكَ عَلَى النَّاسِ بِرِسٰلٰتِيْ وَبِكَلَامِيْ ۖ
فَخُذْ مَآ اٰتَيْتُكَ وَكُنْ مِّنَ الشّٰكِرِيْنَ ۝ وَكَتَبْنَا لَهٗ فِى الْاَلْوَاحِ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَّوْعِظَةً وَّتَفْصِيْلًا
لِّكُلِّ شَيْءٍ ۚ فَخُذْهَا بِقُوَّةٍ وَّاْمُرْ قَوْمَكَ يَاْخُذُوْا بِاَحْسَنِهَا ؕ سَاُورِيْكُمْ دَارَ الْفٰسِقِيْنَ ۝

व लम्मा जा-अ मूसा लिमीक़ातिना व कल्ल-महू रब्बुहू क़ा-ल रब्बि अरिनी अन्ज़ुर् इलै-क, क़ा-ल लन् तरानी व लाकिनिन्ज़ुर् इलल्-ज-बलि फ़-इनिस्त-क़र्-र मकानहू फ़सौ-फ़ तरानी फ़-लम्मा तजल्ला रब्बुहू लिल्ज-बलि ज-अ़-लहू दक्कंव्-व ख़र्-र मूसा सअ़िक़न् फ़-लम्मा	और जब पहुँचा मूसा हमारे वायदे पर और कलाम किया उससे उसके रब ने, बोला ऐ मेरे रब! तू मुझको दिखा कि मैं तुझको देखूँ। फ़रमाया तू मुझको हरगिज़ न देखेगा लेकिन तू देखता रह पहाड़ की तरफ़, अगर वह अपनी जगह ठहरा रहा तो तू मुझको देख लेगा फिर जब तजल्ली की उसके रब ने पहाड़ की तरफ़, कर दिया उसको ढाकर बराबर और गिर पड़ा

अफ़ा-क़ क़ा-ल सुब्हान-क तुब्तु इलै-क व अ-न अव्वलुल्-मुअ्मिनीन (143) क़ा-ल या मूसा इन्निस्तफ़ैतु-क अ़लन्नासि बिरिसालाती व बि-कलामी फ़ख़ुज़् मा आतैतु-क व कुम् मिनश्शाकिरीन (144) व कतब्ना लहू फ़िल्-अल्वाहि मिन् कुल्लि शैइम् मौअ़ि-ज़तंव्-व तफ़्सीलल्-लिकुल्लि शैइन् फ़ख़ुज़्हा बिक़ुव्वतिंव् वअ्मुर् क़ौम-क यअ्ख़ुज़ू बिअह्सनिहा, स-उरीकुम् दारल्-फ़ासिक़ीन (145)	मूसा बेहोश होकर, फिर जब होश में आया बोला- तेरी ज़ात पाक है, मैंने तौबा की तेरी तरफ़ और मैं सबसे पहले यक़ीन लाया। (143) फ़रमाया ऐ मूसा मैंने तुझको विशेषता दी लोगों से अपने पैग़ाम भेजने की और अपने कलाम करने की, सो ले जो मैंने तुझको दिया और शुक्र करने वाला रह। (144) और लिख दी हमने उसको तख़्तियों पर हर किस्म की नसीहत और तफ़सील हर चीज़ की, सो पकड़ ले उनको ताक़त से और हुक्म कर अपनी क़ौम को कि पकड़े रहें उसकी बेहतर बातें, बहुत जल्द मैं तुमको दिखलाऊँगा घर नाफ़रमानों का। (145)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब मूसा (अ़लैहिस्सलाम इस वाक़िए में) हमारे (मुक़र्ररा) वक़्त पर आये (थे जिसका क़िस्सा बयान हो रहा है) और उनके रब ने उनसे (बहुत ही लुत्फ़ और इनायत की) बातें कीं, तो (हद से ज़्यादा ख़ुशी के सबब दीदार का शौक़ पैदा हुआ) अ़र्ज़ किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मुझको अपना दीदार दिखला दीजिये कि मैं आपको एक नज़र देख लूँ। इरशाद हुआ कि तुम मुझको (दुनिया में) हरगिज़ नहीं देख सकते (क्योंकि ये आँखें हमारे जमाल की ताब नहीं ला सकतीं, जैसा कि हदीस की किताब मिश्कात शरीफ़ में मुस्लिम शरीफ़ के हवाले से नक़ल है:

(لاحرقت سبحات وجهه)

लेकिन (तुम्हारी तसल्ली के लिये यह तजवीज़ करते हैं कि) तुम इस पहाड़ की तरफ़ देखते रहो (हम इस पर एक झलक डालते हैं) सो अगर यह अपनी जगह बरक़रार रहा तो (ख़ैर) तुम भी देख सकोगे। (ग़र्ज़ कि मूसा अ़लैहिस्सलाम उसकी तरफ़ देखने लगे) पस उनके रब ने जब पहाड़ पर तजल्ली फ़रमाई तो (तजल्ली ने) उस (पहाड़) के परख़चे "यानी धज्जियाँ" उड़ा दिये और मूसा (अ़लैहिस्सलाम) बेहोश होकर गिर पड़े। फिर जब होश में आये तो अ़र्ज़ किया कि बेशक आपकी ज़ात (इन आँखों की बरदाश्त से) पाकीज़ा (और बुलन्द) है, मैं आपकी बारगाह में (इस शौक़ भरी दरख़्वास्त से) माज़िरत करता हूँ और (जो कुछ आपका इरशाद है कि 'लन् तरानी' "तुम मुझे हरगिज़ नहीं देख सकते" सबसे पहले मैं इस पर यक़ीन करता हूँ। इरशाद

हुआ कि ऐ मूसा! (यही बहुत है कि) मैंने (तुमको) अपनी (तरफ़ से) पैग़म्बरी (का ओहदा देकर) और अपने (साथ) गुफ़्तगू (का सम्मान बख़्श कर इस) से और लोगों पर तुमको ख़ुसूसी दर्जा दिया है, तो (अब) जो कुछ मैंने तुमको अ़ता किया है (नुबुव्वत, अपने साथ गुफ़्तगू का सम्मान और तौरात) उसको लो और शुक्र करो। और हमने चन्द तख़्तियों पर हर क़िस्म की (ज़रूरी) नसीहत और (ज़रूरी अहकाम के मुताल्लिक़) हर चीज़ की तफ़सील उनको लिखकर दी, (यही तख़्तियाँ तौरात हैं। फिर हुक्म हुआ कि जब ये तख़्तियाँ हमने दी हैं) तो इनको कोशिश के साथ (ख़ुद भी) अ़मल में लाओ और अपनी क़ौम को (भी) हुक्म करो कि इनके अच्छे-अच्छे अहकाम पर (यानी सब पर कि सब ही अच्छे हैं) अ़मल करें, मैं अब बहुत जल्द तुम लोगों को (यानी बनी इस्राईल को) उन नाफ़रमानों का (यानी फ़िरऔ़नियों का या अ़मालिक़ा का) मक़ाम दिखलाता हूँ (इसमें ख़ुशख़बरी और वायदा है कि मिस्र या शाम पर बहुत जल्द क़ब्ज़ा होने वाला है। इससे मक़सद शौक़ दिलाना है इताअ़त का, कि ये अल्लाह के अहकाम पर अ़मल करने की बरकतें हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

"लन तरानी" (यानी आप मुझे नहीं देख सकते) इसमें इशारा है कि अल्लाह का दीदार नामुम्किन नहीं मगर मुख़ातब मौजूदा हालत में इसको बरदाश्त नहीं कर सकता, वरना अगर दीदार और देखना मुम्किन ही न होता तो 'लन तरानी' के बजाय 'लन उरा' कहा जाता कि मेरा दीदार नहीं हो सकता। (तफ़सीरे मज़हरी)

इससे साबित हुआ कि अल्लाह तआ़ला का दीदार दुनिया में भी अ़क़्लन मुम्किन तो है मगर इस आयत से उसके पाये जाने और ज़ाहिर होने की असंभावना भी साबित हो गयी और यही मज़हब है अहले सुन्नत की अक्सरियत का, कि दुनिया में अल्लाह तआ़ला का दीदार अ़क़्लन मुम्किन है, मगर शरअ़न नामुम्किन, जैसा कि सही मुस्लिम की हदीस में है:

لن یری احدٌ منکم ربّهٗ حتی یموت.

यानी तुममें से कोई शख़्स मरने से पहले अपने रब को नहीं देख सकता।

وَلٰکِنِ انْظُرْ اِلَی الْجَبَلِ.

इसमें इस बात की गवाही है कि मौजूदा हालत में मुख़ातब अल्लाह के देखने और दीदार को बरदाश्त नहीं कर सकता, इसलिये पहाड़ पर मामूली सी झलक डालकर बतला दिया गया कि वह भी बरदाश्त नहीं कर सकता, इनसान तो पैदाईशी तौर पर बड़ा कमज़ोर है वह कैसे बरदाश्त करे।

فَلَمَّا تَجَلّٰی رَبُّهٗ لِلْجَبَلِ.

"तजल्ली" के मायने अ़रबी लुग़त में ज़ाहिर और खुलने के हैं। और सूफ़िया-ए-किराम के नज़दीक तजल्ली के मायने किसी चीज़ को बिना वास्ते के देखने के हैं, जैसे कोई चीज़ आईने के

वास्ते से देखी जाये, इसी लिये तजल्ली को दीदार नहीं कह सकते। ख़ुद इस आयत में इसकी शहादत (सुबूत) मौजूद है कि अल्लाह तआ़ला ने देखने और अपने दीदार की तो नफ़ी फ़रमाई और तजल्ली को साबित फ़रमाया।

इमाम अहमद, इमाम तिर्मिज़ी और इमाम हाकिम ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है और इसकी सनद को तिर्मिज़ी व हाकिम ने सही क़रार दिया है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस आयत की तिलावत फ़रमाकर हाथ की छोटी उंगली (ख़िन्सर) के सिरे पर अंगूठा रखकर इशारा फ़रमाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू के नूर का सिर्फ़ इतना सा हिस्सा ज़ाहिर किया गया था जिससे पहाड़ के टुकड़े उड़ गये। यह ज़रूरी नहीं कि सारे पहाड़ के टुकड़े हो गये हों, बल्कि जिस हिस्से पर हक़ तआ़ला ने यह तजल्ली फ़रमाई वह हिस्सा ही उससे प्रभावित हुआ हो।

मूसा अ़लैहिस्सलाम से अल्लाह तआ़ला का कलाम

इतनी बात तो क़ुरआन के स्पष्ट अलफ़ाज़ से साबित है कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से बिना किसी माध्यम के कलाम फ़रमाया। फिर इस कलाम में भी एक तो वह है जो शुरू में नुबुव्वत दिये जाने के वक़्त हुआ था, दूसरा कलाम यह है जो तौरात दिये जाने के वक़्त हुआ और जिसका ज़िक्र इस आयत में है। आयत के अलफ़ाज़ से यह भी साबित होता है कि इस दूसरे कलाम को पहले के मुक़ाबले में कुछ अधिक ख़ुसूसियत हासिल थी, लेकिन हक़ीक़त इस कलाम की क्या और किस तरह थी इसका इल्म अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी को नहीं हो सकता। इसमें जितनी अ़क़्ली संभावनायें और सूरतें ऐसी हों जो शरीअ़त के किसी हुक्म के ख़िलाफ़ न हों सब की गुंजाईश ज़रूर है, मगर उन संभावनाओं और गुमानों में से किसी एक को निर्धारित करना बिना दलील दुरुस्त नहीं, और पहले बुज़ुर्गों, सहाबा व ताबिईन ही का मस्लक इस मामले में ज़्यादा सुरक्षित है कि इस मामले को ख़ुदा तआ़ला के हवाले किया जाये, ख़्यालात व गुमानों और अटकलें लगाने की फ़िक्र में न पड़ें। (बयानुल-क़ुरआन)

سَاُورِيْكُمْ دَارَ الْفٰسِقِيْنَ.

इस जगह दारल-फ़ासिक़ीन से क्या मुराद है, इसमें दो क़ौल हैं- एक मिस्र देश, दूसरा मुल्क शाम। क्योंकि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के फ़तह करने से पहले मिस्र पर फ़िरऔ़न और उसकी क़ौम शासक और ग़ालिब थी इसकी वजह से मिस्र को दारुल-फ़ासिक़ीन और मुल्क शाम पर अ़मालिक़ा क़ौम का क़ब्ज़ा था, वे काफ़िर व बदकार थे इसलिये उस वक़्त शाम भी दारुल-फ़ासिक़ीन (नाफ़रमानों और बदकारों का घर) था। इन दोनों में से इस जगह कौनसा मुल्क मुराद है इसमें मतभेद इस बुनियाद पर है कि फ़िरऔ़न के ग़र्क़ होने के बाद बनी इस्राईल मिस्र में वापस चले गये थे या नहीं? अगर उस वक़्त मिस्र में वापस गये और मिस्र की हुकूमत पर क़ाबिज़ हुए जैसा कि आयत "व औरस्नल् क़ौमल्लज़ी-न" से इसकी ताईद हुई तो मिस्र पर क़ब्ज़ा और ग़लबा इस तूर की तजल्ली के वाक़िए से पहले हो चुका है, इसमें "स-उरीकुम

दारल-फ़ासिक़ीन" का मफ़्हूम मुल्के शाम मुतैयन हो जाता है। और अगर उस वक़्त वापस नहीं गये तो दोनों मुल्क मुराद हो सकते हैं।

وَكَتَبْنَا لَهٗ فِى الْاَلْوَاحِ.

इससे मालूम होता है कि तौरात की तख़्तियाँ लिखी लिखाई हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के सुपुर्द की गयी थीं, उन्हीं तख़्तियों के मजमूए का नाम तौरात है।

سَاَصْرِفُ عَنْ اٰيٰتِىَ الَّذِيْنَ يَتَكَبَّرُوْنَ فِى الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ ۭ
وَاِنْ يَّرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَّا يُؤْمِنُوْا بِهَا ۚ وَاِنْ يَّرَوْا سَبِيْلَ الرُّشْدِ لَا يَتَّخِذُوْهُ سَبِيْلًا ۚ وَاِنْ يَّرَوْا سَبِيْلَ الْغَيِّ
يَتَّخِذُوْهُ سَبِيْلًا ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَكَانُوْا عَنْهَا غٰفِلِيْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَلِقَاۗءِ
الْاٰخِرَةِ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ ۭ هَلْ يُجْزَوْنَ اِلَّا مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ وَاتَّخَذَ قَوْمُ مُوْسٰى مِنْۢ بَعْدِهٖ ع ١٧ ٦
مِنْ حُلِيِّهِمْ عِجْلًا جَسَدًا لَّهٗ خُوَارٌ ۭ اَلَمْ يَرَوْا اَنَّهٗ لَا يُكَلِّمُهُمْ وَلَا يَهْدِيْهِمْ سَبِيْلًا ۘ اِتَّخَذُوْهُ وَكَانُوْا
ظٰلِمِيْنَ ۝ وَلَمَّا سُقِطَ فِيْٓ اَيْدِيْهِمْ وَرَاَوْا اَنَّهُمْ قَدْ ضَلُّوْا ۙ قَالُوْا لَىِٕنْ لَّمْ يَرْحَمْنَا رَبُّنَا وَيَغْفِرْ لَنَا
لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝ وَلَمَّا رَجَعَ مُوْسٰٓى اِلٰى قَوْمِهٖ غَضْبَانَ اَسِفًا ۙ قَالَ بِئْسَمَا خَلَفْتُمُوْنِيْ
مِنْۢ بَعْدِيْ ۚ اَعَجِلْتُمْ اَمْرَ رَبِّكُمْ ۚ وَاَلْقَى الْاَلْوَاحَ وَاَخَذَ بِرَاْسِ اَخِيْهِ يَجُرُّهٗٓ اِلَيْهِ ۭ قَالَ ابْنَ اُمَّ اِنَّ
الْقَوْمَ اسْتَضْعَفُوْنِيْ وَكَادُوْا يَقْتُلُوْنَنِيْ ڮ فَلَا تُشْمِتْ بِيَ الْاَعْدَاۗءَ وَلَا تَجْعَلْنِيْ مَعَ الْقَوْمِ
الظّٰلِمِيْنَ ۝ قَالَ رَبِّ اغْفِرْ لِيْ وَلِاَخِيْ وَاَدْخِلْنَا فِيْ رَحْمَتِكَ ڮ وَاَنْتَ اَرْحَمُ الرّٰحِمِيْنَ ۝ ع ١٨ ٨

सअस्रिफ़ु अ़न् आयातियल्लज़ी-न य-तकब्बरू-न फ़िल्अर्ज़ि बिग़ैरिल्-हक़्क़ि, व इंय्यरौ कुल्-ल आयतिल् ला युअ्मिनू बिहा व इंय्यरौ सबीलर्रुश्दि ला यत्तख़िज़ूहु सबीलन् व इंय्यरौ सबीलल्-ग़य्यि यत्तख़िज़ूहु सबीलन्, ज़ालि-क बिअन्नहुम् कज़्ज़बू बिआयातिना व कानू अ़न्हा ग़ाफ़िलीन (146) वल्लज़ी-न कज़्ज़बू	मैं फेर दूँगा अपनी आयतों से उनको जो तकब्बुर करते हैं ज़मीन में नाहक़, और अगर देख लें सारी निशानियाँ ईमान लायें उन पर, और अगर देखें रास्ता हिदायत का तो न ठहरायें उसको राह, और अगर देखें रास्ता गुमराही का तो उसको ठहरा लें राह, यह इसलिये कि उन्होंने झूठ जाना हमारी आयतों को और रहे उनसे बेख़बर। (146) और जिन्होंने झूठ जाना हमारी आयतों को और आख़िरत की मुलाक़ात को, बरबाद हुई उनकी मेहनतें,

बिआयातिना व लिक़ाइल् आख़ि-रति हबितत् अअ्मालुहुम्, हल युज्ज़ौ-न इल्ला मा कानू यअ्मलून (147) ❁ वत्त-ख़-ज़ क़ौमु मूसा मिम्-बअ्दिही मिन् हुलिय्यिहिम् अ़िज्लन् ज-सदल्लहू ख़ुवारुन्, अलम् यरौ अन्नहू ला युकल्लिमुहुम् व ला यह्दीहिम् सबीला। इत्त-ख़ज़ूहु व कानू ज़ालिमीन (148) व लम्मा सुक़ि-त फ़ी ऐदीहिम् व रऔ अन्नहुम् क़द् ज़ल्लू क़ालू ल-इल्लम् यर्हम्ना रब्बुना व यग़्फ़िर् लना ल-नकूनन्-न मिनल्-ख़ासिरीन (149) व लम्मा र-ज-अ़ मूसा इला क़ौमिही ग़ज़्बा-न असिफ़न् क़ा-ल बिअ्-समा ख़लफ़्तुमूनी मिम्-बअ्दी अ-अ़जिल्तुम् अम्-र रब्बिकुम् व अल्क़ल्-अल्वा-ह व अ-ख़ा-ज़ बिरअ्सि अख़ीहि यजुर्रुहू इलैहि, क़ालब्-न उम्-म इन्नल् क़ौमस्तज़्अफ़ूनी व कादू यक़्तुलू-ननी फला तुश्मित् बियल्-अअ्दा-अ व ला तज्अ़ल्नी मअ़ल्-क़ौमिज़्-ज़ालिमीन (150) क़ा-ल रब्बिग़्फ़िर्

वही बदला पायेंगे जो कुछ अमल करते थे। (147) ❁

और बना लिया मूसा की क़ौम ने उसके पीछे अपने ज़ेवर से बछड़ा, एक बदन कि उसमें गाय की आवाज़ थी, क्या उन्होंने यह न देखा कि वह उनसे बात भी नहीं करता और नहीं बतलाता रास्ता, माबूद बना लिया उसको और वे थे ज़ालिम। (148) और जब पछताये और समझे कि हम बेशक गुमराह हो गये तो कहने लगे अगर न रहम करे हम पर हमारा रब और न बख़्शे हमको तो बेशक हम तबाह होंगे। (149) और जब लौट आया मूसा अपनी क़ौम में ग़ुस्से में भरा हुआ अफ़सोस करता हुआ, बोला क्या बुरी नयाबत की तुमने मेरी मेरे बाद, क्यों जल्दी की तुमने अपने रब के हुक्म से? और डाल दीं वो तख़्तियाँ और पकड़ा सर अपने भाई का, लगा खींचने उसको अपनी तरफ़। वह बोला ऐ मेरी माँ के जने! लोगों ने मुझको कमज़ोर समझा और क़रीब थे कि मुझको मार डालें, सो मत हंसा मुझ पर दुश्मनों को, और न मिला मुझको गुनाहगार लोगों में। (150) बोला ऐ मेरे

ली व लि-अख़ी व अद्ख़िल्ना फ़ी रह्मति-क व अन्-त अर्हमुर्-राहिमीन (151) ✪	रब! माफ़ कर मुझको और मेरे भाई को और दाख़िल कर हमको अपनी रहमत में और तू सबसे ज़्यादा रहम करने वाला है। (151) ✪

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(अब इताअ़त व फ़रमाँबरदारी की तरफ़ तवज्जोह और रुचि दिलाने के बाद मुख़ालफ़त से डराने के लिये इरशाद है कि) मैं ऐसे लोगों को अपने अहकाम से बरगश्ता "यानी विमुख" ही रखूँगा जो दुनिया में (अहकाम मानने से) तकब्बुर करते हैं जिसका उनको कोई हक़ हासिल नहीं (क्योंकि अपने को बड़ा समझना हक़ उसका है जो वास्तव में बड़ा हो, और वह एक ख़ुदा की ज़ात है) और (विमुख होने का उन पर यह असर होगा कि) अगर तमाम (दुनिया भर की) निशानियाँ (भी) देख लें तब भी (दिल की सख़्ती की वजह से) उन पर ईमान न लाएँ। और अगर हिदायत का रास्ता देख लें तो उसको अपना तरीक़ा न बनाएँ, और अगर गुमराही का रास्ता देख लें तो उसको अपना तरीक़ा बना लें (यानी हक़ के क़ुबूल न करने से फिर दिल सख़्त हो जाता है और बरगश्तगी इस हद तक पहुँच जाती है)। यह (इस दर्जे की बरगश्तगी) इस सबब से है कि उन्होंने हमारी आयतों को (तकब्बुर की वजह से) झूठा बतलाया और उन (की हक़ीक़त में ग़ौर करने) से ग़ाफ़िल रहे। (यह सज़ा तो दुनिया में हुई कि हिदायत से मेहरूम रहे) और (आख़िरत में यह सज़ा होगी कि) ये लोग जिन्होंने हमारी आयतों को और क़ियामत के पेश आने को झुठलाया, उनके सब काम (जिनसे उनको फ़ायदे की अपेक्षा थी) बरबाद गये (और आमाल की इस बरबादी का अन्जाम जहन्नम है) इनको वही सज़ा दी जाएगी जो कुछ ये करते थे।

और (जब मूसा अ़लैहिस्सलाम तूर पर तौरात लाने तशरीफ़ ले गये थे) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) की क़ौम (यानी बनी इस्राईल) ने उनके (जाने के) बाद अपने (क़ब्ज़े में मौजूद) ज़ेवरों का (जो कि क़िब्तियों से मिस्र से निकलते वक़्त शादी में पहनने के बहाने से माँग लिया था) एक बछड़ा (बनाकर जिसका क़िस्सा सूरः तॉहा में है, उसको माबूद) ठहरा लिया जो कि (सिर्फ़ इतनी हक़ीक़त रखता था कि) एक क़ालिब "यानी ढाँचा और ख़ोल" था जिसमें एक आवाज़ थी। (और उसमें कोई कमाल न था, जिससे किसी बुद्धिमान को उसके माबूद होने का शुब्हा हो सके) क्या उन्होंने यह न देखा कि (दुनिया या दीन की) वह उनसे बात तक नहीं करता था, और न उनको कोई राह बतलाता था (और दूसरी ख़ुदा जैसी सिफ़ात तो उसमें क्या होतीं। ग़र्ज़ यह कि) उस (बछड़े) को उन्होंने (माबूद) क़रार दिया और (चूँकि उसमें शुब्हे की बिल्कुल भी कोई वजह न थी इसलिये उन्होंने) बड़ा बेढंगा काम किया। और (मूसा अ़लैहिस्सलाम के वापस आने के बाद जिसका क़िस्सा आगे आता है उनके तंबीह फ़रमाने से) जब (सचेत हुए और अपनी इस हरकत पर) शर्मिन्दा हुए और मालूम हुआ कि वाक़ई वे लोग गुमराही में पड़ गये तो (शर्मिन्दगी

से माज़िरत के तौर पर) कहने लगे कि अगर हमारा रब हम पर रहम न करे और हमारा (यह) गुनाह माफ़ न करे तो हम बिल्कुल गये गुज़रे। (चुनाँचे एक ख़ास तरीक़े से उनको तौबा के पूरा करने का हुक्म हुआ जिसका क़िस्सा सूरः ब-क़रह की आयत 54 में गुज़रा है)।

और (हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के तंबीह फ़रमाने का क़िस्सा यह हुआ कि) जब मूसा (अ़लैहिस्सलाम) अपनी क़ौम की तरफ़ (तूर पहाड़ से) वापस आये गुस्से और रंज में भरे हुए (क्योंकि उनको वही से यह मालूम हो गया था, जैसा कि सूरः "तॉहा" की आयत नम्बर 85 में है) तो (पहले क़ौम की तरफ़ मुतवज्जह हुए) फ़रमाया तुमने मेरे बाद यह बड़ी नामाक़ूल हरकत की। क्या अपने रब का हुक्म (आने) से पहले ही तुमने (ऐसी) जल्दबाज़ी कर ली? (मैं तो अहकाम ही लेने गया था, उसका इन्तिज़ार तो किया होता) और (फिर हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ मुतवज्जह हुए और दीनी ग़ैरत के जोश में) जल्दी से (तौरात की) तख़्तियाँ (तो) एक तरफ़ रखीं (और जल्दी में ऐसे ज़ोर से रखी गयीं कि देखने वाले को अगर ग़ौर न करे तो शुब्हा हो कि जैसे किसी ने पटख़ दी हों) और (हाथ ख़ाली करके) अपने भाई (हारून अ़लैहिस्सलाम) का सर (यानी बाल) पकड़कर उनको अपनी तरफ़ घसीटने लगे (कि तुमने क्यों पूरा इन्तिज़ाम न किया, और चूँकि गुस्से की अधिकता में एक तरह से बेक़ाबू हो गये थे और ग़ज़ब व गुस्सा भी दीन के लिये था इसलिये इस बेइख़्तियारी को मोतबर क़रार दिया जायेगा और इस इज्तिहादी चूक पर एतिराज़ न किया जायेगा) हारून (अ़लैहिस्सलाम) ने कहा कि ऐ मेरे माँ-जाये (भाई! मैंने अपनी कोशिश भर बहुत रोका लेकिन) इन लोगों ने मुझको बेहक़ीक़त समझा और (बल्कि नसीहत करने पर) क़रीब था कि मुझको क़त्ल कर डालें, तो तुम मुझ पर (सख़्ती करके) दुश्मनों को मत हंसाओ, और मुझको (बर्ताव से) इन ज़ालिमों के साथ मत शुमार करो (कि इनके जैसी नाराज़गी मुझसे भी बरतने लगो)। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की और) कहा कि ऐ मेरे रब! मेरी ख़ता (अगरचे वह मेरी सोच व समझ की हो) माफ़ फ़रमा दे और मेरे भाई की भी (कोताही जो इन मुश्रिकों के साथ मामला ख़त्म करने और बेताल्लुक़ होने में शायद हो गयी हो जैसा कि उस क़ौल से जो सूरः तॉहा की आयत 92, 93 में नक़ल किया गया है, मालूम होता है) और हम दोनों को अपनी (ख़ास) रहमत में दाख़िल फ़रमाईये, और आप सब रहम करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले हैं (इसलिये हमको दुआ़ के क़ुबूल होने की उम्मीद है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में जो इरशाद फ़रमाया कि "मैं फेर दूँगा अपनी आयतों से उन लोगों को जो बड़े बनते हैं ज़मीन में बग़ैर हक़ के।"

इसमें "बग़ैर हक़" से इशारा इस बात की तरफ़ है कि तकब्बुर करने वालों के मुक़ाबले में तकब्बुर करना हक़ है, वह बुरा और गुनाह नहीं। क्योंकि वह सिर्फ़ सूरत के एतिबार से तकब्बुर

होता है हक़ीक़त के एतिबार से नहीं होता, जैसा कि मशहूर हैः

اَلتَّکَبُّرُ مَعَ الْمُتَکَبِّرِیْنَ تَوَاضُعٌ.

कि तकब्बुर करने वालों के साथ तकब्बुर करना एक तरह की विनम्रता है। (मसाईलुस्सुलूक)

तकब्बुर इनसान को सही समझ और दीनी उलूम से मेहरूम कर देता है

तकब्बुर करने वालों यानी बड़े बनने वालों को अपनी आयतों से फेर देने का मतलब यह है कि उनसे अल्लाह की आयतों के समझने और उनसे फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ छीन ली जाती है, और अल्लाह की आयतें भी इस जगह आ़म मुराद हो सकती हैं, जिनमें तौरात व इन्जील की अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हुई आयतें या क़ुरआने करीम की आयतें भी दाख़िल हैं और क़ुदरत की निशानियाँ जो तमाम ज़मीन व आसमान और उनकी मख़्लूक़ात में फैली हुई हैं वो भी हो सकती हैं। इसलिये आयतों के मज़मून का ख़ुलासा यह हुआ कि तकब्बुर यानी अपने आपको दूसरों से बड़ा और अफ़ज़ल समझना ऐसी बुरी और मन्हूस ख़स्लत है कि जो शख़्स इसमें मुब्तला होता है उसकी अ़क्ल व समझ सही नहीं, इसी लिये वह अल्लाह तआ़ला की आयतों के समझने से मेहरूम हो जाता है, न उसको क़ुरआनी आयतें सही समझने की तौफ़ीक़ बाक़ी रहती है और न क़ुदरत की आयतों (निशानियों) में ग़ौर व फ़िक्र करके अल्लाह तआ़ला की मारिफ़त और पहचान हासिल करने में उसका ज़ेहन चलता है।

तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि इससे मालूम हुआ कि तकब्बुर और घमण्ड एक ऐसी बुरी ख़स्लत है जो रब्बानी उलूम के लिये हिजाब और आड़ बन जाती है, क्योंकि रब्बानी उलूम सिर्फ़ उसकी रहमत से हासिल होते हैं और अल्लाह की रहमत तवाज़ो (आ़जिज़ी व विनम्रता) से मुतवज्जह होती है। मौलाना रूमी रह. ने ख़ूब फ़रमाया हैः

हर कुजा पस्तीस्त आब आँ जा रवद्
हर कुजा मुश्किल जवाब आँ जा रवद्

यानी पानी उस तरफ़ जाता है जिस तरफ़ पस्ती (नीचा हिस्सा) हो। जैसा कि हल तब निकलता है जब कहीं कोई मुश्किल पेश आये। मतलब यह कि पस्ती और तवाज़ो इख़्तियार करो तो तुम नवाज़े जाओगे। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

इसी तरह पहली दो आयतों में यह मज़मून इरशाद फ़रमाने के बाद फिर मूसा अ़लैहिस्सलाम और बनी इस्राईल का बाक़ी क़िस्सा इस तरह ज़िक्र फ़रमाया है किः

जब मूसा अ़लैहिस्सलाम तौरात हासिल करने के लिये तूर पहाड़ पर एतिकाफ़ में बैठ गये और शुरू में तीस दिन रात के एतिकाफ़ का हुक्म था और उसके मुताबिक़ अपनी क़ौम से कह गये थे कि तीस दिन बाद लौटेंगे, वहाँ हक़ तआ़ला ने उस पर दस दिन की मियाद और बढ़ा दी तो इस्राईली क़ौम जिसकी जल्दबाज़ी और टेढ़ी चाल पहले से परिचित थी, उस वक़्त भी तरह

तरह की बातें करने लगे। उनकी क़ौम में एक शख़्स सामरी नाम का था, जो अपनी क़ौम में बड़ा और चौधरी माना जाता था, मगर कच्चे अक़ीदे का आदमी था। उसने मौक़ा पाकर यह हरकत की कि बनी इस्राईल के पास कुछ ज़ेवरात क़ौमे फ़िरऔन के लोगों के रह गये थे उनसे कहा कि ये ज़ेवरात तुमने क़िब्ती लोगों से माँगे के तौर पर लिये थे, अब वे सब ग़र्क़ हो गये और ज़ेवरात तुम्हारे पास रह गये, ये तुम्हारे लिये हलाल नहीं, क्योंकि काफ़िरों से जंग के वक़्त हासिल होने वाला माले ग़नीमत भी उस ज़माने में मुसलमानों के लिये हलाल नहीं था। बनी इस्राईल ने उसके कहने के मुताबिक़ सब ज़ेवरात लाकर उसके पास जमा कर दिये, उसने उस सोने-चाँदी से एक बछड़े या गाय का मुजस्समा (प्रतिमा) बनाया, और जिब्रीले अमीन के घोड़े के सुम के नीचे की मिट्टी जो उसने कहीं पहले से संभाल कर रखी थी उस मिट्टी में अल्लाह तआ़ला ने ज़िन्दगी का ख़ास्सा (विशेषता) रखा था, उसने सोना-चाँदी आग पर पिघलाने के वक़्त यह मिट्टी उसमें शामिल कर दी। इसका यह असर हुआ कि उस गाय के मुजस्समे (प्रतिमा) में ज़िन्दगी के आसार पैदा हो गये और उसके अन्दर से गाय जैसी आवाज़ निकलने लगी। इस जगह आयत में "अिज्लन" की तफ़सीर "ज-सदल् लहू ख़ुवारुन्" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है।

सामरी की यह आश्चर्यजनक शैतानी ईजाद सामने आई तो उसने बनी इस्राईल को इस कुफ़्र की दावत देनी शुरू कर दी कि यही ख़ुदा है, मूसा अ़लैहिस्सलाम तो अल्लाह तआ़ला से बातें करने के लिये तूर पहाड़ पर गये हैं और अल्लाह मियाँ (अल्लाह की पनाह) ख़ुद यहाँ आ गये, मूसा अ़लैहिस्सलाम से भूल हो गयी। बनी इस्राईल में उसकी बात पहले से मानी जाती थी और उस वक़्त तो यह करतब भी उसने दिखला दिया तो और भी मोतक़िद हो गये और उसी गाय को ख़ुदा समझकर उसकी इबादत में लग गये।

मज़कूरा तीसरी आयत में इस मज़मून का बयान संक्षिप्त रूप से आया है, और क़ुरआने करीम में दूसरी जगह इससे ज़्यादा विस्तार के साथ मज़कूर है।

चौथी आयत में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की तंबीह के बाद बनी इस्राईल के शर्मिन्दा होकर तौबा करने का ज़िक्र है। उसमें "सुक़ि-त फ़ी ऐदीहिम" के मायने अ़रबी मुहावरे के मुवाफ़िक़ नादिम व शर्मिन्दा होने के हैं।

पाँचवीं आयत में इस वाक़िए की तफ़सील है कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम तूर पहाड़ से तौरात लेकर वापस आये और क़ौम को गौसाला परस्ती (बछड़े की पूजा) में मुब्तला देखा तो अगरचे क़ौम की इस गुमराही की ख़बर हक़ तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम को तूर पहाड़ ही पर कर दी थी, लेकिन सुनने और देखने में फ़र्क़ होता है, जब उन लोगों को देखा कि गाय की पूजा-पाठ कर रहे हैं तो ग़ुस्से की इन्तिहा न रही। पहले अपनी क़ौम की तरफ़ मुतवज्जह हुए और फ़रमायाः

بِئْسَمَا خَلَفْتُمُوْنِىْ مِنْ ۢ بَعْدِىْ.

यानी तुमने मेरे बाद यह बड़ी नामाक़ूल हरकत की हैः

اَعَجِلْتُمْ اَمْرَ رَبِّكُمْ

क्या तुमने अपने रब का हुक्म आने से जल्दबाज़ी की?

यानी अल्लाह की किताब तौरात के आने का इन्तिज़ार तो कर लेते, तुमने उससे जल्दबाज़ी करके यह गुमराही इख़्तियार कर ली। और कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस जुमले का यह मतलब क़रार दिया है कि क्या तुमने जल्दबाज़ी करके यह तय कर लिया था कि मेरी मौत आ गयी।

उसके बाद हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ मुतवज्जह हुए क्योंकि उनको अपना ख़लीफ़ा (उत्तराधिकारी) बनाकर गये थे, उन्होंने इस गुमराही से उन लोगों को क्यों न रोका। उनकी तरफ़ हाथ बढ़ाने के लिये हाथ को ख़ाली करने की फ़िक्र हुई तो तौरात की तख़्तियाँ जो हाथ में लिये हुए थे जल्दी से रख दीं, इसी को क़ुरआने करीम ने इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया हैः

وَاَلْقَى الْاَلْوَاحَ

"इल्क़ा" के लुग़वी मायने डाल देने के हैं, और 'अल्वाह' 'लौह' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं तख़्ती। यहाँ लफ़्ज़ "इल्क़ा" से यह शुब्हा होता है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने गुस्से की हालत में तौरात की तख़्तियों की बेअदबी की, कि उनको डाल दिया।

लेकिन यह ज़ाहिर है कि तौरात की तख़्तियों को बेअदबी के साथ डाल देना बहुत ज़बरदस्त गुनाह है और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम सब गुनाहों से मासूम (सुरक्षित) हैं, इसलिये आयत की मुराद यही है कि असल मक़सूद हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम को पकड़ने के लिये अपना हाथ ख़ाली करना था और गुस्से की हालत में जल्दी से उनको रखा, जिससे देखने वाला यह समझे कि डाल दिया। इसको क़ुरआने करीम ने बतौर तंबीह के डालने के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है।

(तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

इसके बाद इस ख़्याल पर कि हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम ने अपने उत्तराधिकारी होने की ज़िम्मेदारियों और फ़राईज़ में कोताही की है उनके सर के बाल पकड़कर खींचने लगे तो हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम ने अ़र्ज़ किया कि मेरा कोई क़सूर नहीं, क़ौम ने मेरा कोई असर न लिया और मेरी बात न सुनी, बल्कि क़रीब था कि वे मुझे क़त्ल कर डालते, इसलिये आप मेरे साथ ऐसा बर्ताव न करें जिससे मेरे दुश्मन ख़ुश हों और आप मुझे इन गुमराहों के साथ न समझें। तब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का गुस्सा दूर हुआ और अल्लाह से दुआ कीः

رَبِّ اغْفِرْلِيْ وَلِاَخِيْ وَاَدْخِلْنَا فِيْ رَحْمَتِكَ وَاَنْتَ اَرْحَمُ الرّٰحِمِيْنَ

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! मुझे भी माफ़ फ़रमा दीजिए और मेरे भाई को भी, और हमको अपनी रहमत में दाख़िल फ़रमा दीजिये, और आप तो सब रहमत करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले हैं।

इसमें अपने भाई हारून के लिये तो इस बिना पर दुआ-ए-मग़फ़िरत की कि शायद उनसे

कोई कोताही क़ौम को गुमराही से रोकने में हुई हो, और अपने लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत या तो इस बिना पर की कि जल्दी के साथ तौरात की तख़्तियों को रख देना जिसको क़ुरआने करीम ने डाल देने से ताबीर करके एक ग़लती पर चेताया है, उससे मग़फ़िरत तलब करना मक़सूद था, और या यह कि दुआ का अदब ही यह है कि दूसरे के लिये दुआ करे तो अपने आपको भी उसमें शामिल करे ताकि इसका बेपरवाह होना महसूस न हो, यानी यह कि यह अपने आपको दुआ का मोहताज नहीं समझता।

إِنَّ الَّذِينَ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ سَيَنَالُهُمْ غَضَبٌ مِّن رَّبِّهِمْ وَذِلَّةٌ فِي الْحَيَوٰةِ الدُّنْيَا ۚ وَكَذَٰلِكَ نَجْزِي الْمُفْتَرِينَ ﴿١٥٢﴾ وَالَّذِينَ عَمِلُوا السَّيِّئَاتِ ثُمَّ تَابُوا مِن بَعْدِهَا وَآمَنُوا إِنَّ رَبَّكَ مِن بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٥٣﴾ وَلَمَّا سَكَتَ عَن مُّوسَى الْغَضَبُ أَخَذَ الْأَلْوَاحَ ۖ وَفِي نُسْخَتِهَا هُدًى وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِينَ هُمْ لِرَبِّهِمْ يَرْهَبُونَ ﴿١٥٤﴾ وَاخْتَارَ مُوسَىٰ قَوْمَهُ سَبْعِينَ رَجُلًا لِّمِيقَاتِنَا ۖ فَلَمَّا أَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ قَالَ رَبِّ لَوْ شِئْتَ أَهْلَكْتَهُم مِّن قَبْلُ وَإِيَّايَ ۖ أَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ السُّفَهَاءُ مِنَّا ۖ إِنْ هِيَ إِلَّا فِتْنَتُكَ تُضِلُّ بِهَا مَن تَشَاءُ وَتَهْدِي مَن تَشَاءُ ۖ أَنتَ وَلِيُّنَا فَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا ۖ وَأَنتَ خَيْرُ الْغَافِرِينَ ﴿١٥٥﴾ وَاكْتُبْ لَنَا فِي هَٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْآخِرَةِ إِنَّا هُدْنَا إِلَيْكَ ۚ قَالَ عَذَابِي أُصِيبُ بِهِ مَنْ أَشَاءُ ۖ وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ ۚ فَسَأَكْتُبُهَا لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ وَيُؤْتُونَ الزَّكَاةَ وَالَّذِينَ هُم بِآيَاتِنَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٥٦﴾

इन्नल्लज़ीनत्त-ख़ज़ुल्-अिज्-ल स-यनालुहुम् ग़-ज़बुम् मिर्रब्बिहिम् व ज़िल्लतुन् फ़िल्-हयातिद्दुन्या, व कज़ालि-क नज्ज़िल्-मुफ़्तरीन (152) वल्लज़ी-न अमिलुस्सय्यिआति सुम्-म ताबू मिम्-बअ्दिहा व आमनू इन्-न रब्ब-क मिम्-बअ्दिहा ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (153) व लम्मा स-क-त अम्-मूसल्-ग़-ज़बु अ-ख़ज़ल्-अल्वा-ह व फ़ी नुस्ख़तिहा हुदंव्-व रह्मतुल्-लिल्लज़ी-न	अलबत्ता जिन्होंने बछड़े को माबूद बना लिया उनको पहुँचेगा ग़ज़ब उनके रब का और ज़िल्लत दुनिया की ज़िन्दगी में, और यही सज़ा देते हैं हम बोहतान बाँधने वालों को। (152) और जिन्होंने किये बुरे काम फिर तौबा की उसके बाद और ईमान लाये तो बेशक तेरा रब तौबा के पीछे यक़ीनन बख़्शने वाला मेहरबान है। (153) और जब थम गया मूसा का ग़ुस्सा तो उसने उठा लिया तख़्तियों को और जो उनमें लिखा हुआ था उसमें हिदायत और रहमत थी उनके वास्ते जो अपने रब

हुम् लिरब्बिहिम् यर्‌हबून (154) वख़्ता-र मूसा क़ौमहू सब्ज़ी-न रजुलल् लिमीक़ातिना फ़-लम्मा अ-ख़ज़त्हुमुर्रज्-फ़तु क़ा-ल रब्बि लौ शिअ्-त अह्लक्तहुम् मिन् क़ब्लु व इय्या-य, अतुह्लिकुना बिमा फ़-अलस्सु-फ़हा-उ मिन्ना इन् हि-य इल्ला फ़ित्नतु-क, तुज़िल्लु बिहा मन् तशा-उ व तह्दी मन् तशा-उ, अन्-त वलिय्युना फ़ग़्फ़िर् लना वर्‌हम्ना व अन्-त ख़ैरुल्-ग़ाफ़िरीन (155) वक्तुब् लना फ़ी हाज़िहिद्दुन्या ह-स-नतंव्-व फ़िल्आख़ि-रति इन्ना हुद्ना इलै-क, क़ा-ल अ़ज़ाबी उसीबु बिही मन् अशा-उ व रह्मती वसिअ़त् कुल्-ल शैइन्, फ़-सअक्तुबुहा लिल्लज़ी-न यत्तक़ू-न व युअ्तूनज़्ज़का-त वल्लज़ी-न हुम् बिआयातिना युअ्मिनून (156)	से डरते हैं। (154) और चुन लिये मूसा ने अपनी क़ौम में से सत्तर मर्द हमारे वायदे के वक़्त पर लाने को, फिर जब उनको ज़लज़ले ने पकड़ा तो बोला ऐ मेरे रब! अगर तू चाहता तो पहले ही हलाक कर देता इनको और मुझको, क्या हमको हलाक करता है उस काम पर जो किया हमारी क़ौम के अहमक़ों ने? यह सब तेरी आज़माईश है बिचलाये इसमें जिसको तू चाहे और सीधा रखे जिसको चाहे, तू ही है हमारा थामने वाला, सो बख़्श दे हमको और रहमत कर हम पर और तू सबसे बेहतर बख़्शने वाला है। (155) और लिख दे हमारे लिये इस दुनिया में भलाई और आख़िरत में, हमने रुजू किया तेरी तरफ़। फ़रमाया मेरा अ़ज़ाब डालता हूँ मैं उसको जिस पर चाहूँ और मेरी रहमत शामिल है हर चीज़ को, सो उसको लिख दूँगा उनके लिये जो डर रखते हैं और देते हैं ज़कात और जो हमारी बातों पर यक़ीन रखते हैं। (156)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(फिर हक़ तआ़ला ने उन बछड़े के पुजारियों के बारे में मूसा अ़लैहिस्सलाम से फ़रमाया कि) बेशक जिन लोगों ने बछड़े को पूजा है (अगर अब भी तौबा न करेंगे तो) उन पर बहुत जल्द उनके रब की तरफ़ से ग़ज़ब और ज़िल्लत इस दुनियावी ज़िन्दगी में ही पड़ेगी, और (कुछ उन ही की विशेषता नहीं) हम (तो) बोहतान बाँधने वालों को ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं (कि दुनिया ही में अल्लाह के ग़ज़ब का शिकार और ज़लील हो जाते हैं चाहे किसी सबब से उस ज़िल्लत का

कभी ज़हूर न हो, या देर में हो। चुनाँचे सामरी ने जो तौबा न की उस पर ग़ज़ब और ज़िल्लत का नुज़ूल हुआ जिसका किस्सा सूरः तॉहा की आयत 97 में है) और जिन लोगों ने गुनाह के काम किये (जैसे बछड़े को पूजने का जुर्म उनसे हो गया मगर) फिर वे उन (गुनाहों) के (करने के) बाद तौबा कर लें और (उस कुफ़्र को छोड़कर) ईमान ले आयें तो तुम्हारा रब उस (तौबा) के बाद (उनके) गुनाह का माफ़ कर देने वाला (और उनके हाल पर) रहमत करने वाला है (अगरचे तौबा के पूरा करने के लिये "उक़्तुलू अन्फ़ु-सकुम" का भी हुक्म हुआ हो, क्योंकि असल रहमत आख़िरत की है, चुनाँचे तौबा करने वालों की ख़ता इसी तरह माफ़ हुई)।

और जब (हारून अलैहिस्सलाम की यह माज़िरत सुनकर) मूसा (अलैहिस्सलाम) का गुस्सा ख़त्म हुआ तो (उन) तख़्तियों को उठा लिया और उन (तख़्तियों) के मज़ामीन में उन लोगों के लिए जो अपने रब से डरते थे हिदायत और रहमत थी (मुराद अहकाम हैं कि उन पर अमल करने से हिदायत पाने वाला और रहमत का हक़दार होता है) और (जब बछड़े का किस्सा ख़त्म हुआ तो मूसा अलैहिस्सलाम ने इत्मीनान से तौरात के अहकाम सुनाये। उन लोगों की आदत थी ही शुब्हे निकालने की, चुनाँचे उसमें भी शुब्हा निकाला कि हमको कैसे मालूम हो कि ये अल्लाह तआ़ला के अहकाम हैं, हमसे अल्लाह तआ़ला खुद कह दें तो यक़ीन किया जाये। आपने हक़ तआ़ला से अर्ज़ किया, वहाँ से हुक्म हुआ कि इनमें के कुछ आदमी जिनको ये लोग मोतबर समझते हों चुनकर उनको तूर पहाड़ पर ले आओ, हम खुद उनसे कह देंगे कि ये हमारे अहकाम हैं और इस लानें के लिये एक वक़्त निर्धारित किया गया, चुनाँचे) मूसा (अलैहिस्सलाम) ने सत्तर आदमी अपनी क़ौम में से हमारे मुकर्ररा वक़्त (पर लाने) के लिये चुने, (चुनाँचे वहाँ पहुँचकर उन्होंने अल्लाह तआ़ला का कलाम सुना तो उसमें एक शोशा छोड़ा और कहने लगे कि ख़ुदा जाने कौन बोल रहा होगा, हम तो जब यक़ीन लायें कि ख़ुदा तआ़ला को खुल्लम-खुल्ला अपनी आँख से देख लें, जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने उनकी यह बात सूरः ब-क़रह की आयत में इस तरह बयान की है:

لَنْ نُّؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى نَرَى اللّٰهَ جَهْرَةً.

ख़ुदा तआ़ला ने इस गुस्ताख़ी की सज़ा दी, नीचे से सख़्त ज़लज़ला शुरू हुआ ऊपर से ऐसी बिजली कड़की कि सब वहीं रह गये) सो जब उनको ज़लज़ले (वग़ैरह) ने आ पकड़ा तो मूसा (अलैहिस्सलाम डरे कि बनी इस्राईल जाहिल और बदगुमान तो हैं ही, यूँ समझेंगे कि कहीं ले जाकर किसी तरीक़े से उन सब का काम तमाम कर दिया है। घबराकर) अर्ज़ करने लगे कि ऐ मेरे परवर्दिगार! (यह तो मुझको यक़ीन है कि इन लोगों को महज़ सज़ा देना मन्ज़ूर है, ख़ास हलाक करना मक़सूद नहीं, क्योंकि) अगर आपको यह मन्ज़ूर होता तो आप इससे पहले ही इनको और मुझको हलाक कर देते (क्योंकि इनका इस वक़्त हलाक होना बनी इस्राईल के हाथों मेरा हलाक होना है, सो अगर आपको यह मन्ज़ूर होता तो आप पहले भी ऐसा कर सकते थे मगर जब ऐसा नहीं किया तो मालूम हो गया कि इनको भी हलाक करना मक़सूद नहीं क्योंकि इससे मेरी हलाकत भी है और बदनामी के साथ, आप से उम्मीद है कि मुझको बदनाम न करेंगे

और भला) कहीं आप हममें के चन्द बेवक़ूफ़ों की हरकत पर सब को हलाक कर देंगे? (कि बेवक़ूफ़ी तो करें ये लोग कि ऐसी गुस्ताख़ी करें और साथ में बनी इस्राईल के हाथ से हलाक हूँ मैं भी। आप से उम्मीद है कि आप ऐसा न करेंगे, पस साबित हुआ कि ज़लज़ले और बिजली की कड़क का) यह वाक़िआ सिर्फ़ आपकी तरफ़ से एक इम्तिहान है, और इन (इम्तिहानों) से जिसको आप चाहें गुमराही में डाल दें (कि हक़ तआला की शिकायत और नाशुक्री करने लगें) और जिसको आप चाहें हिदायत पर क़ायम रखें (कि उसकी हिक्मतों और मस्लेहतों को समझता है, सो मैं आपके फ़ज़्ल व करम से आपके हकीम होने का इल्म रखता हूँ लिहाज़ा इस इम्तिहान में मुत्मईन हूँ और) आप ही तो हमारे ख़बरगीरी करने वाले हैं। हम पर मग़फ़िरत और रहमत फ़रमाईए, और आप सब माफ़ी देने वालों से ज़्यादा हैं (सो इनकी गुस्ताख़ी भी माफ़ कर दीजिए। चुनाँचे वे लोग सही सालिम उठ खड़े हुए। सूरः ब-क़रह में इसकी तफ़सील बयान हो चुकी है)।

और (इस दुआ के साथ आपने रहमत की तफ़सील के लिये यह भी दुआ की कि) हम लोगों के नाम दुनिया में भी नेक हालत पर रहना लिख दीजिए और (इसी तरह) आख़िरत में भी (क्योंकि) हम आपकी तरफ़ (ख़ुलूस व फ़रमाँबरदारी के साथ) रुजू करते हैं। (अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ क़ुबूल की और) फ़रमाया कि (ऐ मूसा अव्वल तो उमूमी तौर पर ही मेरी रहमत मेरे ग़ज़ब पर छाई हुई है, चुनाँचे) मैं अपना अज़ाब (और ग़ज़ब) तो उसी पर करता हूँ जिस पर चाहता हूँ (अगरचे अज़ाब का हक़दार तो हर नाफ़रमान होता है लेकिन फिर भी सब पर अज़ाब नहीं करता बल्कि उनमें से ख़ास-ख़ास लोगों पर उसको डालता हूँ जो हद से ज़्यादा सरकश और नाफ़रमान होते हैं) और मेरी रहमत (ऐसी आम है कि) तमाम चीज़ों को घेरे हुए है (इसके बावजूद कि उनमें बहुत सी मख़्लूक़ मसलन मुख़ालिफ़ व नाफ़रमान लोग उसके मुस्तहिक़ नहीं मगर उन पर भी एक तरह की रहमत है चाहे दुनिया ही में सही, पस जब मेरी रहमत ग़ैर-मुस्तहिक़ लोगों के लिये भी आम है) तो वह रहमत उन लोगों के नाम तो (कामिल तौर पर) ज़रूर ही लिखूँगा जो कि (वायदे के अनुसार उसके मुस्तहिक़ भी हैं, इस वजह से कि वे इताअत करते हैं। चुनाँचे) अल्लाह तआला से डरते हैं (जो कि दिल के आमाल में से है) और ज़कात देते हैं (जो कि हाथ-पाँव के आमाल में से है) और जो कि हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं (जो कि अक़ीदों में से है, तो ऐसे लोग तो पहले से रहमत के हक़दार हैं, चाहे आप दरख़्वास्त भी न करते, और अब तो आप दरख़्वास्त भी कर रहे हैं, पस हम आपकी दरख़्वास्त क़ुबूल करने की ख़ुशख़बरी देते हैं, क्योंकि आप तो ऐसे हैं ही और आपकी क़ौम में भी जो रहमत को अपने ऊपर नाज़िल करना चाहे वह ऐसे ही गुण और सिफ़ात इख़्तियार करे ताकि पात्र हो जाये)।

मआरिफ़ व मसाईल

यह सूरः आराफ़ का उन्नीसवाँ रुकूअ है। इसकी पहली आयत में गौसाला परस्ती (बछड़े की पूजा) करने वाले और उस पर क़ायम रहने वाले बनी इस्राईल के बुरे अन्जाम का ज़िक्र है कि

आख़िरत में उनको रब्बुल-आलमीन के ग़ज़ब से साबक़ा पड़ेगा जिसके बाद कहीं पनाह की जगह नहीं, और दुनिया में उनको ज़िल्लत व रुस्वाई नसीब होगी।

बाज़े गुनाहों की कुछ सज़ा दुनिया में भी मिलती है

जैसे सामरी और उसके साथियों का हाल है कि उन्होंने गौसाला-परस्ती से सही तौबा न की तो अल्लाह तआला ने उसको दुनिया में ही ज़लील व रुस्वा कर दिया कि उसको मूसा अलैहिस्सलाम ने यह हुक्म दे दिया कि वह सब लोगों से अलग रहे, न वह किसी को हाथ लगाये न कोई उसको हाथ लगाये। चुनाँचे वह उम्रभर इसी तरह जानवरों के साथ फिरता रहा, कोई इनसान उसके पास न आता था।

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मज़कूर है कि अल्लाह तआला ने उस पर यह अज़ाब मुसल्लत कर दिया था कि जब कोई उसको हाथ लगाये या वह किसी को हाथ लगाये तो फ़ौरन दोनों को बुख़ार चढ़ जाता था। (क़ुर्तुबी)

और तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि यह ख़ासियत उसकी नस्ल में भी आज तक बाक़ी है। और आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَكَذٰلِكَ نَجْزِى الْمُفْتَرِيْنَ.

यानी जो लोग अल्लाह पर झूठ बोलते हैं उनको ऐसी ही सज़ा दी जाती है। सुफ़ियान बिन उयैना रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि जो लोग दीन में बिदअ़त इख़्तियार करते हैं वे भी अल्लाह पर इस झूठ बाँधने के मुजरिम होकर इस सज़ा के मुस्तहिक़ होते हैं। (मज़हरी)

इमाम मालिक रह. ने इसी आयत से दलील लेकर फ़रमाया कि दीन में अपनी तरफ़ से बिदअ़तें (नई बातें) ईजाद करने वालों की यही सज़ा है कि आख़िरत में अल्लाह के ग़ज़ब के मुस्तहिक़ होंगे और दुनिया में ज़िल्लत के। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

दूसरी आयत में उन लोगों का हाल बयान हुआ है जिन्होंने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की तंबीह के बाद अपने इस जुर्म से तौबा कर ली और तौबा के लिये जो कड़ी शर्त अल्लाह तआला की तरफ़ से लगाई गयी थी कि ये सब लोग आपस में एक दूसरे को क़त्ल करें तब इनकी तौबा क़ुबूल होगी, उन लोगों ने हुक्म पर अमल किया तो मूसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से उनको बुलाया कि तुम सब की तौबा क़ुबूल हो गयी, इस क़त्ले आम में जो लोग मारे गये वे शहीद हुए जो बाक़ी रहे उनकी मग़फ़िरत हो गयी। इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि जो लोग बुरे आमाल के करने वाले हों, चाहे कैसे ही बड़े गुनाह कुफ़्र व नाफ़रमानी के हों अगर वे उसके बाद तौबा कर लें और ईमान को दुरुस्त कर लें यानी ईमान के तक़ाज़े के मुताबिक़ अपने आमाल को सही कर लें तो अल्लाह तआला उन सब को अपनी रहमत से माफ़ फ़रमा देंगे। इसलिये इनसान को चाहिये कि जब कोई गुनाह सर्ज़द हो जाये तो फ़ौरन तौबा की तरफ़ रुजू करे।

तीसरी आयत में इसका बयान है कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का ग़ुस्सा दूर हुआ तो तौरात की तख़्तियाँ जो जल्दी से रख दी थीं फिर उठा लीं, और उसके नुस्ख़े (प्रति) में अल्लाह तआ़ला से डरने वालों के लिये हिदायत और रहमत थी।

लफ़्ज़ "नुस्ख़ा" उस तहरीर के लिये बोला जाता है जो किसी किताब वग़ैरह से नक़ल की जाये। कुछ रिवायतों में है कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने तौरात की तख़्तियाँ जल्दी से रखीं तो वो टूट गयी थीं, फिर अल्लाह तआ़ला ने उनको किसी दूसरी चीज़ में लिखा हुआ अ़ता फ़रमाया, उसको नुस्ख़ा कहा गया है।

सत्तर बनी इस्राईल के चयन और उनके हलाक होने का वाक़िआ़

चौथी आयत में एक ख़ास वाक़िए का ज़िक्र है कि मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जब अल्लाह तआ़ला की किताब तौरात लाकर बनी इस्राईल को दी तो अपनी नाफ़रमानी और बहाने बाज़ी की वजह से कहने लगे कि हमें यह कैसे यक़ीन आये कि यह अल्लाह तआ़ला ही का कलाम है, मुम्किन है आप अपनी तरफ़ से लिख लाये हों। उनको इत्मीनान दिलाने के लिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने दुआ़ की तो हक़ तआ़ला की तरफ़ से यह इरशाद हुआ कि इस क़ौम के चुनिन्दा आदमियों को आप तूर पहाड़ पर ले आयें तो हम उनको भी ख़ुद अपना कलाम सुना देंगे जिससे उनको यक़ीन आ जाये। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उनमें से सत्तर आदमियों को चुना और तूर पहाड़ पर ले गये। वायदे के मुताबिक़ उन्होंने अपने कानों से अल्लाह तआ़ला का कलाम सुन लिया, मगर जब यह हुज्जत भी पूरी हो गयी तो कहने लगे हमें क्या मालूम यह आवाज़ अल्लाह तआ़ला ही की है या किसी और की, हम तो तब यक़ीन करें जब खुल्लम-खुल्ला अल्लाह तआ़ला को देख लें। उनका यह सवाल चूँकि हठधर्मी और जहालत पर आधारित था, इस पर अल्लाह का ग़ज़ब मुतवज्जह हुआ, उनके नीचे से ज़लज़ला आया और ऊपर से बिजली की कड़क आई जिससे ये बेहोश होकर गिर गये और बज़ाहिर मुर्दा हो गये। सूरः ब-क़रह में इस जगह "साअ़िक़ा" का लफ़्ज़ आया है और यहाँ 'रजफ़ा' का। 'साअ़िक़ा' के मायने बिजली की कड़क और 'रजफ़ा' के मायने ज़लज़ले के हैं। इसमें कोई दूर की बात नहीं कि दोनों चीज़ें जमा हो गयी हों।

बहरहाल ये लोग ऐसे होकर गिर गये जैसे मुर्दे होते हैं, चाहे वास्तव में मर ही गये हों या ज़ाहिर में मुर्दा नज़र आते हों। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को इस वाक़िए से सख़्त सदमा पहुँचा, अव्वल तो इसलिये कि ये लोग अपनी क़ौम के चुनिन्दा लोग थे, दूसरे इसलिये कि अब अपनी क़ौम में जाकर क्या जवाब देंगे, वे यह तोहमत लगायेंगे कि मूसा अ़लैहिस्सलाम ने इन सब को कहीं लेजाकर क़त्ल करा दिया है, और इस तोहमत के बाद यह भी ज़ाहिर है कि ये लोग मुझे क़त्ल कर डालेंगे। इसलिये अल्लाह जल्ल शानुहू से अ़र्ज़ किया कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं जानता

हूँ कि इस वाक़िए से आपका मक़सद इनको हलाक करना नहीं, क्योंकि अगर यह मक़सद होता तो अब से पहले बहुत से वाक़िआत थे जिनमें ये हलाक किये जा सकते थे। फ़िरऔन के साथ ग़र्क़ कर दिये जाते, या गौसाला परस्ती के वक़्त सब के सामने हलाक कर दिये जाते और आप चाहते तो मुझे भी इनके साथ हलाक कर देते, मगर आपने यह नहीं चाहा तो मालूम हुआ कि इस वक़्त भी इनका हलाक करना मक़सूद नहीं बल्कि सज़ा देना और तंबीह करना मक़सूद है, और यह कैसे हो सकता है कि आप हम सब को चन्द बेवक़ूफ़ों के अमल की वजह से हलाक कर दें। इस जगह अपने आपको हलाक करना इसलिये ज़िक्र किया कि उन सत्तर आदमियों की इस तरह ग़ायबाना हलाकत का नतीजा यही था कि मूसा अलैहिस्सलाम अपनी क़ौम के हाथों हलाक किये (मार दिये) जायें।

फिर अर्ज़ किया कि मैं जानता हूँ कि यह केवल आपका इम्तिहान है जिसके ज़रिये आप कुछ लोगों को गुमराह कर देते हैं कि अल्लाह तआला की शिकायत व नाशुक्री करने लगें, और कुछ को हिदायत पर क़ायम रखते हैं कि वे अल्लाह तआला की हिक्मतों और मस्लेहतों को समझकर मुत्मईन हो जाते हैं। मैं भी आपके फ़ज़्ल से आपके हकीम होने का इल्म रखता हूँ लिहाज़ा इस इम्तिहान में मुत्मईन हूँ और आप ही तो हमारी ख़बरगीरी करने वाले हैं, हम पर मग़फ़िरत और रहमत फ़रमाईये और आप सब माफ़ी देने वालों से ज़्यादा माफ़ी देने वाले हैं, इसलिये इनकी इस गुस्ताख़ी को भी माफ़ कर दीजिए। चुनाँचे वे सब लोग सही सालिम उठ खड़े हुए।

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि ये सत्तर आदमी जिनका ज़िक्र इस आयत में है वे नहीं जिन्होंने अल्लाह तआला को सामने देखने की दरख़्वास्त की थी और उस पर बिजली की कड़क के ज़रिये हलाक किये गये थे, बल्कि ये वे लोग थे जो ख़ुद तो बछड़े की पूजा में शरीक न थे मगर क़ौम को इस हरकत से रोकने की कोई कोशिश भी न की थी, उसकी सज़ा में उन पर ज़लज़ला आया और बेहोश हो गये। वल्लाहु आलम। बहरहाल ये लोग हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ से ज़िन्दा होकर खड़े हो गये।

पाँचवीं आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की इस दुआ का आख़िरी हिस्सा यह भी बयान हुआ है:

وَاكْتُبْ لَنَا فِىْ هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِى الْاٰخِرَةِ اِنَّا هُدْنَآ اِلَيْكَ.

यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! आप हमारे लिये इस दुनिया में भी अच्छे और नेक हाल में रहना लिख दीजिए और आख़िरत में भी, क्योंकि हम आपकी तरफ़ दिल से और फ़रमाँबरदारी के साथ रुजू करते हैं।

इसके जवाब में हक़ तआला ने इरशाद फ़रमाया:

عَذَابِىْٓ اُصِيْبُ بِهٖ مَنْ اَشَآءُ وَرَحْمَتِىْ وَسِعَتْ كُلَّ شَىْءٍ فَسَاَكْتُبُهَا لِلَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَالَّذِيْنَ هُمْ بِاٰيٰتِنَا يُؤْمِنُوْنَ.

यानी ऐ मूसा! अव्वल तो मेरी रहमत उमूमी तौर पर मेरे ग़ज़ब पर ग़ालिब है, चुनाँचे मैं अपना अ़ज़ाब और ग़ज़ब तो सिर्फ़ उसी पर डालता हूँ जिस पर चाहता हूँ अगरचे अ़ज़ाब का हक़दार हर नाफ़रमान होता है लेकिन फिर भी सब पर अ़ज़ाब नहीं करता, बल्कि उनमें से ख़ास ख़ास लोगों पर अ़ज़ाब डालता हूँ जो हद से ज़्यादा नाफ़रमान व सरकश होते हैं, और मेरी रहमत ऐसी आम है कि सब चीज़ों को शामिल हो रही है इसके बावजूद कि उनमें से बहुत से लोग मसलन सरकश और नाफ़रमान उसके मुस्तहिक़ नहीं मगर उन पर भी एक तरह की रहमत है चाहे दुनिया ही में सही। पस जब मेरी रहमत सब ग़ैर-मुस्तहिक़ लोगों के लिये भी आ़म है तो वह रहमत उन लोगों के लिये तो कामिल तौर पर ज़रूर ही लिख दूँगा जो वायदे के मुताबिक़ उसके मुस्तहिक़ भी हैं, इस वजह से कि वे फ़रमाँबरदार हैं। चुनाँचे ख़ुदा तआ़ला से डरते हैं और ज़कात देते हैं और जो कि हमारी आयतों पर ईमान लाते हैं, तो ये लोग पहले ही से रहमत के हक़दार हैं इसलिये आपको दुआ़ के क़ुबूल होने की ख़ुशख़बरी देते हैं।

इस जवाब की तक़रीर में हज़राते मुफ़स्सिरीन के विभिन्न अक़वाल हैं, क्योंकि यहाँ साफ़ लफ़्ज़ों में दुआ़ का क़ुबूल होना मज़कूर नहीं, जैसे दूसरे मक़ामात में साफ़ फ़रमा दिया गयाः

قَدْ اُوْتِيْتَ سُؤْلَكَ يٰمُوْسٰى.

यानी ऐ मूसा! आपका सवाल पूरा कर दिया गया। और एक दूसरी जगह इरशाद हैः

اُجِيْبَتْ دَّعْوَتُكُمَا.

यानी ऐ मूसा व हारून! आप दोनों की दुआ़ क़ुबूल कर ली गयी। यहाँ इस तरह की कोई स्पष्टता नहीं, इसलिये कुछ हज़रात ने इन आयतों का मफ़्हूम यह क़रार दिया कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की यह दरख़्वास्त अपनी उम्मत के बारे में तो क़ुबूल न हुई अलबत्ता उम्मते मुहम्मदिया के हक़ में क़ुबूल कर ली गयी, जिनका ज़िक्र बाद की आयतों में वज़ाहत के साथ आ रहा है। मगर तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में इस राय व ख़्याल को दूर की बात क़रार दिया है, इसलिये जवाब की सही तक़रीर यह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ के दो हिस्से थे- एक यह कि जिन लोगों पर नाराज़गी व अ़ज़ाब हुआ है उनको माफ़ी दी जाये और उन पर रहमत की जाये, दूसरा यह कि मेरे लिये और मेरी पूरी क़ौम के लिये दुनिया व आख़िरत की भलाई मुकम्मल लिख दी जाये। पहली दुआ़ का जवाब इस आयत में ज़िक्र हुआ है और दूसरी दुआ़ का जवाब दूसरी आयत में मज़कूर है। पहली आयत का हासिल यह है कि मेरी आ़दत ही यह है कि मैं हर गुनाहगार पर अ़ज़ाब नहीं करता बल्कि सिर्फ़ उन पर जिनको मैं (हद से ज़्यादा सरकशी व नाफ़रमानी की वजह से) अ़ज़ाब ही देना चाहता हूँ। इसलिये इन लोगों को भी अ़ज़ाब न दिया जायेगा आप बेफ़िक्र रहें। रही रहमत की दरख़्वास्त सो मेरी रहमत तो हर चीज़ पर हावी और उसको घेरे हुए है इनसान हो या ग़ैर-इनसान, मोमिन हो या काफ़िर, फ़रमाँबरदार हो या नाफ़रमान, बल्कि जिनको दुनिया में कोई अ़ज़ाब व तकलीफ़ दी जाती है वह भी रहमत से ख़ाली नहीं होती, कम से कम यह कि जिस मुसीबत में मुब्तला हैं उससे बड़ी मुसीबत उन पर नहीं डाली गयी हालाँकि अल्लाह तआ़ला को इस पर भी क़ुदरत थी।

उस्ताद-ए-मोहतरम हज़रत मौलाना अनवर शाह साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि रहमत के वसीअ़ होने के यह मायने हैं कि रहमत का दायरा किसी से तंग नहीं। इसके यह मायने नहीं कि हर चीज़ मरहूम (रहमत के अन्दर) है जैसा कि इब्लीस मलऊन ने कहा कि मैं भी एक चीज़ हूँ और हर चीज़ मरहूम (रहमत के अन्दर) है लिहाज़ा मैं भी मरहूम हूँ। क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़ में इस तरफ़ इशारा मौजूद है कि यूँ नहीं फ़रमाया कि हर चीज़ पर रहमत की जायेगी, बल्कि यह फ़रमाया कि रहमत की सिफ़त तंग नहीं, वसीअ़ (विस्तृत और फैली हुई) है जिस पर अल्लाह तआ़ला रहमत फ़रमाना चाहें फ़रमा सकते हैं। क़ुरआने करीम में इसकी शहादत दूसरी जगह इस तरह आई है:

فَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقُلْ رَّبُّكُمْ ذُوْرَحْمَةٍ وَّاسِعَةٍ وَلَا يُرَدُّ بَاْسُهٗ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ.

यानी अगर ये लोग आपको झुठलायें तो इनसे फ़रमा दीजिए कि तुम्हारा परवर्दिगार बड़ी और विस्तृत रहमत वाला है, मगर मुजरिमों से उनके अ़ज़ाब को कोई नहीं टाल सकता। इसमें बतला दिया कि रहमत की वुस्अ़त मुजरिमों पर अ़ज़ाब के विरुद्ध नहीं।

ख़ुलासा यह कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की यह दुआ़ उन लोगों के हक़ में बिना किसी शर्त के क़ुबूल कर ली गयी, यानी मग़फ़िरत व माफ़ी की भी और रहमत की भी।

और दूसरी दुआ़ जिसमें दुनिया व आख़िरत की मुकम्मल भलाई उनके लिये लिख देने की दरख़्वास्त थी उसके बारे में चन्द शर्तें लगाई गयीं। मतलब यह है कि दुनिया में तो हर मोमिन व काफ़िर पर रहमत आ़म हो सकती है मगर आ़लमे आख़िरत अच्छे बुरे के फ़र्क़ का मक़ाम है, यहाँ रहमत के मुस्तहिक़ सिर्फ़ वे लोग होंगे जो चन्द शराईत को पूरा करें। अव्वल यह कि वे तक़वा और परहेज़गारी इख़्तियार करें, यानी शरीअ़त के तमाम वाजिबात को अदा करें और नाजायज़ कामों से दूर रहें। दूसरे यह कि वे अपने मालों में से अल्लाह तआ़ला के लिये ज़कात निकालें। तीसरे यह कि हमारी सब आयतों पर बिना किसी को अलग रखे और चूँ-चरा किये ईमान लायें। ये मौजूदा लोग भी अगर ये सिफ़तें पूरी अपने अन्दर पैदा कर लें तो इनके लिये भी दुनिया व आख़िरत की मुकम्मल भलाई लिख दी जायेगी।

लेकिन इसके बाद की आयत में इस तरफ़ इशारा कर दिया कि इन सिफ़ात को पूरे तौर पर हासिल करने वाले वे लोग होंगे जो इनके बाद आख़िरी ज़माने में आयेंगे और नबी-ए-उम्मी का इत्तिबा (पैरवी) करेंगे, और इसके नतीजे में वे मुकम्मल फ़लाह (कामयाबी) के मुस्तहिक़ होंगे।

हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जब आयतः

وَرَحْمَتِيْ وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ.

नाज़िल हुई तो इब्लीस ने कहा कि मैं इस रहमत में दाख़िल हूँ, लेकिन बाद के जुमलों में बतला दिया कि आख़िरत की रहमत ईमान वग़ैरह की शर्तों के साथ मशरूत है, इसको सुनकर इब्लीस (शैतान) मायूस हो गया, मगर यहूदियों व ईसाईयों ने दावा किया कि हम में तो ये सिफ़तें भी मौजूद हैं-यानी तक़वा और ज़कात का अदा करना और ईमान, मगर इसके बाद जो

शर्त नबी-ए-उम्मी पर ईमान लाने की बयान हुई तो इससे वे यहूदी व ईसाई निकल गये जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान नहीं लाये।

ग़र्ज़ कि इस अनोखे और उम्दा अन्दाज़ में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ की क़ुबूलियत का बयान भी हो गया और उम्मते मुहम्मदिया की ख़ास विशेषताओं का ज़िक्र भी।

اَلَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الرَّسُوْلَ النَّبِيَّ الْاُمِّيَّ الَّذِيْ يَجِدُوْنَهٗ مَكْتُوْبًا عِنْدَهُمْ فِي
التَّوْرٰىةِ وَالْاِنْجِيْلِ يَاْمُرُهُمْ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهٰىهُمْ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُحِلُّ لَهُمُ الطَّيِّبٰتِ وَيُحَرِّمُ عَلَيْهِمُ
الْخَبٰٓئِثَ وَيَضَعُ عَنْهُمْ اِصْرَهُمْ وَالْاَغْلٰلَ الَّتِيْ كَانَتْ عَلَيْهِمْ ۭ فَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِهٖ وَعَزَّرُوْهُ وَنَصَرُوْهُ
وَاتَّبَعُوا النُّوْرَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ مَعَهٗٓ ۙ اُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ؁ ع ١٩

अल्लज़ी-न यत्तबिअ़ूनर्रसूलन्नबिय्यल् उम्मिय्यल्लज़ी यजिदूनहू मक्तूबन् अ़िन्दहुम् फ़ित्तौराति वल्-इन्जीलि यअ्मुरुहुम् बिल्-मअ़्रूफ़ि व यन्हाहुम् अ़निल्-मुन्करि व युहिल्लु लहुमुत्तय्यिबाति व युहर्रिमु अ़लैहिमुल् ख़बाइ-स व य-ज़अ़ु अ़न्हुम् इस्रहुम् वल्अग़्लालल्लती कानत् अ़लैहिम्, फ़ल्लज़ी-न आमनू बिही व अ़ज़्ज़रूहु व न-सरूहु वत्त-बअ़ुन्नूरल्लज़ी उन्ज़ि-ल म-अ़हू उलाइ-क हुमुल्-मुफ़्लिहून (157) ✿	वे लोग जो पैरवी करते हैं इस रसूल की जो नबी-ए-उम्मी है कि जिसको पाते हैं लिखा हुआ अपने पास तौरात और इंजील में, वह हुक्म करता उनको नेक काम का, मना करता है बुरे काम से, और हलाल करता है उनके लिये सब पाक चीज़ें और हराम करता है उन पर हराम चीज़ें, और उतारता है उन पर से उनके बोझ और वे क़ैदें जो उन पर थीं, सो जो लोग उस पर ईमान लाये और उसका साथ दिया और उसकी मदद की और ताबे हुए उस नूर के जो उसके साथ उतरा है वही लोग पहुँचे अपनी मुराद को। (157) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो लोग ऐसे रसूल नबी-ए-उम्मी की पैरवी करते हैं जिनको वे लोग अपने पास तौरात व इन्जील में लिखा हुआ पाते हैं (जिनकी सिफ़त यह भी है) कि वह उनको नेक बातों का हुक्म फ़रमाते हैं और बुरी बातों से रोकते हैं, और पाकीज़ा चीज़ों को उनके लिये हलाल बतलाते हैं (चाहे वो पहली शरीअ़तों में हराम थीं) और गन्दी चीज़ों को (बदस्तूर) उन पर हराम फ़रमाते हैं,

और उन लोगों पर जो (पहली शरीअ़तों में) बोझ और तौक़ (लदे हुए) थे (यानी सख़्त और शदीद अहकाम जिनका उनको पाबन्द किया हुआ था) उनको दूर करते हैं (यानी ऐसे सख़्त अहकाम इनकी शरीअ़त में निरस्त और ख़त्म हो जाते हैं) सो जो लोग इस नबी पर ईमान लाते हैं और इनकी हिमायत करते हैं और इनकी मदद करते हैं, और उस नूर की पैरवी करते हैं जो इनके साथ भेजा गया है (यानी क़ुरआन), ऐसे लोग पूरी फ़लाह पाने वाले हैं (कि हमेशा के अ़ज़ाब से निजात पायेंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ख़ातमुन्नबिय्यीन मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और उनकी उम्मत की मख़्सूस सिफ़ात व फ़ज़ाईल

पिछली आयत में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ के जवाब में इरशाद हुआ था कि यूँ तो अल्लाह की रहमत हर चीज़ और हर शख़्स के लिये वसीअ़ है, आपकी मौजूदा उम्मत भी उससे मेहरूम नहीं, लेकिन मुकम्मल नेमत व रहमत के मुस्तहिक़ वे लोग होंगे जो ईमान व तक़्वा और ज़कात वग़ैरह की मख़्सूस शर्तों को पूरा करें।

इस आयत में उन लोगों का पता दिया गया है कि इन शर्तों पर पूरे उतरने वाले कौन लोग होंगे और बतलाया कि ये वे लोग होंगे जो रसूले उम्मी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी करें। इसके तहत हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चन्द ख़ुसूसी फ़ज़ाईल व कमालात और निशानियों का भी ज़िक्र फ़रमाकर आप पर सिर्फ़ ईमान लाने का नहीं बल्कि आपकी पैरवी और आपके हुक्मों पर अ़मल करने का हुक्म दिया गया है, जिससे मालूम हुआ कि आख़िरत की कामयाबी के लिये ईमान के साथ शरीअ़त व सुन्नत की पैरवी ज़रूरी है।

اَلرَّسُوْلَ النَّبِیَّ الْاُمِّیَّ

इस जगह रसूल और नबी के दो लक़बों (उपाधियों) के साथ आपकी एक तीसरी सिफ़त उम्मी भी बयान की गयी है। उम्मी के लफ़्ज़ी मायने अनपढ़ के हैं, जो लिखना पढ़ना न जानता हो। अ़रब की आ़म क़ौम को क़ुरआन में उम्मियीन इसी लिये कहा गया है कि उनमें लिखने पढ़ने का रिवाज बहुत कम था और उम्मी होना किसी इनसान के लिये कोई तारीफ़ की सिफ़त नहीं बल्कि एक ऐब समझा जाता है, मगर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के उलूम व मआ़रिफ़, ख़ुसूसियात और हालात व कमालात के साथ उम्मी होना आपके लिये कमाल की एक बड़ी सिफ़त बन गयी है। क्योंकि अगर इल्मी, अ़मली और अख़्लाक़ी कमालात किसी लिखे पढ़े आदमी से ज़ाहिर हों तो वो उसकी तालीम का नतीजा होते हैं, लेकिन एक बिल्कुल उम्मी से ऐसे क़ीमती और बेनज़ीर उलूम व हक़ाईक़ और मआ़रिफ़ का ज़ाहिर होना उसका एक ऐसा खुला हुआ मोजिज़ा (चमत्कार) है जिससे कोई परले दर्जे का विरोधी और मुख़ालिफ़ भी इनकार नहीं

कर सकता, ख़ुसूसन जबकि आपकी उम्र शरीफ़ के चालीस साल मक्का मुकर्रमा में सब के सामने इस तरह गुज़रे कि किसी से न एक हर्फ़ पढ़ा न सीखा, ठीक चालीस साल की उम्र होने पर अचानक एक दम से आपकी ज़ुबाने मुबारक पर वह कलाम जारी हुआ जिसके एक छोटे से टुकड़े की मिसाल लाने से सारी दुनिया आ़जिज़ हो गयी। तो इन हालात में आपका उम्मी होना आपके अल्लाह की तरफ़ से रसूल होने और क़ुरआन के अल्लाह का कलाम होने पर एक बहुत बड़ी शहादत है। इसलिये उम्मी होना अगरचे दूसरों के लिये कोई तारीफ़ की सिफ़त नहीं मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये तारीफ़ व कमाल की बहुत बड़ी सिफ़त है। जैसे मुतकब्बिर (तकब्बुर करने और अपनी बड़ाई जतलाने वाले) का लफ़्ज़ आ़म इनसानों के लिये तारीफ़ की सिफ़त नहीं बल्कि ऐब है, मगर हक़ तआ़ला शानुहू के लिये ख़ुसूसियत से तारीफ़ की सिफ़त है।

आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की चौथी सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि वे लोग आपको तौरात व इंजील में लिखा हुआ पायेंगे। यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि क़ुरआने करीम ने यह नहीं फ़रमाया कि आपकी सिफ़ात व हालात को लिखा हुआ पायेंगे, बल्कि "यजिदू-नहू" का लफ़्ज़ इख़्तियार किया गया, जिसके मायने यह हैं कि आपको लिखा हुआ पायेंगे। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि तौरात व इंजील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सिफ़ात ऐसी तफ़सील व वज़ाहत के साथ होंगी कि उनको देखना ऐसा होगा जैसे ख़ुद हुज़ूरे पाक को देख लिया, और तौरात व इंजील को विशेष तौर पर यहाँ इसलिये बयान किया गया कि बनी इस्राईल इन्हीं दो किताबों के क़ायल हैं, वरना हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हालात व सिफ़ात का ज़िक्र ज़बूर में भी मौजूद है।

उक्त आयत के असल मुख़ातब मूसा अ़लैहिस्सलाम हैं जिसमें उनको बतलाया गया है कि दुनिया व आख़िरत की मुकम्मल फ़लाह (कामयाबी व बेहतरी) आपकी उम्मत के उन लोगों का हिस्सा है जो नबी-ए-उम्मी ख़ातमुल-अम्बिया अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम का इत्तिबा करें, जिनका ज़िक्र वे तौरात व इंजील में लिखा हुआ पायेंगे।

तौरात व इंजील में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सिफ़ात और निशानियाँ

मौजूदा तौरात व इंजील बेशुमार बदलाव और कमी-बेशी हो जाने के सबब भरोसे के क़ाबिल नहीं रहीं, इसके बावजूद अब भी उनमें ऐसे कलिमात मौजूद हैं जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पता देते हैं। और इतनी बात बिल्कुल वाज़ेह है कि जब क़ुरआने करीम ने यह ऐलान किया कि ख़ातमुल-अम्बिया की सिफ़ात व निशानियाँ तौरात व इंजील में लिखी हुई हैं, अगर यह बात हकीक़त के ख़िलाफ़ होती तो उस ज़माने के यहूदियों व ईसाईयों के लिये तो इस्लाम के ख़िलाफ़ एक बहुत बड़ा हथियार हाथ आ जाता, उसके ज़रिये क़ुरआन को

झुठला सकते थे कि तौरात व इंजील में कहीं नबी-ए-उम्मी के हालात का ज़िक्र नहीं, लेकिन उस वक़्त के यहूदियों व ईसाईयों ने इसके ख़िलाफ़ कोई ऐलान नहीं किया। यह ख़ुद इस पर शाहिद (सुबूत) है कि उस वक़्त तौरात व इंजील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सिफ़ात व निशानियाँ स्पष्ट तौर पर मौजूद थीं, जिसने उन लोगों की ज़बानों पर मुहर लगा दी।

ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की जो सिफ़ात तौरात व इंजील में लिखी थीं उनका कुछ बयान तो क़ुरआने करीम में तौरात व इंजील के हवाले से आया है और कुछ हदीस की रिवायतों में उन हज़रात से मन्क़ूल है जिन्होंने असली तौरात व इंजील को देखा और उनमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ज़िक्र मुबारक पढ़कर ही वे मुसलमान हुए।

इमाम बैहक़ी ने दलाईलुन्नुबुव्वत में नक़ल किया है कि हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक यहूदी लड़का नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत किया करता था, वह इत्तिफ़ाक़न बीमार हो गया तो आप उसकी बीमारी का हाल पूछने के लिये तशरीफ़ ले गये, तो देखा कि उसका बाप उसके सिरहाने खड़ा हुआ तौरात पढ़ रहा है। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उससे कहा कि ऐ यहूदी! मैं तुझे ख़ुदा की क़सम देता हूँ जिसने मूसा अ़लैहिस्सलाम पर तौरात नाज़िल फ़रमाई है, क्या तू तौरात में मेरे हालात और सिफ़ात और मेरे ज़ाहिर होने का बयान पाता है? उसने इनकार किया तो बेटा बोला या रसूलल्लाह! यह ग़लत कहता है, तौरात में हम आपका ज़िक्र और आपकी सिफ़ात पाते हैं और मैं शहादत (गवाही) देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और आप अल्लाह के रसूल हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को हुक्म दिया कि अब यह मुसलमान है, इन्तिक़ाल के बाद इसका कफ़नाना दफ़नाना मुसलमान करें, बाप के हवाले न करें। (तफ़सीरे मज़हरी)

और हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़िम्मे एक यहूदी का क़र्ज़ था, उसने आकर अपना क़र्ज़ माँगा, आपने फ़रमाया कि इस वक़्त मेरे पास कुछ नहीं, कुछ मोहलत दो। यहूदी ने सख़्ती के साथ मुतालबा किया और कहा कि मैं आपको उस वक़्त तक न छोड़ूँगा जब तक मेरा क़र्ज़ अदा न कर दो। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया यह तुम्हें इख़्तियार है, मैं तुम्हारे पास बैठ जाऊँगा, चुनाँचे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उसी जगह बैठ गये और ज़ोहर, अ़सर, मग़रिब, इशा की और फिर अगले दिन सुबह की नमाज़ यहीं अदा फ़रमाई। सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम यह माजरा देखकर ग़मगीन और आक्रोशित हो रहे थे और आहिस्ता-आहिस्ता यहूदी को डरा-धमकाकर यह चाहते थे कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को छोड़ दे। रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको ताड़ लिया और सहाबा किराम से पूछा यह क्या करते हो? तब उन्होंने अ़र्ज़ किया- या रसूलल्लाह! हम इसको कैसे बरदाश्त करें कि एक यहूदी आपको क़ैद करे? आपने फ़रमाया कि "मुझे मेरे रब ने मना फ़रमाया है कि किसी मुआ़हदा (समझौता) वग़ैरह करने वाले पर ज़ुल्म करूँ।" यहूदी यह सब माजरा देख और सुन रहा था।

सुबह होते ही यहूदी ने कहाः

اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّكَ رَسُوْلُ اللّٰهِ.

(अशहदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अशहदु अन्न-क रसूलुल्लाहि)

इस तरह इस्लाम से सम्मानित होकर उसने कहा कि या रसूलल्लाह! मैंने अपना आधा माल अल्लाह के रास्ते में दे दिया, और क़सम है ख़ुदा तआ़ला की कि मैंने इस वक़्त जो कुछ किया उसका मक़सद सिर्फ़ यह इम्तिहान करना था कि तौरात में जो आपकी सिफ़ात बतलाई गयी हैं वो आप में सही तौर पर मौजूद हैं या नहीं। मैंने तौरात में आपके बारे में ये अलफ़ाज़ पढ़े हैंः

"मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह, उनकी पैदाईश मक्का में होगी और हिजरत तैबा की तरफ़ और मुल्क उनका शाम होगा, न वह सख़्त मिज़ाज वाले होंगे न सख़्त बात करने वाले, न बाज़ारों में शोर करने वाले, बुराई और बेहयाई से दूर होंगे।"

अब मैंने इन तमाम सिफ़ात का इम्तिहान करके आप में सही पाया, इसलिये गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और आप अल्लाह के रसूल हैं। और यह मेरा आधा माल है, आपको इख़्तियार है जिस तरह चाहें ख़र्च फ़रमायें। और यह यहूदी बहुत मालदार था, आधा माल भी एक बड़ी दौलत थी। इस रिवायत को तफ़सीरे मज़हरी में दलाईलुन्नुबुव्वत (बैहक़ी) के हवाले से नक़ल फ़रमाया है।

और इमाम बग़वी ने अपनी सनद के साथ हज़रत कअ़बे अहबार रह. से नक़ल किया कि उन्होंने फ़रमाया- तौरात में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ यह लिखा हुआ है किः

"मुहम्मद अल्लाह के रसूल और चुनिन्दा बन्दे हैं। न सख़्त मिज़ाज वाले हैं न बेहूदा कहने वाले, न बाज़ारों में शोर करने वाले, बदी का बदला बदी से नहीं देते बल्कि माफ़ फ़रमा देते और दरगुज़र करते हैं। आपकी पैदाईश मक्का में और हिजरत तैबा में होगी। मुल्क आपका शाम होगा और उम्मत आपकी हम्मादीन होगी, यानी राहत व मुसीबत दोनों हालतों में अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व शुक्र अदा करेगी। हर बुलन्दी पर चढ़ने के वक़्त वह तकबीर कहा करेगी। वह सूरज के सायों पर नज़र रखेगी ताकि उसके ज़रिये वक़्तों का पता लगाकर नमाज़ें अपने अपने वक़्त पर पढ़ा करे। वे अपने निचले बदन पर तहबन्द इस्तेमाल करेंगे और अपने हाथों पाँव को वुज़ू के ज़रिये पाक साफ़ रखेंगे। उनका अज़ान देने वाला फ़िज़ा में आवाज़ बुलन्द करेगा, जिहाद में उनकी सफ़ें ऐसी होंगी जैसे जमाअ़त की नमाज़ में। रात को उनकी तिलावत और ज़िक्र की आवाज़ें इस तरह गूँजेंगी जैसे शहद की मक्खियों का शोर होता है।" (तफ़सीर-ए-मज़हरी)

इब्ने सअ़द और इब्ने अ़साकिर ने हज़रत सहल मौला ख़ेसमा से सनद के साथ नक़ल किया है कि हज़रत सहल ने फ़रमाया- मैंने ख़ुद इंजील में मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ये सिफ़ात पढ़ी हैं किः

"वह न पस्त-क़द (छोटे क़द के) होंगे न बहुत लम्बे क़द वाले। सफ़ेद रंग की दो

जुल्फ़ों वाले होंगे। उनके दोनों कन्धों के बीच एक मुहर नुबुव्वत की होगी। सदक़ा क़ुबूल न करेंगे। गधे और ऊँट पर सवार होंगे, बकरियों का दूध खुद दूह लिया करेंगे। पेवन्द का कुर्ता इस्तेमाल फ़रमायेंगे और जो ऐसा करता है वह तकब्बुर से बरी होता है। वह इस्माईल अ़लैहिस्सलाम की नस्ल में होंगे, उनका नाम अहमद होगा।''

और इब्ने सअ़द ने तबक़ात में, दारमी ने अपने मुस्नद में, बैहक़ी ने दलाईले नुबुव्वत में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत नक़ल की है, जो यहूदियों के सबसे बड़े आ़लिम और तौरात के माहिर मशहूर थे, उन्होंने फ़रमाया कि तौरात में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ ये अलफ़ाज़ मज़कूर हैं:

''ऐ नबी! हमने आपको भेजा है सब उम्मतों पर गवाह बनाकर और नेक अ़मल करने वालों को ख़ुशख़बरी देने वाला, बुरे आमाल वालों को डराने वाला बनाकर, और उम्मियों यानी अ़रब वालों की हिफ़ाज़त करने वाला बनाकर। आप मेरे बन्दे और रसूल हैं, मैंने आपका नाम मुतवक्किल रखा है। न आप सख़्त-मिज़ाज हैं न झगड़ालू और न बाज़ारों में शोर करने वाले। बुराई का बदला बुराई से नहीं देते बल्कि माफ़ कर देते हैं और दरगुज़र करते हैं। अल्लाह तआ़ला उनको उस वक़्त तक वफ़ात न देंगे जब तक उनके ज़रिये टेढ़ी क़ौम को सीधा न कर दें, यहाँ तक कि वे **ला इला-ह इल्लल्लाहु** के क़ायल (मानने वाले) हो जायें और अंधी आँखों को खोल दें, और बहरे कानों को सुनने के क़ाबिल बना दें और बंधे हुए दिलों को खोल दें।''

इस जैसी एक हदीस बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़मर बिन आ़स रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से भी मज़कूर है। और पहली किताबों के बड़े माहिर आ़लिम हज़रत वहब बिन मुनब्बेह से इमाम बैहक़ी ने दलाईलुन्नुबुव्वत में नक़ल किया है कि:

''अल्लाह तआ़ला ने ज़बूर में हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ यह वही फ़रमाई कि ऐ दाऊद! आपके बाद एक नबी आयेंगे जिनका नाम अहमद होगा। मैं उन पर कभी नाराज़ न हूँगा और वह कभी मेरी नाफ़रमानी न करेंगे, और मैंने उनके लिये सब अगली पिछली ख़तायें माफ़ कर दी हैं। उनकी उम्मत उम्मते मरहूमा है, मैंने उनको वो नवाफ़िल दिये हैं जो अम्बिया को अ़ता की थीं और उन पर वो फ़राईज़ आयद किये हैं जो पिछले अम्बिया पर लाज़िम किये गये थे, यहाँ तक कि वे मेहशर में मेरे सामने इस हालत में आयेंगे कि उनका नूर नबियों के नूर की मानिन्द होगा। ऐ दाऊद! मैंने मुहम्मद और उनकी उम्मत को तमाम उम्मतों पर फ़ज़ीलत दी है, मैंने उनको छह चीज़ें ख़ुसूसी तौर पर अ़ता की हैं जो दूसरी उम्मतों को नहीं दी गयीं- अव्वल यह कि ख़ता व भूल पर उनको अ़ज़ाब न होगा, जो गुनाह उनसे बग़ैर इरादे के सादिर हो जाये अगर वे उसकी मग़फ़िरत मुझसे तलब करें तो मैं माफ़ कर दूँगा, और जो माल वे अल्लाह की राह में दिल की ख़ुशी से ख़र्च करेंगे तो मैं दुनिया ही में उनको उससे बहुत ज़्यादा दे दूँगा, और जब उन पर कोई मुसीबत पड़े और वे ''इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'' कहें तो मैं उन पर उस मुसीबत को सलात व रहमत और जन्नत की तरफ़ हिदायत बना दूँगा, वे जो दुआ़ करेंगे मैं क़ुबूल

करूँगा। कभी इस तरह कि जो माँगा है वही दे दूँ और कभी इस तरह कि उस दुआ़ को उनकी आख़िरत का सामान बना दूँ। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

सैंकड़ों में से ये चन्द रिवायतें तौरात, इंजील, ज़बूर के हवाले से नक़ल की गयी हैं, पूरी रिवायतों को मुहद्दिसीन ने मुस्तक़िल किताबों में जमा किया है।

तौरात व इंजील में ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी उम्मते मरहूमा के ख़ास फ़ज़ाईल व सिफ़ात और निशानियों की तफ़सील पर उलेमा ने मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं। इस आख़िरी दौर में हज़रत मौलाना रह्मतुल्लाह कैरानवी मुहाजिरे मक्की रह. ने अपनी किताब इज़्हारुल-हक़ में इसको अच्छी तरह खोलकर और तफ़सील व तहक़ीक़ के साथ लिखा है। उसमें मौजूदा ज़माने की तौरात व इंजील जिसमें बेइन्तिहा रद्दोबदल हो चुकी हैं उनमें भी बहुत सी सिफ़ात व फ़ज़ाईल का ज़िक्र मौजूद होना साबित किया है। उसका अ़रबी से उर्दू में तर्जुमा हाल में प्रकाशित हो चुका है, जो देखने और पढ़ने के क़ाबिल है।

पहले दर्ज हुई आयतों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उन सिफ़ात व निशानियों का तफ़सीली बयान था जो तौरात व इंजील और ज़बूर में लिखी हुई थीं। इसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की कुछ मज़ीद सिफ़ात भी मज़कूर हैं।

जिनमें पहली सिफ़त "अमर बिलमारूफ़ और नही अ़निल-मुन्कर" है। "मारूफ़" के लफ़्ज़ी मायने जाना पहचाना हुआ, और मुन्कर के लुग़वी मायने ओपरा, अजनबी जो पहचाना न जाये। इस जगह मारूफ़ से वो नेक काम मुराद हैं जो इस्लामी शरीअ़त में जाने पहचाने हुए हैं और मुन्कर से वो बुरे काम जो दीन व शरीअ़त से अजनबी हैं।

इस जगह अच्छे कामों को मारूफ़ के लफ़्ज़ से और बुरे कामों को मुन्कर के लफ़्ज़ से ताबीर करने में इस तरफ़ इशारा पाया जाता है कि दीन में नेक काम सिर्फ़ उसको समझा जायेगा जो पहली सदी के मुसलमानों में राईज हुआ और जाना पहचाना गया, और जो ऐसा न हो वह मुन्कर कहलायेगा। इससे मालूम हुआ कि सहाबा व ताबिईन ने जिस काम को नेक नहीं समझा वह चाहे कितना ही भला मालूम हो शरीअ़त के एतिबार से वह भला नहीं। सही हदीसों में इसी लिये उन कामों को जिनकी तालीम हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम व ताबिईन की तरफ़ से नहीं पाई जाती उनको मुह्दसातुल-उमूर और बिद्अ़त फ़रमाकर गुमराही क़रार दिया है। आयत के इस जुमले के मायने ये हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम लोगों को नेक कामों का हुक्म करेंगे और बुरे कामों से मना फ़रमायेंगे।

यह सिफ़त अगरचे तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम में आ़म है और होनी ही चाहिये क्योंकि हर नबी और रसूल इसी काम के लिये भेजे जाते हैं कि लोगों को नेक कामों की तरफ़ हिदायत करें और बुरे कामों से मना करें, लेकिन इस जगह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़ुसूसियात के मौक़े पर इसका बयान करना इसकी ख़बर देता है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस सिफ़त में दूसरे नबियों से कोई ख़ास विशेषता और ख़ुसूसियत हासिल है, और वह विशेषता कई वजह से है- अव्वल इस काम का ख़ास सलीक़ा, कि हर तब्क़े के

लोगों को उनके हाल के मुनासिब रास्ते से समझाना और तंबीह करना जिससे बात उनके दिल में उतर जाये और भारी न मालूम हो। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात में ग़ौर किया जाये तो यह साफ़ नज़र आयेगा कि आपको हक़ तआ़ला ने इसमें ख़ुसूसी और सबसे अलग सलीक़ा अ़ता फ़रमाया था, अ़रब के देहाती जो ऊँट और बकरी चराने के सिवा कुछ नहीं जानते थे उनसे उनकी समझ के हिसाब से गुफ़्तगू फ़रमाते और बारीक व गहरे इल्मी मज़ामीन को ऐसे सादे अलफ़ाज़ में समझा देते थे कि अनपढ़ लोगों की भी समझ में आ जाये, और कैसर व किसरा और दूसरे बड़े बादशाहों और उनके भेजे हुए ज्ञानी व बुद्धिमान दूतों से उनके अन्दाज़ के मुताबिक़ गुफ़्तगू होती थी और सब ही उस गुफ़्तगू से मुतास्सिर होते थे। दूसरे आपकी और आपके कलाम की ख़ुदादाद मक़बूलियत और दिलों में तासीर भी एक मोजिज़ाना (चमत्कारी) अन्दाज़ रखती है, बड़े से बड़ा दुश्मन भी जब आपका कलाम सुनता तो असर लिये बग़ैर न रहता था।

ऊपर तौरात के हवाल से जो सिफ़ात रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बयान की गयी थीं उनमें यह भी था कि आपके ज़रिये अल्लाह तआ़ला अंधी आँखों को बीना (देखने वाली) और बहरे कानों को सुनने वाला बना देगा, और बन्द दिलों को खोल देगा। ये सिफ़ात शायद इसी ख़ुसूसियत का नतीजा हों कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हक़ तआ़ला ने अम्र बिल्-मारूफ़ और नही अ़निल्-मुन्किर (यानी अच्छे कामों का हुक्म करने और बुरे कामों से रोकने) का विशेष सलीक़ा अ़ता फ़रमाया था।

दूसरी सिफ़त यह बयान की गयी है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम लोगों के लिये पाकीज़ा और पसन्दीदा चीज़ों को हलाल फ़रमायेंगे और गन्दी चीज़ों को हराम। मुराद यह है कि बहुत सी पाकीज़ा और पसन्दीदा चीज़ें जो बनी इस्राईल पर बतौर सज़ा के हराम कर दी गयी थीं, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनकी हुर्मत (हराम होने) को ख़त्म कर देंगे, मसलन हलाल जानवरों की चर्बी वग़ैरह जो बनी इस्राईल की बदकारियों की सज़ा में उन पर हराम कर दी गयी थी, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसको हलाल क़रार दिया, और गन्दी चीज़ों में ख़ून और मुर्दार जानवर, शराब और तमाम हराम जानवर दाख़िल हैं और आमदनी के तमाम हराम माध्यम और ज़रिये भी, मसलन सूद, रिश्वत, जुआ वग़ैरह। (अस्सिराजुल-मुनीर) और कुछ हज़रात ने बुरे अख़्लाक़ और बुरी आ़दतों को भी गन्दी चीज़ों में शुमार फ़रमाया है।

तीसरी सिफ़त यह बयान फ़रमाई गयीः

وَيَضَعُ عَنْهُمْ إِصْرَهُمْ وَالْأَغْلٰلَ الَّتِىْ كَانَتْ عَلَيْهِمْ

यानी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हटा देंगे लोगों से उस बोझ और बन्द को जो उन पर मुसल्लत थी।

लफ़्ज़ "इस्र" के मायने भारी बोझ के हैं, जो आदमी को हरकत करने से रोक दे, और "अग़लाल" "ग़ुल्लुन" की जमा (बहुवचन) है, उस हथकड़ी को ग़ुल्ल कहते हैं जिसके ज़रिये मुजरिम के हाथों को उसकी गर्दन के साथ बाँध दिया जाता है, और वह बिल्कुल बेइख़्तियार हो

जाता है।

"इस्र" और अग़लाल यानी भारी बोझ और क़ैद से मुराद इस आयत में वो भारी और मशक़्क़त वाले अहकाम और दुश्वार वाजिबात हैं जो असल दीन में मक़सूद न थे बल्कि बनी इस्राईल पर बतौर सज़ा के लाज़िम कर दिये गये थे। मसलन कपड़ा नापाक हो जाये तो पानी से धो देना बनी इस्राईल के लिये काफ़ी न था, बल्कि यह वाजिब था कि जिस जगह नापाकी लगी है उसको काट दिया जाये, और काफ़िरों से जिहाद करके जो माले ग़नीमत उनको हाथ आये वह उनके लिये हराम था। जिन बदनी अंगों से कोई गुनाह सादिर हो उन हिस्सों को काट देना वाजिब था, किसी का क़त्ल चाहे जान-बूझकर हो या ग़लती से दोनों सूरतों में क़िसास यानी क़ातिल का क़त्ल करना वाजिब था, ख़ून का माली बदला देने का क़ानून न था।

इन मशक़्क़त वाले और भारी अहकाम को जो बनी इस्राईल पर नाफ़िज़ थे, क़ुरआन में इस्र और अग़लाल फ़रमाया, और यह ख़बर दी कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इन सख़्त अहकाम को मन्सूख़ (रद्द और ख़त्म) करके आसान अहकाम जारी फ़रमायेंगे।

इसी को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक हदीस में फ़रमाया कि मैंने तुमको एक सहल और आसान शरीअ़त पर छोड़ा है, जिसमें न कोई मशक़्क़त है न गुमराही का अन्देशा।

एक हदीस में इरशाद है:

اَلدِّیْنُ یُسْرٌ.

यानी दीन आसान है। क़ुरआने करीम ने फ़रमायाः

وَمَا جَعَلَ عَلَیْکُمْ فِی الدِّیْنِ مِنْ حَرَجٍ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने तुम पर दीन के मामले में कोई तंगी नहीं डाली।

नबी-ए-उम्मी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मख़्सूस सिफ़ाते कमाल बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमायाः

فَالَّذِیْنَ اٰمَنُوْا بِہٖ وَعَزَّرُوْہُ وَنَصَرُوْہُ وَاتَّبَعُوا النُّوْرَ الَّذِیْٓ اُنْزِلَ مَعَہٗٓ، اُولٰٓئِکَ ھُمُ الْمُفْلِحُوْنَ○

यानी तौरात व इंजील में नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ की स्पष्ट सिफ़ात व निशानियाँ बतला देने का नतीजा यह है कि जो लोग आप पर ईमान लायें और आपकी ताज़ीम करें और मदद करें और उस नूर की पैरवी करें जो आपके साथ भेजा गया है यानी क़ुरआने पाक तो यही लोग हैं फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले।

यहाँ फ़लाह पाने के लिये चार शर्तें ज़िक्र की गयी हैं- अव्वल हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान, दूसरे आपका अदब व सम्मान, तीसरे आपकी इमदाद, चौथे क़ुरआने करीम के हुक्मों का पालन।

अदब व सम्मान के लिये इस जगह लफ़्ज़ "अ़ज़्ज़रूहु" लाया गया है जो ताज़ीर से निकला है, ताज़ीर के असली मायने शफ़क़त के साथ मना करने, हिफ़ाज़त करने के हैं। हज़रत

अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने "अ़ज़्ज़रूहु" के मायने अदब व ताज़ीम करने के बतलाये हैं और मुबर्रद ने कहा कि आला दर्जे की ताज़ीम (सम्मान व अदब) को ताज़ीर से ताबीर किया जाता है।

मुराद यह है कि वे लोग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की अ़ज़मत व मुहब्बत के साथ आपकी ताईद व हिमायत और मुख़ालिफ़ों के मुक़ाबले में आपकी मदद करें वे मुकम्मल फ़लाह पाने वाले हैं। ज़माना-ए-नुबुव्वत में तो यह ताईद व नुसरत आपकी ज़ात के साथ जुड़ी हुई थी और आपकी वफ़ात के बाद आपकी शरीअ़त और आपके दीन की ताईद व मदद ही हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ताईद व मदद का मिस्दाक़ है।

क़ुरआने करीम को इस आयत में नूर से ताबीर किया गया है। वजह यह है कि जिस तरह नूर के नूर होने पर किसी दलील की ज़रूरत नहीं, नूर ख़ुद अपने वजूद की दलील होता है, इसी तरह क़ुरआने करीम ख़ुद अपने कलामे रब्बानी और कलामे हक़ होने की दलील है, कि एक उम्मी-ए-महज़ (पूरी तरह बिना पढ़े-लिखे शख़्स) की ज़बान से ऐसा आला व उम्दा और दिल में उतर जाने वाला स्पष्ट कलाम आया जिसकी मिसाल लाने से सारी दुनिया आ़जिज़ हो गयी। यह ख़ुद क़ुरआने करीम के कलामुल्लाह होने की दलील है।

और यह कि जिस तरह नूर ख़ुद भी रोशन होता है और दूसरी अंधेरियों में भी उजाला कर देता है इसी तरह क़ुरआने करीम ने अंधेरियों में फंसी हुई दुनिया को अंधेरियों से निकाला।

क़ुरआन के साथ सुन्नत की पैरवी भी फ़र्ज़ है

इस आयत के शुरू में:

يَتَّبِعُوْنَ الرَّسُوْلَ النَّبِيَّ الْاُمِّيَّ.

फ़रमाया था और आख़िर में:

وَاتَّبَعُوا النُّوْرَ الَّذِيْٓ اُنْزِلَ مَعَهٗ.

फ़रमाया।

इनमें से पहले जुमले में नबी-ए-उम्मी की पैरवी का हुक्म है और आख़िरी जुमले में क़ुरआन की पैरवी का।

इससे साबित हुआ कि आख़िरत की निजात किताब और सुन्नत दोनों के इत्तिबा (पैरवी) पर मौक़ूफ़ (निर्भर) है, क्योंकि नबी-ए-उम्मी का इत्तिबा उनकी सुन्नत ही के इत्तिबा के ज़रिये हो सकता है।

रसूल की सिर्फ़ पैरवी भी काफ़ी नहीं, अदब व एहतिराम और मुहब्बत भी फ़र्ज़ है

और इन दोनों जुमलों के बीचः

عَزَّرُوْهُ وَنَصَرُوْهُ.

फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अहकाम का ऐसा इत्तिबा मक़सूद नहीं जैसे आ़म दुनिया के हाकिमों का इत्तिबा (पैरवी) ज़ोर-ज़बरदस्ती से करना पड़ता है, बल्कि वह इत्तिबा मक़सूद है जो बड़ाई व मुहब्बत का नतीजा हो, यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बड़ाई व मुहब्बत दिल में इतनी हो कि उसकी वजह से आपके अहकाम के इत्तिबा पर मजबूर हो। क्योंकि उम्मत को अपने रसूल से मुख़्तलिफ़ किस्म के ताल्लुक़ात होते हैं, एक यह कि वह अमीर व हाकिम है और उम्मत महकूम व रइय्यत, दूसरे यह कि रसूल महबूब है और पूरी उम्मत उनकी मुहिब (चाहने वाली)। एक यह कि रसूल अपने इल्मी, अ़मली और अख़्लाक़ी कमालात की बिना पर बड़ाई वाला है, और सारी उम्मत उनके मुक़ाबले में पस्त और आ़जिज़।

हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम में सब शानें दर्जा-ए-कमाल में पाई जाती हैं, इसलिये उम्मत पर लाज़िम है कि हर शान का हक़ अदा करें। रसूल होने की हैसियत से उन पर ईमान लायें, अमीर व हाकिम होने की हैसियत से उनके अहकाम की पैरवी करें, महबूब होने की हैसियत से उनके साथ गहरी मुहब्बत रखें और नुबुव्वत के कमालात की वजह से उनकी ताज़ीम व तकरीम (अदब व सम्मान) बजा लायें।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त और इत्तिबा तो उम्मत पर फ़र्ज़ होनी ही चाहिये थी, क्योंकि अम्बिया के भेजने का मक़सद ही इसके बग़ैर पूरा नहीं होता। लेकिन हक़ तआ़ला ने हमारे रसूले मक़बूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में सिर्फ़ इसी पर बस नहीं फ़रमाया बल्कि उम्मत पर आपकी ताज़ीम व सम्मान, और एहतिराम व अदब को भी लाज़िम क़रार दिया है और क़ुरआने करीम में जगह-जगह इसके आदाब सिखाये गये हैं।

इस आयत में तोः

عَزَّرُوْهُ وَنَصَرُوْهُ.

के अलफ़ाज़ से इसकी तरफ़ हिदायत की गयी है और एक दूसरी आयत में भीः

وَتُعَزِّرُوْهُ وَتُوَقِّرُوْهُ.

आया है, और कई आयतों में इसकी हिदायत की गयी है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने ऐसी ऊँची आवाज़ से बात न करें कि आपकी आवाज़ से बढ़ जायेः

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَرْفَعُوْۤا اَصْوَاتَكُمْ فَوْقَ صَوْتِ النَّبِيِّ.

और एक जगह इरशाद हैः

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُقَدِّمُوْا بَيْنَ يَدَيِ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ.

यानी ऐ मुसलमानो! अल्लाह और उसके रसूल से आगे न बढ़ो, यानी जिस मज्लिस में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ रखते हों और कोई मामला पेश आये तो आप से पहले कोई न बोले।

हज़रत सहल बिन अ़ब्दुल्लाह ने इस आयत के मायने यह बतलाये हैं कि आप से पहले न बोलें और जब आप कलाम करें तो सब ख़ामोश होकर सुनें।

क़ुरआन की एक आयत में इसकी हिदायत फ़रमाई गयी है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पुकारने के वक़्त अदब का लिहाज़ रखें, इस तरह न पुकारें जिस तरह आपस में एक दूसरे को पुकारा करते हैं:

لَا تَجْعَلُوْا دُعَآءَ الرَّسُوْلِ بَيْنَكُمْ كَدُعَآءِ بَعْضِكُمْ بَعْضًا.

आयत के आख़िर में इस पर सचेत किया गया है कि इसके ख़िलाफ़ कोई काम बेअदबी का किया गया तो सारे आमाल ज़ाया और बरबाद हो जायेंगे।

यही वजह है कि सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम इसके बावजूद कि हर वक़्त, हर हाल में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ कामों में शरीक रहते थे और ऐसी हालत में एहतिराम व ताज़ीम के आदाब को ध्यान में रखना बहुत मुश्किल होता है, लेकिन उनका यह हाल था कि इस आयत के नाज़िल होने के बाद हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ अ़र्ज़ करते तो इस तरह बोलते थे जैसे कोई छुपी बात को आहिस्ता कहा करता है। यही हाल हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु का था। (शिफ़ा)

हज़रत अ़मर बिन आ़स रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा कोई मुझे दुनिया में महबूब न था, और मेरा यह हाल था कि मैं आपकी तरफ़ नज़र भरकर देख भी न सकता था, और अगर कोई मुझसे आपका हुलिया मुबारक दरियाफ़्त करे तो मैं बयान करने पर इसलिये क़ादिर नहीं कि मैंने कभी आपको नज़र भरकर देखा ही नहीं।

इमाम तिर्मिज़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की मज्लिस में जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाते थे तो सब नीची नज़रें करके बैठते थे, सिर्फ़ सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु आपकी तरफ़ नज़र करते और आप उनकी तरफ़ नज़र फ़रमाकर मुस्कुराते थे।

उरवा बिन मसऊद को मक्का वालों ने जासूस बनाकर मुसलमानों का हाल मालूम करने के लिये मदीना भेजा, उसने सहाबा-ए-किराम को परवानों की तरह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर गिरते और फ़िदा होते हुए देखकर वापसी में यह रिपोर्ट दी कि मैंने किसरा व क़ैसर (यानी ईरान व रोम के बादशाहों) के दरबार भी देखे हैं और नजाशी बादशाह से भी मिला हूँ मगर जो हाल मैंने मुहम्मद के साथियों को देखा वह कहीं नहीं देखा। मेरा ख़्याल यह है कि तुम लोग उनके मुक़ाबले में हरगिज़ कामयाब न होगे।

हज़रत मुग़ीरा बिन शोबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की हदीस में है कि जब आप घर में तशरीफ़ फ़रमा होते थे तो सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम बाहर से आवाज़ देकर हुज़ूरे पाक को बुलाना बेअदबी समझते थे, दरवाज़े पर दस्तक भी सिर्फ़ नाख़ुन से देते थे ताकि ज़्यादा खड़का और शोर न हो।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद भी सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम व ताबिईन का मामूल यह था कि मस्जिदे नबवी में कभी बुलन्द आवाज़ से बात करना तो दरकिनार कोई वअ़ज़ व तक़रीर भी ज़्यादा बुलन्द आवाज़ से पसन्द न करते थे। अक्सर हज़रात का आ़लम यह था कि जब किसी ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का नाम मुबारक लिया तो रोने लगे और सम्मान व अदब की तस्वीर बन गये।

इसी अदब व सम्मान की बरकत थी कि उन हज़रात को नुबुव्वत के कमालात में से ख़ास हिस्सा मिला और अल्लाह तआ़ला ने उनको अम्बिया के बाद सबसे ऊँचा मक़ाम अ़ता फ़रमाया।

قُلْ يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اِنِّىْ رَسُوْلُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ جَمِيْعًا الَّذِىْ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ
لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ۖ فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهِ النَّبِىِّ الْاُمِّىِّ الَّذِىْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَكَلِمٰتِهٖ
وَاتَّبِعُوْهُ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝ وَمِنْ قَوْمِ مُوْسٰٓى اُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ ۝

क़ुल् या अय्युहन्नासु इन्नी रसूलुल्लाहि इलैकुम् जमी-अ़निल्लज़ी लहू मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि ला इला-ह इल्ला हु-व युह्यी व युमीतु फ़आमिनू बिल्लाहि व रसूलिहिन्--नबिय्यिल् उम्मिय्यिल्लज़ी युअ्मिनु बिल्लाहि व कलिमातिही वत्तबिअ़ूहु लअ़ल्लकुम् तह्तदून (158) व मिन् क़ौमि मूसा उम्मतुंय्यह्दू-न बिल्हक़्क़ि व बिही यअ़्दिलून (159)	तू कह- ऐ लोगो! मैं रसूल हूँ अल्लाह का तुम सब की तरफ़, जिसकी हुकूमत है आसमानों और ज़मीन में, किसी की बन्दगी नहीं उसके सिवा, वही जिलाता है और मारता है, सो ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके भेजे हुए नबी-ए-उम्मी पर जो कि यक़ीन रखता है अल्लाह पर और उसके सब कलामों पर, और उसकी पैरवी करो ताकि तुम राह पाओ। (158) और मूसा की क़ौम में एक गिरोह है जो राह बतलाते हैं हक़ की और उसी के मुवाफ़िक़ इन्साफ़ करते हैं। (159)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि ऐ (दुनिया-जहान के) लोगो! मैं तुम सब की तरफ़ उस अल्लाह का भेजा हुआ (पैग़म्बर) हूँ जिसकी बादशाही है तमाम आसमानों और ज़मीन में, उसके सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, वही ज़िन्दगी देता है और वही मौत देता है। सो (ऐसे) अल्लाह पर ईमान लाओ और उसके (ऐसे) नबी-ए-उम्मी पर (भी ईमान लाओ) जो कि (ख़ुद भी) अल्लाह पर और उसके अहकाम पर ईमान रखते हैं (यानी जब इस बड़े रुतबे के बावजूद उनको अल्लाह

और सब रसूलों और किताबों पर ईमान लाने से आर नहीं तो तुमको अल्लाह व रसूल पर ईमान लाने से क्यों इनकार है) और उन (नबी) की पैरवी करो ताकि तुम सही रास्ते पर आ जाओ। और (अगरचे कुछ लोगों ने आपकी मुख़ालफ़त की लेकिन) मूसा की क़ौम में एक जमाअ़त ऐसी भी है जो (दीने) हक़ (यानी इस्लाम) के मुवाफ़िक़ (लोगों को) हिदायत करते हैं और उसी के मुवाफ़िक़ (अपने और ग़ैरों के मामलात में) इन्साफ़ भी करते हैं (इससे मुराद अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम वग़ैरह हज़रात हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस आयत में इस्लाम के उसूली और बुनियादी मसाईल में से रिसालत के मसले के एक अहम पहलू का बयान है कि हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत दुनिया के तमाम इनसानों और जिन्नात के लिये और उनमें भी क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिये आ़म है।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह सार्वजनिक ऐलान कर देने का हुक्म है कि आप लोगों को बतला दें कि मैं तुम सब की तरफ़ रसूल बनाकर भेजा गया हूँ। मेरी नुबुव्वत व रिसालत पिछले नबियों की तरह किसी मख़्सूस क़ौम या मख़्सूस इलाक़े या ख़ास वक़्त के लिये नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के इनसानों के लिये दुनिया के हर ख़ित्ते हर मुल्क हर आबादी के लिये और मौजूदा और आने वाली नस्लों के लिये क़ियामत तक के वास्ते आ़म है, और इनसानों के अ़लावा जिन्नात भी इसमें शरीक हैं।

हुज़ूरे पाक की नुबुव्वत तमाम आ़लम के लिये और ता क़ियामत है, इसी लिये आप पर नुबुव्वत ख़त्म है

यही असली राज़ है ख़त्म-ए-नुबुव्वत के मसले का, क्योंकि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत क़ियामत तक आने वाली सब नस्लों के लिये आ़म है तो फिर किसी दूसरे रसूल और नबी के भेजे जाने की न ज़रूरत है न गुंजाईश। और यही राज़ है उम्मते मुहम्मदिया की इस ख़ुसूसियत का कि इसमें इरशादे नबवी के मुताबिक़ हमेशा एक ऐसी जमाअ़त क़ायम रहेगी जो दीन में पैदा होने वाले सारे फ़ितनों का मुक़ाबला और दीनी मामलात में पैदा होने वाले सारे ख़ललों और नुक़्सों को दूर करती रहेगी। किताब व सुन्नत की ताबीर व तफ़सीर में जो ग़लतियाँ राईज होंगी तो यह जमाअ़त उनको भी दूर करेगी और हक़ तआ़ला की ख़ास नुसरत व मदद इस जमाअ़त को हासिल होगी जिसके सबब यह सब पर ग़ालिब आकर रहेगी, क्योंकि दर हक़ीक़त यह जमाअ़त ही हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के फ़राईज़े रिसालत अदा करने में आपकी क़ायम-मक़ाम (नायब) होगी।

इमाम राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने आयतः

كُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ.

(रहो सच्चों के साथ) के तहत में बतलाया है कि इस आयत में यह इशारा मौजूद है कि इस उम्मत में सादिक़ीन की एक जमाअ़त ज़रूर बाक़ी रहेगी वरना दुनिया को सादिक़ीन के साथ और सोहबत का हुक्म ही न होता। और इसी से इमाम राज़ी रह. ने हर दौर में इजमा-ए-उम्मत का शरई हुज्जत होना साबित किया है। क्योंकि सादिक़ीन की जमाअ़त के मौजूद होते हुए किसी ग़लत बात या गुमराही पर सब का इजमा व इत्तिफ़ाक़ (एकमत होना) नहीं हो सकता।

इमाम इब्ने कसीर रह. ने फ़रमाया कि इस आयत में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ातमुन्नबिय्यीन और आख़िरी पैग़म्बर होने की तरफ़ इशारा है, क्योंकि जब आपका नबी व रसूल बनकर तशरीफ़ लाना क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिये और पूरे आ़लम के लिये आ़म हुआ तो अब किसी दूसरे नये नबी व रसूल की ज़रूरत बाक़ी नहीं रहती, इसी लिये आख़िरी ज़माने में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम तशरीफ़ लायेंगे तो वह भी अपनी जगह अपनी नुबुव्वत पर बरक़रार होने के बावजूद शरीअ़ते मुहम्मदी पर अ़मल करेंगे, जैसा कि हदीस की सही रिवायतों से साबित है।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी व रसूल बनाकर भेजा जाना सारी दुनिया और क़ियामत तक के लिये आ़म होने पर यह आयत भी बहुत वाज़ेह सुबूत है। इसके अ़लावा क़ुरआने करीम की अनेक आयतें इस पर शाहिद हैं। मसलन इरशाद हैः

وَاُوْحِيَ اِلَيَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ.

यानी यह क़ुरआन मुझ पर वही के ज़रिये भेजा गया है ताकि मैं तुमको अल्लाह के अ़ज़ाब से डराऊँ और उन लोगों को भी जिनको मेरे बाद यह क़ुरआन पहुँचे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की चन्द अहम विशेषताएँ

और इमाम इब्ने कसीर ने मुस्नद अहमद के हवाले से मज़बूत सनद के साथ रिवायत किया है कि ग़ज़वा-ए-तबूक के मौक़े पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नमाज़े तहज्जुद में मशग़ूल थे, सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को डर हुआ कि कोई दुश्मन हमला न कर दे इसलिये आपके चारों तरफ़ जमा हो गये। जब आप नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो फ़रमाया कि आज की रात मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अ़ता की गयी हैं जो मुझसे पहले किसी रसूल व नबी को नहीं मिलीं। अव्वल यह कि मेरी रिसालत व नुबुव्वत को सारी दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये आ़म किया गया है और मुझसे पहले जितने अम्बिया आये उनकी दावत व नुबुव्वत सिर्फ़ अपनी अपनी क़ौम के साथ मख़्सूस होती थी। दूसरी बात यह है कि मुझे मेरे दुश्मन के मुक़ाबले में ऐसा रौब

अ़ता किया गया है कि वह मुझसे एक महीने के सफ़र की दूरी पर हो तो मेरा रौब उस पर छा जाता है। तीसरे यह कि मेरे लिये काफ़िरों से हासिल होने वाला माले ग़नीमत हलाल कर दिया गया हालाँकि पिछली उम्मतों के लिये वह हलाल न था बल्कि उसका इस्तेमाल करना बड़ा गुनाह समझा जाता था, उनके माले ग़नीमत का सिर्फ़ यह मस्रफ़ (ख़र्च का मक़ाम) था कि आसमान से एक बिजली आये और उसको जलाकर ख़ाक कर दे। चौथे यह कि मेरे लिये तमाम ज़मीन को मस्जिद (नमाज़ पढ़ने की जगह) और पाक करने (यानी तयम्मुम कर लेने) का ज़रिया बना दिया कि हमारी नमाज़ ज़मीन पर हर जगह हो जाती है, मस्जिद के साथ मख़्सूस नहीं, बख़िलाफ़ पहली उम्मतों के कि उनकी इबादत सिर्फ़ उनके इबादत ख़ानों के साथ मख़्सूस थी, अपने घरों में या जंगल वग़ैरह में उनकी नमाज़ व इबादत न होती थी, तथा यह कि जब पानी के इस्तेमाल पर ताक़त न हो, चाहे पानी न मिलने की वजह से या किसी बीमारी के सबब तो वुज़ू के बजाय मिट्टी से तयम्मुम करना इस उम्मत के लिये तहारत व वुज़ू के क़ायम-मक़ाम हो जाता है, पिछली उम्मतों के लिये यह आसानी न थी। फिर फ़रमाया- और पाँचवीं चीज़ का तो कुछ पूछना ही नहीं, वह ख़ुद ही अपनी नज़ीर (यानी बेजोड़) है। वह यह है कि अल्लाह तआ़ला ने अपने हर रसूल को एक दुआ़ की क़ुबूलियत ऐसी अ़ता फ़रमाई है कि उसके ख़िलाफ़ नहीं हो सकता और हर रसूल व नबी ने अपनी-अपनी दुआ़ का अपने ख़ास-ख़ास मक़सदों के लिये इस्तेमाल कर लिया, वे मक़सद हासिल हो गये, मुझसे यही कहा गया कि आप कोई दुआ़ करें, मैंने अपनी दुआ़ को आख़िरत के लिये सुरक्षित करा दिया। वह दुआ़ तुम्हारे और क़ियामत तक जो शख़्स "ला इला-ह इल्लल्लाहु" की गवाही देने वाला होगा उसके काम आयेगी।

और इमाम अहमद की एक रिवायत हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स मेरा मबऊस होना सुने (यानी मेरे नबी बनकर आने की ख़बर उसको मिले) चाहे वह मेरी उम्मत में हो या यहूदी व ईसाई हो, अगर वह मुझ पर ईमान नहीं लायेगा तो जहन्नम में जायेगा।

और सही बुख़ारी में इसी आयत के तहत में हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि अबू बक्र व उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के दरमियान किसी बात में मतभेद हुआ, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु नाराज़ होकर चले गये, यह देखकर हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु भी उनको मनाने के लिये चले मगर हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने न माना, यहाँ तक कि अपने घर में पहुँचकर दरवाज़ा बन्द कर लिया, मजबूरन सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु वापस हुए और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हो गये। उधर कुछ देर के बाद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को अपने इस फ़ेल पर शर्मिन्दगी हुई और वह भी घर से निकल कर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुँच गये और अपना वाक़िआ़ अ़र्ज़ किया। हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि इस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नाराज़ हो गये। जब सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने देखा कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु पर नाराज़ी का इज़हार होने लगा तो अ़र्ज़ किया या

रसूलल्लाह! ज़्यादा क़सूर मेरा ही था। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क्या तुमसे इतना भी नहीं होता कि मेरे एक साथी को तकलीफ़ें न पहुँचाओ? क्या तुम नहीं जानते कि जब मैंने अल्लाह के हुक्म से यह कहा किः

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اِنِّىْ رَسُوْلُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ جَمِيْعًا

(ऐ लोगो! मैं रसूल हूँ अल्लाह का तुम सब की तरफ़) तो तुम सब ने मुझे झुठलाया सिर्फ़ अबू बक्र सिद्दीक़ ही थे जिन्होंने पहली बार में मेरी तस्दीक़ की।

ख़ुलासा यह है कि इस आयत से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तमाम मौजूदा और आईन्दा आने वाली नस्लों के लिये और हर मुल्क हर ख़ित्ते के रहने वालों के लिये और हर क़ौम व बिरादरी के लिये आ़म रसूल होना साबित हुआ, और यह कि आपके नबी बनकर तशरीफ़ लाने के बाद जो शख़्स आप पर ईमान नहीं लाया वह अगरचे किसी पहली शरीअ़त व किताब का या किसी और मज़हब व मिल्लत का पूरा-पूरा इत्तिबा (पैरवी) तक़वे व एहतियात के साथ भी कर रहा हो तो भी वह हरगिज़ निजात नहीं पायेगा।

आयत के आख़िर में बतलाया कि मैं उस पाक ज़ात की तरफ़ से रसूल हूँ जिसकी मिल्क में हैं तमाम आसमान और ज़मीन, वही ज़िन्दा करता है वही मारता है।

उसके बाद इरशाद फ़रमायाः

فَاٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهِ النَّبِيِّ الْاُمِّيِّ الَّذِيْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَكَلِمٰتِهٖ وَاتَّبِعُوْهُ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ۝

यानी जब यह बात मालूम हो गयी कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये रसूल व नबी हैं, उनकी इत्तिबा के बग़ैर कोई चारा नहीं, तो ज़रूरी है कि ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूल नबी-ए-उम्मी पर, जो ख़ुद भी अल्लाह पर और उसके कलिमात पर ईमान लाते हैं, और उनकी पैरवी करो ताकि तुम सही रास्ते पर क़ायम रहो।

अल्लाह के कलिमात से मुराद अल्लाह तआ़ला की किताबें तौरात, इंजील और क़ुरआन वग़ैरह हैं। ईमान के हुक्म के बाद फिर पैरवी का मज़ीद हुक्म देकर इसकी तरफ़ इशारा कर दिया है कि सिर्फ़ ईमान लाना या ज़बानी तस्दीक़ करना आपकी शरीअ़त की पैरवी करने के बग़ैर हिदायत के लिये काफ़ी नहीं।

हज़रत जुनैद बग़दादी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि मख़्लूक़ पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ पहुँचने के तमाम रास्ते बन्द हैं सिवाय उस रास्ते के जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बतलाया है।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम में एक हक़ परस्त जमाअ़त

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَمِنْ قَوْمِ مُوْسٰى أُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ٥

यानी मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम में एक जमाअ़त ऐसी भी है जो ख़ुद भी हक़ की पैरवी करती है और अपने विवादित मामलों के फ़ैसलों में हक़ के मुवाफ़िक़ फ़ैसले करती है।

पहली आयतों में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की उल्टी चाल, बेकार की हुज्जत और गुमराही का बयान हुआ था, इस आयत में बतलाया गया कि पूरी क़ौमे बनी इस्राईल ऐसी नहीं बल्कि उनमें कुछ लोग अच्छे भी हैं जो हक़ की पैरवी करते हैं, और हक़ फ़ैसले करते हैं, ये वही लोग हैं जिन्होंने तौरात व इंजील के ज़माने में उनकी हिदायत के मुवाफ़िक़ पूरा अ़मल किया, और जब ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये तो तौरात व इंजील की ख़ुशख़बरी के मुवाफ़िक़ आप पर ईमान लाये और आपकी पैरवी की। बनी इस्राईल की इस हक़-परस्त (सही राह पर चलने वाली) जमाअ़त का ज़िक्र भी क़ुरआन में बार-बार आया है। एक जगह इरशाद है:

مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَّتْلُوْنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ اٰنَآءَ الَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُوْنَ.

यानी अहले किताब में एक ऐसी जमाअ़त भी है जो हक़ पर क़ायम है, अल्लाह की आयतों को रात भर तिलावत करते हैं और सज्दे करते हैं। एक जगह इरशाद है:

اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِهٖ هُمْ بِهٖ يُؤْمِنُوْنَ.

यानी वे लोग जिनको हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पहले किताब (तौरात व इंजील) दी गयी थी वे हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाते हैं।

और इमाम इब्ने जरीर, इमाम इब्ने कसीर वग़ैरह ने इस जगह एक अ़जीब हिकायत नक़ल की है कि इस जमाअ़त से वह जमाअ़त मुराद है जो बनी इस्राईल की गुमराही, बुरे आमाल और नबियों को क़त्ल करने वग़ैरह से तंग आकर उनसे अलग हो गयी थी। बनी इस्राईल के बारह क़बीलों में से एक क़बीला था जिन्होंने अपनी क़ौम से तंग आकर यह दुआ़ की कि या अल्लाह! हमें इन लोगों से दूर कहीं और बसा दीजिए ताकि हम अपने दीन पर मज़बूती से अ़मल करते रहें। अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल क़ुदरत से उनको डेढ़ साल की दूरी पर दूर पूरब की किसी ज़मीन में पहुँचा दिया, जहाँ वे ख़ालिस इबादत में मशग़ूल रहे और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनकर ज़ाहिर होने के बाद भी क़ुदरत के करिश्मे से उनके मुसलमान होने का यह सामान हुआ कि मेराज की रात में जिब्रीले अमीन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उस तरफ़ ले गये, वे लोग आप पर ईमान लाये, आपने उनको क़ुरआन की कुछ सूरतें पढ़ायीं और उनसे मालूम किया कि क्या तुम्हारे पास नाप-तौल का कुछ इन्तिज़ाम है और तुम लोगों के गुज़ारे (रोज़ी कमाने) का क्या सामान है? जवाब दिया कि हम ज़मीन में ग़ल्ला बोते हैं जब तैयार हो जाता है तो काटकर वहीं ढेर लगा देते हैं, हर शख़्स को जितनी ज़रूरत होती है वहाँ से ले आता है, नापने तौलने की ज़रूरत ही नहीं होती। आपने मालूम किया कि क्या तुममें कोई शख़्स झूठ भी बोलता है? अ़र्ज़ किया कि नहीं, क्योंकि अगर कोई ऐसा करे तो फ़ौरन एक

आग आकर उसे जला देती है। आपने मालूम किया कि तुम सब के मकानात बिल्कुल एक तरह के क्यों हैं? अ़र्ज़ किया इसलिये कि किसी को किसी पर बड़ाई जतलाने का मौक़ा न मिले। फिर मालूम किया कि तुमने अपने मकानात के सामने अपनी क़ब्रें क्यों बना रखी हैं? अ़र्ज़ किया ताकि हमें मौत हर वक़्त ध्यान में रहे। फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब मेराज से वापस मक्का में तशरीफ़ लाये तो यह आयत नाज़िल हुईः

وَمِنْ قَوْمِ مُوْسٰى اُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ.

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी ने इसी रिवायत को असल क़रार दिया है और दूसरी संभावनायें भी लिखी हैं। इमाम इब्ने कसीर ने इसको अ़जीब हिकायत तो फ़रमाया मगर रद्द नहीं किया, अलबत्ता तफ़सीरे क़ुर्तुबी में इसको नक़ल करके कहा है कि ग़ालिबन यह रिवायत सही नहीं।

बहरहाल इस आयत से यह समझ में आया कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम में एक जमाअ़त ऐसी है जो हमेशा हक़ पर क़ायम रही, चाहे ये वे लोग हों जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत की ख़बर पाकर इस्लाम ले आये हों या वह बनी इस्राईल का बारहवाँ क़बीला हो जिसको अल्लाह तआ़ला ने ज़मीन के किसी ख़ास हिस्से में रखा हुआ है, जहाँ दूसरों की रसाई (पहुँच) नहीं। वल्लाहु आलम

وَ قَطَّعْنٰهُمُ اثْنَتَیْ عَشْرَةَ اَسْبَاطًا اُمَمًا ؕ وَ اَوْحَیْنَاۤ اِلٰی مُوْسٰۤی
اِذِ اسْتَسْقٰىهُ قَوْمُهٗۤ اَنِ اضْرِبْ بِّعَصَاكَ الْحَجَرَ ۚ فَانْۢبَجَسَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَیْنًا ؕ قَدْ عَلِمَ
كُلُّ اُنَاسٍ مَّشْرَبَهُمْ ؕ وَ ظَلَّلْنَا عَلَیْهِمُ الْغَمَامَ وَ اَنْزَلْنَا عَلَیْهِمُ الْمَنَّ وَ السَّلْوٰی ؕ كُلُوْا مِنْ طَیِّبٰتِ
مَا رَزَقْنٰكُمْ ؕ وَ مَا ظَلَمُوْنَا وَ لٰكِنْ كَانُوْۤا اَنْفُسَهُمْ یَظْلِمُوْنَ ۝ وَ اِذْ قِیْلَ لَهُمُ اسْكُنُوْا هٰذِهِ الْقَرْیَةَ
وَ كُلُوْا مِنْهَا حَیْثُ شِئْتُمْ وَ قُوْلُوْا حِطَّةٌ وَّ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا نَّغْفِرْ لَكُمْ خَطِیْٓـٰٔتِكُمْ ؕ سَنَزِیْدُ الْمُحْسِنِیْنَ ۝
فَبَدَّلَ الَّذِیْنَ ظَلَمُوْا مِنْهُمْ قَوْلًا غَیْرَ الَّذِیْ قِیْلَ لَهُمْ فَاَرْسَلْنَا عَلَیْهِمْ رِجْزًا مِّنَ السَّمَآءِ بِمَا كَانُوْا
یَظْلِمُوْنَ ۝ ع ٢٠ ٥ ١٠

व क़त्तअ़्नाहुमुस्नतै अ़श्र-त अस्बातन् उ-ममन्, व औहैना इला मूसा इज़िस्तस्क़ाहु क़ौमुहू अनिज़्रिब् बिअ़साकल् ह-ज-र फ़म्ब-जसत् मिन्हुस्नता अ़श्र-त ऐनन्, क़द्	और अलग-अलग कर दिये हमने उनको बारह दादाओं की औलाद बड़ी-बड़ी जमाअ़तें, और हुक्म भेजा हमने मूसा को जब पानी माँगा उससे उसकी क़ौम ने कि मार अपनी लाठी उस पत्थर पर तो फूट निकले उससे बारा चश्मे, पहचान लिया

अ़लि-म कुल्लु उनासिम् मश्र-बहुम्, व ज़ल्लल्ना अ़लैहिमुल् ग़मा-म व अन्ज़ल्ना अ़लैहिमुल् मन्-न वस्सल्वा, कुलू मिन् तय्यिबाति मा रज़क़्नाकुम्, व मा ज़-लमूना व लाकिन् कानू अन्फ़ु-सहुम् यज़्लिमून (160) व इज़् क़ी-ल लहुमुस्कुनू हाज़िहिल्क़र्य-त व कुलू मिन्हा हैसु शिअ्तुम् व क़ूलू हित्ततुंव्-वद्ख़ुलुल्-बा-ब सुज्जदन्-नग़्फ़िर् लकुम् ख़ातीआतिकुम्, स-नज़ीदुल्-मुह्सिनीन (161) फ़-बद्दलल्लज़ी-नज़-लमू मिन्हुम् क़ौलन् ग़ैरल्लज़ी क़ी-ल लहुम् फ़-अर्सल्ना अ़लैहिम् रिज्ज़म्-मिनस्-समा-इ बिमा कानू यज़्लिमून (162) ✿	हर क़बीले ने अपना घाट, और साया किया हमने उन पर बादल का और उतारा हमने उन पर मन्न और सलवा, खाओ सुथरी चीज़ें जो हमने रोज़ी दी तुमको, और उन्होंने हमारा कुछ न बिगाड़ा लेकिन अपना ही नुक़सान करते रहे। (160) और जब हुक्म हुआ उनको कि बसो इस शहर में और खाओ उसमें जहाँ से चाहो और कहो- हमको बख़्श दे, और दाख़िल होओ दरवाज़े में सज्दा करते हुए तो बख़्श देंगे हम तुम्हारी ख़तायें यक़ीनन ज़्यादा देंगे हम नेकी करने वालों को। (161) सो बदल डाला ज़ालिमों ने उनमें से दूसरा लफ़्ज़ उसके सिवा जो उनसे कह दिया गया था, फिर भेजा हमने उन पर अज़ाब आसमान से उनकी शरारत की वजह से। (162) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने (एक इनाम बनी इस्राईल पर यह किया कि उनके सुधार व इन्तिज़ाम के लिये) उनको बारह ख़ानदानों में बाँट करके सब की अलग-अलग जमाअ़त मुक़र्रर कर दी (और हर एक पर एक सरदार निगरानी के लिये मुक़र्रर कर दिया, जिनका ज़िक्र सूरः मायदा के तीसरे रुकूअ़ में है "व बअ़स्ना मिन्हुमुस्नै अ़-श-र नक़ीबन्") और (एक इनाम यह किया कि) हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को हुक्म दिया जबकि उनकी क़ौम ने पानी माँगा (और उन्होंने हक़ तआ़ला से दुआ़ की, उस वक़्त यह हुक्म हुआ) कि अपनी लाठी को (फ़ुलाँ) पत्थर पर मारो, (उससे पानी निकल आयेगा) बस (मारने की देर थी) फ़ौरन उससे बारह चश्मे (उनके बारह ख़ानदानों की संख्या के मुताबिक़) फूट निकले, (चुनाँचे) हर-हर शख़्स ने अपने पानी पीने का मौक़ा "यानी जगह" मालूम कर लिया। और (एक इनाम यह किया कि) हमने उन पर बादल से साया किया, और (एक इनाम यह किया कि) उनको (ग़ैब के ख़ज़ाने से) तुरन्जबीन "यानी एक

क़िस्म की क़ुदरती शकर या तरी" और बटेरें पहुँचाईं (और इजाज़त दी कि) खाओ पाक चीज़ों से जो कि हमने तुमको दी हैं, (लेकिन वे लोग उसमें भी एक बात ख़िलाफ़े हुक्म कर बैठे) और (इससे) उन्होंने हमारा कोई नुक़सान नहीं किया लेकिन अपना ही नुक़सान करते थे (यह वाक़िआ़त वादी-ए-तीह के हैं जिनकी तफ़सील सूरः ब-क़रह में गुज़र चुकी)।

और (वह ज़माना याद करो) जब उनको हुक्म दिया गया कि तुम लोग उस आबादी में जाकर रहो, और खाओ उस (की चीज़ों में) से जिस जगह से तुम्हारा दिल चाहे, और (यह भी हुक्म दिया गया कि जब अन्दर जाने लगो तो) ज़बान से यह कहते जाना कि तौबा है (तौबा है) और (आ़जिज़ी से) झुके-झुके दरवाज़े में दाख़िल होना, हम तुम्हारी (पिछली) ख़ताएँ माफ़ कर देंगे (यह तो सब के लिये होगा और) जो नेक काम करेंगे उनको और भी ज़्यादा देंगे। सो बदल डाला उन ज़ालिमों ने एक और कलिमा जो ख़िलाफ़ था उस (कलिमे) के जिस (के कहने) की उनसे फ़रमाईश की गई थी, (इस पर) हमने उन पर एक आसमानी आफ़त भेजी, इस वजह से कि वे हुक्म को ज़ाया करते थे।

وَسْئَلْهُمْ عَنِ الْقَرْيَةِ الَّتِىْ كَانَتْ حَاضِرَةَ الْبَحْرِ م اِذْ يَعْدُوْنَ فِى السَّبْتِ اِذْ
تَاْتِيْهِمْ حِيْتَانُهُمْ يَوْمَ سَبْتِهِمْ شُرَّعًا وَّيَوْمَ لَا يَسْبِتُوْنَ لَا تَاْتِيْهِمْ ج كَذٰلِكَ ج نَبْلُوْهُمْ بِمَا
كَانُوْا يَفْسُقُوْنَ ۝١٦٣ وَاِذْ قَالَتْ اُمَّةٌ مِّنْهُمْ لِمَ تَعِظُوْنَ قَوْمًا لا اللّٰهُ مُهْلِكُهُمْ اَوْ مُعَذِّبُهُمْ
عَذَابًا شَدِيْدًا ط قَالُوْا مَعْذِرَةً اِلٰى رَبِّكُمْ وَلَعَلَّهُمْ يَتَّقُوْنَ ۝١٦٤ فَلَمَّا نَسُوْا مَا ذُكِّرُوْا بِهٖٓ اَنْجَيْنَا الَّذِيْنَ
يَنْهَوْنَ عَنِ السُّوْٓءِ وَاَخَذْنَا الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا بِعَذَابٍ بَئِيْسٍ بِمَا كَانُوْا يَفْسُقُوْنَ ۝١٦٥ فَلَمَّا
عَتَوْا عَنْ مَّا نُهُوْا عَنْهُ قُلْنَا لَهُمْ كُوْنُوْا قِرَدَةً خٰسِئِيْنَ ۝١٦٦

वस्अल्हुम् अ़निल्क़र्यतिल्लती कानत् हाज़ि-रतल्-बह़्रि। इज़् यअ़्दू-न फ़िस्सब्ति इज़् तअ्तीहिम् हीतानुहुम् यौ-म सब्तिहिम् शुर्रअ़ंव्-व यौ-म ला यस्बितू-न ला तअ्तीहिम् कज़ालि-क नब्लूहुम् बिमा कानू यफ़्सुक़ून। (163) ● व इज़् कालत् उम्मतुम्-मिन्हुम् लि-म तअ़िज़ू-न

और पूछ उनसे हाल उस बस्ती का जो थी दरिया के किनारे। जब हद से बढ़ने लगे हफ़्ते के हुक्म में, जब आने लगीं उनके पास मछलियाँ हफ़्ते के दिन पानी के ऊपर और जिस दिन हफ़्ता न हो तो न आती थीं, इस तरह हमने उनको आज़माया इसलिये कि वे नाफ़रमान थे। (163) ● और जब बोला उनमें से एक फ़िर्क़ा- क्यों नसीहत करते हो उन लोगों

क़ौ-मनिल्लाहु मुह्लिकुहुम् औ मुअ़ज़्ज़िबुहुम् अ़ज़ाबन् शदीदन्, क़ालू मअ़्ज़ि-रतन् इला रब्बिकुम् व लअ़ल्लहुम् यत्तक़ून (164) फ़-लम्मा नसू मा ज़ुक्किरू बिही अन्जैनल्लज़ी-न यन्हौ-न अ़निस्सू-इ व अख़ज़्नल्लज़ी-न ज़-लमू बि-अ़ज़ाबिम् बईसिम्-बिमा कानू यफ़्सुक़ून (165) फ़-लम्मा अ़तौ अ़म्मा नुहू अ़न्हु क़ुल्ना लहुम् कूनू क़ि-र-दतन् ख़ासिईन (166)	को जिनको अल्लाह चाहता है कि हलाक करे या उनको अ़ज़ाब दे सख़्त, वे बोले इल्ज़ाम उतारने की ग़र्ज़ से तुम्हारे रब के आगे, और इसलिये कि शायद वे डरें। (164) फिर जब वे भूल गये उसको जो उनको समझाया था तो निजात दी हमने उनको जो मना करते थे बुरे काम से, और पकड़ा गुनाहगारों को बुरे अ़ज़ाब में उनकी नाफ़रमानी के कारण से। (165) फिर जब बढ़ने लगे उस काम में जिससे वे रोके गये थे तो हमने हुक्म किया कि हो जाओ ज़लील बन्दर। (166)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आप इन (अपने ज़माने के यहूदी) लोगों से (चेतावनी के तौर पर) उस बस्ती (वालों) का जो कि दरिया-ए-शोर के क़रीब आबाद थे, (और उसमें यहूदी रहते थे जिनको शनिवार के दिन शिकार करना मना था) उस वक़्त का हाल पूछिये जबकि वे (वहाँ के बसने वाले) हफ़्ते "शनिवार" (के मुताल्लिक़ जो हुक्म था उस) के बारे में (शरई) हद से निकल रहे थे, जबकि उनके हफ़्ते "शनिवार" के दिन उन (के दरिया) की मछलियाँ (पानी से सर निकाल-निकाल) ज़ाहिर हो-होकर (दरिया के ऊपरी हिस्से पर) उनके सामने आती थीं, और जब हफ़्ते "शनिवार" का दिन न होता तो उनके सामने न आती थीं (बल्कि वहाँ से दूर कहीं चली जाती थीं और वजह इसकी यह थी कि) हम उनकी इस तरह पर (सख़्त) आज़माईश करते थे (कि कौन हुक्म पर जमा रहता है कौन नहीं रहता, और यह आज़माईश) इस सबब से (थी) कि वे (पहले से) नाफ़रमानी किया करते थे (इसी लिये ऐसे सख़्त हुक्म से उनकी आज़माईश की और नेकी करने वालों की आज़माईश लुत्फ़, तौफ़ीक़ और ताईद से मिश्रित हुआ करती है)।

और (उस वक़्त का हाल पूछिये) जबकि उनमें से एक जमाअ़त ने (जो कि उनको नसीहत करते करते असर व फ़ायदा होने से मायूस हो गये थे ऐसे लोगों से जो अब भी नसीहत किये चले जा रहे थे और इस क़द्र मायूस भी न हुए थे जैसा कि "लअ़ल्लहुम यत्तक़ून" से मालूम होता है) यूँ कहा कि तुम ऐसे लोगों को क्यों नसीहत किये जाते हो जिन (से क़ुबूल करने की कुछ उम्मीद नहीं, और इससे मालूम होता है कि उन) को अल्लाह तआ़ला (बिल्कुल) हलाक करने

वाले हैं या (हलाक न हुए तो) उनको (किसी और अन्दाज़ की) सख़्त सज़ा देने वाले हैं (यानी ऐसों के साथ क्यों दिमाग़ ख़ाली करते हो)? उन्होंने जवाब दिया कि तुम्हारे (और अपने) रब के सामने उज़्र करने के लिये (उनको नसीहत करते हैं कि अल्लाह के रू-ब-रू कह सकें कि ऐ अल्लाह हमने तो कहा था मगर इन्होंने न सुना, हम माज़ूर हैं) और (साथ ही) इसलिये कि शायद ये डर जाएँ (और अ़मल करने लगें। मगर वे कब अ़मल करते थे) सो (आख़िर) जब वे उस अम्र "यानी बात और हुक्म" को छोड़े ही रहे जो उनको समझाया जाता था, (यानी न माना) तो हमने उन लोगों को तो (अ़ज़ाब से) बचा लिया जो उस बुरी बात से मना किया करते थे (चाहे बराबर मना करते रहे और चाहे मायूस हो जाने की वजह से बैठ रहे) और उन लोगों को जो (उक्त हुक्म में) ज़्यादती करते थे उनकी (इस हुक्म के ख़िलाफ़ करने की वजह से) एक सख़्त अ़ज़ाब में पकड़ लिया, इस वजह से कि वे नाफ़रमानी किया करते थे। (यानी) जिस काम से उनको मना किया गया था जब वे उसमें हद से निकल गये (यह तो तफ़सीर हुई उस चीज़ को भूल जाने की जो उनको समझायी जाती थी) तो हमने उनको (ग़ज़ब और गुस्से से) कह दिया कि तुम ज़लील बन्दर बन जाओ (यह तफ़सीर हुई बुरे अ़ज़ाब की)।

ऊपर दर्ज हुई इन आयतों के वाक़िआ़त भी मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन की पहली जिल्द सूरः ब-क़रह में तफ़सील व वज़ाहत के साथ आ चुके हैं, इसके मुताल्लिक़ ज़रूरी बातें वहाँ देखी जा सकती हैं।

وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّكَ لَيَبْعَثَنَّ عَلَيْهِمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَنْ يَّسُوْمُهُمْ سُوْٓءَ الْعَذَابِ ۚ
اِنَّ رَبَّكَ لَسَرِيْعُ الْعِقَابِ ۖ وَاِنَّهٗ لَغَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَقَطَّعْنٰهُمْ فِى الْاَرْضِ اُمَمًا ۚ مِنْهُمُ الصّٰلِحُوْنَ وَ
مِنْهُمْ دُوْنَ ذٰلِكَ ۡ وَبَلَوْنٰهُمْ بِالْحَسَنٰتِ وَالسَّيِّاٰتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ ۝ فَخَلَفَ مِنْۢ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ
وَّرِثُوا الْكِتٰبَ يَاْخُذُوْنَ عَرَضَ هٰذَا الْاَدْنٰى وَ يَقُوْلُوْنَ سَيُغْفَرُ لَنَا ۚ وَاِنْ يَّاْتِهِمْ عَرَضٌ مِّثْلُهٗ
يَاْخُذُوْهُ ۚ اَلَمْ يُؤْخَذْ عَلَيْهِمْ مِّيْثَاقُ الْكِتٰبِ اَنْ لَّا يَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ وَدَرَسُوْا مَا فِيْهِ ۚ
وَالدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ ۚ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝

व इज़् त-अज़्ज़-न रब्बु-क लयब्अ़सन्-न अ़लैहिम् इला यौमिल्-क़ियामति मंय्यसूमुहुम् सूअल्-अ़ज़ाबि, इन्-न रब्ब-क ल-सरीअुल्-अ़िक़ाबि व इन्नहू	और उस वक़्त को याद करो जब ख़बर कर दी थी तेरे रब ने कि ज़रूर भेजता रहेगा यहूद पर क़ियामत के दिन तक ऐसे शख़्स को कि दिया करे उनको बुरा अ़ज़ाब, बेशक तेरा रब जल्द अ़ज़ाब करने वाला है, और वह बख़्शने वाला मेहरबान

ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (167) व क़त्तअ्नाहुम् फ़िल्अर्ज़ि उ-ममन् मिन्हुमुस्सालिहू-न व मिन्हुम् दू-न ज़ालि-क व बलौनाहुम् बिल्ह-सनाति वस्सय्यिआति लअ़ल्लहुम् यर्जिअून (168) फ़-ख़-ल-फ़ मिम्-बअ्दिहिम् ख़ल्फ़ुंव्वरिसुल्-किता-ब यअ्ख़ुज़ू-न अ़-र-ज़ हाज़ल्-अद्ना व यकूलू-न सयुग़्फ़रु लना व इंय्यअ्तिहिम् अ़-रज़ुम् मिस्लुहू यअ्ख़ुज़ूहु, अलम् युअ्ख़ज़् अ़लैहिम् मीसाक़ुल्-किताबि अल्ला यक़ूलू अ़लल्लाहि इल्लल्हक़्-क़ व द-रसू मा फ़ीहि, वद्दारुल्-आख़िरतु ख़ैरुल्-लिल्लज़ी-न यत्तक़ू-न, अ-फ़ला तअ्क़िलून (169)	है। (167) और जुदा-जुदा कर दिया हमने उनको मुल्क में फ़िर्के-फ़िर्के, बाज़े उनमें नेक और बाज़े और तरह के, और हमने उनकी आज़माईश की ख़ूबियों में और बुराईयों में ताकि वे फिर आयें। (168) फिर उनके पीछे आये नालायक़ जो वारिस बने किताब के, ले लेते हैं असबाब इस अदना ज़िन्दगानी का और कहते हैं कि हमको माफ़ हो जायेगा, और अगर ऐसा ही असबाब उनके सामने फिर आये तो उसको ले लें, क्या उनसे किताब में अ़हद नहीं लिया गया कि न बोलें अल्लाह पर सिवाय सच के, और उन्होंने पढ़ा है जो कुछ उसमें लिखा है, और आख़िरत का घर बेहतर है डरने वालों के लिये, क्या तुम नहीं समझते। (169)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त याद करना चाहिए) जब आपके रब ने (बनी इस्राईल के नबियों के द्वारा) यह बात बतला दी कि वह इन (यहूद) पर (इनकी गुस्ताख़ियों और नाफ़रमानियों की सज़ा में) क़ियामत (के क़रीब) तक ऐसे (किसी-न-किसी) शख़्स को ज़रूर मुसल्लत करता रहेगा जो इनको सख़्त सज़ाओं (ज़िल्लत व रुस्वाई और ताबेदारी व अधीनता) की तकलीफ़ पहुँचाता रहेगा (चुनाँचे मुद्दत से यहूदी किसी न किसी हुकूमत के महकूम व दबाव के नीचे ही चले आते हैं) बेशक आपका रब वाक़ई (जब चाहे) जल्द ही सज़ा दे देता है, और बेशक वह (अगर कोई बाज़ आ जाये तो) बड़ी ही मग़फ़िरत (और) बड़ी ही रहमत वाला (भी) है।

और हमने दुनिया में उनकी अलग-अलग जमाअ़तें कर दीं, (चुनाँचे) बाज़े उनमें नेक (भी) थे और बाज़े उनमें और तरह के थे (यानी बुरे), और हम (ने उन बुरों को भी अपनी इनायत और तरबियत व इस्लाह के सामान जमा करने से कभी बेकार नहीं छोड़ा बल्कि हमेशा) उनको ख़ुशहालियों (सेहत और मालदारी) और बदहालियों (बीमारी और तंगदस्ती) से आज़माते रहे कि

शायद (इसी से) बाज़ आ जाएँ (क्योंकि कभी नेकियों और अच्छाईयों से तवज्जोह व रुचि पैदा हो जाती है और कभी बुराईयों से डरा दिया जाता है। यह हाल तो उनके पूर्वजों का हुआ) फिर उन (पहलों) के बाद ऐसे लोग उनके जानशीन हुए कि किताब (यानी तौरात) को (तो) उनसे हासिल किया (लेकिन उसके साथ ही हरामख़ोर ऐसे हैं कि किताब के अहकाम के बदले में) इस ज़लील दुनिया का माल व सामान (अगर मिले तो बेतकल्लुफ़ उसको) ले लेते हैं, और (इस गुनाह को मामूली समझकर) कहते हैं कि हमारी ज़रूर मग़फ़िरत हो जायेगी (क्योंकि हम अल्लाह के प्यारे हैं, ऐसे गुनाह हमारी मक़बूलियत के सामने क्या चीज़ हैं) हालाँकि (अपनी बेबाकी और गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का समझने पर अड़े हुए हैं यहाँ तक कि) अगर उनके पास (फिर) वैसा ही (दीन बेचने के बदले में) माल व सामान आने लगे तो (इसी तरह बेधड़क तौर पर फिर) उसको ले लेते हैं (और गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का समझना खुद कुफ़्र है, जिस पर मग़फ़िरत की संभावना व गुमान भी नहीं, कहाँ यह कि मग़फ़िरत का यक़ीन ज़ाहिर किया जाये। चुनाँचे आगे यही इरशाद है कि) क्या उनसे (इस) किताब (के इस मज़मून) का अ़हद नहीं लिया गया कि ख़ुदा की तरफ़ सिवाय हक़ (और वास्तविक) बात के और किसी बात की निस्बत न करें? (मतलब यह है कि जब किसी आसमानी किताब को माना जाता है तो उसके मायने यह होते हैं कि हम उसके सब मज़ामीन मानेंगे) और (अ़हद भी कोई संक्षिप्त अ़हद नहीं लिया गया जिसमें शुब्हा व गुमान हो कि शायद इस ख़ास मज़मून का उस किताब में होना उनको मालूम न होगा बल्कि तफ़सीली अ़हद लिया गया, चुनाँचे) उन्होंने उस (किताब) में जो कुछ (लिखा) था उसको पढ़ (भी) लिया, (जिससे वह शुब्हा व गुमान भी जाता रहा, फिर भी ये ऐसी बड़ी बात का दावा करते हैं कि बावजूद गुनाह व नाफ़रमानी को हल्का और बेअसर समझने के मग़फ़िरत का एतिक़ाद किये हुए हैं जो कि अल्लाह तआ़ला पर पूरी तरह तोहमत है) और (उन्होंने यह सब क़िस्सा दुनिया के लिये किया, बाक़ी) आख़िरत वाला घर उन लोगों के लिये (इस दुनिया से) बेहतर है जो (इन बुरे अ़क़ीदों और आमाल से) परहेज़ रखते हैं। क्या फिर (ऐ यहूदियो!) तुम (इस बात को) नहीं समझते?

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों से पहली आयतों में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का बक़ीया क़िस्सा ज़िक्र करने के बाद उनकी उम्मत (यहूद) के ग़लत काम करने वाले लोगों की निंदा और उनके बुरे अन्जाम का बयान आया है, इन आयतों में भी उनकी सज़ा और बुरे अन्जाम का ज़िक्र है।

पहली आयत में उनकी दो सज़ाओं का बयान है जो दुनिया ही में उन पर मुसल्लत कर दी गयी हैं- अव्वल यह कि क़ियामत तक अल्लाह तआ़ला उन पर किसी ऐसे शख़्स को ज़रूर मुसल्लत करता रहेगा जो उनको सख़्त सज़ा देता रहे, और ज़िल्लत व रुस्वाई में मुब्तला रखे। चुनाँचे उस वक़्त से आज तक हमेशा यहूदी हर जगह मग़लूब, दूसरों के क़हर का शिकार और दूसरों के महकूम (ताबे) रहे। आजकल की इस्राईली हुकूमत से इस पर शुब्हा इसलिये नहीं हो

सकता कि जानने वाले जानते हैं कि दर हक़ीक़त आज भी इस्राईल की न अपनी कोई ताक़त है न हुकूमत, वे रूस और अमेरिका की इस्लाम-दुश्मन साज़िश के नतीजे में उन्हीं की एक छावनी से ज़्यादा कोई हैसियत नहीं रखते, और आज भी वे बदस्तूर उन्हीं के हुक्म के ताबे और ताक़त के अधीन हैं, जिस दिन और जिस वक़्त ये दोनों उसकी इमदाद से अपना हाथ खींच लें उसी दिन इस्राईल का वजूद दुनिया से ख़त्म हो सकता है।

दूसरी आयत में यहूदियों पर एक और सज़ा का ज़िक्र है, जो इसी दुनिया में उनको दी गयी, वह यह कि उनकी आबादी दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बिखरी हुई और जुदा-जुदा हो गयी, किसी जगह एक मुल्क में उनका इज्तिमा न रहा "व क़त्तअ्नाहुम् फ़िल्अरज़ि उ-ममा" का यही मतलब है। 'क़त्तअ्ना' मस्दर 'तक़्तीउन्' से निकला है, जिसके मायने हैं 'टुकड़े-टुकड़े कर देना' और "उमम" 'उम्मत' की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं 'एक जमाअ़त' या 'एक फ़िर्क़ा'। मतलब यह है कि हमने यहूद की क़ौम के टुकड़े-टुकड़े ज़मीन के विभिन्न हिस्सों में बिखेर दिये।

इससे मालूम हुआ कि किसी क़ौम का एक जगह इकट्ठा और अक्सरियत में होना ख़ुदा तआ़ला का इनाम व एहसान है, और उसका विभिन्न और अनेक जगहों में बिखर जाना एक तरह का अ़ज़ाबे इलाही। मुसलमानों पर हक़ तआ़ला का यह इनाम हमेशा रहा है और इन्शा-अल्लाह क़ियामत तक रहेगा कि वे जिस जगह रहे उनकी एक ज़बरदस्त सामूहिक क़ुव्वत वहाँ पैदा हो गयी। मदीना तय्यिबा से यह सिलसिला शुरू हुआ और पूरब व पश्चिम में इसी कैफ़ियत के साथ हैरत-अंगेज़ तरीक़े पर फैला। दूर पूरब में पाकिस्तान, इण्डोनेशिया वग़ैरह मुस्तक़िल इस्लामी हुकूमतें इसी के नतीजे में बनीं। इसके मुक़ाबले में यहूदियों का हाल हमेशा यह रहा कि मुख़्तलिफ़ मुल्कों में बिखरे हुए रहे। मालदार कितने भी हों मगर ताक़त व इख़्तियार उनके हाथ में न आया।

चन्द साल से फ़िलिस्तीन के एक हिस्से में उनके जमा होने और दिखावे की सत्ता व ताक़त से धोखा न खाया जाये, एकत्र होना तो उनका इस जगह में आख़िरी ज़माने में होना ही चाहिये था क्योंकि अल्लाह के सच्चे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सही हदीसों में क़ियामत के नज़दीक होने के लिये यह ख़बर दी गयी है कि आख़िर ज़माने में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम नाज़िल होंगे, ईसाई सब मुसलमान हो जायेंगे और यहूदियों से जिहाद करके उनको क़त्ल करेंगे। ख़ुदा का मुजरिम वारंट और पुलिस के ज़रिये पकड़कर नहीं बुलाया जाता बल्कि क़ुदरती असबाब ऐसे जमा कर देते हैं कि मुजरिम अपने पाँव चलकर हज़ारों कोशिशें करके अपने क़त्ल के स्थान पर पहुँचता है। हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का उतरना मुल्के शाम के दमिश्क़ में होने वाला है, यहूदियों के साथ लड़ाई और मुक़ाबला भी यहीं होना है, ताकि ईसा अ़लैहिस्सलाम के लिये उनका ख़ात्मा कर देना आसान हो। क़ुदरत ने दुनिया की पूरी उम्र में तो यहूदियों को मुख़्तलिफ़ मुल्कों में बिखेरे रखकर महकूमियत और बेक़द्री का अ़ज़ाब चखाया और आख़िर ज़माने में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम की आसानी के लिये उनको उनके क़त्ल होने के स्थान में जमा फ़रमा दिया, इसलिये यह एकत्र होना इस अ़ज़ाब के विरुद्ध नहीं।

रहा उनकी मौजूदा हुकूमत और दिखावे के झूठे इक्तिदार (सत्ता व ताक़त) का मामला सो यह एक ऐसा धोखा है जिस पर आज की सभ्य दुनिया ने अगरचे बहुत ख़ूबसूरत मुलम्मे का पर्दा चढ़ाया हुआ है लेकिन दुनिया की राजनीति से बाख़बर कोई इनसान एक मिनट के लिये भी इससे धोखा नहीं खा सकता, क्योंकि आज जिस ख़ित्ते को इस्राईली हुकूमत का नाम दिया जाता है वह दर हक़ीक़त रूस, अमेरिका और इंग्लैण्ड की एक संयुक्त छावनी से ज़्यादा कोई हैसियत नहीं रखती, वह सिर्फ़ इन हुकूमतों की इमदाद से ज़िन्दा है, और इनके फ़रमान के ताबे रहने ही में उसके वजूद का राज़ छुपा है। ज़ाहिर है कि इस असली ग़ुलामी को दिखावे की हुकूमत का नाम दे देने से उस क़ौम को कोई इक्तिदार हासिल नहीं हो जाता। क़ुरआने करीम ने उनके बारे में क़ियामत तक के लिये रुस्वाई और ज़िल्लत के जिस अ़ज़ाब का ज़िक्र किया है वह आज भी बदस्तूर मौजूद है जिसका ज़िक्र इससे पहली आयत में इन अलफ़ाज़ के साथ आया है:

وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّكَ لَيَبْعَثَنَّ عَلَيْهِمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَنْ يَّسُوْمُهُمْ سُوْٓءَ الْعَذَابِ.

यानी जबकि आपके रब ने पुख़्ता इरादा कर लिया कि उन लोगों पर किसी ऐसी ताक़त को क़ियामत तक मुसल्लत कर देगा जो उनको बुरा अ़ज़ाब चखाये।

जैसा कि शुरू में सुलैमान अ़लैहिस्सलाम के हाथ से, फिर बुख़्ते नस्सर के ज़रिये और आख़िर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ से और शेष हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़रिये हर जगह से ज़िल्लत व रुस्वाई के साथ उनका निकाला जाना मशहूर व मारूफ़ और इतिहास की मान्यता प्राप्त वास्तविकताओं में से है।

इस आयत का दूसरा जुमला यह है:

مِنْهُمُ الصّٰلِحُوْنَ وَمِنْهُمْ دُوْنَ ذٰلِكَ.

यानी उन लोगों में कुछ लोग नेक हैं और कुछ दूसरी तरह के। दूसरी तरह से मुराद काफ़िर, बुरे आमाल वाले और बदकार लोग हैं। मतलब यह है कि यहूदियों में सब एक ही तरह के लोग नहीं, कुछ नेक भी हैं। इससे मुराद वे लोग हैं जो तौरात के ज़माने में तौरात के हुक्मों के पूरे पाबन्द रहे, न उनकी नाफ़रमानी में मुब्तला हुए न किसी ग़लत मायने बयान करने और अहकाम में रद्दोबदल करने के पीछे लगे।

और यह भी हो सकता है कि इससे मुराद वे हज़रात हों जो क़ुरआन नाज़िल होने के बाद क़ुरआन के ताबे हो गये, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान ले आये। इसके विपरीत वे लोग हैं जिन्होंने तौरात को आसमानी किताब मानने के बावजूद उसके ख़िलाफ़ अ़मल किया या उसके अहकाम में रद्दोबदल करके अपनी आख़िरत को दुनिया की गन्दी चीज़ों के बदले में बेच डाला।

आयत के आख़िर में इरशाद है:

وَبَلَوْنٰهُمْ بِالْحَسَنٰتِ وَالسَّيِّاٰتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ.

यानी हमने अच्छी बुरी हालतों से उनका इम्तिहान लिया ताकि वे अपनी हरकतों से बाज़ आ

जायें। अच्छी हालतों से मुराद उनको माल व दौलत के ज़ख़ीरे और ऐश व आराम के सामान देना है, और बुरी हालतों से मुराद या तो ज़िल्लत व रुस्वाई के वो वाक़िआत हैं जो हर ज़माने में मुख़्तलिफ़ सूरतों से पेश आते रहे और या किसी वक़्त का अकाल और ग़रीबी व तंगदस्ती जो उन पर डाली गयी वह मुराद है। बहरहाल मतलब यह है कि इनसान की फ़रमाँबरदारी या नाफ़रमानी का इम्तिहान लेने के दो ही तरीक़े हैं, दोनों इस्तेमाल कर लिये गये। एक यह कि एहसानात व इनामात करके उसकी आज़माईश की जाये कि वे एहसान करने वाले और इनाम देने वाले के शुक्रगुज़ार व फ़रमाँबरदार होते हैं या नहीं, दूसरे यह कि उनको मुख़्तलिफ़ तकलीफ़ों और परेशानियों में मुब्तला करके इसकी आज़माईश की जाये कि वे अपने रब की तरफ़ रुजू होते और अपने बुरे आमाल से तौबा करते हैं या नहीं। लेकिन यहूदी क़ौम इन दोनों इम्तिहानों में फ़ेल हो गयी।

जब अल्लाह तआ़ला ने उन पर नेमत के दरवाज़े खोले, माल व दौलत की फ़रावानी अ़ता फ़रमाई तो कहने लगेः

اِنَّ اللّٰهَ فَقِيْرٌ وَّنَحْنُ اَغْنِيَآءُ.

यानी (अल्लाह की पनाह) अल्लाह तआ़ला फ़क़ीर हैं और हम ग़नी। और जब उनको ग़ुर्बत व तंगदस्ती से आज़माया गया तो कहने लगेः

يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ.

यानी अल्लाह का हाथ तंग हो गया।

फ़ायदे

इस आयत से एक फ़ायदा तो यह हासिल हुआ कि किसी क़ौम का एक जगह इकट्ठा व एकत्र होना अल्लाह तआ़ला की नेमत है, और उसका बिखर जाना अ़ज़ाब। दूसरा फ़ायदा यह हासिल हुआ कि इस दुनिया की राहत व मुसीबत और ख़ुशी व ग़म दर हक़ीक़त ख़ुदावन्दी इम्तिहान के विभिन्न पर्चे हैं जिनके ज़रिये उसके ईमान और ख़ुदा-परस्ती की आज़माईश की जाती है। न यहाँ की तकलीफ़ कुछ ज़्यादा रोने धोने की चीज़ है न कोई राहत ख़ुशी में मस्त हो जाने और इतराने का सामान। अन्जाम पर नज़र रखने वाले अ़क्लमन्द के लिये ये दोनों चीज़ें क़ाबिले तवज्जोह नहीं। ख़ुलासा यह है किः

न शादी दाद सामाने न ग़म आवुर्द नुक़साने
ब-पेशे हिम्मते मा हर चे आमद बूद मेहमाने

यानी न कोई फ़ायदा हमें ख़ुशी में मस्त कर सकता है और न कोई नुक़सान रंज व ग़म का कारण बन सकता है। हम अपनी हिम्मत व जुर्रत से हर पेश आने वाली हालत का ज़िन्दा दिली से सामना करते हैं। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

तीसरी आयत में इरशाद हैः

فَخَلَفَ مِنْ ۢ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ وَّرِثُوا الْكِتٰبَ يَاْخُذُوْنَ عَرَضَ هٰذَا الْاَدْنٰى وَيَقُوْلُوْنَ سَيُغْفَرُ لَنَا وَاِنْ يَّاْتِهِمْ عَرَضٌ مِّثْلُهٗ يَاْخُذُوْهُ.

इसमें पहला लफ़्ज़ 'ख़-ल-फ़' ख़िलाफ़त मस्दर से निकला हुआ माज़ी का सीग़ा है, जिसके मायने हैं क़ायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा हो गये। और दूसरा लफ़्ज़ 'ख़ल्फ़ुन' मस्दर है जो क़ायम-मक़ाम और ख़लीफ़ा के मायने में इस्तेमाल होता है। अकेले और बहुत सारे अफ़राद दोनों के लिये बराबर तौर पर बोला जाता है। लेकिन 'ख़ल्फ़ुन' अक्सर बुरे-ख़लीफ़ा (बुरे जानशीन) के लिये इस्तेमाल होता है, जो अपने बड़ों के तरीक़े के ख़िलाफ़ बुराईयों में मुब्तला हो, और 'ख़-लफ़' इसके विपरीत नेक और क़ाबिल ख़लीफ़ा को कहा जाता है, जो अपने बड़ों के नक़्शे क़दम पर चले और उनके मक़सद और उद्देश्य को पूरा करे। इस लफ़्ज़ का अधिकतर इस्तेमाल इसी तरह है, कहीं कहीं इसके ख़िलाफ़ भी इस्तेमाल हुआ है।

وَرِثُوا الْكِتٰبَ.

'वरिसू' विरासत से निकला है। वह चीज़ जो मरने वालों के बाद ज़िन्दा रहने वालों को मिलती है उसको मीरास या विरासत कहा जाता है। मायने यह हैं कि किताब तौरात इन लोगों को अपने बड़ों से विरासत में मिल गयी, यानी उनके मरने के बाद इन लोगों के हाथ आई।

लफ़्ज़ "अ-र-ज़" सामान के मायने में बोला जाता है जो नक़द के बदले में ख़रीदा जाता है और कभी माल के आ़म मायने में भी इस्तेमाल होता है चाहे नक़द हो या सामान। तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस जगह यही आ़म मायने मुराद हैं, और इस जगह "माल" को लफ़्ज़ "अ़-र-ज़" से ताबीर करने में इसकी तरफ़ इशारा है कि दुनिया का माल कितना ही हो, नापायेदार और आ़रज़ी (अस्थायी) है, क्योंकि 'अ़रज़' का लफ़्ज़ असल में 'जौहर' के मुक़ाबले में नापायेदार चीज़ के लिये प्रयोग होता है जिसका अपना कोई मुस्तक़िल वजूद न हो बल्कि वह अपने वजूद में दूसरी किसी चीज़ के ताबे हो। इसी लिये 'आ़रिज़' का लफ़्ज़ बादल के मायने में आता है, क्योंकि उसका वजूद क़ायम रहने वाला नहीं, जल्द ख़त्म हो जाता है। क़ुरआने करीम में "हाज़ा आ़रिज़ुम् मुम्तिरुना" इसी मायने के लिये आया है।

هٰذَا الْاَدْنٰى.

इसमें लफ़्ज़ 'अदना' 'दुनुवुन' निकटता के मायने में भी कहा जा सकता है। इस सूरत में 'अदना' के मायने बहुत क़रीब के हो जायेंगे, इसी का स्त्री लिंग 'दुन्या' है, जिसके मायने क़रीब के हैं। आख़िरत के मुक़ाबले में यह जहान इनसान से ज़्यादा क़रीब है इसलिये इसको अदना और दुनिया कहा जाता है। और दूसरा शुब्हा व संभावना यह भी है कि यह लफ़्ज़ 'दनाअत' से निकला हो जिसके मायने ज़िल्लत के हैं, तो इसके मायने ज़लील व हक़ीर के हो जायेंगे। दुनिया और इसके सब सामान आख़िरत के मुक़ाबले में हक़ीर व ज़लील हैं इसलिये इसको 'अदना' और 'दुनिया' कहा गया।

आयत के मायने यह हैं कि पहले दौर के यहूदियों में तो दो क़िस्म के लोग थे, कुछ नेक सालेह, तौरात की शरीअ़त के पाबन्द और कुछ नाफ़रमान गुनाहगार, मगर उनके बाद जो लोग उनकी नस्ल में उनके जानशीन, क़ायम-मक़ाम और तौरात के वारिस बने, उन्होंने यह हरकत इख़्तियार की कि अल्लाह की किताब को तिजारत का माल बना लिया कि ग़र्ज़ वालों से रिश्वत लेकर अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल करके उसको उनके मतलब के मुवाफ़िक़ बनाने लगे।

وَيَقُوْلُوْنَ سَيُغْفَرُ لَنَا.

इस पर और ज़्यादा जुर्रत यह कि यह कहते हैं कि अगरचे यह हमने गुनाह किया है मगर यह गुनाह हमारा बख़्श दिया जायेगा। हक़ तआ़ला ने उनकी ग़लती पर अगले जुमले में इस तरह तंबीह फ़रमाई:

وَاِنْ يَّاْتِهِمْ عَرَضٌ مِّثْلُهٗ يَاْخُذُوْهُ.

यानी उनका हाल यह है कि अगर इस वक़्त भी उनको अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल और कमी-बेशी करने के बदले में कोई माल मिलने लगे तो ये अब भी माल लेकर रद्दोबदल करने से बाज़ न आयें। मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला की मग़फ़िरत और बख़्शिश सही और हक़ है मगर उन्हीं लोगों के लिये जो अपने किये पर शर्मिन्दा हों और आगे के लिये उसके छोड़ने का पुख़्ता इरादा कर लें, जिसका पारिभाषिक नाम **तौबा** है।

ये लोग अपने जुर्म पर अड़े और जमे रहने के बावजूद मग़फ़िरत के उम्मीदवार हैं हालाँकि इस वक़्त इनको पैसा मिले तो रद्दोबदल करने में कोताही न करें। गुनाह पर हठधर्मी करते हुए मग़फ़िरत की उम्मीद रखना ख़ुद को धोखा देने से ज़्यादा कोई हक़ीक़त नहीं रखता।

क्या उन लोगों से तौरात में यह अ़हद नहीं लिया गया था कि वे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मन्सूब करके हक़ के सिवा कोई बात न कहेंगे और उन लोगों ने इस मुआ़हदे को तौरात में पढ़ा पढ़ाया भी है। यह सब उनकी अन्जाम से लापरवाही और उसके बारे में न सोचना है। बात यह है कि आख़िरत का घर ही परहेज़गारों के लिये बेहतरीन और हमेशा रहने वाली दौलत है, क्या वे इतनी बात को नहीं समझते?

وَالَّذِيْنَ يُمَسِّكُوْنَ بِالْكِتٰبِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ ۭ اِنَّا لَا نُضِيْعُ اَجْرَ الْمُصْلِحِيْنَ ۝ وَاِذْ نَتَقْنَا الْجَبَلَ فَوْقَهُمْ كَاَنَّهٗ ظُلَّةٌ وَّظَنُّوْٓا اَنَّهٗ وَاقِعٌۢ بِهِمْ ۚ خُذُوْا مَآ اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ وَّاذْكُرُوْا مَا فِيْهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝

वल्लज़ी-न युमस्सिकू-न बिल्किताबि व अक़ामुस्सला-त, इन्ना ला नुज़ीअु अज्रल्-मुस्लिहीन (170) व इज़्	और जो लोग ख़ूब पकड़ रहे हैं किताब को और क़ायम रखते हैं नमाज़ को, बेशक हम ज़ाया न करेंगे सवाब नेकी

न-तक़्नल्-ज-ब-ल फ़ौक़हुम् क-अन्नहू ज़ुल्लतुंव्-व ज़न्नू अन्नहू वाक़िअुम् बिहिम्, ख़ुज़ू मा आतैनाकुम् बिक़ुव्वतिंव्वज़्कुरू मा फ़ीहि लअ़ल्लकुम् तत्तक़ून (171) ✿	वालों का। (170) और जिस वक़्त उठाया हमने पहाड़ उनके ऊपर छज्जे की तरह और डरे कि वह उन पर गिरेगा, हमने कहा पकड़ो जो हमने तुमको दिया है ज़ोर से, और याद रखो जो उसमें है ताकि तुम बचते रहो। (171) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (उनमें से) जो लोग किताब (यानी तौरात) के पाबन्द हैं (जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाने का भी हुक्म है, पस पाबन्दी यही है कि मुसलमान हो गये) और (अ़क़ीदों के साथ नेक आमाल के भी पाबन्द हैं, चुनाँचे) नमाज़ की पाबन्दी करते हैं, हम ऐसे लोगों का जो अपना (इस तरह) सुधार और दुरुस्ती करें सवाब ज़ाया न करेंगे। और (वह वक़्त भी ज़िक्र के क़ाबिल है) जब हमने पहाड़ को उठाकर छत की तरह उन (बनी इस्राईल) के ऊपर (सीध में लटका हुआ) कर दिया और उनको यक़ीन हुआ कि अब उन पर गिरा (और उस वक़्त) कहा कि (जल्दी) क़ुबूल करो जो किताब हमने तुमको दी है (यानी तौरात, और) मज़बूती के साथ (क़ुबूल करो) और याद रखो जो अहकाम उस (किताब) में हैं, जिससे उम्मीद है कि तुम परहेज़गार बन जाओ।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में एक अ़हद व इक़रार का ज़िक्र था जो ख़ुसूसी तौर पर बनी इस्राईल के उलेमा से तौरात के बारे में लिया गया था कि उसमें कोई उलट-फेर और तब्दीली न करेंगे और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ सिवाय हक़ और सही बात के कोई चीज़ मन्सूब न करेंगे। और यह बात पहले बयान हो चुकी थी कि बनी इस्राईल के इन उलेमा ने अ़हद व इक़रार तोड़ा और ग़र्ज़ वालों से रिश्वतें लेकर तौरात के अहकाम बदले और उनकी ग़र्ज़ के मुताबिक़ करके बतलाये। अब यह आयत भी इसी मज़मून की पूरक है कि बनी इस्राईल के उलेमा सब के सब ऐसे नहीं, उनमें से कुछ वे भी हैं जिन्होंने तौरात के अहकाम को मज़बूती से थामा और ईमान के साथ अ़मल के भी पाबन्द हुए, और नमाज़ को पूरे आदाब के साथ क़ायम किया, ऐसे लोगों के बारे में फ़रमाया कि अपना सुधार करने वालों का अल्लाह तआ़ला अज्र ज़ाया नहीं किया करते, तो जिन लोगों ने ईमान व अ़मल के दोनों फ़राईज़ अदा करके अपनी इस्लाह (सुधार) कर ली उनका अज्र ज़ाया नहीं हो सकता।

इस आयत में चन्द फ़ायदे क़ाबिले ग़ौर हैं- अव्वल यह कि किताब से मुराद इसमें वही किताब है जिसका ज़िक्र पहले आ चुका है यानी तौरात, और यह भी मुम्किन है कि हर

आसमानी किताब तौरात, इंजील, क़ुरआन सब मुराद हों।

दूसरे यह कि इस आयत से मालूम हुआ कि अल्लाह की किताब को सिर्फ़ अपने पास एहतियात और सम्मान के साथ रख लेने से कोई मक़सद हासिल नहीं होता बल्कि उसके अहकाम की पाबन्दी मतलूब है, शायद इसी की तरफ़ इशारा करने के लिये इस आयत में किताब के लेने या पढ़ने का ज़िक्र नहीं, वरना 'यअ्ख़ुज़ू-न' या 'यक़्रऊ-न' का लफ़्ज़ होता, इसकी जगह 'युमस्सिकू-न' का लफ़्ज़ इख़्तियार किया गया जिसके मायने हैं मज़बूती के साथ पूरी तरह थामना, यानी उसके अहकाम पर अ़मल करना।

तीसरी बात ध्यान के क़ाबिल यह है कि यहाँ तौरात के अहकाम पर अ़मल करने और पाबन्दी का ज़िक्र था और तौरात के अहकाम सैंकड़ों हैं, उनमें से इस जगह सिर्फ़ नमाज़ के क़ायम करने के ज़िक्र पर बस किया गया। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि किताबुल्लाह के अहकाम में सबसे ज़्यादा अहम और अफ़ज़ल व आला नमाज़ है, और यह कि नमाज़ की पाबन्दी अल्लाह के हुक्मों की पाबन्दी की ख़ास निशानी और पहचान भी है, कि इसके ज़रिये फ़रमाँबरदार और नाफ़रमान की पहचान होती है और इसकी पाबन्दी में यह ख़ासियत भी है कि जो नमाज़ का पाबन्द हो गया उसके लिये अल्लाह के दूसरे अहकाम की पाबन्दी भी आसान हो जाती है और जिसने नमाज़ की पाबन्दी न की उससे दूसरे अहकाम की पाबन्दी भी न हो सकेगी, जैसा कि सही हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि नमाज़ दीन का सुतून है जिस पर इसकी इमारत खड़ी हुई है, जिसने इस सुतून को क़ायम कर लिया उसने दीन को क़ायम कर लिया और जिसने इसको गिरा दिया उसने पूरे दीन की इमारत गिरा दी।

इसी लिये इस आयत में "वल्लज़ी-न युमस्सिकू-न बिल्किताबि" के बाद "व अक़ामुस्सला-त" फ़रमाकर यह बतला दिया कि किताब को मज़बूती के साथ थामने वाला और इसकी पाबन्दी करने वाला सिर्फ़ उसी को समझा जायेगा जो नमाज़ को उसके आदाब व शराईत के साथ पाबन्दी से अदा करे, और जो नमाज़ में कोताही करे वह कितने ही वज़ीफ़े पढ़े या तपस्याएँ करे वह अल्लाह तआ़ला के नज़दीक कुछ नहीं, अगरचे उससे कश्फ़ व करामत (चमत्कारों और अ़जीब-अ़जीब बातें और वाक़िआ़त) का सदूर भी होता हो।

यहाँ तक बनी इस्राईल को उनके अ़हद तोड़ने और तौरात के अहकाम में तब्दीली करने पर तंबीह का बयान था, इसके बाद दूसरी आयत में बनी इस्राईल ही के एक ख़ास अ़हद का ज़िक्र है जो उनसे तौरात के अहकाम की पाबन्दी के लिये डरा-धमकाकर गोया ज़बरदस्ती लिया गया था, जिसका ज़िक्र सूरः ब-क़रह में भी आ चुका है।

इस आयत में लफ़्ज़ "नतक़्ना" "नत्क़" से बना है जिसके मायने खींचने और उठाने के हैं। सूरः ब-क़रह में इसी वाक़िए का ज़िक्र लफ़्ज़ "रफ़अ़्ना" से किया गया है, इसलिये यहाँ भी हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने "नतक़्ना" की तफ़सीर 'रफ़अ़्ना' से फ़रमाई है।

और लफ़्ज़ "ज़ुल्लत" 'ज़िल्ल' से निकला है जिसके मायने साये के हैं, यहाँ इसके मायने सायबान के किये गये हैं, मगर लफ़्ज़ सायबान आ़म बोलचाल में ऐसी चीज़ के लिये बोला जाता

है जिसका साया सर पर पड़ता हो, मगर वह किसी सतून पर क़ायम हो, और इस वाक़िए में पहाड़ उनके सर पर लटका दिया गया था, सायबान की सूरत में न था, इसी लिये इसको मिसाल देने के हर्फ़ के साथ ज़िक्र किया गया।

आयत के मायने यह हैं कि वह वक़्त भी याद करने के क़ाबिल है जबकि हमने बनी इस्राईल के सरों पर पहाड़ को उठाकर लटका दिया जिससे वे समझने लगे कि अब हम पर पहाड़ गिरने ही वाला है। इस हालत में उनसे कहा गयाः

خُذُوْا مَآ اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ

यानी मज़बूत पकड़ो उन अहकाम को जो हमने तुम्हें दिये हैं और याद रखो तौरात की हिदायतों को, ताकि तुम बुरे आमाल व अख़्लाक़ से बाज़ आ जाओ।

इसका क़िस्सा यह है कि जब बनी इस्राईल की इच्छा और फ़रमाईश के मुताबिक़ हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह तआ़ला से किताब व शरीअ़त माँगी और हुक्म के अनुसार इस सिलसिले में चालीस रातों का एतिकाफ़ तूर पहाड़ पर करने के बाद अल्लाह तआ़ला की यह किताब मिली और बनी इस्राईल को सुनाई तो उसमें बहुत से अहकाम ऐसे पाये जो उनकी तबीयत और सहूलत के ख़िलाफ़ थे, उनको सुनकर वे इनकार करने लगे कि हमसे तो इन अहकाम पर अ़मल नहीं हो सकता। उस वक़्त हक़ तआ़ला ने जिब्रीले अमीन को हुक्म दिया, उन्होंने तूर पहाड़ को उस बस्ती के ऊपर लटका दिया जिसमें बनी इस्राईल आबाद थे। उसका रक़्बा तारीख़ी रिवायतों में तीन मुरब्बा (चौकोर) मील बयान किया गया है, इस तरह उन लोगों ने मौत को अपने सामने खड़ा देखा तो सब सज्दे में गिर गये और तौरात के हुक्मों की पाबन्दी का अ़हद कर लिया, लेकिन इसके बावजूद फिर बार-बार ख़िलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी) ही करते रहे।

'दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं'

इसका सही मतलब और शुब्हे का जवाब

यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि क़ुरआने करीम का आ़म ऐलान हैः

لَآ اِكْرَاهَ فِى الدِّيْنِ

यानी दीन में ज़बरदस्ती और मजबूर करना नहीं, कि किसी को ज़बरदस्ती दीने हक़ के क़ुबूल करने पर मजबूर किया जाये, और इस वाक़िए से ज़ाहिर होता है कि बनी इस्राईल को दीन के क़ुबूल करने पर मजबूर किया गया।

लेकिन ज़रा ग़ौर किया जाये तो फ़र्क़ खुला हुआ है कि किसी ग़ैर-मुस्लिम को इस्लाम के क़ुबूल करने पर कभी कहीं मजबूर नहीं किया गया, लेकिन जो शख़्स मुसलमान होकर इस्लामी अ़हद व इक़रार का पाबन्द हो गया उसके बाद वह अगर इस्लामी अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने लगे तो उस पर ज़रूर जबर किया जायेगा और ख़िलाफ़वर्ज़ी की सूरत में सज़ा

दी जायेगी। इस्लामी सज़ाओं में बहुत सी सज़ायें ऐसे लोगों के लिये मुक़र्रर हैं। इससे मालूम हुआ कि "ला इक्रा-ह फ़िद्दीनि" (दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं) का ताल्लुक़ ग़ैर-मुस्लिमों से है कि उनको ज़बरदस्ती मुसलमान नहीं बनाया जायेगा, और बनी इस्राईल के इस वाक़िए में किसी को इस्लाम क़ुबूल करने के लिये मजबूर नहीं किया गया बल्कि उन लोगों ने मुसलमान होने के बावजूद तौरात के अहकाम की पाबन्दी से इनकार कर दिया, इसलिये उन पर ज़ोर-ज़बरदस्ती करके पाबन्दी कराना "ला इक्रा-ह फ़िद्दीनि" (दीन में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं) के ख़िलाफ़ नहीं।

وَاِذْ اَخَذَ رَبُّكَ مِنْۢ بَنِيْٓ اٰدَمَ مِنْ ظُهُوْرِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَاَشْهَدَهُمْ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ ۚ اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ ۭ قَالُوْا بَلٰي ۚۛ شَهِدْنَا ۚۛ اَنْ تَقُوْلُوْا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّا كُنَّا عَنْ هٰذَا غٰفِلِيْنَ ۝ اَوْ تَقُوْلُوْٓا اِنَّمَآ اَشْرَكَ اٰبَاۗؤُنَا مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا ذُرِّيَّةً مِّنْۢ بَعْدِهِمْ ۚ اَفَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ الْمُبْطِلُوْنَ ۝ وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ وَلَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ ۝

व इज़् अ-ख़-ज़ रब्बु-क मिम्-बनी आद-म मिन् ज़ुहूरिहिम् ज़ुर्रिय्य-तहुम् व अश्ह-दहुम् अ़ला अन्फ़ुसिहिम् अलस्तु बिरब्बिकुम् क़ालू बला, शहिद्ना अन् तक़ूलू यौमल्-क़ियामति इन्ना कुन्ना अ़न् हाज़ा ग़ाफ़िलीन (172) औ तक़ूलू इन्नमा अश्र-क आबाउना मिन् क़ब्लु व कुन्ना ज़ुर्रिय्यतम् मिम्-बअ़्दिहिम् अ-फ़तुह्लिकुना बिमा फ़-अ़लल्-मुब्तिलून (173)	और जब निकाला तेरे रब ने बनी आदम की पीठों से उनकी औलाद को और इक़रार कराया उनसे उनकी जानों पर- क्या मैं नहीं हूँ तुम्हारा रब? बोले हाँ है, हम इक़रार करते हैं। कभी कहने लगो क़ियामत के दिन कि हमको तो इसकी ख़बर न थी। (172) या कहने लगो कि शिर्क तो निकाला था हमारे बाप-दादाओं ने हमसे पहले और हम हुए उनकी औलाद उनके बाद, तो क्या तू हमको हलाक करता है उस काम पर जो किया गुमराहों ने। (173) और यूँ हम खोलकर बयान करते हैं बातें ताकि वे फिर आयें। (174)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (उनसे उस वक़्त का वाक़िआ ज़िक्र कीजिए) जबकि आपके रब ने (रूहों के आ़लम में आदम अ़लैहिस्सलाम की पुश्त से तो ख़ुद उनकी औलाद को और) आदम की औलाद की पुश्त से उनकी औलाद को निकाला, और (उनको समझ अ़ता करके) उनसे उन्हीं के बारे में इक़रार

लिया कि क्या मैं तुम्हारा रब नहीं हूँ? (ख़ुदा की दी हुई उस अ़क्ल से मामले की हक़ीक़त को समझकर) सब ने जवाब दिया कि क्यों नहीं! (वाक़ई आप हमारे रब हैं। हक़ तआ़ला ने वहाँ जितने फ़रिश्ते और मख़्लूक़ात हाज़िर थे सब को गवाह करके सब की तरफ़ से फ़रमाया) हम सब (इस हक़ीक़त के) गवाह बनते हैं (और यह इक़रार और गवाही सब इसलिये हुआ) ताकि तुम लोग (यानी जो तुम में तौहीद को छोड़ने और शिर्क को अपनाने पर सज़ा पायें) क़ियामत के दिन यूँ न कहने लगो कि हम तो इस (तौहीद) से (बिल्कुल) बेख़बर थे। या यूँ कहने लगो कि (असल) शिर्क तो हमारे बड़ों ने किया था और हम उनके बाद उनकी नस्ल में हुए (और आ़दतन नस्ल अ़क़ीदों और ख़्यालात में अपनी असल के ताबे होती है, इसलिये हम बेख़ता हैं। पस हमारे फ़ेल पर तो हमको सज़ा हो नहीं सकती, अगर होगी तो लाज़िम आता है कि इन बड़ों की ख़ता में हम पकड़े गये हों) सो क्या इन ग़लत राह (निकालने) वालों के फ़ेल पर आप हमको तबाही में डाले देते हैं? (सो अब इस इक़रार व गवाही देने के बाद तुम यह उज़्र नहीं पेश कर सकते, फिर उसके बाद उन सबसे वायदा किया गया कि यह अ़हद तुमको दुनिया में पैग़म्बरों के ज़रिये से याद दिलाया जायेगा, चुनाँचे ऐसा ही हुआ जैसा कि यहाँ भी शुरू में "इज़् अ-ख़-ज़" के तर्जुमे से मालूम हुआ कि आपको इस वाक़िए के ज़िक्र का हुक्म हुआ) और (आख़िर में भी इस याददेहानी को जतलाते हैं कि) हम इसी तरह (अपनी) आयतों को साफ़-साफ़ बयान किया करते हैं (ताकि उनको इस अ़हद का होना मालूम हो जाये) और ताकि (मालूम होने के बाद शिर्क वग़ैरह से) वे बाज़ आ जायें।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अ़हद-ए-अलस्त की तहक़ीक़

इन आयतों में उस अ़ज़ीमुश्शान आ़लमगीर अ़हद व पैमान का ज़िक्र है जो ख़ालिक़ व मख़्लूक़ और बन्दा व माबूद के दरमियान उस वक़्त हुआ जबकि मख़्लूक़ इस मौजूदा जहान में आई भी न थी, जिसको पहले दिन का अ़हद या अ़हद-ए-अलस्त कहा जाता है।

अल्लाह जल्ल शानुहू सारे आ़लमों (जहानों) का ख़ालिक़ व मालिक है। ज़मीन व आसमान और इनके बीच और इनके अ़लावा जो कुछ है वह उसकी मख़्लूक़ और मिल्क है, न उस पर कोई क़ानून किसी का चल सकता है, न उसके किसी फ़ेल पर किसी को कोई सवाल करने का हक़ है।

लेकिन उसने महज़ अपने फ़ज़्ल व करम से आ़लम का निज़ाम ऐसा बनाया है कि हर चीज़ का एक नियम और क़ानून है। क़ानून के मुवाफ़िक़ चलने वालों के लिये हर तरह की हमेशा वाली राहत और ख़िलाफ़वर्ज़ी (बेअ़मली) करने वालों के लिये हर तरह का अ़ज़ाब मुक़र्रर है।

फिर ख़िलाफ़वर्ज़ी (अहकाम का उल्लंघन) करने वाले मुजरिम को सज़ा देने के लिये उसका ज़ाती इल्म जो हर चीज़ को घेरे हुए है काफ़ी था, जो आ़लम के ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी है और उसके लिये खुले और छुपे हुए तमाम आमाल व अफ़आ़ल बल्कि दिलों में छुपे इरादे तक बिल्कुल ज़ाहिर हैं, इसलिये कोई ज़रूरत न थी कि निगराँ मुक़र्रर किये जायें, आमाल नामे लिखे जायें,

आमाल तौले जायें और गवाह खड़े किये जायें।

लेकिन उसी ने ख़ालिस अपने फ़ज़्ल व करम से यह भी चाहा कि किसी को उस वक़्त तक सज़ा न दे जब तक दस्तावेज़ी सुबूत और नाक़ाबिले इनकार शहादतों (गवाहियों) से उसका जुर्म उसके सामने इस तरह खुलकर न आ जाये कि वह ख़ुद भी अपने मुजरिम होने को स्वीकार कर ले और अपने आपको सज़ा का हक़दार समझ ले।

इसके लिये हर इनसान के साथ उसके हर अ़मल और क़ौल को लिखने वाले फ़रिश्ते मुक़र्रर फ़रमा दिये, जैसा कि क़ुरआन पाक में इरशाद है:

مَا يَلْفِظُ مِنْ قَوْلٍ اِلَّا لَدَيْهِ رَقِيْبٌ عَتِيْدٌ.

यानी कोई कलिमा इनसान की ज़बान से नहीं निकलता जिस पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से निगरानी करने वाला फ़रिश्ता मुक़र्रर न हो। और एक जगह फ़रमायाः

كُلُّ صَغِيْرٍ وَّكَبِيْرٍ مُّسْتَطَرٌ.

यानी इनसान का हर छोटा-बड़ा काम लिखा हुआ है।

फिर मेहशर में अ़दल व इन्साफ़ की तराज़ू क़ायम फ़रमाकर इनसान के अच्छे-बुरे आमाल को तौला जायेगा, अगर नेकियों का पल्ला भारी हो गया तो निजात पायेगा और गुनाहों और जराईम का पल्ला भारी हो गया तो अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होगा।

इसके अ़लावा जब अह्कमुल-हाकिमीन का आ़म दरबार मेहशर में क़ायम होगा तो हर एक के अ़मल पर शहादतें (सुबूत और गवाहियाँ) भी ली जायेंगी, कुछ मुजरिम गवाहों को झुठलायेंगे तो उनके हाथ-पाँव, बदन के हिस्सों और उस ज़मीन व मकान से जिसमें ये काम किये गये गवाही ली जायेगी, वे सब अल्लाह के हुक्म से बोलेंगे और सही-सही वाक़िआ़त बतला देंगे, यहाँ तक कि मुजरिमों को इनकार व झुठलाने का कोई मौक़ा बाक़ी न रहेगा, वे इक़रार करेंगे, जैसा कि क़ुरआन पाक में इसकी वज़ाहत है:

فَاعْتَرَفُوْا بِذَنْۢبِهِمْ فَسُحْقًا لِّاَصْحٰبِ السَّعِيْرِ.

फिर मेहरबान व करीम मालिक ने अ़दल व इन्साफ़ के इस सिस्टम के क़ायम करने ही पर बस नहीं फ़रमाया, और दुनिया की हुकूमतों की तरह कोरा एक ज़ाब्ता और क़ानून उनको नहीं दे दिया, बल्कि क़ानून के साथ तरबियत का एक निज़ाम क़ायम किया, जैसे कि कोई शफ़ीक़ बाप अपने घरेलू मामलात को ठीक-ठाक रखने और घर वालों व बाल-बच्चों को तहज़ीब व अदब सिखाने के लिये कोई घरेलू क़ानून और ज़ाब्ता बनाता है, कि जो शख़्स उसके ख़िलाफ़ करेगा उसको सज़ा मिलेगी, मगर उसकी शफ़क़त व इनायत उसको इस पर भी आमादा करती है कि ऐसा इन्तिज़ाम करे जिसके सबब उनमें से कोई सज़ा का पात्र न हो, बल्कि सब के सब उस ज़ाब्ते के मुताबिक़ चलें। बच्चे के लिये अगर सुबह को स्कूल जाने की हिदायत और उसके ख़िलाफ़ करने पर सज़ा मुक़र्रर कर दी है तो बाप सवेरे इसकी भी फ़िक्र करता है कि बच्चा इस काम के लिये वक़्त से पहले तैयार हो जाये।

रब्बुल-आलमीन की रहमत अपनी मख़्लूक़ पर माँ और बाप की शफ़क़त व रहमत से कहीं ज़्यादा है, इसलिये उसने अपनी किताब को महज़ क़ानून और सज़ाओं के लिये नहीं बनाया बल्कि एक हिदायत नामा बनाया है, और हर क़ानून के साथ ऐसे तरीक़े भी सिखाये हैं जिनके ज़रिये क़ानून पर अ़मल करना आसान हो जाये।

रब होने के इसी निज़ाम के तक़ाज़े से अपने अम्बिया भेजे, उनके साथ आसमानी हिदायत नामे (यानी किताबें) भेजे, फ़रिश्तों की बहुत बड़ी तायदाद नेकियों की तरफ़ हिदायत करने और मदद करने के लिये मुक़र्रर फ़रमा दी।

रब होने के इसी निज़ाम का एक तक़ाज़ा यह भी था कि हर क़ौम और हर फ़र्द को ग़फ़लत से बेदार करने और अपने रब्बे करीम को याद करने के लिये मुख़्तलिफ़ क़िस्म के सामान पैदा किये, ज़मीन व आसमान की तमाम मख़्लूक़ात और दिन-रात के अदलने-बदलने और ख़ुद इनसान के अपने वजूद की कायनात में अपनी याद दिलाने वाली ऐसी निशानियाँ रख दीं कि अगर ज़रा भी होश से काम ले तो किसी वक़्त अपने मालिक को न भूलेः

وَفِي الْأَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ، وَفِيْٓ اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ.

यानी ज़मीन में समझदारों के लिये हमारी निशानियाँ हैं, और ख़ुद तुम्हारे वजूद में भी, क्या फिर भी तुम नहीं देखते।

इसी तरह ग़ाफ़िल इनसान को बेदार करने और नेक अ़मल पर लगाने के लिये एक इन्तिज़ाम रब्बुल-आलमीन ने यह भी फ़रमाया है कि अफ़राद, जमाअ़तों और क़ौमों से मुख़्तलिफ़ वक़्तों और हालात में अपने नबियों के ज़रिये अ़हद व पैमान लेकर उनको क़ानून की पाबन्दी के लिये तैयार किया गया।

क़ुरआन मजीद की अनेक आयतों में बहुत से मुआ़हदों व इक़रार नामों का ज़िक्र किया गया है जो मुख़्तलिफ़ जमाअ़तों से मुख़्तलिफ़ वक़्तों और हालात में लिये गये। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से अ़हद लिया गया कि जो कुछ उनको हक़ तआ़ला की तरफ़ से रिसालत का पैग़ाम मिले वे अपनी-अपनी उम्मतों को ज़रूर पहुँचा देंगे। इसमें उनके लिये किसी का ख़ौफ़ और लोगों की मलामत व अपमान करने का अन्देशा रोक न होगा, अल्लाह तआ़ला की इस पवित्र जमाअ़त ने अपने इस मुआ़हदे का पूरा हक़ अदा कर दिया, नुबुव्वत व रिसालत के पैग़ाम को पहुँचाने में अपना सब कुछ क़ुरबान कर दिया।

इसी तरह हर रसूल व नबी की उम्मत से इसका इक़रार व अ़हद लिया गया कि वे अपने-अपने नबियों की पैरवी करेंगे, फिर ख़ास-ख़ास अहम मामलों में ख़ुसूसियत के साथ उसके पूरा करने में अपनी पूरी ताक़त ख़र्च करने का अ़हद लिया गया, जिसको किसी ने पूरा किया, किसी ने नहीं किया।

उन्हीं मुआ़हदों व इक़रारों में से एक अहम मुआ़हदा व इक़रार वह है जो तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से हमारे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में लिया गया कि सब

अम्बिया नबियों के ख़ातिम आख़िरी नबी की पैरवी करेंगे, और जब मौक़ा पायेंगे उनकी मदद करेंगे, जिसका ज़िक्र इस आयत में है:

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ النَّبِيّٖنَ لَمَآ اٰتَيْتُكُمْ مِّنْ كِتٰبٍ وَّحِكْمَةٍ.

ये तमाम अ़हद व इक़रार और वायदे हक़ तआ़ला की कामिल रहमत के निशानात हैं और मक़सद इनका यह है कि इनसान जो बहुत ज़्यादा भूलने वाली मख़्लूक़ है, अक्सर अपने फ़राईज़ को भूल जाता है, उसको बार-बार इन मुआ़हदों और इक़रारों के ज़रिये होशियार किया गया ताकि वह इनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करके तबाही में न पड़ जाये।

बैअ़त लेने की हक़ीक़त

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके नायब उलेमा व बुज़ुर्गों में भी जो बैअ़त लेने का दस्तूर रहा है वह भी इसी अल्लाह की सुन्नत की पैरवी है। ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बहुत से मामलों में सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से बैअ़त ली, जिनमें से बैअ़त-ए-रिज़्वान का तज़किरा क़ुरआने करीम में इन अलफ़ाज़ के साथ मौजूद है:

لَقَدْ رَضِيَ اللّٰهُ عَنِ الْمُؤْمِنِيْنَ اِذْ يُبَايِعُوْنَكَ تَحْتَ الشَّجَرَةِ.

यानी अल्लाह राज़ी हो गया उन लोगों से जिन्होंने एक ख़ास पेड़ के नीचे आपके हाथ पर बैअ़त की।

हिजरत से पहले मदीना के अन्सार सहाबा की बैअ़त-ए-अ़क़्बा भी इसी क़िस्म के मुआ़हदों में से है।

बहुत से सहाबा-ए-किराम से ईमान और नेक अ़मल की पाबन्दी पर बैअ़त ली। सूफ़िया-ए-किराम में जो बैअ़त का सिलसिला प्रचलित है वह भी ईमान और नेक अ़मल की पाबन्दी और गुनाहों से बचने के एहतिमाम का अ़हद है, और अल्लाह की इसी सुन्नत और नबियों के इसी तरीक़े की पैरवी है। इसी वजह से इसमें ख़ास बरकतें हैं कि इनसान को गुनाहों से बचने और शरई अहकाम पर अ़मल करने की हिम्मत और तौफ़ीक़ बढ़ जाती है। बैअ़त की हक़ीक़त मालूम होने से यह भी वाज़ेह हो गया कि जिस तरह बैअ़त आ़म तौर पर नावाक़िफ़ जाहिलों में रिवाज पा गयी है कि किसी बुज़ुर्ग के हाथ पर हाथ रख देने ही को निजात के लिये काफ़ी समझ बैठते हैं, यह सरासर जहालत है। बैअ़त एक मुआ़हदे और इक़रार का नाम है, उसका फ़ायदा तभी है जब इस मुआ़हदे को अ़मली तौर पर पूरा किया जाये, वरना वबाल का ख़तरा है।

सूरः आराफ़ की गुज़िश्ता आयतों में उन मुआ़हदों का ज़िक्र था जो बनी इस्राईल से तौरात के अहकाम की पाबन्दी के सिलसिले में लिये गये थे। उपरोक्त आयतों में आ़लमगीर (वैश्विक) मुआ़हदे का बयान है जो आदम की तमाम औलाद (यानी तमाम इनसानों) से इस दुनिया में आने से भी पहले अज़ल में लिया गया, जो आ़म ज़बानों पर अ़हद-ए-अलस्त के नाम से मशहूर व परिचित है।

وَاِذْ اَخَذَ رَبُّكَ مِنْ م بَنِیْٓ اٰدَمَ مِنْ ظُهُوْرِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَاَشْهَدَهُمْ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ.........الخ

इन आयतों में आदम की औलाद (यानी तमाम इनसानों) के लिये ज़ुर्रियत का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है। इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने फ़रमाया कि यह लफ़्ज़ दर अस्ल लफ़्ज़ 'ज़-र-अ' से निकला है जिसके मायने हैं पैदा करने के। क़ुरआने करीम में कई जगह यह लफ़्ज़ इस मायने के लिये इस्तेमाल हुआ है। जैसे एक जगह है:

وَلَقَدْ ذَرَءْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيْرًا

इसलिये ज़ुर्रियत का लफ़्ज़ी तर्जुमा मख़्लूक़ का हुआ। इस लफ़्ज़ से इशारा कर दिया गया कि यह अ़हद उन तमाम लोगों के लिये आ़म और सब को शामिल था जो आदम अ़लैहिस्सलाम के वास्ते से इस दुनिया में पैदा किये जायेंगे।

हदीस की रिवायतों में अज़ल (पहले दिन) के इस अ़हद की कुछ अधिक तफ़सीलात आई हैं। इमाम मालिक, इमाम अबू दाऊद, इमाम तिर्मिज़ी और इमाम अहमद रह. ने मुस्लिम बिन यसार रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि कुछ लोगों ने हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत का मतलब पूछा तो आपने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस आयत का मतलब पूछा गया था, आप से जो जवाब मैंने सुना है वह यह है कि:

"अल्लाह तआ़ला ने पहले आदम अ़लैहिस्सलाम को पैदा फ़रमाया, फिर अपनी क़ुदरत का हाथ उनकी पुश्त पर फेरा तो उनकी पुश्त से जो नेक इनसान पैदा होने वाले थे वे निकल आये तो फ़रमाया कि इनको मैंने जन्नत के लिये पैदा किया है और ये जन्नत ही के काम करेंगे। फिर दूसरी मर्तबा उनकी पुश्त पर क़ुदरत का हाथ फेरा तो जितने गुनाहगार बुरे किरदार वाले इनसान उनकी नस्ल से पैदा होने वाले थे उनको निकाल खड़ा किया और फ़रमाया कि इनको मैंने दोज़ख़ के लिये पैदा किया है और ये दोज़ख़ में जाने ही के काम करेंगे।

सहाबा में से एक शख़्स ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! जब पहले ही जन्नती और दोज़ख़ी मुतैयन कर दिये गये तो फिर अ़मल किस मक़सद के लिये कराया जाता है? आपने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला किसी को जन्नत के लिये पैदा फ़रमाते हैं तो वह जन्नत वालों ही के काम करने लगता है, यहाँ तक कि उसका ख़ात्मा किसी ऐसे ही काम पर होता है जो जन्नत वालों का काम है। और जब अल्लाह तआ़ला किसी को दोज़ख़ के लिये बनाते हैं तो वह दोज़ख़ ही के काम में लग जाता है, यहाँ तक कि उसका ख़ात्मा भी किसी ऐसे ही काम पर होता है जो जहन्नम वालों का काम है।"

मतलब यह है कि जब इनसान को मालूम नहीं कि वह किस तब्क़े (वर्ग) में दाख़िल है तो उसको अपनी ऊर्जा व ताक़त और इख़्तियार ऐसे कामों में ख़र्च करना चाहिये जो जन्नत वालों के काम हैं, और यही उम्मीद रखनी चाहिये कि वह उन्हीं में से होगा।

और इमाम अहमद रह. की रिवायत में यही मज़मून हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है। उसमें इतना और ज़्यादा है कि पहली मर्तबा जो लोग आदम अ़लैहिस्सलाम की पुश्त से निकले वे सफ़ेद रंग के थे जिनको जन्नत वाले फ़रमाया, और दूसरी मर्तबा काले रंग के थे जिनको जहन्नम वाले क़रार दिया।

और तिर्मिज़ी में यही मज़मून हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है, उसमें यह भी है कि इस तरह क़ियामत तक पैदा होने वाली आदम की औलाद जो ज़हूर में आई उनमें से हर एक की पेशानी पर एक ख़ास क़िस्म की चमक थी।

अब ग़ौर-तलब (विचारणीय) यह है कि इन हदीसों में तो ज़ुर्रियत को आदम अ़लैहिस्सलाम की पुश्त से लेने और निकालने का ज़िक्र है और क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़ में बनी आदम यानी आदम अ़लैहिस्सलाम की औलाद की पुश्त से निकालना ज़िक्र हुआ है। मुवाफ़क़त और जोड़ इसका यह है कि आदम अ़लैहिस्सलाम की पुश्त से उन लोगों को निकाला गया जो डायरेक्ट आदम अ़लैहिस्सलाम से पैदा होने वाले थे, फिर उनकी नस्ल की पुश्त से दूसरों को और इसी तरह जिस तरतीब से इस दुनिया में आदम की औलाद पैदा होने वाली थी उसी तरतीब से उनकी पुश्तों से निकाला गया।

हदीस में सब को हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की पुश्त से निकालने का मतलब भी यही है कि आदम अ़लैहिस्सलाम से उनकी औलाद को, फिर उस औलाद से उनकी औलाद को क्रमवार पैदा किया गया।

क़ुरआन मजीद में आदम अ़लैहिस्सलाम की इस सब ज़ुर्रियत से अपने रब होने का इक़रार लेने में इसकी तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि आदम की यह ज़ुर्रियत (नस्ल) जो उस वक़्त पुश्तों से निकाली गयी थी सिर्फ़ रूहें नहीं थीं बल्कि रूह और जिस्म का ऐसा मुरक्कब (मिश्रण) था जो जिस्म के बहुत ज़्यादा बारीक ज़र्रों से बनाया गया था। क्योंकि रब होने और तरबियत की ज़रूरत ज़्यादातर वहीं होती है जहाँ जिस्म व रूह का मुरक्कब (मजमूआ) हो, और जिसको एक हाल से दूसरे हाल की तरफ़ तरक़्क़ी करना हो। रूहों की यह शान नहीं, वे तो अव्वल से आख़िर तक एक ही हाल पर होती हैं। इसके अ़लावा उक्त हदीसों में जो उनके रंग सफ़ेद व काले ज़िक्र हुए हैं या उनकी पेशानी की चमक बयान हुई है इससे भी यही मालूम होता है कि बिना जिस्म के सिर्फ़ रूह नहीं थी वरना रूह का तो कोई रंग नहीं होता, जिस्म ही के साथ यह गुण संबन्धित होते हैं।

और इस पर कोई ताज्जुब न किया जाये कि क़ियामत तक पैदा होने वाले सारे इनसान एक जगह में किस तरह समा गये। क्योंकि हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की उक्त हदीस में इसकी भी वज़ाहत है कि उस वक़्त जो ज़ुर्रियत आदम अ़लैहिस्सलाम की पीठ से निकाली गयी थी वह अपने उस डीलडोल के साथ नहीं थी जिसमें वे दुनिया में आयेंगे, बल्कि छोटी चींटी की शक्ल व जिस्म में थी, और विज्ञान की तरक़्क़ी के इस ज़माने में तो किसी समझदार इनसान को कोई शुब्हा व संदेह इसमें होना ही नहीं चाहिये कि इतने बड़े डीलडोल का इनसान एक चींटी के

बराबर जिस्म में कैसे ज़ाहिर हुआ। आज तो एटम के अन्दर सूरज के पूरे सिस्टम के मौजूद होने का तजुर्बा किया जा रहा है, फ़िल्म के ज़रिये बड़ी से बड़ी चीज़ को एक बिन्दू की मात्रा में दिखलाया जा सकता है। इसलिये यह क्या मुश्किल है कि हक़ तआ़ला ने इस अ़हद व इक़रार के वक़्त तमाम इनसानों को बहुत छोटे जिस्म में वजूद अ़ता फ़रमाया हो।

अज़ल के अ़हद के बारे में चन्द सवाल व जवाब

अज़ल के इस अ़हद के बारे में चन्द चीज़ें और ध्यान देने के क़ाबिल हैं:

अव्वल यह कि अ़हद व इक़रार किस जगह और किस वक़्त लिया गया?

दूसरे यह कि जब इक़रार इस हाल में लिया गया कि आदम अ़लैहिस्सलाम के सिवा कोई दूसरा इनसान पैदा भी न हुआ था तो उनको यह अ़क़्ल व इल्म कैसे हासिल हुआ कि वे अल्लाह तआ़ला को पहचानें और उसके रब होने का इक़रार करें। क्योंकि रब होने का इक़रार वह कर सकता है जिसने तरबियत की शान को देखा और अनुभव किया हो, और यह देखना और अनुभव इस दुनिया में पैदा होने के बाद ही हो सकता है।

पहला सवाल कि अ़हद व इक़रार किस जगह और किसी वक़्त लिया गया, इसके मुताल्लिक़ मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से जो रिवायत मज़बूत सनद के साथ इमाम अहमद, इमाम नसाई और इमाम हाकिम ने नक़ल की है वह यह है कि यह अ़हद व इक़रार उस वक़्त लिया गया जब आदम अ़लैहिस्सलाम को जन्नत से ज़मीन पर उतारा गया, और मक़ाम इस इक़रार का वादी-ए-नौमान है जो मैदान-ए-अ़रफ़ात के नाम से मारूफ़ व मशहूर है। (तफ़सीरे मज़हरी)

रहा दूसरा सवाल कि यह नई मख़्लूक़ जिसको अभी जिस्मानी वजूद भी पूरी तरह अ़ता नहीं हुआ वे क्या समझ सकते हैं कि हमारा कोई पैदा करने वाला और परवर्दिगार है, ऐसी हालत में उनसे सवाल करना भी एक क़िस्म की नाक़ाबिले बरदाश्त तकलीफ़ है, और वे जवाब भी क्या दे सकते हैं। इसका जवाब यह है कि ख़ालिक़े कायनात जिसकी कामिल क़ुदरत ने तमाम इनसानों को एक ज़र्रे की सूरत में पैदा फ़रमाया उसके लिये यह क्या मुश्किल है कि उसने उनको अ़क़्ल व समझ और शऊर व एहसास भी उस वक़्त ज़रूरत के मुताबिक़ दे दिया हो, और यही हक़ीक़त है कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस मुख़्तसर वजूद में इनसान की तमाम क़ुव्वतों को जमा फ़रमा दिया था जिनमें सबसे बड़ी क़ुव्वत अ़क़्ल व शऊर की है।

इनसान के अपने वजूद में अल्लाह तआ़ला शानुहू की बड़ाई व क़ुदरत की वो बेशुमार निशानियाँ हैं जिन पर ज़रा भी ग़ौर करने वाला अल्लाह तआ़ला की मारिफ़त से ग़ाफ़िल नहीं रह सकता। क़ुरआने करीम का इरशाद है:

وَفِى الْاَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ، وَفِىْٓ اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ.

यानी ज़मीन में अल्लाह तआ़ला की निशानियाँ हैं जानने वालों के लिये, और ख़ुद तुम्हारे वजूद में भी, क्या फिर भी तुम नहीं देखते?

9 यहाँ एक तीसरा सवाल यह भी हो सकता है कि यह अज़ली अ़हद व पैमान कितना ही यक़ीनी और सही क्यों न हो मगर कम से कम यह तो सब को मालूम है कि इस दुनिया में आने के बाद यह अ़हद किसी को याद नहीं रहा तो फिर अ़हद का फ़ायदा क्या हुआ?

इसका जवाब यह है कि अव्वल तो इसी इनसानी नस्ल में बहुत से ऐसे अफ़राद भी हैं जिन्होंने यह इक़रार किया है कि हमें यह अ़हद पूरी तरह याद है। हज़रत ज़ुन्नून मिस्री ने फ़रमाया कि यह अ़हद व इक़रार मुझे ऐसा याद है गोया इस वक़्त सुन रहा हूँ। और कुछ ने तो यहाँ तक कहा है कि मुझे यह भी याद है कि जिस वक़्त यह इक़रार लिया गया उस वक़्त मेरे आस-पास में कौन-कौन लोग मौजूद थे। हाँ यह ज़ाहिर है कि ऐसे अफ़राद न होने के बराबर और बहुत कम दर्जे में हैं, इसलिये आ़म लोगों के समझने की बात यह है कि बहुत से काम ऐसे होते हैं जो अपनी ख़ासियत व मिज़ाज के एतिबार से असर रखते हैं, चाहे वह काम किसी को याद रहे या न रहे, बल्कि उसकी ख़बर भी न हो मगर वो अपना असर छोड़ जाते हैं। यह अ़हद व इक़रार भी ऐसी ही हैसियत रखता है कि दर असल इस इक़रार ने हर इनसान के दिल में हक़ की पहचान का एक बीज डाल दिया जो परवान चढ़ रहा है, चाहे उसको ख़बर हो या न हो, और इसी बीज के फल-फूल हैं कि हर इनसान की फ़ितरत में हक़ तआ़ला की मुहब्बत व अ़ज़मत पाई जाती है, चाहे उसका ज़हूर बुत-परस्ती और मख़्लूक़-परस्ती के किसी ग़लत अन्दाज़ में हो। वे चन्द बदनसीब लोग जिनकी फ़ितरत ही बिगड़कर उनका अ़क़्ली ज़ायक़ा ख़राब हो गया और मीठे कड़वे की पहचान जाती रही, उनके अ़लावा बाक़ी सारी दुनिया के अरबों इनसान अल्लाह तआ़ला की धुन, ख़्याल और अ़ज़मत से ख़ाली नहीं। फिर चाहे माद्दी इच्छाओं में मुब्तला होकर या किसी गुमराह सोसाईटी में पड़कर वे उसको भुला दें। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

كُلُّ مَوْلُوْدٍ يُوْلَدُ عَلَى الْفِطْرَةِ وفى بعض الروايات عَلٰى هٰذِهِ الْمِلَّةِ.(اخرجه البخارى و مسلم)

यानी हर पैदा होने वाला दीने फ़ितरत यानी इस्लाम पर पैदा होता है, फिर उसके माँ-बाप उसको दूसरे ख़्यालात में मुब्तला कर देते हैं। और सही मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- हक़ तआ़ला फ़रमाते हैं कि मैंने अपने बन्दों को हनीफ़ यानी एक ख़ुदा का मानने वाला पैदा किया है, फिर शैतान उनके पीछे लग गये और उनको इस सही रास्ते से दूर ले गये।

इसी तरह ख़ासियत और मिज़ाज के एतिबार से असर रखने वाले बहुत से आमाल व अक़वाल हैं जो इस दुनिया में भी अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की तालीम से जारी हैं, जिनका असर यह है कि उनको कोई समझे या न समझे और याद रखे या न रखे वो बहरहाल अपना काम करते और अपना असर दिखलाते हैं।

मसलन बच्चा पैदा होने के साथ ही उसके दाहिने कान में अज़ान और बायें कान में तकबीर कहने की जो सुन्नत हर मुसलमान जानता है और अल्लाह का शुक्र है कि पूरी इस्लामी दुनिया

में जारी है, अगरचे बच्चा न कलिमात के मायने समझता है न उसको बड़ा होने के बाद याद रहता है कि मेरे कान में क्या अलफ़ाज़ कहे गये थे, इसकी हिक्मत यही तो है कि इसके ज़रिये उस पहले दिन के इक़रार को मज़बूती पहुँचाकर कानों की राह से दिल में ईमान का बीज बोया जाता है, और इसी का यह असर देखा जाता है कि बड़ा होने के बाद अगरचे यह इस्लाम और इस्लामियात से कितना ही दूर हो जाये मगर अपने आपको मुसलमान कहता है और मुसलमानों की फ़ेहरिस्त से अलग होने को इन्तिहाई बुरा समझता है। इसी तरह जो लोग क़ुरआन की भाषा नहीं जानते उनको भी क़ुरआन की तिलावत का हुक्म शायद इसी हिक्मत पर आधारित है कि इससे भी कम से कम यह छुपा फ़ायदा ज़रूर पहुँच जाता है कि इनसान के दिल में ईमान का नूर ताज़ा हो जाता है।

इसी लिये आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

اَنْ تَقُوْلُوْا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّا كُنَّا عَنْ هٰذَا غٰفِلِيْنَ.

यानी यह इक़रार हमने इसलिये लिया है कि तुम क़ियामत के दिन यूँ न कहने लगो कि हम तो इससे ग़ाफ़िल थे। इशारा इस बात की तरफ़ है कि इस अज़ली सवाल व जवाब से तुम्हारे दिलों में ईमान की बुनियाद ऐसी क़ायम हो गयी कि ज़रा से भी सोचने-समझने से काम लो तो अल्लाह जल्ल शानुहू के रब होने के इक़रार के सिवा कोई चारा न रहेगा।

इसके बाद दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

اَوْتَقُوْلُوْٓا اِنَّمَآ اَشْرَكَ اٰبَآؤُنَا مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا ذُرِّيَّةً مِّنْ ۢ بَعْدِهِمْ اَفَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ الْمُبْطِلُوْنَ.

यानी यह इक़रार हमने इसलिये भी लिया है कि कहीं तुम क़ियामत के दिन यह उज़्र न करने लगो कि शिर्क व बुत-परस्ती तो दर असल हमारे बड़ों ने इख़्तियार कर ली थी और हम तो उनके बाद उनकी औलाद थे, खरे-खोटे और सही-ग़लत को नहीं पहचानते थे, इसलिये बड़ों ने जो कुछ किया हमने भी उसी को इख़्तियार कर लिया, तो बड़ों के जुर्म की सज़ा हमें क्यों दी जाये? हक़ तआ़ला ने बतला दिया कि दूसरों के फ़ेल की सज़ा तुमको नहीं दी गयी बल्कि ख़ुद तुम्हारी ग़फ़लत (लापरवाही) की सज़ा है, क्योंकि पहले दिन के इस इक़रार ने इनसान में एक ऐसी अक़्ल व समझ का बीज डाल दिया था कि ज़रा भी ग़ौर व फ़िक्र से काम लेता तो इतनी बात समझ लेना कुछ मुश्किल नहीं था कि ये पत्थर के बुत जिनको हमने अपने हाथों तराशा (बनाया और गढ़ा) है, या आग और पानी, और दरख़्त या कोई इनसान, इनमें से कोई चीज़ भी ऐसी नहीं जिसको कोई इनसान अपना पैदा करने वाला और परवर्दिगार या ज़रूरत पूरी करने वाला और मुश्किलों को हल करने वाला यक़ीन कर सके।

तीसरी आयत में इसी मज़मून का बयान इस तरह आया हैः

وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ وَلَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ.

यानी हम इसी तरह अपनी निशानियों को खोल-खोलकर बयान किया करते हैं ताकि लोग ग़फ़लत और ग़लत चलन से बाज़ आ जायें। मुराद यह है कि अल्लाह की आयतों और

निशानियों में ज़रा भी ग़ौर करें तो वे उस अ़हद व इक़रार की तरफ़ लौट आयें जो अज़ल (इनसानी कायनात के पहले दिन) में किया गया था, यानी अल्लाह जल्ल शानुहू के रब होने का एतिराफ़ करने लगें और इसके नतीजे में उसकी फ़रमाँबरदारी को लाज़िम समझें।

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ الَّذِيْٓ اٰتَيْنٰهُ اٰيٰتِنَا فَانْسَلَخَ مِنْهَا فَاَتْبَعَهُ الشَّيْطٰنُ فَكَانَ مِنَ الْغٰوِيْنَ ۝ وَلَوْ شِئْنَا لَرَفَعْنٰهُ بِهَا وَلٰكِنَّهٗٓ اَخْلَدَ اِلَى الْاَرْضِ وَاتَّبَعَ هَوٰىهُ ۚ فَمَثَلُهٗ كَمَثَلِ الْكَلْبِ ۚ اِنْ تَحْمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ اَوْ تَتْرُكْهُ يَلْهَثْ ۭ ذٰلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا ۚ فَاقْصُصِ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُوْنَ ۝ سَاۗءَ مَثَلَا ۨ الْقَوْمُ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا وَاَنْفُسَهُمْ كَانُوْا يَظْلِمُوْنَ ۝

वत्लु अ़लैहिम् न-बअल्लज़ी आतैनाहु आयातिना फ़न्स-ल-ख़ मिन्हा फ़-अत्ब-अ़हुश्शैतानु फ़का-न मिनल्-ग़ावीन (175) व लौ शिअ्ना ल-रफ़अ़्नाहु बिहा व लाकिन्नहू अख़्ल-द इलल्-अर्ज़ि वत्त-ब-अ़ हवाहु फ़-म-सलुहू क-म-सलिल्-कल्बि इन् तह्मिल् अ़लैहि यल्हस् औ तत्रुक्हु यल्हस्, ज़ालि-क म-सलुल्-क़ौमिल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना फ़क़्सुसिल्-क़-स-स लअ़ल्लहुम् य-तफ़क्करून (176) सा-अ म-स-ल-निल्क़ौमुल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना व अन्फ़ु-सहुम् कानू यज़्लिमून (177)	और सुना दे उनको हाल उस शख़्स का जिसको हमने दी थीं अपनी आयतें फिर वह उनको छोड़ निकला, फिर उसके पीछे लगा शैतान तो वह हो गया गुमराहों में। (175) और हम चाहते तो बुलन्द करते उसका रुतबा इन आयतों की बदौलत, लेकिन वह तो हो रहा ज़मीन का और पीछे हो लिया अपनी इच्छा के, तो उसका हाल ऐसा है जैसे कुत्ता, उस पर तू बोझ लादे तो हाँपे और छोड़ दे तो हाँपे, यह मिसाल है उन लोगों की जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को, सो बयान कर यह अहवाल ताकि वे ध्यान करें। (176) बुरी मिसाल है उन लोगों की कि झुठलाया उन्होंने हमारी आयतों को और वे अपना ही नुकसान करते रहे। (177)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उन लोगों को (सीख लेने के वास्ते) उस शख़्स का हाल पढ़कर सुनाईये कि उसको हमने अपनी आयतें दीं (यानी अहकाम का इल्म दिया) फिर वह उन (आयतों) से बिल्कुल ही निकल गया, फिर शैतान उसके पीछे लग लिया, सो वह गुमराह लोगों में (दाख़िल) हो गया। और अगर हम चाहते तो उसको उन (आयतों के तक़ाज़े पर अ़मल करने) की बदौलत बुलन्द (रुतबे वाला) कर देते। (यानी अगर वह उन आयतों पर अ़मल करता जिसका तक़दीर से जुड़ा हुआ होना एक मालूम बात है तो उसकी मक़बूलियत का रुतबा बढ़ता) लेकिन वह तो दुनिया की तरफ़ माईल हो गया और (इस मैलान व रुझान के सबब) अपनी नफ़्सानी इच्छा की पैरवी करने लगा (और आयतों व अहकाम पर अ़मल छोड़ दिया), सो (आयतों को छोड़कर जो परेशानी और हमेशा की रुस्वाई उसको नसीब हुई उसके एतिबार से) उसकी हालत कुत्ते के जैसी हो गई कि अगर तू उस पर हमला करे (और मारकर निकाल दे) तब भी हाँपे या उसको (उसकी हालत पर) छोड़ दे तब भी हाँपे (किसी हालत में उसको राहत नहीं। इसी तरह यह शख़्स ज़िल्लत में तो कुत्ते के जैसा हो गया और परेशानी में कुत्ते की इस सिफ़त में शरीक हुआ। पस जैसी इस शख़्स की हालत हुई) यही हालत (आ़म तौर पर) उन लोगों की है जिन्होंने हमारी आयतों को (जो कि तौहीद व रिसालत पर दलालत करती हैं) झुठलाया (कि हक़ स्पष्ट हो जाने के बाद सिर्फ़ अपनी इच्छा परस्ती के सबब हक़ को छोड़ देते हैं), सो आप इस हाल को बयान कर दीजिए शायद ये लोग (इसको सुनकर) कुछ सोचें। (हक़ीक़त में) उन लोगों की (हालत भी) बुरी हालत है जो (तौहीद व रिसालत को स्पष्ट करने वाली) हमारी आयतों को झुठलाते हैं, और (इस झुठलाने से) वे अपना (ही) नुक़सान करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपरोक्त आयतों में बनी इस्राईल का एक इब्रतनाक क़िस्सा मज़कूर है जिसमें बनी इस्राईल के एक बड़े आ़लिम और मशहूर मुक़्तदा (धर्मगुरु) का इल्म व मारिफ़त के आला मेयार पर होने के बाद अचानक गुमराह व मरदूद हो जाने का वाक़िआ़ मय उसके कारणों के बयान किया गया है, और इसमें बहुत सी इब्रतें (सीख लेने की बातें) हैं।

और ताल्लुक़ इस वाक़िए का पिछली आयतों से यह है कि उनमें अ़हद व इक़रार का ज़िक्र था जो अज़ल (शुरू कायनात) में हक़ तआ़ला ने तमाम इनसानों से और फिर ख़ास-ख़ास हालात में ख़ास-ख़ास क़ौमों यहूदियों व ईसाईयों वग़ैरह से लिये थे, और मज़कूरा आयतों में इसका भी ज़िक्र आया था कि अ़हद करने वालों में बहुत से लोग इस अ़हद पर क़ायम नहीं रहे, जैसे यहूदी लोग कि हज़रत ख़ातमुन्नबिय्यीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस दुनिया में तशरीफ़ लाने से पहले आपके आने का इन्तिज़ार करते और आपकी सिफ़ात व ख़ूबियाँ लोगों से बयान किया करते और उनकी तस्दीक़ किया करते थे, मगर जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

तशरीफ़ लाये तो दुनिया के घटिया स्वार्थों की ख़ातिर आप पर ईमान लाने और आपकी पैरवी करने से दूर रहे।

बनी इस्राईल के एक पेशवा आ़लिम की गुमराही का सबक़ लेने वाला वाक़िआ़

इन आयतों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म होता है कि आप अपनी क़ौम के सामने यह वाक़िआ़ पढ़कर सुनाईये जिसमें बनी इस्राईल के एक बड़े आ़लिम व बुज़ुर्ग और मशहूर पेशवा का ऐसा ही हाल बुलन्दी के बाद गिरावट और हिदायत के बाद गुमराही का बयान हुआ है, कि बहुत ज़्यादा इल्म और अल्लाह की पूरी पहचान हासिल होने के बावजूद, जब नफ़्सानी इच्छायें उस पर ग़ालिब आयीं तो यह सब इल्म व मारिफ़त और मक़बूलियत ख़त्म होकर गुमराह और ज़लील व रुस्वा हो गया।

क़ुरआने करीम में उस शख़्स का नाम और कोई पहचान बयान नहीं हुई, तफ़सीर के इमामों, सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और ताबिईन से इसके बारे में मुख़्तलिफ़ रिवायतें मज़कूर हैं, जिनमें ज़्यादा मशहूर और उक्सर हज़रात के नज़दीक क़ाबिले भरोसा रिवायत वह है जो इब्ने मर्दूया ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल की है कि इस शख़्स का नाम बल्अ़म बिन बाऊरा है। यह मुल्के शाम में बैतुल-मुक़द्दस के क़रीब किन्आ़न का रहने वाला था, और एक रिवायत में है कि बनी इस्राईल में से था। अल्लाह तआ़ला की कुछ किताबों का इल्म इसको हासिल था, क़ुरआने करीम में जो इसकी सिफ़त में "अल्लज़ी आतैनाहु आयातिना" फ़रमाया है इससे उसी इल्म की तरफ़ इशारा है।

जब फ़िरऔ़न के दरिया में डूबने और मिस्र के फ़तह होने के बाद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और बनी इस्राईल को जब्बारीन क़ौम से जिहाद करने का हुक्म मिला और जब्बारीन ने देखा कि मूसा अ़लैहिस्सलाम तमाम बनी इस्राईल का लश्कर लेकर पहुँच गये और उनके मुक़ाबिले में क़ौमे फ़िरऔ़न का ग़र्क़ व ग़ारत होना उनको पहले से मालूम हो चुका था, तो उनको फ़िक्र हुई और जमा होकर बल्अ़म बिन बाऊरा के पास आये और कहा कि मूसा अ़लैहिस्सलाम सख़्त आदमी हैं और उनके साथ बहुत से लश्कर हैं और वे इसलिये आये हैं कि हमको हमारे मुल्क से निकाल दें। आप अल्लाह तआ़ला से यह दुआ़ करें कि उनको हमारे मुक़ाबले से वापस कर दे। वजह यह थी कि बल्अ़म बिन बाऊरा को इस्म-ए-आज़म मालूम था वह उसके ज़रिये जो दुआ़ करता था क़ुबूल होती थी।

बल्अ़म ने कहा अफ़सोस है तुम कैसी बात कहते हो, वह अल्लाह के नबी हैं उनके साथ अल्लाह के फ़रिश्ते हैं, मैं उनके ख़िलाफ़ बद्दुआ़ कैसे कर सकता हूँ हालाँकि उनका मक़ाम जो अल्लाह के नज़दीक है वह भी मैं जानता हूँ। अगर मैं ऐसा करूँगा तो मेरा दीन दुनिया दोनों तबाह हो जायेंगे।

उन लोगों ने बेहद ज़ोर डाला तो उस पर बल्अ़म ने कहा कि अच्छा मैं अपने रब से इस मामले में मालूम कर लूँ कि ऐसी दुआ़ करने की इजाज़त है या नहीं। उसने अपने मामूल के मुताबिक़ मालूम करने के लिये इस्तिख़ारा या कोई अ़मल किया, ख़्वाब में उसको बतलाया गया कि हरगिज़ ऐसा न करे। उसने क़ौम को बतला दिया कि मुझे बद्दुआ़ करने से मना कर दिया गया है। उस वक़्त क़ौमे जब्बारीन ने बल्अ़म को कोई बड़ा हदिया पेश किया जो दर हक़ीक़त रिश्वत थी। उसने हदिया क़ुबूल कर लिया तो फिर उस क़ौम के लोग उसके पीछे पड़ गये कि आप ज़रूर यह काम कर दो और इल्तिजा व ज़िद की हद न रही। कुछ रिवायतों में है कि उसकी बीवी ने मश्विरा दिया कि यह रिश्वत क़ुबूल कर लें और इनका काम कर दें। उस वक़्त बीवी की रज़ा हासिल करने और माल की मुहब्बत ने उसको अन्धा कर दिया था, उसने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और बनी इस्राईल के ख़िलाफ़ बद्दुआ़ करनी शुरू की।

उस वक़्त अल्लाह की क़ुदरत का अ़जीब करिश्मा यह ज़ाहिर हुआ कि वह जो कलिमात बद्दुआ़ के हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम के लिये कहना चाहता था उसकी ज़बान से वो बद्दुआ़ के अलफ़ाज़ ख़ुद अपनी क़ौम जब्बारीन के लिये निकले। वे चिल्ला उठे कि तुम तो हमारे लिये बद्दुआ़ कर रहे हो। बल्अ़म ने जवाब दिया कि यह मेरे इख़्तियार से बाहर है मेरी ज़बान इसके ख़िलाफ़ पर क़ादिर नहीं।

नतीजा यह हुआ कि उस क़ौम पर भी तबाही नाज़िल हुई और बल्अ़म को यह सज़ा मिली कि उसकी ज़बान उसके सीने पर लटक गयी, और अब उसने अपनी क़ौम से कहा कि मेरी तो दुनिया व आख़िरत तबाह हो गयी, अब दुआ़ तो मेरी चलती नहीं, लेकिन मैं तुम्हें एक चाल बताता हूँ जिसके ज़रिये तुम मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम पर ग़ालिब आ सकते हो।

वह यह है कि तुम अपनी हसीन लड़कियों को बना-संवार करके बनी इस्राईल के लश्कर में भेज दो और उनको यह ताकीद कर दो कि बनी इस्राईल के लोग उनके साथ जो कुछ करें करने दें, रुकावट न बनें। ये लोग मुसाफ़िर हैं, अपने घरों से मुद्दत के निकले हुए हैं, इस तदबीर से मुम्किन है कि ये लोग हरामकारी में मुब्तला हो जायें और अल्लाह तआ़ला के नज़दीक हरामकारी इन्तिहाई नापसन्दीदा चीज़ है, जिस क़ौम में यह हो उस पर ज़रूर क़हर व अ़ज़ाब नाज़िल होता है, वह विजयी व कामयाब नहीं हो सकती।

बल्अ़म की यह शैतानी चाल उनकी समझ में आ गयी, इस पर अ़मल किया गया, बनी इस्राईल का एक बड़ा आदमी इस चाल का शिकार हो गया। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उसको इस वबाल से रोका मगर वह बाज़ न आया, और शैतानी जाल में मुब्तला हो गया।

जिसका नतीजा यह हुआ कि बनी इस्राईल में सख़्त क़िस्म का ताऊन फैला जिससे एक रोज़ में सत्तर हज़ार इस्राईली मर गये, यहाँ तक कि जिस शख़्स ने बुरा काम किया था उस जोड़े को बनी इस्राईल ने क़त्ल करके मन्ज़रे आ़म पर टाँग दिया कि सब लोगों को इब्रत (सीख) हासिल हो, और तौबा की, उस वक़्त यह ताऊन दूर हुआ।

क़ुरआन मजीद की उपरोक्त आयतों में इसके मुताल्लिक़ फ़रमायाः

فَانْسَلَخَ مِنْهَا.

यानी हमने अपनी आयतें और उनका इल्म व मारिफ़त उस शख़्स को अ़ता किया था लेकिन वह उससे निकल गया। इन्सिलाख़ का लफ़्ज़ असल में जानवर के खाल के अन्दर से या साँप के केंचली के अन्दर से निकल जाने के लिये बोला जाता है। इस जगह आयतों के इल्म को एक लिबास या खाल के साथ मिसाल देकर यह बतलाया गया कि यह शख़्स इल्म व मारिफ़त (बुज़ुर्गी) से बिल्कुल अलग हो गयाः

فَاَتْبَعَهُ الشَّيْطٰنُ.

यानी पीछे लग गया उसके शैतान। मतलब यह है कि जब तक आयतों का इल्म और अल्लाह का ज़िक्र उसके साथ था, शैतान का क़ाबू उस पर न चल सकता था, जब वह जाता रहा तो शैतान उस पर क़ाबू पाने वाला हो गया।

فَكَانَ مِنَ الْغٰوِيْنَ.

यानी फिर हो गया वह गुमराहों में से। मतलब यह है कि शैतान के क़ाबू में आने का नतीजा यह हुआ कि वह गुमराहों में शामिल हो गया।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَلَوْ شِئْنَا لَرَفَعْنٰهُ بِهَا وَلٰكِنَّهٗ اَخْلَدَ اِلَى الْاَرْضِ وَاتَّبَعَ هَوٰهُ.

यानी अगर हम चाहते तो उन्हीं आयतों के ज़रिये उसको बुलन्द रुतबे वाला कर देते, लेकिन वह तो दुनिया की तरफ़ माईल हो गया और नफ़्सानी इच्छाओं की पैरवी करने लगा।

लफ़्ज़ "अख़्ल-द" 'इख़्लाद' से निकला है, जिसके मायने हैं किसी चीज़ की तरफ़ मैलान के या किसी जगह को लाज़िम पकड़ने के। और 'अर्ज़' के असली मायने ज़मीन के हैं, दुनिया की जितनी चीज़ें हैं वो सब या तो ख़ुद ज़मीन हैं या ज़मीन से मुताल्लिक़ घर, जायदाद, खेती, बाग़ वग़ैरह हैं, या ज़मीन से ही पैदा होने वाली करोड़ों चीज़ें हैं जो इनसान की ज़िन्दगी और ऐश का मदार हैं। इसलिये लफ़्ज़ 'अर्ज़' बोलकर इस जगह पूरी दुनिया मुराद ली गयी है। इस आयत में इस तरफ़ इशारा कर दिया गया कि अल्लाह की आयतें और उनका इल्म ही असल में इज़्ज़त और तरक़्क़ी का सबब हैं, लेकिन जो शख़्स इन आयतों का अदब व सम्मान न करे और दुनिया की ज़लील इच्छाओं को अल्लाह की आयतों से आगे रखे उसके लिये यही इल्म एक वबाल बन जाता है।

इसी वबाल का ज़िक्र आयत में इस तरह किया गया है:

فَمَثَلُهٗ كَمَثَلِ الْكَلْبِ اِنْ تَحْمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ اَوْتَتْرُكْهُ يَلْهَثْ.

लफ़्ज़ 'लहस' के असल मायने यह हैं कि ज़बान निकालकर सख़्ती के साथ साँस लिया जाये।

हर जानदार अपनी ज़िन्दगी में इसका मोहताज है कि अन्दर की गर्म और ज़हरीली हवा को बाहर फेंके और बाहर से ताज़ा हवा हलक़ और नाक के रास्ते से अन्दर ले जाये। इसी पर जानदार की ज़िन्दगी का मदार है, और अल्लाह तआ़ला ने हर जानदार के लिये इस अहम काम को ऐसा आसान कर दिया कि बिना इरादे और बिना मेहनत के उसकी नाक के नथुनों से अन्दर की हवा बाहर और बाहर की ताज़ा हवा अन्दर जाती है, इसमें न उसको कोई ज़ोर लगाना पड़ता है न किसी इख़्तियारी अ़मल की ज़रूरत पड़ती है, क़ुदरती और फ़ितरी तौर पर यह काम लगातार ख़ुद-ब-ख़ुद होता रहता है।

जानदारों में सिर्फ़ कुत्ता ऐसा जानवर है जिसको अपने साँस के आने-जाने में ज़बान निकाल कर ज़ोर लगाना और मेहनत करनी पड़ती है, और दूसरे जानवरों की यह कैफ़ियत सिर्फ़ उस वक़्त होती है जबकि उन पर कोई हमला करे या वे थक जायें, या कोई इत्तिफ़ाक़ी मेहनत उन पर पड़ जाये।

क़ुरआने करीम ने उस शख़्स की कुत्ते के साथ मिसाल दी, वजह यह है कि अल्लाह के हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने की उसको यह सज़ा मिली थी कि ज़बान मुँह से निकल कर सीने पर लटक गयी थी और वह बराबर कुत्ते की तरह हाँपता था, चाहे कोई उस पर हमला करे या न करे, वह हर हाल में हाँपता रहता है।

उसके बाद फ़रमायाः

ذٰلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا.

यानी यही मिसाल है उन लोगों की जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इससे मक्का वाले मुराद हैं जो हमेशा से यह तमन्ना किया करते थे कि उनके पास कोई हादी और रहबर आये जो उनको अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी और नेकी की तरफ़ बुलाये और नेकी के सही तरीक़े सिखाये। फिर जब वह रहबर आ गये और ऐसी खुली निशानियों के साथ आये कि उनके सच्चे और हक़ होने में ज़रा भी शक व शुब्हे की गुंजाईश न रही तो उनको झुठलाने और अल्लाह की आयतों से मुँह फेरने लगे।

और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद बनी इस्राईल हैं, जो हुज़ूरे पाक के तशरीफ़ लाने से पहले आपकी निशानियाँ और ख़ुसूसियतें तौरात में पढ़कर लोगों को बतलाया करते और आपके तशरीफ़ लाने का इन्तिज़ार किया करते थे, मगर जब आप तशरीफ़ लाये तो सबसे ज़्यादा दुश्मनी और मुख़ालफ़त उन्हीं लोगों ने की और तौरात के अहकाम से ऐसे साफ़ निकल गये जैसे बल्अ़म बिन बाऊरा निकल गया था।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

فَاقْصُصِ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُوْنَ.

यानी आप उस शख़्स का वाक़िआ़ इन लोगों को सुना दीजिये, शायद ये कुछ सोचें और उसके वाक़िए से इब्रत (सीख) हासिल करें।

तीसरी आयत में फ़रमाया कि अल्लाह की आयतों को झुठलाने वालों का बुरा हाल है और ये लोग अपनी ही जानों पर ज़ुल्म कर रहे हैं और किसी का कुछ नहीं बिगाड़ते।

उपरोक्त आयतें और इनमें बयान किये हुए वाक़िए में समझ रखने वालों के लिये बहुत से फ़ायदे, इब्रतें और नसीहतें हैं:

अव्वल यह कि किसी शख़्स को अपने इल्म व फ़ज़्ल और इबादत व नेकी पर नाज़ नहीं करना चाहिये, हालात बदलते और बिगड़ते देर नहीं लगती, जैसे बल्अ़म बिन बाऊरा का हश्र हुआ। नेकी व इबादत के साथ उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र और जमाव की दुआ़ और अल्लाह तआ़ला ही पर भरोसा करना चाहिये।

दूसरे यह कि ऐसे मौक़ों (जगहों और हालात) और उनकी तरफ़ ले जाने वाली चीज़ों से भी आदमी को परहेज़ करना चाहिये जहाँ उसको अपने दीन की ख़राबी का अन्देशा हो, ख़ुसूसन माल और बाल-बच्चों की मुहब्बत में इस बुरे अन्जाम को हमेशा सामने रखना चाहिये।

तीसरे यह कि फ़सादी (बुरे और बिगाड़ में मुब्तला) और गुमराह लोगों के साथ ताल्लुक़ और उनका हदिया या दावत वग़ैरह क़ुबूल करने से भी परहेज़ करना चाहिये, बल्अ़म इस बला में उनका हदिया क़ुबूल करने के सबब मुब्तला हुआ।

चौथे यह कि बेहयाई और हरामकारी पूरी क़ौम के लिये तबाही और बरबादी का सामान होती है, जो क़ौम अपने आपको बलाओं और आफ़तों से महफ़ूज़ रखना चाहे उस पर लाज़िम है कि अपनी क़ौम को बेहयाई के कामों से पूरे एहतिमाम के साथ रोके वरना ख़ुदा तआ़ला के अ़ज़ाब को दावत देना होगा।

पाँचवें यह कि अल्लाह की आयतों की ख़िलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी) ख़ुद भी एक अ़ज़ाब है और उसकी वजह से शैतान उस पर ग़ालिब आकर हज़ारों ख़राबियों में भी मुब्तला कर देता है, इसलिये जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला ने दीन का इल्म अ़ता किया हो उसको चाहिये कि उसकी क़द्र करे और अ़मल के सुधार की फ़िक्र से किसी वक़्त लापरवाह न हो।

مَنْ يَّهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِيْ ۚ وَمَنْ يُّضْلِلْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝ وَلَقَدْ
ذَرَاْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيْرًا مِّنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ ۖ لَهُمْ قُلُوْبٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ بِهَا ۡ وَلَهُمْ اَعْيُنٌ
لَّا يُبْصِرُوْنَ بِهَا ۡ وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَّا يَسْمَعُوْنَ بِهَا ۭ اُولٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ ۭ اُولٰٓئِكَ هُمُ
الْغٰفِلُوْنَ ۝

मंय्यह्दिल्लाहु फ़हुवल्-मुह्तदी व मंय्युज़्लिल् फ़-उलाइ-क हुमुल्-ख़ासिरून (178) व ल-क़द् ज़रअ्ना	जिसको अल्लाह रस्ता दे वही रस्ता पाये और जिसको वह बिचला दे सो वही हैं घाटे में। (178) और हमने पैदा किये

लि-जहन्न-म कसीरम् मिनल्-जिन्नि वल्इन्सि लहुम् क़ुलूबुल्-ला यफ़्क़हू-न बिहा व लहुम् अअ्युनुल्-ला युब्सिरू-न बिहा व लहुम् आज़ानुल्-ला यस्मअू-न बिहा, उलाइ-क कल्अन्आमि बल् हुम् अज़ल्लु, उलाइ-क हुमुल्-ग़ाफ़िलून (179)	दोज़ख़ के वास्ते बहुत से जिन्न और आदमी, उनके दिल हैं कि उनसे समझते नहीं, और आँखें हैं कि उनसे देखते नहीं, और कान हैं कि उनसे सुनते नहीं, वे ऐसे हैं जैसे चौपाये (पशु) बल्कि उनसे भी ज़्यादा बेराह (रास्ते से भटके हुए), वही लोग हैं ग़ाफ़िल। (179)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जिसको अल्लाह तआ़ला हिदायत करता है सो हिदायत पाने वाला वही होता है, और जिसको वह गुमराह कर दे सो ऐसे ही लोग (हमेशा के) घाटे में पड़ जाते हैं (फ़िर उनसे हिदायत की उम्मीद करना और हिदायत न होने से ग़मगीन होना बेकार है)। और (जब वे लोग अपनी एहसास की क़ुव्वतों से काम ही नहीं लेते तो हिदायत कहाँ से हो, सो उनके नसीब में तो दोज़ख़ ही है, चुनाँचे) हमने ऐसे बहुत-से जिन्न और इनसान दोज़ख़ (ही में रहने) के लिए पैदा किए हैं, जिनके (नाम को तो) दिल (हैं मगर) ऐसे हैं जिनसे (हक़ बात को) नहीं समझते, (चूँकि उसका इरादा ही नहीं करते) और जिनकी (नाम को तो) आँखें (हैं मगर) ऐसी हैं जिनसे (दलील लेने की नज़र के तौर पर किसी चीज़ को) नहीं देखते, और जिनके (नाम को तो) कान (हैं मगर) ऐसे हैं जिनसे (मुतवज्जह होकर हक़ बात को) नहीं सुनते, (ग़र्ज़ कि) ये लोग (आख़िरत की तरफ़ से बेतवज्जोह होने में) जानवरों की तरह हैं, बल्कि (इस हैसियत से कि चौपायों को आख़िरत की तरफ़ मुतवज्जह होने का पाबन्द तो नहीं बनाया गया सो उनका मुतवज्जह न होना बुरा नहीं और इनको तो इसका हुक्म है फिर भी बेतवज्जोही करते हैं सो इस एतिबार से) ये लोग (उन जानवरों से भी) ज़्यादा बेराह हैं (क्योंकि) ये लोग (बावजूद तवज्जोह दिलाने के आख़िरत से) ग़ाफ़िल हैं (बख़िलाफ़ जानवरों के, जैसा कि ऊपर बयान हुआ)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत का मज़मून यह है कि जिसको अल्लाह तआ़ला ने सही रास्ते की हिदायत कर दी वही हिदायत पाने वाला है, और जिनको गुमराह कर दिया तो वही ख़सारे और नुक़सान में पड़ने वाले हैं।

यह मज़मून क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतों में बार-बार आया है, जिसमें बतलाया गया है कि हिदायत और गुमराही और हर ख़ैर व शर, अच्छे बुरे का ख़ालिक़ सिर्फ़ अल्लाह जल्ल

शानुहू है। इनसान के सामने अच्छे बुरे, सही ग़लत दोनों रास्ते कर दिये गये हैं और इसको एक ख़ास किस्म का इख़्तियार दिया गया है, वह अपने इस इख़्तियार को अगर अच्छे और सही रास्ते में ख़र्च करता है तो सवाब और जन्नत का मुस्तहिक़ होता है, बुरे और ग़लत रास्ते में लगाता है तो अ़ज़ाब और जहन्नम में ठिकाना होता है।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि हिदायत पाने वाले को एक-वचन के लफ़्ज़ के साथ ज़िक्र किया गया और गुमराही इख़्तियार करने वालों को बहुवचन के साथ। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि हिदायत का रास्ता सिर्फ़ एक ही दीने हक़ है जो आदम अ़लैहिस्सलाम से शुरू होकर ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक सब नबियों का तरीक़ा रहा है, उसूल सब के साझा और एक हैं, इसलिये हक़ की पैरवी करने वाले चाहे किसी ज़माने में और किसी नबी की उम्मत में और किसी दीन व मज़हब से जुड़े हुए हों वे सब एक हैं।

और गुमराही के हज़ारों रास्ते अलग-अलग हैं इसलिये गुमराहों को बहुवचन के कलिमे के साथ "फ़-उलाइ-क हुमुल-ख़ासिरून" फ़रमाया गया। साथ ही इस आयत में यह बात भी क़ाबिले लिहाज़ है कि गुमराही इख़्तियार करने वालों की तो सज़ा और बुरे अन्जाम का ज़िक्र किया गया कि वे लोग ख़सारे में पड़ने वाले हैं, इसके मुक़ाबले में हिदायत पाने वाले हज़रात की किसी ख़ास जज़ा और बदले का ज़िक्र नहीं किया गया, बल्कि सिर्फ़ इतना कहने पर बस किया गया कि वे हिदायत पाने वाले हैं। इसमें इशारा है इस बात की तरफ़ कि हिदायत ऐसी अ़ज़ीमुश्शान नेमत है जो दीन व दुनिया की सारी नेमतों और रहमतों पर हावी है, दुनिया में पाकीज़ा ज़िन्दगी और आख़िरत में जन्नत की कभी न फ़ना होने वाली नेमतें सब हिदायत ही के साथ वाबस्ता हैं। इस लिहाज़ से हिदायत ख़ुद एक भारी नेमत और बहुत बड़ा इनाम है जिसके बाद उन नेमतों के शुमार करने की ज़रूरत नहीं रहती जो हिदायत के सिले (बदले और इनाम) में मिलने वाली हैं।

इसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई बड़ी हुकूमत व सल्तनत का मालिक किसी शख़्स को यह कह दे कि तुम हमारे मुक़र्रब (ख़ास और क़रीबी) हो, हम तुम्हारी बात सुनें और मानेंगे, तो हर जानने वाला जानता है कि इससे बड़ा कोई ओहदा व पद या कोई दौलत उसके लिये नहीं हो सकती।

इसी तरह जब अल्लाह तआ़ला ने किसी शख़्स को हिदायत-याफ़्ता होने का ख़िताब दे दिया तो उसको दीन व दुनिया की सारी नेमतें हासिल हो गयीं। इसी लिये पहले के बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र व इबादत ख़ुद ही अपनी जज़ा और अल्लाह तआ़ला की अ़ज़ीमुश्शान अ़ता है, जो शख़्स ज़िक्रुल्लाह में मशग़ूल है वह उसी वक़्त अल्लाह तआ़ला का इनाम नक़द पा रहा है, आख़िरत व जन्नत का इनाम दूसरी नेमत है। इसी से क़ुरआने करीम की उस आयत का मतलब भी समझ में आ जाता है जिसमें फ़रमायाः

جَزَآءً مِّنْ رَّبِّكَ عَطَآءً

कि एक ही चीज़ को जज़ा भी फ़रमाया गया और अ़ता भी, हालाँकि दोनों चीज़ें अलग अलग हैं। जज़ा किसी अ़मल का मुआ़वज़ा होता है और अ़ता बिला-मुआ़वज़ा।

इसमें जज़ा व अ़ता की हक़ीक़त बतला दी कि जिस चीज़ को तुम जज़ा और अ़मल का बदला समझते हो वह भी दर हक़ीक़त हमारी अ़ता व इनाम ही है, क्योंकि जिस अ़मल का यह बदला मिला है वह अ़मल ख़ुद हमारा इनाम था।

दूसरी आयत में भी इसी मज़मून की अधिक वज़ाहत है कि हिदायत और गुमराही दोनों अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में हैं, जिसको हिदायत मिल गयी उससे सारे काम हिदायत ही के मुनासिब होते हैं। और जो गुमराही में पड़ गया उसके सारे काम उसी अन्दाज़ के होते हैं।

इसलिये फ़रमायाः

وَلَقَدْ ذَرَاْنَا لِجَهَنَّمَ كَثِيْرًا مِّنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ، لَهُمْ قُلُوْبٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ بِهَا وَلَهُمْ اَعْيُنٌ لَّا يُبْصِرُوْنَ بِهَا، وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَّا يَسْمَعُوْنَ بِهَا.

यानी हमने जहन्नम के लिये पैदा किया है बहुत से जिन्नात और इनसानों को जिनकी पहचानें ये हैं कि उनके पास समझने के लिये दिल और देखने के लिये आँखें और सुनने के लिये कान सब कुछ मौजूद हैं, जिनको वे सही इस्तेमाल करें तो सीधे रास्ते को पा लें और नफ़े नुक़सान को समझ लें, लेकिन उनका यह हाल है कि न वे दिलों से बात समझते हैं, न आँखों से देखने की चीज़ों को देखते हैं, और न कानों से सुनने की चीज़ों को सुनते हैं।

इसमें यह बतला दिया कि अगरचे अल्लाह की तक़दीर एक छुपा राज़ है जिसका किसी को इस दुनिया में इल्म नहीं होता, लेकिन उसकी निशानियों से कुछ अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। जहन्नम वालों की निशानी यह है कि वे ख़ुदा तआ़ला की दी हुई क़ुव्वतों को उनके सही कामों में न लगायें, सही इल्म व मारिफ़त के लिये जो अल्लाह जल्ल शानुहू ने अ़क्ल और आँख कान अ़ता फ़रमाये हैं उनको वे ग़लत जगह और ग़लत चीज़ों में लगाते हैं और असल मक़सद जिसके ज़रिये हमेशा की और न ख़त्म होने वाली राहत व दौलत मिल सकती थी उसकी तरफ़ ध्यान नहीं देते।

आयत में काफ़िरों के न समझने, न देखने और न सुनने का मतलब

इस आयत में उन लोगों की समझ-बूझ और देखना व सुनना सब चीज़ों की बिल्कुल नफ़ी की गयी है, कि ये न कुछ समझते हैं, न कोई चीज़ देखते हैं, न कोई कलाम सुनते हैं, हालाँकि वास्तविकता और अनुभव यह है कि ये लोग न पागल व दीवाने होते हैं जो कुछ न समझें और न नाबीना होते हैं कि कुछ न देखें और न बहरे होते हैं कि कुछ न सुनें, बल्कि देखा यह जाता है कि दुनिया के कामों में ये अक्सर लोगों से ज़्यादा चालाक और होशियार नज़र आते हैं।

मगर बात यह है कि अल्लाह तआ़ला ने अपनी मख़्लूक़ात में से हर मख़्लूक़ के अन्दर उसकी ज़रूरत के मुताबिक़ और उसकी ज़िन्दगी के मक़सद के मुनासिब अ़क़्ल व शऊर रखा है।

जिन चीज़ों को हम बेअ़क्ल और बेहिस व बेशऊर कहते और समझते हैं दर हक़ीक़त वो भी एहसास व समझ और अ़क्ल व शऊर से ख़ाली नहीं, अलबत्ता ये चीज़ें उनमें उसी मात्रा में हैं जो मात्रा उनके वजूद के मक़सद को पूरा करने के लिये काफ़ी हो। सब से कम अ़क्ल व शऊर और हिस जमादात यानी मिट्टी और पत्थर वग़ैरह में है, जिनको न कुछ बढ़ना है न अपनी जगह से निकलना और चलना फिरना, वो इतनी कम है कि उनमें ज़िन्दगी के आसार का पहचानना भी बहुत दुश्वार है। इससे कुछ अधिक नबातात (पेड़-पौधों) में है, जिनके वजूद के मक़सद में बढ़ना, फलना फूलना दाख़िल है। उसी के मुनासिब अ़क्ल व समझ उनको दे दिया गया। उसके बाद हैवानात का नम्बर है, जिनके वजूद के मक़सद में बढ़ना भी दाख़िल है, चलना फिरना भी और चल-फिरकर अपनी ग़िज़ा हासिल करना भी, और नुक़सानदेह व घातक चीज़ों से बचना भागना भी, और नस्ल पैदा करना भी। इसलिये उनको जो अ़क्ल व शऊर मिला वह औरों से ज़्यादा मिला, मगर उतना ही जिससे वे अपने खाने पीने, पेट भरने, सोने जागने वग़ैरह का इन्तिज़ाम कर लें और दुश्मन से अपनी जान बचा लें। सब के बाद इनसान का नम्बर है जिसके वजूद का मक़सद सब चीज़ों से आगे यह है कि अपने पैदा करने वाले और पालने वाले को पहचाने, उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ चले, उसकी नापसन्द चीज़ों से परहेज़ करे, सारी मख़्लूक़ात की हक़ीक़तों और असलियत पर नज़र डाले और उनसे काम ले, और हर चीज़ के नतीजों व अन्जाम को समझे, खरे-खोटे अच्छे-बुरे को परखे, बुराईयों से बचे, अच्छाईयों को इख़्तियार करे। इसी इनसानी जाति की यह ख़ुसूसियत है कि इसको तरक़्क़ी करने का बड़ा मैदान मिला है, जो दूसरी जातियों को हासिल नहीं। यह जब तरक़्क़ी करता है तो फ़रिश्तों की सफ़ से आगे मक़ाम पाता है, इसी की यह ख़ुसूसियत है कि इसके आमाल व अफ़आ़ल पर जज़ा व सज़ा है। इसी लिये इसको तमाम किस्म की मख़्लूक़ात से ज़्यादा अ़क्ल व शऊर मिला है ताकि वह आ़म हैवानों के स्तर से बुलन्द होकर अपने वजूद के मक़सद के मुनासिब कामों में लगे। अल्लाह तआ़ला की दी हुई मख़्सूस अ़क्ल व शऊर और उसकी बख़्शी हुई देखने और सुनने की ताक़त व सलाहियत को उसी काम में ख़र्च करे।

जब यह हक़ीक़त सामने आ गयी तो एक इनसान का समझना, देखना, सुनना दूसरे जानवरों के समझने, देखने, सुनने से अलग होना चाहिये। अगर उसने भी सिर्फ़ उन्हीं चीज़ों में अपनी अ़क्ल और देखने व सुनने की ताक़तों को लगा दिया जिनमें दूसरे जानवर लगाते हैं और जो काम इनसान के लिये मख़्सूस था कि हर चीज़ के परिणामों और अन्जाम पर नज़र रखे और बुराईयों से बचे, भलाईयों को इख़्तियार करे, उन पर ध्यान न दिया, तो उसको बावजूद अ़क्ल रखने के बेअ़क्ल, बावजूद देखने वाला होने के अंधा, बावजूद सुनने वाला होने के बहरा ही कहा जायेगा। इसी लिये क़ुरआने करीम ने एक दूसरी जगह ऐसे लोगों को "सुम्मुम् बुक्मुन् उम्युन्" यानी बहरे, गूँगे, अन्धे फ़रमाया है।

इसमें इसका बयान नहीं कि वे अपने खाने-पीने, रहने-सहने और सोने-जागने की ज़रूरतों को समझते नहीं, या यह कि उनके मुताल्लिक़ चीज़ों को देखते सुनते नहीं, बल्कि ख़ुद क़ुरआने

करीम ने उन लोगों के बारे में एक जगह फ़रमायाः

يَعْلَمُوْنَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْاٰخِرَةِ هُمْ غٰفِلُوْنَ.

यानी ये लोग दुनिया की ज़िन्दगी की ज़ाहिरी हालत को ख़ूब जानते हैं मगर आख़िरत से ग़ाफ़िल व जाहिल हैं। और फ़िरऔन व हामान और उनकी क़ौमों के बारे में फ़रमायाः

وَكَانُوْا مُسْتَبْصِرِيْنَ.

यानी ये लोग बड़े रोशन-ख़्याल थे। मगर चूँकि इनकी दानाई व बीनाई को ख़र्च करने का सारा मौक़ा सिर्फ़ उतना ही रहा जितना आ़म जानवरों का होता है कि अपने तन बदन की ख़िदमत कर लें, रूह की ख़िदमत और उसकी राहत के मुताल्लिक़ कुछ न सोचा न देखा, इसलिये वे इन आर्थिक चीज़ों और दुनियावी मामलात में कितनी ही तरक़्क़ी कर लें, चाँद और मंगल ग्रह को फ़तह कर लें, नक़ली सय्यारों से दुनिया की फ़िज़ा को भर दें लेकिन यह सब ख़िदमत सिर्फ़ तन बदन के ढाँचे और पेट ही की है, इससे आगे नहीं जो रूह के लिये हमेशा के चैन व राहत का सामान बने, इसलिये क़ुरआने करीम उनको अन्धा बहरा कहता है और इस आयत में उनके समझने, देखने, सुनने की नफ़ी करता है। मतलब यह है कि उन लोगों को जो समझना चाहिये था वह नहीं समझे, जो देखना चाहिये था वह नहीं देखा, जो सुनना चाहिये था वह नहीं सुना, और जो कुछ समझा और देखा और सुना वह आ़म हैवानों के स्तर की चीज़ें थीं, जिनमें गधा घोड़ा, बैल, बकरी सब शरीक हैं।

इसी लिये उक्त आयत के आख़िर में इन लोगों के मुताल्लिक़ फ़रमायाः

اُولٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ.

कि ये लोग चौपायों (जानवरों) की तरह हैं कि बदन के सिर्फ़ मौजूदा ढाँचे की ख़िदमत में लगे हुए हैं, रोटी और पेट इनकी सोच और उड़ान की आख़िरी हद है। फिर फ़रमायाः

بَلْ هُمْ اَضَلُّ.

बल्कि ये लोग चौपायों और जानवरों से भी ज़्यादा बेवक़ूफ़ हैं। वजह यह है कि जानवर शरई अहकाम के मुकल्लफ़ (पाबन्द) नहीं, उनके लिये जज़ा व सज़ा नहीं, उनका मक़सद अगर सिर्फ़ मौजूदा ज़िन्दगी और इसके ढाँचे की दुरुस्ती तक रहे तो सही है, मगर इनसान को तो अपने आमाल का हिसाब देना है और इस पर जज़ा व सज़ा होने वाली है, इसलिये इसका इन कामों को अपना मक़सद समझ बैठना जानवरों से ज़्यादा बेवक़ूफ़ी है। इसके अ़लावा जानवर अपने आक़ा व मालिक की ख़िदमत पूरी बजा लाते हैं और नाफ़रमान इनसान अपने रब और मालिक की ख़िदमत में कमी व कोताही करता है, इसलिये वह जानवरों से ज़्यादा बेवक़ूफ़ और ग़ाफ़िल ठहरा। इसी लिये फ़रमाया "उलाइ-क हुमुल-ग़ाफ़िलून" कि वही लोग ग़ाफ़िल व लापरवाह हैं।

وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا ۖ وَذَرُوا الَّذِيْنَ يُلْحِدُوْنَ فِيْٓ اَسْمَآئِهٖ ۗ سَيُجْزَوْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿۱۸۰﴾

व लिल्लाहिल्-अस्माउल्-हुस्ना फ़द्अ़ूहु बिहा व ज़रुल्लज़ी-न युल्हिदू-न फ़ी अस्माइही, सयुज्ज़ौ-न मा कानू यअ़्मलून (180)	और अल्लाह के लिये हैं सब अच्छे नाम सो उसको पुकारो वही नाम कहकर और छोड़ दो उनको जो टेढ़ी राह पर चलते हैं उसके नामों में, वे बदला पाकर रहेंगे अपने किये का। (180)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अच्छे-अच्छे (मख़्सूस) नाम अल्लाह तआ़ला ही के लिये (ख़ास) हैं, सो उन (नामों) से अल्लाह तआ़ला ही को नामित किया करो और (दूसरों पर उन नामों का हुक्म मत किया करो बल्कि) ऐसे लोगों से ताल्लुक़ भी न रखो जो उसके (ज़िक्र हुए) नामों में ग़लत रास्ता इख़्तियार करते हैं (इस तरह से कि अल्लाह के ग़ैर पर उनका हुक्म लगाते हैं जैसा कि वे लोग उनको माबूद और ख़ुदा एतिक़ाद के साथ कहते थे) उन लोगों को उनके किये की ज़रूर सज़ा मिलेगी।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में जहन्नम वालों का ज़िक्र था जिन्होंने अपनी अ़क़्ल व हवास (एहसास की क़ुव्वतों) को अल्लाह तआ़ला की निशानियों के देखने, सुनने और समझने सोचने में ख़र्च नहीं किया और आख़िरत की हमेशा वाली और कभी न ख़त्म होने वाली ज़िन्दगी के लिये कोई सामान जमा नहीं किया, जिसका नतीजा यह हो गया कि वे ख़ुदा की दी हुई अ़क़्ल व समझ को ज़ाया करके ज़िक्रुल्लाह के ज़रिये अपने नफ़्स के सुधार व फ़लाह से ग़ाफ़िल हो गये और जानवरों से ज़्यादा गुमराही और बेवक़ूफ़ी में मुब्तला हो गये।

मज़कूरा आयत में उनके रोग का इलाज और दर्द की दवा बतलाई गयी है कि वह अल्लाह तआ़ला से दुआ़ और ज़िक्रुल्लाह की अधिकता है। फ़रमायाः

وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا.

यानी अल्लाह ही के लिये हैं अच्छे नाम, तो तुम पुकारो उसको उन्हीं नामों से।

अस्मा-ए-हुस्ना की वज़ाहत

अच्छे नाम से मुराद वो नाम हैं जो कमाल की सिफ़ात के आला दर्जे पर दलालत करने वाले हैं, और ज़ाहिर है कि किसी कमाल का आला दर्जा जिससे ऊपर कोई दर्जा न हो सके वह सिर्फ़

ख़ालिके कायनात अल्लाह तआ़ला ही को हासिल है, उसके सिवा किसी मख़्लूक़ को यह मक़ाम हासिल नहीं हो सकता, क्योंकि हर कामिल से दूसरा शख़्स उससे ज़्यादा कामिल और फ़ाज़िल (श्रेष्ठ) से अफ़ज़ल हो सकता है। क़ुरआन के फ़रमानः

فَوْقَ كُلِّ ذِىْ عِلْمٍ عَلِيْمٌ.

का यही मतलब है कि हर इल्म वाले से बढ़कर कोई दूसरा अ़लीम (जानने वाला) हो सकता है। इसी लिये इस आयत में ऐसी इबारत इख़्तियार की गयी जिससे मालूम हो कि ये अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे नाम) सिर्फ़ अल्लाह ही की ख़ुसूसियत है जो दूसरों को हासिल नहीं।

فَادْعُوْهُ بِهَا.

यानी जब यह मालूम हो गया कि अल्लाह तआ़ला के लिये अस्मा-ए-हुस्ना, (अच्छे-अच्छे नाम) हैं और वो नाम उसी की ज़ात के साथ ख़ास हैं तो लाज़िम है कि अल्लाह तआ़ला ही को पुकारो और उन्हीं अच्छे नामों के साथ पुकारो।

पुकारना या बुलाना दुआ़ का तर्जुमा है, और दुआ़ का लफ़्ज़ क़ुरआन में दो मायने के लिये इस्तेमाल होता है- एक अल्लाह का ज़िक्र, उसकी तारीफ़ व प्रशंसा, उसकी पाकी और बुज़ुर्गी के साथ, दूसरी आवश्यकताओं और मुश्किलों के वक़्त अल्लाह तआ़ला से अपनी हाजत तलब करना और मुसीबतों व आफ़तों से निजात और मुश्किलों की आसानी की दरख़्वास्त करना। इस आयत में "फ़द्ऊ़हु बिहा" का लफ़्ज़ दोनों मायने को शामिल है, तो आयत के मायने यह हुए कि तारीफ़ व प्रशंसा और तस्बीह के लायक़ भी सिर्फ़ उसी की पाक ज़ात है और मुश्किलों व मुसीबतों से निजात और ज़रूरत पूरी करना भी सिर्फ़ उसी के क़ब्ज़े में है, इसलिये तारीफ़ व ख़ूबी बयान करो तो उसी की करो, और ज़रूरत पूरी करने और मुश्किलों को हल करने के लिये पुकारो तो उसी को पुकारो।

और पुकारने का तरीक़ा भी यह बतला दिया कि उन्हीं अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) के साथ पुकारो जो अल्लाह तआ़ला के लिये साबित हैं।

दुआ़ के कुछ आदाब

इसलिये इस आयत से दो हिदायतें उम्मत को मिलीं- एक यह कि अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई ज़ात असली तारीफ़ व प्रशंसा या मुश्किलों को दूर करने और ज़रूरतों को पूरी करने के लिये पुकारने के लायक़ नहीं, दूसरे यह कि उसके पुकारने के लिये भी हर शख़्स आज़ाद नहीं कि जो अलफ़ाज़ चाहे इख़्तियार कर ले, बल्कि अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल व करम से हमें वो अलफ़ाज़ भी बतला दिये जो उसकी शान के लायक़ हैं और हमें पाबन्द कर दिया कि उन्हीं अलफ़ाज़ के साथ उसको पुकारें, अपनी तजवीज़ से दूसरे अलफ़ाज़ न बदलें, क्योंकि इनसान की क़ुदरत नहीं कि तमाम पहलुओं की रियायत करके उसकी शान के मुनासिब अलफ़ाज़ बना सके।

बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- अल्लाह तआ़ला के निन्नानवे नाम हैं जो शख़्स उनको महफ़ूज़ (याद) कर ले वह जन्नत में दाख़िल होगा। ये निन्नानवे नाम इमाम तिर्मिज़ी और इमाम हाकिम ने तफ़सील के साथ बतलाये हैं।

अल्लाह तआ़ला के ये निन्नानवे नाम पढ़कर जिस मक़सद के लिये दुआ़ की जाये क़ुबूल होती है। अल्लाह तआ़ला का वायदा है:

اُدْعُوْنِیْٓ اَسْتَجِبْ لَكُمْ.

यानी तुम मुझे पुकारो तो मैं तुम्हारी दुआ़ क़ुबूल करूँगा। हाजतों व मुश्किलों के लिये दुआ़ से बढ़कर कोई तदबीर ऐसी नहीं जिसमें किसी नुक़सान का ख़तरा न हो और नफ़ा यक़ीनी हो, अपनी हाजतों (ज़रूरतों) के लिये अल्लाह जल्ल शानुहू से दुआ़ करने में किसी नुक़सान का तो कोई शुब्हा ही नहीं, और एक नफ़ा नक़द है कि दुआ़ एक इबादत है, उसका सवाब दुआ़ करने वाले के नामा-ए-आमाल में लिखा जाता है। हदीस में है:

اَلدُّعَاءُ مُخُّ الْعِبَادَةِ.

यानी दुआ़ करना इबादत का मग़ज़ है। और जिस मक़सद के लिये उसने दुआ़ की है अक्सर तो जूँ-का-तूँ मक़सद पूरा हो जाता है, और कभी ऐसा भी होता है कि जिस चीज़ को उसने अपना मक़सद बनाया था वह उसके हक़ में मुफ़ीद न थी, अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से उसकी दुआ़ को दूसरी तरफ़ फेर देते हैं जो उसके लिये मुफ़ीद हो। और अल्लाह की हम्द व तारीफ़ के साथ अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र करना ईमान की ग़िज़ा है जिसके नतीजा में इनसान का ताल्लुक़ व मुहब्बत अल्लाह तआ़ला से क़ायम हो जाती है और दुआ़ की तकलीफ़ें अगर पेश भी आयें तो मामूली और आसान हो जाती हैं।

इसी लिये बुख़ारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी, नसाई की सही हदीसों में आया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जिस शख़्स को कोई ग़म या बेचैनी या मुश्किल काम पेश आये उसको चाहिये कि ये कलिमात पढ़े, सब मुश्किलें आसान हो जायेंगी। वे कलिमात ये हैं:

لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ الْعَظِيْمُ الْحَلِيْمُ، لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ.

لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَرَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيْمِ.

ला इला-ह इल्लल्लाहुल् अज़ीमुल् हलीम। ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुल-अ़र्शिल् अ़ज़ीम।
ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुस्समावाति वल्अर्ज़ि व रब्बुल-अ़र्शिल् करीम।

और मुस्तदरक हाकिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत फ़ातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से फ़रमाया कि तुम्हारे लिये इससे क्या चीज़ बाधा और रुकावट है कि तुम मेरी वसीयत को सुन लो (और उस पर अ़मल किया करो)। वह वसीयत यह है कि सुबह शाम यह दुआ़ कर लिया करो:

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ بِرَحْمَتِكَ اَسْتَغِيْثُ اَصْلِحْ لِيْ شَاْنِيْ كُلَّهٗ وَلَا تَكِلْنِيْٓ اِلٰى نَفْسِيْ طَرْفَةَ عَيْنٍ.

या हय्यु या कय्यूमु बि-रह्मति-क अस्तग़ीसु अस्लिह् ली शअ्नी कुल्लहू व ला तकिल्नी इला नफ़्सी तर्-फ़-त ऐनी।

यह दुआ भी तमाम हाजतों व मुश्किलों के लिये बेनज़ीर है।

ख़ुलासा यह है कि उपरोक्त आयत के इस जुमले में दो हिदायतें उम्मत को दी गयीं- एक यह कि तारीफ़ व सना और मुश्किलों व हाजतों के लिये सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला को पुकारो मख़्लूक़ात को नहीं। दूसरे यह कि उसको उन्हीं नामों से पुकारो जो अल्लाह तआ़ला के लिये साबित हैं, उसके अलफ़ाज़ न बदलो।

आयत के अगले जुमले में इसी के बारे में इरशाद फ़रमायाः

وَذَرُوا الَّذِينَ يُلْحِدُونَ فِي أَسْمَآئِهِ سَيُجْزَوْنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ.

यानी छोड़िये उन लोगों को जो अल्लाह तआ़ला के अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) में इल्हाद यानी बेदीनी और ग़लत चलन अपनाते हैं, उनको उनकी ग़लत रविश और टेढ़ी चाल का बदला मिल जायेगा। **इल्हाद** के मायने लुग़त में मैलान और दरमियानी राह से हट जाने के आते हैं, इसी लिये क़ब्र की लहद को लहद कहा जाता है, क्योंकि वह दरमियान से हटी हुई होती है। क़ुरआने करीम में लफ़्ज़ 'इल्हाद' क़ुरआन के सही मायनों को छोड़कर इधर-उधर का मतलब बयान करने और रद्दोबदल करने के मायने में बोला जाता है।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी है कि आप ऐसे लोगों से ताल्लुक़ भी छोड़ दें जो अल्लाह तआ़ला के अस्मा-ए-हुस्ना (अच्छे-अच्छे नामों) में इल्हाद यानी रद्दोबदल और ग़लत राह इख़्तियार करने से काम लेते हैं।

अल्लाह के नामों में टेढ़ी चाल चलने की मनाही और उसकी मुख़्तलिफ़ सूरतें

अल्लाह के नामों में तहरीफ़ (रद्दोबदल) या ग़लत राह इख़्तियार करने की कई सूरतें हो सकती हैं, वो सब इस आयत के मज़मून में दाख़िल हैं।

अव्वल यह कि अल्लाह तआ़ला के लिये वह नाम इस्तेमाल किया जाये जो क़ुरआन व हदीस में अल्लाह तआ़ला के लिये साबित नहीं। उलेमा-ए-हक़ का इत्तिफ़ाक़ है कि अल्लाह तआ़ला के नाम और सिफ़ात में किसी को यह इख़्तियार नहीं कि जो चाहे नाम रख दे, या जिस सिफ़त के साथ चाहे उसकी तारीफ़ व सना करे, बल्कि सिर्फ़ वही अलफ़ाज़ होने ज़रूरी हैं जो क़ुरआन व सुन्नत में अल्लाह तआ़ला के लिये बतौर नाम या सिफ़त के ज़िक्र किये गये हैं। मसलन अल्लाह तआ़ला को करीम कह सकते हैं, सख़ी नहीं कह सकते। नूर कह सकते हैं अब्यज़ (सफ़ेद) नहीं कह सकते। शाफ़ी कह सकते हैं तबीब (चिकित्सक) नहीं कह सकते, क्योंकि ये दूसरे अलफ़ाज़ मन्क़ूल नहीं अगरचे इन्हीं अलफ़ाज़ के मायनों वाले हैं।

दूसरी सूरत नामों में इल्हाद की यह है कि अल्लाह तआ़ला के जो नाम क़ुरआन व सुन्नत से साबित हैं उनमें से किसी नाम को नामुनासिब समझकर छोड़ दे, इसका बेअदबी होना ज़ाहिर है।

किसी शख़्स को अल्लाह तआ़ला के मख़्सूस नाम से नामित या मुख़ातब करना जायज़ नहीं

तीसरी सूरत यह है कि अल्लाह तआ़ला के मख़्सूस नामों को किसी दूसरे शख़्स के लिये इस्तेमाल करे। मगर इसमें यह तफ़सील है कि अल्लाह के पाक नामों में से कुछ नाम ऐसे भी हैं जिनको ख़ुद क़ुरआन व हदीस में दूसरे लोगों के लिये भी इस्तेमाल किया गया है, और कुछ वो हैं जिनको सिवाय अल्लाह तआ़ला के और किसी के लिये इस्तेमाल करना क़ुरआन व हदीस से साबित नहीं। तो जिन नामों का इस्तेमाल ग़ैरुल्लाह के लिये क़ुरआन व हदीस से साबित है वो नाम तो औरों के लिये भी इस्तेमाल हो सकते हैं, जैसे रहीम, रशीद, अ़ली, करीम, अ़ज़ीज़ वग़ैरह, और अस्मा-ए-हुस्ना में से वो नाम जिनका ग़ैरुल्लाह के लिये इस्तेमाल करना क़ुरआन व हदीस से साबित नहीं वो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के लिये मख़्सूस हैं, उनको ग़ैरुल्लाह (अल्लाह के अ़लावा) के लिये इस्तेमाल करना उक्त इल्हाद में दाख़िल और नाजायज़ व हराम है। मसलन रहमान, सुब्हान, रज़्ज़ाक़, ख़ालिक़, ग़फ़्फ़ार, क़ुद्दूस वग़ैरह।

फिर इन मख़्सूस नामों को ग़ैरुल्लाह के लिये इस्तेमाल करना अगर किसी ग़लत अ़क़ीदे की बिना पर है कि उसको ही ख़ालिक़ या राज़िक़ समझकर इन अलफ़ाज़ से ख़िताब कर रहा है तब तो ऐसा कहना कुफ़्र है, और अगर अ़क़ीदा ग़लत नहीं महज़ बेफ़िक्री या बेसमझी से किसी शख़्स को ख़ालिक़, राज़िक़ या रहमान, सुब्हान कह दिया तो यह अगरचे कुफ़्र नहीं मगर मुश्रिकाना अलफ़ाज़ होने की वजह से सख़्त गुनाह है।

अफ़सोस है कि आजकल आ़म मुसलमान इस ग़लती में मुब्तला हैं। कुछ लोग तो वो हैं जिन्होंने इस्लामी नाम ही रखने छोड़ दिये, उनकी सूरत व सीरत से तो पहले भी मुसलमान समझना उनका मुश्किल था, नाम से पता चल जाता था, अब नये नाम अंग्रेज़ी तर्ज़ के रखे जाने लगे। लड़कियों के नाम इस्लामी औरतों के तर्ज़ के ख़िलाफ़ ख़दीजा, आयशा, फ़ातिमा के बजाय, नसीम, शमीम, शहनाज़, नजमा, परवीन होने लगे। इससे ज़्यादा अफ़सोस की बात यह है कि जिन लोगों के इस्लामी नाम हैं, अ़ब्दुर्रहमान, अ़ब्दुल-ख़ालिक़, अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़, अ़ब्दुल-ग़फ़्फ़ार, अ़ब्दुल-क़ुद्दूस वग़ैरह, उनमें कमी और उनको छोटा करने का यह ग़लत तरीक़ा इख़्तियार कर लिया गया कि सिर्फ़ आख़िरी लफ़्ज़ उनके नाम की जगह पुकारा जाता है। रहमान, ख़ालिक़, रज़्ज़ाक़, ग़फ़्फ़ार का ख़िताब इनसानों को दिया जा रहा है, और इससे ज़्यादा ग़ज़ब की बात यह है कि क़ुदरतुल्लाह को अल्लाह साहब और क़ुदरते-ख़ुदा को ख़ुदा साहब के नाम से पुकारा जाता है, यह सब नाजायज़ व हराम और बड़ा गुनाह है, जितनी मर्तबा यह लफ़्ज़ पुकारा जाता है

उतनी ही मर्तबा गुनाह-ए-कबीरा (बड़े गुनाह) के करने का जुर्म होता है और सुनने वाला भी गुनाह से ख़ाली नहीं रहता।

यह बेलज़्ज़त और बेफ़ायदा गुनाह ऐसा है जिसको हमारे हज़ारों भाई अपने रात-दिन का मश्ग़ला बनाये हुए हैं और कोई फ़िक्र नहीं करते कि इस ज़रा सी हरकत का अन्जाम कितना ख़तरनाक है, जिसकी तरफ़ आयते मज़्कूरा के आख़िरी जुमले में तंबीह फ़रमाई गयी है:

سَيُجْزَوْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ.

यानी उनको अपने किये का बदला दिया जायेगा। इस बदले को स्पष्ट नहीं किया गया, इस ग़ैर-स्पष्ट रखने से सख़्त अ़ज़ाब की तरफ़ इशारा है।

जिन गुनाहों में कोई दुनियावी फ़ायदा या लज़्ज़त व राहत है उनमें तो कोई कहने वाला यह भी कह सकता है कि मैं अपनी इच्छा या ज़रूरत से मजबूर हो गया, मगर अफ़सोस यह है कि आज मुसलमान ऐसे बहुत से फ़ुज़ूल गुनाहों में भी अपनी जहालत या ग़फ़लत से मुब्तला नज़र आते हैं जिनमें न दुनिया का कोई फ़ायदा है न अदना दर्जे की कोई राहत व लज़्ज़त है। वजह यह है कि हलाल व हराम और जायज़ व नाजायज़ की तरफ़ ध्यान ही न रहा। अल्लाह तआ़ला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

وَمِمَّنْ خَلَقْنَآ اُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ ﴿۱۸۱﴾ وَ ع ٢٢ / ١٢
الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا سَنَسْتَدْرِجُهُمْ مِّنْ حَيْثُ لَا يَعْلَمُوْنَ ﴿۱۸۲﴾ وَاُمْلِيْ لَهُمْ ۭ اِنَّ كَيْدِيْ
مَتِيْنٌ ﴿۱۸۳﴾ اَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوْا ۫ مَا بِصَاحِبِهِمْ مِّنْ جِنَّةٍ ۭ اِنْ هُوَ اِلَّا نَذِيْرٌ مُّبِيْنٌ ﴿۱۸۴﴾ اَوَلَمْ يَنْظُرُوْا فِيْ
مَلَكُوْتِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَيْءٍ ۙ وَّاَنْ عَسٰٓى اَنْ يَّكُوْنَ قَدِ اقْتَرَبَ اَجَلُهُمْ ۚ
فَبِاَيِّ حَدِيْثٍۢ بَعْدَهٗ يُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۸۵﴾

व मिम्-मन् ख़लक़्ना उम्मतुंय्-यह्दू-न बिल्हक़्क़ि व बिही यअ़्दिलून (181) ✿ वल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना सनस्तद्रिजुहुम् मिन् हैसु ला यअ़्लमून (182) व उम्ली लहुम् इन्-न कैदी मतीन (183) अ-व लम् य-तफ़क्करू मा बिसाहिबिहिम् मिन्	और उन लोगों में कि जिनको हमने पैदा किया है एक जमाअ़त है कि राह बतलाते हैं सच्ची और उसी के मुवाफ़िक़ इन्साफ़ करते हैं। (181) ✿ और जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को हम उनको आहिस्ता-आहिस्ता पकड़ेंगे ऐसी जगह से जहाँ से उनको ख़बर भी न होगी। (182) और मैं उनको ढील दूँगा बेशक मेरा दाव पक्का है। (183) क्या उन्होंने ध्यान नहीं किया कि उनके रफ़ीक़

जिन्नतिन्, इन् हु-व इल्ला नज़ीरुम्-मुबीन (184) अ-व लम् यन्ज़ुरू फी म-लकूतिस्समावाति वल्अर्ज़ि व मा ख़-लक़ल्लाहु मिन् शैइंव्-व अन् अ़सा अंय्यकू-न क़दिक्त-र-ब अ-जलुहुम् फ़बिअय्यि हदीसिम्-बअ़्दहू युअ्मिनून (185)	(साथी) को कुछ भी जुनून नहीं, वह तो साफ़ डराने वाला है। (184) क्या उन्होंने नज़र नहीं की सल्तनत में आसमान और ज़मीन की, और जो कुछ पैदा किया है अल्लाह ने हर चीज़ से और इसमें कि शायद क़रीब आ गया हो उनका वायदा, सो उसके बाद किस बात पर ईमान लायेंगे। (185)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमारी मख़्लूक़ (जिन्नात और इनसानों) में (सब गुमराह ही नहीं बल्कि) एक जमाअ़त (उनमें) ऐसी भी है जो (दीन-ए-) हक़ (यानी दीन इस्लाम) के मुवाफ़िक़ (लोगों को) हिदायत (भी) करते हैं और उसी के मुवाफ़िक़ (अपने और ग़ैरों के मामलों में) इन्साफ़ भी करते हैं। और जो लोग हमारी आयतों को झुठलाते हैं, हम उनको धीरे-धीरे (जहन्नम की तरफ़) लिये जा रहे हैं, इस तरह पर कि उनको ख़बर भी नहीं। और (दुनिया में अ़ज़ाब नाज़िल कर डालने से) उनको मैं मोहलत देता हूँ, इसमें कोई शक नहीं कि मेरी तदबीर बड़ी मज़बूत है। क्या उन लोगों ने इस बात पर ग़ौर न किया कि उनका जिनसे वास्ता है उनको ज़रा भी जुनून नहीं, वह तो (अ़ज़ाब से) सिर्फ़ एक साफ़-साफ़ डराने वाले हैं (जो कि बुनियादी तौर पर पैग़म्बर का काम होता है)। और क्या उन लोगों ने ग़ौर नहीं किया आसमानों और ज़मीन के आ़लम में, और साथ ही दूसरी चीज़ों में जो अल्लाह तआ़ला ने पैदा की हैं (ताकि उनको तौहीद का तार्किक इल्म हासिल हो जाता) और इस बात में (भी ग़ौर नहीं किया) कि मुम्किन हो सकता है कि उनकी मुद्दत क़रीब ही आ पहुँची हो? (ताकि अ़ज़ाब के अन्देशे से डरते और उससे बचने की फ़िक्र करते, और उस फ़िक्र से दीन-ए-हक़ मिल जाता और मुद्दत व वक़्त के क़रीब होने की संभावना हर वक़्त है और जब क़ुरआन जैसे प्रभावी कलाम से उनकी सोच तक को हरकत नहीं होती तो) फिर इस (क़ुरआन) के बाद कौनसी बात पर ये लोग ईमान लाएँगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में जहन्नम वालों के हालात व सिफ़ात और उनकी गुमराही का यह सबब बयान किया था कि उन्होंने ख़ुदा की दी हुई अ़क़्ल व समझ और फ़ितरी क़ुव्वतों को उनके असली काम में न लगाया और ज़ाया कर दिया। फिर इसके बाद उनके मर्ज़ का इलाज अल्लाह के नामों और ज़िक्रुल्लाह के ज़रिये बतलाया गया था। उक्त आयतों में से पहली आयत में उनके

मुक़ाबले में ईमान वालों और अहले हक़ का ज़िक्र है, जिन्होंने ख़ुदा की दी हुई अ़क़्ल से काम लेकर सही रास्ता इख़्तियार किया। इरशाद है:

وَمِمَّنْ خَلَقْنَآ اُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ.

यानी जिन लोगों को हमने पैदा किया है उनमें एक उम्मत ऐसी है जो हक़ के मुवाफ़िक़ हिदायत करते हैं यानी लोगों को सही रास्ते की तरफ़ रहनुमाई करते हैं, और जब उनमें आपस में कोई झगड़ा या मुक़द्दिमा पेश आये तो अपने झगड़ों का फ़ैसला भी हक़ यानी अल्लाह के क़ानून के मातहत करते हैं।

इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर रह. ने अपनी सनद के साथ नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस आयत को तिलावत करके इरशाद फ़रमाया कि यह उम्मत जिसका ज़िक्र इस आयत में है, मेरी उम्मत है, जो अपने सब झगड़ों के फ़ैसले हक़ व इन्साफ़ यानी अल्लाह के क़ानून के मुताबिक़ करेंगे और लेने-देने के तमाम मामलों में हक़ व इन्साफ़ को सामने रखेंगे।

और अ़ब्द बिन हुमैद की एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को ख़िताब करके फ़रमाया कि यह आयत तुम्हारे हक़ में आई है और तुमसे पहले भी एक उम्मत को यह सिफ़ात अ़ता हो चुकी हैं, फिर यह आयत तिलावत फ़रमाई:

وَمِنْ قَوْمِ مُوْسٰٓى اُمَّةٌ يَّهْدُوْنَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُوْنَ.

मुराद यह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की उम्मत में भी एक जमाअ़त इन सिफ़ात को अपने अन्दर रखती थी कि लोगों की रहनुमाई में और आपसी झगड़ों के निपटारे में हक़ यानी अल्लाह के क़ानून की मुकम्मल पैरवी करती थी, और उम्मते मुहम्मदिया को भी हक़ तआ़ला ने इन सिफ़ात में विशेष दर्जा बख़्शा है।

ख़ुलासा इसका दो ख़स्लतें हैं- एक यह कि दूसरे लोगों का नेतृत्व और रहनुमाई या मश्विरे में शरीअ़त की पैरवी करें। दूसरे यह कि अगर कोई झगड़ा आपस में पेश आ जाये तो उसका फ़ैसला शरीअ़त के क़ानून के मुताबिक़ करें।

ग़ौर किया जाये तो यही दो सिफ़तें हैं जो किसी क़ौम और जमाअ़त की ख़ैर व बेहतरी और दुनिया व आख़िरत की कामयाबी की ज़ामिन हो सकती हैं कि सुलह व जंग और दोस्ती व दुश्मनी की हर हालत में उनका मक़सद (लक्ष्य) हक़ व इन्साफ़ ही हो, अपने दोस्तों और साथियों को काम का जो तरीक़ा बतलायें उसमें भी हक़ की पैरवी हो और दुश्मनों और मुक़ाबले वालों के झगड़ों में भी हक़ के आगे अपने सारे ख़्यालात व इच्छाओं को एक तरफ़ रख दें, जिसका ख़ुलासा है हक़-परस्ती।

उम्मते मुहम्मदिया की दूसरी तमाम उम्मतों पर फ़ज़ीलत और बरतरी का राज़ और इनकी विशेष ख़ूबी और पहचान यही हक़-परस्ती है कि इन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी को हक़ के ताबे

बनाया। जिस जमाअ़त या पार्टी का नेतृत्व और रहनुमाई की वह भी ख़ालिस हक़ के तकाज़ों के मुताबिक़ की, अपनी ज़ाती इच्छाओं और ख़ानदानी या क़ौमी रस्मों को उसमें बिल्कुल भी दख़ल नहीं दिया, और आपसी झगड़ों में भी हमेशा हक़ के सामने गर्दन झुका दी। सहाबा व ताबिईन की पूरी तारीख़ इसकी प्रतीक और गवाह है।

और जब से इस उम्मत में इन दो ख़स्लतों (गुणों) के अन्दर ख़लल और नुक़सान आया उसी वक़्त से इसकी गिरावट और बरबादी शुरू हो गयी।

बहुत ही रंज व अफ़सोस का मक़ाम है कि आज यह हक़-परस्त उम्मत ख़ालिस इच्छा-परस्त बनकर रह गयी है। इसकी पार्टियाँ और जमाअ़तें बनती हैं तो वे भी ख़ालिस नफ़्सानी स्वार्थों और दुनिया के हक़ीर व ज़लील फ़ायदे की बुनियादों पर बनती हैं, एक दूसरे को जिन चीज़ों की पाबन्दी की तरफ़ दावत दी जाती है वो भी ख़ालिस नफ़्सानी इच्छा या ख़ानदानी रस्में होती हैं, कोई उनके ख़िलाफ़ करने लगे तो सब उसका मुक़ाबला करने को तैयार हैं, लेकिन हक़ व शरीअ़त के मुताबिक़ चलने का न कहीं मुआ़हदा होता है न कोई उसकी पैरवी करने के लिये किसी को कहता है, न उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने से किसी के माथे पर बल आता है।

इसी तरह आपसी झगड़ों और विवादी मुक़द्दिमों में दुनिया की चन्द दिन के संभावित नफ़े की ख़ातिर अल्लाह के क़ानून को छोड़कर शैतानी क़ानूनों के ज़रिये फ़ैसला कराने पर राज़ी हैं।

इसी का यह बुरा अन्जाम है जो हर जगह हर मुल्क में नज़र आ रहा है कि यह उम्मत हर जगह ज़लील व रुस्वा नज़र आती है, इल्ला माशा-अल्लाह। इन्होंने हक़ से मुँह मोड़ा, हक़ ने इनकी नुसरत व इमदाद से रुख़ फेर लिया।

हक़-परस्ती के बजाय इच्छा-परस्ती इख़्तियार करके व्यक्तिगत तौर पर किसी-किसी फ़र्द को जो दुनियावी फ़ायदे मिल गये वे उस पर मगन हैं, मगर पूरी क़ौम व मिल्लत की तबाही जो उसका लाज़िमी नतीजा है उसका कोई देखने सुनने वाला नहीं। अगर पूरी उम्मत की कामयाबी व तरक़्क़ी आँखों के सामने हो तो इसके सिवा कोई राह नहीं कि इस क़ुरआनी उसूल को मज़बूती से पकड़ा जाये, ख़ुद भी इस पर अ़मल किया जाये और दूसरों को भी इसका पाबन्द बनाने की कोशिश की जाये।

दूसरी आयत में इस शुब्हे का जवाब है कि जब क़ौमी तरक़्क़ी का मदार हक़-परस्ती और हक़ व इन्साफ़ की पैरवी पर है तो दूसरी ग़ैर-मुस्लिम क़ौमें जो हक़ से पूरी तरह दूर हैं वे क्यों दुनिया में फलती-फूलती नज़र आती हैं? जवाब यह है:

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا سَنَسْتَدْرِجُهُم مِّنْ حَيْثُ لَا يَعْلَمُونَ.

यानी हम अपनी आयतों के झुठलाने वालों को अपनी हिक्मत व रहमत की बिना पर एक दम नहीं पकड़ते बल्कि आहिस्ता-आहिस्ता धीरे-धीरे पकड़ते हैं, जिसकी उनको ख़बर भी नहीं होती। इसलिये दुनिया में काफ़िर व बदकार लोगों के मालदार होने या इज़्ज़त व रुतबा हासिल होने से धोखा न खाया जाये, क्योंकि वह दर हक़ीक़त उनके लिये कोई भलाई का सामान नहीं, बल्कि हक़ तआ़ला की तरफ़ से इस्तिदराज है। इस्तिदराज के मायने दर्जा-ब-दर्जा, आहिस्ता

आहिस्ता कोई काम करने के आते हैं, क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में इस्तिदराज इसको कहा जाता है कि बन्दे के गुनाह पर दुनिया में कोई तकलीफ़ व मुसीबत न आये बल्कि जैसे-जैसे वह गुनाह में आगे बढ़ता जाये, दुनियावी माल व असबाब और बढ़ते जायें, जिसका अन्जाम यह होता है कि उसको अपने बुरे आमाल और ग़लत चाल पर किसी वक़्त तंबीह नहीं होती और ग़फ़लत से आँख नहीं खुलती और अपने बुरे आमाल उसको बुरे नज़र नहीं आते कि वह उनसे बाज़ आने की फ़िक्र करे।

इनसान की यह हालत उस ला-इलाज रोगी के जैसी है जो बीमारी ही को शिफ़ा और ज़हर ही को अमृत समझकर इस्तेमाल करने लगे, जिसका नतीजा यह होता है कि कभी तो दुनिया ही में ही यह शख़्स अचानक अ़ज़ाब में पकड़ लिया जाता है और कभी मौत तक यह सिलसिला चलता है, आख़िरकार मौत ही उसकी मस्ती और बेहोशी का ख़ात्मा करती है और हमेशा का अ़ज़ाब उसका ठिकाना बन जाता है।

क़ुरआने करीम ने अनेक सूरतों और आयतों में इस इस्तिदराज का ज़िक्र फ़रमाया है। एक जगह इरशाद है:

فَلَمَّا نَسُوْا مَا ذُكِّرُوْا بِهٖ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ اَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ حَتّٰٓى اِذَا فَرِحُوْا بِمَآ اُوْتُوْٓا اَخَذْنٰهُمْ بَغْتَةً فَاِذَا هُمْ مُّبْلِسُوْنَ.

यानी जब वे लोग उस चीज़ को भुला बैठे जो उनको याद दिलाई गयी थी तो हमने उन पर हर चीज़ के दरवाज़े खोल दिये, यहाँ तक कि वे अपनी मिली हुई नेमत व दौलत पर अकड़ गये तो हमने उनको अचानक अ़ज़ाब में पकड़ लिया तो वे छुटकारे से नाउम्मीद होकर रह गये।

यह इस्तिदराज काफ़िरों के साथ भी होता है और गुनाहगार मुसलमानों के साथ भी। इसी लिये सहाबा और पहले बुज़ुर्गों को जब कभी दुनिया की नेमत व दौलत हक़ तआ़ला ने अ़ता फ़रमाई तो ख़ौफ़ के ग़लबे की वजह से इस्तिदराज से डरा करते थे कि कहीं यह दुनिया की दौलत हमारे लिये इस्तिदराज (अल्लाह की तरफ़ से एक ढील) न हो।

तीसरी आयत में इसी इस्तिदराज का बयान है:

وَاُمْلِيْ لَهُمْ اِنَّ كَيْدِيْ مَتِيْنٌ.

यानी मैं उन गुनाहगारों को मोहलत देता रहता हूँ। मेरी तदबीर बड़ी मज़बूत है।

चौथी आयत में काफ़िरों के इस बेहूदा ख़्याल की तरदीद है कि अल्लाह की पनाह! हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जुनून (पागलपन) में मुब्तला हैं। फ़रमायाः

اَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوْا مَا بِصَاحِبِهِمْ مِّنْ جِنَّةٍ. اِنْ هُوَ اِلَّا نَذِيْرٌ مُّبِيْنٌ.

यानी क्या उन लोगों ने ग़ौर व फ़िक्र (सोच-विचार) नहीं किया कि उनका जिनसे साबका है उनको ज़रा भी जुनून नहीं। उनकी अ़क़्ल व हिक्मत के सामने तो सारी दुनिया के अ़क़्लमन्द व विद्वान हैरान हैं, उनके बारे में जुनून का गुमान करना ख़ुद जुनून (पागलपन) है। हुज़ूरे पाक

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो साफ़-साफ़ हक़ीक़तों को बयान करके आख़िरत और अल्लाह के अ़ज़ाब से डराने वाले हैं।

पाँचवीं आयत में उनको दो चीज़ों की तरफ़ विचार की दावत दी गयी है- अव्वल अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ आसमान व ज़मीन और उनके बीच की बेशुमार अ़जीब-ग़रीब चीज़ों में ग़ौर व फ़िक्र। दूसरे अपनी उम्र की मुद्दत और अ़मल के मौक़े और फ़ुर्सत पर नज़र करने की।

क़ुदरत की कारीगरी और बनाई हुई चीज़ों में ज़रा भी अ़क्ल व समझ के साथ ग़ौर किया जाये तो एक मोटी समझ वाले इनसान को भी अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत की शान की पहचान और नज़ारा होने लगता है, और ज़रा गहरी नज़र करने वाले के लिये तो दुनिया का ज़र्रा-ज़र्रा क़ादिर-ए-मुतलक़ और हकीम-ए-मुतलक़ की तारीफ़ व सना का तस्बीह पढ़ने वाला नज़र आने लगता है, जिसके बाद अल्लाह तआ़ला पर ईमान लाना एक फ़ितरी तक़ाज़ा बन जाता है।

और अपनी उम्र की मुद्दत में ग़ौर व फ़िक्र का यह नतीजा है कि जब इनसान यह समझ ले कि मौत का वक़्त मालूम नहीं कब आ जाये तो ज़रूरी कामों के पूरा करने में ग़फ़लत और लापरवाही से बाज़ आ जाता है, और ध्यान से तैयारी के साथ काम करने लगता है। मौत से ग़फ़लत ही इनसान को तमाम ख़ुराफ़ात और बुराईयों में मुब्तला रखती है, और मौत का ध्यान ही वह चीज़ है जो इनसान को बहुत से अपराधों और बुराईयों से बचने पर तैयार कर देता है, इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

اَكْثِرُوْا ذِكْرَهَاذِمِ اللَّذَّاتِ الْمَوْتُ.

यानी तुम उस चीज़ को ख़ूब ज़्यादा याद किया करो जो सब लज़्ज़तों को ख़त्म कर देने वाली है, यानी मौत।

इसी लिये उक्त आयत में फ़रमाया गयाः

اَوَلَمْ يَنْظُرُوْا فِىْ مَلَكُوْتِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَىْءٍ وَّاَنْ عَسٰۤى اَنْ يَّكُوْنَ قَدِاقْتَرَبَ اَجَلُهُمْ.

लफ़्ज़ "मलकूत" मुल्क के मायने में मुबालग़े के लिये बोला जाता है, इसके मायने हैं ज़बरदस्त और बड़ा मुल्क। आयत के मायने यह हैं कि इन इनकारियों ने क्या अल्लाह तआ़ला के अ़ज़ीम और विशाल मुल्क में ग़ौर नहीं किया जो आसमानों और ज़मीनों और बेशुमार चीज़ों को अपने अन्दर घेरे हुए है, और क्या इस पर नज़र नहीं की कि यह हो सकता है कि इनकी मौत क़रीब हो जिसके बाद ईमान व अ़मल की फ़ुर्सत ख़त्म हो जायेगी।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

فَبِاَىِّ حَدِيْثٍ ۭ بَعْدَهٗ يُؤْمِنُوْنَ.

यानी जो लोग क़ुरआने करीम की ऐसी स्पष्ट और खुली निशानियों से भी ईमान नहीं लाते वे और किस चीज़ पर ईमान लायेंगे?

مَنْ يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ ۚ وَيَذَرُهُمْ فِيْ طُغْيَانِهِمْ
يَعْمَهُوْنَ ۞ يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ السَّاعَةِ اَيَّانَ مُرْسٰىهَا ۚ قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ رَبِّيْ ۚ لَا يُجَلِّيْهَا
لِوَقْتِهَآ اِلَّا هُوَ ۚ ثَقُلَتْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ لَا تَاْتِيْكُمْ اِلَّا بَغْتَةً ۚ يَسْـَٔلُوْنَكَ كَاَنَّكَ حَفِيٌّ عَنْهَا ۚ
قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ ۞

मंय्युज़्लिलिल्लाहु फ़ला हादि-य लहू, व य-ज़रुहुम् फ़ी तुग़्यानिहिम् यअ्महून (186) यस्अलून-क अनिस्सा-अति अय्या-न मुर्साहा, क़ुल् इन्नमा अिल्मुहा अिन्-द रब्बी ला युजल्लीहा लिवक़्तिहा इल्ला हु-व। सक़ुलत् फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि, ला तअ्तीकुम् इल्ला बग़्त-तन्, यस्अलून-क कअन्न-क हफ़िय्युन् अन्हा, क़ुल् इन्नमा अिल्मुहा अिन्दल्लाहि व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला यअ्लमून (187)	जिसको अल्लाह बिचलाये उसको कोई नहीं राह दिखलाने वाला, और अल्लाह छोड़े रखता है उनको उनकी शरारत में हैरान व परेशान। (186) तुझसे पूछते हैं क़ियामत को कि क्या है उसके क़ायम होने का वक़्त? तू कह उसकी ख़बर तो मेरे रब ही के पास है, वही खोल दिखायेगा उसको उसके वक़्त पर। वह भारी बात है आसमानों और ज़मीन में, जब तुम पर आयेगी तो बेख़बर आयेगी। तुझसे पूछने लगते हैं कि गोया तू उसकी तलाश में लगा हुआ है। तू कह दे कि उसकी ख़बर है ख़ास अल्लाह के पास लेकिन अक्सर लोग नहीं समझते। (187)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जिसको अल्लाह तआ़ला गुमराह करे उसको कोई राह पर नहीं ला सकता (फिर ग़म करना बेकार है)। और अल्लाह तआ़ला उनको उनकी गुमराही में भटकते हुए छोड़ देता है (ताकि एक दफ़ा ही पूरी सज़ा दे)। लोग आप से क़ियामत के बारे में सवाल करते हैं कि वह कब आएगी? आप फ़रमा दीजिये कि उसका (यह) इल्म (कि कब वाक़े होगी) सिर्फ़ मेरे रब ही के पास है (दूसरे किसी को इसकी इत्तिला नहीं), उसके वक़्त पर उसको सिवाय उसके (यानी अल्लाह के) कोई और ज़ाहिर न करेगा (और वह ज़ाहिर करना यह होगा कि उसको क़ायम कर देगा, उस वक़्त सब को पूरी ख़बर हो जायेगी, उससे पहले वैसे किसी को बतलाने के तौर पर भी उसको ज़ाहिर न किया जायेगा, क्योंकि) वह आसमान और ज़मीन में बड़ा भारी (हादसा) होगा, इसलिये कि वह तुम पर बिल्कुल अचानक (बेख़बरी में) आ पड़ेगी (ताकि वह जिस तरह जिस्मों पर

उनको हालत बदलने और बिखेर देने में भारी है, इसी तरह दिलों पर भी उसका भारी असर होगा, और पहले से बतला देने में यह बात नहीं रहती। और पूछना भी तो उनका मामूली तौर पर नहीं बल्कि) वे आप से (इस तरह) (लिपटकर और हद से आगे बढ़कर) पूछते हैं (जैसे) गोया आप उसकी तहक़ीक़ात कर चुके हैं (और तहक़ीक़ात के बाद आपको उसका पूरा इल्म हो गया है) आप फ़रमा दीजिये कि उसका (ज़िक्र हुआ) ख़ास इल्म अल्लाह ही के पास है, लेकिन अक्सर लोग (इस बात को) नहीं जानते (कि कुछ चीज़ों के इल्म हक़ तआ़ला ने अपने इल्म के ख़ज़ाने में छुपाकर रखे हैं, नबियों को भी विस्तार से इत्तिला नहीं दी। पस उसके न जानने से किसी नबी के क़ियामत के निर्धारित वक़्त के पता न होने से मआ़ज़ल्लाह उसके नबी न होने की दलील समझते हैं। वे यह समझते हैं कि नबी होने के लिये क़ियामत के निर्धारित वक़्त की जानकारी भी ज़रूरी है, और जब यह नहीं तो इसको नुबुव्वत भी हासिल नहीं, हालाँकि उनकी यह सोच और धारणा ही ग़लत है कि नबी के लिये उसका इल्म ज़रूरी है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में काफ़िरों व इनकारियों की ज़िद व हठधर्मी और क़ुदरत की स्पष्ट निशानियों के होते हुए ईमान न लाने का ज़िक्र था, यह मज़मून रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये उम्मत और आ़म मख़्लूक़ के साथ आपकी हद से ज़्यादा शफ़क़त व रहमत की बिना पर इन्तिहाई रंज व ग़म का सबब हो सकता था इसलिये ऊपर ज़िक्र हुई तीन आयतों में से पहली आयत में आपको तसल्ली देने के लिये इरशाद फ़रमाया किः

जिसको अल्लाह तआ़ला गुमराह कर दे उसको कोई राह पर नहीं ला सकता और अल्लाह तआ़ला ऐसे लोगों को गुमराही में भटकते हुए छोड़ देता है।

मतलब यह है कि उन लोगों की हठधर्मी और हक़ के क़ुबूल करने से मुँह मोड़ लेने पर आप ग़मगीन न हों क्योंकि आपकी ज़िम्मेदारी और फ़रीज़ा इतना ही था कि हक़ बात को साफ़ साफ़ प्रभावी अन्दाज़ में पहुँचा दें, वह आप पूरा कर चुके, आपकी ज़िम्मेदारी ख़त्म हो चुकी, अब किसी का मानना या न मानना यह एक तक़दीरी मामला है जिसमें आपको दख़ल नहीं, फिर आप ग़मगीन क्यों हों।

इस सूरत के मज़ामीन में से तीन मज़मून बहुत अहम थे- तौहीद, रिसालत और आख़िरत। और यही तीन चीज़ें ईमान और इस्लाम की असल बुनियादें हैं, इनमें से तौहीद व रिसालत का मज़मून पिछली आयतों में तफ़सील के साथ आ चुका है, मज़कूरा आयतों में से आख़िरी दो आयतें आख़िरत व क़ियामत के मज़मून के बयान में हैं जिनके नाज़िल होने का एक ख़ास वाक़िआ़ है जो इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर और अ़ब्द बिन हुमैद रह. ने हज़रत क़तादा की रिवायत से नक़ल किया है कि मक्का के क़ुरैश ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर मालूम किया कि आप क़ियामत के आने की ख़बरें देते और लोगों को उससे डराते हैं, अगर आप सच्चे हैं तो मुतैयन करके बतलाईये कि क़ियामत किस सन् और किस

तारीख़ में आने वाली है, ताकि हम उसके आने से पहले कुछ तैयारी कर लें। आपके और हमारे बीच जो रिश्तेदारी के ताल्लुक़ात हैं उनका तक़ाज़ा भी यह है कि अगर आप आम तौर से लोगों को बतलाना नहीं चाहते तो कम से कम हमें बतला दीजिये। इस पर यह आयत नाज़िल हुईः

يَسْئَلُوْنَكَ عَنِ السَّاعَةِ..................الخ

इसमें लफ़्ज़ "साअ़त" अ़रबी लुग़त में थोड़े से ज़माने के लिये बोला जाता है जिसकी कोई ख़ास हद और सीमा लुग़त के एतिबार से नहीं है, और नजूमी लोगों की परिभाषा में रात और दिन के चौबीस हिस्सों में से एक हिस्से का नाम "साअ़त" है जिसको उर्दू में घन्टा कहा जाता है, और क़ुरआन की परिभाषा में यह लफ़्ज़ उस दिन के लिये बोला जाता है जो सारी मख़्लूक़ात की मौत का दिन होगा, और उस दिन के लिये भी जिसमें सारी मख़्लूक़ात दोबारा ज़िन्दा होकर रब्बुल-आ़लमीन के दरबार में हाज़िर होंगी। "अय्या-न" के मायने कब और 'मुरसा' के मायने ठहरने और क़ायम होने के हैं।

"ला युजल्लीहा" 'तजलीह' से निकला है जिसके मायने हैं खोलने और ज़ाहिर करने के। 'बग़्ततन्' के मायने अचानक, 'हफ़िय्युन' के मायने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने आ़लिम और बाख़बर के बयान किये हैं, और असल में उस शख़्स को हफ़ी कहा जाता है जो सवालात करके किसी मामले की पूरी तहक़ीक़ कर ले।

आयत का मतलब यह है कि ये लोग आप से क़ियामत के बारे में सवाल करते हैं कि वह कब आयेगी? आप इनसे कह दीजिये कि उसको मुतैयन करके बतलाने का सही इल्म सिर्फ़ मेरे रब के पास है, न पहले से और किसी को मालूम है और ऐन वक़्त पर भी किसी को पहले मालूम न होगा, जब तयशुदा वक़्त आ जायेगा तो ख़ुद अल्लाह तआ़ला ही उसको ज़ाहिर फ़रमायेंगे, कोई वास्ता बीच में न होगा। क़ियामत की घटना आसमानों और ज़मीन पर बहुत भारी पड़ेगी कि इनके टुकड़े होकर उड़ जायेंगे, इसलिये हिक्मत का तक़ाज़ा यह है कि ऐसे सख़्त और ज़बरदस्त वाक़िए का इज़्हार पहले से न किया जाये वरना यक़ीन करने वालों की ज़िन्दगी कड़वी और बेमज़ा हो जायेगी और इनकारियों को और ज़्यादा मज़ाक़ उड़ाने और दिल्लगी करने का मौक़ा मिलेगा। इसलिये फ़रमायाः

لَا تَاْتِيْكُمْ اِلَّا بَغْتَةً

यानी क़ियामत तुम्हारे पास अचानक ही आयेगी।

बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ियामत के अचानक और एक दम से आने के मुताल्लिक़ यह बयान फ़रमाया कि लोग अपने-अपने कारोबार में मशग़ूल होंगे, एक शख़्स ने ग्राहक को दिखलाने के लिये कपड़े का थान खोला हुआ होगा, वे अभी मामला तय न कर पायेंगे कि क़ियामत क़ायम हो जायेगी। एक शख़्स अपनी ऊँटनी का दूध दूहकर ले चलेगा और अभी उसको इस्तेमाल करने न पायेगा कि क़ियामत आ जायेगी। कोई शख़्स अपने हौज़ की मरम्मत

कर रहा होगा उससे फ़ारिग़ न हो पायेगा कि क़ियामत क़ायम हो जायेगी। कोई शख़्स खाने का लुक़्मा हाथ में उठायेगा, अभी मुँह तक न पहुँचेगा कि क़ियामत बरपा हो जायेगी।

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इसका मक़सद यह है कि जिस तरह इनसान की व्यक्तिगत मौत की तारीख़ और वक़्त को ग़ैर-मुतैयन और अस्पष्ट रखने में बड़ी हिक्मतें हैं इसी तरह क़ियामत को जो पूरे आ़लम की सामूहिक मौत का नाम है, उसको पोशीदा और अस्पष्ट रखने में भी बड़ी हिक्मतें हैं। अव्वल तो यही है कि यक़ीन करने वालों के लिये उस सूरत में ज़िन्दगी दूभर और दुनिया के काम मुश्किल हो जायेंगे, और उसका इनकार करने वालों को उसकी लम्बी मुद्दत सुनकर मज़ाक़ व दिल्लगी करने का बहाना मिलेगा और उनकी सरकशी में और इज़ाफ़ा होगा।

इसलिये हिक्मत के तक़ाज़े के सबब उसकी तारीख़ को ग़ैर-वाज़ेह और अस्पष्ट रखा गया ताकि लोग उसके हौलनाक वाक़िआ़त से हमेशा डरते रहें और यह डर ही इनसान को बुराईयों और अपराधों से बाज़ रखने का सबसे ज़्यादा प्रभावी इलाज है। इसलिये इन आयतों से तालीम यह दी गयी कि जब इसका यक़ीन है कि क़ियामत किसी रोज़ आयेगी और रब्बुल-आ़लमीन के सामने सब की पेशी होगी, उनके उम्र भर के छोटे-बड़े अच्छे-बुरे सब आमाल का जायज़ा लिया जायेगा, जिसके नतीजे में या तो जन्नत की वहम व ख़्याल से ज़्यादा और कभी ख़त्म न होने वाली नेमतें मिलेंगी और या फिर अल्लाह की पनाह! जहन्नम का वह सख़्त अ़ज़ाब होगा जिसके तसव्वुर से भी पित्ता पानी होने लगता है, तो फिर एक अ़क़्लमन्द का काम यह नहीं होना चाहिये कि अ़मल की फ़ुर्सत के वक़्त को इन बहसों में ज़ाया करे कि यह वाक़िआ़ कब किस सन् और किस तारीख़ में होगा, बल्कि अ़क़्ल का तक़ाज़ा यह है कि उम्र की फ़ुर्सत को ग़नीमत जानकर उस दिन के लिये तैयारी में मश़ग़ूल हो जाये, रब्बुल-आ़लमीन के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी (नाफ़रमानी और उल्लंघन करने) से ऐसा डरे जैसे आग से हर इनसान डरता है।

आयत के आख़िर में फिर उन लोगों के सवाल को दोहराकर फ़रमायाः

يَسْئَلُوْنَكَ كَاَنَّكَ حَفِيٌّ عَنْهَا.

पहला सवाल तो इस बात से मुताल्लिक़ था कि जब ऐसा अहम वाक़िआ़ होने वाला है तो हमें उसका पूरा-पूरा सही तारीख़ और वक़्त के साथ इल्म होना चाहिये। जिसका जवाब दे दिया गया कि यह सवाल बेअ़क़्ली और बेवक़ूफ़ी से पैदा हुआ है, अ़क़्ल का तक़ाज़ा ही यह है कि उसके निर्धारित वक़्त से किसी को बाख़बर न किया जाये, ताकि हर अ़मल करने वाला हर वक़्त आख़िरत के अ़ज़ाब से डरकर नेक अ़मल के इख़्तियार करने और बुरे आमाल से बाज़ रहने में पूरी तवज्जोह दे।

और इस दूसरे सवाल का मन्शा उन लोगों का यह समझना है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ज़रूर क़ियामत की सही तारीख़ और वक़्त मालूम है और आपने अल्लाह तआ़ला से तहक़ीक़ करके उसका इल्म ज़रूर हासिल कर लिया है, मगर आप किसी वजह से

बताते नहीं। इसलिये अपनी निकटता और रिश्तेदारी का वास्ता देकर आप से सवाल किया कि हमें क़ियामत का पूरा पता बतला दें। इस सवाल के जवाब में इरशाद हुआः

قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰـكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُوْنَ.

यानी आप लोगों को बतला दें कि हक़ीक़त यही है कि क़ियामत की सही तारीख़ का सिवाय अल्लाह जल्ल शानुहू के किसी फ़रिश्ते या नबी को भी इल्म नहीं है, मगर बहुत से लोग इस हक़ीक़त से बेख़बर हैं कि बहुत से उलूम अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ अपने लिये सुरक्षित रखते हैं जिनका किसी फ़रिश्ते या पैग़म्बर को भी पता नहीं होता। लोग अपनी जहालत से यह समझते हैं कि क़ियामत की तारीख़ का इल्म नुबुव्वत व रिसालत के लिये लाज़िमी है, और फिर इसका यह नतीजा निकालते हैं कि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उसका पूरा इल्म नहीं तो यह इसकी निशानी और पहचान है कि (अल्लाह की पनाह) आप नबी नहीं। मगर ऊपर मालूम हो चुका कि यह ख़्याल सिरे से ग़लत है।

ख़ुलासा यह है कि ऐसे सवालात करने वाले बड़े बेवक़ूफ़ और बेख़बर हैं, न उनको मसले की हक़ीक़त मालूम है, न उसकी हिक्मत और न सवाल करने का तरीक़ा।

हाँ नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़ियामत की कुछ अ़लामतों (निशानियों) का इल्म दिया गया था और यह कि वह अब क़रीब है, इसका हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बहुत सी सही हदीसों में वाज़ेह तौर पर बयान फ़रमा दिया है। इरशाद फ़रमाया कि मेरा आना और क़ियामत इस तरह मिली हुई हैं जैसे हाथ की दो उंगलियाँ। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

और कुछ इस्लामी किताबों में जो पूरी दुनिया की उम्र सात हज़ार साल बतलाई है यह कोई हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीस नहीं, बल्कि इस्राईली रिवायतों से लिया हुआ मज़मून है।

ज़मीनी चीज़ों का इल्म रखने वाले हज़रात ने जो नई तहक़ीक़ात से दुनिया की उम्र लाखों साल बतलाई है यह न किसी क़ुरआनी आयत से टकराती है न किसी सही हदीस से। इस्लामी रिवायतों में ऐसी कच्ची बेसनद बातों को दाख़िल कर देने का मक़सद ही शायद इस्लाम के ख़िलाफ़ बदगुमानियाँ पैदा करना हो, जिनकी तरदीद ख़ुद सही हदीसों में मौजूद है। एक सही हदीस में ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अपनी उम्मत को मुख़ातब करके इरशाद है कि तुम्हारी मिसाल पिछली उम्मतों के मुक़ाबले में ऐसी है जैसे काले बैल के बदन पर एक सफ़ेद बाल हो। इससे हर शख़्स अन्दाज़ा लगा सकता है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नज़र में दुनिया की उम्र कितनी लम्बी है कि इसका अन्दाज़ा लगाना भी दुश्वार है, इसी लिये हाफ़िज़ इब्ने हज़्म उन्दुलुसी ने फ़रमाया कि हमारा एतिक़ाद यह है कि दुनिया की उम्र का कोई सही अन्दाज़ा नहीं किया जा सकता, इसका सही इल्म सिर्फ़ पैदा करने वाले ही को है। (मराग़ी)

قُلْ لَّآ اَمْلِكُ لِنَفْسِىْ نَفْعًا وَّلَا ضَرًّا اِلَّا مَا شَآءَ اللّٰهُ ۭ وَلَوْ كُنْتُ اَعْلَمُ الْغَيْبَ لَاسْتَكْثَرْتُ
مِنَ الْخَيْرِ ۚ وَمَا مَسَّنِىَ السُّوْۗءُ ۚ اِنْ اَنَا اِلَّا نَذِيْرٌ وَّبَشِيْرٌ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ﴿١٨٨﴾ هُوَ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ ع ٢٣ ١٣
نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِيَسْكُنَ اِلَيْهَا ۚ فَلَمَّا تَغَشّٰىهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِيْفًا فَمَرَّتْ
بِهٖ ۚ فَلَمَّآ اَثْقَلَتْ دَّعَوَا اللّٰهَ رَبَّهُمَا لَىِٕنْ اٰتَيْتَنَا صَالِحًا لَّنَكُوْنَنَّ مِنَ الشّٰكِرِيْنَ ﴿١٨٩﴾ فَلَمَّآ اٰتٰىهُمَا
صَالِحًا جَعَلَا لَهٗ شُرَكَآءَ فِيْمَآ اٰتٰىهُمَا ۚ فَتَعٰلَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ﴿١٩٠﴾ اَيُشْرِكُوْنَ مَا لَا يَخْلُقُ
شَيْـًٔا وَّهُمْ يُخْلَقُوْنَ ﴿١٩١﴾ وَلَا يَسْتَطِيْعُوْنَ لَهُمْ نَصْرًا وَّلَآ اَنْفُسَهُمْ يَنْصُرُوْنَ ﴿١٩٢﴾ وَاِنْ تَدْعُوْهُمْ اِلَى
الْهُدٰى لَا يَتَّبِعُوْكُمْ ۭ سَوَاۗءٌ عَلَيْكُمْ اَدَعَوْتُمُوْهُمْ اَمْ اَنْتُمْ صَامِتُوْنَ ﴿١٩٣﴾

क़ुल् ला अम्लिकु लिनफ़्सी नफ़्अंव्-व ला ज़र्रन् इल्ला मा शाअल्लाहु, लौ कुन्तु अअ्लमुल्ग़ै-ब लस्तक्सर्तु मिनल्-ख़ैरि, व मा मस्सनियस्-सू-उ इन् अ-न इल्ला नज़ीरुंव्-व बशीरुल्-लिक़ौमिंय्युअ्मिनून (188) ✿

हुवल्लज़ी ख़-ल-क़कुम् मिन् नफ़्सिंव्-वाहि-दतिंव्-व ज-अ़-ल मिन्हा ज़ौजहा लियस्कु-न इलैहा फ़-लम्मा तग़श्शाहा ह-मलत् हम्लन् ख़फ़ीफ़न् फ़-मर्रत् बिही फ़-लम्मा अस्क़लद्-द-अ़वल्ला-ह रब्बहुमा ल-इन् आतैतना सालिहल् ल-नकूनन्-न मिनश्शाकिरीन (189) फ़-लम्मा आताहुमा सालिहन् ज-अ़ला लहू शु-रका-अ फ़ीमा आताहुमा फ़-तआ़लल्लाहु अ़म्मा

तू कह दे कि मैं मालिक नहीं अपनी जान के भले का और न बुरे का मगर जो अल्लाह चाहे, और अगर मैं जान लिया करता ग़ैब की बात तो बहुत कुछ भलाईयाँ हासिल कर लेता, और मुझको बुराई कभी न पहुँचती, मैं तो बस डर और ख़ुशख़बरी सुनाने वाला हूँ ईमान वाले लोगों को। (188) ✿

वही है जिसने तुमको पैदा किया एक जान से और उसी से बनाया उसका जोड़ा ताकि उसके पास आराम पकड़े, फिर जब मर्द ने औरत को ढाँका हमल (गर्भ) रहा हल्का सा हमल, तो चलती फिरती रही उसके साथ, फिर जब बोझल हो गई तो दोनों ने पुकारा अपने रब अल्लाह को कि अगर तू हमको बख़्शे भला-चंगा तो हम तेरा शुक्र करें। (189) फिर जब उनको दिया भला-चंगा तो बनाने लगे उसके लिये शरीक उसकी बख़्शी हुई चीज़ में, सो अल्लाह बरतर है उनके शरीक बनाने से। (190)

युश्रिकून (190) अयुश्रिकू-न मा ला यख़्लुक़ु शैअंव्-व हुम् युख़्लक़ून (191) व ला यस्ततीअ़ू-न लहुम् नस्रंव्-व ला अन्फ़ु-सहुम् यन्सुरून (192) व इन् तद्अ़ूहुम् इलल्-हुदा ला यत्तबिअ़ूकुम्, सवाउन् अ़लैकुम् अ-दऔतुमूहुम् अम् अन्तुम् सामितून (193)	क्या शरीक बनाते हैं ऐसों को जो पैदा न करें एक चीज़ भी और वे (ख़ुद) पैदा हुए हैं। (191) और नहीं कर सकते हैं उनकी मदद, और न अपनी मदद करें। (192) और अगर तुम उनको पुकारो रास्ते की तरफ़ तो न चलें तुम्हारी पुकार पर, बराबर है तुम पर कि उनको पुकारो या चुपके रहो। (193)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि मैं ख़ुद अपनी ख़ास ज़ात के लिये (भी कहाँ यह कि दूसरे के लिये) किसी (तक़दीरी) नफ़े (के हासिल करने) का इख़्तियार नहीं रखता और न किसी (तक़दीरी) नुक़सान (को दूर करने) का (इख़्तियार रखता हूँ) मगर उतना ही जितना ख़ुदा तआ़ला ने चाहा हो (कि मुझको इख़्तियार दे दें और जिस मामले में इख़्तियार नहीं दिया उसमें कई बार फ़ायदे हाथ से निकल जाते हैं और नुक़सान सामने आ जाते हैं। एक बात तो यह हुई) और (दूसरी बात यह है कि) अगर मैं ग़ैब की बातें (इख़्तियारी मामलों के मुताल्लिक़) जानता होता तो मैं (अपने लिये) बहुत-से फ़ायदे हासिल कर लिया करता और कोई नुक़सान मुझको हरगिज़ न होता, (क्योंकि ग़ैब के इल्म के सबब मालूम हो जाता कि फ़ुलाँ मामले में मेरे लिये यक़ीनन नाफ़ा होगा उसको इख़्तियार कर लिया करता, और फ़ुलाँ काम मेरे लिये यक़ीनन नुक़सानदेह होगा उससे परहेज़ करता। और अब चूँकि इल्म-ए-ग़ैब नहीं इसलिये कई बार लाभदायक का इल्म नहीं होता कि उसको इख़्तियार करूँ, इसी तरह नुक़सानदेह का इल्म नहीं होता कि उससे बचूँ बल्कि कभी ऐसा भी होता है कि नुक़सान देने वाली चीज़ को लाभदायक और लाभदायक को नुक़सान देने वाली समझ लिया जाता है। हासिल यह निकला कि इल्मे-ग़ैब हासिल होने का मतलब था कि नफ़े-नुक़सान का मालिक हो जाता और आने वाले वक़्त के किसी भी नफ़े-नुक़सान का पेशगी मुझे इल्म नहीं लिहाज़ा साबित हुआ कि मुझे इल्मे ग़ैब भी हासिल नहीं) मैं तो सिर्फ़ (शरई अहकाम बतलाकर सवाब की) ख़ुशख़बरी देने वाला और (अ़ज़ाब से) डराने वाला हूँ उन लोगों को जो ईमान रखते हैं (ख़ुलासा यह कि नुबुव्वत का असली मक़सद क़ुदरती और तक़दीरी और क़ुदरती मामलों का इहाता करना नहीं इसलिये इन मामलों का इल्म जिनमें क़ियामत के निर्धारित वक़्त का इल्म भी दाख़िल है नबी को मिलना ज़रूरी नहीं, अलबत्ता नुबुव्वत का असल मक़सद शरीअ़त और ख़ुदाई क़ानून का भरपूर इल्म है, सो वह मुझको हासिल है)।

वह (यानी अल्लाह तआला) ऐसा (क़ादिर और नेमतें देने वाला) है जिसने तुमको एकमात्र बदन (यानी आदम अ़लैहिस्सलाम) से पैदा किया, और उसी से उसका जोड़ा बनाया (हव्वा अ़लैहस्सलाम, जिसकी कैफ़ियत सूरः निसा की शुरू की आयतों की तफ़सीर में गुज़र चुकी) ताकि वह उस (अपने जोड़े) से उन्स हासिल करे। (पस जब वह ख़ालिक़ भी है और मोहसिन भी तो इबादत उसी का हक़ है) फिर (आगे उनकी औलाद बढ़ी और उनमें भी मियाँ-बीवी हुए लेकिन उनमें कुछ की यह हालत हुई कि) जब मियाँ ने बीवी से निकटता की तो उसको हल्का सा हमल "गर्भ" रह गया, सो वह उसको (पेट में) लिये हुए (बेतकल्लुफ़) चलती फिरती रही। फिर जब वह (गर्भवती उस हमल के बढ़ जाने से) बोझल हो गई (और दोनों मियाँ-बीवी को यक़ीन हो गया कि गर्भ है) तो (उस वक़्त उनको तरह-तरह के गुमान और ख़्यालात होने लगे, जैसा कि बाज़े गर्भ में ख़तरे पेश आते हैं, इसलिये) दोनों (मियाँ-बीवी) अल्लाह से जो कि उनका मालिक है दुआ़ करने लगे कि अगर आपने हमको सही (सालिम औलाद) दे दी तो हम ख़ूब शुक्रगुज़ारी करेंगे। (जैसे कि आ़म आ़दत है कि मुसीबत के वक़्त अल्लाह तआ़ला से बड़े-बड़े अ़हद व पैमान हुआ करते हैं) सो जब अल्लाह तआ़ला ने उन दोनों को सही सालिम औलाद दे दी तो अल्लाह तआ़ला की दी हुई चीज़ में वे दोनों अल्लाह तआ़ला के शरीक क़रार देने लगे (विभिन्न तौर पर, किसी ने एतिक़ाद से कि यह औलाद फ़ुलाँ ज़िन्दे या मुर्दे ने दी है। किसी ने अ़मल से कि उसके नाम की नज़्र व नियाज़ करने लगे, या बच्चे को लेजाकर उसके सामने उसका माथा टेक दिया। या क़ौल से कि उसकी बन्दगी पर नाम रख दिया, जैसे अ़ब्दे-शम्स या बन्दा-अ़ली वग़ैरह। यानी यह हक़ तो था ख़ुदा का जो कि नेमत देने वाला, ख़ालिक़ और क़ादिर व मोहसिन है और ज़ाहिर व इस्तेमाल किया इसको दूसरे माबूदों के लिये) सो अल्लाह तआ़ला पाक है उनके शिर्क से।

(यहाँ तक तो हक़ तआ़ला की सिफ़ात का बयान था जो इसको चाहती हैं माबूद उसी को बनाया जाये, आगे बातिल और झूठे माबूदों की कमियों और लाचारी का ज़िक्र है जिसका तक़ाज़ा यह है कि उनके माबूद बनने की पात्रता ज़ाहिर व स्पष्ट हो जाये। पस फ़रमाते हैं कि) क्या (अल्लाह तआ़ला के साथ) ऐसों को शरीक ठहराते हैं जो किसी चीज़ को बना न सकें और (बल्कि) वे ख़ुद ही बनाये जाते हों (चुनाँचे ज़ाहिर है कि बुतों के पुजारी ख़ुद उनको तराशते थे) और (किसी चीज़ का बनाना तो बड़ी बात है) वे (तो ऐसे आ़जिज़ हैं कि उससे आसान काम भी नहीं कर सकते मसलन) उनको किसी क़िस्म की मदद (भी) नहीं दे सकते, और (इससे भी बढ़कर यह है कि) वे ख़ुद अपनी भी मदद नहीं कर सकते (अगर कोई हादसा उनको पेश आ जाये, जैसे कोई शख़्स उनको तोड़ने फोड़ने ही लगे)। और (इससे भी बढ़कर सुनो कि) अगर तुम उनको कोई बात बतलाने को पुकारो तो तुम्हारे कहने पर न चलें। (इसके दो मतलब हो सकते हैं- एक यह कि तुम उनको पुकारो कि वह तुमको कोई बात बतलायें तो तुम्हारा कहना न करें यानी न बतलायें। और दूसरी इससे ज़्यादा यह कि तुम उनको पुकारो कि आओ हम तुमको कुछ बतलायें तो तुम्हारे कहने पर न चलें, यानी तुम्हारी बतलाई हुई बात पर अ़मल न कर सकें। बहरहाल) तुम्हारे एतिबार से (दोनों बातें) बराबर हैं, चाहे तुम उनको पुकारो (वे जब नहीं सुनते)

या तुम चुप रहो (जब तो न सुनना ज़ाहिर ही है। ख़ुलासा यह है कि जो काम सबसे ज़्यादा आसान है कि कोई बात बतलाने के लिये पुकारे तो सुन लेना, वे इसी से आ़जिज़ हैं तो जो इससे मुश्किल है कि अपनी हिफ़ाज़त करें और फिर जो इससे मुश्किल है कि दूसरों की इमदाद करना और फिर इन सबसे जो ज़्यादा मुश्किल है कि किसी चीज़ को पैदा करना, इनसे तो वे कहीं ज़्यादा पूरी तरह आ़जिज़ होंगे, फिर ऐसे आ़जिज़ मोहताज माबूद बनने के लायक़ कैसे हो सकते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में मुश्रिकों और अ़वाम के उस ग़लत अ़क़ीदे की तरदीद (ग़लत होने का बयान) है जो उन लोगों ने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के बारे में क़ायम कर रखा था कि वे ग़ैब के जानने वाले होते हैं, उनका इल्म अल्लाह तआ़ला की तरह तमाम कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी होता है, तथा यह कि वे हर नफ़े और नुक़सान के मालिक होते हैं, जिसको जो चाहें नफ़ा या नुक़सान पहुँचा सकते हैं।

और इसी अ़क़ीदे के सबब वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से क़ियामत की निर्धारित तारीख़ बतलाने का मुतालबा करते थे, जिसका ज़िक्र इससे पहली आयत में गुज़र चुका है। इस आयत ने उनके इस मुश्रिकाना अ़क़ीदे की तरदीद करते हुए बतला दिया कि इल्मे ग़ैब और तमाम कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे का मुकम्मल इल्म सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की मख़्सूस सिफ़त है उसमें किसी मख़्लूक़ को शरीक ठहराना चाहे वह फ़रिश्ता हो या नबी व रसूल शिर्क और बड़ा भारी ज़ुल्म है। इसी तरह हर नफ़े नुक़सान का मालिक होना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही की ख़ास सिफ़त है इसमें किसी को शरीक ठहराना भी शिर्क है, जिसके मिटाने ही के लिये क़ुरआन नाज़िल हुआ और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये।

क़ुरआने करीम ने बेशुमार आयतों में बार-बार इसको वाज़ेह फ़रमा दिया है कि इल्मे-ग़ैब और हर चीज़ का मुकम्मल इल्म जिससे कोई ज़र्रा छुपा न रहे, यह सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की ख़ास सिफ़त है। इसी तरह कामिल क़ुदरत कि हर नफ़ा व नुक़सान क़ब्ज़े में हो, यह भी ख़ास सिफ़त है हक़ तआ़ला शानुहू की। इन सिफ़तों में ग़ैरुल्लाह को शरीक क़रार देना शिर्क है।

इस आयत में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया है कि आप इसका ऐलान कर दें कि मैं अपने नफ़्स के लिये भी नफ़े नुक़सान का मालिक नहीं, दूसरों के नफ़े नुक़सान का तो क्या ज़िक्र है।

इसी तरह यह भी ऐलान कर दें कि मैं आ़लिमुल-ग़ैब (ग़ैब का जानने वाला) नहीं हूँ कि हर चीज़ का इल्म होना मेरे लिये ज़रूरी हो, और अगर मुझे इल्मे ग़ैब होता तो मैं हर नफ़े की चीज़ को ज़रूर हासिल कर लिया करता और कोई नफ़ा मेरे हाथ से न निकलता, और हर नुक़सान की चीज़ से हमेशा महफ़ूज़ ही रहता और कभी कोई नुक़सान मुझे न पहुँचता, हालाँकि ये दोनों बातें नहीं है। बहुत से काम ऐसे हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको हासिल

करना चाहा मगर हासिल नहीं हुए, और बहुत सी तकलीफ़ें और नुक़सानात ऐसे हैं जिनसे हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बचने का इरादा किया मगर वह नुक़सान व तकलीफ़ पहुँच गयी। ग़ज़्वा-ए-हुदैबिया के मौक़े पर आप सहाबा-ए-किराम के साथ एहराम बाँधकर उमरे का इरादा करके हरम की सीमाओं तक पहुँच गये मगर हरम में दाख़िला और उमरे की अदायेगी उस वक़्त न हो सकी, सब को एहराम खोलकर वापस होना पड़ा।

इसी तरह ग़ज़्वा-ए-उहुद में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ज़ख़्म पहुँचा और मुसलमानों को वक़्ती शिकस्त हुई। इसी तरह के और बहुत से वाक़िआ़त हैं जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़िन्दगी में मारूफ़ व मशहूर हैं।

और शायद ऐसे वाक़िआ़त के ज़ाहिर करने का मक़सद ही यह हो कि लोगों पर अ़मली तौर पर यह बात वाज़ेह कर दी जाये कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम अगरचे अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सबसे ज़्यादा मक़बूल और मख़्लूक़ में सबसे अफ़ज़ल हैं मगर फिर भी वे ख़ुदाई इल्म व क़ुदरत के मालिक नहीं, ताकि लोग उस ग़लत-फ़हमी के शिकार न हो जायें जिसमें ईसाई मुब्तला हो गये कि अपने रसूल को ख़ुदाई सिफ़ात का मालिक समझ बैठे और इस तरह शिर्क में मुब्तला हो गये।

इस आयत ने भी यह वाज़ेह कर दिया कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम न क़ादिरे मुतलक़ (हर चीज़ पर पूरा इख़्तियार रखने वाले) होते हैं न आ़लिमुल-ग़ैब, बल्कि उनको इल्म व क़ुदरत का उतना ही हिस्सा हासिल होता है जितना अल्लाह की तरफ़ से उनको दे दिया जाये।

हाँ इसमें शक व शुब्हा नहीं कि इल्म का जो हिस्सा उनको अ़ता होता है वह सारी मख़्लूक़ से बढ़ा हुआ होता है, ख़ुसूसन हमारे रसूले करीम को तमाम पहलों व पिछलों का इल्म अ़ता फ़रमाया गया था। यानी तमाम नबियों को जितना इल्म दिया गया था वह सब और उससे भी ज़्यादा आपको अ़ता फ़रमाया गया था, और इसी अ़ता किये हुए इल्म के मुताबिक़ आपने हज़ारों ग़ैब की बातों की ख़बरें दीं जिनकी सच्चाई को हर आ़म व ख़ास ने देख लिया। इसकी वजह से यह तो कह सकते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हज़ारों लाखों ग़ैब की चीज़ों का इल्म अ़ता किया गया था, मगर इसको क़ुरआन की परिभाषा में इल्मे ग़ैब नहीं कह सकते और इसकी वजह से रसूल को आ़लिमुल-ग़ैब नहीं कहा जा सकता।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

اِنْ اَنَا اِلَّا نَذِيْرٌ وَّبَشِيْرٌ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ.

यानी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह भी ऐलान कर दें कि मेरी नुबुव्वत वाली ज़िम्मेदारी सिर्फ़ यह है कि मैं बदकारों को अ़ज़ाब से डराऊँ और नेक लोगों को बड़े सवाब की ख़ुशख़बरी सुनाऊँ।

दूसरी आयत में तौहीद (एक अल्लाह को मानने और उसी को लायक़े इबादत समझने) के अ़क़ीदे का ज़िक्र है जो इस्लाम का सबसे बड़ा बुनियादी अ़क़ीदा है और इसके साथ शिर्क के बातिल और नामाक़ूल होने का बयान किसी क़द्र तफ़सील के साथ आया है।

आयत के शुरू में हक् तआला ने अपनी कामिल क़ुदरत का एक निशान व प्रतीक हज़रत आदम व हव्वा की पैदाईश से इस तरह बयान फ़रमायाः

هُوَالَّذِیْ خَلَقَکُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِیَسْکُنَ اِلَیْهَا.

यानी अल्लाह तआला ही की शान है जिसने सारे इनसानों को एक ज़ात यानी आदम से पैदा किया और उन्हीं से उनकी बीवी हज़रत हव्वा को पैदा किया, जिसका मक्सद यह था कि आदम अलैहिस्सलाम को एक हम-जिन्स साथी के ज़रिये सुकून हासिल हो।

अल्लाह तआल की इस अजीब क़ुदरत व कारीगरी का तकाज़ा यह था कि आदम की तमाम औलाद हमेशा उसकी शुक्रगुज़ार होती और किसी मख़्लूक़ को उसकी कामिल सिफ़ात में शरीक न ठहराती, मगर ग़फ़लत में डूबे इनसान ने मामला इसके ख़िलाफ़ किया जिसका बयान इसी आयत के दूसरे जुमले और बाद की आयत में इस तरह फ़रमाया गया हैः

فَلَمَّا تَغَشّٰهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِیْفًا فَمَرَّتْ بِهٖ، فَلَمَّآ اَثْقَلَتْ دَّعَوَا اللّٰهَ رَبَّهُمَا لَئِنْ اٰتَیْتَنَا صَالِحًا لَّنَکُوْنَنَّ مِنَ الشّٰکِرِیْنَ. فَلَمَّآ اٰتٰهُمَا صَالِحًا جَعَلَا لَهٗ شُرَکَآءَ فِیْمَآ اٰتٰهُمَا فَتَعٰلَی اللّٰهُ عَمَّا یُشْرِکُوْنَ.

यानी आदम की औलाद ने अपनी ग़फ़लत व नाशुक्री से इस मामले में अमल यह किया कि जब नर व मादा के आपसी मिलाप से हमल (गर्भ) करार पाया तो शुरू में जब तक हमल का कोई बोझ न था औरत आज़ादी के साथ चलती-फिरती रही, फिर जब हक् तआला ने अपनी कामिल क़ुदरत से तीन अंधेरियों के अन्दर उस हमल की तरबियत करके उसको बढ़ाया और उसका बोझ महसूस होने लगा तो अब माँ-बाप फ़िक्र में पड़ गये और ख़तरे महसूस करने लगे कि इस हमल से कैसी औलाद पैदा होगी। क्योंकि कई बार इनसान ही के पेट से अजीब अजीब तरह की मख़्लूक़ भी पैदा हो जाती है, और कई बार अधूरा बना हुआ बच्चा पैदा हो जाता है, अंधा या बहरा या गूंगा या हाथ-पैर से माज़ूर। इन ख़तरों और शंकाओं के सबब माँ-बाप ये दुआयें माँगने लगे कि या अल्लाह! हमें सही सालिम बच्चा इनायत फ़रमाईये, अगर सही सालिम बच्चा पैदा हुआ तो हम शुक्रगुज़ार होंगे।

लेकिन जब अल्लाह तआला ने उनकी दुआयें सुन लीं और बच्चा सही सालिम अता कर दिया तो अब शुक्रगुज़ारी के बजाय शिर्क में मुब्तला हो गये और यह औलाद देना उनके शिर्क में मुब्तला होने का सबब बन गया, जिसकी विभिन्न और अनेक सूरतें होती हैं- कभी तो अक़ीदा ही ख़राब होता है, यूँ समझ बैठते हैं कि यह बेटा किसी वली या बुज़ुर्ग ने दिया है। कभी यह होता है कि अमली तौर पर उस बच्चे को किसी ज़िन्दे या मुर्दे बुज़ुर्ग की तरफ़ मन्सूब करते हैं और उनके नाम की नज़्र व नियाज़ करने लगते हैं, या बच्चे को लेजाकर उनके सामने उसका माथा टेक देते हैं। और कभी बच्चे का नाम रखने में मुश्रिकाना अन्दाज़ इख़्तियार करते हैं, अब्दुल्लात, अब्दुल-उज़्ज़ा, अब्दुश्शम्स या बन्दा-अली वग़ैरह ऐसे नाम रख देते हैं जिनसे यह समझा जाता है कि यह बच्चा अल्लाह तआला के बजाय इन बुतों या इन बुज़ुर्गों का पैदा किया हुआ बन्दा है। ये सब मुश्रिकाना अक़ीदे व आमाल हैं जो अल्लाह तआला की नेमत के मुक़ाबले

में शुक्र के बजाय नाशुक्री की विभिन्न सूरतें हैं।

तीसरी आयत के आख़िर में उन लोगों की बेराही और टेढ़ी चाल को वाज़ेह करने के लिये फ़रमायाः

فَتَعٰلَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ.

यानी पाक है अल्लाह तआ़ला उस शिर्क से जिसको उन लोगों ने इख़्तियार किया।

ज़िक्र हुई आयतों की इस तफ़सील से यह बात वाज़ेह हो गयी कि इस आयत के पहले जुमले में हज़रत आदम व हव्वा का ज़िक्र करके आदम की औलाद को उनकी पैरवी और शुक्रगुज़ारी की तालीम दी गयी है, और आख़िरी जुमलों में बाद में आने वाले इनसानों की गुमराही और ग़लत राह पर चलने का बयान किया गया है कि उन्होंने बजाय शुक्रगुज़ारी के शिर्क को इख़्तियार कर लिया।

इससे मालूम हुआ कि शिर्क इख़्तियार करने वालों के मामले का ताल्लुक़ हज़रत आदम व हव्वा से बिल्कुल नहीं जिसके सबब हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के गुनाहों से मासूम व सुरक्षित होने पर कोई शुब्हा हो, बल्कि इसका ताल्लुक बाद में आने वाली नस्लों के अ़मल से है। और यह तफ़सीर जो हमने इख़्तियार की है यह तफ़सीर दुर्रे-मन्सूर में इब्नुल-मुन्ज़िर व इब्ने अबी हातिम की रिवायत से मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल की गयी है।

तिर्मिज़ी और हाकिम की रिवायतों में जो एक क़िस्सा हज़रत आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम का और शैतान के फ़रेब देने का बयान हुआ है उसको कुछ हज़रात ने इस्राईली रिवायत क़रार देकर नाक़ाबिले भरोसा बतलाया है, लेकिन बहुत से मुहद्दिसीन ने उसको मोतबर भी कहा है। उपरोक्त तफ़सीर पर अगर इस क़िस्से की रिवायत को सही भी मान लिया जाये तो भी आयत की तफ़सीर में कोई एतिराज़ व शुब्हा बाक़ी नहीं रहता।

इस आयत से चन्द अहकाम व फ़ायदे हासिल हुएः

अव्वल यह कि अल्लाह तआ़ला ने औ़रत व मर्द के जोड़े को हम-जिन्स बनाया ताकि तबई मुवाफ़क़त और पूरा उन्स (ताल्लुक़ व मुहब्बत) एक दूसरे के साथ हासिल हो सके, और दाम्पत्य जीवन से जो दुनिया को आबाद व क़ायम रखने के फ़ायदे जुड़े हुए हैं वो पूरी तरह अन्जाम पा सकें।

दूसरे यह कि वैवाहिक जीवन के जैसे हुक़ूक़ व फ़राइज़ (अधिकार व ज़िम्मेदारियाँ) दोनों मियाँ-बीवी पर लागू होते हैं उन सब का ख़ुलासा और असल मक़सद सुकून है। दुनिया की नई सामाजिक ज़िन्दगी और नई रस्मों में जो चीज़ें सुकून को बरबाद करने वाली हैं वो मियाँ-बीवी के ताल्लुक़ की बुनियादी दुश्मन हैं, और आजकी सभ्य दुनिया में जो घरेलू ज़िन्दगी उमूमन बद-मज़ा नज़र आती है और चारों तरफ़ तलाक़ों की भरमार है, इसका सबसे बड़ा सबब यही है कि रहन-सहन और सामाजिक ज़िन्दगी में ऐसी चीज़ों को अच्छा समझ लिया गया है जो घरेलू ज़िन्दगी के सुकून को सरासर बरबाद करने वाली हैं। औ़रत की आज़ादी के नाम पर उसकी

बेपर्दगी और बेहयाई जो तूफ़ान की तरह आलमगीर (विश्वव्यापी) होती जाती है इसका मियाँ-बीवी और घरेलू ज़िन्दगी के सुकून के बरबाद करने में बड़ा दख़ल है, और तजुर्बा गवाह है कि जैसे-जैसे यह बेपर्दगी और बेहयाई औरतों में बढ़ती जाती है उसी रफ़्तार से घरेलू सुकून व इत्मीनान ख़त्म होता जाता है।

तीसरे यह कि बच्चों के ऐसे नाम रखना जिनसे मुश्रिकाना मफ़्हूम (मायने व मतलब) लिया जा सकता हो, चाहे नाम रखने वालों की नीयत यह न हो, यह भी एक मुश्रिकाना रस्म होने के सबब बहुत बड़ा गुनाह है- जैसे अ़ब्दुश्शम्स अ़ब्दुल-उ़ज़्ज़ा वग़ैरह नाम रखना।

चौथे यह कि बच्चों के नाम रखने में भी शुक्र अदा करने का तरीक़ा यह है कि उनके नाम अल्लाह व रसूल के नामों पर रखे जायें। इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अ़ब्दुर्रहमान, अ़ब्दुल्लाह वग़ैरह को ज़्यादा पसन्द फ़रमाया है।

अफ़सोस है कि आज मुसलमानों में से यह रही-सही इस्लामी रस्म भी ख़त्म होती जाती है। अव्वल तो नाम ही ग़ैर-इस्लामी रखे जाते हैं, और जो कहीं माँ-बाप ने इस्लामी नाम रख भी दिये तो उनको भी अंग्रेज़ी के संक्षिप्त अक्षरों में मुन्तकिल करके ख़त्म कर दिया जाता है। सीरत व सूरत से तो किसी को मुसलमान समझना पहले ही मुश्किल हो चुका था, नामों के इस नये तरीक़े और अन्दाज़ ने इस्लाम की इस आख़िरी निशानी व पहचान को भी रुख़्सत कर दिया। अल्लाह तआ़ला हमें दीन की समझ और इस्लाम की मुहब्बत अ़ता फ़रमाये, आमीन।

إِنَّ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ عِبَادٌ أَمْثَالُكُمْ فَادْعُوهُمْ فَلْيَسْتَجِيبُوا
لَكُمْ إِن كُنتُمْ صَادِقِينَ ۝ أَلَهُمْ أَرْجُلٌ يَمْشُونَ بِهَا ۖ أَمْ لَهُمْ أَيْدٍ يَبْطِشُونَ بِهَا ۖ أَمْ لَهُمْ أَعْيُنٌ
يُبْصِرُونَ بِهَا ۖ أَمْ لَهُمْ آذَانٌ يَسْمَعُونَ بِهَا ۗ قُلِ ادْعُوا شُرَكَاءَكُمْ ثُمَّ كِيدُونِ فَلَا تُنظِرُونِ ۝
إِنَّ وَلِيِّيَ اللَّهُ الَّذِي نَزَّلَ الْكِتَابَ ۖ وَهُوَ يَتَوَلَّى الصَّالِحِينَ ۝ وَالَّذِينَ تَدْعُونَ مِن دُونِهِ لَا
يَسْتَطِيعُونَ نَصْرَكُمْ وَلَا أَنفُسَهُمْ يَنصُرُونَ ۝ وَإِن تَدْعُوهُمْ إِلَى الْهُدَىٰ لَا يَسْمَعُوا ۖ وَتَرَاهُمْ
يَنظُرُونَ إِلَيْكَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ ۝

इन्नल्लज़ी-न तद्अू-न मिन् दूनिल्लाहि अ़िबादुन् अम्सालुकुम् फ़द्अूहुम् फ़ल्यस्तजीबू लकुम् इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (194) अ-लहुम् अर्जुलुंय्-यम्शू-न बिहा अम् लहुम् ऐदियुं-	जिनको तुम पुकारते हो अल्लाह के सिवा वे बन्दे हैं तुम जैसे भला पुकारो तो उन को पस चाहिए कि वे क़ुबूल करें तुम्हारे पुकारने को अगर तुम सच्चे हो। (194) क्या उनके पाँव हैं जिनसे चलते हैं, या उनके हाथ हैं जिनसे पकड़ते हैं, या उनके

यब्तिशू-न बिहा अम् लहुम् अअ्युनुंय्युब्सिरू-न बिहा अम् लहुम् आज़ानुंय्यस्मअ़ू-न बिहा, क़ुलिद्अ़ू शु-रका-अकुम् सुम्-म कीदूनि फ़ला तुन्ज़िरून (195) इन्-न वलिय्यि-यल्लाहुल्लज़ी नज़्ज़लल्-किता-ब व हु-व य-तवल्लस्-सालिहीन (196) वल्लज़ी-न तद्अ़ू-न मिन् दूनिही ला यस्ततीअ़ू-न नस्रकुम् व ला अन्फ़ु-सहुम् यन्सुरून (197) व इन् तद्अ़ूहुम् इलल्-हुदा ला यस्मअ़ू, व तराहुम् यन्ज़ुरू-न इलै-क व हुम् ला युब्सिरून (198)	आँखें हैं जिनसे देखते हैं, या उनके कान हैं जिनसे सुनते हैं, तू कह दे कि पुकारो अपने शरीकों को फिर बुराई करो मेरे हक़ में और मुझको ढील न दो। (195) मेरा हिमायती तो अल्लाह है जिसने उतारी किताब, और वही हिमायत करता है नेक बन्दों की। (196) और जिनको तुम पुकारते हो उसके सिवा वे नहीं कर सकते तुम्हारी मदद और न अपनी जान बचा सकें। (197) और अगर तुम उनको पुकारो रास्ते की तरफ़ तो कुछ न सुनें, और तू देखता है उनको कि तक रहे हैं तेरी तरफ़ और वे कुछ नहीं देखते। (198)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ग़र्ज़ कि) वाक़ई तुम ख़ुदा को छोड़कर जिनकी इबादत करते हो वे भी तुम जैसे ही (अल्लाह के मम्लूक) बन्दे हैं (यानी तुमसे बढ़कर नहीं, चाहे घटे हुए हों), सो (हम तो तुमको सच्चा तब जानें कि) तुम (तो) उनको पुकारो (और) फिर उनको चाहिए कि तुम्हारा कहना कर दें अगर तुम (उनके ख़ुदा होने के यक़ीन व अ़क़ीदे में) सच्चे हो। (और वे बेचारे तुम्हारा कहना तो क्या करेंगे, कहना मानने के माध्यम तक उनको नसीब नहीं, देख लो) क्या उनके पाँव हैं जिनसे वे चलते हैं, या उनके हाथ हैं जिनसे वे किसी चीज़ को थाम सकें, या उनकी आँखें हैं जिनसे वे देखते हों, या उनके कान हैं जिनसे वे सुनते हों? (जब उनमें काम करने की क़ुव्वतें तक नहीं तो कोई काम और अ़मल उनसे कैसे होगा, और) आप (यह भी) कह दीजिए कि (जिस तरह वे अपने मोतक़िदों को कोई फ़ायदा पहुँचाने से आ़जिज़ हैं इसी तरह अपने मुख़ालिफ़ों को नुक़सान भी नहीं पहुँचा सकते, जैसा कि तुम कहा करते हो कि हमारे बुतों की बेअदबी न किया करो वरना वे तुम पर कोई आफ़त डाल देंगे, जैसे कि आयत "व युख़व्विफ़ून-क बिल्लज़ी-न मिन दूनिही" के तहत इमाम अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने 'लुबाब' में नक़ल किया है। और अगर तुम समझते हो कि वे मुझको नुक़सान पहुँचा सकते हैं तो) तुम (अपना अरमान निकाल लो और) अपने सब

शरीकों को बुला लो, फिर (सब मिलकर) मुझे नुक़सान पहुँचाने की तदबीर करो, फिर (जब तदबीर बन जाये तो) मुझको बिल्कुल भी मोहलत मत दो (बल्कि फ़ौरन उसको नाफ़िज़ कर दो। देखूँ क्या होता है, और ख़ाक भी नहीं होगा क्योंकि तुम्हारे बनाये हुए ये शरीक तो बिल्कुल बेकार व बेबस हैं, रह गये तुम जो कि कुछ हाथ-पाँव हिला सकते हो तो तुम मेरा इसलिये कुछ नहीं कर सकते कि) यक़ीनन मेरा मददगार अल्लाह तआ़ला है जिस (के मददगार और साथी होने का खुला सुबूत यह है कि उस) ने (मुझ पर) यह (मुबारक) किताब (जो दोनों जहान की बेहतरी व कामयाबी को अपने अन्दर रखती है) नाज़िल फ़रमाई। (और अगर वह मेरा साथी व मददगार न होता तो इतनी बड़ी नेमत क्यों अ़ता फ़रमाता) और (इस ख़ास दलील व निशानी के अ़लावा एक आ़म क़ायदे से भी उसका मददगार होना मालूम है, वह क़ायदा यह है कि) वह (आ़म तौर पर) नेक बन्दों की मदद किया करता है (तो नबी तो उन नेक बन्दों में फ़र्दे कामिल हैं और मैं नबी हूँ तो मेरा भी ज़रूर मददगार होगा। ग़र्ज़ यह कि जिनके नुक़सान पहुँचाने से डराते हो वे आ़जिज़ और जो मुझको नुक़सान से बचाता है वह क़ादिर, फिर अन्देशा काहे का) और (अगरचे उनका आ़जिज़ व बेबस होना ऊपर बिल्कुल स्पष्ट तौर पर बयान हो चुका है लेकिन चूँकि वहाँ असल बयान उनके इबादत के हक़दार होने की नफ़ी का था, उनकी बेबसी का ज़िक्र ज़िमनी तौर पर आ गया था अब आगे मुस्तक़िल तौर पर उनके बेबस व आ़जिज़ होने का बयान फ़रमाते हैं कि) तुम जिन लोगों की ख़ुदा को छोड़कर इबादत करते हो वे (तुम्हारे दुश्मन के मुक़ाबले में जैसा मैं हूँ) तुम्हारी कुछ मदद नहीं कर सकते, और न (अपने दुश्मन के मुक़ाबले में जैसा मैं हूँ) वे अपनी मदद कर सकते हैं। और (मदद करना तो बड़ी बात है) अगर उनको (तो) कोई बात बताने को पुकारो तो उसको (भी तो) न सुनें, (इसके भी ऊपर बयान हुए वही दोनों मायने हो सकते हैं) और (जैसे उनके पास सुनने का आला नहीं इसी तरह देखने का आला भी नहीं और उनकी तस्वीर में जो आँखें बना दी जाती हैं वे सिर्फ़ नाम ही की होती हैं काम की नहीं, चुनाँचे) उन (बुतों) को आप देखते हैं कि (जैसे) वे आपको देख रहे हैं (क्योंकि शक्ल तो आँखों की सी बनी हुई है) और वे (वास्तव में) कुछ भी नहीं देखते (क्योंकि हक़ीक़त में तो वे आँखें नहीं। इसी पर काम करने वाली हाथ-पैरों की दूसरी क़ुव्वतों की नफ़ी समझ लेनी चाहिये, पस ऐसे आ़जिज़ का क्या डरावा दिखलाते हो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

اِنَّ وَلِيِّۦَ اللّٰهُ الَّذِیْ نَزَّلَ الْكِتٰبَ وَهُوَ یَتَوَلَّی الصّٰلِحِیْنَ.

यहाँ वली के मायने मुहाफ़िज़ व मददगार के हैं, और किताब से मुराद क़ुरआन और सालिहीन से मुराद बक़ौल इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वे लोग हैं जो अल्लाह तआ़ला के साथ किसी को बराबर न करें। इसमें अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से लेकर आ़म नेक मुसलमानों तक सब दाख़िल हैं। और आयत के मायने यह हैं कि मुझे तुम्हारी मुख़ालफ़त की इसलिये परवाह नहीं कि मेरा मुहाफ़िज़ व मददगार अल्लाह तआ़ला है जिसने मुझ पर क़ुरआन नाज़िल किया है।

यहाँ अल्लाह तआ़ला की सब सिफ़ात में से क़ुरआन नाज़िल करने को ख़ुसूसियत से इसलिये ज़िक्र किया कि तुम जो मेरी दुश्मनी व मुख़ालफ़त पर जमे हो, इसकी वजह क़ुरआन की तालीम व दावत है जो मैं तुम्हें देता हूँ, तो जिसने मुझ पर यह क़ुरआन नाज़िल किया है वही मेरा मददगार व मुहाफ़िज़ (रक्षक) है, इसलिये मुझे क्यों फ़िक्र हो।

इसके बाद आख़िरी जुमले में आ़म क़ानून व उसूल बतला दिया कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की तो बड़ी शान है आ़म नेक लोगों और नेक मुसलमानों का भी अल्लाह मददगार और कफ़ील होता है, उनकी मदद करता है, इसलिये उनको किसी दुश्मन की मुख़ालफ़त और दुश्मनी नुक़सान नहीं पहुँचा सकती। बहुत सी बार तो दुनिया ही में वह उन पर ग़ालिब कर दिया जाता है और अगर किसी वक़्त हिक्मत के तक़ाज़े के सबब ग़ालिब भी न हो तो भी उसके असल मक़सद में कोई ख़लल नहीं पड़ता, वह ज़ाहिर में नाकाम होकर भी मक़सद के लिहाज़ से कामयाब ही होता है, क्योंकि नेक मोमिन का असल मक़सद हर काम में अल्लाह तआ़ला को राज़ी करना और उसकी इताअ़त करना है, अगर वह दुनिया में किसी वजह से नाकाम भी हो जाये तो अल्लाह की रज़ा हासिल होने का असल मक़सद फिर भी उसको हासिल होता है और वह कामयाब ही होता है। वल्लाहु आलम।

خُذِ الْعَفْوَ وَأْمُرْ بِالْعُرْفِ وَأَعْرِضْ عَنِ الْجٰهِلِيْنَ ۝ وَإِمَّا
يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطٰنِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ ۭ إِنَّهٗ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝ إِنَّ الَّذِيْنَ اتَّقَوْا إِذَا مَسَّهُمْ
طٰۤئِفٌ مِّنَ الشَّيْطٰنِ تَذَكَّرُوْا فَإِذَا هُمْ مُّبْصِرُوْنَ ۝ وَإِخْوَانُهُمْ يَمُدُّوْنَهُمْ فِي الْغَيِّ ثُمَّ لَا يُقْصِرُوْنَ ۝

ख़ुज़िल्-अ़फ़्-व वअ्मुर् बिल्अ़ुर्फ़ि व अअ़्रिज़् अ़निल्-जाहिलीन (199) व इम्मा यन्ज़ग़न्न-क मिनश्शैतानि नज़्गुन् फ़स्तअ़िज़् बिल्लाहि, इन्नहू समीअ़ुन् अ़लीम (200) इन्नल्लज़ीनत्-तक़ौ इज़ा मस्सहुम् ताइ-फ़तुम्-मिनश्शैतानि तज़क्करू फ़-इज़ा हुम् मुब्सिरून (201) व इख़्वानुहुम् यमुद्दूनहुम् फ़िल्-ग़य्यि सुम्-म ला युक़्सिरून (202)	आ़दत डाल माफ़ करने की और हुक्म कर नेक काम करने का और किनारा कर जाहिलों से। (199) और अगर उभारे तुझको शैतान की छेड़ तो पनाह माँग अल्लाह से, वही है सुनने वाला जानने वाला। (200) जिनके दिल में डर है जहाँ पड़ गया उन पर शैतान का गुज़र चौंक गये, फिर उसी वक़्त उनको सूझ आ जाती है। (201) और जो शैतानों के भाई हैं वे उनको खींचते चले जाते हैं गुमराही में, फिर वे कमी नहीं करते। (202)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(लोगों से यह बर्ताव रखिये कि उनके आमाल व अख़्लाक़ में से) सरसरी (नज़र में जो) बर्ताव (माक़ूल व मुनासिब मालूम हों उन) को क़ुबूल कर लिया कीजिए (उनकी तह और हक़ीक़त को तलाश न कीजिए बल्कि ज़ाहिरी नज़र में सरसरी तौर पर जो काम किसी से अच्छा हो उसको भलाई पर महमूल कीजिये, अन्दर का हाल अल्लाह के सुपुर्द कीजिये। क्योंकि पूरा इख़्लास और क़ुबूलियत की तमाम शर्तों की पाबन्दी यह तो बहुत ख़ास लोगों का हिस्सा है। हासिल यह कि सामाजिक ज़िन्दगी में आसानी रखिये, सख़्ती न कीजिये। यह बर्ताव तो अच्छे कामों में है) और (जो काम ज़ाहिरी नज़र में भी बुरा हो उसमें यह बर्ताव रखिये कि उस बारे में) नेक काम की तालीम कर दिया कीजिये, और जाहिलों से एक किनारे हो जाया कीजिये (और उनके बहुत पीछे न पड़िये)। और अगर (इत्तिफ़ाक़ से उनकी जहालत पर) आपको शैतान की तरफ़ से कोई वस्वसा (गुस्से का) आने लगे (जिसमें संदेह हो कि कोई बात मस्लेहत के ख़िलाफ़ हो जायेगी) तो (ऐसी हालत में फ़ौरन) अल्लाह तआ़ला की पनाह माँग लिया कीजिए, बेशक वह ख़ूब सुनने वाला, ख़ूब जानने वाला है (आपके पनाह माँगने को सुनता है, आपके मक़सद को जानता है वह आपको उससे पनाह देगा। और जिस तरह पनाह माँगना और अल्लाह की तरफ़ रुजू होना आपके लिये लाभदायक है इसी तरह ख़ुदा से डरने वाले तमाम लोगों के लिये भी फ़ायदे की चीज़ है, चुनाँचे) यक़ीनन (यह बात है कि) जो लोग ख़ुदा से डरने वाले हैं जब उनको शैतान की तरफ़ से कोई ख़तरा (गुस्से का या और किसी बात का) आ जाता है तो वे (फ़ौरन ख़ुदा की) याद में लग जाते हैं (जैसे अल्लाह से पनाह माँगना, दुआ़ करना और ख़ुदा तआ़ला की बड़ाई और अज़ाब व सवाब को याद करना) सो एक दम उनकी आँखें खुल जाती हैं (और उस मामले की हक़ीक़त उन पर खुल जाती है जिससे वह ख़तरा असर नहीं करता), और (इसके विपरीत) जो (शैतानों के ताबे और पैरोकार) हैं वे (शयातीन) उनको गुमराही में खींचे चले जाते हैं, पस वे (पैरोकार गुमराही से) बाज़ नहीं आते (न वे अल्लाह से पनाह माँगें न महफ़ूज़ रहें। सो वे मुश्रिक लोग तो शैतान के ताबे हैं, ये कब बाज़ आयेंगे, इसलिये इनके ग़म व गुस्से में पड़ना बेकार है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़ुरआनी अख़्लाक़ का एक मुकम्मल हिदायत-नामा

उपरोक्त आयतें क़ुरआन के बुलन्द अख़्लाक़ का एक जामे और मुकम्मल हिदायत-नामा है जिसके ज़रिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरबियत करके आपको तमाम अव्वलीन व आख़िरीन में आला व अ़ज़ीम अख़्लाक़ वाला होने का ख़िताब दिया गया है।

पिछली आयतों में इस्लाम के दुश्मनों की ग़लत रविश, हठधर्मी और बद-अख़्लाक़ियों का

ज़िक्र करने के बाद इन आयतों में इसके विपरीत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बुलन्द और उम्दा अख़्लाक़ की हिदायत दी गयी है, जिसके तीन जुमले हैं- पहला जुमला 'ख़ुज़िल्-अ़फ़्-व' है। अ़रबी लुग़त के एतिबार से लफ़्ज़ 'अ़फ़्व' के कई मायने हो सकते हैं और इस मौक़े पर हर मायने की गुंजाईश है। इसी लिये तफ़सीर के उलेमा की मुख़्तलिफ़ जमाअ़तों ने मुख़्तलिफ़ मायने लिये हैं। मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने जिसको इख़्तियार किया है वह यह है कि 'अ़फ़्व' कहा जाता है हर ऐसे काम को जो आसानी के साथ बग़ैर किसी कुल्फ़त और मशक़्क़त के हो सके, तो इस जुमले के मायने यह हुए कि आप क़ुबूल कर लिया करें उस चीज़ को जो लोग आसानी से कर सकें, यानी शरई वाजिबात में आप लोगों से आला मेयार का मुतालबा न करें बल्कि वे जिस पैमाने पर आसानी से अ़मल कर सकें उतने ही दर्जे को क़ुबूल कर लिया करें। मसलन नमाज़ की असल हक़ीक़त तो यह है कि बन्दा सारी दुनिया से कटकर और यक्सू होकर अपने रब के सामने हाथ बाँधे हुए इसलिये खड़ा है कि उसकी तारीफ़ व सना के साथ अपने दिल की बात को डायरेक्ट अल्लाह की बारगाह में ख़ुद पेश कर रहा है, गोया वह उस वक़्त डायरेक्ट हक़ तआ़ला शानुहू से मुख़ातिब है। इसके अल्लाह के सामने जो आ़जिज़ी व झुकाव, दिल की हाज़िरी और अदब व एहतिराम की कैफ़ियात व निशानात होने चाहियें, ज़ाहिर है कि लाखों नमाज़ियों में से किसी किसी अल्लाह के बन्दे को नसीब होते हैं, आ़म लोग इस दर्जे को नहीं पा सकते, तो इस आयत ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह तालीम दी कि आप उन लोगों से इस आला मेयार का मुतालबा ही न रखें बल्कि जिस दर्जे को वे आसानी से हासिल कर सकते हैं वही क़ुबूल फ़रमा लें। इसी तरह दूसरी इबादतों ज़कात, रोज़ा, हज और आ़म मामलों व समाजी बर्ताव और रहन-सहन के शरई वाजिबात में जो लोग पूरा पूरा हक़ अदा नहीं कर सकते उनसे सरसरी इताअ़त व फ़रमाँबरदारी ही को क़ुबूल कर लिया जाये।

सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से ख़ुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से आयत के यही मायने नक़ल किये गये हैं।

और एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस आयत के नाज़िल होने पर फ़रमाया कि मुझे अल्लाह तआ़ला ने लोगों के आमाल व अख़्लाक़ में सरसरी इताअ़त क़ुबूल करने का हुक्म दिया है, मैंने इरादा कर लिया है कि जब तक मैं उन लोगों के साथ हूँ ऐसा ही अ़मल करूँगा। (इब्ने कसीर)

तफ़सीर के इमामों की एक बड़ी जमाअ़त हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर, हज़रत सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम और मुजाहिद रह. वग़ैरह ने इस जुमले के भी यही मायने क़रार दिये हैं।

दूसरे मायने 'अ़फ़्व' के माफ़ी और दरगुज़र करने के भी आते हैं। तफ़सीर के उलेमा की एक जमाअ़त ने इस जगह यही मायने मुराद लेकर इस जुमले का यह मतलब क़रार दिया है कि आप गुनाहगारों, ख़ताकारों के गुनाह व क़सूर को माफ़ कर दिया करें।

इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर तबरी ने नक़ल किया है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो हुज़ूरे

पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिब्रीले अमीन से आयत का मतलब पूछा। जिब्रीले अमीन ने अल्लाह तआ़ला से मालूम करने के बाद यह मतलब बतलाया कि इस आयत में आपको यह हुक्म दिया गया है कि जो शख़्स आप पर जुल्म करे आप उसको माफ़ कर दें और जो आपको कुछ न दे आप उस पर बख़्शिश करें, और जो आप से ताल्लुक़ तोड़े आप उससे भी मिला करें।

इस जगह इब्ने मर्दूया ने हज़रत सअ़द बिन उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि ग़ज़वा-ए-उहुद में जब हुज़ूरे पाक के चचा हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को शहीद किया गया और बड़ी बेदर्दी से उनके बदन के अंग काटकर लाश की बेहुर्मती की गयी तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लाश को इस हालत में देखकर फ़रमाया कि जिन लोगों ने हमज़ा के साथ ऐसा मामला किया है मैं उनके सत्तर आदमियों के साथ ऐसा मामला करके छोड़ूँगा, इस पर यह आयत नाज़िल हुई जिसमें आपको बतलाया गया कि आपका यह मक़ाम नहीं, आपके शायाने शान यह है कि माफ़ी व दरगुज़र से काम लें।

सही बुख़ारी में इस जगह एक वाक़िआ़ हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िलाफ़त के ज़माने में उयैना इब्ने हसन मदीना में आया और अपने भतीजे हुर्र इब्ने क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मेहमान हुआ। हज़रत हुर्र बिन क़ैस उन इल्म वाले हज़रात में से थे जो हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की सलाहकार समीति में शरीक हुआ करते थे। उयैना ने अपने भतीजे हुर्र बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से कहा कि तुम अमीरुल-मोमिनीन के ख़ास और क़रीबी हो, मेरे लिये उनसे मुलाक़ात का कोई वक़्त ले लो। हुर्र बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से दरख़्वास्त की कि मेरा चचा उयैना आप से मिलना चाहता है। आपने इजाज़त दे दी।

मगर उयैना ने फ़ारूक़े आज़म की मज्लिस में पहुँचकर बहुत ही असभ्य और ग़लत गुफ़्तगू की, कि न आप हमें हमारा पूरा हक़ देते हैं न हमारे साथ इन्साफ़ करते हैं। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को इस पर गुस्सा आया तो हुर्र बिन क़ैस ने अ़र्ज़ किया कि अमीरुल-मोमिनीन! अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है:

خُذِ الْعَفْوَ وَاْمُرْ بِالْعُرْفِ وَاَعْرِضْ عَنِ الْجٰهِلِيْنَ.

और यह शख़्स भी जाहिलों में से है। यह आयत सुनते ही फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु का सारा गुस्सा ख़त्म हो गया और उसको कुछ नहीं कहा। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की यह आ़दत मारूफ़ व मशहूर थी कि:

كَانَ وَقَّافًا عِنْدَ كِتَابِ اللّٰهِ عَزَّوَجَلَّ.

यानी किताबुल्लाह के अहकाम के आगे गर्दन झुका डालते थे।

यह आयत बुलन्द-अख़्लाक़ी की जामे आयत है। कुछ उलेमा ने इसका ख़ुलासा यह बयान फ़रमाया है कि लोग दो क़िस्म के हैं- एक मोहसिन यानी अच्छे काम करने वाले। दूसरे बदकार ज़ालिम। इस आयत ने दोनों तब्क़ों के साथ अच्छे अख़्लाक़ बरतने की यह हिदायत दी है कि

नेक काम करने वालों से उनकी ज़ाहिरी नेकी को क़ुबूल कर लो, ज़्यादा खोज-बीन और खोद-कुरेद में न पड़ो, और नेकी के आला मेयार का उनसे मुतालबा न करो, बल्कि जितना वे आसानी से कर सकें उसको काफ़ी समझो। और बदकारों के मामले में यह हिदायत दी कि उनको नेक काम सिखलाओ और नेकी का रास्ता बतलाओ। अगर वे उसको क़ुबूल न करें और अपनी गुमराही और ग़लती पर जमे रहें और जाहिलाना गुफ़्तगू से पेश आयें तो उनसे अ़लैहदा हो जायें और उनकी जाहिलाना गुफ़्तगू का जवाब न दें, इस तर्ज़ से यह उम्मीद है कि उनको किसी वक़्त होश आये और अपनी ग़लती से बाज़ आ जायें।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطٰنِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ. اِنَّهٗ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ.

यानी अगर आपको शैतान की तरफ़ से कोई वस्वसा आने लगे तो अल्लाह से पनाह माँग लें, वह सुनने वाला जानने वाला है।

दर हक़ीक़त यह आयत भी पहली आयत के मज़मून की तकमील (पूरा करने वाली) है, क्योंकि इसमें जो हिदायत दी गयी है कि ज़ुल्म करने वालों और जहालत से पेश आने वालों की ख़ता से दरगुज़र करें, उनकी बुराई का जवाब बुराई से न दें। यह बात इनसानी तबीयत के लिये सबसे ज़्यादा भारी और मुश्किल है, ख़ुसूसन ऐसे मौक़ों में शैतान अच्छे भले इनसान को भी गुस्सा दिलाकर लड़ने झगड़ने पर आमादा कर ही देता है। इसलिये दूसरी आयत में यह हिदायत की गयी है कि अगर ऐसे सब्र की आज़माईश के मौक़ों में गुस्से के जज़्बात ज़्यादा भड़कते नज़र आयें तो समझ लो कि यह शैतान की तरफ़ से है और उसका इलाज यह है कि अल्लाह तआ़ला से पनाह माँग लो।

हदीस में है कि दो शख़्स हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने लड़ झगड़ रहे थे और एक शख़्स गुस्से में बेक़ाबू हो रहा था, आपने उसको देखकर फ़रमाया कि मैं एक ऐसा कलिमा जानता हूँ कि अगर यह शख़्स वह कलिमा कह ले तो इसकी यह उत्तेजना और भड़कना जाता रहे। फ़रमाया वह कलिमा यह हैः

اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ.

अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम

उस शख़्स ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुनकर फ़ौरन यह कलिमा पढ़ लिया तो फ़ौरन ही सारा गुस्सा, जोश और भड़कना ख़त्म हो गया।

एक अ़जीब फ़ायदा

इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर रह. ने इस जगह एक अ़जीब बात यह लिखी है कि पूरे क़ुरआन में तीन आयतें बुलन्द और आला अख़्लाक़ की तालीम व हिदायत के लिये जामे आई हैं और तीनों के आख़िर में शैतान से पनाह माँगने का ज़िक्र है। एक तो यही सूरः आराफ़ की आयत है, दूसरी सूरः मोमिनून की यह आयत हैः

اِدْفَعْ بِالَّتِیْ هِیَ اَحْسَنُ السَّیِّئَةَ. نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا یَصِفُوْنَ. وَقُلْ رَّبِّ اَعُوْذُبِكَ مِنْ هَمَزٰتِ الشَّیٰطِیْنِ، وَاَعُوْذُبِكَ رَبِّ اَنْ یَّحْضُرُوْنِ.

(यानी सूरः मोमिनून की आयत नम्बर 97)

कि दूर करो बुराई को भलाई से, हम ख़ूब जानते हैं जो कुछ ये कहा करते हैं और आप यूँ दुआ कीजिए कि ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं आप से पनाह माँगता हूँ शैतानों के दबाव से, और ऐ मेरे परवर्दिगार! मैं आप से पनाह माँगता हूँ इस बात से कि शयातीन मेरे पास आयें।

तीसरी आयत सूरः हा-मीम सज्दा की यह है:

وَلَا تَسْتَوِی الْحَسَنَةُ وَلَا السَّیِّئَةُ، اِدْفَعْ بِالَّتِیْ هِیَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِیْ بَیْنَكَ وَبَیْنَهٗ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهٗ وَلِیٌّ حَمِیْمٌ. وَمَا یُلَقّٰهَآ اِلَّا الَّذِیْنَ صَبَرُوْا وَمَا یُلَقّٰهَآ اِلَّا ذُوْحَظٍّ عَظِیْمٍ. وَاِمَّا یَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّیْطٰنِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ. اِنَّهٗ هُوَ السَّمِیْعُ الْعَلِیْمُ.

यानी नेकी और बदी बराबर नहीं होती, आप नेक बर्ताव से टाल दिया करें, फिर देखते ही देखते आप में और जिस शख़्स में दुश्मनी थी वह ऐसा हो जायेगा जैसा कोई दिली दोस्त होता है। और यह बात उन्हीं लोगों को नसीब होती है जो बड़े मुस्तकिल-मिज़ाज हैं। और यह बात उसको हासिल होती है जो बड़ा नसीब वाला है। और अगर आपको शैतान की तरफ़ से कुछ वस्वसा (दिल में ख़्याल) आने लगे तो अल्लाह की पनाह माँग लिया कीजिए, बिला शुब्हा वह ख़ूब सुनने वाला और ख़ूब जानने वाला है।

इन तीनों आयतों में गुस्सा दिलाने वालों से माफ़ी व दरगुज़र और बुराई के बदले में भलाई करने की हिदायत के साथ-साथ शैतान से पनाह माँगने की हिदायत फ़रमाई गयी है। इससे मालूम होता है कि शैतान को इनसानी झगड़ों से ख़ास दिलचस्पी है, जहाँ झगड़े का कोई मौक़ा पेश आता है शयातीन उसको अपने शिकार की जगह बना लेते हैं। और बड़े से बड़े बुर्दबार वक़ार वाले आदमी को गुस्सा दिलाकर हद से निकाल देने की कोशिश करते हैं।

इसका इलाज यह है कि जब गुस्सा क़ाबू में न आता देखें तो समझ जायें कि शैतान मुझ पर ग़ालिब आ रहा है और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू होकर उससे पनाह माँगें, तब अख़्लाक़ के आला मेयार की तकमील हो सकेगी। इसीलिये बाद की तीसरी और चौथी आयत में भी शैतान से पनाह माँगने की हिदायत दी गयी है।

وَاِذَا لَمْ تَاْتِهِمْ بِاٰیَةٍ قَالُوْا لَوْلَا اجْتَبَیْتَهَا ؕ قُلْ اِنَّمَآ اَتَّبِعُ مَا یُوْحٰۤی اِلَیَّ مِنْ رَّبِّیْ ۚ هٰذَا بَصَآئِرُ مِنْ رَّبِّكُمْ وَهُدًی وَّرَحْمَةٌ لِّقَوْمٍ یُّؤْمِنُوْنَ ۞ وَاِذَا قُرِئَ الْقُرْاٰنُ فَاسْتَمِعُوْا لَهٗ وَاَنْصِتُوْا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ ۞

व इज़ा लम् तअ्तिहिम् बिआयतिन् क़ालू लौलज्तबै-तहा, क़ुल् इन्नमा अत्तबिअ़ु मा यूहा इलय्-य मिर्रब्बी हाज़ा बसा-इरु मिर्रब्बिकुम् व हुदंव्-व रह्मतुल्-लिक़ौमिंय्युअ्मिनून (203) व इज़ा क़ुरिअल्-क़ुरआनु फ़स्तमिअ़ू लहू व अन्सितू लअ़ल्लकुम् तुर्हमून (204)	और जब तू लेकर न जाये उनके पास कोई निशानी तो कहते हैं क्यों न छाँट लाया तू अपनी तरफ़ से, तू कह दे मैं तो चलता हूँ उस पर जो हुक्म आये मेरे पास मेरे रब की तरफ़ से, ये सूझ की बातें हैं तुम्हारे रब की तरफ़ से और हिदायत और रहमत है उन लोगों को जो मोमिन हैं। (203) और जब क़ुरआन पढ़ा जाये तो उसकी तरफ़ कान लगाये रहो और चुप रहो ताकि तुम पर रहम हो। (204)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब आप (उनके फ़रमाईशी मोजिज़ों में से जिनकी फ़रमाईश दुश्मनी के तौर पर करते थे) कोई मोजिज़ा उनके सामने ज़ाहिर नहीं करते (इस वजह से कि हक़ तआ़ला उस मोजिज़े को अपनी हिक्मत के तक़ाज़े से पैदा नहीं करते) तो वे लोग (रिसालत का इनकार करने के लिये आप से) कहते हैं कि आप (अगर नबी हैं तो) यह मोजिज़ा क्यों न (ज़हूर में) लाए? आप फ़रमा दीजिए कि (मेरा काम अपने इख़्तियार से मोजिज़े लाना नहीं बल्कि मेरा असली काम यह है कि) मैं उसकी पैरवी करता हूँ जो मुझ पर मेरे रब की तरफ़ से हुक्म भेजा गया है (इसमें तब्लीग़ भी आ गयी। अलबत्ता नुबुव्वत के साबित करने के लिये सिर्फ़ मोजिज़े का ज़ाहिर होना ज़रूरी है तो तो वो ज़ाहिर हो चुके हैं, चुनाँचे उनमें सबसे बड़ा एक यही क़ुरआन है जिसकी शान यह है कि) ये (अपनी जगह) गोया तुम्हारे रब की तरफ़ से बहुत-सी दलीलें हैं (क्योंकि इसकी हर सूरत की मात्रा मसलन एक मोजिज़ा है तो इस हिसाब से क़ुरआन का पूरा मजमूआ़ कितनी दलीलें हुआ और इसका यह दलील होना तो आ़म है) और (रहा इसका मौजूदा नफ़ा तो वह ख़ास है मानने वालों के साथ, चुनाँचे यह) हिदायत और रहमत है उन लोगों के लिये जो (इस पर) ईमान रखते हैं। और (आप उनसे यह भी कह दीजिये कि) जब क़ुरआन पढ़ा जाया करे (मसलन जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इसकी तब्लीग़ फ़रमायें) तो इसकी तरफ़ कान लगा दिया करो और ख़ामोश रहा करो (ताकि इसका बेमिसाल और ख़ुदाई कलाम होना और इसकी तालीम की ख़ूबी समझ में आये जिससे) उम्मीद है कि तुम पर (नई या और अधिक) रहमत हो।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपरोक्त आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चा रसूल होने का सुबूत और उस पर मुख़ालिफ़ों के शुब्हात व शंकाओं का जवाब और इन दोनों के ज़िमन में चन्द शरई

अहकाम का ज़िक्र फ़रमाया गया है।

रिसालत के सुबूत के लिये तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को मोजिज़े दिये जाते हैं। तमाम नबियों के सरदार हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इसी ताल्लुक़ से इतने मोजिज़े अ़ता किये गये जो पिछले नबियों के मोजिज़ों से बहुत अधिक भी हैं और स्पष्ट भी।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मोजिज़े जो क़ुरआन मजीद और हदीस की सही रिवायतों से साबित हैं उनकी बड़ी तायदाद है, उलेमा ने इस पर मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं। अ़ल्लामा सुयूती रह. की किताब ख़साईस-ए-कुबरा दो मोटी जिल्दों में इसी विषय पर लिखी हुई मशहूर व परिचित है।

मगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बेशुमार मोजिज़े सामने आने के बावजूद मुख़ालिफ़ लोग अपनी ज़िद और हठधर्मी से अपनी तरफ़ से मुतैयन करके नये-नये मोजिज़े दिखलाने का मुतालबा करते रहते थे जिसका ज़िक्र इसी सूरत में पहले भी आ चुका है।

उपरोक्त दो आयतों में से पहली आयत में उनका एक उसूली जवाब दिया गया है जिसका खुलासा यह है कि पैग़म्बर का मोजिज़ा उसकी रिसालत की एक गवाही और सुबूत होता है और जब मुद्दई (दावा करने वाले) का दावा किसी मोतबर गवाही से साबित हो जाये और मुख़ालिफ़ पक्ष ने उस पर कोई जिरह भी न की हो तो उसको दुनिया की किसी अ़दालत में यह हक़ नहीं दिया जाता कि वह मुद्दई से इसका मुतालबा करे कि फ़ुलाँ-फ़ुलाँ मख़्सूस लोगों की गवाही पेश करे तो हम मानेंगे, मौजूदा गवाही पर कोई जिरह पेश किये बग़ैर हम तस्लीम नहीं करते। इसलिये बहुत से स्पष्ट और खुले मोजिज़ों के देखने के बाद मुख़ालिफ़ों का यह कहना कि फ़ुलाँ क़िस्म का ख़ास मोजिज़ा दिखलाईये तो हम आपको रसूल मानें, यह एक दुश्मनी भरा मुतालबा है जिसको कोई अ़दालत सही तस्लीम नहीं कर सकती।

चुनाँचे पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि जब आप इन लोगों का निर्धारित किया हुआ कोई ख़ास मोजिज़ा नहीं दिखलाते तो ये आपकी रिसालत का इनकार करने के लिये कहते हैं कि आपने फ़ुलाँ मोजिज़ा क्यों नहीं दिखलाया? तो आप इनको यह जवाब दे दीजिए कि मेरा काम अपने इख़्तियार से मोजिज़े दिखलाना नहीं बल्कि मेरा असली काम यह है कि मैं उन अहकाम का पालन करूँ जो मुझ पर मेरे रब की तरफ़ से वही के ज़रिये भेजे जाते हैं, जिनमें तब्लीग़ भी शामिल है। इसलिये मैं अपने असली काम में मशग़ूल हूँ और रिसालत के लिये वो दूसरे मोजिज़े भी काफ़ी हैं जो तुम सब लोगों की आँखों के सामने आ चुके हैं। उनके देखने के बाद किसी ख़ास मोजिज़े का मुतालबा एक मुख़ालफ़त और दुश्मनी भरा मुतालबा है जो ध्यान देने और तवज्जोह के क़ाबिल नहीं।

और जो मोजिज़े दिखलाये गये हैं उनमें से क़ुरआन ख़ुद एक ज़बरदस्त और बड़ा मोजिज़ा है जिसने सारी दुनिया को अपना बल्कि अपनी एक छोटी सी सूरत के जैसा लाने का खुला चैलेंज दिया और सारी दुनिया बावजूद पूरी कोशिशों के इसके जैसा लाने से आ़जिज़ हो गयी जो निहायत स्पष्ट और खुली निशानी इस बात की है कि क़ुरआन किसी इनसान का कलाम नहीं

बल्कि अल्लाह जल्ल शानुहू का बेमिस्ल कलाम है। इसलिये फ़रमाया:

هٰذَا بَصَآئِرُ مِنْ رَّبِّكُمْ

यानी यह क़ुरआन तुम्हारे रब की तरफ़ से बहुत सी दलीलों और मोजिज़ों का मजमूआ है, जिनमें मामूली सा ग़ौर करने वाला यह यक़ीन किये बग़ैर नहीं रह सकता कि यह कलाम अल्लाह तआ़ला शानुहू का ही है, किसी मख़्लूक़ का इसमें कोई दख़ल नहीं। इसके बाद फ़रमाया:

وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ.

यानी यह क़ुरआन हक़ की दलील तो सारे जहान के लिये है मगर मक़सद तक पहुँचाने वाला और अल्लाह तआ़ला की रहमत का हक़दार बनाने वाला सिर्फ़ उन लोगों के लिये है जो इस पर ईमान लायें।

दूसरी आयत में बतलाया गया कि क़ुरआन मजीद मोमिनों के लिये रहमत है मगर इस रहमत से फ़ायदा हासिल करने के लिये कुछ शर्तें और आदाब हैं जिनको सार्वजनिक ख़िताब के साथ इस तरह ज़िक्र फ़रमाया:

وَاِذَا قُرِئَ الْقُرْاٰنُ فَاسْتَمِعُوْا لَهٗ وَاَنْصِتُوْا.

यानी जब क़ुरआन पढ़ा जाये तो तुम इस पर कान लगाओ और ख़ामोश रहो।

इस आयत के शाने नुज़ूल में विभिन्न रिवायतें हैं कि यह हुक्म नमाज़ की क़िराअत के बारे में आया है या ख़ुतबे के बारे में या बिना किसी क़ैद के क़ुरआन पढ़ने के बारे में, चाहे वह नमाज़ में हो या ख़ुतबे में या दूसरी हालतों में। लेकिन मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक सही यह है कि जिस तरह आयत के अलफ़ाज़ आ़म हैं इसी तरह इसका हुक्म भी सब हालात के लिये आ़म है सिवाय कुछ ख़ास मौक़ों को छोड़कर।

इसी लिये हनफ़ी हज़रात ने इस आयत से इस पर दलील पकड़ी है कि इमाम के पीछे मुक़्तदियों को क़िराअत नहीं करनी चाहिये, और जिन फ़ुक़हा ने मुक़्तदी को फ़ातिहा पढ़ने की हिदायत की है उनमें भी कुछ हज़रात ने इसकी रियायत रखी है कि इमाम के चुप होने के वक़्त फ़ातिहा पढ़ी जाये। यहाँ इस बहस का मौक़ा नहीं, इस बहस में उलेमा ने मुस्तक़िल बहुत सी छोटी-बड़ी किताबें लिखी हैं, उनका अध्ययन किया जाये।

आयत का असल मज़मून यह है कि क़ुरआने करीम जिन लोगों के लिये रहमत क़रार दिया गया उसकी शर्त यह है कि वे क़ुरआन के अदब व एहतिराम को पहचानें और उस पर अ़मल करें। और क़ुरआन का बड़ा अदब यह है कि जब वह पढ़ा जाये तो सुनने वाले अपने कान उस पर लगायें और ख़ामोश रहें।

कान लगाने में यह भी दाख़िल है कि उसको सुनें और यह भी कि उसके अहकाम पर अ़मल करने की भरपूर कोशिश करें। (तफ़सीरे मज़हरी व क़ुर्तुबी)

आयत के आख़िर में "लअ़ल्लकुम् तुर्हमून" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि क़ुरआन का रहमत होना उसके मज़कूरा आदाब की रियायत रखने पर मौक़ूफ़ है।

क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त ख़ामोश रहकर सुनने के मुताल्लिक़ चन्द ज़रूरी मसाईल

इसके विपरीत यह खुद ज़ाहिर है कि अगर किसी ने इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करके क़ुरआन की बेक़द्री की तो वह रहमत के बजाय अल्लाह के क़हर व ग़ज़ब का मुस्तहिक़ होगा।

नमाज़ के अन्दर क़ुरआन की तरफ़ कान लगाना और ख़ामोश रहना तो आम तौर पर मुसलमानों को मालूम है कि अगरचे अमल में कोताही करते हैं कि बाज़ लोगों को यह भी ख़बर नहीं होती कि इमाम ने कौनसी सूरत पढ़ी है, उन पर लाज़िम है कि वे क़ुरआन की बड़ाई को पहचानें और सुनने की तरफ़ ध्यान रखें। जुमे के खुतबे वग़ैरह का भी शरीअत में यही हुक्म है। अलावा इस आयत के रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद ख़ास तौर से खुतबे के बारे में यह आया है कि:

اذا خرج الامام فلا صلٰوۃ ولا کلام.

यानी जब इमाम खुतबे के लिये निकल आये तो न नमाज़ है न कलाम।

और एक हदीस में यह भी है कि उस वक़्त कोई शख़्स दूसरे को नसीहत के लिये ज़बान से यह भी न कहे कि ख़ामोश रहो (करना ही हो तो हाथ से इशारा कर दे)। ग़र्ज़ कि खुतबे के दौरान में किसी तरह का कलाम, तस्बीह, दुरूद या नमाज़ वग़ैरह जायज़ नहीं।

फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया है कि जो हुक्म जुमे के खुतबे का है वही ईदों के खुतबे का और निकाह वग़ैरह के खुतबे का है, कि उस वक़्त कान लगाना और ख़ामोश रहना वाजिब है।

अलबत्ता नमाज़ और खुतबे के अलावा आम हालात में कोई शख़्स अपने आप तिलावत कर रहा है तो दूसरों को ख़ामोश रहकर उस पर कान लगाना वाजिब है या नहीं, इसमें फ़ुक़हा के अक़वाल भिन्न हैं, कुछ हज़रात ने इस सूरत में भी कान लगाने और ख़ामोश रहने को वाजिब और इसके ख़िलाफ़ करने को गुनाह क़रार दिया है, और इसी लिये ऐसी जगह जहाँ लोग अपने कामों में मशग़ूल हों या आराम करते हों किसी के लिये बुलन्द आवाज़ से क़ुरआन पढ़ने को जायज़ नहीं रखा, और जो शख़्स ऐसे मौक़ों में क़ुरआन बुलन्द आवाज़ से पढ़ता है उसको गुनाहगार फ़रमाया है। खुलासतुल-फ़तावा वग़ैरह में ऐसा ही लिखा है।

लेकिन कुछ दूसरे फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) ने यह वज़ाहत फ़रमाई है कि कान लगाना और सुनना सिर्फ़ उन जगहों में वाजिब है जहाँ क़ुरआन को सुनाने ही के लिये पढ़ा जा रहा हो, जैसे नमाज़ व खुतबे वग़ैरह में, और अगर कोई शख़्स अपने आप तिलावत कर रहा है या चन्द आदमी किसी एक मकान में अपनी-अपनी तिलावत कर रहे हैं तो दूसरे की आवाज़ पर कान लगाना और ख़ामोश रहना वाजिब नहीं, क्योंकि सही हदीसों से यह साबित है कि रसूले

करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रात की नमाज़ में आवाज़ से किराअत फ़रमाते थे और आपकी पाक बीवियाँ उस वक़्त नींद में होती थीं। कई बार हुजरों से बाहर भी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आवाज़ सुनी जाती थी।

और बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक सफ़र में रात को पड़ाव डालने के बाद सुबह को फ़रमाया कि मैंने अपने अश्अ़री सफ़र के साथियों को उनकी तिलावत की आवाज़ों से रात के अंधेरे में पहचान लिया कि उनके ख़ैमे किस तरफ़ और कहाँ हैं, अगरचे दिन में मुझे उनके ठहरने की जगह का इल्म नहीं था।

इस वाक़िए में भी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन अश्अ़री हज़रात को इससे मना नहीं फ़रमाया कि बुलन्द आवाज़ से क्यों किराअत की, और न सोने वालों को हिदायत फ़रमाई कि जब क़ुरआन पढ़ा जा रहा हो तो तुम सब उठ बैठो और क़ुरआन सुनो।

इस किस्म की रिवायतों से फ़ुक़हा (दीन के उलेमा) ने नमाज़ से बाहर की तिलावत के मामले में कुछ गुंजाईश दी है, लेकिन अच्छा और बेहतर सब के नज़दीक यही है कि नमाज़ से बाहर भी जब कहीं से क़ुरआन पढ़ने की आवाज़ आये तो उस पर कान लगाये और ख़ामोश रहे, और इसी लिये ऐसे मौक़ों में जहाँ लोग सोने में या अपने कारोबार में मशग़ूल हों क़ुरआन को बुलन्द आवाज़ से पढ़ना मुनासिब नहीं।

इससे उन हज़रात की ग़लती मालूम हो गयी जो क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त रेडियो ऐसे मजमे में खोल देते हैं जहाँ लोग उसके सुनने की तरफ़ मुतवज्जह नहीं होते। इसी तरह रात को लाउडस्पीकर लगाकर मस्जिदों में क़ुरआन की तिलावत इस तरह करना कि उसकी आवाज़ से बाहर के सोने वालों की नींद या काम करने वालों के काम में ख़लल आये, दुरुस्त नहीं।

अ़ल्लामा इब्ने हम्माम रह. ने लिखा है कि जिस वक़्त इमाम नमाज़ में या ख़तीब ख़ुतबे में कोई मज़मून जन्नत व दोज़ख़ के मुताल्लिक़ पढ़ रहा हो तो उस वक़्त जन्नत की दुआ़ या दोज़ख़ से पनाह माँगना भी जायज़ नहीं, क्योंकि इस आयत के एतिबार से अल्लाह तआ़ला की रहमत का वायदा उस शख़्स के लिये है जो क़ुरआन पढ़े जाने के वक़्त ख़ामोश रहे, और जो ख़ामोश न रहे उससे वायदा नहीं। अलबत्ता नफ़िल नमाज़ों में ऐसी आयतों की तिलावत के बाद आहिस्ता दुआ़ माँगना सुन्नत से साबित है और सवाब का ज़रिया है। (तफ़सीरे मज़हरी)

وَاذْكُرْ رَّبَّكَ فِي نَفْسِكَ تَضَرُّعًا وَّخِيفَةً وَّدُونَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ
بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ وَلَا تَكُنْ مِّنَ الْغٰفِلِيْنَ ۝ اِنَّ الَّذِيْنَ عِنْدَ رَبِّكَ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ عَنْ ثلثة ٣٣ ع١٨ ١٣
عِبَادَتِهٖ وَيُسَبِّحُوْنَهٗ وَلَهٗ يَسْجُدُوْنَ ۩

वज़्कुर् रब्ब-क फ़ी नफ़्सि-क तज़र्रुअंव्-व ख़ी-फ़तंव्-व दूनल्-जह्रि मिनल्-क़ौलि बिल्-गुदुव्वि वल्-आसालि व ला तकुम् मिनल्-ग़ाफ़िलीन (205) इन्नल्लज़ी-न अिन्-द रब्बि-क ला यस्तक्बिरू-न अन् अिबा-दतिही व युसब्बिहूनहू व लहू यस्जुदून। (206) ✿ ○ ▲	और याद करता रह अपने रब को अपने दिल में गिड़गिड़ाता हुआ और डरता हुआ, और ऐसी आवाज़ से जो कि पुकार कर बोलने से कम हो सुबह के वक़्त और शाम के वक़्त, और मत रह बेख़बर। (205) बेशक जो तेरे रब के नज़दीक हैं वे तकब्बुर नहीं करते उसकी बन्दगी से और याद करते हैं उसकी पाक ज़ात को और उसी को सज्दा करते हैं। (206) ✿ ○ ▲

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (आप हर-हर शख़्स से यह भी कह दीजिये कि) ऐ शख़्स! अपने रब की याद किया कर (क़ुरआन से या तस्बीह वग़ैरह से, चाहे) अपने दिल में (यानी आहिस्ता आवाज़ से) आ़जिज़ी के साथ, और (चाहे) ख़ौफ़ के साथ, और ज़ोर की आवाज़ के मुक़ाबले में कम-आवाज़ के साथ, (इसी आ़जिज़ी और ख़ौफ़ के साथ) सुबह और शाम (यानी हमेशा), और (हमेशा का मतलब यह है कि) ग़ाफ़िलों में शुमार मत होना (कि जिन ज़िक्रों का हुक्म है उनको भी छोड़ दो) यक़ीनन जो (फ़रिश्ते) तेरे रब के नज़दीक (ख़ास और क़रीबी) हैं वे उसकी इबादत से (जिसमें असली अ़क़ीदे हैं) तकब्बुर नहीं करते और उसकी पाकी बयान करते हैं (जो कि ज़बान की नेकी है) और उसको सज्दा करते हैं (जो कि हाथ-पाँव और जिस्म के अन्य अंगों के आमाल में से है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में क़ुरआन मजीद सुनने का ज़िक्र और उसके आदाब का बयान था, इन दो आयतों में जम्हूर (उलेमा की अक्सरियत) के नज़दीक आ़म और बिना किसी क़ैद के अल्लाह के ज़िक्र का हुक्म और उसके आदाब का बयान है जिसमें क़ुरआन की तिलावत (पढ़ना) भी शामिल है, और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नज़दीक इसमें भी ज़िक्र से मुराद क़ुरआन ही है और जो आदाब इसमें बयान हुए हैं वो भी क़ुरआन की तिलावत ही से संबन्धित हैं, लेकिन यह कोई मतभेद नहीं क्योंकि क़ुरआन के अ़लावा दूसरे ज़िक्रों का भी सब के नज़दीक यही हुक्म और यही आदाब हैं।

ख़ुलासा यह है कि इस आयत में इनसान को अल्लाह की याद और ज़िक्र का हुक्म और इसके साथ उसके वक़्तों और आदाब का बयान है।

आहिस्ता और आवाज़ से ज़िक्र करने के अहकाम

पहला अदब ज़िक्र के आहिस्ता या बुलन्द आवाज़ से करने के बारे में है। इसके बारे में क़ुरआने करीम ने इस आयत में दो तरह का इख़्तियार दिया है- ज़िक्र-ए-ख़फ़ी और ज़िक्र-ए-जहर। ज़िक्र-ए-ख़फ़ी (पोशीदा तौर पर ज़िक्र) के बारे में फ़रमायाः

وَاذْكُرْرَّبَّكَ فِىْ نَفْسِكَ.

यानी अपने रब को याद किया करो अपने दिल में। इसकी भी दो सूरतें हैं- एक यह कि बग़ैर ज़बान की हरकत के सिर्फ़ दिल में ध्यान और ख़्याल अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात का रखे जिसको दिली ज़िक्र या तफ़क्कुर (सोचना और ग़ौर करना) कहा जाता है। दूसरे यह कि इसके साथ ज़बान से भी आहिस्ता आवाज़ में अल्लाह के नामों के हुरूफ़ अदा करे। सब से अफ़ज़ल और बेहतर सूरत यही है कि जो ज़िक्र कर रहा है उसके मफ़्हूम (मतलब) को समझकर दिल में भी उसका पूरा ख़्याल और ध्यान हो और ज़बान से भी अदा करे, क्योंकि इस सूरत में दिल के साथ ज़बान भी ज़िक्र में शरीक हो जाती है, और अगर सिर्फ़ दिल ही दिल में ध्यान और तफ़क्कुर में मशग़ूल रहे, ज़बान से कोई हर्फ़ अदा न करे वह भी बड़ा सवाब है, और सबसे कम दर्जा इसका है कि सिर्फ़ ज़बान पर ज़िक्र हो और दिल उससे ख़ाली और ग़ाफ़िल हो। ऐसे ही ज़िक्र को मौलाना रूमी रह. ने फ़रमाया हैः

बर ज़ुबाँ तस्बीह व दर दिल गाव-ख़र
ईं चुनीं तस्बीह के दारद असर

और मक़सद मौलाना रूमी रह. का यह है कि ग़ाफ़िल दिल के ज़िक्र करने से ज़िक्र के आसार व बरकतें कामिल हासिल नहीं होते। इसका इनकार नहीं कि यह सिर्फ़ ज़बानी ज़िक्र भी सवाब और फ़ायदे से ख़ाली नहीं, क्योंकि कई बार यह ज़बानी ज़िक्र ही दिली ज़िक्र का ज़रिया और सबब बन जाता है, ज़बान से कहते-कहते दिल भी प्रभावित होने लगता है और कम से कम बदन का एक अंग तो ज़िक्र में मशग़ूल है ही, वह भी सवाब से ख़ाली नहीं। इसलिये जिन लोगों को ज़िक्र व तस्बीह में दिली जमाव, सुकून, ध्यान और दिल की हाज़िरी हासिल न हो वे भी ऐसे ज़िक्र को बेफ़ायदा समझ कर छोड़ें नहीं, जारी रखें और ध्यान जमाने की कोशिश करते रहें।

दूसरा तरीक़ा ज़िक्र का इसी आयत में यह बतलायाः

وَدُوْنَ الْجَهْرِمِنَ الْقَوْلِ.

यानी ज़ोर की आवाज़ के मुक़ाबले में कम आवाज़ के साथ। यानी ज़िक्रुल्लाह में मशग़ूल होने वाले को यह भी इख़्तियार है कि आवाज़ से ज़िक्र करे, मगर उसका अदब यह है कि बहुत ज़ोर से चीख़कर न करे, दरमियानी आवाज़ के साथ करे, जिसमें अदब व एहतिराम का ध्यान रहे। बहुत ज़ोर से ज़िक्र व तिलावत करना इसकी निशानी होती है कि मुख़ातब का अदब व एहतिराम उसके दिल में नहीं। जिस हस्ती का अदब व एहतिराम और रौब इनसान के दिल में

होता है उसके सामने तबई तौर पर इनसान बहुत बुलन्द आवाज़ से नहीं बोल सकता, इसलिये आम ज़िक्रुल्लाह हो या क़ुरआन की तिलावत जब आवाज़ से पढ़ा जाये तो इसकी रियायत रखना चाहिये कि ज़रूरत से ज़्यादा आवाज़ ऊँची न हो।

खुलासा यह है कि इस आयत से ज़िक्रुल्लाह और क़ुरआन की तिलावत के तीन तरीक़े हासिल हुए- एक यह कि सिर्फ़ दिली ज़िक्र यानी क़ुरआन और ज़िक्र के मायनों का ध्यान और ख़्याल और उनमें विचार पर बस करे, ज़बान को बिल्कुल हरकत न हो। दूसरे यह कि उसके साथ ज़बान को भी हरकत दे, मगर आवाज़ बुलन्द न हो, जिसको दूसरे आदमी सुन सकें। ज़िक्र के ये दोनों तरीक़े अल्लाह तआ़ला के इस इरशादः

وَاذْكُرْ رَّبَّكَ فِىْ نَفْسِكَ.

में दाख़िल हैं। और तीसरा तरीक़ा यह है कि दिल की हाज़िरी और ध्यान के साथ ज़बान की हरकत भी हो और आवाज़ भी, मगर इस तरीक़े के लिये अदब यह है कि आवाज़ को ज़्यादा बुलन्द न करे, दरमियानी हद से आगे न बढ़ाये। यह तरीक़ा क़ुरआन के इरशादः

وَدُوْنَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ.

में तालीम फ़रमाया गया है। क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत ने इसकी और अधिक वज़ाहत इन लफ़्ज़ों में फ़रमाई है:

وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا.

इसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म है कि अपनी क़िराअत (क़ुरआन पढ़ने) में न ज़्यादा आवाज़ को ज़ाहिर किया करें और न बिल्कुल धीरे और छुपाकर हो, बल्कि आवाज़ की बुलन्दी और बिल्कुल पस्त करने के बीच की कैफ़ियत रखा करें।

नमाज़ में क़िराअत (क़ुरआन पढ़ने) के बारे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यही हिदायत फ़रमाई।

सही हदीस में है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रात के आख़िरी हिस्से में घर से निकले। हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मकान पर पहुँचे तो देखा कि वह नमाज़ में मशग़ूल थे मगर तिलावत आहिस्ता कर रहे थे। फिर हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मकान पर पहुँचे तो देखा कि वह बहुत ऊँची आवाज़ से तिलावत कर रहे थे। जब सुबह को ये दोनों हज़रात हाज़िरे ख़िदमत हुए तो आपने सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि मैं रात तुम्हारे पास गया तो देखा कि तुम पस्त आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे जिस ज़ात को सुनाना था उसने सुन लिया यह काफ़ी है। इसी तरह फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि आप बुलन्द आवाज़ से तिलावत कर रहे थे, उन्होंने अ़र्ज़ किया कि क़िराअत में आवाज़ ज़ाहिर करने से मेरा मक़सद यह था कि नींद का ग़लबा न रहे और शैतान उसकी आवाज़ से भागे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह फ़ैसला फ़रमाया कि सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यह हिदायत की कि ज़रा कुछ आवाज़ बुलन्द करें और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यह कि कुछ पस्त किया करें। (अबू दाऊद)

तिर्मिज़ी में रिवायत है कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तिलावत के बारे में कुछ हज़रात ने सवाल किया कि आवाज़ बुलन्द और ज़ाहिर करते थे या आहिस्ता रखते थे? उन्होंने फ़रमाया कि कभी आवाज़ से कभी पोशीदा तौर पर, दोनों तरह तिलावत फ़रमाते थे।

रात की नफ़िल नमाज़ में और नमाज़ से बाहर तिलावत में कुछ हज़रात ने आवाज़ ऊँची रखने और ज़ाहिर करके पढ़ने को पसन्द किया और कुछ ने आहिस्ता को। इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. ने फ़रमाया कि तिलावत करने वाले को इख़्तियार है जिस तरह चाहे तिलावत करे, अलबत्ता आवाज़ से तिलावत करने में चन्द शर्तें सब के नज़दीक ज़रूरी हैं- अव्वल यह कि उसमें नाम व नमूद और दिखावे का अन्देशा न हो। दूसरे उसकी आवाज़ से दूसरे लोगों का हर्ज या तकलीफ़ न हो, किसी दूसरे शख़्स की नमाज़ व तिलावत या काम में या आराम में ख़लल डालने वाली न हो, और जहाँ नाम व नमूद और दिखावे का या दूसरे लोगों के काम या आराम में ख़लल का अन्देशा हो तो सब के नज़दीक आहिस्ता ही पढ़ना बेहतर है।

और जो हुक्म क़ुरआन की तिलावत का है वही दूसरे ज़िक्रों और तस्बीह का है कि आहिस्ता और बुलन्द आवाज़ से दोनों तरह जायज़ है बशर्ते कि आवाज़ इतनी बुलन्द न हो जो आ़जिज़ी व इन्किसारी, तवाज़ो और अदब के ख़िलाफ़ हो, तथा उसकी आवाज़ से दूसरे लोगों के काम या आराम में ख़लल न आता हो।

और इसका फ़ैसला कि धीरे पढ़ने और आवाज़ से पढ़ने में से अफ़ज़ल क्या है, व्यक्तियों और हालात के एतिबार से अलग-अलग है। कुछ लोगों के लिये आवाज़ से और ज़ाहिर करके बेहतर होता है कुछ के लिये आहिस्ता, और किसी वक़्त आवाज़ से पढ़ना बेहतर होता है और किसी वक़्त धीरे और आहिस्ता पढ़ना। (तफ़सीरे मज़हरी व रूहुल-बयान वग़ैरह)

दूसरा अदब तिलावत और ज़िक्र का यह है कि आ़जिज़ी और गिड़गिड़ाने के साथ ज़िक्र किया जाये जो नतीजा इसका होता है कि इनसान को हक़ तआ़ला की बड़ाई व जलाल का ध्यान हो और जो ज़िक्र कर रहा है उसके मायने व मतलब पर नज़र हो।

तीसरा अदब इसी आयत में लफ़्ज़ "ख़ीफ़तन्" से यह बतलाया गया कि ज़िक्र व तिलावत के वक़्त इनसान पर हैबत और ख़ौफ़ की कैफ़ियत होनी चाहिये। ख़ौफ़ इसका कि हम अल्लाह तआ़ला की इबादत और बड़ाई का हक़ अदा नहीं कर सकते, मुम्किन है कि हमसे कोई बेअदबी हो जाये, साथ ही अपने गुनाहों के ध्यान व ख़्याल से अल्लाह के अ़ज़ाब का ख़ौफ़ तथा अन्जाम और ख़ात्मे का ख़ौफ़, कि मालूम नहीं हमारा ख़ात्मा किस हाल पर होना है। बहरहाल ज़िक्र व तिलावत इस तरह किया जाये जैसे कोई भयभीत और डरने वाला किया करता है।

दुआ के यही आदाब इसी सूरः आराफ़ के शुरू में भी एक आयत में इस तरह आये हैं:

اُدْعُوْا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً.

इसमें 'ख़ीफ़तन्' के बजाय 'ख़ुफ़्यतन्' का लफ़्ज़ आया है जिसके मायने आहिस्ता आवाज़ से ज़िक्र करने के हैं। गोया ज़िक्र व तिलावत का एक अदब यह भी है कि आहिस्ता पस्त आवाज़ से किया जाये। लेकिन इस आयत ने इसके मायने भी वाज़ेह कर दिये कि अगरचे आवाज़ से ज़िक्र करना भी मना नहीं, मगर शर्त यह है कि ज़रूरत से ज़ायद आवाज़ बुलन्द न करे, और इतनी बुलन्द न करे जिसमें दिल के झुकाव और आजिज़ी व गिड़गिड़ाने की कैफ़ियत जाती रहे।

आयत के आख़िर में ज़िक्र व तिलावत के वक़्त बतलाये कि सुबह व शाम होना चाहिये। इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि कम से कम दिन में दो मर्तबा सुबह और शाम ज़िक्रुल्लाह में मशग़ूल होना चाहिये। और यह भी हो सकता है कि सुबह शाम बोलकर रात व दिन के तमाम वक़्त मुराद हों, जैसे पूरब व पश्चिम बोलकर सारा आलम मुराद लिया जाता है। इस सूरत में आयत के मायने यह होंगे कि इनसान पर लाज़िम है कि हमेशा हर हाल में ज़िक्र व तिलावत का पाबन्द रहे। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर वक़्त हर हाल में अल्लाह की याद में मशग़ूल रहते थे।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَلَا تَكُنْ مِّنَ الْغٰفِلِيْنَ.

यानी अल्लाह की याद को छोड़कर ग़फ़लत वालों में शामिल न हो जाना, कि यह बहुत बड़ा ख़सारा (घाटा) है।

दूसरी आयत में लोगों की सीख और नसीहत के लिये अल्लाह की बारगाह के नेक और ख़ास बन्दों का एक मख़्सूस हाल बयान किया गया है कि जो लोग अल्लाह तआला के पास हैं वे उसकी इबादत से तकब्बुर नहीं करते। अल्लाह तआला के पास होने से मुराद अल्लाह तआला का मक़बूल होना है, जिसमें सब फ़रिश्ते और तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम और उम्मत के नेक लोग शामिल हैं। और तकब्बुर करने का मतलब यह है कि अपने आपको बड़ा आदमी समझकर इन इबादतों में कमी और कोताही नहीं करते बल्कि अपने को आजिज़ व मोहताज समझकर हमेशा अल्लाह की याद और इबादत में मशग़ूल और तस्बीह करते रहते हैं, और अल्लाह तआला को सज्दा करते रहते हैं।

इससे यह भी मालूम हुआ कि जिन लोगों को हमेशा की इबादत और अल्लाह की याद की तौफ़ीक़ होती है तो यह इसकी निशानी है कि वे हर वक़्त अल्लाह के पास हैं और अल्लाह तआला का साथ उनको हासिल है।

सज्दे के कुछ फ़ज़ाईल और अहकाम

यहाँ नमाज़ की इबादत में से सिर्फ़ सज्दे का ज़िक्र इसलिये किया गया कि नमाज़ के तमाम

अरकान में सज्दे को ख़ास फ़ज़ीलत हासिल है।

सही मुस्लिम में है कि एक शख़्स ने हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से कहा कि मुझे कोई ऐसा अ़मल बतलाईये जिससे मैं जन्नत में जा सकूँ। हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ख़ामोश रहे। उसने फिर सवाल किया, फिर भी ख़ामोश रहे। जब तीसरी मर्तबा सवाल को दोहराया तो उन्होंने कहा कि मैंने यही सवाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से किया था, आपने मुझे यह वसीयत फ़रमाई कि कसरत से सज्दे किया करो क्योंकि जब तुम एक सज्दा करते हो तो उसकी वजह से अल्लाह तआ़ला तुम्हारा एक दर्जा बढ़ा देते हैं और एक गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं। यह शख़्स कहते हैं कि हज़रत सोबान रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बाद मैं हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मिला तो उनसे भी यही सवाल किया, उन्होंने भी यही जवाब दिया।

और सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- बन्दा अपने रब के साथ सबसे ज़्यादा क़रीब उस वक़्त होता है जबकि बन्दा सज्दे में हो, इसलिये तुम सज्दे की हालत में ख़ूब दुआ़ किया करो कि उसके क़ुबूल होने की बड़ी उम्मीद है।

याद रहे कि तन्हा सज्दे की कोई इबादत परिचित नहीं, इसलिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक सज्दों की कसरत व अधिकता से मुराद यह है कि कसरत से नवाफ़िल पढ़ा करें, जितनी नफ़्लें ज़्यादा होंगी सज्दे ज़्यादा होंगे।

लेकिन अगर कोई शख़्स सिर्फ़ सज्दे ही करके दुआ़ कर ले तो इसमें भी कोई हर्ज नहीं और सज्दे में दुआ़ करने की हिदायत नफ़्ली नमाज़ों के लिये मख़्सूस है, फ़राईज़ में नहीं।

सूरः आराफ़ ख़त्म हुई। इसकी आख़िरी आयत सज्दे की आयत है। सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि जब कोई आदम का बेटा सज्दे की कोई आयत पढ़ता है और फिर सज्दा-ए-तिलावत करता है तो शैतान रोता हुआ भागता है और कहता है कि हाय अफ़सोस इनसान को सज्दा करने का हुक्म मिला और उसने तामील कर ली तो उसका ठिकाना जन्नत हुआ, और मुझे सज्दे का हुक्म हुआ मैंने नाफ़रमानी की तो मेरा ठिकाना जहन्नम हुआ।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूरः आराफ़ की तफ़सीर पूरी हुई)

* सूरः अनफ़ाल *

यह सूरत मदनी है। इसमें 75 आयतें
और 10 रुकूअ़ हैं।

सूरः अनफ़ाल

سُوْرَةُ الْاَنْفَالِ مَدَنِيَّةٌ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْاَنْفَالِ ۭ قُلِ الْاَنْفَالُ لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَصْلِحُوْا ذَاتَ بَيْنِكُمْ ۠ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ
وَرَسُوْلَهٗٓ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝

सूरः अनफ़ाल मदीना में नाज़िल हुई। इसमें 75 आयतें और 10 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

यस्अलू न-क अ़निल्-अन्फ़ालि, क़ुलिल्-अन्फ़ालु लिल्लाहि वर्रसूलि फ़त्तक़ुल्ला-ह व अस्लिहू ज़ा-त बैनिकुम् व अतीअुल्ला-ह व रसू-लहू इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (1)	तुझसे पूछते हैं हुक्म ग़नीमत का, तू कह दे कि ग़नीमत का माल अल्लाह का है और रसूल का, सो डरो अल्लाह से और सुलह करो आपस में, और हुक्म मानो अल्लाह का और उसके रसूल का अगर ईमान रखते हो। (1)

सूरत के मज़ामीन

सूरः अनफ़ाल जो इस वक़्त शुरू हो रही है यह मदनी सूरत है। इससे पहली सूरत यानी सूरः आराफ़ में मुश्रिकों और अहले किताब की जहालत व दुश्मनी और कुफ़्र व फ़साद का तज़किरा और उससे संबन्धित बातों का बयान था।

इस सूरत में ज़्यादातर मज़ामीन ग़ज़वा-ए-बदर के मौक़े पर उन्हीं लोगों के बुरे अन्जाम, नाकामी, शिकस्त और उनके मुक़ाबले में मुसलमानों की कामयाबी और फ़ुतूहात से मुताल्लिक़ हैं जो मुसलमानों के लिये एहसान व इनाम और काफ़िरों के लिये अ़ज़ाब व इन्तिक़ाम था।

और चूँकि इस इनाम की सबसे बड़ी वजह मुसलमानों का ख़ुलूस और लिल्लाहियत और उनका आपसी इत्तिफ़ाक़ है और यह इख़्लास व इत्तिफ़ाक़ नतीजा है अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुकम्मल इताअ़त का, इसलिये सूरत के शुरू में परहेज़गारी, हक़ की फ़रमाँबरदारी और ज़िक्रुल्लाह व तवक्कुल वग़ैरह की तालीम दी गयी।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये लोग आप से ग़नीमतों का हुक्म मालूम करते हैं। आप फ़रमा दीजिये कि ये ग़नीमतें अल्लाह की हैं (यानी वो अल्लाह की मिल्क हैं, उसको ही हक़ है कि उनके बारे में जो चाहे हुक्म दे) और रसूल की हैं (इस मायने में कि वह अल्लाह तआ़ला से हुक्म पाकर उसको नाफ़िज़ करेंगे। हासिल यह है कि ग़नीमत के मालों के बारे में तुम्हारी राय और तजवीज़ का कोई दख़ल नहीं बल्कि उसका फ़ैसला शरीअ़त के हुक्म के मुताबिक़ होगा) सो तुम (दुनिया की हिर्स मत करो, आख़िरत के तालिब रहो, इस तरह पर कि) अल्लाह से डरो और अपने आपस के ताल्लुक़ात का सुधार करो (कि आपस में हसद और बुग़्ज़ न रहे), और अल्लाह की और उसके रसूल की इताअ़त करो, अगर तुम ईमान वाले हो।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यह आयत ग़ज़वा-ए-बदर में पेश आने वाले एक वाक़िए से संबन्धित है। आयत की मुफ़स्सल तफ़सीर से पहले वह वाक़िआ़ सामने रखा जाये तो तफ़सीर समझना आसान हो जायेगा।

वाक़िआ़ यह है कि ग़ज़वा-ए-बदर जो कुफ़्र व इस्लाम का सबसे पहला मुक़ाबला और जंग थी, उसमें जब मुसलमानों को फ़तह हुई और कुछ माले ग़नीमत हाथ आया तो सहाबा किराम के बीच उसकी तक़सीम के मुताल्लिक़ एक ऐसा वाक़िआ़ पेश आ गया जो इख़्लास व इत्तिफ़ाक़ के उस मक़ाम के शायाने शान न था जिस पर सहाबा किराम की पूरी ज़िन्दगी ढली हुई थी, इसलिये सबसे पहली ही आयत में उसका फ़ैसला फ़रमा दिया गया ताकि उस पाकीज़ा गिरोह के दिलों में सच्चाई व इख़्लास और इत्तिफ़ाक़ व क़ुरबानी के सिवा कुछ न रहे।

इस वाक़िए की तफ़सीर ग़ज़वा-ए-बदर में शरीक हज़रत उबादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ज़ुबानी मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, मुस्तद्रक हाकिम वग़ैरह में इस तरह मन्क़ूल है कि हज़रत उबादा बिन सामित से किसी ने इस आयत में आये लफ़्ज़ अनफ़ाल का मतलब पूछा तो उन्होंने फ़रमाया कि यह आयत तो हमारे यानी बदर वाले सहाबा ही के बारे में नाज़िल हुई है जिसका वाक़िआ़ यह था कि माले ग़नीमत की तक़सीम के बारे में हमारे बीच कुछ इख़्तिलाफ़ (विवाद और मतभेद) पैदा हो गया था जिसने हमारे अख़्लाक़ पर बुरा असर डाला। अल्लाह तआ़ला ने इस आयत के ज़रिये ग़नीमत के मालों को हमारे हाथों से लेकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सुपुर्द कर दिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बदर में शरीक सब सहाबा में उसको बराबर तौर पर तक़सीम फ़रमा दिया।

सूरत यह पेश आई थी कि हम सब ग़ज़वा-ए-बदर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ निकले और दोनों पक्षों में घमासान की जंग के बाद अल्लाह तआ़ला ने दुश्मन को शिकस्त दी तो अब हमारे लश्कर के तीन हिंस्से हो गये- कुछ लोगों ने दुश्मन का पीछा

किया ताकि वह फिर वापस न आ सके। कुछ लोग काफ़िरों के छोड़े हुए ग़नीमत के माल जमा करने में लग गये और कुछ लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के गिर्द इसलिये जमा रहे कि किसी तरफ़ से छुपा हुआ दुश्मन हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर हमला न कर दे। जब जंग ख़त्म हो गयी और रात को हर शख़्स अपने ठिकाने पर पहुँचा तो जिन लोगों ने माले ग़नीमत जमा किया था वे कहने लगे कि यह माल तो हमने जमा किया है इसलिये इसमें हमारे सिवा किसी का हिस्सा नहीं। और जो लोग दुश्मन का पीछा करने में गये थे उन्होंने कहा कि तुम लोग हमसे ज़्यादा इसके हक़दार नहीं हो, क्योंकि हमने ही दुश्मन को पीछे हटने पर मजबूर किया और तुम्हारे लिये यह मौक़ा उपलब्ध कराया कि तुम बेफ़िक्र होकर माले ग़नीमत जमा कर लो। और जो लोग हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिफ़ाज़त के लिये आपके गिर्द (चारों तरफ़) जमा रहे उन्होंने कहा कि हम चाहते तो हम भी माले ग़नीमत जमा करने में तुम्हारे साथ शरीक होते लेकिन हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिफ़ाज़त जो जिहाद का सबसे अहम काम था हम उसमें मशग़ूल रहे, इसलिये हम भी इसके हक़दार हैं।

सहाबा किराम की यह गुफ़्तगू रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक पहुँची, इस पर यह आयते मज़कूरा नाज़िल हुई जिसने वाज़ेह कर दिया कि यह माल अल्लाह का है इसका कोई मालिक व हक़दार नहीं सिवाय उसके जिसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अ़ता फ़रमायें। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह के हुक्म के मातहत उस माल को जिहाद में शरीक सब हज़रात में बराबर तौर पर तक़सीम फ़रमा दिया। (इब्ने कसीर) और सब के सब अल्लाह व रसूल के इस फ़ैसले पर राज़ी हो गये। और उनके ख़िलाफ़े शान जो सूरतेहाल आपस में एक-दूसरे से आगे बढ़ने की पेश आ गयी थी उस पर शर्मिन्दा हुए।

और मुस्नद अहमद ही में इस आयत के शाने नुज़ूल (उतरने के सबब) का एक दूसरा वाकिआ हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का भी मन्क़ूल है। वह फ़रमाते हैं कि ग़ज़वा-ए-बदर में मेरे भाई उमैर शहीद हो गये। मैंने उनके मुक़ाबले में आने वाले मुश्रिकों में से सईद बिन आ़स को क़त्ल कर दिया और उसकी तलवार लेकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। मैं चाहता था कि यह तलवार मुझे मिल जाये मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हुक्म दिया कि इसको माले ग़नीमत में जमा कर दो। मैं हुक्म मानने पर मजबूर था मगर मेरा दिल इसकी सख़्त तकलीफ़ महसूस कर रहा था कि मेरा भाई शहीद हुआ और मैंने उसके मुक़ाबले में आये एक दुश्मन को मारकर उसकी तलवार हासिल की वह भी मुझसे ले ली गयी, मगर इस सबके बावजूद हुक्म की तामील के लिये माले ग़नीमत में जमा करने के लिये आगे बढ़ा तो अभी दूर नहीं गया था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर सूरः अनफ़ाल की यह आयत नाज़िल हुई और आपने मुझे बुलवाकर यह तलवार मुझे इनायत फ़रमा दी। कुछ रिवायतों में यह भी है कि हज़रत सअ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ भी किया था कि यह तलवार मुझे दे दी जाये मगर आपने फ़रमाया कि न यह मेरी चीज़ है जो किसी को दे दूँ और न आपकी मिल्क है, इसको पूरे माले

ग़नीमत में जमा कर दो, इसका फ़ैसला जो कुछ अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे उसके मुताबिक़ होगा। (तफ़सीर इब्ने कसीर, तफ़सीरे मज़हरी)

हो सकता है कि ये दोनों वाक़िए पेश आये हों और दोनों ही के जवाब में यह आयत नाज़िल हुई हो।

आयत की पूरी तफ़सीर

इसमें लफ़्ज़ अनफ़ाल नफ़िल की जमा है जिसके मायने हैं फ़ज़्ल व इनाम। नफ़्ली नमाज़, रोज़े, सदक़े को भी नफ़िल इसलिये कहा जाता है कि वह किसी के ज़िम्मे लाज़िम व वाजिब नहीं, करने वाले अपनी ख़ुशी से करते हैं। क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में लफ़्ज़ नफ़िल और अनफ़ाल माले ग़नीमत के लिये भी बोला जाता है जो काफ़िरों से जिहाद के समय हासिल होता है, मगर क़ुरआने करीम में इस मायने के लिये तीन लफ़्ज़ इस्तेमाल हुए हैं- अनफ़ाल, ग़नीमत, फ़ै। लफ़्ज़ अनफ़ाल तो इसी आयत में ज़िक्र हुआ है और लफ़्ज़ ग़नीमत और उसकी तफ़सील इस सूरत की इक्तालीसवीं आयत में आने वाली है, और लफ़्ज़ फ़ै और उसके मुताल्लिक़ तफ़सील सूरः हश्र में बयान हुई है "व मा अफ़ाअल्लाहु............" में।

और इन तीनों के मायने थोड़े-थोड़े फ़र्क़ के साथ अलग-अलग हैं। फ़र्क़ मामूली और थोड़ा होने की वजह से कई बार एक लफ़्ज़ दूसरे की जगह आ़म तौर पर माले ग़नीमत के लिये भी इस्तेमाल कर लिया जाता है। **ग़नीमत** उमूमन उस माल को कहते हैं जो जंग व जिहाद के ज़रिये मुख़ालिफ़ फ़रीक़ से हासिल हो। और **फ़ै** उस माल को कहते हैं जो बग़ैर जंग व क़िताल के काफ़िरों से मिले, चाहे वे छोड़कर भाग जायें या रज़ामन्दी से दे देना क़ुबूल करें। और **नफ़िल और अनफ़ाल** का लफ़्ज़ अक्सर उस इनाम के लिये बोला जाता है जो अमीरे जिहाद किसी ख़ास मुजाहिद को उसकी कारगुज़ारी के बदले में उसके हिस्से के अ़लावा इनाम के तौर पर अ़ता करे। यह मायने तफ़सीर इब्ने जरीर में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किये हैं। (इब्ने कसीर) और कभी उमूमी तौर पर माले ग़नीमत को भी नफ़िल और अनफ़ाल के लफ़्ज़ से ताबीर किया जाता है, इस आयत में अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यही आ़म मायने लिये हैं। सही बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यही आ़म मायने नक़ल किये हैं। और हक़ीक़त यह है कि यह लफ़्ज़ आ़म और ख़ास दोनों मायने के लिये बोला जाता है इसलिये कोई इख़्तिलाफ़ (टकराव और मतभेद) नहीं। और इसकी बेहतरीन व्याख्या व तहक़ीक़ वह है जो इमाम अबू उबैद रह. ने अपनी किताबुल-अमवाल में ज़िक्र की है, वह फ़रमाते हैं कि असल लुग़त में नफ़िल कहते हैं फ़ज़्ल व इनाम को, और इस उम्मते मरहूमा पर अल्लाह तआ़ला का यह ख़ुसूसी इनाम है कि जिहाद व क़िताल के ज़रिये जो माल काफ़िरों से हासिल हों उनको मुसलमानों के लिये हलाल कर दिया गया, वरना पिछली उम्मतों में यह दस्तूर न था बल्कि माले ग़नीमत के लिये क़ानून यह था कि वो किसी के लिये हलाल नहीं थे, ग़नीमत के तमाम मालों को एक जगह जमा कर दिया जाता था और आसमान से क़ुदरती तौर पर एक आग (बिजली)

आती थी और उसको जलाकर ख़ाक कर देती थी, यही उस जिहाद के अल्लाह के यहाँ मक़बूल होने की निशानी और पहचान होती थी। और अगर कोई माले ग़नीमत जमा किया गया और आसमानी बिजली ने आकर उसको न जलाया तो यह इसकी निशानी होती थी कि यह जिहाद अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल नहीं, इसलिये उस माले ग़नीमत को भी मरदूद और मन्हूस समझा जाता था और उसे कोई इस्तेमाल न करता था।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बुख़ारी व मुस्लिम में मन्क़ूल है कि आपने फ़रमाया- मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अ़ता हुई हैं जो मुझसे पहले किसी पैग़म्बर और उनकी उम्मत को नहीं मिलीं। उन्हीं पाँच में से एक यह है किः

أُحِلَّت لی الغنائم ولم تحل لاحد قبلی.

यानी मेरे लिये ग़नीमत के माल हलाल कर दिये गये हालाँकि मुझसे पहले किसी के लिये हलाल न थे।

इसी लिये तफ़सीर के इमामों की एक जमाअ़त ने जिनमें हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु, इमाम मुजाहिद, इमाम इक्रिमा, इमाम सुद्दी वग़ैरह दाख़िल हैं यह फ़रमाया कि यह हुक्म इस्लाम के शुरू ज़माने में था जब तक ग़नीमत के मालों की तक़सीम का वह क़ानून नाज़िल न हुआ था जो इस सूरत के पाँचवें रुकूअ़ में आ रहा है। क्योंकि इसमें पूरे माले ग़नीमत को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर छोड़ दिया है कि जिस तरह चाहें उसमें अपना इख़्तियार इस्तेमाल करें, और आगे जो तफ़सीली अहकाम आये हैं उनमें यह है कि ग़नीमत के तमाम माल का पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल में आ़म मुसलमानों की ज़रूरतों के लिये सुरक्षित कर दिया जाये और चार हिस्से जिहाद में शरीक हज़रात को एक ख़ास क़ानून के तहत तक़सीम कर दिये जायें, जिनकी तफ़सील सही हदीसों में बयान हुई है। इस तफ़सीली बयान ने सूरः अनफ़ाल की पहली आयत को मन्सूख़ (निरस्त) कर दिया। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यहाँ कोई नासिख़ मन्सूख़ (हुक्म को रद्द करने वाला या रद्द व निरस्त होने वाला) नहीं, बल्कि मुख़्तसर और तफ़सील से बयान होने का फ़र्क़ है। सूरः अनफ़ाल की पहली आयत में संक्षिप्त रूप से बयान है और इक्तालीसवीं आयत में इसी की तफ़सील है। अलबत्ता फ़ै का माल जिसके अहकाम सूरः हश्र में बयान हुए हैं वह पूरा का पूरा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के क़ब्ज़े व इख़्तियार में है, आप अपनी मर्ज़ी और समझ से जिस तरह चाहें अ़मल फ़रमायें। इसी लिये उस जगह अहकाम बयान फ़रमाने के बाद यह इरशाद फ़रमाया हैः

وَمَآ اٰتٰكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَا نَهٰكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا.

यानी जो कुछ तुमको हमारा रसूल दे दे उसको ले लो और जिसको रोक दे उससे बाज़ रहो।

इस तफ़सील से मालूम हुआ कि माल-ए-ग़नीमत वह है जो जंग व जिहाद के ज़रिये हाथ आये और माल-ए-फ़ै वह जो बग़ैर किताल व जिहाद के हाथ आ जाये। और लफ़्ज़ अनफ़ाल

दोनों के लिये आम भी बोला जाता है और ख़ास उस इनाम को भी कहते हैं जो किसी ग़ाज़ी (मुजाहिद) को जिहाद का अमीर अता करे।

इस सिलसिले में मुजाहिदों को इनाम देने की चार सूरतें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दौर से राईज (प्रचलित) हैं- एक यह कि यह ऐलान फ़रमा दें कि जो शख़्स किसी मुख़ालिफ़ को क़त्ल करे तो जो सामान क़त्ल होने वाले सिपाही से हासिल हो वह उसी का है जिसने क़त्ल किया। यह सामान माले ग़नीमत में जमा ही न किया जायेगा। दूसरे यह कि बड़े लश्कर में से कोई जमाअ़त अलग करके किसी ख़ास दिशा में जिहाद के लिये भेजी जाये और यह हुक्म दे दिया जाये कि उस तरफ़ से जो माले ग़नीमत हासिल हो वह उसी ख़ास जमाअ़त का होगा जो वहाँ गयी है, सिर्फ़ इतना करना होगा कि उस माल में से पाँचवाँ हिस्सा आ़म मुसलमानों की ज़रूरतों के लिये बैतुल-माल में जमा किया जायेगा। तीसरे यह कि पाँचवाँ हिस्सा जो बैतुल-माल में जमा किया जाता है उसमें से किसी ख़ास ग़ाज़ी (मुजाहिद) को उसकी विशेष कारगुज़ारी के सिले में अमीर के सही समझने और मर्ज़ी के मुताबिक़ दिया जाये। चौथे यह कि पूरे माले ग़नीमत में से कुछ हिस्सा अलग करके सेवा करने वाले लोगों को बतौर इनाम दिया जाये जो मुजाहिदों के घोड़ों वग़ैरह की निगरानी व देखभाल करते हैं और उनके कामों में मदद करते हैं। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

आयत के मज़मून का ख़ुलासा यह हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया कि लोग आप से अनफ़ाल के मुताल्लिक़ सवाल करते हैं, आप उनसे कह दीजिए कि अनफ़ाल सब अल्लाह के हैं और उसके रसूल के, यानी ख़ुद कोई उनका हक़दार या मालिक नहीं, अल्लाह तआ़ला के हुक्म से उसके रसूल जो कुछ फ़ैसला फ़रमायें वही नाफ़िज़ और लागू होगा।

लोगों के आपसी इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता की बुनियाद तक़वा और ख़ौफ़-ए-ख़ुदा है

इस आयत के आख़िरी जुमले में इरशाद फ़रमायाः

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَصْلِحُوْا ذَاتَ بَيْنِكُمْ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗٓ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ۝

जिसमें सहाबा किराम को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला से डरो और आपस के ताल्लुक़ात को दुरुस्त रखो। इसमें इशारा उस वाक़िए की तरफ़ है जो ग़ज़वा-ए-बदर में ग़नीमत के मालों की तक़सीम के बारे में सहाबा किराम में आपस में पेश आ गया था, जिसमें आपसी खींचतान और नाराज़गी का ख़तरा था। हक़ तआ़ला ने ग़नीमत के माल के बंटवारे का क़ज़िया तो ख़ुद इस आयत के ज़रिये तय फ़रमा दिया, अब उनके दिलों की इस्लाह और आपसी ताल्लुक़ात की बेहतरी की तदबीर बतलाई गयी है जिसका मुख्य बिन्दू तक़वा और ख़ौफ़े-ख़ुदा है।

तजुर्बा गवाह है कि जब तक़वा और ख़ुदा व आख़िरत का ख़ौफ़ ग़ालिब होता है तो बड़े

बड़े झगड़े मिनटों में ख़त्म हो जाते हैं। आपसी मनमुटाव और नफ़रत के पहाड़ गर्द बनकर उड़ जाते हैं। तक़वे वालों का हाल बक़ौल मौलाना रूमी रह. यह हो जाता है:

ख़ुद चह जाय-ए-जंग व जदल नेक व बद
कीं अलम अज़् सुल्हहा हम मी रमद

यानी उन लोगों को किसी जंग व जदल और झगड़े से तो क्या दिलचस्पी होती, उनको तो मख़्लूक़ की सुलह और दुरुस्ती के लिये भी फ़ुर्सत नहीं मिलती। क्योंकि जिसका दिल अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत व ख़ौफ़ और याद मे मशग़ूल हो उसको दूसरों से ताल्लुक़ात बढ़ाने की कहाँ फ़ुर्सत होती है:

ब-सौदा-ए-जानाँ ज़् जाँ मुश्तग़िल
ब-ज़िक्रे हबीब अज़् जहाँ मुश्तग़िल

इसी लिये इस आयत में तक़वे की तदबीर बतलाकर फ़रमायाः

اَصْلِحُوْا ذَاتَ بَيْنِكُمْ

यानी तक़वे (परहेज़गारी) के ज़रिये आपस के ताल्लुक़ात की इस्लाह (सुधार) करो। इसकी अधिक तशरीह इस तरह फ़रमाईः

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗٓ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ○

यानी अल्लाह और रसूल की मुकम्मल इताअ़त हो अगर तुम मोमिन हो। यानी ईमान का तक़ाज़ा है इताअ़त और इताअ़त नतीजा है तक़वे का, और जब ये चीज़ें लोगों को हासिल हो जायें तो उनके आपस के झगड़े ख़ुद-ब-ख़ुद ख़त्म हो जायेंगे और दुश्मनी की जगह दिलों में दोस्ती व मुहब्बत पैदा हो जायेगी।

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ وَاِذَا تُلِيَتْ
عَلَيْهِمْ اٰيٰتُهٗ زَادَتْهُمْ اِيْمَانًا وَّعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُوْنَ ۚ الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ
يُنْفِقُوْنَ ۗ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا ۭ لَهُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ ۚ

इन्नमल् मुअ्मिनूनल्लज़ी-न इज़ा ज़ुकिरल्लाहु वजिलत् क़ुलूबुहुम् व इज़ा तुलियत् अ़लैहिम् आयातुहू ज़ादत्हुम् ईमानंव्-व अ़ला रब्बिहिम् य-तवक्कलून (2) अल्लज़ी-न युक़ीमूनस्सला-त व मिम्मा रज़क़्नाहुम्	ईमान वाले वही हैं कि जब नाम आये अल्लाह का तो डर जायें उनके दिल, और जब पढ़ा जाये उन पर उसका कलाम तो ज़्यादा हो जाता है उनका ईमान, और वे अपने रब पर भरोसा रखते हैं। (2) वे लोग जो कि क़ायम रखते हैं नमाज़ को और हमने उनको जो रोज़ी दी है उसमें

युन्फ़िकून (3) उलाइ-क हुमुल्-मुअ्मिनू-न हक़्क़न्, लहुम् द-रजातुन् अिन्-द रब्बिहिम् व मग़्फ़ि-रतुंव्-व रिज़्क़ुन् करीम (4)	से ख़र्च करते हैं। (3) वही हैं सच्चे ईमान वाले, उनके लिये दर्जे हैं अपने रब के पास और माफ़ी और रोज़ी इज़्ज़त की। (4)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(क्योंकि) बस ईमान वाले तो ऐसे होते हैं कि जब (उनके सामने) अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र आता है तो (उसकी बड़ाई के ध्यान से) उनके दिल डर जाते हैं, और जब अल्लाह की आयतें उनको पढ़कर सुनाई जाती हैं तो वे (आयतें) उनके ईमान को और ज़्यादा (मज़बूत) कर देती हैं, और वे लोग अपने रब पर भरोसा करते हैं। (और) जो कि नमाज़ की पाबन्दी करते हैं और हमने जो कुछ उनको दिया है उसमें से ख़र्च करते हैं। (बस) सच्चे ईमान वाले ये लोग हैं। उनके लिये बड़े दर्जे हैं उनके रब के पास और (उनके लिये) मग़फ़िरत है और इज़्ज़त की रोज़ी।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मोमिन की ख़ास सिफ़ात

ज़िक्र हुई आयतों में उन मख़्सूस (विशेष) सिफ़ात का बयान है जो हर मोमिन में होनी चाहियें। इसमें इशारा है कि हर मोमिन अपनी ज़ाहिरी और अन्दरूनी कैफ़ियत, हालत और सिफ़ात का जायज़ा लेता रहे, अगर ये सिफ़ात उसमें मौजूद हैं तो अल्लाह का शुक्र करे कि उसने इसको मोमिनों की सिफ़ात अ़ता फ़रमा दीं। और अगर इनमें से कोई सिफ़त मौजूद नहीं या है मगर ज़ईफ़ व कमज़ोर है तो उसके हासिल करने या मज़बूत करने की फ़िक्र में लग जाये।

पहली सिफ़त ख़ौफ़-ए-ख़ुदा

पहली सिफ़त यह बयान फ़रमाईः

اَلَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ

यानी जब उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र किया जाये तो उनके दिल सहम जाते हैं। मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला की बड़ाई व मुहब्बत उनके दिलों में रची और भरी हुई है जिसका एक तक़ाज़ा हैबत व ख़ौफ़ है। क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत में इसका ज़िक्र करके मुहब्बत वालों को ख़ुशख़बरी दी गयी हैः

وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِيْنَ ۝ الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ

यानी ख़ुशख़बरी दे दीजिये उन तवाज़ो इख़्तियार करने वाले नरमी की आ़दत वाले लोगों को जिनके दिल डर जाते हैं जब उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र किया जाये। इन दोनों आयतों में

अल्लाह तआ़ला के ज़िक्र और याद के एक ख़ास तक़ाज़े का ज़िक्र है यानी हैबत और ख़ौफ़। और एक दूसरी आयत में ज़िक्रुल्लाह की यह ख़ासियत भी बयान फ़रमाई गयी है कि उससे दिल मुत्मईन हो जाते हैं। फ़रमायाः

اَلَا بِذِكْرِ اللّٰهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوْبُ.

यानी अल्लाह ही की याद से दिल मुत्मईन होते (सुकून पाते) हैं।

इससे मालूम हुआ कि इस आयत में जिस ख़ौफ़ व हैबत का ज़िक्र है वह दिल के सुकून व इत्मीनान के ख़िलाफ़ नहीं, जैसे किसी दरिन्दे (फाड़ खाने वाले जानवर) या दुश्मन का ख़ौफ़ दिल के सुकून को बरबाद कर देता है, ज़िक्रुल्लाह के साथ दिल में पैदा होने वाला ख़ौफ़ इससे बिल्कुल अलग और भिन्न है और इसी लिये यहाँ लफ़्ज़ ख़ौफ़ इस्तेमाल नहीं फ़रमाया, 'वजल' के लफ़्ज़ से ताबीर किया है, जिसका तर्जुमा आ़म ख़ौफ़ नहीं बल्कि वह हैबत (ख़ौफ़ और डर) है जो बड़ों के रौब और बड़ी शान के सबब दिल में पैदा होती है। कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह अल्लाह के ज़िक्र और याद से मुराद यह है कि कोई शख़्स किसी गुनाह के करने का इरादा कर रहा था उसी हाल में उसको ख़ुदा तआ़ला की याद आ गयी तो वह अल्लाह के अ़ज़ाब से डर गया और गुनाह से रुक गया। इस सूरत में ख़ौफ़ से मुराद अ़ज़ाब का ख़ौफ़ और डर ही होगा। (तफ़सीर बहरे-मुहीत)

दूसरी सिफ़त ईमान में तरक़्क़ी

मोमिन की दूसरी सिफ़त यह बतलाई कि जब उसके सामने अल्लाह की आयतें तिलावत की जाती हैं तो उसका ईमान बढ़ जाता है। ईमान बढ़ने के ऐसे मायने जिन पर सब उलेमा व मुफ़स्सिरीन और मुहद्दिसीन का इत्तिफ़ाक़ है यह हैं कि ईमान की ताक़त व कैफ़ियत और ईमान के नूर में तरक़्क़ी हो जाती है। और यह तजुर्बा और आँखों देखा है कि नेक आमाल से ईमान में ताक़त और ऐसा दिल का इत्मीनान पैदा हो जाता है कि नेक आमाल उसकी तबई आ़दत (मिज़ाज का हिस्सा) बन जाते हैं जिनके छोड़ने से उसको तकलीफ़ होती है। और गुनाह से उसको तबई नफ़रत पैदा हो जाती है कि उनके पास नहीं जाता। ईमान के इसी मक़ाम को हदीस में ईमान की मिठास के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया है, जिसको किसी ने इस तरह एक शे'र में बयान किया हैः

واذا حلت الحلاوة قلبًا نشطت فی العبادة الاعضاء

यानी जब किसी दिल में ईमान की हलावत (मिठास) जगह पकड़ लेती है तो उसके हाथ पैर और सब आज़ा (बदनी अंग) इबादत में राहत व लज़्ज़त महसूस करने लगते हैं।

इसलिये आयत के मज़मून का ख़ुलासा यह हुआ कि कामिल मोमिन की यह सिफ़त होनी चाहिये कि जब उसके सामने अल्लाह तआ़ला की आयतें पढ़ी जायें तो उसके ईमान में ताज़गी और तरक़्क़ी हो और नेक आमाल की तरफ़ रग़बत (दिलचस्पी) बढ़े। इससे यह भी मालूम हो गया कि जिस तरह आ़म मुसलमान क़ुरआन पढ़ते और सुनते हैं कि न क़ुरआन के अदब व

एहतिराम की कोई पाबन्दी व ख़्याल है न अल्लाह जल्ल शानुहू की बड़ाई पर नज़र है, ऐसी तिलावत (क़ुरआन पढ़ना) मक़सूद और आला नतीजे पैदा करने वाली नहीं, अगरचे सवाब से वह भी ख़ाली न हो।

तीसरी सिफ़त अल्लाह पर भरोसा

तीसरी सिफ़त मोमिन की यह बयान फ़रमाई कि वह अल्लाह तआ़ला पर तवक्कुल (भरोसा) करे। तवक्कुल के मायने एतिमाद और भरोसे के हैं। मतलब यह है कि अपने तमाम आमाल व हालात में उसका मुकम्मल एतिमाद और भरोसा सिर्फ़ एक ज़ात हक़ तआ़ला पर हो। सही हदीस में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इसके यह मायने नहीं कि अपनी ज़रूरतों के लिये माद्दी असबाब और तदबीरों को छोड़ करके बैठ जाये, बल्कि मतलब यह है कि माद्दी असबाब व संसाधनों को असल कामयाबी के लिये काफ़ी न समझे बल्कि अपनी हिम्मत व ताक़त के बक़द्र माद्दी असबाब और तदबीरों को जमा करने और इस्तेमाल करने के बाद मामले को अल्लाह तआ़ला के सुपुर्द करे और समझे कि असबाब भी उसी के पैदा किये हुए हैं और इन असबाब के नतीजे और फल भी वही पैदा करते हैं। होगा वही जो वह चाहेंगे। एक हदीस में फ़रमाया है:

اَجْمِلُوْا فِی الطَّلَبِ وَتَوَكَّلُوْا عَلَيْهِ.

यानी रिज़्क़ और अपनी हाजतों के हासिल करने के लिये दरमियानी दर्जे की तलब और माद्दी असबाब के ज़रिये कोशिश कर लो फिर मामला अल्लाह तआ़ला के सुपुर्द करो। अपने दिल दिमाग़ को सिर्फ़ माद्दी तदबीरों और असबाब (सामानों) ही में न उलझा कर रखो।

चौथी सिफ़त नमाज़ का क़ायम करना

मोमिन की चौथी सिफ़त इक़ामत-ए-सलात (नमाज़ का क़ायम करना) बतलाई। इसमें यह बात याद रखने के क़ाबिल है कि यहाँ नमाज़ पढ़ने का नहीं बल्कि नमाज़ की इक़ामत का ज़िक्र है। इक़ामत के लफ़्ज़ मायने किसी चीज़ को सीधा खड़ा करने के हैं। मुराद इक़ामते सलात से यह है कि नमाज़ के पूरे आदाब व शराईत उस तरह पूरे करे जिस तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ौल व अ़मल से बतलाये हैं। आदाब व शराईत में कोताही हुई तो उसको नमाज़ पढ़ना तो कह सकते हैं मगर इक़ामते सलात नहीं कह सकते। क़ुरआन मजीद में नमाज़ के जो फ़ायदे, आसार और बरकतें ज़िक्र की गयी हैं और फ़रमाया गया है:

اِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ.

यानी नमाज़ रोकती है बेहयाई और हर गुनाह से। यह भी इक़ामते सलात ही पर मौक़ूफ़ है। जब नमाज़ के आदाब में कोताही हुई तो अगरचे फ़तवे की रू से उसकी नमाज़ को जायज़ ही कहा जाये मगर नमाज़ की बरकतों में कोताही की मिक़्दार पर फ़र्क़ पड़ जायेगा। और कुछ सूरतों में उन बरकतों से पूरी तरह मेहरूमी हो जायेगी।

पाँचवीं सिफ़त अल्लाह की राह में ख़र्च करना

मर्दे मोमिन की पाँचवीं सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि जो कुछ अल्लाह तआ़ला ने उसको रिज़्क़ दिया है वह उसमें से अल्लाह की राह में ख़र्च करे। यह अल्लाह की राह में ख़र्च करना आ़म है, तमाम सदक़ों व ख़ैरात और वक़्फ़ व सिले को जिसमें ज़कात, सदक़ा-ए-फ़ित्र वग़ैरह शरई वाजिबात भी दाख़िल हैं और नफ़्ली सदक़ात व एहसानात भी। मेहमानों, दोस्तों, बुज़ुर्गों की माली ख़िदमत भी।

मर्दे मोमिन की ये पाँच सिफ़तें बयान करने के बाद इरशाद फ़रमायाः

اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا.

यानी ऐसे ही लोग सच्चे मोमिन हैं जिनका ज़ाहिर व बातिन एक जैसा और ज़बान और दिल की हालत बराबर है, वरना जिनमें ये सिफ़तें नहीं वे ज़बान से तोः

اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ.

कहते हैं (इस्लाम का कलिमा पढ़ते हैं) मगर उनके दिलों में न तौहीद का रंग न इताअ़ते रसूल का। उनके आमाल उनकी बातों की तरदीद करते हैं। इस आयत में इस तरफ़ भी इशारा है कि हर हक़ की एक हक़ीक़त होती है जब वह हासिल न हो तो हक़ हासिल नहीं होता।

एक शख़्स ने हज़रत हसन बसरी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से पूछा कि ऐ अबू सईद! क्या आप मोमिन हैं? तो आपने फ़रमाया कि भाई ईमान दो क़िस्म के हैं- तुम्हारे सवाल का मतलब अगर यह है कि मैं अल्लाह तआ़ला और उसके फ़रिश्तों, किताबों और रसूलों पर और जन्नत दोज़ख़ और क़ियामत और हिसाब किताब पर ईमान रखता हूँ तो जवाब यह है कि बेशक मैं मोमिन हूँ। और अगर तुम्हारे सवाल का मतलब यह है कि मैं वह मोमिने कामिल हूँ जिसका ज़िक्र सूरः अनफ़ाल की आयतों में है तो मुझे कुछ मालूम नहीं कि मैं उनमें दाख़िल हूँ या नहीं। सूरः अनफ़ाल की आयतों से वही आयतें मुराद हैं जो अभी आपने सुनी हैं।

ज़िक्र की गयी आयतों में सच्चे मोमिन की सिफ़तें और निशानियाँ बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमायाः

لَهُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ.

इसमें सच्चे मोमिनों के लिये तीन चीज़ों का वायदा फ़रमाया- एक बुलन्द और ऊँचे दर्जे, दूसरे मग़फ़िरत, तीसरे बेहतरीन रिज़्क़।

तफ़सीर बहरे-मुहीत में है कि इससे पहली आयतों में सच्चे मोमिनों की जो सिफ़तें बयान हुई हैं वो तीन क़िस्म की हैं- एक वो जिनका ताल्लुक़ दिल और अन्दर की हालत के साथ है जैसे ईमान, ख़ौफ़े ख़ुदा, अल्लाह पर भरोसा। दूसरे वो जिनका ताल्लुक़ जिस्मानी आमाल से है जैसे नमाज़ वग़ैरह। तीसरे वो जिनका ताल्लुक़ इनसान के माल से है जैसे अल्लाह की राह में ख़र्च करना।

इन तीनों क़िस्मों के मुक़ाबले में तीन इनामों का ज़िक्र आया है। बुलन्द दर्जे दिली और

बातिनी सिफ़ात के मुकाबले में, और मग़फ़िरत उन आमाल के मुक़ाबले में जो इनसान के ज़ाहिरी बदन से संबन्धित हैं जैसे नमाज़ रोज़ा वग़ैरह जैसा कि हदीस में आया है कि नमाज़ गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो जाती है। और इज़्ज़त की रोज़ी अल्लाह की राह में ख़र्च करने के मुक़ाबले में आयी है कि जो कुछ ख़र्च किया उससे बहुत बेहतर और बहुत ज़्यादा उसको आख़िरत में मिलेगा।

كَمَآ اَخْرَجَكَ رَبُّكَ مِنْۢ بَيْتِكَ بِالْحَقِّ وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ لَكٰرِهُوْنَ ۙ يُجَادِلُوْنَكَ
فِى الْحَقِّ بَعْدَمَا تَبَيَّنَ كَاَنَّمَا يُسَاقُوْنَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُوْنَ ۝

कमा अख़्र-ज-क रब्बु-क मिम्-बैति-क बिल्हक़्क़ि व इन्-न फ़रीक़म् मिनल्-मुअ्मिनी-न लकारिहून (5) युजादिलून-क फ़िल्हक़्क़ि बअ़्-द मा तबय्य-न कअन्नमा युसाक़ू-न इलल्-मौति व हुम् यन्ज़ुरून (6)	जैसे निकाला तुझको तेरे रब ने तेरे घर से हक़ काम के वास्ते, और एक जमाअ़त ईमान वालों की राज़ी न थी। (5) वे तुझ से झगड़ते थे हक़ बात में उसके ज़ाहिर हो चुकने के बाद, गोया वे हाँके जाते हैं मौत की तरफ़ आँखों देखते। (6)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(माले ग़नीमत का लोगों की मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ तक़सीम न होना बल्कि अल्लाह की तरफ़ से उसकी तक़सीम होना अगरचे कुछ लोगों को तबई तौर पर भारी गुज़रा हो मगर बहुत सी मस्लेहतों की वजह से यही ख़ैर और बेहतर है। और यह मामला ख़िलाफ़े तबीयत मगर बहुत सी मस्लेहतों को शामिल होने में ऐसा ही है) जैसा कि आपके रब ने आपके घर (और बस्ती) से मस्लेहत के साथ आपको (बदर की तरफ़) रवाना किया, और मुसलमानों की एक जमाअ़त (अपनी संख्या और सामाने जंग की क़िल्लत की वजह से तबई तौर पर) इसको नागवार समझती थी। (और) वे इस मस्लेहत (के काम यानी जिहाद और लश्कर के मुक़ाबले के मामले) में इसके बाद कि वह ज़ाहिर हो गया था (अपने बचाव के लिये) आप से (मश्विरे के तौर पर) इस तरह झगड़ रहे थे कि जैसे कोई उनको मौत की तरफ़ हाँके लिये जाता है और वे (मौत को गोया) देख रहे हैं (मगर आख़िरकार उसका अन्जाम भी अच्छा हुआ कि इस्लाम ग़ालिब और कुफ़्र मग़लूब हुआ है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरत के शुरू में यह बयान हो चुका है कि सूरः अनफ़ाल के ज़्यादातर मज़ामीन काफ़िरों व मुश्रिकों पर अ़ज़ाब व इन्तिक़ाम और मुसलमानों पर एहसान व इनाम से संबन्धित हैं और उसके

ज़िमन में दोनों फ़रीक़ों के लिये इब्रत व नसीहत के अहकाम बयान हुए हैं। और उन मामलात में सबसे पहला और सबसे अहम वाक़िआ ग़ज़्वा-ए-बदर का था जिसमें बड़े साज़ व सामान और तायदाद व क़ुव्वत के बावजूद मुश्रिकों को जानी और माली नुक़सानों के साथ शिकस्त और मुसलमानों को बावजूद हर तरह की क़िल्लत और बेसामानी के ज़बरदस्त फ़तह नसीब हुई। इस सूरत में बदर के वाक़िए का तफ़सीली बयान है, जो उक्त आयतों से शुरू हो रहा है।

पहली आयत में इस बात का ज़िक्र है कि कुछ मुसलमानों को बदर के मौक़े पर जिहाद के लिये पहल करना नापसन्द था मगर अल्लाह तआ़ला ने अपने ख़ास फ़रमान के ज़रिये अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जिहाद का हुक्म दिया तो नापसन्द करने वाले भी साथ हो गये। इस बात के बयान करने के लिये क़ुरआने करीम ने जो अलफ़ाज़ अपनाये हैं वो कई तरह से क़ाबिले ग़ौर हैं।

अव्वल यह कि आयत की शुरूआत "कमा अख़्र-ज-क रब्बु-क" से होता है। इसमें लफ़्ज़ 'कमा' एक ऐसा लफ़्ज़ है जो तशबीह (मिसाल देने) के लिये इस्तेमाल किया जाता है, तो ग़ौर करने की बात यह है कि यहाँ तशबीह किस चीज़ की किस चीज़ से है। हज़राते मुफ़स्सिरीन ने इसकी विभिन्न वुजूहात और मतलब बयान फ़रमाये हैं। इमामे तफ़सीर अबू हय्यान ने इस तरह के पन्द्रह क़ौल नक़ल किये हैं उनमें ज़्यादा क़रीब तीन संभावित हैं।

अव्वल यह कि इस तशबीह (मिसाल देने) से मक़सद यह बयान करना है कि जिस तरह ग़ज़्वा-ए-बदर के माले ग़नीमत की तक़सीम के वक़्त सहाबा किराम में आपस में कुछ मतभेद हो गया था, फिर अल्लाह के हुक्म के तहत सब ने आपके हुक्म की तामील की और उसकी बरकतें और अच्छे परिणाम का ज़हूर सामने आ गया, इसी तरह इस जिहाद के शुरू में कुछ लोगों की तरफ़ से नापसन्दीदगी का इज़हार हुआ फिर अल्लाह के हुक्म के मातहत सब ने इताअ़त की और उसके मुफ़ीद नतीजे और बेहतरीन फल को आँखों से देख लिया। यह व्याख्या इमाम फ़र्रा और इमाम मुबर्रिद की तरफ़ मन्सूब है। (बहरे-मुहीत) इसी को तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन में तरजीह दी है जैसा कि ख़ुलासा-ए-तफ़सीर से मालूम हो चुका।

दूसरे इस मायने की गुंजाईश है कि पहले गुज़री आयतों में सच्चे मोमिनों के लिये आख़िरत में बुलन्द दर्जों, मग़फ़िरत और इज़्ज़त वाली रोज़ी का वायदा किया गया था। इन आयतों में इस वायदे के यक़ीनी होने का ज़िक्र इस तरह किया गया कि आख़िरत का वायदा अगरचे अभी आँखों के सामने नहीं मगर अल्लाह तआ़ला का जो मदद व फ़तह का वायदा ग़ज़्वा-ए-बदर में आँखों के सामने आ चुका है उससे सीख लो और यक़ीन करो कि जिस तरह यह वायदा दुनिया ही में पूरा हो चुका है इसी तरह आख़िरत का वायदा भी ज़रूर पूरा होगा।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी, नुहास के हवाले से)

तीसरी संभावना और गुंजाईश वह है जिसको अबू हय्यान ने मुफ़स्सिरीन के पन्द्रह क़ौल (रायें) नक़ल करने के बाद लिखा है कि मुझे इनमें से किसी क़ौल पर इत्मीनान नहीं था, एक दिन मैं इसी आयत पर ग़ौर व फ़िक्र करते हुए सो गया तो मैंने ख़्वाब में देखा कि किसी जगह

जा रहा हूँ और एक शख़्स मेरे साथ है, मैं इसी आयत के बारे में उससे बहस कर रहा हूँ और यह कह रहा हूँ कि मुझे कभी ऐसी मुश्किल पेश नहीं आई जैसी इस आयत के अलफ़ाज़ में पेश आई है। ऐसा मालूम होता है कि यहाँ कोई लफ़्ज़ पोशीदा (छुपा) है। फिर अचानक सपने ही में मेरे दिल में यह बात आई कि यहाँ लफ़्ज़ 'न-स-र-क' पोशीदा है, इसको ख़ुद मैंने भी पसन्द किया और जिस शख़्स से बहस कर रहा था उसने भी पसन्द किया। सपने से जागने के बाद इस पर ग़ौर किया तो मेरा शुब्हा ख़त्म हो गया, क्योंकि इस सूरत में लफ़्ज़ कमा तशबीह (मिसाल देने) के लिये नहीं बल्कि सबब बयान करने के लिये इस्तेमाल हुआ है और आयत के मायने यह हो गये कि ग़ज़वा-ए-बदर में अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से जो ख़ास नुसरत व मदद आपकी हुई उसका सबब यह था कि उस जिहाद में आपने जो कुछ किया अपनी किसी इच्छा और राय से नहीं बल्कि ख़ालिस हुक्मे ख़ुदावन्दी के मातहत किया। उसी के हुक्म पर आप अपने घर से निकले। और हक़ की इताअ़त का यही नतीजा होना चाहिये और यही होता है कि हक़ तआ़ला की इमदाद व नुसरत उसके साथ हो जाती है।

बहरहाल आयत के इस जुमले में ये तीनों मायने संभावित और सही हैं। इसके बाद इस पर नज़र डालिये कि क़ुरआने करीम ने इस जिहाद के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ख़ुद निकलना ज़िक्र नहीं किया बल्कि यह बयान फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने आपको निकाला। इसमें इशारा है रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बन्दगी व इताअ़त के कमाल की तरफ़, कि आपका फ़ेल दर हक़ीक़त हक़ तआ़ला का फ़ेल होता है जो आपके बदनी अंगों से निकलता और ज़ाहिर होता है। जैसा कि एक हदीस-ए-क़ुदसी में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि बन्दा जब फ़रमाँबरदारी व बन्दगी के ज़रिये अल्लाह तआ़ला की निकटता हासिल कर लेता है तो अल्लाह तआ़ला उसके बारे में यह फ़रमाते हैं कि मैं उसकी आँख बन जाता हूँ वह जो कुछ देखता है मेरे ज़रिये देखता है, मैं उसके कान बन जाता हूँ वह जो कुछ सुनता है मेरे ज़रिये सुनता है, मैं उसके हाथ-पाँव बन जाता हूँ वह जिसको पकड़ता है मेरे ज़रिये पकड़ता है, जिसकी तरफ़ चलता है मेरे ज़रिये चलता है। ख़ुलासा इसका यही है कि हक़ तआ़ला की ख़ास नुसरत व इमदाद उसके साथ हो जाती है। जिन कामों और हरकतों का सुदूर बज़ाहिर उसके आँख, कान या हाथ-पाँव से होता है दर हक़ीक़त उसमें हक़ तआ़ला शानुहू की क़ुदरत काम कर रही होती है।

ख़ुलासा यह है कि लफ़्ज़ 'अख़्र-ज-क' में इस तरफ़ इशारा कर दिया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का जिहाद के लिये निकलना दर हक़ीक़त हक़ तआ़ला का निकालना था जो आपकी ज़ात से ज़ाहिर हुआ।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि "अख़्र-ज-क रब्बु-क" फ़रमाया जिसमें अल्लाह जल्ल शानुहू का ज़िक्र रब की सिफ़त के साथ करके इस तरफ़ इशारा कर दिया कि इस जिहाद के लिये आपको निकालना रब होने की शान और तरबियत के तक़ाज़े से था। क्योंकि इसके ज़रिये ज़ुल्मों का शिकार और दूसरों के मातहत मुसलमानों के लिये विजयी होना और घमण्डी व

ज़ालिम काफ़िरों के लिये पहले अ़ज़ाब को सामने लाना और ज़ाहिर करना था।

"मिम्-बैति-क" के मायने हैं आपके घर से। मतलब यह हुआ कि निकाला आपको आपके रब ने आपके घर से। मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक इस घर से मुराद मदीना तय्यिबा का घर या ख़ुद मदीना तय्यिबा है। जिसमें हिजरत के बाद आप मुक़ीम हुए। क्योंकि बदर का वाक़िआ़ हिजरत के दूसरे साल में पेश आया है। इसके साथ लफ़्ज़ 'बिल्हक़्क़ि' का इज़ाफ़ा करके बतला दिया कि यह सारी कार्रवाई हक़ को ज़ाहिर व साबित करने और बातिल (ग़ैर-हक़) का ग़लत व बातिल होना ज़ाहिर करने के लिये अ़मल में आई है। दूसरी हुकूमतों की तरह मुल्की दायरा बढ़ाने की हवस या बादशाहों का गुस्सा इसका सबब नहीं।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ لَكٰرِهُوْنَ.

यानी मुसलमानों की एक जमाअ़त इस जिहाद को भारी और नागवार समझती और नापसन्द करती थी। सहाबा किराम को यह गरानी किस तरह और क्यों पेश आई इसके समझने के लिये तथा आईन्दा आने वाली दूसरी आयतों को पूरी तरह समझने के लिये ग़ज़्वा-ए-बदर के शुरूआ़ती हालात और कारणों का पहले मालूम कर लेना मुनासिब है। इसलिये पहले बदर की लड़ाई का पूरा वाक़िआ़ सुन लीजिये।

इब्ने उक़्बा व इब्ने आ़मिर के बयान के मुताबिक़ वाक़िआ़ यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मदीना तय्यिबा में यह ख़बर मिली कि अबू सुफ़ियान एक तिजारती क़ाफ़िले के साथ मुल्क शाम से व्यापार का माल लेकर मक्का मुअ़ज़्ज़मा की तरफ़ जा रहे हैं और उस तिजारत में मक्का के तमाम क़ुरैशी शरीक हैं। इब्ने उक़्बा के बयान के मुताबिक़ मक्के का कोई क़ुरैशी मर्द या औ़रत बाक़ी न था जिसका उसमें हिस्सा न हो। अगर किसी के पास सिर्फ़ एक मिस्क़ाल (यानी साढ़े चार माशे) सोना भी था तो उसने उसमें अपना हिस्सा डाल दिया था। उस क़ाफ़िले के पूरे सरमाये के मुताल्लिक़ इब्ने उक़्बा की रिवायत यह है कि पचास हज़ार दीनार थे। दीनार सोने का सिक्का है जो साढ़े चार माशे का होता है। सोने के मौजूदा भाव के हिसाब से उसकी क़ीमत बावन रुपये और पूरे सरमाये क़ी क़ीमत छब्बीस लाख रुपये बनती है। और यह भी आज के नहीं बल्कि अब से चौदह सौ बरस पहले के छब्बीस लाख हैं जो आज के छब्बीस करोड़ से भी ज़्यादा की हैसियत रखते थे। उस तिजारती क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त और कारोबार के लिये क़ुरैश के सत्तर जवान और सरदार साथ थे। जिससे मालूम हुआ कि यह तिजारती क़ाफ़िला दर हक़ीक़त मक्का के क़ुरैश की एक तिजारती कम्पनी थी।

अ़ल्लामा बग़वी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह की रिवायत से नक़ल किया है कि इस क़ाफ़िले में क़ुरैश के चालीस सवार क़ुरैश के सरदारों में से थे जिनमें अ़मर बिन आ़स, मख़्रमा बिन नौफ़ल ख़ास तौर से क़ाबिले ज़िक्र हैं। और यह भी मालूम है कि क़ुरैश की सबसे बड़ी ताक़त उनकी यही तिजारत और तिजारती सरमाया था। जिसके बल पर उन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके साथियों को तंग करके मक्का छोड़ने पर मजबूर

कर दिया था। उस वक़्त जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को शाम के सफ़र से इस क़ाफ़िले की वापसी की इत्तिला मिली तो आपकी राय हुई कि इस वक़्त इस क़ाफ़िले का मुक़ाबला करके क़ुरैश की ताक़त तोड़ देने का मौक़ा है। सहाबा किराम से मश्विरा किया तो ज़माना रमज़ान का था, पहले से किसी जंग की तैयारी न थी। कुछ हज़रात ने तो चुस्ती और हिम्मत का इज़हार किया मगर कुछ ने कुछ दुविधा का इज़हार किया। आपने भी सब पर इस जिहाद की शिर्कत को लाज़िम न क़रार दिया बल्कि यह हुक्म दिया कि जिन लोगों के पास सवारियाँ मौजूद हैं वे हमारे साथ चलें। उस वक़्त बहुत से आदमी जिहाद में जाने से रुक गये और जो लोग जाना चाहते थे और उनकी सवारियाँ देहात में थीं उन्होंने इजाज़त चाही कि हम अपनी सवारियाँ ले आयें तो साथ चलें। मगर वक़्त इतने इन्तिज़ार का न था। इसलिये हुक्म यह हुआ कि जिन लोगों की सवारियाँ पास मौजूद हैं और जिहाद में जाना चाहें सिर्फ़ वही लोग चलें, बाहर से सवारियाँ मंगाने का वक़्त नहीं। इसलिये साथ जाने का इरादा रखने वालों में से भी थोड़े ही आदमी तैयार हो सके। और जिन हज़रात ने इस जिहाद में साथ जाने का इरादा ही नहीं किया उसका सबब भी यह था कि आपने सब के ज़िम्मे इस जिहाद की शिर्कत को वाजिब न क़रार दिया था। और उन लोगों को यह भी इत्मीनान था कि यह तिजारती क़ाफ़िला है कोई जंगी लश्कर नहीं जिसके मुक़ाबले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके साथियों को ज़्यादा लश्कर और मुजाहिदीन की ज़रूरत पड़े। इसलिये सहाबा किराम की बहुत बड़ी तायदाद इस जिहाद में शरीक न हुई।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब बीर-ए-सुक़िया (सुक़िया कुएँ) पर पहुँचकर क़ैस बिन सअ़सआ़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हुक्म दिया कि लश्कर को शुमार करें तो उन्होंने शुमार करके इत्तिला दी कि तीन सौ तेरह हज़रात हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सुनकर ख़ुश हुए और फ़रमाया कि यह तायदाद तालूत के साथियों की है इसलिये नेक शगुन फ़तह और कामयाबी का है। सहाबा किराम के साथ कुल सत्तर ऊँट थे। हर तीन आदमी के लिये एक ऊँट था जिस पर वे बारी-बारी सवार होते थे, ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ भी दो हज़रात एक ऊँट के शरीक थे, अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु। जब आपकी बारी पैदल चलने की आती तो ये हज़रात अ़र्ज़ करते कि आप सवार रहें हम आपके बदले पैदल चलेंगे। रहमतुल-लिल्आ़लमीन की तरफ़ से यह जवाब मिलता कि न तो तुम मुझसे ज़्यादा ताक़तवर हो और न मैं आख़िरत के सवाब से बेपरवाह हूँ कि अपने सवाब का मौक़ा तुम्हें दे दूँ। इसलिये अपनी बारी में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी पैदल ही चलते थे।

दूसरी तरफ़ किसी शख़्स ने मुल्क शाम के मशहूर मक़ाम ऐन-ए-ज़रक़ा पर पहुँचकर क़ाफ़िले के सरदार अबू सुफ़ियान को इसकी ख़बर पहुँचा दी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनके क़ाफ़िले के इन्तिज़ार में हैं, उनका पीछा करेंगे। अबू सुफ़ियान ने एहतियाती तदबीरें इख़्तियार कीं। जब यह क़ाफ़िला हिजाज़ की सीमाओं में दाख़िल हुआ तो एक होशियार चालाक

आदमी ज़मज़म बिन उमर को बीस मिस्क़ाल सोना यानी तक़रीबन दो हज़ार रुपया उजरत देकर इस पर राज़ी किया कि वह तेज़-रफ़्तार साँडनी पर सवार होकर जल्द से जल्द मक्का मुकर्रमा में यह ख़बर पहुँचा दे कि उनके क़ाफ़िले को सहाबा किराम (यानी मुहम्मद के साथियों) से ख़तरा लाहिक़ है।

ज़मज़म बिन उमर ने उस ज़माने की ख़ास रस्म के मुताबिक़ ख़तरे का ऐलान करने के लिये अपनी ऊँटनी के नाक-कान काट दिये और अपने कपड़े आगे पीछे से फाड़ डाले, और कजावे को उल्टा करके ऊँटनी की पुश्त पर रखा। ये निशानियाँ उस ज़माने में ख़तरे की घण्टी समझी जाती थी। जब वह इस अन्दाज़ से मक्का में दाख़िल हुआ तो पूरे मक्का में हलचल मच गयी और तमाम क़ुरैश क़ाफ़िले की रक्षा और बचाव के लिये तैयार हो गये। जो लोग उस जंग के लिये निकल सकते थे खुद निकले और जो किसी वजह से माज़ूर थे उन्होंने किसी को अपना क़ायम-मक़ाम बनाकर जंग के लिये तैयार किया।

उनमें जो लोग इस जंग में शिर्कत से हिचकिचाते उसको ये लोग संदिग्ध नज़रों से देखते और मुसलमानों का हम-ख़्याल समझते, इसलिये ऐसे लोगों को विशेष तौर पर जंग के वास्ते निकलने पर मजबूर किया। जो लोग खुलेआ़म मुसलमान थे और अभी तक अपनी कुछ मजबूरियों के सबब हिजरत नहीं कर सके थे बल्कि मक्का में ही रह रहे थे उनको और बनू हाशिम के ख़ानदान में जिस पर भी यह गुमान था कि यह मुसलमानों से हमदर्दी रखता है उनको भी इस जंग के लिये निकलने पर मजबूर किया। उन्हीं मजबूर लोगों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और अबू तालिब के दो बेटे तालिब और अ़क़ील भी थे।

इस तरह उस लश्कर में एक हज़ार जवान, दो सौ घोड़े और छह सौ ज़िरहें और तराने गाने वाली बाँदियाँ और उनके तबले वग़ैरह लेकर बदर की तरफ़ निकल खड़े हुए। हर मन्ज़िल पर दस ऊँट उन लोगों के खाने के लिये ज़िबह होते थे।

दूसरी तरफ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सिर्फ़ एक तिजारती क़ाफ़िले के अन्दाज़ से मुक़ाबले की तैयारी करके बारह रमज़ान को शनिवार के दिन मदीना तय्यिबा से निकले और कई मन्ज़िल तय करने के बाद बदर के क़रीब पहुँच कर आपने दो शख़्सों को आगे भेजा कि वे अबू सुफ़ियान के क़ाफ़िले की ख़बर लायें। (तफ़सीरे मज़हरी)

मुख़बिरों ने यह ख़बर पहुँचाई कि अबू सुफ़ियान का क़ाफ़िला हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पीछा करने की ख़बर पाकर दरिया के किनारे-किनारे गुज़र गया और उसकी हिफ़ाज़त और मुसलमानों के मुक़ाबले के लिये मक्का से एक हज़ार जवानों का लश्कर जंग के लिये आ रहा है। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

ज़ाहिर है कि इस ख़बर ने हालात का नक़्शा पलट दिया। उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने साथी सहाबा किराम से मश्विरा फ़रमाया कि इस आने वाले लश्कर से जंग करना है या नहीं। हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी और कुछ दूसरे हज़रात ने अ़र्ज़ किया कि

हममें उनके मुक़ाबले की ताक़त नहीं और न हम इस इरादे से आये हैं। इस पर हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु खड़े हुए और हुक्म की तामील के लिये अपने आपको पेश किया। फिर फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु खड़े हुए और इसी तरह तामीले हुक्म और जिहाद के लिये तैयार होने का इज़हार किया। फिर हज़रत मिक़दाद रज़ियल्लाहु अ़न्हु खड़े हुए और अ़र्ज़ किया:

या रसूलल्लाह! जो कुछ आपको अल्लाह तआ़ला का हुक्म मिला है आप उसको जारी करें हम आपके साथ हैं। ख़ुदा की क़सम हम आपको वह जवाब न देंगे जो बनी इस्राईल ने मूसा अ़लैहिस्सलाम को दिया था:

فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ۝

यानी जाईये आप और आपका रब लड़-भिड़ लें हम तो यहाँ बैठे हैं।

क़सम है उस ज़ात की जिसने आपको दीने हक़ के साथ भेजा है अगर आप हमें मुल्क हब्शा के मक़ाम बर्कुल-ग़िमाद तक भी ले जायेंगे तो हम आपके साथ जंग के लिये चलेंगे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ुश हुए और उनको दुआ़यें दीं। मगर अभी तक अन्सार सहाबा की तरफ़ से मुवाफ़क़त में कोई आवाज़ न उठी थी और यह संदेह था कि अन्सारी सहाबा ने जो नुसरत व इमदाद का समझौता हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ किया था वह मदीना के अन्दर का था, मदीना से बाहर इमदाद करने के वे पाबन्द नहीं, इसलिये आपने फिर मजमे को ख़िताब करके फ़रमाया कि लोगो मुझे मश्विरा दो कि इस जिहाद पर क़दम बढ़ायें या नहीं? इस ख़िताब का इशारा अन्सार की तरफ़ था। हज़रत सअ़द बिन मुआ़ज़ अन्सारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु समझ गये और अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! क्या आप हमसे पूछना चाहते हैं? आपने फ़रमाया हाँ। सअ़द बिन मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया:

या रसूलल्लाह! हम आप पर ईमान लाये और इसकी शहादत दी कि जो कुछ आप फ़रमाते हैं सब हक़ है, और हमने आप से अ़हद व पैमान किये हैं कि हर हाल में आपकी इताअ़त करेंगे। इसलिये आपको जो कुछ अल्लाह तआ़ला का हुक्म मिला हो उसको जारी फ़रमाईये। क़सम है उस ज़ात की जिसने आपको दीने हक़ के साथ भेजा है अगर आप हमको समन्दर में ले जायें तो हम आपके साथ दरिया में घुस जायेंगे, हम में से एक आदमी भी आप से पीछे न रहेगा। हमें इसमें कोई नागवारी नहीं कि आप कल ही हमें दुश्मन से भिड़ा दें। हमें उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला आपको हमारे काम से ऐसे हालात का नज़ारा करायेगा जिससे आपकी आँखें ठण्डी होंगी। हमें अल्लाह के नाम पर जहाँ चाहें ले चलिये।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह सुनकर बहुत ख़ुश हुए और क़ाफ़िले को हुक्म दे दिया कि अल्लाह के नाम पर चलो। और यह ख़ुशख़बरी सुनाई कि मुझसे अल्लाह तआ़ला ने यह वायदा फ़रमाया है कि इन दोनों जमाअ़तों में से एक जमाअ़त पर हमारा ग़लबा होगा। दोनों जमाअ़तों से मुराद एक अबू सुफ़ियान का तिजारती क़ाफ़िला और दूसरा यह मक्का से आने वाला लश्कर है। फिर फ़रमाया कि ख़ुदा की क़सम मैं गोया अपनी आँखों से मुश्रिक लोगों के क़त्ल होने की जगह को देख रहा हूँ। यह पूरा वाक़िआ़ तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी

से लिया गया है।

वाक़िए की तफ़सील सुनने के बाद इन उपरोक्त आयतों को देखिये। पहली आयत में जो यह इरशाद फ़रमायाः

وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ لَكٰرِهُوْنَ.

यानी एक जमाअ़त मुसलमानों की इस जिहाद को भारी समझ रही थी। इससे इशारा उस हाल की तरफ़ है जो सहाबा किराम से मश्विरा लेने के वक़्त कुछ सहाबा किराम की तरफ़ से ज़ाहिर हुआ कि उन्होंने जिहाद से पस्त-हिम्मती (कमज़ोरी) का इज़हार किया।

और इसी वाक़िए का बयान एक दूसरी आयत में हैः

يُجَادِلُوْنَكَ فِي الْحَقِّ بَعْدَ مَا تَبَيَّنَ كَاَنَّمَا يُسَاقُوْنَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُوْنَ.

यानी ये लोग आप से हक़ के मामले में झगड़ा और इख़्तिलाफ़ करते हैं गोया इनको मौत की तरफ़ खींचा जा रहा है जिसको वे अपनी आँखों से देख रहे हैं।

सहाबा किराम ने अगरचे हुक्म के कुछ भी ख़िलाफ़ नहीं किया था बल्कि मश्विरे के जवाब में अपनी कमज़ोरी और पस्त-हिम्मती का इज़हार किया था, मगर रसूल के साथियों से ऐसी राय का इज़हार भी उनके ऊँचे मक़ाम के एतिबार से अल्लाह तआ़ला के नज़दीक नापसन्दीदा था इसलिये नाराज़ी के अलफ़ाज़ से इसको बयान फ़रमाया गया।

وَاِذْ يَعِدُكُمُ اللّٰهُ اِحْدَى الطَّآئِفَتَيْنِ اَنَّهَا لَكُمْ وَتَوَدُّوْنَ اَنَّ غَيْرَ ذَاتِ
الشَّوْكَةِ تَكُوْنُ لَكُمْ وَيُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّحِقَّ الْحَقَّ بِكَلِمٰتِهٖ وَيَقْطَعَ دَابِرَ الْكٰفِرِيْنَ ۝
لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُوْنَ ۝ اِذْ تَسْتَغِيْثُوْنَ رَبَّكُمْ فَاسْتَجَابَ لَكُمْ اَنِّيْ
مُمِدُّكُمْ بِاَلْفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُرْدِفِيْنَ ۝ وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى وَلِتَطْمَئِنَّ بِهٖ قُلُوْبُكُمْ ۚ
وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۚ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝ ع ١ ١٥

व इज़् यअ़िदुकुमुल्लाहु इह्दत्--ताइ-फ़तैनि अन्नहा लकुम् व तवद्दू-न अन्-न ग़ै-र ज़ातिश्शौकति तकूनु लकुम् व युरीदुल्लाहु अंय्युहिक़्क़ल्-हक़्-क़ बिकलिमातिही व यक़्त-अ दाबिरल्-काफ़िरीन (7) लियुहिक़्क़ल्-हक़्-क़ व युब्तिलल्-	और जिस वक़्त तुम से वायदा करता था अल्लाह दो जमाअ़तों में से एक का कि वह तुम्हारे हाथ लगेगी और तुम चाहते थे कि जिसमें काँटा न लगे वह तुमको मिले और अल्लाह चाहता था कि सच्चा कर दे सच को अपने कलामों से और काट डाले जड़ काफ़िरों की। (7) ताकि सच्चा करे सच को और झूठा कर दे झूठ

बाति-ल व लौ करिहल्-मुज्रिमून (8) इज़् तस्तग़ीसू-न रब्बकुम् फ़स्तजा-ब लकुम् अन्नी मुमिद्दुकुम् बिअल्फ़िम् मिनल्-मलाइ-कति मुर्दिफ़ीन (9) व मा ज-अ़-लहुल्लाहु इल्ला बुश्रा व लितत्मइन्-न बिही क़ुलूबुकुम्, व मन्नस्रु इल्ला मिन् अ़िन्दिल्लाहि, इन्नल्ला-ह अ़ज़ीज़ुन् हकीम (10) ✿	को और अगरचे नाराज़ हों गुनाहगार। (8) जब तुम लगे फ़रियाद करने अपने रब से तो वह पहुँचा तुम्हारी फ़रियाद को कि मैं मदद को भेजूँगा तुम्हारी हज़ार फ़रिश्ते लगातार आने वाले। (9) और यह तो दी अल्लाह ने केवल ख़ुशख़बरी और ताकि मुत्मईन हो जायें इसमें तुम्हारे दिल, और मदद नहीं मगर अल्लाह की तरफ़ से, बेशक अल्लाह ज़ोरावर है हिक्मत वाला। (10) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (तुम लोग उस वक़्त को याद करो) जबकि अल्लाह तआ़ला तुमसे उन दो जमाअ़तों (यानी व्यापारी क़ाफ़िले या लश्कर) में से एक (जमाअ़त) का वायदा करते थे कि वह (जमाअ़त) तुम्हारे हाथ आ जायेगी (यानी पस्त हो जायेगी। यह वायदा मुसलमानों से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के माध्यम से वही के ज़रिये हुआ था) और तुम इस तमन्ना में थे कि हथियारों से ख़ाली जमाअ़त (यानी तिजारती क़ाफ़िला) तुम्हारे हाथ आ जाये और अल्लाह तआ़ला को यह मन्ज़ूर था कि अपने अहकाम से हक़ का हक़ होना (अ़मली तौर पर) साबित कर दे, और (यह मन्ज़ूर था कि) उन काफ़िरों की बुनियाद (और ताक़त) को काट दे। ताकि हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना (अ़मली तौर पर) साबित कर दे, अगरचे ये मुजरिम लोग (यानी पस्त होने और हारने वाले काफ़िर इसको कितना ही) ना-पसन्द करें।

(उस वक़्त को याद करो) जबकि तुम अपने रब से (अपनी संख्या और जंग के सामान की कमी और दुश्मन की अधिकता देखकर) फ़रियाद कर रहे थे। फिर उसने (यानी अल्लाह तआ़ला ने) तुम्हारी सुन ली (और वायदा फ़रमाया) कि मैं तुमको एक हज़ार फ़रिश्तों से मदद दूँगा जो सिलसिलेवार चले आएँगे। और अल्लाह तआ़ला ने यह (इमदाद) सिर्फ़ इस (हिक्मत के) लिये की कि (तुमको ग़लबा पाने की) ख़ुशख़बरी हो, और ताकि तुम्हारे दिलों को (बेचैनी से) क़रार हो जाये (यानी इनसान की तसल्ली तबई तौर पर असबाब, सामान से होती है इसलिये वह भी जमा कर दिया गया) और (हक़ीक़त में तो) मदद (और ग़लबा) सिर्फ़ अल्लाह ही की तरफ़ से है, बेशक अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त हैं, हिक्मत वाले हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में ग़ज़वा-ए-बदर का वाक़िआ़ और उसमें जो हक़ तआ़ला की तरफ़ से नुसरत

व इमदाद के मख़्सूस इनामात मुसलमानों पर हुए उनका बयान है।

पहली और दूसरी आयत में यह बयान किया गया है कि जिस वक़्त हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम को यह सूचना मिली कि क़ुरैश वालों का एक ज़बरदस्त लश्कर अपने तिजारती क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये मक्का से निकल चुका है तो अब मुसलमानों के सामने दो जमाअ़तें थीं- एक तिजारती क़ाफ़िला जिसको रिवायतों में 'अ़ीर' से ताबीर किया गया है और दूसरी यह हथियारबन्द फ़ौज जो मक्का से चली थी जिसको 'नफ़ीर' के नाम से ताबीर किया गया है। इस आयत में यह बतलाया कि उस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके माध्यम से सब मुसलमानों से यह वायदा फ़रमाया था कि इन दोनों जमाअ़तों में से किसी एक जमाअ़त पर तुम्हारा मुकम्मल क़ब्ज़ा हो जायेगा, कि उसके मुताल्लिक़ जो तुम चाहोगे कर सकोगे।

अब यह ज़ाहिर है कि तिजारती क़ाफ़िले पर क़ब्ज़ा आसान और बिना ख़तरे वाला था, और सशस्त्र फ़ौज पर मुश्किल और ख़तरों से भरा। इसलिये इस अस्पष्ट वायदे को सुनकर बहुत से सहाबा किराम की तमन्ना और इच्छा यह हुई कि वह जमाअ़त जिस पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा होने का वायदा अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हुआ है, वह ग़ैर-हथियारबन्द तिजारती क़ाफ़िला हो जाये, लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और बहुत से बड़े सहाबा का अल्लाह के इशारों से यह इरादा हुआ कि सशस्त्र फ़ौज पर क़ब्ज़ा हो तो बेहतर होगा।

इस आयत में ग़ैर-हथियारबन्द जमाअ़त पर क़ब्ज़ा चाहने वाले मुसलमानों को चेताया गया है कि तुम्हें तो अपनी सहूलत पसन्दी और ख़तरों से बचाव के पेशे नज़र यही पसन्द था कि ग़ैर-हथियारबन्द तिजारती क़ाफ़िले पर तुम्हारा क़ब्ज़ा हो जाये, मगर अल्लाह तआ़ला का इरादा यह था कि इस्लाम का असल मक़सद हासिल हो, यानी हक़ का हक़ होना वाज़ेह हो जाये और काफ़िरों की जड़ कट जाये। और ज़ाहिर है कि यह काम उसी वक़्त हो सकता था जबकि हथियारबन्द फ़ौज से मुक़ाबला और उस पर मुसलमानों का मुकम्मल क़ब्ज़ा और ग़लबा हो।

ख़ुलासा इसका मुसलमानों को इस पर तंबीह है कि तुमने जो सूरत पसन्द की वह बहुत ही पस्त-हिम्मती, आराम-तलबी, वक़्ती और हंगामी फ़ायदे की चीज़ थी और अल्लाह तआ़ला ने जो इरादा फ़रमाया वह बुलन्द-हिम्मती, बुलन्द-मक़ासिद और मुकम्मल हमेशा के फ़ायदों पर मुश्तमिल था। फिर दूसरी आयत में इसको और अधिक स्पष्ट फ़रमा दिया कि अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत से तो कोई चीज़ बाहर न थी अगर वह चाहते तो तिजारती क़ाफ़िले पर मुसलमानों का ग़लबा और क़ब्ज़ा हो जाता, मगर उसने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम की शान के लायक़ इसको समझा कि सशस्त्र फ़ौज से मुक़ाबला होकर उस पर क़ब्ज़ा हो ताकि हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना स्पष्ट हो जाये।

यहाँ यह बात ग़ौर-तलब है कि हक़ तआ़ला तो अ़लीम, ख़बीर और हर काम के आग़ाज़ व अन्जाम से बाख़बर हैं, उनकी तरफ़ से इस अस्पष्ट वायदे में क्या मस्लेहत थी कि इन दोनों जमाअ़तों में से किसी एक जमाअ़त पर मुसलमानों का ग़लबा और क़ब्ज़ा होगा। वह इनमें से

किसी एक को मुतैयन करके भी फ़रमा सकते थे कि फ़ुलाँ जमाअ़त पर क़ब्ज़ा हो जायेगा।

इस ग़ैर-स्पष्ट रखने की वजह (वैसे तो अल्लाह ही को मालूम है, फिर भी) यह मालूम होती है कि इसमें सहाबा किराम का इम्तिहान करना था कि आसान काम को पसन्द करते हैं या मुश्किल को, और उनकी अख़्लाक़ी तरबियत भी थी जिसके ज़रिये उनको बुलन्द-हिम्मती और ऊँचे मक़ासिद की जिद्दोजहद और ख़तरों से न घबराना सिखाया गया।

तीसरी और चौथी आयतों में उस वाक़िए का बयान है जो हथियारबन्द फ़ौज से मुक़ाबला ठन जाने के बाद पेश आया कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब यह देखा कि आपके साथी सिर्फ़ तीन सौ तेरह और वह भी अक्सर बना हथियार के हैं और मुक़ाबले पर तक़रीबन एक हज़ार जवानों का हथियारबन्द लश्कर है तो अल्लाह जल्ल शानुहू की बारगाह में नुसरत व इमदाद की दुआ़ के लिये हाथ उठाये। आप दुआ़ माँगते थे और सहाबा किराम आपके साथ आमीन कहते थे। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ़ के ये कलिमात नक़ल फ़रमाये हैं।

या अल्लाह! मुझसे जो वायदा आपने फ़रमाया है उसको जल्द पूरा फ़रमा दीजिये। या अल्लाह! अगर मुसलमानों की यह थोड़ी सी जमाअ़त फ़ना हो गयी तो फिर ज़मीन में कोई तेरी इबादत करने वाला बाक़ी न रहेगा (क्योंकि सारी ज़मीन कुफ़्र व शिर्क से भरी हुई है, यही चन्द मुसलमान हैं जो सही इबादत करते हैं)।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बराबर इसी तरह दिल की तड़प के साथ दुआ़ में मशग़ूल रहे यहाँ तक कि आपके कंधों से चादर भी सरक गयी। हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने आगे बढ़कर चादर उढ़ाई और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! आप ज़्यादा फ़िक्र न करें अल्लाह तआ़ला आपकी दुआ़ ज़रूर क़ुबूल फ़रमायेंगे और अपना वायदा पूरा फ़रमायेंगे।

आयत में:

اِذْ تَسْتَغِيْثُوْنَ رَبَّكُمْ

के अलफ़ाज़ से यही वाक़िआ़ मुराद है जिसके मायने यह हैं कि वह वक़्त याद रखने के क़ाबिल है जब तुम अपने रब से फ़रियाद कर रहे थे और मदद तलब कर रहे थे। यह फ़रियाद करना अगरचे दर असल रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से हुआ था मगर तमाम सहाबा आमीन कह रहे थे, इसलिये पूरी जमाअ़त की तरफ़ मन्सूब किया गया।

इसके बाद इस दुआ़ की क़ुबूलियत का बयान इस तरह फ़रमायाः

فَاسْتَجَابَ لَكُمْ اَنِّىْ مُمِدُّكُمْ بِاَلْفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُرْدِفِيْنَ٥

यानी अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी फ़रियाद सुन ली और फ़रमाया कि एक हज़ार फ़रिश्तों से तुम्हारी इमदाद करूँगा जो एक के बाद एक क़तार की सूरत में आने वाले होंगे।

फ़रिश्तों को अल्लाह तआ़ला ने जो बेनज़ीर क़ुव्वत व ताक़त अ़ता फ़रमाई है उसका अन्दाज़ा उस वाक़िए से हो सकता है जो क़ौमे लूत की ज़मीन का तख़्ता उलटने के वक़्त पेश आया कि जिब्रीले अमीन ने एक पर के ज़रिये यह तख़्ता उलट दिया। ऐसी बेमिसाल ताक़त

वाले फ़रिश्तों की इतनी बड़ी तायदाद मुक़ाबले में भेजने की ज़रूरत नहीं थी, एक भी काफ़ी था। मगर अल्लाह तआ़ला अपने बन्दों की फ़ितरत से वाक़िफ़ हैं कि वे तायदाद से भी मुतास्सिर होते हैं इसलिये मुक़ाबिल फ़रीक़ की तायदाद के मुताबिक़ फ़रिश्तों की तायदाद भेजने का वायदा फ़रमाया ताकि उनके दिल पूरी तरह मुत्मईन हो जायें।

चौथी आयत में भी यही मज़मून इरशाद फ़रमायाः

وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى وَلِتَطْمَئِنَّ بِهٖ قُلُوْبُكُمْ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने यह सिर्फ़ इसलिये किया कि तुम्हें ख़ुशख़बरी हो और ताकि तुम्हारे दिल इससे मुत्मईन हो जायें।

ग़ज़वा-ए-बदर में जो अल्लाह तआ़ला के फ़रिश्ते इमदाद के लिये भेजे गये उनकी तायदाद इस जगह एक हज़ार बयान हुई है और सूरः आले इमरान में तीन हज़ार और पाँच हज़ार ज़िक्र की गयी है। इसका सबब दर असल तीन अलग-अलग वायदे हैं जो अलग-अलग हालात में किये गये हैं। पहला वायदा एक हज़ार फ़रिश्तों का हुआ जिसका सबब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ़ और आ़म मुसलमानों की फ़रियाद थी। दूसरा वायदा जो तीन हज़ार फ़रिश्तों का सूरः आले इमरान में पहले ज़िक्र हुआ है वह उस वक़्त किया गया जब मुसलमानों को यह ख़बर मिली कि क़ुरैशी लश्कर के लिये और कुमक (मदद और सहायता) आ रही है। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में इब्ने अबी शैबा और इब्नुल-मुन्ज़िर वग़ैरह से इमाम शाबी की रिवायत से मन्क़ूल है कि मुसलमानों को बदर के दिन यह ख़बर पहुँची कि कुरज़ बिन जाबिर मुहारिबी मुश्रिकों की इमदाद के लिये कुमक लेकर आ रहा है। इस ख़बर से मुसलमानों में बेचैनी पैदा हुई। इस पर सूरः आले इमरान की आयतः

اَلَنْ يَّكْفِيَكُمْ اَنْ يُّمِدَّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُنْزَلِيْنَ○

नाज़िल हुई, जिसमें तीन हज़ार फ़रिश्ते इमदाद के लिये आसमान से नाज़िल करने का वायदा ज़िक्र किया गया।

और तीसरा वायदा पाँच हज़ार का इस शर्त के साथ बंधा था कि अगर मुख़ालिफ़ पक्ष ने एक ही बार में हमला कर दिया तो पाँच हज़ार फ़रिश्तों की मदद भेज दी जायेगी और आले इमरान की मज़कूरा आयत के बाद की आयत में इस तरह बयान हुआ है:

بَلٰٓى اِنْ تَصْبِرُوْا وَتَتَّقُوْا وَيَاْتُوْكُمْ مِّنْ فَوْرِهِمْ هٰذَا يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ اٰلٰفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُسَوِّمِيْنَ○

यानी अगर तुम साबित-क़दम (जमे) रहे और तक़वे पर क़ायम रहे और मुक़ाबिल लश्कर एक बार में तुम पर टूट पड़ा तो तुम्हारा रब तुम्हारी इमदाद पाँच हज़ार फ़रिश्तों से करेगा जो ख़ास निशान यानी ख़ास वर्दी में होंगे।

कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि इस वायदे में तीन शर्तें थीं- एक साबित-क़दमी (जमाव), दूसरे तक़्वा तीसरे मुख़ालिफ़ फ़रीक़ का एक ही बार में हमला। पहली दो शर्तें तो सहाबा किराम में मौजूद थीं और इस मैदान में अव्वल से आख़िर तक उनमें कहीं फ़र्क़ नहीं आया, मगर तीसरी शर्त एक बार में हमले (यानी अचानक और एक साथ धावा बोलने) की

हालत पेश नहीं आई इसलिये पाँच हज़ार फ़रिश्तों के लश्कर की नौबत नहीं आई।

इसलिये मामला एक हज़ार और तीन हज़ार में दायर रहा। जिसमें यह भी संभावना है कि तीन हज़ार से मुराद यह हो कि एक हज़ार जो पहले भेजे गये उनके साथ और दो हज़ार शामिल करके तीन हज़ार कर दिये गये, और यह भी हो सकता है कि ये तीन हज़ार उस पहले हज़ार के अ़लावा हों।

यहाँ यह बात भी ग़ौर करने के क़ाबिल है कि इन तीन आयतों में फ़रिश्तों की तीन जमाअ़तों के भेजने का वायदा है और हर जमाअ़त के साथ एक ख़ास सिफ़त का ज़िक्र है। सूरः अनफ़ाल की आयत जिसमें एक हज़ार का वायदा है उसमें तो उन फ़रिश्तों की सिफ़त में "मुरदिफ़ीन" फ़रमाया है जिसके मायने हैं पीछे लगाने वाले। इसमें शायद इस तरफ़ पहले ही इशारा कर दिया गया कि उन फ़रिश्तों के पीछे दूसरे भी आने वाले हैं। और सूरः आले इमरान की पहली आयत में फ़रिश्तों की सिफ़त "मुन्ज़लीन" इरशाद फ़रमाई। यानी ये फ़रिश्ते आसमान से उतारे जायेंगे। इसमें इशारा ख़ास अहमियत की तरफ़ है कि ज़मीन में जो फ़रिश्ते पहले से मौजूद हैं उनसे काम लेने के बजाय ख़ास एहतिमाम के साथ ये फ़रिश्ते आसमान से इसी काम के लिये भेजे जायेंगे, और सूरः आले इमरान की दूसरी आयत जिसमें पाँच हज़ार का ज़िक्र है उसमें फ़रिश्तों की सिफ़त 'मुसव्विमीन' इरशाद फ़रमाई है कि वे एक ख़ास लिबास और निशानी के साथ होंगे। जैसा कि हदीस की रिवायतों में है कि बदर में नाज़िल होने वाले फ़रिश्तों की पगड़ियाँ सफ़ेद और ग़ज़वा-ए-हुनैन में मदद के लिये आने वाले फ़रिश्तों की पगड़ियाँ सुर्ख़ थीं।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ. اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ○

इसमें मुसलमानों को तंबीह फ़रमा दी कि जो मदद भी कहीं से मिलती है चाहे ज़ाहिरी सूरत से हो या पोशीदा अन्दाज़ से सब अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से है, उसी के क़ब्ज़े में है, फ़रिश्तों की मदद भी उसके फ़रमान के ताबे है, इसलिये तुम्हारी नज़र सिर्फ़ उसी अकेली ज़ात की तरफ़ होनी चाहिये जिसका कोई शरीक नहीं, क्योंकि वह बड़ा क़ुदरत वाला हिक्मत वाला है।

اِذْ يُغَشِّيْكُمُ النُّعَاسَ اَمَنَةً مِّنْهُ وَ يُنَزِّلُ عَلَيْكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ مَآءً لِّيُطَهِّرَكُمْ بِهٖ
وَيُذْهِبَ عَنْكُمْ رِجْزَ الشَّيْطٰنِ وَلِيَرْبِطَ عَلٰى قُلُوْبِكُمْ وَيُثَبِّتَ بِهِ الْاَقْدَامَ ○ اِذْ يُوْحِيْ
رَبُّكَ اِلَى الْمَلٰٓئِكَةِ اَنِّيْ مَعَكُمْ فَثَبِّتُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۔ سَاُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا
الرُّعْبَ فَاضْرِبُوْا فَوْقَ الْاَعْنَاقِ وَاضْرِبُوْا مِنْهُمْ كُلَّ بَنَانٍ ○ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَآقُّوا اللّٰهَ
وَرَسُوْلَهٗ ۚ وَمَنْ يُّشَاقِقِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ○ ذٰلِكُمْ فَذُوْقُوْهُ وَ اَنَّ
لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابَ النَّارِ ○

इज़् युग़श्शीकुमुन्नुआ-स अ-म-नतम् मिन्हु व युनज़्ज़िलु अ़लैकुम् मिनस्समा-इ माअल्-लियुतह्हि-रकुम बिही व युज़्हि-ब अ़न्कुम् रिज्ज़श्-शैतानि व लियर्बि-त अ़ला क़ुलूबिकुम् व युसब्बि-त बिहिल्-अक़्दाम (11) इज़् यूही रब्बु-क इलल्-मलाइ-कति अन्नी म-अ़कुम् फ़-सब्बितुल्लज़ी-न आमनू, सउल्क़ी फ़ी क़ुलूबिल्लज़ी-न क-फ़रुर्रुअ़्-ब फ़ज़्रिबू फ़ौक़ल्-अअ़्नाक़ि वज़्रिबू मिन्हुम कुल्-ल बनान (12) ज़ालि-क बिअन्नहुम् शाक़्क़ुल्ला-ह व रसूलहू व मंय्युशाक़िक़िल्ला-ह व रसूलहू फ़-इन्नल्ला-ह शदीदुल्- अ़िक़ाब (13) ज़ालिकुम् फ़ज़ूक़ूहु व अन्-न लिल्काफ़िरी-न अ़ज़ाबन्नार (14)	जिस वक़्त कि डाल दी उसने तुम पर ऊँघ अपनी तरफ़ से सुकून व तसल्ली के वास्ते और उतारा तुम पर आसमान से पानी कि उससे तुमको पाक कर दे और दूर कर दे तुमसे शैतान की नजासत और मज़बूत कर दे तुम्हारे दिलों को और जमा दे उससे तुम्हारे क़दम। (11) जब हुक्म भेजा तेरे रब ने फ़रिश्तों को कि मैं साथ हूँ तुम्हारे सो तुम दिल जमाकर रखो मुसलमानों के, मैं डाल दूँगा दिल में काफ़िरों के दहशत, सो मारो गर्दनों पर और काटो उनकी पोर-पोर। (12) यह इस वास्ते है कि वे मुख़ालिफ़ हुए अल्लाह के और उसके रसूल के, और जो कोई मुख़ालिफ़ हुआ अल्लाह का और उसके रसूल का तो बेशक अल्लाह का अ़ज़ाब सख़्त है। (13) यह तो तुम चख लो और जान लो कि काफ़िरों के लिये है अ़ज़ाब दोज़ख़ का। (14)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(उस वक़्त को याद करो) जबकि अल्लाह तआ़ला तुम पर ऊँघ को तारी कर रहा था अपनी तरफ़ से चैन-सुकून देने के लिये, और (उससे पहले) तुम पर आसमान से पानी बरसा रहा था, ताकि उस (पानी) के ज़रिये से तुमको (बेवुज़ू या बेग़ुस्ल होने की हालत से) पाक कर दे, और (ताकि उसके ज़रिये) तुमसे शैतानी वस्वसे को दूर कर दे, और (ताकि) तुम्हारे दिलों को मज़बूत कर दे, और (ताकि) तुम्हारे पाँव जमा दे (यानी तुम रेग में न धंसो)।

(और उस वक़्त को याद करो) जबकि आपका रब (उन) फ़रिश्तों को (जो इमदाद के लिये नाज़िल हुए थे) हुक्म देता था कि मैं तुम्हारा साथी (और मददगार) हूँ, सो (मुझको मददगार समझकर) तुम ईमान वालों की हिम्मत बढ़ाओ, मैं अभी काफ़िरों के दिलों में रौब डाले देता हूँ,

सो तुम (काफ़िरों की) गर्दनों पर (हथियार) मारो और उनके पोर-पोर को मारो। यह (सज़ा) इसलिये है कि उन्होंने अल्लाह की और उसके रसूल की मुख़ालफ़त की, और जो अल्लाह और उसके रसूल की मुख़ालफ़त करता है सो अल्लाह तआ़ला (उसको) सख़्त सज़ा देते हैं (चाहे दुनिया में किसी हिक्मत से या आख़िरत में या दोनों में)। सो (फ़िलहाल) यह (सज़ा) चखो, और (जान लो कि) काफ़िरों के लिए जहन्नम का अ़ज़ाब (मुक़र्रर ही) है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः अनफ़ाल के शुरू से अल्लाह तआ़ला के उन इनामों का बयान हो रहा है जो उसके फ़रमाँबरदार बन्दों पर हुए। ग़ज़वा-ए-बदर के वाक़िआ़त भी इसी सिलसिले की कड़ियाँ हैं। ग़ज़वा-ए-बदर में जो इनामात हक़ तआ़ला की तरफ़ से अ़ता हुए उनमें से पहला इनाम तो ख़ुद उस जिहाद के लिये मुसलमानों को निकालना है जिसका बयान आयत "कमा अख़्र-ज-क" में आया है। तीसरा इनाम दुआ़ की क़ुबूलियत और मदद का वायदा पूरा करना है जिसका ज़िक्र आयत "इज़् तस्तग़ीसू-न रब्बकुम" में हुआ है। ऊपर बयान हुई आयतों में से पहली आयत में चौथे इनाम का तज़किरा है जिसमें मुसलमानों के लिये दो नेमतों का ज़िक्र है- एक सब पर नींद ग़ालिब आकर परेशानी और थकान का दूर हो जाना, दूसरे बारिश के ज़रिये उनके लिये पानी मुहैया फ़रमाना और मैदाने जंग को उनके लिये हमवार और दुश्मन के लिये दलदल बना देना।

तफ़सील इस वाक़िए की यह है कि जिस वक़्त कुफ़्र व इस्लाम का यह पहला मुक़ाबला ठन गया तो मक्का के काफ़िरों का लश्कर पहले पहुँचकर एक ऐसे मक़ाम पर पड़ाव डाल चुका था जो ऊँचाई पर था और पानी उसके क़रीब था। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम उस जगह पहुँचे तो वादी के निचले हिस्से में जगह मिली। क़ुरआने करीम ने उस मैदाने जंग का नक़्शा इसी सूरत की बयालीसवीं आयत में इस तरह खींचा है:

اِذْ اَنْتُمْ بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوٰى.

जिसका तफ़सीली बयान बाद में आयेगा।

जिस जगह पहुँचकर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शुरू में क़ियाम फ़रमाया उस मक़ाम के जानने वाले हज़रत हुबाब बिन मुन्ज़िर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने उसको जंगी एतिबार से नामुनासिब समझकर अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! जो मक़ाम (स्थान) आपने इख़्तियार फ़रमाया है यह अल्लाह तआ़ला के हुक्म से है जिसमें हमें कोई इख़्तियार नहीं या महज़ राय और मस्लेहत के पेशे-नज़र इख़्तियार फ़रमाया गया है? आपने इरशाद फ़रमाया कि नहीं, यह कोई अल्लाह का हुक्म नहीं, इसमें तब्दीली की जा सकती है। तब हज़रत हुबाब बिन मुन्ज़िर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि फिर तो बेहतर है कि इस मक़ाम से आगे बढ़कर मक्की सरदारों के लश्कर के क़रीब एक पानी का मक़ाम है उस पर क़ब्ज़ा किया जाये, वहाँ हमें पानी अधिकता और फ़रावानी के साथ मिल जायेगा।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनका मश्विरा क़ुबूल फ़रमाया और वहाँ जाकर पानी पर कब्ज़ा किया। एक हौज़ पानी के लिये बनाकर उसमें पानी का ज़ख़ीरा जमा फ़रमाया।

इससे मुत्मईन होने के बाद हज़रत सअ़द बिन मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हमें ख़्याल यह है कि हम आपके लिये एक सायबान (सायेदार जगह यानी ख़ेमा) किसी महफ़ूज़ जगह में बना दें जहाँ आप मुक़ीम रहें और आपकी सवारियाँ भी आपके पास रहें।

मन्शा इसका यह है कि हम दुश्मन के मुक़ाबले में जिहाद करेंगे, अल्लाह तआ़ला ने हमें फ़तह नसीब फ़रमाई तो यही मकसद है, और अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता कोई दूसरी सूरत हो तो आप अपनी सवारी पर सवार होकर उन सहाबा किराम के साथ जा मिलें जो मदीना तय्यिबा में रह गये हैं, क्योंकि मेरा गुमान यह है कि वे लोग भी आप पर जान न्यौछावर करने और आप से मुहब्बत करने में हमसे कम नहीं, और अगर उनको आपके निकलने के वक़्त यह ख़्याल होता कि आपका इस हथियारबन्द लश्कर से मुक़ाबला होगा तो उनमें से कोई भी पीछे न रहता। आप मदीना में पहुँच जायेंगे तो वे आपके साथी और जाँनिसार बनकर रहेंगे। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी इस बहादुराना पेशकश पर दुआ़यें दीं और एक मुख़्तसर सा सायबान आपके लिये बना दिया गया जिसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के सिवा कोई न था। हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु दरवाज़े पर हिफ़ाज़त के लिये तलवार लिये खड़े थे।

मुक़ाबले और जंग की पहली रात थी। तीन सौ तेरह बेसामान लोगों का मुक़ाबला अपने से तीन गुनी तायदाद यानी एक हज़ार हथियारबन्द फ़ौज से था। मैदाने जंग का भी अच्छा मक़ाम उनके क़ब्ज़े में आ चुका था। निचला हिस्सा वह भी सख़्त रेतीला जिसमें चलना दुश्वार मुसलमानों के हाथ आया था। तबई परेशानी और फ़िक्र सब को थी। कुछ लोगों के दिल में शैतान ने ये वस्वसे (बुरे ख़्याल) भी डालने शुरू किये कि तुम लोग अपने आपको हक़ पर कहते हो और इस वक़्त भी बजाय आराम करने के नमाज़े तहज्जुद वग़ैरह में मशग़ूल हो, मगर हाल यह है कि दुश्मन हर हैसियत से तुम पर ग़ालिब और तुमसे बढ़ा हुआ है। इन हालात में अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों पर एक ख़ास क़िस्म की नींद मुसल्लत फ़रमा दी जिसने हर मुसलमान को चाहे उसका इरादा सोने का था या नहीं, जबरन सुला दिया।

हाफ़िज़े हदीस अबू यअ़ला ने नक़ल किया है कि हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ग़ज़वा-ए-बदर की इस रात में हममें से कोई बाक़ी नहीं रहा जो सो न गया हो, सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तमाम रात जागकर सुबह तक नमाज़े तहज्जुद में मशग़ूल रहे।

और इमाम इब्ने कसीर ने सही हवाले से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उस रात में जबकि अपने सायबान में नमाज़े तहज्जुद में मशग़ूल थे आपको भी किसी क़द्र ऊँघ आ गयी, मगर फ़ौरन ही हंसते हुए बेदार होकर फ़रमाया- ऐ अबू बक्र! ख़ुशख़बरी सुनो। यह जिब्रील अ़लैहिस्सलाम टीले के क़रीब खड़े हैं और यह कहकर आप सायबान से बाहर

यह आयत पढ़ते हुए तशरीफ़ ले गयेः

سَيُهْزَمُ الْجَمْعُ وَيُوَلُّوْنَ الدُّبُرَ.

यानी बहुत जल्द दुश्मन की जमाअ़त हार जायेगी और पीठ फेरकर भागेगी।

कुछ रिवायतों में है कि आपने बाहर निकल कर विभिन्न जगहों की तरफ़ इशारा करके फ़रमाया कि यह अबू जहल के क़त्ल होने की जगह है, यह फ़ुलाँ की, यह फ़ुलाँ की। और फिर ठीक उसी तरह वाक़िआ़त पेश आये। (तफ़सीरे मज़हरी)

और जैसे ग़ज़वा-ए-बदर में थकान और परेशानी दूर करने के लिये अल्लाह तआ़ला ने तमाम सहाबा किराम पर ख़ास क़िस्म की नींद मुसल्लत फ़रमाई इसी तरह ग़ज़वा-ए-उहुद में भी इसी तरह का वाक़िआ़ हुआ।

सुफ़ियान सौरी रह. ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जंग की हालत में नींद अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से अमन व इत्मीनान की निशानी होती है, और नमाज़ में नींद शैतान की तरफ़ से होती है। (इब्ने कसीर)

दूसरी नेमत मुसलमानों को इस रात में यह मिली कि बारिश हो गयी जिसने मैदाने जंग का नक़्शा बिल्कुल पलट दिया। क़ुरैशी लोगों ने जिस जगह पर क़ब्ज़ा किया था वहाँ तो बारिश बहुत तेज़ आई और मैदान में दलदल होकर चलना मुश्किल हो गया। और जिस जगह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम मुक़ीम थे यहाँ रेत की वजह से चलना मुश्किल था, यहाँ बारिश हल्की हुई जिसने तमाम रेत को जमाकर मैदान को निहायत हमवार ख़ुशगवार बना दिया।

उक्त आयत में इन्हीं दो नेमतों का ज़िक्र है नींद और बारिश जिसने मैदाने जंग का नक़्शा पलटकर वो शैतानी ख़्यालात और दिल में डाली हुई शंकायें धो डालीं जो कुछ कमज़ोर लोगों को सता रहे थे कि हम हक़ पर होने के बावजूद दबे हुए, परेशानियों में घिरे और मग़लूब नज़र आते हैं, और दुश्मन बातिल (ग़ैर-हक़) पर होने के बावजूद क़ुव्वत व शौकत और इत्मीनान की हालत में है।

ज़िक्र हुई आयत में फ़रमाया कि उस वक़्त को याद करो जबकि अल्लाह तआ़ला तुम पर ऊँघ तारी कर रहा था चैन देने के लिये, और तुम पर पानी बरसा रहा था ताकि उस पानी से तुमको पाक कर दे। और तुम से शैतानी वस्वसे (बुरे ख़्याल) को दूर कर दे, और तुम्हारे दिलों को मज़बूत कर दे और तुम्हारे पाँव जमा दे।

दूसरी आयत में पाँचवें इनाम का ज़िक्र है जो इस ग़ज़वा-ए-बदर के मैदाने जंग में मुसलमानों पर हुआ। वह यह कि अल्लाह तआ़ला ने जो फ़रिश्ते मुसलमानों की इमदाद के लिये भेजे थे उनको ख़िताब करके फ़रमाया कि मैं तुम्हारे साथ हूँ तुम ईमान वालों की हिम्मत बढ़ाओ मैं अभी काफ़िरों के दिलों में रौब डाले देता हूँ। सो तुम काफ़िरों की गर्दनों पर हरबा मारो और उनके पोर-पोर को मारो।

इसमें फ़रिश्तों को दो काम सुपुर्द किये गये एक यह कि मुसलमानों की हिम्मत बढ़ायें। यह

इस तरह भी हो सकता है कि फ़रिश्ते मैदान में आकर उनकी जमाअत को बढ़ायें और उनके साथ मिलकर जंग में हिस्सा लें, और इस तरह भी कि अपने अ़मल-दख़ल से मुसलमानों के दिलों को मज़बूत कर दें और उनमें क़ुव्वत पैदा कर दें। दूसरा काम यह भी उनके सुपुर्द हुआ कि फ़रिश्ते ख़ुद भी जंग में हिस्सा लें और काफ़िरों पर हमलावर हों। इस आयत से ज़ाहिर यही है कि फ़रिश्तों ने दोनों काम अन्जाम दिये, मुसलमानों के दिलों में असर डाल करके हिम्मत व क़ुव्वत भी बढ़ाई और जंग में भी हिस्सा लिया। और इसकी ताईद हदीस की चन्द रिवायतों से भी होती है जो तफ़सीर दुर्रे मन्सूर और तफ़सीरे मज़हरी में तफ़सील के साथ बयान की गयी हैं और फ़रिश्तों के जंग में हिस्सा लेने की आँखों देखी शहादतें सहाबा किराम से नक़ल की हैं।

तीसरी आयत में यह इरशाद फ़रमाया कि इस कुफ़्र व इस्लाम के मुक़ाबले और जंग में जो कुछ हुआ उसका सबब यह था कि उन काफ़िरों ने अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त की और जो अल्लाह व रसूल की मुख़ालफ़त करता है उसके लिये अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब शदीद और सख़्त हुआ करता है। इससे मालूम हुआ कि ग़ज़्वा-ए-बदर में एक तरफ़ तो मुसलमानों पर इनामात नाज़िल हुए, फ़तह व नुसरत उनको हासिल हुई, दूसरी तरफ़ काफ़िरों पर मुसलमानों के हाथों से अ़ज़ाब नाज़िल फ़रमाकर उनके बुरे आमाल और ग़लत हरकतों की थोड़ी सी सज़ा दे दी गयी। और इससे ज़्यादा भारी सज़ा आख़िरत में होने वाली है जिसको चौथी आयत में बयान फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ فَذُوْقُوْهُ وَاَنَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابَ النَّارِ٥

यानी यह हमारा थोड़ा सा अ़ज़ाब है इसको चखो और समझ लो कि इसके बाद काफ़िरों के लिये जहन्नम का अ़ज़ाब आने वाला है जो बहुत ही सख़्त, लम्बा और नाक़ाबिले गुमान है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِذَا لَقِيْتُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا زَحْفًا فَلَا
تُوَلُّوْهُمُ الْاَدْبَارَ ۚ﴿۱۵﴾ وَمَنْ يُّوَلِّهِمْ يَوْمَئِذٍ دُبُرَهٗۤ اِلَّا مُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ اَوْ مُتَحَيِّزًا اِلٰى فِئَةٍ
فَقَدْ بَآءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰىهُ جَهَنَّمُ ؕ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ﴿۱۶﴾ فَلَمْ تَقْتُلُوْهُمْ وَلٰكِنَّ
اللّٰهَ قَتَلَهُمْ ۪ وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى ۚ وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِيْنَ مِنْهُ بَلَآءً حَسَنًا ؕ اِنَّ
اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿۱۷﴾ ذٰلِكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ مُوْهِنُ كَيْدِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۱۸﴾ اِنْ تَسْتَفْتِحُوْا فَقَدْ جَآءَكُمُ
الْفَتْحُ ۚ وَاِنْ تَنْتَهُوْا فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَعُوْدُوْا نَعُدْ ۚ وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ فِئَتُكُمْ شَيْئًا وَّلَوْ
كَثُرَتْ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿۱۹﴾ ع ٢ ٩ ١٢

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इज़ा लक़ीतुमुल्लज़ी-न क-फ़रू ज़ह्फ़न्	ऐ ईमान वालो! जब भिड़ो तुम काफ़िरों से मैदाने जंग में तो मत फेरो उनसे

फ़ला तुवल्लूहुमुल्-अद्बार (15) व मंय्युवल्लिहिम् यौमइज़िन् दुबु-रहू इल्ला मु-तहर्रिफ़ल् लिक़ितालिन् औ मु-तहय्यिज़न् इला फ़ि-अतिन् फ़-क़द् बा-अ बि-ग़-ज़बिम् मिनल्लाहि व मअ्वाहु जहन्नमु, व बिअ्सल्-मसीर (16) फ़-लम् तक़्तुलूहुम् व लाकिन्नल्ला-ह क़-त-लहुम् व मा रमै-त इज़् रमै-त व लाकिन्नल्ला-ह रमा व लियुब्लियल्-मुअ्मिनी-न मिन्हु बलाअन् ह-सनन्, इन्नल्ला-ह समीअुन् अ़लीम (17) ज़ालिकुम् व अन्नल्ला-ह मूहिनु कैदिल्-काफ़िरीन (18) इन् तस्तफ़्तिहू फ़-क़द् जा-अकुमुल्-फ़त्हु व इन् तन्तहू फ़हु-व ख़ैरुल्लकुम् व इन् तअूदू नअुद् व लन् तुग़्नि-य अ़न्कुम् फ़ि-अतुकुम् शैअंव्-व व लौ कसुरत् व अन्नल्ला-ह मअ़ल्-मुअ्मिनीन (19) ✿	पीठ। (15) और जो कोई उनसे फेरे पीठ उस दिन मगर यह कि हुनर करता हो लड़ाई का, या जा मिलता हो फ़ौज में, सो वह फिरा अल्लाह का ग़ज़ब लेकर और उसका ठिकाना दोज़ख़ है, और वह क्या बुरा ठिकाना है। (16) सो तुमने उनको नहीं मारा लेकिन अल्लाह ने उनको मारा, और तूने नहीं फेंकी मुट्ठी ख़ाक की जिस वक़्त कि फेंकी थी लेकिन अल्लाह ने फेंकी, और ताकि करे ईमान वालों पर अपनी तरफ़ से ख़ूब एहसान, बेशक अल्लाह है सुनने वाला जानने वाला। (17) यह तो हो चुका और जान लो कि अल्लाह सुस्त कर देगा तदबीर काफ़िरों की। (18) अगर तुम चाहते हो फ़ैसला तो पहुँच चुका तुम्हारे पास फ़ैसला, और अगर बाज़ आओ तो तुम्हारे लिये बेहतर है, और अगर यही करोगे तो हम भी फिर यही करेंगे, और कुछ काम न आयेगा तुम्हारे तुम्हारा जत्था अगरचे बहुत हों, और जान लो कि अल्लाह ईमान वालों के साथ है। (19) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! जब तुम (जिहाद में) काफ़िरों से आमने-सामने हो जाओ तो उनसे पुश्त मत फेरना (यानी जिहाद से मत भागना)। और जो शख़्स उनसे उस मौक़े पर (यानी मुक़ाबले के वक़्त) पुश्त फेरेगा, मगर हाँ जो लड़ाई के लिये पैंतरा बदलता हो या जो अपनी जमाअ़त की तरफ़ पनाह लेने आता हो (वह इससे अलग है, बाक़ी और जो ऐसा करेगा) तो वह अल्लाह तआ़ला के ग़ज़ब में आ जायेगा और उसका ठिकाना दोज़ख़ होगा और वह बहुत ही बुरी जगह

है। ('फ़लम् तक़्तुलूहुम.............' के अन्दर भी एक क़िस्से की तरफ़ इशारा है वह यह कि आपने बदर के दिन एक मुट्ठी कंकरियों की उठाकर काफ़िरों की तरफ़ फेंकी जिसके टुकड़े सब की आँखों में जा गिरे और उनको शिकस्त हुई, और फ़रिश्तों का इमदाद के लिये आना ऊपर आ चुका है, इन्हीं चीज़ों को बयान करते हुए फ़रमाते हैं कि जब ऐसे अजीब वाक़िआत हुए जो कि बिल्कुल तुम्हारे इख़्तियार से बाहर हैं) सो (इससे मालूम हुआ कि वास्तविकता के एतिबार से) तुमने उन (काफ़िरों) को क़त्ल नहीं किया, लेकिन (हाँ वास्तव में) अल्लाह तआ़ला ने (बेशक) उनको क़त्ल किया, (यानी असल असर करने वाली उसकी क़ुदरत है) और (इसी तरह असर करने के लिये वास्तविक तौर पर) आपने ख़ाक की मुट्ठी (उनकी तरफ़) नहीं फेंकी जिस वक़्त आपने वह फेंकी थी, लेकिन (हाँ उसको प्रभावी करने में) अल्लाह ने (वाक़ई) वह फेंकी, और (बावजूद इसके असल असर करने वाली चीज़ अल्लाह की क़ुदरत है, फिर जो क़त्ल वग़ैरह के आसार को बन्दे की क़ुदरत के साथ जोड़ दिया तो इसमें हिक्मत यह है कि) ताकि मुसलमानों को अपनी तरफ़ से (उनके अ़मल का) उनकी मेहनत का ख़ूब बदला दे (और अज्र का मिलना अल्लाह की आ़दत और क़ानून के मुताबिक़ इस पर निर्भर है कि काम उनके इरादे व इख़्तियार से सादिर हो) बेशक अल्लाह तआ़ला (उन मोमिनों की बातों के) ख़ूब सुनने वाले (और उनके कामों व हालात के) ख़ूब जानने वाले हैं।

(इन फ़रियाद के अक़वाल और जंग व परेशानी और चिंता के हालात वग़ैरह में जो उनको मेहनत व मशक़्क़त पेश आई हमको उसकी इत्तिला है, उनको उस पर बदला देंगे) एक बात तो यह हुई और दूसरी बात यह है कि अल्लाह तआ़ला को काफ़िरों की तदबीर को कमज़ोर करना था (और ज़्यादा कमज़ोरी उस वक़्त ज़ाहिर होती है जब अपने बराबर वाले के बल्कि अपने से कमज़ोर के हाथ से पराजित हो जाये और यह भी निर्भर है इस पर कि वह आसार "निशानियाँ और हालात" मोमिनों के हाथ से ज़ाहिर हों, वरना कह सकते थे कि तदबीरें तो हमारी मज़बूत थीं लेकिन अल्लाह की तदबीर के सामने न चल सकीं चूँकि वह हमसे ज़्यादा मज़बूत और ताक़तवर है, तो इससे आईन्दा के लिये मुसलमानों के मुक़ाबले में उनका हौसला पस्त न हो क्योंकि उनको तो कमज़ोर ही समझते) अगर तुम लोग फ़ैसला चाहते हो तो वह फ़ैसला तुम्हारे सामने आ मौजूद हुआ (कि जो हक़ पर था उसका ग़लबा हो गया) और अगर (अब हक़ ज़्यादा स्पष्ट होने के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त से) बाज़ आ जाओ तो यह तुम्हारे लिये बहुत ही अच्छा है, और अगर (अब भी बाज़ न आये बल्कि) तुम फिर वही काम करोगे (यानी मुख़ालफ़त) तो हम भी फिर यही काम करेंगे (यानी तुमको मग़लूब और मुसलमानों को ग़ालिब कर देना) और (अगर तुमको अपनी भारी संख्या और संगठन का घमण्ड हो कि अब की बार इससे ज़्यादा अफ़राद जमा कर लेंगे तो याद रखो कि) तुम्हारी भारी संख्या "यानी जमाअ़त व संगठन" तुम्हारे ज़रा भी काम न आयेगी, अगरचे कितनी ही ज़्यादा हो, और वाक़ई बात यह है कि अल्लाह तआ़ला (असल में) ईमान वालों के साथ (यानी उनका मददगार) है (चाहे किसी वक़्ती सबब की वजह से किसी वक़्त उनके ग़लबे का ज़हूर न हो लेकिन असल

ग़लबे के पात्र यही हैं इसलिये इनसे मुक़ाबला करना अपना नुक़सान करना है)।

मआरिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में से पहली दो आयतों में इस्लाम का एक जंगी क़ानून बतलाया गया है। पहली आयत में लफ़्ज़ 'ज़ोह्फ़' से मुराद दोनों लश्करों का मुक़ाबला और मुठभेड़ है। मायने यह हैं कि ऐसी जंग छिड़ जाने के बाद पुश्त फेरना और मैदान से भागना मुसलमानों के लिये जायज़ नहीं।

दूसरी आयत में इस हुक्म से एक हालत को अलग रखने का ज़िक्र और नाजायज़ तौर पर भागने वालों के लिये सख़्त अ़ज़ाब का बयान है।

दो हालतों को इस हुक्म से बाहर रखा गया है:

إِلَّا مُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ أَوْ مُتَحَيِّزًا إِلَىٰ فِئَةٍ

यानी जंग के वक़्त पीठ फेरना सिर्फ़ दो हालतों में जायज़ है- एक तो यह कि मैदान से पीठ फेरना महज़ एक जंगी चाल के तौर पर दुश्मन को दिखलाने के लिये हो, हक़ीक़त में मैदान से हटना मक़सद न हो बल्कि मुख़ालिफ़ को एक ग़फ़लत और धोखे में डालकर एक ही बार में अचानक हमला मक़सद हो। यह मायने हैं ''इल्ला मु-तहर्रिफ़ल् लिक़ितालिन्'' के, क्योंकि 'तहर्रुफ़' के मायने किसी एक ओर माईल होने के आते हैं। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

दूसरी हालत इस हुक्म से बाहर जिसमें मैदान से पीठ फेरने की इजाज़त है यह है कि अपने मौजूदा लश्कर की कमज़ोरी का एहसास करके इसलिये पीछे हटें कि मुजाहिदीन की अतिरिक्त मदद हासिल करके फिर हमलावर हों ''औ मु-तहय्यिज़न् इला फ़ि-अतिन्'' के यही मायने हैं। क्योंकि 'तहय्युज़' के लफ़्ज़ी मायने विलय और मिलने के हैं, और फ़ि-अतिन् के मायने जमाअ़त के। मतलब यह है कि अपनी जमाअ़त से मिलकर क़ुव्वत हासिल करने और फिर हमला करने की नीयत से मैदान छोड़े तो यह जायज़ है।

हुक्म से बाहर की ये हालतें ज़िक्र करने के बाद उन लोगों की सज़ा का ज़िक्र है जिन्होंने इन गुंजाईश वाली हालतों के बग़ैर नाजायज़ तौर पर मैदान छोड़ा या पुश्त मोड़ी। इरशाद है:

فَقَدْ بَآءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ وَمَأْوٰهُ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ۝

यानी मैदान से भागने वाले अल्लाह तआ़ला का ग़ज़ब लेकर लौटे और उनका ठिकाना जहन्नम है, और वह बुरा ठिकाना है।

इन दोनों आयतों से यह हुक्म मालूम हुआ कि मुक़ाबिल पक्ष कितनी ही ज़्यादा तायदाद और ताक़त व शौकत में हो मुसलमानों को उनके मुक़ाबले से पीठ फेरना हराम है सिवाय दो अलग रखी गयी सूरतों के। यह कि पुश्त फेरना भागने के लिये न हो बल्कि या तो पैंतरा बदलने के तौर पर हो और या मदद हासिल करके दोबारा हमला करने के इरादे से हो।

ग़ज़वा-ए-बदर में ये आयतें नाज़िल हुईं उस वक़्त यह हुक्म आ़म था कि चाहे कितनी ही

बड़ी तायदाद से मुक़ाबला हो जाये और अपनी संख्या से उनकी कोई तुलना न हो फिर भी पीठ फेरना और मैदान छोड़ना जायज़ नहीं। बदर के मैदान में यही सूरत थी कि तीन सौ तेरह का मुक़ाबला तीन गुनी तायदाद यानी एक हज़ार से हो रहा था। बाद में अहकाम में कमी व रियायत सूरः अनफ़ाल की आयत 65 और 66 में नाज़िल हुई। आयत 65 में बीस मुसलमानों को दो सौ काफ़िरों के और सौ मुसलमानों को एक हज़ार काफ़िरों के मुक़ाबले में जिहाद करने का हुक्म है, और आयत 66 में और कमी का यह क़ानून नाज़िल हो गया:

اَلْاٰنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيْكُمْ ضَعْفًا. فَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ صَابِرَةٌ يَّغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ........ الاٰية.

यानी अब अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिये आसानी कर दी और तुम्हारी कमज़ोरी को सामने रखते हुए यह क़ानून जारी कर दिया कि अगर मुसलमान सौ आदमी साबित-क़दम हों तो दो सौ काफ़िरों पर ग़ालिब आ सकेंगे। इसमें इशारा कर दिया कि अपने से दोगुनी तायदाद तक तो मुसलमानों ही के ग़ालिब रहने की उम्मीद है इसलिये पीठ फेरना जायज़ नहीं। हाँ मुख़ालिफ़ पक्ष की तायदाद दोगुनी से भी ज़्यादा हो जाये तो ऐसी हालत में मैदान छोड़ देना जायज़ है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जो शख़्स अकेला तीन आदमियों के मुक़ाबले से भागा वह भागा नहीं, हाँ जो दो आदमियों के मुक़ाबले से भागा वह भागने वाला है, यानी गुनाहे कबीरा का मुजरिम है। (रूहुल-बयान)। अब यही हुक्म क़ियामत तक बाक़ी है। उम्मत की अक्सरियत और चारों इमामों के नज़दीक शरई हुक्म यही है कि जब तक मुख़ालिफ़ पक्ष की तायदाद दोगुनी से ज़ायद न हो उस वक़्त तक मैदाने जंग से भागना हराम और गुनाहे कबीरा (बड़ा गुनाह) है।

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सात कामों को इनसान के लिये तबाहकुन फ़रमाया है, उनमें मैदाने जंग से भागना भी शुमार फ़रमाया, और हुनैन की लड़ाई के वाक़िए में सहाबा किराम के शुरूआ़ती क़दम पीछे हटाने को क़ुरआने करीम ने एक शैतानी चूक क़रार दिया जो उसके बड़ा गुनाह होने की दलील है। इरशाद फ़रमायाः

اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطٰنُ.

और तिर्मिज़ी व अबू दाऊद की एक रिवायत में जो क़िस्सा हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मन्क़ूल है कि एक मर्तबा जंग से भागकर उन्होंने मदीना में पनाह ली और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपने जुर्म का इक़रार किया कि हम मैदाने जंग से भागने वाले मुजरिम हो गये, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बजाय नाराज़गी के इज़हार के उनको तसल्ली दी और फ़रमायाः

بل انتم العكّارون وانا فئتكم.

यानी तुम भागने वाले नहीं बल्कि मदद और ताक़त हासिल करके दोबारा हमला करने वाले हो और मैं तुम्हारे लिये ताक़त व मदद हूँ। इसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस

हक़ीक़त को वाज़ेह फ़रमा दिया कि उन लोगों का भागकर मदीना में पनाह लेना उस हालत के अन्दर दाख़िल है जिसमें मदद हासिल करने के लिये मैदान छोड़ने की इजाज़त दी गयी है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हक़ तआ़ला के ख़ौफ़ और हैबत व अ़ज़मत का जो मक़ाम ख़ास हासिल था उसकी बिना पर वह इस ज़ाहिरी तौर पर पीछे हटने से भी घबराये और अपने आपको मुजरिम की हैसियत में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पेश कर दिया।

तीसरी आयत में ग़ज़वा-ए-बदर के बाक़ी वाक़िए का बयान करने के साथ मुसलमानों को इसकी हिदायत की गयी है कि ग़ज़वा-ए-बदर की चमत्कारिक फ़तह में कसरत के क़िल्लत से और ताक़त के कमज़ोरी से मग़लूब हो जाने को अपनी कोशिश व अ़मल का नतीजा न समझो बल्कि उस पाक ज़ात की तरफ़ देखो जिसकी नुसरत व इमदाद ने यह जंग का नक़्शा पलट दिया।

जो वाक़िआ़ इस आयत में बयान हुआ उसकी तफ़सील इब्ने जरीर तबरी और इमाम बैहक़ी वग़ैरह ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास वग़ैरह से यह नक़ल की है कि बदर की जंग के दिन जब मक्का के एक हज़ार जवानों का लश्कर टीले के पीछे से मैदान में आया तो मुसलमानों की कम संख्या व कमज़ोरी और अपनी अधिकता व ताक़त पर फ़ख़्र करता हुआ घमण्डी अन्दाज़ से सामने आया। उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दुआ़ की कि या अल्लाह! ये तेरे झुठलाने वाले क़ुरैश इतराते व तकब्बुर करते हुए आ रहे हैं, आपने जो फ़तह का वायदा मुझसे फ़रमाया है उसको जल्द पूरा फ़रमा। (तफ़सीर रूहुल-बयान) तो जिब्रीले अमीन नाज़िल हुए और अ़र्ज़ किया कि आप एक ख़ाक की मुट्ठी लेकर दुश्मन के लश्कर की तरफ़ फेंक दें। आपने ऐसा ही किया। और इब्ने अबी हातिम ने हज़रत इब्ने ज़ैद की रिवायत से नक़ल किया है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तीन मर्तबा मिट्टी और कंकरों की मुट्ठी भरी, एक लश्कर के दाहिने हिस्से पर दूसरी बायें हिस्से पर तीसरी सामने की तरफ़ फेंक दी। जिसका नतीजा यह हुआ कि उस एक या तीन मुट्ठी भर कंकरियों को क़ुदरत ने चमत्कारी अन्दाज़ में इस तरह फैला दिया कि मुख़ालिफ़ लश्कर का कोई आदमी बाक़ी न रहा जिसकी आँखों में और चेहरों पर यह धूल और कंकरियाँ न पहुँची हों। जिसका असर यह हुआ कि पूरे लश्कर में भगदड़ मच गयी और मुसलमानों ने उनका पीछा किया, फ़रिश्ते अलग उनके साथ जंग में शरीक थे।

(तफ़सीरे मज़हरी, रूहुल-मआ़नी)

आख़िरकार कुछ लोग मुख़ालिफ़ पक्ष के क़त्ल हो गये, कुछ गिरफ़्तार कर लिये गये, बाक़ी भाग गये और मैदान मुसलमानों के हाथ आ गया।

बिल्कुल मायूसी और नाउम्मीदी की हालत में यह ज़बरदस्त फ़तह मुसलमानों को हासिल हुई। मैदाने जंग से वापस आकर आपस में गुफ़्तगूएँ शुरू हुईं। सहाबा किराम अपने-अपने कारनामे एक दूसरे से बयान करने लगे, इस पर यह आयत नाज़िल हुई:

فَلَمْ تَقْتُلُوْهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ قَتَلَهُمْ.

जिसमें उनको यह हिदायत दी गयी कि अपनी कोशिश व अ़मल पर नाज़ न करो, यह जो कुछ हुआ वह सिर्फ़ तुम्हारी मेहनत व कोशिश का नतीजा नहीं बल्कि हक़ तआ़ला की ख़ालिस नुसरत व इमदाद का फल था। जो दुश्मन तुम्हारे हाथों क़त्ल हुए उनको दर हक़ीक़त तुमने क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह तआ़ला ने क़त्ल किया है।

इसी तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके इरशाद हुआः

وَمَا رَمَيْتَ إِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى.

यानी यह मुट्ठी कंकरियों की जो आपने फेंकी वह दर हक़ीक़त आपने नहीं फेंकी बल्कि अल्लाह तआ़ला ने फेंकी है। मतलब यह है कि फेंकने का यह नतीजा कि दुश्मन की फ़ौज के हर फ़र्द की आँखों में पहुँचकर सब को हैरान व परेशान कर दे यह आपके फेंकने का असर नहीं था बल्कि हक़ तआ़ला ने अपनी कामिल क़ुदरत से यह सूरत पैदा फ़रमाई।

ग़ौर किया जाये तो मुसलमानों के लिये जिहाद की फ़तह व कामयाबी से ज़्यादा क़ीमती यह हिदायत थी जिसने उनके ज़ेहनों को असबाब से फेरकर असबाब के पैदा करने वाले से जोड़ दिया और उसके ज़रिये उस फ़ख़्र व नाज़ करने की ख़राबी से बचा लिया जिसके नशे में उमूमन विजयी क़ौमें मुब्तला हो जाया करती हैं। और उसके बाद यह बतलाया कि हार जीत हमारे हुक्म के ताबे हैं, और हमारी फ़तह व मदद उन लोगों के साथ होती है जो नेक होंः

وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِيْنَ مِنْهُ بَلَآءً حَسَنًا.

यानी यह ज़बरदस्त और बड़ी फ़तह हमने इसलिये दी कि मोमिनों को उनकी मेहनत का पूरा सिला दे दे। 'बला' के लफ़्ज़ी मायने इम्तिहान के हैं और अल्लाह तआ़ला का इम्तिहान कभी मुसीबत व मशक़्क़त में मुब्तला करके होता है और कभी राहत व दौलत देकर। "बला-ए-हसन" उस इम्तिहान को कहा गया है जो राहत, दौलत और फ़तह व मदद देकर लिया जाता है कि ये लोग इसको हमारा इनाम समझकर शुक्रगुज़ार होते हैं या उसको अपनी ज़ाती क़ाबलियत का असर समझकर फ़ख़्र व घमण्ड में मुब्तला हो जाते और अपने अ़मल को बरबाद कर देते हैं, क्योंकि अल्लाह तआ़ला की बारगाह में किसी के फ़ख़्र व घमण्ड की कोई गुंजाईश नहीं है। बक़ौल मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहिः

फ़हम व ख़ातिर तेज़ करदन् नेस्त राह
जुज़् शिकस्ता मी नगीरद् फ़ज़्ले शाह

यानी अ़क़्ल व होश और समझदारी के बढ़ा लेने ही से इस रास्ते की कामयाबी हासिल नहीं होती, बल्कि आ़जिज़ी व इन्किसारी इख़्तियार करने वाला ही अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम को हासिल कर पाता है। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

चौथी आयत में इसके मुक़ाबले में इस फ़तह का एक और फ़ायदा भी बतलाया गया किः

ذٰلِكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ مُوْهِنُ كَيْدِ الْكٰفِرِيْنَ.

यानी यह फ़तह व मदद इसलिये भी मुसलमानों को दी गयी कि इसके ज़रिये काफ़िरों की

तदबीरों को नाकाम और नाकारा बना दिया जाये। जिससे वे समझ लें कि अल्लाह तआ़ला की मदद हमारे साथ नहीं। और कोई तदबीर बग़ैर अल्लाह तआ़ला की मदद के कामयाब नहीं हो सकती।

पाँचवीं आयत में शिकस्त खाये हुए क़ुरैशी काफ़िरों को ख़िताब और एक वाक़िए की तरफ़ इशारा है जो क़ुरैशी लश्कर के मुसलमानों के मुक़ाबले पर मक्का से निकलने के वक़्त पेश आया था। वह यह कि जब क़ुरैशी काफ़िरों का लश्कर मुसलमानों के मुक़ाबले के लिये तैयार हो गया तो मक्का से निकलने से पहले लश्कर के सरदार अबू जहल वग़ैरह ने बैतुल्लाह का पर्दा पकड़कर दुआ़यें माँगी थीं, और अ़जीब बात यह है कि इस दुआ़ में उन्होंने अपनी फ़तह की दुआ़ करने के बजाय आम अलफ़ाज़ में इस तरह दुआ़ माँगी:

> या अल्लाह! दोनों लश्करों में से जो बेहतर व अच्छा है और दोनों जमाअ़तों में से जो ज़्यादा हिदायत पर है और दोनों पार्टियों में से जो ज़्यादा करीम व शरीफ़ है और दोनों में से जो दीन अफ़ज़ल है उसको फ़तह दीजिये। (तफ़सीरे मज़हरी)

ये बेवक़ूफ़ तो यूँ समझ रहे थे कि मुसलमानों के मुक़ाबले में हम ही बेहतर व अफ़ज़ल और ज़्यादा हिदायत पर हैं, इसलिये यह दुआ़ हमारे हक़ में है, और इस दुआ़ के ज़रिये वे यह चाहते थे कि ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से हक़ व बातिल का फ़ैसला हो जाये। और जब हम फ़तह पायें तो यह गोया अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हमारे हक़ पर होने का फ़ैसला होगा।

मगर उनको यह ख़बर न थी कि इस दुआ़ में दर हक़ीक़त वे अपने लिये बद्दुआ़ और मुसलमानों के लिये दुआ़ कर रहे हैं। जंग का अन्जाम सामने आने के बाद क़ुरआने करीम ने उनको बतलायाः

إِنْ تَسْتَفْتِحُوا فَقَدْ جَاءَكُمُ الْفَتْحُ.

यानी अगर तुम ख़ुदाई फ़ैसला चाहते हो तो वह सामने आ चुका कि हक़ को फ़तह और बातिल को शिकस्त हो गयीः

وَإِنْ تَنْتَهُوا فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ.

और अगर तुम अब भी अपने कुफ़्र व दुश्मनी से बाज़ आ गये तो यह तुम्हारे लिये बेहतर हैः

وَإِنْ تَعُودُوا نَعُدْ.

और अगर तुम फिर अपनी शरारत और जंग की तरफ़ लौटे तो हम भी मुसलमानों की इमदाद की तरफ़ लौटेंगेः

وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ فِئَتُكُمْ شَيْئًا وَّلَوْ كَثُرَتْ.

यानी तुम्हारी जमाअ़त और जत्था कितना ही ज़्यादा हो अल्लाह तआ़ला की मदद के मुक़ाबले में तुम्हें कुछ काम न देगाः

وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ.

यानी कोई जमाअ़त तुम्हें क्या काम दे सकती है जबकि क़ादिरे मुतलक़ अल्लाह तआ़ला मुसलमानों के साथ है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَا
تَوَلَّوْا عَنْهُ وَاَنْتُمْ تَسْمَعُوْنَ ۝ وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ قَالُوْا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُوْنَ ۝ اِنَّ
شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ ۝ وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيْهِمْ خَيْرًا لَّاَسْمَعَهُمْ وَلَوْ
اَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ۝ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ
لِمَا يُحْيِيْكُمْ ۚ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ يَحُوْلُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهٖ وَاَنَّهٗۤ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू अतीअ़ुल्ला-ह व रसूलहू व ला तवल्लौ अ़न्हु व अन्तुम् तस्मअ़ून (20) व ला तकूनू कल्लज़ी-न क़ालू समिअ़्ना व हुम् ला यस्मअ़ून (21) इन्-न शर्रद्दवाब्बि अ़िन्दल्लाहिस्सुम्मुल्-बुक्मुल्लज़ी-न ला यअ़्क़िलून (22) व लौ अ़लिमल्लाहु फ़ीहिम् ख़ैरल् ल-अस्म-अ़हुम्, व लौ अस्म-अ़हुम् ल-तवल्लौ व हुम् मुअ़्रिज़ून (23) या अय्युहल्लज़ी-न आमनुस्तजीबू लिल्लाहि व लिर्रसूलि इज़ा दआ़कुम् लिमा युह़्यीकुम् वअ़्लमू अन्नल्ला-ह यहूलु बैनल्-मर्इ व क़ल्बिही व अन्नहू इलैहि तुह़्शरून (24)

ऐ ईमान वालो! हुक्म मानो अल्लाह का और उसके रसूलों का और उससे मत फिरो सुनकर। (20) और उन जैसे मत हो जिन्होंने कहा हमने सुन लिया और वे सुनते नहीं। (21) बेशक सब जानदारों में बदतर अल्लाह के नज़दीक वही बेहरे गूँगे हैं जो नहीं समझते। (22) और अगर अल्लाह जानता उनमें कुछ भलाई तो उनको सुना देता, और अगर उनको अब सुना दे तो ज़रूर भागें मुँह फेरकर। (23) ऐ ईमान वालो! हुक्म मानो अल्लाह का और रसूल का जिस वक़्त बुलाये तुमको उस काम की तरफ़ जिसमें तुम्हारी ज़िन्दगी है, और जान लो कि अल्लाह रोक लेता है आदमी से उसके दिल को, और यह कि उसी के पास तुम जमा होगे। (24)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह का कहना मानो और उसके रसूल का, और उस (का कहना

मानने) से मुँह मत फेरना, और तुम (एतिक़ाद से) सुन तो लेते ही हो (यानी जैसे एतिक़ाद से सुन लेते हो ऐसे ही अ़मल भी किया करो)। और तुम (नेकी की राह छोड़ देने में) उन लोगों की तरह मत होना जो दावा तो करते हैं कि हमने सुन लिया (जैसे काफ़िर लोग कि सिर्फ़ सुनने के और मुनाफ़िक़ लोग सिर्फ़ एतिक़ाद के साथ सुनने के दावेदार थे) हालाँकि वे सुनते-सुनाते कुछ नहीं (क्योंकि समझना और यक़ीन लाना दोनों के अन्दर नहीं। मतलब यह कि सुनने और यक़ीन लाने का नतीजा व असर अ़मल है, जब अ़मल न हुआ तो एक तरह से यह ऐसा ही हो गया जैसे एतिक़ाद के साथ सुना ही नहीं, जिसको तुम भी सख़्त बुरा और नापसन्दीदा जानते हो) बेशक (यह बात ज़रूर है कि एतिक़ाद से सुनकर अ़मल न करने वाले और एक बिना यक़ीन व एतिक़ाद के सुनने वाले जो कि एक तरह से न सुनना है, बुरे होने में अलग-अलग ज़रूर हैं क्योंकि काफ़िर और गुनाहगार बराबर नहीं, चुनाँचे) मख़्लूक़ में सबसे बदतर अल्लाह के नज़दीक वे लोग हैं जो (हक़ बात को एतिक़ाद के साथ सुनने से) बहरे हैं, (और हक़ बात के कहने से) गूँगे हैं, (और) जो कि (हक़ बात को) ज़रा नहीं समझते (और बावजूद एतिक़ाद व यक़ीन के हक़ से अ़मल में कोताही हो जाती है वे बदतर नहीं हैं अगरचे बुरे हैं, सो बुरा भी न होना चाहिये)।

और (जिनका हाल बयान हुआ कि वे एतिक़ाद से नहीं सुनते वजह उसकी यह है कि उनमें एक बड़ी ख़ूबी की कमी है और वह ख़ूबी हक़ की तलब है, क्योंकि एतिक़ाद व यक़ीन की उपज का मक़ाम भी तलब और तलाश है अगरचे उस वक़्त एतिक़ाद न हो मगर कम से कम शक व दुविधा तो हो, फिर उसी शक व दुविधा और तलब की बरकत से हक़ वाज़ेह हो जाता है, और वह शक व दुविधा एतिक़ाद बन जाता है जिस पर सुनने का लाभदायक होना मौक़ूफ़ है, सो उनमें यही ख़ूबी नदारद है। चुनाँचे) अगर अल्लाह तआ़ला उनमें कोई ख़ूबी देखते (मुराद यह कि उनमें वह उक्त ख़ूबी होती, क्योंकि ख़ूबी के वजूद के वक़्त अल्लाह के इल्म का ताल्लुक़ लाज़िम है, पस लाज़िम बोलकर उसके साथ जुड़ी हुई चीज़ को मुराद ले लिया, और "कोई ख़ूबी" इसलिये कहा कि जब ऐसी ख़ूबी नहीं जिस पर निजात का मदार है तो गोया कोई ख़ूबी भी नहीं। यानी अगर उनमें हक़ की तलब होती) तो (अल्लाह तआ़ला) उनको (एतिक़ाद के साथ) सुनने की तौफ़ीक़ देते (जैसा कि ऊपर ज़िक्र हुआ कि तलब से एतिक़ाद पैदा हो जाता है) और अगर (अल्लाह तआ़ला) उनको अब (मौजूदा हालत में जबकि उनमें हक़ की तलब नहीं है) सुना दें (जैसा कि कभी-कभी ज़ाहिरी कानों से सुन ही लेते हैं) तो ज़रूर मुँह फेर लेंगे बेरुख़ी करते हुए (यानी यह नहीं कि सोच-विचार के बाद ग़लती ज़ाहिर हो जाने के सबब मुँह फेरा हो, क्योंकि यहाँ ग़लती का नाम व निशान ही नहीं, बल्कि ग़ज़ब तो यह है कि उधर तवज्जोह ही नहीं करते और) ऐ ईमान वालो! (हमने जो ऊपर तुमको इताअ़त का हुक्म किया है तो याद रखो इसमें तुम्हारा ही फ़ायदा है कि वह हमेशा वाली ज़िन्दगी है, जब यह बात है तो) तुम अल्लाह और रसूल के कहने पर अ़मल किया करो, जबकि रसूल (जिनका इरशाद ख़ुदा ही का इरशाद है) तुमको तुम्हारी ज़िन्दगी देने वाली चीज़ की तरफ़ (यानी दीन की तरफ़ जिससे हमेशा

वाली ज़िन्दगी मयस्सर होती है) बुलाते हों, (तो इस हालत में जबकि हर तरह तुम्हारा ही फ़ायदा है कोई वजह नहीं कि तुम अमल न करो)। और (इसके बारे में दो बातें और) जान लो (एक बात यह) कि अल्लाह तआ़ला आड़ बन जाया करता है आदमी के और उसके दिल के दरमियान में, (दो तरीक़े से- एक तरीक़ा यह कि मोमिन के दिल में नेकी पर चलने और फ़रमाँबरदारी की बरकत से कुफ़्र व नाफ़रमानी को नहीं आने देता। दूसरा तरीक़ा यह कि काफ़िर के दिल में मुख़ालफ़त की नहूसत से ईमान व नेकी को नहीं आने देता। इससे मालूम हुआ कि नेकी व फ़रमाँबरदारी की पाबन्दी बड़ी नाफ़े की चीज़ है, और मुख़ालफ़त पर अड़े रहना बड़ी नुक़सानदेह चीज़ है) और (दूसरी बात यह जान लो कि) बेशक तुम सब को ख़ुदा ही के पास जमा होना है (उस वक़्त नेकी व भलाई पर जज़ा और मुख़ालफ़त पर सज़ा होगी, इससे भी नेकी और अल्लाह के हुक्म पर चलने का नाफ़े वाला होना और मुख़ालफ़त का नुक़सान वाला होना साबित हुआ)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

जंगे-ए-बदर जिसका वाक़िआ़ पिछली आयतों में किसी क़द्र तफ़सील के साथ बयान हुआ है उसमें मुसलमानों और काफ़िरों दोनों के लिये सबक़ लेने और हिक्मत की बहुत सी बाते हैं जिनकी तरफ़ क़िस्से के दरमियानी जुमलों में इशारे फ़रमाये गये हैं।

मसलन पिछली आयतों में मक्का के मुश्रिकों की शिकस्त व ज़िल्लत का वाक़िआ़ बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमाया थाः

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَآقُّوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

यानी हर तरह की क़ुव्वत व सामान के बावजूद मक्का के मुश्रिकों की शिकस्त का असली सबब अल्लाह और उसके रसूल की मुख़ालफ़त थी। इसमें उन लोगों के लिये एक सबक़ लेने वाली बात और सख़्त चेतावनी है जो ज़मीन व आसमान के ख़ालिक़ व मालिक की कामिल क़ुदरत और ग़ैबी क़ुव्वत से नज़र हटा करके सिर्फ़ माद्दी क़ुव्वतों पर भरोसा करते हैं, या अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानियों के बावजूद उसकी इमदाद व नुसरत की ग़लत आरज़ुओं से अपने नफ़्स को फ़रेब देते हैं।

उक्त आयतों में इसी मसले का दूसरा रुख़ मुसलमानों को ख़िताब करके बयान फ़रमाया गया है जिसका ख़ुलासा यह है कि बावजूद कम संख्या और बेसामानी होने के यह ज़बरदस्त फ़तह सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की नुसरत व इमदाद से हासिल हुई और यह नुसरत व इमदाद नतीजा है उनकी फ़रमाँबरदारी और हक़ पर चलने का। इस इताअ़त पर मज़बूती से क़ायम रहने के लिये मुसलमानों को हुक्म दिया गयाः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

यानी ऐ ईमान वालो! अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त इख़्तियार करो और उस पर मज़बूती से क़ायम रहो। फिर इसी मज़मून की और ज़्यादा ताकीद

के लिये फ़रमायाः

وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَأَنْتُمْ تَسْمَعُوْنَ.

यानी क़ुरआन और हक़ का कलिमा सुन लेने के बावजूद इताअ़त से मुँह न मोड़ो।

सुन लेने से मुराद हक़ बात का सुनना है और सुनने के चार दर्जे हैं- एक यह कि कोई आवाज़ सिर्फ़ कानों से सुन ली मगर न उसको समझने की कोशिश की न समझा और न उस पर यक़ीन व भरोसा किया और न अ़मल किया। दूसरे यह कि कानों से सुना भी और समझा भी मगर न उस पर एतिक़ाद किया न अ़मल। तीसरे यह कि सुना भी और समझा भी और एतिक़ाद व भरोसा भी किया मगर अ़मल नहीं किया। चौथे यह कि सुना भी समझा भी और भरोसा भी किया और अ़मल भी।

यह ज़ाहिर है कि सुनने का असल मक़सद पूरी तरह तो चौथे दर्जे ही से हासिल होता है जो कामिल मोमिनों का मक़ाम है और शुरू के तीनों दर्जों में सुनना अधूरा और नामुकम्मल है जिसको एक हैसियत से न सुनना भी कह सकते हैं, जैसा कि अगली आयतों में आता है। और तीसरा दर्जा जिसमें हक़ का सुनना, समझना, एतिक़ाद करना तो मौजूद है मगर अ़मल नहीं, उसमें अगरचे सुनने का असल मक़सद पूरा नहीं होता मगर यक़ीन भी एक ख़ास अहमियत रखता है, इसलिये वह भी बेकार नहीं। यह दर्जा गुनाहगार मुसलमानों का है। और दूसरा दर्जा जिसमें सिर्फ़ सुनना और समझना है, न एतिक़ाद है न अ़मल, यह मुनाफ़िक़ों का दर्जा है कि क़ुरआन को सुनते भी हैं, समझते भी हैं और ज़ाहिर में एतिक़ाद व अ़मल का दावा भी है मगर हक़ीक़त में अ़क़ीदे और अ़मल से ख़ाली हैं, और पहला दर्जा आ़म मुश्रिकों व काफ़िरों का है जिन्होंने हक़ के कलिमे और क़ुरआन की आयतों को कानों से तो सुन लिया मगर कभी समझने और ग़ौर करने की तरफ़ ध्यान ही नहीं दिया।

उक्त आयतों में मुसलमानों को ख़िताब है कि तुम लोग हक़ बात को सुन तो लेते ही हो यानी सुनना, समझना, एतिक़ाद रखना तो तुम्हारी तरफ़ से मौजूद है मगर आगे उस पर अ़मल भी पूरा करो, फ़रमाँबरदारी से मुँह मत मोड़ो ताकि सुनने का असल मक़सद मुकम्मल हो जाये।

दूसरी आयत में इसी मज़मून की और ज़्यादा ताकीद के लिये इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ قَالُوْا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُوْنَ۝

यानी तुम उन लोगों की तरह न हो जाना जो कहते तो यह हैं कि हमने सुन लिया मगर हक़ीक़त में सुना सुनाया कुछ नहीं। इन लोगों से मुराद आ़म काफ़िर भी हैं जो सुनने का दावा करते हैं यक़ीन लाने का नहीं करते, और मुनाफ़िक़ भी हैं जो सुनने के साथ समझने और एतिक़ाद रखने के भी दावेदार हैं, मगर हक़ीक़त यह है कि ग़ौर व फ़िक्र और सही समझ से ये दोनों मेहरूम हैं। इसलिये इनका सुनना न सुनने के हुक्म में है। मुसलमानों को इन लोगों के जैसा बनने से मना फ़रमाया गया है।

तीसरी आयत में उन लोगों की सख़्त निंदा और बुराई बयान की गयी है जो हक़ बात को

ग़ौर व फ़िक्र के साथ नहीं सुनते और उसको क़ुबूल नहीं करते। ऐसे लोगों को क़ुरआने करीम ने जानवरों से भी बदतर (ज़्यादा बुरा) क़रार दिया है। इरशाद फ़रमायाः

اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ٥

लफ़्ज़ 'दवाब्बि' 'दाब्बतुन्' की जमा (बहुवचन) है, असल लुग़त के एतिबार से हर ज़मीन पर चलने वाले को 'दाब्बा' कहा जाता है मगर आम बोलचाल और मुहावरे में सिर्फ़ चौपाये जानवरों को 'दाब्बा' कहते हैं। आयत के मायने यह हुए कि सबसे बदतरीन चौपाये अल्लाह के नज़दीक वो हैं जो हक़ को सुनने से बहरे और उसके क़ुबूल करने से गूँगे हैं, और बहरे-गूँगे में अगर कुछ अ़क़्ल हो तो वह भी इशारों से अपने दिल की बात कह लेता है और दूसरों की बात समझ लेता है, यह लोग बहरे-गूँगे होने के साथ बेअ़क़्ल भी हैं, और यह ज़ाहिर है जो बहरा-गूँगा अ़क़्ल से भी ख़ाली हो उसके समझने समझाने का कोई रास्ता नहीं।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने यह वाज़ेह कर दिया कि इनसान को जो 'ख़ूबसूरत ढाँचे' में ढाला और पैदा किया गया और तमाम मख़्लूक़ात में बेहतर और कायनात का मख़दूम बनाया गया (यानी सारी कायनात इसकी सेवा में लगी हुई है) ये सब इनामात सिर्फ़ हक़ की इताअ़त में छुपे हुए और सीमित हैं। जब इनसान ने हक़ बात के सुनने समझने और मानने से मुँह मोड़ लिया तो ये सारे इनामात उससे छीन लिये जाते हैं और वह जानवरों से भी बदतर हो जाता है।

तफ़सीर रूहुल-बयान में है कि इनसान अपनी असल पैदाईश के एतिबार से सब जानदारों से अफ़ज़ल व आला है और फ़रिश्तों से कम दर्जा रखता है, लेकिन जब वह अपनी कोशिश व अ़मल और हक़ की इताअ़त में जिद्दोजहद करता है तो फ़रिश्तों से भी आला व अशरफ़ हो जाता है। और अगर उसने हक़ की इताअ़त से मुँह मोड़ा तो फिर वह सबसे घटिया मख़्लूक़ के दर्जे में पहुँच जाता और जानवरों से भी ज़्यादा बदतर हो जाता है।

चौथी आयत में इरशाद हैः

وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيْهِمْ خَيْرًا لَّاَسْمَعَهُمْ وَلَوْ اَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ٥

यानी अगर अल्लाह तआ़ला उनमें कोई भलाई देखते तो उनको एतिक़ाद (यक़ीन व ईमान) के साथ सुनने की तौफ़ीक़ बख़्श देते, और अगर उनकी मौजूदा हालत में कि उनमें हक़ की तलब नहीं है, हक़ बात सुना दें तो वे ज़रूर मुँह मोड़ लेंगे बेरुख़ी करते हुए।

भलाई से मुराद इस जगह हक़ की तलब व जुस्तजू है कि तलब ही के ज़रिये सोचने-समझने और ग़ौर व फ़िक्र करने के दरवाज़े खुलते हैं, और इसी से ईमान व अ़मल की तौफ़ीक़ होती है। और जिसमें हक़ की तलब नहीं गोया उसमें कोई भलाई नहीं। मायने यह हैं कि अगर उनमें कोई भलाई मौजूद होती तो ज़ाहिर है कि वह अल्लाह तआ़ला के इल्म में होती, जब अल्लाह तआ़ला के इल्म में उनके अन्दर कोई भलाई नहीं तो मालूम हुआ कि वास्तव में वे हर भलाई से मेहरूम हैं और इस मेहरूमी की हालत में अगर उनको सोच-विचार और हक़ पर यक़ीन व ईमान लाने की दावत दी जाये तो वे हरगिज़ क़ुबूल न करेंगे बल्कि उससे मुँह फेरकर भागेंगे। यानी उनका

यह मुँह फेरना इस बिना पर न होगा कि दीन में उनको एतिराज़ की बात नज़र आ गयी इसलिये नहीं माना, बल्कि हक़ीक़त यह है कि उन्होंने हक़ बात पर ध्यान ही नहीं दिया।

पाँचवीं आयत में फिर ईमान वालों को ख़िताब करके अल्लाह और रसूल के अहकाम की तामील व इताअ़त का हुक्म एक ख़ास अन्दाज़ से दिया गया कि अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तुम्हें जिस चीज़ की दावत देते हैं उसमें अल्लाह और रसूल का अपना कोई फ़ायदा नहीं छुपा बल्कि सब अहकाम तुम्हारे ही फ़ायदे के लिये दिये गये हैं।

इरशाद फ़रमायाः

اِسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيْكُمْ.

यानी बात मानो अल्लाह की और रसूल की जबकि रसूल तुमको ऐसी चीज़ की तरफ़ बुलाये जो तुम्हारे लिये ज़िन्दगी बख़्शने वाली है।

वह ज़िन्दगी जिसका ज़िक्र इस आयत में है, क्या है? इसमें कई संभावनायें हैं इसलिये उलेमा-ए-तफ़सीर न मुख़्तलिफ़ क़ौल इख़्तियार किये हैं। इमाम सुद्दी ने कहा कि वह ज़िन्दगी बख़्शने वाली चीज़ ईमान है, क्योंकि काफ़िर मुर्दा है। क़तादा रह. ने फ़रमाया कि वह क़ुरआन है जिसमें दुनिया व आख़िरत की ज़िन्दगी और कामयाबी छुपी है। इमाम मुजाहिद रह. ने फ़रमाया कि वह हक़ है। इब्ने इस्हाक़ रह. ने फ़रमाया कि इससे मुराद जिहाद है जिसके ज़रिये अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को इज़्ज़त बख़्शी। और ये सब संभावनायें और मायनों की गुंजाईशें अपनी-अपनी जगह सही हैं, इनमें कोई टकराव नहीं। मुराद यह है कि ईमान या क़ुरआन या हक़ की पैरवी वग़ैरह ऐसी चीज़ें हैं जिनसे इनसान का दिल ज़िन्दा होता है और दिल की ज़िन्दगी यह है कि बन्दे और अल्लाह तआ़ला के बीच जो ग़फ़लत व इच्छा वग़ैरह के पर्दे रुकावट हैं वो राह से हट जायें और पर्दों की अंधेरी दूर होकर मारिफ़त (अल्लाह की पहचान) का नूर दिल में जगह कर ले।

तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक दिन उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु को बुलाया। उबई बिन कअ़ब नमाज़ पढ़ रहे थे, जल्दी-जल्दी नमाज़ पूरी करके हाज़िर हुए। आपने फ़रमाया कि मेरे पुकारने पर आने में देर क्यों लगाई? हज़रत उबई बिन कअ़ब ने अ़र्ज़ किया कि मैं नमाज़ में था। आपने फ़रमाया कि क्या तुमने अल्लाह तआ़ला का यह इरशाद नहीं सुना?

اِسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ.

हज़रत उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि आईन्दा इस हुक्म पर अ़मल करूँगा, अगर नमाज़ की हालत में भी आप बुलायेंगे तो फ़ौरन हाज़िर हो जाऊँगा।

इस हदीस की बिना पर कुछ फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया कि रसूल के हुक्म की इताअ़त (पालन) से नमाज़ में जो काम भी करें उससे नमाज़ में ख़लल नहीं होता और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि अगरचे नमाज़ के ख़िलाफ़ वाले काम करने से नमाज़ टूट

जायेगी और उसकी बाद में क़ज़ा करना पड़ेगी लेकिन करना यही चाहिये कि जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी को बुलायें और वह नमाज़ में भी हो तो नमाज़ को तोड़कर हुक्म की तामील करे।

यह सूरत तो सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस है लेकिन दूसरे ऐसे काम जिनमें देरी करने से किसी सख़्त नुक़सान का ख़तरा हो उस वक़्त भी नमाज़ बीच में तोड़ देना और फिर क़ज़ा कर लेना चाहिये, जैसे कोई नमाज़ी यह देखे कि अंधा आदमी कुएँ या गड्ढे के क़रीब पहुँचकर गिरने वाला है तो फ़ौरन नमाज़ तोड़कर उसको बचाना चाहिये।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ یَحُوْلُ بَیْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهٖ.

यानी यह बात समझ लो कि अल्लाह तआ़ला आड़ बन जाया करता है आदमी के और उसके दिल के दरमियान। इस जुमले के दो मायने हो सकते हैं और दोनों में बहुत बड़ी हिक्मत व नसीहत पाई जाती है जो हर इनसान को हर वक़्त याद रखनी चाहिये।

एक मायने तो यह हो सकते हैं कि जब किसी नेक काम के करने या गुनाह से बचने का मौक़ा आये तो उसको फ़ौरन कर गुज़रो, देर न करो और उस फ़ुर्सत के वक़्त को ग़नीमत समझो क्योंकि कई बार आदमी के इरादे के बीच अल्लाह की तक़दीर रुकावट हो जाती है, वह अपने इरादे में कामयाब नहीं हो सकता। कोई बीमारी पेश आ जाये या मौत आ जाये या कोई ऐसा मश्ग़ला (व्यस्तता) पेश आ जाये कि उस काम की फ़ुर्सत न मिले। इसलिये इनसान को चाहिये कि वक़्त और उम्र की फ़ुर्सत को ग़नीमत समझकर आज का काम कल पर न डाले क्योंकि मालूम नहीं कल क्या होना है:

मन नमी गोयम ज़ियाँ कुन या ब-फ़िक्रे सूद बाश
ऐ ज़-फ़ुर्सत बेख़बर दर हर चे बाशी ज़ूद बाश

मेरा कहना यह नहीं कि तू नुक़सान उठा या नफ़ा जुटाने की फ़िक्र में लग, मेरा तो कहना यह है कि वक़्त की इस फ़ुर्सत को ग़नीमत जान, ग़फ़लत से जाग और जो कुछ करना है जल्द से जल्द कर ले। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

और दूसरा मतलब इस जुमले का यह हो सकता है कि इसमें अल्लाह तआ़ला का अपने बन्दे से बहुत ही क़रीब होना बतलाया गया है। जैसे एक दूसरी आयत में है:

نَحْنُ اَقْرَبُ اِلَیْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِیْدِ.

कि अल्लाह तआ़ला इनसान की गर्दन की रग से भी ज़्यादा क़रीब हैं।

मतलब यह है कि इनसान का दिल हर वक़्त हक़ तआ़ला के ख़ास तसर्रुफ़ (क़ब्ज़े व इख़्तियार) में है, जब वह किसी बन्दे की बुराईयों से हिफ़ाज़त करना चाहते हैं तो उसके दिल और गुनाहों के बीच आड़ कर दी जाती है, इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी दुआ़ओं में अक्सर यह दुआ़ किया करते थे:

يَا مُقَلِّبَ الْقُلُوْبِ ثَبِّتْ قَلْبِيْ عَلٰى دِيْنِكَ.

यानी ऐ दिलों के पलटने वाले! मेरे दिल को अपने दीन पर साबित और क़ायम रखिये।

हासिल इसका भी वही है कि अल्लाह और रसूल के अहकाम की तामील में देर न लगाओ और वक़्त की फ़ुर्सत को ग़नीमत जानकर फ़ौरन कर गुज़रो, मालूम नहीं कि फिर दिल में नेकी का यह जज़्बा और उमंग बाक़ी रहती है या नहीं।

وَاتَّقُوْا فِتْنَةً لَّا تُصِيْبَنَّ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا مِنْكُمْ خَآصَّةً ۚ
وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ﴿٢٥﴾ وَاذْكُرُوْٓا اِذْ اَنْتُمْ قَلِيْلٌ مُّسْتَضْعَفُوْنَ فِى الْاَرْضِ
تَخَافُوْنَ اَنْ يَّتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ فَاٰوٰىكُمْ وَاَيَّدَكُمْ بِنَصْرِهٖ وَرَزَقَكُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿٢٦﴾
يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَخُوْنُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ وَتَخُوْنُوْٓا اَمٰنٰتِكُمْ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿٢٧﴾ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَآ
اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ ۙ وَّاَنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿٢٨﴾ ع ٣ ٩ ١٤

वत्तक़ू फ़ित्नतल्-ला तुसीबन्नल्लज़ी-न ज़-लमू मिन्कुम् ख़ास्स-तन् वअ्लमू अन्नल्ला-ह शदीदुल्-अिक़ाब (25) वज़्कुरू इज़् अन्तुम् क़लीलुम् मुस्तज़्अ़फ़ू-न फ़िल्अर्ज़ि तख़ाफ़ू-न अंय्य-तख़त्त-फ़कुमुन्नासु फ़आवाकुम् व अय्य-दकुम् बिनस्रिही व र-ज़-क़कुम् मिनत्तय्यिबाति लअ़ल्लकुम् तश्कुरून (26) या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तख़ूनुल्ला-ह वर्रसू-ल व तख़ूनू अमानातिकुम् व अन्तुम् तअ़्लमून (27) वअ़्लमू अन्नमा अम्वालुकुम् व औलादुकुम् फ़ित्नतुंव्-व अन्नल्ला-ह अ़िन्दहू अज्रुन् अ़ज़ीम (28) ✿

और बचते रहो उस फ़साद से कि नहीं पड़ेगा तुम में से ख़ास ज़ालिमों ही पर, और जान लो कि अल्लाह का अज़ाब सख़्त है। (25) और याद करो जिस वक़्त तुम थोड़े थे मग़लूब पड़े हुए मुल्क में, डरते थे कि उचक लें तुमको लोग, फिर उसने तुमको ठिकाना दिया और क़ुव्वत दी तुमको अपनी मदद से, और रोज़ी दी तुमको सुथरी चीज़ें ताकि तुम शुक्र करो। (26) ऐ ईमान वालो! ख़ियानत न करो अल्लाह से और रसूल से और ख़ियानत न करो आपस की अमानतों में जानकर। (27) और जान लो कि बेशक तुम्हारे माल और औलाद ख़राबी में डालने वाले हैं और यह कि अल्लाह के पास बड़ा सवाब है। (28) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जिस तरह तुम पर अपनी इस्लाह के बारे में नेकी व फ़रमाँबरदारी करना और सही रास्ते पर चलना वाजिब है इसी तरह यह भी लाज़िमी नेकी में दाख़िल है कि अपनी हिम्मत व गुंजाईश के मुताबिक़ हाथ, ज़बान से या ताल्लुक़ात तोड़ने और गुनाह को दिल में बुरा समझने से 'अमर बिल्मारूफ़ व नही अ़निल-मुन्कर' के ज़रिये दूसरों की इस्लाह व सुधार में कोशिश की जाये। वरना अगर सुस्ती की और लोगों की बुराईयों को नज़र-अन्दाज़ किया तो उन बुराईयों और गुनाहों का वबाल जैसा उन गुनाहों को करने वालों पर पड़ेगा ऐसा ही किसी दर्जे में इन दूसरों की बुराईयों को देखकर नसीहत में सुस्ती या तब्लीग़ के फ़रीज़े को नज़र-अन्दाज़ करने वालों पर भी पड़ेगा। जब यह बात है तो) तुम ऐसे वबाल से बचो कि जो ख़ास उन्हीं लोगों पर न पड़ेगा जो तुममें से उन गुनाहों के करने वाले हुए हैं (बल्कि उन गुनाहों को देखकर जिन लोगों ने उनकी तरफ़ से आँख बचाई है वे भी इसमें शरीक होंगे। और इससे बचना यही है कि दीन के मामले में सुस्ती और नसीहत करने में किसी की नाराज़ी के ख़्याल से ज़िम्मेदारी से चश्म-पोशी मत करो) और यह जान लो कि अल्लाह तआ़ला सख़्त सज़ा देने वाले हैं (उनकी सज़ा से डरकर दावत व तब्लीग़ की ज़िम्मेदारी में सुस्ती मत करो) और (इस ग़र्ज़ से कि नेमतों के याद करने से नेमत देने वाले की फ़रमाँबरदारी का शौक़ होता है, ख़ुदा तआ़ला की नेमतों को और ख़ास कर) उस हालत को याद करो जबकि तुम (एक वक़्त में यानी हिजरत से पहले संख्या में भी) थोड़े से थे (और ताक़त के एतिबार से भी मक्का की) सरज़मीन में कमज़ोर शुमार किये जाते थे (और अपनी हालत की बहुत ज़्यादा कमज़ोरी से) इस ख़ौफ़ में रहते थे कि तुमको (मुख़ालिफ़) लोग नोच-खसोट न लें। सो (ऐसी हालत में) अल्लाह ने तुमको (मदीना में इत्मीनान से) रहने को जगह दी, और तुमको अपनी मदद से क़ुव्वत दी, (सामान से भी और संख्या को ज़्यादा करने से भी जिससे तायदाद की कमी, हालत की कमज़ोरी और दूसरों की नोच-खसोट सब दूर हो गया) और (सिर्फ़ यही नहीं कि तुम्हारी मुसीबत ही को दूर कर दिया हो बल्कि आला दर्जे की ख़ुशहाली भी अ़ता फ़रमाई कि दुश्मनों पर तुमको ग़लबा देकर कामयाबियों की अधिकता से) तुमको अच्छी-अच्छी चीज़ें (खाने को) अ़ता फ़रमाईं, ताकि तुम (उन नेमतों का) शुक्र करो (और बड़ा शुक्र यह है कि अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करो)।

ऐ ईमान वालो! (हम मुख़ालफ़त और नाफ़रमानी से इसलिये मना करते हैं क्योंकि अल्लाह और रसूल के तुम पर कुछ हुक़ूक़ हैं जिनका नफ़ा तुम्हारी ही तरफ़ लौटता है, और नाफ़रमानी से उन हुक़ूक़ में ख़लल पड़ता है जिससे वास्तव में तुम्हारे ही नफ़े में ख़लल पड़ता है। जब यह बात है तो) तुम अल्लाह और रसूल के हुक़ूक़ में ख़लल मत डालो और (अन्जाम के एतिबार से इस मज़मून को इस तरह कहा जा सकता है कि तुम) अपनी हिफ़ाज़त के क़ाबिल चीज़ों में (कि वो तुम्हारे फ़ायदे हैं जो आमाल पर मुरत्तब होते हैं) ख़लल मत डालो, और तुम तो (इसका नुक़सानदेह होना) जानते हो। और (बहुत सी बार माल व औलाद की मुहब्बत नेकी पर चलने में

ख़लल डालने वाली हो जाती है इसलिये तुमको आगाह किया जाता है कि) तुम इस बात को जान लो कि तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद एक इम्तिहान की चीज़ है (कि देखें कौन इनकी मुहब्बत को तरजीह देता है और कौन अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत को तरजीह देता है, सो तुम इनकी मुहब्बत को तरजीह मत देना) और (अगर इनके फ़ायदों की तरफ़ नज़र जाये तो तुम) इस बात को भी जान रखो कि अल्लाह तआ़ला के पास (उन लोगों के लिये जो अल्लाह की मुहब्बत को तरजीह देते हैं) बड़ा भारी अज्र (मौजूद) है (कि उसके सामने ये फ़ानी फ़ायदे और वक़्ती लाभ कुछ हक़ीक़त नहीं रखते)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़ुरआने करीम ने बदर की लड़ाई की कुछ तफ़सीलात और उसमें मुसलमानों पर अपने इनामात का ज़िक्र फ़रमाने के बाद उससे हासिल होने वाले परिणामों और फिर उसके मुनासिब मुसलमानों को कुछ सीख व नसीहत के इरशादात बयान फ़रमाये हैं जिनका सिलसिलाः

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ.

(यानी इसी सूरत की आयत 24) से शुरू हुआ है। इसी सिलसिले की ये आयतें हैं जो ऊपर लिखी गयी हैं।

इनमें से पहली आयत में ऐसे गुनाह से बचने की ख़ास तौर पर हिदायत की गयी है जिसका सख़्त अ़ज़ाब सिर्फ़ गुनाह करने वालों पर सीमित नहीं रहता बल्कि गुनाह न करने वाले लोग भी उसमें मुब्तला हो जाते हैं।

वह गुनाह कौनसा है इसमें तफ़सीर के उलेमा के अनेक क़ौल हैं। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यह गुनाह 'अमर बिल्मारूफ़ और नही अ़निल-मुन्कर' (यानी लोगों को नेक कामों की हिदायत और बुरे कामों से रोकने) की जिद्दोजहद का छोड़ देना है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को इसका हुक्म दिया है कि किसी जुर्म व गुनाह को अपने माहौल में क़ायम न रहने दें क्योंकि अगर उन्होंने ऐसा न किया यानी जुर्म व गुनाह देखते हुए बावजूद ताक़त के उसको मना न किया तो अल्लाह तआ़ला उन सब पर अपना अ़ज़ाब आ़म कर देंगे जिससे न गुनाहगार बचेंगे न बेगुनाह।

और बेगुनाह से मुराद यहाँ वे लोग हैं जो असल गुनाह में उनके साथ शरीक नहीं मगर नेकी का हुक्म करने को छोड़ने के गुनाहगार वे भी हैं इसलिये यहाँ यह शुब्हा नहीं होना चाहिये कि एक के गुनाह का अ़ज़ाब दूसरे पर डालना बेइन्साफ़ी और क़ुरआनी फ़ैसला अपने इस हुक्म के ख़िलाफ़ है किसी का बोझ कोई दूसरा नहीं उठायेगा। क्योंकि यहाँ गुनाहगार अपने असल गुनाह के वबाल में और बेगुनाह अच्छाई का हुक्म (यानी दीन की तब्लीग़) करने को छोड़ने के गुनाह में पकड़े गये, किसी का गुनाह दूसरे पर नहीं डाला गया।

इमाम बग़वी रह. ने शरहे-सुन्ना और मआ़लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु

अन्हु और हज़रत सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायतों से यह रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला किसी ख़ास जमाअ़त के गुनाह का अ़ज़ाब आ़म लोगों पर नहीं डालते जब तक कि ऐसी सूरत पैदा न हो जाये कि वे अपने माहौल में गुनाह होता हुआ देखें और उनको यह ताक़त भी हो कि उसको रोक सकें, इसके बावजूद उन्होंने उसको रोका नहीं, तो उस वक़्त अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब उन सब को घेर लेता है।

और तिर्मिज़ी व अबू दाऊद वग़ैरह में सही सनद के साथ मन्क़ूल है कि हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अपने एक ख़ुतबे में फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना कि आपने फ़रमाया- जब लोग किसी ज़ालिम को देखें और ज़ुल्म से उसका हाथ न रोकें तो क़रीब है कि अल्लाह तआ़ला उन सब पर अपना अ़ज़ाब आ़म कर दें।

सही बुख़ारी में हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो लोग अल्लाह तआ़ला की क़ानूनी हदों को तोड़ने वाले गुनाहगार हैं और जो लोग उनको देखकर बेजा चश्म-पोशी करने वाले हैं, यानी बावजूद ताक़त के उनको गुनाह से नहीं रोकते, इन दोनों तब्क़ों की मिसाल ऐसी है जैसे किसी समुद्री जहाज़ के दो तब्क़े (हिस्से और दर्जे) हों और नीचे के तब्क़े वाले ऊपर आकर अपनी ज़रूरत के लिये पानी लेते हों जिससे ऊपर वाले तकलीफ़ महसूस करें। नीचे वाले यह देखकर यह सूरत इख़्तियार करें कि कश्ती के निचले हिस्से में सुराख़ करके उससे अपने लिये पानी हासिल करें और ऊपर के लोग उनकी इस हरकत को देखें और मना न करें तो ज़ाहिर है कि पानी पूरी कश्ती में भर जायेगा और जब नीचे वाले ग़र्क़ होंगे तो ऊपर वाले भी डूबने से न बचेंगे।

इन रिवायतों की बिना पर बहुत से मुफ़स्सिरीन हज़रात ने यह क़रार दिया कि इस आयत में फ़ितने से मुराद यही 'अच्छाई का हुक्म करने' और 'बुराई से न रोकने' का गुनाह है।

और तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस गुनाह से मुराद जिहाद को छोड़ देने का गुनाह है, ख़ास तौर पर उस वक़्त जबकि अमीरुल-मोमिनीन की तरफ़ से जिहाद की आ़म दावत मुसलमानों को दे दी जाये और इस्लामी निशानात की हिफ़ाज़त उस पर निर्भर हो, क्योंकि उस वक़्त जिहाद के छोड़ देने का वबाल सिर्फ़ जिहाद के छोड़ने वालों पर नहीं बल्कि पूरे मुसलमानों पर पड़ता है। काफ़िरों के ग़लबे के सबब औरतें बच्चे बूढ़े और बहुत से बेगुनाह मुसलमान क़त्ल व ग़ारत का शिकार हो जाते हैं, उनके जान व माल ख़तरे में पड़ जाते हैं। इस सूरत में अ़ज़ाब से मुराद दुनियावी मुसीबतें और तकलीफ़ें होंगी।

और इशारा इस तफ़सीर का यह है कि पिछली आयतों में भी जिहाद को छोड़ने वालों पर मलामत की गयी है:

وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ لَكٰرِهُوْنَ.

और:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا لَقِيْتُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا زَحْفًا فَلَا تُوَلُّوْهُمُ الْاَدْبَارَ○

वग़ैरह पहले ज़िक्र हुई आयतें इसी बयान में आई हैं।

और ग़ज़वा-ए-उहुद में जबकि चन्द मुसलमानों से चूक और ग़लती हुई कि घाटी की हिफ़ाज़त छोड़कर नीचे आ गये तो उसकी मुसीबत सिर्फ़ ग़लती करने वालों पर नहीं बल्कि पूरे मुस्लिम लश्कर पर पड़ी, यहाँ तक कि ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस जंग में ज़ख़्म आया।

दूसरी आयत में भी अल्लाह के अहकाम की इताअ़त (तामील और फ़रमाँबरदारी) को आसान करने और उस पर दिलचस्पी पैदा करने के लिये मुसलमानों को उनकी पिछली ख़स्ता हालत और कमज़ोरी फिर उसके बाद अपने फ़ज़्ल व इनाम से हालात बदलकर उनको क़ुव्वत और इत्मीनान अ़ता फ़रमाने का ज़िक्र है। इरशाद फ़रमायाः

وَاذْكُرُوْٓا اِذْ اَنْتُمْ قَلِيْلٌ مُّسْتَضْعَفُوْنَ فِي الْاَرْضِ تَخَافُوْنَ اَنْ يَّتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ فَاٰوٰىكُمْ وَاَيَّدَكُمْ بِنَصْرِهٖ وَرَزَقَكُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ○

यानी ऐ मुसलमानो! अपने उस हाल को याद करो जो हिजरत से पहले मक्का मुअ़ज़्ज़मा में था कि संख्या में भी कम थे और ताक़त में भी, हर वक़्त यह ख़तरा लगा हुआ था कि दुश्मन उनको नोच-खसोट लेंगे। अल्लाह तआ़ला ने उनको मदीने में बेहतरीन ठिकाना अ़ता फ़रमाया। और न सिर्फ़ ठिकाना बल्कि अपनी ताईद व मदद से उनको ताक़त और दुश्मनों पर फ़तह और बड़े ज़बरदस्त माल अ़ता फ़रमा दिये। आयत के आख़िर में फ़रमाया 'लअ़ल्लकुम तश्कुरून' यानी तुम्हारे हालात की इस काया-पलट और अल्लाह के इनामों का मक़सद यह है कि तुम शुक्रगुज़ार बन्दे बनो। और ज़ाहिर है कि शुक्रगुज़ारी उसके अहकाम की इताअ़त में सीमित है।

तीसरी आयत में मुसलमानों को यह हुक्म दिया गया है कि अल्लाह तआ़ला के हुक़ूक़ में या आपस में बन्दों के हुक़ूक़ में ख़ियानत न करें कि हक़ अदा ही न करें या उसमें कोई और कोताही करके अदा करें। आयत के आख़िर में 'व अन्तुम तअ़्लमून' फ़रमाकर यह बतला दिया कि तुम तो ख़ियानत (चोरी और कोताही) की बुराई और उसके वबाल को जानते ही हो, फिर उस पर क़दम बढ़ाना अ़क़्लमन्दी नहीं, और चूँकि अल्लाह और बन्दों के हुक़ूक़ की अदायेगी से ग़फ़लत व कोताही का सबब उमूमन इनसान के माल व औलाद हुआ करते हैं इसलिये इस पर तंबीह करने (चेताने) के लिये फ़रमायाः

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَآ اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ وَّاَنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ○

यानी यह बात अच्छी तरह समझ लो कि तुम्हारे माल व औलाद तुम्हारे लिये फ़ितना हैं।

फ़ितने के मायने इम्तिहान के भी आते हैं और अ़ज़ाब के भी, और ऐसी चीज़ों को भी फ़ितना कहा जाता है जो अ़ज़ाब का सबब बनें। क़ुरआने करीम की अनेक आयतों में इन तीनों

मायने के लिये लफ़्ज़ फ़ितना इस्तेमाल हुआ है। यहाँ तीनों मायने की गुंजाईश है। कई बार माल व औलाद खुद भी इनसान के लिये दुनिया ही में वबाले जान बन जाते हैं और उनके सबब ग़फ़लत व नाफ़रमानी में मुब्तला होकर अ़ज़ाब का सबब बन जाना तो बिल्कुल ज़ाहिर है। अव्वल यह कि माल व औलाद के ज़रिये तुम्हारा इम्तिहान लेना मक़सूद है कि ये चीज़ें हमारे इनामात हैं, तुम इनाम लेकर शुक्रगुज़ार और फ़रमाँबरदार बनते हो या नाशुक्रे और नाफ़रमान। दूसरे और तीसरे मायने यह भी हो सकते हैं कि माल और औलाद की मुहब्बत में मुब्तला होकर अल्लाह तआ़ला को नाराज़ किया तो यही माल व औलाद तुम्हारे लिये अ़ज़ाब बन जायेंगी। कई बार तो दुनिया ही में ये चीज़ें इनसान को सख़्त मुसीबतों में मुब्तला कर देती हैं और दुनिया ही में माल व औलाद को वे अ़ज़ाब महसूस करने लगते हैं, वरना यह तो लाज़िमी है कि दुनिया में जो माल अल्लाह तआ़ला के अहकाम के ख़िलाफ़ कमाया गया या ख़र्च किया गया वह माल ही आख़िरत में उसके लिये साँप बिच्छू और आग में दाग़ देने का ज़रिया बन जायेगा, जैसा कि क़ुरआने करीम की अनेक आयतों और हदीस की बेशुमार रिवायतों में इसकी स्पष्टता और वज़ाहतें मौजूद हैं। और तीसरे मायने यह कि ये चीज़ें अ़ज़ाब का सबब बन जायें, यह तो ज़ाहिर ही है कि जब ये चीज़ें अल्लाह तआ़ला से ग़फ़लत और उसके अहकाम के उल्लंघन का सबब बनें तो अ़ज़ाब का सबब बन गयीं। आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاَنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ○

यानी यह भी समझ लो कि जो शख़्स अल्लाह और रसूल के अहकाम की तामील में माल व औलाद की मुहब्बत से मग़लूब न हो उसके लिये अल्लाह तआ़ला के पास बहुत बड़ा अज्र है।

इस आयत का मज़मून तो सब मुसलमानों को आ़म और शामिल है मगर इसके नाज़िल होने का वाक़िआ़ अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का क़िस्सा है जो बनू क़ुरैज़ा की मुहिम में पेश आया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम ने बनू क़ुरैज़ा के क़िले का इक्कीस दिन तक घेराव जारी रखा जिससे आ़जिज़ होकर उन्होंने वतन छोड़कर मुल्क शाम चले जाने की दरख़्वास्त की, आपने उनकी शरारतों को देखते हुए इसको क़ुबूल नहीं फ़रमाया बल्कि यह इरशाद फ़रमाया कि सुलह की सिर्फ़ यह सूरत है कि सअ़द बिन मुआ़ज़ (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) तुम्हारे बारे में जो कुछ फ़ैसला करें उस पर राज़ी हो जाओ। उन्होंने दरख़्वास्त की कि सअ़द बिन मुआ़ज़ के बजाय अबू लुबाबा (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) को यह काम सुपुर्द कर दिया जाये। क्योंकि हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बाल-बच्चे और जायदाद बनू क़ुरैज़ा में थे, उनसे यह उम्मीद थी कि वह हमारे मामले में रियायत करेंगे। आपने उनकी दरख़्वास्त पर हज़रत अबू लुबाबा को भेज दिया। बनू क़ुरैज़ा के सब मर्द व औ़रत उनके गिर्द जमा होकर रोने लगे और यह पूछा कि अगर हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म पर उतर आयें तो क्या हमारे मामले में वह कुछ नर्मी फ़रमायेंगे। अबू लुबाब रज़ियल्लाहु अ़न्हु को मालूम था कि उनके मामले में नर्मी बरतने की राय

नहीं है, उन्होंने कुछ उन लोगों के रोने-गिड़गिड़ाने से और कुछ अपने बाल-बच्चों और घर वालों की मुहब्बत से मुतास्सिर होकर अपने गले पर तलवार की तरह हाथ फेरकर इशारे से बतला दिया कि ज़िबह किये जाओगे। गोया इस तरह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का राज़ खोल दिया।

माल व औलाद की मुहब्बत में यह काम कर तो गुज़रे मगर फ़ौरन चौंके कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ख़ियानत की। जब वहाँ से वापस हुए तो इस दर्जा शर्मिन्दगी सवार हुई कि आपकी ख़िदमत में लौटने के बजाय सीधे मस्जिद में पहुँचे और मस्जिद के एक सुतून के साथ अपने आपको बाँध दिया और क़सम खाई कि जब तक मेरी तौबा क़ुबूल न होगी इसी तरह बंधा रहूँगा चाहे इसी हालत में मौत आ जाये। चुनाँचे सात दिन मुकम्मल इसी तरह बंधे खड़े रहे, उनकी बीवी और लड़की निगरानी और देखभाल करती थीं, इनसानी ज़रूरत (पेशाब-पाख़ाने) के वक़्त और नमाज़ के वक़्त खोल देतीं और फ़ारिग़ होने के बाद फिर बाँध देती थीं, खाने पीने के पास न जाते थे यहाँ तक कि बेहोशी तारी हो जाती थी।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जब इसकी इत्तिला मिली तो फ़रमाया कि अगर वह शुरू ही में मेरे पास आ जाते तो मैं उनके लिये इस्तिग़फ़ार करता और तौबा क़ुबूल हो जाती, अब जबकि वह यह काम कर गुज़रे तो अब तौबा की क़ुबूलियत नाज़िल होने का इन्तिज़ार ही करना है।

चुनाँचे सात दिन के बाद रात के आख़िर में आप पर ये आयतें उनकी तौबा क़ुबूल होने के मुताल्लिक़ नाज़िल हुईं। कुछ हज़रात ने उनको ख़ुशख़बरी सुनाई और खोलना चाहा मगर उन्होंने कहा कि जब तक ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मुझे न खोलेंगे मैं खुलना पसन्द न करूँगा। चुनाँचे जब आप सुबह की नमाज़ के वक़्त मस्जिद में तशरीफ़ लाये तो अपने हाथ मुबारक से उनको खोला। उक्त आयत में जो ख़ियानत करने और माल व औलाद की मुहब्बत से मग़लूब (प्रभावित) होने की मनाही का ज़िक्र आया है इसका असल सबब यह वाक़िआ़ है। वल्लाहु आलम।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِنۡ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجۡعَلۡ لَّكُمۡ فُرۡقَانًا وَّيُكَفِّرۡ عَنۡكُمۡ سَيِّاٰتِكُمۡ
وَيَغۡفِرۡ لَكُمۡ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الۡفَضۡلِ الۡعَظِيۡمِ ۝ وَاِذۡ يَمۡكُرُ بِكَ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا لِيُثۡبِتُوۡكَ اَوۡ يَقۡتُلُوۡكَ اَوۡ
يُخۡرِجُوۡكَ ؕ وَيَمۡكُرُوۡنَ وَيَمۡكُرُ اللّٰهُ ؕ وَاللّٰهُ خَيۡرُ الۡمٰكِرِيۡنَ ۝ وَاِذَا تُتۡلٰى عَلَيۡهِمۡ اٰيٰتُنَا قَالُوۡا قَدۡ
سَمِعۡنَا لَوۡ نَشَآءُ لَقُلۡنَا مِثۡلَ هٰذَاۤ ۙ اِنۡ هٰذَاۤ اِلَّاۤ اَسَاطِيۡرُ الۡاَوَّلِيۡنَ ۝ وَاِذۡ قَالُوا اللّٰهُمَّ اِنۡ
كَانَ هٰذَا هُوَ الۡحَقَّ مِنۡ عِنۡدِكَ فَاَمۡطِرۡ عَلَيۡنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِ ائۡتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيۡمٍ ۝
وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمۡ وَاَنۡتَ فِيۡهِمۡ ؕ وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمۡ وَهُمۡ يَسۡتَغۡفِرُوۡنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इन् तत्तक़ुल्ला-ह यज्अल्लकुम् फ़ुर्क़ानंव्-व युकफ़्फ़िर् अ़न्कुम् सय्यिआतिकुम् व यग़्फ़िर् लकुम्, वल्लाहु ज़ुल्फ़ज़्लिल्-अ़ज़ीम (29) व इज़् यम्कुरु बिकल्लज़ी-न क-फ़रू लियुस्बितू-क औ यक़्तुलू-क औ युख़्रिजू-क, व यम्कुरू-न व यम्कुरुल्लाहु, वल्लाहु ख़ैरुल्-माकिरीन (30) व इज़ा तुत्ला अ़लैहिम् आयातुना क़ालू क़द् समिअ़्ना लौ नशा-उ लक़ुल्ना मिस्-ल हाज़ा इन् हाज़ा इल्ला असातीरुल्-अव्वलीन (31) व इज़् क़ालुल्लाहुम्-म इन् का-न हाज़ा हुवल्-हक़्-क़ मिन् अ़िन्दि-क फ़अम्तिर् अ़लैना हिजा-रतम् मिनस्समा-इ अविअ्तिना बिअ़ज़ाबिन् अलीम (32) व मा कानल्लाहु लियुअ़ज़्ज़ि-बहुम् व अन्-त फ़ीहिम्, व मा कानल्लाहु मुअ़ज़्ज़ि-बहुम् व हुम् यस्तग़्फ़िरून (33)	ऐ ईमान वालो! अगर तुम डरते रहो अल्लाह से तो कर देगा तुम में फ़ैसला और दूर कर देगा तुमसे तुम्हारे गुनाह और तुमको बख़्श देगा, और अल्लाह का फ़ज़्ल बड़ा है। (29) और जब फ़रेब करते थे काफ़िर कि तुझको क़ैद कर दें या मार डालें या निकाल दें, और वे भी दाँव करते थे और अल्लाह भी दाँव करता था, और अल्लाह का दाँव सबसे बेहतर है। (30) और जब कोई पढ़े उन पर हमारी आयतें तो कहें हम सुन चुके अगर हम चाहें तो हम भी कह लें ऐसा, यह तो कुछ भी नहीं मगर अहवाल हैं अगलों के। (31) और जब वे कहने लगे कि या अल्लाह! अगर यही दीन हक़ है तेरी तरफ़ से तो हम पर बरसा दे पत्थर आसमान से, या ला हम पर कोई दर्दनाक अ़ज़ाब। (32) और अल्लाह हरगिज़ न अ़ज़ाब करता उन पर जब तक तू रहता उनमें, और अल्लाह हरगिज़ न अ़ज़ाब करेगा उन पर जब तक वे माफ़ी माँगते रहेंगे। (33)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और) ऐ ईमान वालो! (अल्लाह की फ़रमाँबरदारी की और बरकतें सुनो, वह यह कि) अगर तुम अल्लाह से डर कर (हुक्मों का पालन करते) रहोगे तो अल्लाह तआ़ला तुमको एक फ़ैसले की चीज़ देगा (इसमें हिदायत और दिल का नूर जिससे हक़ व बातिल में इल्मी फ़ैसला होता है

और दुश्मनों पर ग़लबा और आख़िरत की निजात जिससे हक़ व बातिल में अ़मली फ़ैसला होता है सब आ गया)। और तुमसे तुम्हारे गुनाह दूर कर देगा, और तुमको बख़्श देगा, और अल्लाह तआ़ला बड़े फ़ज़्ल वाला है (ख़ुदा जाने अपने फ़ज़्ल से और क्या-क्या दे दे, जो अन्दाज़े और गुमान में भी न आता हो)। और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! मुसलमानों के सामने नेमत की याददेहानी के लिये) उस वाक़िए का भी ज़िक्र कीजिए जबकि काफ़िर लोग आपके बारे में (बड़ी-बड़ी) तदबीरें सोच रहे थे कि (आया) क़ैद कर लें या आपको क़त्ल कर डालें, या आपको वतन से निकाल दें, और वे तो अपनी तदबीरें कर रहे थे और अल्लाह (पाक) अपनी तदबीरें (उन तदबीरों को दफ़ा करने के लिये) कर रहे थे, और सबसे ज़्यादा मज़बूत तदबीर वाला अल्लाह है (जिसके सामने उनकी सारी तदबीरें बेकार हो गयीं और आप बाल-बाल महफ़ूज़ रहे और सही सालिम मदीना आ पहुँचे। चूँकि आपका इस तरह बच रहना मोमिनों के हक़ में नेकबख़्ती के बहुत से दरवाज़े खुलने का ज़रिया है इसलिये इस वाक़िए के ज़िक्र का हुक्म फ़रमाया)। और (उन काफ़िरों की यह हालत है कि) जब उनके सामने हमारी आयतें पढ़ी जाती हैं तो कहते हैं कि हमने सुन (कर देख) लिया, (यह तो कोई मोजिज़ा वग़ैरह नहीं क्योंकि) अगर हम इरादा करें तो इसके बराबर हम भी कहकर ले आएँ, यह तो कुछ भी नहीं, सिर्फ़ बेसनद बातें हैं, जो पहलों से (नक़ल होती हुई) चली आ रही हैं (कि पहली मिल्लतों और मज़हबों वाले भी यही तौहीद और मरने के बाद क़ियामत में ज़िन्दा होकर उठने वग़ैरह के दावे करते आये हैं, उन्हीं के मज़ामीन आप नक़ल कर रहे हैं)।

और (इससे बढ़कर क़ाबिले ज़िक्र वह हालत है) जबकि उन लोगों ने (अपने इस हद से बढ़े हुए जहल, दिल की सख़्ती और हठधर्मी ज़ाहिर करने को यह भी) कहा कि ऐ अल्लाह! अगर यह (क़ुरआन) वाक़ई आपकी तरफ़ से है, तो हम पर (इसके न मानने की वजह से) आसमान से पत्थर बरसाईये, या हम पर (और) कोई दर्दनाक अ़ज़ाब भेज दीजिये (जो कि असाधारण होने में पत्थरों की बारिश की तरह हो। और जब ऐसे अ़ज़ाब उन पर न पड़े तो अपने सही रास्ते और दीन पर होने का नाज़ करते हैं) और (यह नहीं समझते कि उनके बातिल और ग़ैर-हक़ पर होने के बावजूद कुछ ख़ास रुकावटों और बाधाओं की वजह से यह ज़िक्र हुई सज़ायें नाज़िल नहीं होतीं। उन रुकावटों और बाधाओं का बयान यह है कि) अल्लाह तआ़ला ऐसा न करेंगे कि उनमें आपके होते हुए उनको (ऐसा) अ़ज़ाब दें, और (यह कि) अल्लाह तआ़ला उनको (ऐसा) अ़ज़ाब न देंगे जिस हालत में कि वे इस्तिग़फ़ार भी करते रहते हैं (यह और बात है कि वह इस्तिग़फ़ार ईमान न होने के सबब आख़िरत में लाभदायक न हो, लेकिन चूँकि नेक अ़मल है इसलिये दुनिया में तो काफ़िरों को नफ़ा देने वाला हो जाता है। मतलब यह कि इन असाधारण सज़ाओं से दो बातें रोक और बाधा हैं- एक हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मक्का में या दुनिया में तशरीफ़ रखना और दूसरा उन लोगों का अपने तवाफ़ वग़ैरह में यह कहना 'ग़ुफ़रान-क' जो कि हिजरत और वफ़ात के बाद भी बाक़ी था। और एक और बाधा और रुकावट का बयान हदीसों में है कि किसी का हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्मत में होना, चाहे उम्मत-ए-दावत

ही हो, यह बाधा और रुकावट बावजूद किसी के इस्तिग़फ़ार न करने के भी बाक़ी है। पस ये चीज़ें अपनी ज़ात के एतिबार से रोक और बाधा हुईं, यह अलग बात है कि कभी किसी मौक़े पर रोक और बाधा के होते हुए भी कोई असाधारण अ़ज़ाब किसी अस्थायी और वक़्ती मस्लेहत से ज़ाहिर हो जाये, जैसे कि पत्थरों की बारिश और सूरतों का बदल जाने वग़ैरह का क़ियामत के नज़दीक में होना हदीसों में बयान हुआ है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में इसका ज़िक्र था कि इनसान के लिये माल और औलाद एक फ़ितना यानी आज़माईश की चीज़ है। क्योंकि इन चीज़ों की मुहब्बत में मग़लूब होकर इनसान उमूमन ख़ुदा तआ़ला और आख़िरत से ग़ाफ़िल हो जाता है, हालाँकि इस अ़ज़ीम नेमत का अ़क़्ली तक़ाज़ा यह था कि वह अल्लाह तआ़ला के इस एहसान की वजह से उसकी तरफ़ और ज़्यादा झुकता।

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत इसी मज़मून की पूरक है। इसमें फ़रमाया है कि जो शख़्स अ़क़्ल को तबीयत पर ग़ालिब रखकर इस इम्तिहान में साबित-क़दम रहे और अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी व मुहब्बत को सब चीज़ों पर आगे रखे जिसको क़ुरआन व शरीअ़त की परिभाषा में तक़्वा कहा जाता है, तो उसको उसके सिले में तीन चीज़ें अ़ता होती हैं- फ़ुरक़ान, कफ़्फ़ारा-ए-सय्यिआत, मग़फ़िरत।

फ़ुरक़ान और फ़र्क़ दोनों मस्दर एक ही मायने के हैं। मुहावरों में फ़ुरक़ान उस चीज़ के लिये बोला जाता है जो दो चीज़ों में स्पष्ट तौर पर फ़र्क़ और फ़ासला कर दे। इसी लिये फ़ैसले को फ़ुरक़ान कहते हैं, क्योंकि वह हक़ और नाहक़ में फ़र्क़ स्पष्ट कर देता है। अल्लाह तआ़ला की मदद को भी फ़ुरक़ान कहा जाता है क्योंकि उसके ज़रिये हक़ वालों को फ़तह और उनके मुख़ालिफ़ को शिकस्त होकर हक़ व बातिल का फ़र्क़ स्पष्ट हो जाता है। क़ुरआने करीम में इसी मायने के लिये ग़ज़्वा-ए-बदर को यौमुल-फ़ुरक़ान के नाम से नामित किया है।

इस आयत में तक़्वा इख़्तियार करने वालों को फ़ुरक़ान अ़ता होने का अक्सर मुफ़स्सिरीन सहाबा के नज़दीक यही मतलब है कि अल्लाह तआ़ला की नुसरत व इमदाद और हिफ़ाज़त उनके साथ होती है, कोई दुश्मन उनको तकलीफ़ नहीं पहुँचा सकता और तमाम मक़ासिद में कामयाबी उनकी साथी होती है:

हर कि तरसीद अज़ हक़ व तक़्वा गज़ीद
तरसद अज़ वे जिन्न व इन्स व हर कि दीद

यानी जो अल्लाह से डरता और परहेज़गारी इख़्तियार करता है उससे अल्लाह की तमाम मख़्लूक़ात डरती (यानी उसकी रियायत करती) हैं। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

तफ़सीर-ए-महाईमी में है कि इसमें इस बात की तरफ़ इशारा है कि पिछले वाक़िए में हज़रत अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से जो अपने बाल-बच्चों और घर वालों की हिफ़ाज़त की ख़ातिर ग़लती और चूक हो गयी थी वह इसलिये भी ख़ता थी कि बाल-बच्चों की हिफ़ाज़त का भी सही

रास्ता यही था कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पूरी फ़रमाँबरदारी को अपना चलन बनाया जाता तो सब माल व औलाद अल्लाह तआ़ला की पनाह और हिफ़ाज़त में आ जाते। और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि फ़ुरक़ान से मुराद इस आयत में वह अ़क्ल व समझ है जिसके ज़रिये हक़ व बातिल, खरे खोटे में फ़र्क़ करना आसान हो जाये, तो मायने यह हुए कि तक़वा इख़्तियार करने वालों को अल्लाह तआ़ला ऐसी समझ और अ़क्ल अ़ता फ़रमा देते हैं कि उनको अच्छे बुरे में फ़ैसला करना आसान हो जाता है।

दूसरी चीज़ जो तक़वा (परहेज़गारी) के सिले में अ़ता होती है वह गुनाहों का कफ़्फ़ारा है, यानी जो ख़तायें और कोताहियाँ उससे सर्ज़द होती हैं दुनिया में उनका कफ़्फ़ारा और बदल कर दिया जाता है, यानी उसको ऐसे नेक आमाल की तौफ़ीक़ हो जाती है जो उसकी सब ख़ताओं पर ग़ालिब आ जाते हैं। तीसरी चीज़ जो तक़वे के सिले में मिलती है वह आख़िरत की मग़फ़िरत और सब गुनाहों, ख़ताओं की माफ़ी है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيْمِ○

यानी अल्लाह तआ़ला बड़े फ़ज़्ल व एहसान वाले हैं। इसमें इस तरफ़ इशारा कर दिया गया कि अ़मल की जज़ा (बदला) तो अ़मल के पैमाने पर होती है। यहाँ भी तक़वे की जो बेहतरीन जज़ा तीन चीज़ों में बयान हुई है वह तो जज़ा और बदले के तौर पर है, मगर अल्लाह तआ़ला बड़े फ़ज़्ल व एहसान वाले हैं, उनका देना और अ़ता फ़रमाना किसी पैमाने के साथ ख़ास और पाबन्द नहीं, और उनके एहसान व इनाम का कोई अन्दाज़ा नहीं लगा सकता, इसलिये तक़वा इख़्तियार करने वालों के लिये अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व इनाम से इन तीन चीज़ों के अ़लावा भी बहुत बड़ी उम्मीदें रखना चाहिये।

दूसरी आयत में अल्लाह तआ़ला के एक ख़ास इनाम व एहसान का ज़िक्र है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम पर बल्कि पूरी दुनिया पर हुआ है, कि हिजरत (मदीना में तशरीफ़ लाने) से पहले जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम काफ़िरों के घेरे में थे और वे आपको क़ैद या क़त्ल करने के मश्विरा कर रहे थे तो अल्लाह तआ़ला ने उनके नापाक इरादों को ख़ाक में मिला दिया और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सलामत व आ़फ़ियत के साथ मदीना तय्यिबा पहुँचा दिया।

जिसका वाक़िआ़ तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी में मुहम्मद बिन इस्हाक़, इमाम अहमद और इब्ने जरीर रह. की रिवायत वग़ैरह से यह नक़ल किया गया है कि जब मदीना तय्यिबा से आने वाले अन्सार का मुसलमान हो जाना मक्का में मशहूर हुआ तो मक्का के क़ुरैशियों को यह फ़िक्र हुई कि अब तक तो इनका मामला सिर्फ़ मक्का में सीमित था जहाँ हर तरह की ताक़त हमारे हाथ में है और अब जबकि मदीना में इस्लाम फैलने लगा और बहुत से सहाबा किराम हिजरत करके मदीना तय्यिबा पहुँच गये तो अब इसकी भी प्रबल संभावना है कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) भी वहाँ चले जायें, इसलिये मक्का के सरदारों ने मश्विरे

के लिये दारुन्नदवा (मक्का के सरदारों की मश्विरा कमेटी) में एक ख़ास मीटिंग तलब की। दारुन्नदवा मस्जिदे हराम के निकट क़ुसई बिन किलाब का मकान था जिसको उन लोगों ने क़ौमी समस्याओं में मश्विरे और मीटिंग करने के लिये मख़्सूस कर रखा था और इस्लामी दौर में उसको मस्जिदे हराम में दाख़िल कर लिया गया है। कहा जाता है कि मौजूदा बाबुज़्ज़ियादात ही वह जगह थी जिसको दारुन्नदवा कहा जाता था।

आदत के अनुसार इस अहम और ख़ास मश्विरे के लिये क़ुरैशी सरदारों का इज्तिमा दारुन्नदवा में हुआ जिसमें अबू जहल, नज़र बिन हारिस, उतबा, शैबा, उमैया बिन ख़लफ़, अबू सुफ़ियान वग़ैरह क़ुरैश के तमाम बड़े और वरिष्ट व्यक्ति शामिल हुए और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और इस्लाम की बढ़ती हुई ताक़त के मुक़ाबले की तदबीरें विचाराधीन आयीं।

अभी मश्विरे की मीटिंग शुरू ही हुई थी कि शैतान मरदूद एक उम्र रसीदा अ़रबी शैख़ की सूरत में दारुन्नदवा के दरवाज़े पर खड़ा हुआ। लोगों ने पूछा कि तुम कौन हो और क्यों आये हो? बतलाया कि मैं नज्द का बाशिन्दा हूँ। मुझे मालूम हुआ है कि आप लोग एक अहम मश्विरा कर रहे हैं तो क़ौमी हमदर्दी का ख़्याल रखते हुए मैं भी हाज़िर हो गया कि मुम्किन है मैं कोई मुफ़ीद मश्विरा दे सकूँ।

यह सुनकर उसको अन्दर बुला लिया गया और मश्विरा शुरू हुआ तो सुहैली की रिवायत के मुताबिक़ अबुल-बुख़्तरी इब्ने हिशाम ने यह मश्विरा पेश किया कि उनको (यानी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को) लोहे की ज़न्जीरों में क़ैद करके मकान का दरवाज़ा बन्द कर दिया जाये और छोड़ दिया जाये, यहाँ तक कि (अल्लाह की पनाह) वह आप अपनी मौत मर जायें। यह सुनकर शैख़ नज्दी शैतान मरदूद ने कहा कि यह राय सही नहीं। क्योंकि अगर तुमने ऐसा किया तो मामला छुपेगा नहीं, बल्कि इसकी शोहरत दूर-दूर पहुँच जायेगी और उनके साथी और दोस्तों के जाँनिसारी के कारनामे तुम्हारे सामने हैं, बहुत मुम्किन है कि ये लोग जमा होकर तुम पर हमला कर दें और अपने क़ैदी को तुमसे छुड़ा लें। सब तरफ़ से आवाज़ें उठीं कि शैख़ नज्दी की बात सही है। उसके बाद अबुल-अस्वद ने यह राय पेश की कि उनको मक्का से निकाल दिया जाये, यह बाहर जाकर जो चाहें करते रहें हमारा शहर उनके फ़साद से सुरक्षित हो जायेगा और हमें कुछ लड़ाई-झगड़ा भी करना न पड़ेगा।

शैख़ नज्दी यह सुनकर फिर बोला कि यह राय भी सही नहीं। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि वह कैसे मीठी बोली और दिलकश कलाम वाले आदमी हैं, लोग उनका कलाम सुनकर फ़िदा हो जाते और उनकी बातों के जाल में फंस जाते हैं। अगर उनको इस तरह आज़ाद छोड़ दिया तो बहुत जल्दी अपनी ताक़तवर जमाअ़त बना लेंगे और तुम पर हमला करके तुमको शिकस्त दे देंगे। अबू जहल बोला कि जो करने का काम है तुममें से किसी ने नहीं समझा। मेरी समझ में एक बात आई है वह यह कि हम अ़रब के सब क़बीलों में से हर क़बीले का एक-एक नौजवान ले लें और हर एक को तेज़ धारदार तलवार दे दें। ये सब लोग एक ही बार में एक साथ उन पर हमला करके क़त्ल कर दें। हम उनके फ़साद से तो इस तरह निजात हासिल कर लें। अब रहा उनके

क़बीले बनू अ़ब्दे मुनाफ़ का मुतालबा जो उनके क़त्ल के सबब हम पर आ़यद होगा सो ऐसी सूरत में जबकि क़त्ल किसी एक ने नहीं बल्कि हर क़बीले के एक-एक शख़्स ने किया है तो क़िसास यानी जान के बदले जान लेने का मुतालबा तो बाक़ी नहीं रह सकता, सिर्फ़ ख़ून-बहा या दियत के माल का मुतालबा रह जायेगा वह हम सब क़बीलों से जमा करके उनको दे देंगे और बेफ़िक्र हो जायेंगे।

शैख़ नज्दी शैतान मरदूद ने यह सुनकर कहा कि बस राय यही है और इसके सिवा कोई चीज़ कारगर नहीं। पूरी मज्लिस ने इसी के हक़ में राय दे दी और आज ही रात में अपना यह नापाक इरादा पूरा करने का फ़ैसला कर लिया गया।

मगर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की ग़ैबी ताक़त को ये जाहिल क्या समझ सकते थे। इस तरफ़ जिब्रीले अमीन ने उनके दारुल-मश्विरा की सारी कैफ़ियत से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बाख़बर करके यह तदबीर बतलाई कि आज रात में आप अपने बिस्तर पर आराम न करें और बतलाया कि अब अल्लाह तआ़ला ने आपको मक्का से हिजरत करने की इजाज़त दे दी है।

उधर मश्विरे के मुताबिक़ शाम ही से क़ुरैशी नौजवानों ने सरवरे दो आ़लम के मकान का घेराव कर लिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह देखा तो हज़रत अ़ली मुर्तज़ा कर्रमल्लाहु वज्हहू को हुक्म दिया कि आज की रात वह आपके बिस्तर पर आराम करें और यह ख़ुशख़बरी सुना दी कि अगरचे बज़ाहिर इसमें आपकी जान का ख़तरा है मगर दुश्मन आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे।

हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इस काम के लिये अपने आपको पेश कर दिया और आपके बिस्तर पर लेट गये, मगर अब मुश्किल यह सामने थी कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस घेराबन्दी से कैसे निकलें। इस मुश्किल को अल्लाह तआ़ला ने मोजिज़े के ज़रिये हल किया, वह यह कि अल्लाह के हुक्म से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक मुट्ठी में मिट्टी भरकर बाहर तशरीफ़ लाये और घेराबन्दी करने वाले जो कुछ आपके बारे में गुफ़्तगू कर रहे थे उसका जवाब दिया, मगर अल्लाह तआ़ला ने उनकी नज़रों और फ़िक्रों को आपकी तरफ़ से फेर दिया कि किसी ने आपको न देखा, हालाँकि आप उनमें से हर एक के सर पर ख़ाक डालते हुए निकले चले गये। आपके तशरीफ़ ले जाने के बाद किसी आने वाले ने उन लोगों से पूछा कि यहाँ क्यों खड़े हो तो उन्होंने बतलाया कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के इन्तिज़ार में। उसने कहा कि तुम किस ग़लत-फ़हमी में हो, वह तो यहाँ से निकलकर जा भी चुके हैं और तुम में से हर एक के सर पर ख़ाक डालते हुए गये हैं। उन लोगों ने अपने अपने सरों पर हाथ रखा तो इसकी पुष्टि हुई कि हर एक के सर पर मिट्टी पड़ी हुई थी।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू आपके बिस्तर पर लेटे हुए थे मगर घेराबन्दी करने वालों ने उनके करवटें बदलने से पहचान लिया कि यह मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) नहीं इसलिये क़त्ल करने के लिये आगे नहीं बढ़े। सुबह तक घेराव करने के बाद ये लोग नाकाम व

नामुराद होकर वापस हो गये। यह रात और इसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये अपनी जान को ख़तरे में डालना हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ख़ास फ़ज़ाईल (विशेषताओं) में से है।

क़ुरैशी सरदारों के मश्विरे में जो तीन रायें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ पेश की गयी थीं उन तीनों को क़ुरआने करीम की इस आयत में ज़िक्र फ़रमाया है:

وَاِذْ يَمْكُرُبِكَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لِيُثْبِتُوْكَ اَوْيَقْتُلُوْكَ اَوْيُخْرِجُوْكَ.

यानी वह वक़्त याद रखने के क़ाबिल है जबकि काफ़िर आपके ख़िलाफ़ तदबीरें सोच रहे थे कि आपको क़ैद करें या क़त्ल कर दें या शहर-बदर कर दें।

मगर अल्लाह तआ़ला ने उनकी सब तदबीरें ख़ाक में मिला दीं। इसी लिये आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاللّٰهُ خَيْرُالْمٰكِرِيْنَ٥

यानी अल्लाह तआ़ला बेहतर तदबीर करने वाले हैं। जो सारी तदबीरों पर ग़ालिब आ जाती है, जैसा कि इस वाक़िए में सब ने देख लिया।

लफ़्ज़ मकर के मायने अ़रबी लुग़त में यह हैं कि किसी हीले व तदबीर के ज़रिये अपने मुक़ाबिल शख़्स को उसके इरादे से रोक दिया जाये। फिर अगर यह काम किसी नेक मक़सद से किया जाये तो यह अच्छा और क़ाबिले तारीफ़ मकर है और किसी बुरे मक़सद से किया जाये तो नापसन्दीदा और बुरा है। इसलिये यह लफ़्ज़ इनसान के लिये भी बोला जा सकता है और अल्लाह तआ़ला के लिये भी। मगर अल्लाह तआ़ला के लिये सिर्फ़ ऐसे माहौल में इस्तेमाल होता है जहाँ कलाम के मज़मून और तक़ाबुल के ज़रिये बुरे मकर का शुब्हा न हो सके। (तफ़सीरे मज़हरी) जैसे यहाँ है।

इस जगह यह बात भी क़ाबिले तवज्जोह है कि आयत के आख़िर में जो अलफ़ाज़ इरशाद फ़रमाये वो मुज़ारे के कलिमे के साथ हैं, जो वर्तमान व भविष्य के मायने पर दलालत करता है। इरशाद फ़रमायाः

وَيَمْكُرُوْنَ وَيَمْكُرُاللّٰهُ.

यानी वे लोग ईमान वालों को तकलीफ़ देने की तदबीरें करते रहेंगे और अल्लाह तआ़ला उनकी तदबीरों के नाकाम करने की तदबीर करते रहेंगे। इसमें इशारा है कि काफ़िरों का यह चलन हमेशा रहेगा कि मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने की तदबीरें करें, इसी तरह अल्लाह तआ़ला की नुसरत व मदद भी हमेशा ही सच्चे मुसलमानों से उनकी तदबीरों को दूर करती रहेगी।

इकत्तीसवीं और बत्तीसवीं आयतों में इसी दारुन्नदवा के एक शरीक नज़र बिन हारिस की एक बेहूदा गुफ़्तगू और तैंतीसवीं आयत में उसका जवाब बयान हुआ है। नज़र बिन हारिस चूँकि व्यापारी आदमी था, विभिन्न मुल्कों के सफ़रों में यहूदियों व ईसाईयों की किताबें और उनकी

इबादतें देखने का बार-बार इत्तिफ़ाक़ होता था, इसलिये जब उसने क़ुरआने करीम में पिछली उम्मतों के हालात सुने तो कहने लगा कि:

قَدْ سَمِعْنَا لَوْ نَشَآءُ لَقُلْنَا مِثْلَ هٰذَآ اِنْ هٰذَآ اِلَّآ اَسَاطِيْرُ الْاَوَّلِيْنَ٥

यानी ये बातें तो हमारी सुनी हुई हैं। अगर हम चाहें तो हम भी कह सकते हैं। ये तो पिछले लोगों की कहानियाँ हैं।

और जब कुछ सहाबा ने उसको लाजवाब किया कि अगर तुम ऐसा कलाम कह सकते हो तो फिर कहते क्यों नहीं जबकि क़ुरआन ने हक़ व बातिल का फ़ैसला इस पर रख दिया है और पूरी दुनिया को यह चैलेंज दिया है कि अगर विरोधी सच्चे हैं तो क़ुरआन की एक छोटी सी सूरत ही की मिसाल पेश करें। और विरोध व मुख़ालफ़त में सरधड़ की बाज़ी लगाने वाले माल व औलाद क़ुरबान करने वाले सब मिलकर भी एक छोटी सी सूरत क़ुरआन के मुक़ाबले में पेश न कर सके तो अब यह कहना कि हम चाहें तो हम भी ऐसा कलाम कह सकते हैं, एक ऐसी बात है जो कोई ग़ैरतमन्द आदमी नहीं कह सकता। फिर जब नज़र बिन हारिस से सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अल्लाह के इस कलाम का हक़ होना बयान किया तो अपने ग़लत मज़हब पर पुख़्तगी और जमाव दिखलाने के लिये कहने लगा:

اَللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَ الْحَقَّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِ ائْتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ٥

यानी ऐ अल्लाह! अगर यही क़ुरआन आपकी तरफ़ से हक़ है तो हम पर पत्थर बरसा दीजिए या कोई दूसरा सख़्त अ़ज़ाब नाज़िल कर दीजिए।

क़ुरआने करीम ने ख़ुद इसका जवाब दिया। पहले इरशाद फ़रमाया:

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَاَنْتَ فِيْهِمْ.

यानी अल्लाह तआ़ला ऐसा नहीं करेंगे कि आपके मक्का में होते हुए उन पर अ़ज़ाब नाज़िल करें। क्योंकि अव्वल तो तमाम ही नबियों के साथ हक़ तआ़ला का दस्तूर यह है कि जिस बस्ती में वे मौजूद हों उस पर उस वक़्त तक अ़ज़ाब नाज़िल नहीं फ़रमाते जब तक अपने पैग़म्बरों को वहाँ से निकाल न लें। जैसे हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम और सालेह अ़लैहिस्सलाम और लूत अ़लैहिस्सलाम के मामले में सामने आया कि जब तक ये हज़रात बस्ती में रहे अ़ज़ाब नहीं आया, जब वहाँ से निकाल लिये गये उस वक़्त अ़ज़ाब नाज़िल हुआ। ख़ुसूसन तमाम नबियों के सरदार जो रहमतुल्-लिल्आ़लमीन का लक़ब देकर भेजे गये हैं, आपके किसी बस्ती में मौजूद होते हुए उन पर अ़ज़ाब आना आपकी शान के ख़िलाफ़ था।

जवाब का ख़ुलासा यह हुआ कि तुम तो क़ुरआन और इस्लाम की मुख़ालफ़त की वजह से इसी के हक़दार हो कि तुम पर पत्थर बरसाये जायें, मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मक्का में मौजूद होना इससे बाधा और रोक है। इमाम इब्ने जरीर रह. ने फ़रमाया कि आयत का यह हिस्सा उस वक़्त नाज़िल हुआ जबकि आप मक्का मुकर्रमा में मौजूद थे, फिर मदीना की हिजरत के बाद आयत का दूसरा हिस्सा यह नाज़िल हुआ:

وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُوْنَ۝

यानी अल्लाह तआ़ला उन पर अ़ज़ाब नाज़िल करने वाले नहीं जबकि वे इस्तिग़फ़ार करते हैं। मुराद इससे यह है कि आपके मदीना शरीफ़ चले जाने के बाद अगरचे सार्वजनिक अ़ज़ाब की यह बाधा दूर हो गयी कि आप वहाँ मौजूद थे, मगर उस वक़्त भी एक अ़ज़ाब की एक बाधा और रुकावट यह मौजूद रही कि बहुत से कमज़ोर मुसलमान जो हिजरत न कर सकते थे मक्का में रह गये थे और वे अल्लाह तआ़ला से इस्तिग़फ़ार करते रहते थे। उनकी ख़ातिर से मक्का वालों पर अ़ज़ाब नाज़िल नहीं किया गया।

फिर जब ये सब हज़रात भी हिजरत करके मदीना मुनव्वरा पहुँच गये तो बाद वाली आयत का यह जुमला नाज़िल हुआः

وَمَالَهُمْ اَلَّا يُعَذِّبَهُمُ اللّٰهُ وَهُمْ يَصُدُّوْنَ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ.

यानी यह कैसे हो सकता है कि अल्लाह तआ़ला उनको अ़ज़ाब न दें हालाँकि वे लोगों को मस्जिदे हराम (यानी ख़ाना काबा की मस्जिद) में इबादत करने से रोकते हैं।

मतलब यह है कि अब अ़ज़ाब को रोकने वाली दोनों रुकावटें और बाधायें दूर हो चुकीं, न हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मक्का में रहे और न इस्तिग़फ़ार करने वाले मुसलमान मक्का में बाक़ी रहे, तो अब अ़ज़ाब आने से कोई रुकावट बाक़ी नहीं।

ख़ुसूसन उनके अ़ज़ाब का हक़दार होने में ख़ुद इस्लाम विरोधी होने के अ़लावा इस जुर्म का भी इज़ाफ़ा हो गया कि ये लोग ख़ुद तो इबादत के क़ाबिल न थे और जो मुसलमान इबादत उमरा व तवाफ़ के लिये मस्जिदे हराम (यानी काबे और काबे की मस्जिद) में जाना चाहें उनको रोकने लगे, तो अब इनका अ़ज़ाब का हक़दार होना बिल्कुल मुकम्मल हो गया। चुनाँचे मक्का फ़तह होने के ज़रिये इन पर अ़ज़ाब नाज़िल किया गया।

मस्जिदे हराम में दाख़िल होने से रोकने का वाक़िआ़ हुदैबिया की मुहिम में पेश आया था जबकि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा किराम के साथ उमरे के इरादे से तशरीफ़ ले गये और मक्का के मुश्रिकों ने आपको मक्का में दाख़िल होने से रोक दिया और आपको और सब सहाबा किराम को अपने एहराम खोलने और वापस जाने पर मजबूर किया। यह वाक़िआ़ सन् 6 हिजरी का है, इसके दो साल बाद सन् 8 हिजरी में मक्का मुकर्रमा फ़तह हो गया। इस तरह उन पर मुसलमानों के हाथों अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब नाज़िल हुआ।

इमाम इब्ने जरीर रह. की इस तफ़सीर का मदार इस पर है कि अ़ज़ाब को रोकने वाली चीज़ आपका मक्का में होना क़रार दिया जाये। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दुनिया में मौजूद रहना ही अ़ज़ाब के लिये रुकावट है, जब तक आप दुनिया में तशरीफ़ रखते हैं आपकी क़ौम पर अ़ज़ाब नहीं आ सकता। और वजह इसकी ज़ाहिर है कि आपका हाल दूसरे नबियों की तरह नहीं कि वे ख़ास-ख़ास मक़ामात या क़बीलों की तरफ़ भेजे गये थे। जब वहाँ से निकल कर किसी दूसरे ख़ित्ते में पहुँच गये तो उनकी क़ौम पर

अ़ज़ाब आ जाता था, बख़िलाफ़ सैयदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के, कि आपकी नुबुव्वत व रिसालत सारे आ़लम के लिये और क़ियामत तक के लिये आ़म और शामिल है। पूरी दुनिया आपके नबी बनाकर भेजे जाने का मक़ाम और रिसालत का दायरा है, इसलिये जब तक आप दुनिया के किसी हिस्से में मौजूद हैं आपकी क़ौम पर अ़ज़ाब नहीं आ सकता।

इस तफ़सीर पर मतलब यह होगा कि मक्का वालों की हरकतों का तक़ाज़ा तो यही था कि उन पर पत्थर बरसाये जायें मगर दो चीज़ें इस अ़ज़ाब से रोक हुईं- एक हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दुनिया में तशरीफ़ फ़रमा होना। दूसरे मक्का वालों का इस्तिग़फ़ार करना (अल्लाह से माफ़ी चाहना) क्योंकि ये लोग मुश्रिक व काफ़िर होने के बावजूद अपने तवाफ़ वग़ैरह में 'ग़ुफ़रान-क, ग़ुफ़रान-क' कहा करते और अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत (माफ़ी) तलब किया करते थे। उनका यह इस्तिग़फ़ार कुफ़्र व शिर्क के साथ अगरचे आख़िरत में फ़ायदेमन्द न हो मगर दुनिया में इसका भी यह नफ़ा उनको मिल गया कि दुनिया में अ़ज़ाब से बच गये। अल्लाह तआ़ला किसी के अ़मल को ज़ाया नहीं करते, काफ़िर व मुश्रिक लोग अगर कोई नेक अ़मल करते हैं तो उसका बदला उनको इसी दुनिया में दे दिया जाता है। इसके बाद जो यह इरशाद फ़रमाया कि यह कैसे हो सकता है कि अल्लाह तआ़ला इनको अ़ज़ाब न दे हालाँकि ये लोग मुसलमानों को मस्जिदे हराम में इबादत करने से रोकते हैं, इसका मतलब इस सूरत में यह होगा कि दुनिया में अ़ज़ाब न होने से ये लोग घमण्डी और मुत्मईन न हो जायें कि हम मुजरिम ही नहीं, या हम पर अ़ज़ाब नहीं होगा। अगर दुनिया में न हुआ तो आख़िरत के अ़ज़ाब से इनको किसी तरह छुटकारा नहीं। इस तफ़सीर पर "मा लहुम अल्ला युअ़ज़्ज़ि-बहुम" में अ़ज़ाब से आख़िरत का अ़ज़ाब मुराद होगा।

ज़िक्र हुई इन आयतों से चन्द फ़ायदे हासिल हुए। अव्वल यह कि जिस बस्ती में लोग इस्तिग़फ़ार करते हों अल्लाह तआ़ला का दस्तूर यह है कि उस पर अ़ज़ाब नाज़िल नहीं करते।

दूसरे यह कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के होते हुए आपकी उम्मत पर चाहे मुस्लिम हों या काफ़िर अ़ज़ाब नहीं आयेगा, और मुराद इससे यह है कि आ़म और सार्वजनिक अ़ज़ाब जिससे पूरी क़ौम तबाह हो जाये ऐसा अ़ज़ाब नहीं आयेगा, जैसे क़ौमे नूह, क़ौमे लूत, क़ौमे शुऐब वग़ैरह के साथ पेश आया, कि उनका नाम व निशान मिट गया। कुछ अफ़राद या व्यक्तियों पर कोई अ़ज़ाब आ जाये वह इसके विरुद्ध नहीं जैसा कि ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि मेरी उम्मत में **ख़स्फ़** और **मस्ख़** का अ़ज़ाब आयेगा। 'ख़स्फ़' के मायने ज़मीन में उतर जाना और 'मस्ख़' के मायने सूरत बिगड़कर बन्दर या सुअर वग़ैरह जानवरों की शक्ल में तब्दील हो जाना है। इसकी मुराद यही है कि उम्मत के कुछ अफ़राद पर ऐसे अ़ज़ाब भी आयेंगे।

और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दुनिया में होना क़ियामत तक बाक़ी रहेगा, क्योंकि आपकी रिसालत क़ियामत तक के लिये है, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस वक़्त भी ज़िन्दा हैं अगरचे उस ज़िन्दगी की सूरत पहली ज़िन्दगी से अलग और भिन्न है,

और यह बहस बेकार और फ़ुज़ूल है कि इन दोनों ज़िन्दगियों में फ़र्क़ क्या है, क्योंकि न इस पर उम्मत का कोई दीनी या दुनियावी काम टिका है न ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम ने ऐसी फ़ुज़ूल और बेज़रूरत बहसों को पसन्द फ़रमाया, बल्कि मना फ़रमाया है।

ख़ुलासा यह है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अपने रौज़े में ज़िन्दा होना और आपकी रिसालत का क़ियामत तक क़ायम रहना इसकी दलील है कि आप क़ियामत तक दुनिया में हैं, इसलिये यह उम्मत क़ियामत तक आ़म अ़ज़ाब से सुरक्षित रहेगी।

وَمَا لَهُمْ اَلَّا يُعَذِّبَهُمُ اللّٰهُ وَهُمْ يَصُدُّوْنَ عَنِ الْمَسْجِدِ

الْحَرَامِ وَمَا كَانُوْٓا اَوْلِيَآءَهٗ ؕ اِنْ اَوْلِيَآؤُهٗٓ اِلَّا الْمُتَّقُوْنَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۞ وَمَا كَانَ

صَلَاتُهُمْ عِنْدَ الْبَيْتِ اِلَّا مُكَآءً وَّتَصْدِيَةً ؕ فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ۞ اِنَّ

الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ لِيَصُدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ فَسَيُنْفِقُوْنَهَا ثُمَّ تَكُوْنُ

عَلَيْهِمْ حَسْرَةً ثُمَّ يُغْلَبُوْنَ ۠ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحْشَرُوْنَ ۞ لِيَمِيْزَ اللّٰهُ الْخَبِيْثَ مِنَ

الطَّيِّبِ وَيَجْعَلَ الْخَبِيْثَ بَعْضَهٗ عَلٰى بَعْضٍ فَيَرْكُمَهٗ جَمِيْعًا فَيَجْعَلَهٗ فِيْ جَهَنَّمَ ؕ اُولٰٓئِكَ هُمُ

الْخٰسِرُوْنَ ۞ قُلْ لِّلَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِنْ يَّنْتَهُوْا يُغْفَرْ لَهُمْ مَّا قَدْ سَلَفَ ۚ وَاِنْ يَّعُوْدُوْا فَقَدْ مَضَتْ ع ۴ ۱۸

سُنَّتُ الْاَوَّلِيْنَ ۞

व मा लहुम् अल्ला युअ़ज़्ज़ि-बहुमु-ल्लाहु व हुम् यसुद्दू-न अ़निल् मस्जिदिल्-हरामि व मा कानू औलिया-अहू, इन् औलिया-उहू इल्लल्-मुत्तक़ू-न व लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यअ़्लमून (34) व मा का-न सलातुहुम् अ़िन्दल्-बैति इल्ला मुकाअंव्-व तस्दि-यतन्, फ़ज़ूक़ुल्-अ़ज़ा-ब बिमा कुन्तुम् तक्फ़ुरून (35) इन्नल्लज़ी-न क-फ़रू	और उनमें क्या बात है कि अ़ज़ाब न करे उन पर अल्लाह और वे तो रोकते हैं मस्जिदे हराम से, और वे उसके इख़्तियार वाले नहीं, उसके इख़्तियार वाले तो वही हैं जो परहेज़गार हैं, लेकिन उनमें अक्सरों को इसकी ख़बर नहीं। (34) और उनकी नमाज़ नहीं थी काबे के पास मगर सीटियाँ बजानी और तालियाँ, सो चखो अ़ज़ाब बदला अपने कुफ़्र का। (35) बेशक जो लोग काफ़िर हैं वे ख़र्च करते

युन्फ़िक़ू-न अम्वालहुम् लि-यसुद्दू अ़न् सबीलिल्लाहि, फ़-सयुन्फ़िक़ूनहा सुम्-म तकूनु अ़लैहिम् हस्रतन् सुम्-म युग़्लबू-न, वल्लज़ी-न क-फ़रू इला जहन्न-म युह़्शरून (36) लि-यमीज़ल्लाहुल्-ख़बी-स मिनत्तय्यिबि व यज्अ़लल् ख़बी-स बअ्ज़हू अ़ला बअ्ज़िन् फ़-यर्कु-महू जमीअ़न् फ़-यज्अ़-लहू फ़ी जहन्न-म, उलाइ-क हुमुल्-ख़ासिरून (37) ✿ क़ुल् लिल्लज़ी-न क-फ़रू इंय्यन्तहू युग़्फ़र् लहुम् मा क़द् स-ल-फ़, व इंय्यअ़ूदू फ़-क़द् मज़त् सुन्नतुल्-अव्वलीन (38)

हैं अपने माल ताकि रोकें अल्लाह की राह से, सो अभी और ख़र्च करेंगे फिर आख़िर होगा वह उन पर अफ़सोस, और आख़िर मग़लूब होंगे, और जो काफ़िर हैं वे दोज़ख़ की तरफ़ हाँके जायेंगे। (36) ताकि अलग कर दे अल्लाह नापाक को पाक से और रखे नापाक को एक को एक पर, फिर उसको ढेर कर दे इकट्ठा, फिर डाल दे उसको दोज़ख़ में, वही लोग हैं नुक़सान में। (37) ✿ तू कह दे काफ़िरों को कि अगर वे बाज़ आ जायें तो माफ़ हो उनको जो कुछ हो चुका, और अगर फिर भी वही करेंगे तो पड़ चुकी है राह अगलों की। (38)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (इन रुकावटों के सबब असाधारण और ख़ुदाई अ़ज़ाब नाज़िल न होने से बिल्कुल ही अ़ज़ाब से मुत्मईन न हो जायें, क्योंकि जिस तरह उपरोक्त अ़ज़ाब को रोकने वाली चीज़ें मौजूद हैं इसी तरह उनकी हरकतें अ़ज़ाब को लाने वाली भी हैं। पस अ़ज़ाब को रोकने वाली चीज़ का असर असाधारण और मोजिज़ाती अ़ज़ाब के न आने में ज़ाहिर हुआ और उनकी हरकतों का असर अ़ज़ाब के ज़ाहिर होने में होगा, कि मोजिज़ाती और असाधारण अ़ज़ाब न सही मगर अ़ज़ाब तो उनपर नाज़िल होगा। चुनाँचे इसी तक़ाज़े का बयान फ़रमाते हैं कि) उनका क्या हक़ बनता है कि उनको अल्लाह तआ़ला (बिल्कुल ही मामूली) सज़ा भी न दे, हालाँकि (उनकी ये हरकतें सज़ा को लाने वाली हैं, मसलन) वे लोग (पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों को) मस्जिदे-हराम (में जाने और उसमें नमाज़ पढ़ने और उसमें तवाफ़ करने) से रोकते हैं, (जैसा कि हुदैबिया में हक़ीक़तन रोका जिसका क़िस्सा सूरः ब-क़रह में गुज़र चुका, और मक्का में रहने के ज़माने में हुक्मन रोका कि इस क़द्र तंग किया कि हिजरत की ज़रूरत हुई) हालाँकि वे लोग इस मस्जिद के मुतवल्ली (बनने के भी लायक़) नहीं। (और इबादत करने

वालों को रोकना तो दरकिनार रहा जिसका इख़्तियार ख़ुद मुतवल्ली को भी नहीं होता), उसके मुतवल्ली (बनने के लायक़) तो सिवाय मुत्तक़ी लोगों के (जो कि ईमान वाले हैं) और कोई भी नहीं, लेकिन उनमें अक्सर लोग (अपनी नालायक़ी) का इल्म भी नहीं रखते। (चाहे इल्म ही न हो या यह कि जब इस इल्म पर अ़मल न किया तो वह भी एक तरह से इल्म न होने के जैसा ही है। ग़र्ज़ कि जो सचमुच नमाज़ी थे उनको तो मस्जिद से इस तरह रोका) और (ख़ुद मस्जिद का कैसा हक़ अदा किया और उसमें कैसी अच्छी नमाज़ पढ़ी जिसका बयान यह है कि) उनकी नमाज़ ख़ाना काबा (जिसको मस्जिदे हराम के उनवान से ज़िक्र किया है) के पास सिर्फ़ यह थी, सीटियाँ बजाना और तालियाँ बजाना (यानी बजाय नमाज़ के उनकी ये नामाक़ूल हरकतें होती थीं) सो (इन हरकतों का लाज़िमी असर तो यह है कि उन पर कोई न कोई अ़ज़ाब चाहे वह मामूली और साधारण हो नाज़िल करके उनको ख़िताब किया जाये कि लो) इस अ़ज़ाब का मज़ा चखो अपने कुफ़्र के सबब (जिसका एक असर वह क़ौल है "अगर हम चाहें तो हम भी ऐसा कह लें........" और एक असर वह क़ौल है "अगर यह दीन हक़ है.........." और एक असर वह हरकत है "रोकते हैं मस्जिदे हराम से........" और एक असर वह काम है "सीटियाँ और तालियाँ बजाना......"। चुनाँचे अनेक लड़ाईयों और मुहिमों में यह सज़ा ज़ाहिर हुई जैसा कि इस सूरत के दूसरे रुकूअ़ में भी हैः

ذٰلِكُمْ فَذُوْقُوْهُ ....الخ

بَعْدَ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَآقُّوا..... الخ

के यहाँ तक तो उन लोगों के क़ौल और बदनी आमाल का ज़िक्र था, आगे उनके माली आमाल का बयान है कि) बेशक ये काफ़िर लोग अपने मालों को इसलिए ख़र्च कर रहे हैं ताकि अल्लाह तआ़ला की राह से (यानी दीन से लोगों को) रोकें, (चुनाँचे हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुक़ाबले और मुख़ालफ़त के सामान जमा करने में ज़ाहिर है कि जो ख़र्च होता था उसमें यही ग़र्ज़ थी) सो ये लोग अपने मालों को (इसी ग़र्ज़ के लिये) ख़र्च करते ही रहेंगे (मगर) फिर (आख़िर में जब नाकामी के आसार को महसूस होंगे तो) वे माल उनके हक़ में अफ़सोस का सबब हो जाएँगे (कि ख़्वाह-मख़्वाह ख़र्च किया और) फिर (आख़िर) मग़लूब (ही) हो जाएँगे (जिससे अफ़सोस और माल की बरबादी के साथ यह दूसरी हसरत हार जाने और नाकाम रहने की जमा हो जायेगी) और (यह सज़ा व हसरत व मग़लूब हो जाना तो उनकी दुनिया में है, बाक़ी आख़िरत की सज़ा वह अलग है जिसका बयान यह है कि) काफ़िर लोगों को दोज़ख़ की तरफ़ (ले जाने के लिये क़ियामत में) जमा किया जायेगा ताकि अल्लाह तआ़ला नापाक (लोगों) को पाक (लोगों) से अलग कर दे (क्योंकि जब दोज़ख़ियों को दोज़ख़ की तरफ़ लायेंगे ज़ाहिर है कि जन्नत वाले उनसे अलग रह जायेंगे) और (उनसे अलग करके) नापाकों को एक-दूसरे से मिला दे यानी उन सब को एक जगह कर दे। फिर (मिला करके) उन सब को जहन्नम में डाल दे। ऐसे ही लोग पूरे ख़सारे "यानी घाटे" में हैं (जिसकी कोई आख़िरी सीमा नहीं)।

(ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप उन काफ़िरों से कह दीजिए कि अगर ये लोग (अपने कुफ़्र से) बाज़ आ जाएँगे (और इस्लाम क़ुबूल कर लेंगे) तो उनके सारे गुनाह जो (इस्लाम से) पहले हो चुके हैं सब माफ़ कर दिये जाएँगे। (यह हुक्म तो इस्लाम की हालत का हुआ) और अगर अपनी वही (कुफ़्र की) आ़दत जारी रखेंगे तो (सुना दीजिये कि) पहले गुज़रे (काफ़िरों के हक़) में (हमारा) कानून नाफ़िज़ हो चुका है (कि दुनिया में हलाक और आख़िरत में अ़ज़ाब, वही तुम्हारे लिये होगा। चुनाँचे क़त्ल से हलाक भी हुए और अ़रब से बाहर के काफ़िरों का ज़िम्मी बनना भी हलाक होना है, तुम जानो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में यह बतलाया गया था कि मक्का के मुश्रिक अपने कुफ़्र व इनकार की वजह से अगरचे इसके हक़्दार हैं कि उन पर आसमानी अ़ज़ाब आ जाये लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मक्का में मौजूद होना आ़म और सार्वजनिक अ़ज़ाब आने से रुकावट है, और हिजरत के बाद उन कमज़ोर मुसलमानों की वजह से ऐसा अ़ज़ाब नहीं आता जो मक्का में रहकर अल्लाह से इस्तिग़फ़ार करते रहते हैं।

उक्त आयतों में यह बयान है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम या कमज़ोर मुसलमानों की रियायत से अगर दुनिया में इनका अ़ज़ाब टल ही गया तो इन लोगों को यह न समझना चाहिये कि ये अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ नहीं, बल्कि इनका अ़ज़ाब का हक़्दार होना खुला हुआ है और कुफ़्र व इनकार के अ़लावा और भी इनके ऐसे जराईम हैं जिनकी वजह से इन पर अ़ज़ाब आ जाना चाहिये। इन दोनों आयतों में उनके तीन जुर्म शुमार किये गये हैं।

अव्वल यह कि ये लोग ख़ुद तो मस्जिद-ए-हराम में इबादत-गुज़ारी के क़ाबिल ही नहीं और जो मुसलमान वहाँ इबादत- नमाज़ तवाफ़ वग़ैरह अदा करना चाहते हैं उनको आने से रोक देते हैं। इसमें हुदैबिया के वाक़िए की तरफ़ इशारा है जबकि सन् 6 हिजरी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा किराम के साथ उमरा अदा करने के लिये मक्का मुकर्रमा पहुँचे थे और मक्का के मुश्रिकों ने आपको रोककर वापस जाने पर मजबूर किया था।

दूसरा जुर्म यह बयान फ़रमाया कि ये बेवक़ूफ़ यूँ समझते और कहते हैं कि हम मस्जिदे हराम के मुतवल्ली (ज़िम्मेदार) हैं, जिसको चाहें उसमें आने की इजाज़त दें जिसको चाहें न दें।

उनका यह ख़्याल दो ग़लत-फ़हमियों का नतीजा था- अव्वल यह कि अपने आपको मस्जिदे हराम का मुतवल्ली समझा हालाँकि कोई काफ़िर किसी मस्जिद का मुतवल्ली (प्रबंधक) नहीं हो सकता। दूसरे यह कि मुतवल्ली को यह हक़ है कि जिसको चाहे मस्जिद में आने से रोक दे। जबकि मस्जिद अल्लाह का घर है उसमें आने से रोकने का किसी को हक़ नहीं सिवाय ऐसी ख़ास सूरतों के जिनमें मस्जिद की बेहुर्मती (बेक़द्री) या दूसरे नमाज़ियों की तकलीफ़ का अन्देशा हो। जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपनी मस्जिदों को बचाव छोटे बच्चों से, और पागल आदमियों और आपसी झगड़ों से। छोटे बच्चों से मुराद वे बच्चे हैं

जिनसे नापाकी का ख़तरा है, और पागल से नापाकी का भी ख़तरा है और नमाज़ियों को तकलीफ़ पहुँचाने का भी, और आपसी झगड़ों से मस्जिद की बेहुर्मती भी है और नमाज़ियों की तकलीफ़ भी।

इस हदीस के एतिबार से मस्जिद के मुतवल्ली के लिये यह तो हक़ है कि ऐसे छोटे बच्चों, पागलों को मस्जिद में न आने दे और आपसी झगड़े मस्जिद में न होने दे, लेकिन बग़ैर ऐसी सूरतों के किसी मुसलमान को मस्जिद से रोकने का किसी मस्जिद के मुतवल्ली को हक़ नहीं।

क़ुरआने करीम की उपरोक्त आयत में सिर्फ़ पहली बात बयान करने पर बस किया कि उन लोगों को मस्जिदे हराम का मुतवल्ली कैसे माना जाये जबकि उसूल यह है कि उसके मुतवल्ली सिर्फ़ मुत्तक़ी मुसलमान ही हो सकते हैं। इससे मालूम हुआ कि मस्जिद का मुतवल्ली (ज़िम्मेदार व प्रबंधक) मुसलमान दीनदार परहेज़गार होना चाहिये और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने 'इन औलियाउहू'' (उसके इख़्तियार वाले) में जिसकी तरफ़ इशारा है उससे अल्लाह तआ़ला की ज़ात मुराद लेकर यह मायने लिखे हैं कि अल्लाह के वली मुत्तक़ी परहेज़गार लोग हो सकते हैं।

इस तफ़सीर के मुताबिक़ आयत से यह नतीजा निकला कि जो लोग शरीअ़त व सुन्नत के ख़िलाफ़ अ़मल करने के बावजूद अल्लाह का वली होने का दावा करें वे झूठे हैं और जो ऐसे लोगों को अल्लाह का वली समझें वे धोखे में हैं।

तीसरा जुर्म उन लोगों का यह बतलाया कि कुफ़्र व शिर्क की गन्दगी तो थी ही उनके कामों और आमाल तो आ़म इनसानी सतह से भी गिरे हुए हैं। क्योंकि ये लोग अपने जिस फ़ेल का नाम नमाज़ रखते हैं वह सिवाय इसके नहीं कि उसमें मुँह से कुछ सीटियाँ बजायें, हाथों से कुछ तालियाँ, और यह ज़ाहिर है कि जिसको ज़रा भी अ़क्ल हो वह इन कामों को इबादत व नमाज़ क्या कोई सही इनसानी काम भी नहीं कह सकता इसलिये आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ٥

यानी तुम्हारे कुफ़्र और जुर्मों का अन्जाम यही है कि अब अल्लाह का अ़ज़ाब चखो। अ़ज़ाब से इस जगह आख़िरत का अ़ज़ाब भी मुराद हो सकता है और दुनिया का अ़ज़ाब भी, जो बदर की जंग में मुसलमानों के हाथों उन पर नाज़िल हुआ।

इसके बाद छत्तीसवीं आयत में मक्का के काफ़िरों के एक और वाक़िए का बयान है जिसमें उन्होंने इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ ताक़त इकट्ठी करने के लिये बहुत माल जमा किया और फिर उसको दीने हक़ और मुसलमानों के मिटाने के लिये ख़र्च किया। मगर नतीजा यह हुआ कि वह माल भी हाथ से गया और मक़सद हासिल होने के बजाय ख़ुद ज़लील व रुस्वा हुए।

वाक़िआ इसका मुहम्मद बिन इस्हाक़ की रिवायत से हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह नक़ल किया गया है कि जंगे बदर के शिकस्त से दोचार, ज़ख़्म खाये हुए, बचे-खुचे मक्का के काफ़िर जब वहाँ से वापस मक्का पहुँचे तो जिन लोगों के बाप बेटे इस जिहाद में मारे गये थे वे तिजारती क़ाफ़िले के अमीर अबू सुफ़ियान के पास पहुँचे और कहा कि आप जानते हैं कि यह जंग तुम्हारे तिजारती क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये लड़ी गयी जिसके

नतीजे में यह तमाम जानी और माली नुक़सान उठाने पड़े। इसलिये हम चाहते हैं कि इस साझा व्यापारी कम्पनी से हमारी कुछ मदद की जाये ताकि हम आईन्दा मुसलमानों से अपना बदला ले सकें। उन लोगों ने इसको मन्ज़ूर करके एक बड़ी रक़म दे दी जिसको उन्होंने ग़ज़वा-ए-बदर का इन्तिक़ाम लेने के लिये ग़ज़वा-ए-उहुद में ख़र्च किया और उसमें भी परिणाम स्वरूप मग़लूब हुए और शिकस्त के ग़म के साथ माल ज़ाया करने का अफ़सोस अलग से हुआ।

क़ुरआने करीम ने यह वाक़िआ पेश आने से पहले ही इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसके अन्जाम की ख़बर दे दी। इरशाद फ़रमाया- वे लोग जो काफ़िर हैं अपने मालों को इस काम के लिये ख़र्च करना चाहते हैं कि लोगों को अल्लाह के दीन से रोक दें, सो इसका अन्जाम यह होगा कि ये अपना माल भी ख़र्च कर डालेंगे और फिर इनको माल ख़र्च करने पर हसरत होगी, और अन्जाम कार मग़लूब हो जायेंगे। चुनाँचे ग़ज़वा-ए-उहुद (उहुद की जंग) में ठीक यही सूरत हुई कि जमा किया हुआ माल भी ख़र्च कर डाला और फिर पराजित हुए तो शिकस्त के ग़म के साथ माल ज़ाया होने पर अलग से अफ़सोस व शर्मिन्दगी हुई।

और इमाम बग़वी वग़ैरह कुछ मुफ़स्सिरीन ने इस आयत के मज़मून को ख़ुद ग़ज़वा-ए-बदर के ख़र्चों पर महमूल फ़रमाया है कि जंगे बदर में एक हज़ार जवानों का जो लश्कर मुसलमानों के मुक़ाबले पर गया था उनके खाने पीने वग़ैरह के तमाम ख़र्चे मक्का के बारह सरदारों ने अपने ज़िम्मे लिये थे, जिनमें अबू जहल, उतबा, शैबा वग़ैरह शामिल थे। ज़ाहिर है कि एक हज़ार आदमियों के आने-जाने खाने-पीने वग़ैरह के ख़र्चों पर बड़ी रक़म ख़र्च हुई, तो उन लोगों को अपनी शिकस्त के साथ अपने माल ज़ाया होने पर भी सख़्त अफ़सोस व शर्मिन्दगी पेश आई। (तफ़सीरे मज़हरी)

आयत के आख़िर में आख़िरत के एतिबार से उन लोगों के बुरे अन्जाम का बयान है:

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحْشَرُوْنَ٥

यानी जो लोग काफ़िर हैं उनका हश्र जहन्नम की तरफ़ होगा।

मज़कूरा आयतों में दीने हक़ से रोकने के लिये माल ख़र्च करने का जो बुरा अन्जाम ज़िक्र किया गया है उसमें आज के वे काफ़िर भी दाख़िल हैं जो लोगों को इस्लाम से रोकने और अपने बातिल (ग़ैर-हक़ और ग़लत रास्ते) की तरफ़ दावत देने पर लाखों रुपया अस्पतालों, स्कूलों और सदक़े ख़ैरात के नाम से ख़र्च करते हैं। इसी तरह वे गुमराह लोग भी इसमें दाख़िल हैं जो इस्लाम के माने हुए और निश्चित अक़ीदों में शक व शुब्हे और भ्रम पैदा करके उनके ख़िलाफ़ लोगों को दावत देने के लिये अपने माल ख़र्च करते हैं, लेकिन हक़ तआ़ला अपने दीन की हिफ़ाज़त फ़रमाते हैं और बहुत से मौक़ों में देखा भी जाता है कि ये लोग बड़े-बड़े माल ख़र्च करने के बावजूद अपने मक़सद में नाकाम रहते हैं।

सैंतीसवीं आयत में उक्त वाक़िआत के कुछ परिणामों का बयान है जिसका ख़ुलासा यह है कि अपने जो माल काफ़िरों ने इस्लाम के ख़िलाफ़ इस्तेमाल किये और फिर उनको अफ़सोस व

शर्मिन्दगी हुई और ज़लील व रुस्वा हुए इसका फ़ायदा यह है कि:

لِيَمِيزَ اللّٰهُ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ

यानी ताकि अल्लाह तआ़ला गन्दी चीज़ और पाक साफ़ चीज़ में फ़र्क़ ज़ाहिर कर दें।

लफ़्ज़ **ख़बीस** और **तय्यिब** दो एक-दूसरे के विपरीत और मुक़ाबले के लफ़्ज़ हैं। लफ़्ज़ ख़बीस नापाक, गन्दे और हराम के लिये बोला जाता है, और तय्यिब इसके उलट पाक, साफ़ सुथरे और हलाल के लिये बोला जाता है। इस जगह इन दोनों लफ़्ज़ों से काफ़िरों के बुरे माल और मुसलमानों के पाक और अच्छे माल भी मुराद हो सकते हैं। इस सूरत में मतलब यह है कि काफ़िरों ने जो बहुत अधिक माल ख़र्च किये वो माल ख़बीस और नापाक थे, इसका बुरा नतीजा यह हासिल हुआ कि माल भी गया और जानें भी गयीं। इसके मुक़ाबले में मुसलमानों ने बहुत थोड़ा माल ख़र्च किया मगर वह माल पाक और हलाल था, उनके ख़र्च करने वाले कामयाब हुए और ऊपर से **माल-ए-ग़नीमत** भी हाथ आया। इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَيَجْعَلَ الْخَبِيْثَ بَعْضَهٗ عَلٰى بَعْضٍ فَيَرْكُمَهٗ جَمِيْعًا فَيَجْعَلَهٗ فِيْ جَهَنَّمَ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ۝

यानी अल्लाह तआ़ला जमा कर देता है एक ख़बीस को दूसरे ख़बीस के साथ, फिर उन सब को जमा कर देगा जहन्नम में, यही लोग ख़सारे (घाटे) में पड़ने वाले हैं।

मतलब यह है कि जिस तरह दुनिया में मक़्नातीस लोहे को खींचता है, कह्रबा (एक क़िस्म का गोंद जो रगड़ने पर लकड़ी को अपनी तरफ़ खींचता है) घास को खींचता है और विज्ञान की नई तहक़ीक़ व तर्जुबात में सारी दुनिया का निज़ाम ही आपसी कशिश पर क़ायम है, इसी तरह आमाल व अख़्लाक़ में भी कशिश है। एक बुरा अ़मल दूसरे बुरे अ़मल को और एक अच्छा अ़मल दूसरे अच्छे अ़मल को खींचता है। बुरा माल दूसरे बुरे माल को खींचता है और फिर ये बुरे माल बुरे और ख़बीस आसार पैदा करते हैं। इसका नतीजा यह है कि जितने बुरे माल हैं अल्लाह तआ़ला आख़िरत में उन सब को जहन्नम में जमा फ़रमा देंगे, और ये माल वाले बड़े ख़सारे में पड़ जायेंगे।

और बहुत से मुफ़स्सिरीन हज़रात ने इस जगह ख़बीस और तय्यिब की मुराद आ़म क़रार दी है, यानी पाक और नापाक। पाक से मोमिन और नापाक से काफ़िर मुराद हैं। इस सूरत में मतलब यह होगा कि ज़िक्र हुए हालात के ज़रिये अल्लाह तआ़ला यह चाहते हैं कि पाक व नापाक यानी मोमिन व काफ़िर में भेद और फ़र्क़ हो जाये, मोमिन हज़रात जन्नत में और काफ़िर सब एक जगह जहन्नम में जमा कर दिये जायें।

अड़तीसवीं आयत में काफ़िरों के लिये फिर एक तरबियत भरा ख़िताब है जिसमें तवज्जोह और दिलचस्पी दिलाना भी है और डराना भी। दिलचस्पी और तवज्जोह इसकी कि अगर वे इन तमाम बुरे कामों के बाद अब भी तौबा कर लें और ईमान ले आयें तो पिछले सब गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे, और डरावा यह कि अगर वे अब भी बाज़ न आये तो समझ लें कि उनके लिये अल्लाह तआ़ला को कोई नया क़ानून बनाना या सोचना नहीं पड़ता। पहले ज़माने के काफ़िरों के

लिये जो क़ानून जारी हो चुका है वही उन पर भी जारी होगा कि दुनिया में हलाक व बरबाद हुए और आख़िरत में अ़ज़ाब के हक़दार हुए।

وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ كُلُّهُ لِلَّهِ ۚ فَإِنِ انْتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ
بِمَا يَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۞ وَإِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَوْلَاكُمْ ۚ نِعْمَ الْمَوْلَىٰ وَنِعْمَ النَّصِيرُ ۞

व क़ातिलूहुम् हत्ता ला तकू-न फ़ित्नतुंव्-व यकूनद्दीनु कुल्लुहू लिल्लाहि फ़-इनिन्तहौ फ़-इन्नल्ला-ह बिमा यअ्मलू-न बसीर (39) व इन् तवल्लौ फ़अ्लमू अन्नल्ला-ह मौलाकुम्, निअ्मल्-मौला व निअ्मन्-नसीर (40)	**और लड़ते रहो उनसे यहाँ तक कि न रहे फ़साद और हो जाये हुक्म सब अल्लाह का, फिर अगर वे बाज़ आ जायें तो अल्लाह उनके काम को देखता है। (39) और अगर वे न मानें तो जान लो कि अल्लाह तुम्हारा हिमायती है, क्या ख़ूब हिमायती है और क्या ख़ूब मददगार है। (40)**

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (फिर उनके इस काफ़िर रहने की सूरत में ऐ मुसलमानो!) तुम उन (अ़रब के काफ़िरों) से इस हद तक लड़ो कि उनमें अ़क़ीदे की ख़राबी (यानी शिर्क) न रहे, और (अल्लाह का) दीन (ख़ालिस) अल्लाह ही का हो जाये (और किसी के दीन का ख़ालिस अल्लाह ही के लिये हो जाना मौक़ूफ़ है इस्लाम क़ुबूल करने पर, तो हासिल यह हुआ कि शिर्क छोड़कर इस्लाम इख़्तियार करें। ख़ुलासा यह कि अगर इस्लाम न लायें तो उनसे लड़ो जब तक इस्लाम न लायें, क्योंकि अ़रब के काफ़िरों से जिज़या नहीं लिया जाता)। फिर अगर ये (कुफ़्र से) बाज़ आ जाएँ तो (इनके ज़ाहिरी इस्लाम को क़ुबूल करो, दिल का हाल मत टटोलो, क्योंकि अगर ये दिल से ईमान न लायेंगे तो) अल्लाह तआ़ला इनके आमाल को ख़ूब देखते हैं (वह ख़ुद समझ लेंगे तुमको क्या)। और अगर (इस्लाम से) मुँह मोड़ें तो (अल्लाह का नाम लेकर उनके मुक़ाबले से मत हटो और) यक़ीन रखो कि अल्लाह तआ़ला (उनके मुक़ाबले में) तुम्हारा साथी है, वह बहुत अच्छा साथी है और बहुत अच्छा मददगार है (सो वह तुम्हारा साथ देगा और मदद करेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यह सूरः अनफ़ाल की उन्तालीसवीं आयत है। इसमें दो लफ़्ज़ क़ाबिले ग़ौर हैं- एक लफ़्ज़ **फ़ितना** दूसरा **दीन**। ये दोनों लफ़्ज़ अ़रबी लुग़त के एतिबार से कई मायने के लिये इस्तेमाल होते हैं।

तफ़सीर के इमामों सहाबा व ताबिईन से इस जगह दो मायने नक़ल किये गये हैं- एक यह कि फ़ितने से मुराद कुफ़्र व शिर्क और दीन से मुराद दीने इस्लाम लिया जाये। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यही तफ़सीर मन्क़ूल है। इस तफ़सीर पर आयत के मायने यह होंगे कि मुसलमानों को काफ़िरों से लड़ाई उस वक़्त तक जारी रखनी चाहिये जब तक कि कुफ़्र मिटकर उसकी जगह इस्लाम आ जाये, इस्लाम के सिवा कोई दीन व मज़हब बाक़ी न रहे। इस सूरत में यह हुक्म सिर्फ़ मक्का वालों और अ़रब वालों के लिये मख़्सूस होगा। क्योंकि अ़रब ख़ित्ता इस्लाम का घर है, उसमें इस्लाम के सिवा कोई दूसरा दीन रहे तो दीने इस्लाम के लिये ख़तरा है, बाक़ी सारी दुनिया में दूसरे धर्म और मज़ाहिब को क़ायम रखा जा सकता है। जैसा कि क़ुरआने करीम की दूसरी आयतें और हदीस की रिवायतें इस पर सुबूत और गवाह हैं।

और दूसरी तफ़सीर जो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह से मन्क़ूल है वह यह है कि फ़ितने से मुराद इस जगह वह तकलीफ़ और अ़ज़ाब व मुसीबत है जिसका सिलसिला मक्का के काफ़िरों की तरफ़ से मुसलमानों पर हमेशा जारी रहा था, जब तक वे मक्का में थे तो हर वक़्त उनके घेरे में फंसे हुए तरह-तरह की तकलीफ़ें सहते रहे, फिर जब मदीना तय्यिबा की तरफ़ हिजरत की तो एक-एक मुसलमान का पीछा करके उसको क़त्ल व ग़ारत करते रहे, मदीना में पहुँचने के बाद भी पूरे मदीने पर हमलों की सूरत में उनका ग़ुस्सा व आक्रोश ज़ाहिर होता रहा।

और इसके उलट और विपरीत दीन के मायने छा जाने और ग़ालिब आने के हैं। इस सूरत में आयत की तफ़सीर यह होगी कि मुसलमानों को काफ़िरों से उस वक़्त तक जंग करते रहना चाहिये जब तक कि मुसलमान उनके ज़ुल्म व अत्याचारों से सुरक्षित न हो जायें और दीने इस्लाम का ग़लबा न हो जाये, कि वह ग़ैरों के ज़ुल्म व सितम से मुसलमानों की हिफ़ाज़त कर सके। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के एक वाक़िए से भी इस तफ़सीर की ताईद होती है। वाक़िआ यह है कि जब अमीरे मक्का हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मुक़ाबले में हज्जाज बिन यूसुफ़ ने फ़ौजी चढ़ाई की और दोनों तरफ़ मुसलमानों की तलवारें मुसलमानों के मुक़ाबले पर चल रही थीं तो दो शख़्स हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास हाज़िर हुए और कहा कि इस वक़्त जिस बला (मुसीबत) में मुसलमान मुब्तला हैं आप देख रहे हैं, हालाँकि आप उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बेटे हैं जो किसी तरह ऐसे फ़ितनों को बरदाश्त करने वाले न थे। क्या सबब है कि आप इस फ़ितने को दूर करने के लिये मैदान में नहीं आते? तो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि सबब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने किसी मुसलमान का ख़ून बहाना हराम क़रार दिया है। उन दोनों ने अ़र्ज़ किया कि क्या आप क़ुरआन की यह आयत नहीं पढ़ते?

قَاتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ

यानी जंग व क़िताल करते रहो यहाँ तक कि फ़ितना न रहे।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि बेशक मैं यह आयत पढ़ता हूँ और इस पर अ़मल भी करता हूँ। हमने इस आयत के मुताबिक़ काफ़िरों से क़िताल (जंग) जारी रखा यहाँ तक कि फ़ितना ख़त्म हो गया और ग़लबा दीने इस्लाम का हो गया। और तुम लोग यह चाहते हो कि अब आपस में जंग करके फ़ितना फिर पैदा कर दो और ग़लबा ग़ैरुल्लाह का और दीने हक़ के ख़िलाफ़ का हो जाये। मतलब यह था कि जंग व जिहाद का हुक्म कुफ़्र के फ़ितने और काफ़िरों के ज़ुल्मों के मुक़ाबले में था वह हम कर चुके और बराबर करते रहे यहाँ तक कि यह फ़ितना ख़त्म हो गया। मुसलमानों के आपसी गृहयुद्ध को इस पर क़ियास करना सही नहीं, बल्कि मुसलमानों की आपसी जंग के वक़्त तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायतें ये हैं कि उसमें बैठा रहने वाला खड़ा होने वाले से बेहतर है।

इस तफ़सीर का ख़ुलासा यह है कि मुसलमानों पर इस्लाम के दुश्मनों के ख़िलाफ़ जंग व जिहाद उस वक़्त तक वाजिब है जब तक कि मुसलमानों पर उनके अत्याचारों और ज़ुल्म व सितम का फ़ितना ख़त्म न हो जाये, और इस्लाम को सब धर्मों पर ग़लबा हासिल न हो जाये। और यह सूरत सिर्फ़ क़ियामत के निकट होगी इसलिये जिहाद का हुक्म क़ियामत तक जारी और बाक़ी है।

इस्लाम के दुश्मनों के ख़िलाफ़ जंग व जिहाद के नतीजे में दो सूरतें पैदा हो सकती थीं- एक यह कि वे मुसलमानों पर ज़ुल्म व ज़्यादती से बाज़ आ जायें, चाहें इस तरह कि इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होकर भाई बन जायें, या इस तरह कि अपने मज़हब पर रहते हुए मुसलमानों पर ज़ुल्म व सितम से बाज़ आ जायें और इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) का समझौता कर लें।

दूसरे यह कि वे इन दोनों सूरतों में से किसी को क़ुबूल न करें और मुक़ाबले पर जमे रहें। अगली आयत में इन दोनों सूरतों के अहकाम बयान हुए हैं। इरशाद फ़रमायाः

فَاِنِ انْتَهَوْا فَاِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ○

यानी अगर वे बाज़ आ जायें तो अल्लाह तआ़ला उनके आमाल को ख़ूब देखते हैं।

उसके मुताबिक़ उनके साथ मामला फ़रमायेंगे, जिसका हासिल यह है कि अगर वे बाज़ आ जायें तो उनके ख़िलाफ़ जिहाद को बन्द कर दिया जाये। इस सूरत में मुसलमानों को यह ख़तरा हो सकता था कि जंग व जिहाद के बाद काफ़िरों की तरफ़ से सुलह का समझौता या मुसलमान हो जाने का इज़हार बहुत मुम्किन है कि सिर्फ़ कोई जंगी चाल और धोखा हो, ऐसी सूरत में जंग बन्द कर देना मुसलमानों के लिये नुक़सानदेह हो सकता है। इसका जवाब इन अलफ़ाज़ से दिया गया कि मुसलमान तो ज़ाहिरी आमाल के पाबन्द हैं, दिलों का देखने वाला और उनके छुपे भेदों का जानने वाला सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला है। इसलिये जब वे मुसलमान होने का इज़हार करें या सुलह का समझौता कर लें तो मुसलमान इस पर मजबूर हैं कि जंग व जिहाद बन्द कर दें। रहा यह मामला कि उन्होंने सच्चे दिल से इस्लाम या सुलह को क़ुबूल किया है या उसमें धोखा है, इसको अल्लाह तआ़ला ख़ूब देखते जानते हैं। अगर वे ऐसा करेंगे तो उसका दूसरा इन्तिज़ाम हो

जायेगा। मुसलमानों को इन ख़्यालों और ख़तरों पर अपने मामलात की बुनियाद नहीं रखनी चाहिये।

अगर इस्लाम के इज़हार या सुलह के समझौते के बाद उन पर हाथ उठाया गया तो जिहाद करने वाले मुजरिम हो जायेंगे जैसा कि सही बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि मुझे इसका हुक्म दिया गया है कि मैं इस्लाम के दुश्मनों से जंग करता रहूँ यहाँ तक कि वे कलिमा **ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** को क़ुबूल कर लें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात अदा करें, और जब वे ऐसा कर लें तो उनके ख़ून और माल सब सुरक्षित हो जायेंगे, सिवाय इसके कि इस्लामी क़ानून के मातहत किसी जुर्म के नतीजे में उनको सज़ा दी जाये। और उनके दिलों का हिसाब अल्लाह पर रहेगा कि वे सच्चे दिल से इस कलिमे और इस्लाम के आमाल को क़ुबूल कर रहे हैं या निफ़ाक़ से (यानी सिर्फ़ दिखावे के लिये ज़बान से)।

दूसरी एक हदीस जो अबू दाऊद ने बहुत से सहाबा किराम की रिवायत से नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख़्स किसी समझौता करने वाले पर यानी उस शख़्स पर जिसने इस्लामी हुकूमत के क़ानूनों के पालन और वफ़ादारी का समझौता कर लिया हो, कोई ज़ुल्म करे या उसको नुक़सान पहुँचाये, या उससे कोई ऐसा काम ले जो उसकी ताक़त से ज़ायद है, या उसकी कोई चीज़ बग़ैर उसकी दिली रज़ामन्दी के हासिल करे तो मैं क़ियामत के दिन उस मुसलमान के ख़िलाफ़ उस समझौते वाले की हिमायत करूँगा।

क़ुरआन मजीद की उक्त आयत और हदीस की रिवायतों ने बज़ाहिर मुसलमानों को एक सियासी ख़तरे में मुब्तला कर दिया कि बड़े से बड़ा इस्लाम का दुश्मन जब उनकी ज़द में (हाथ के नीचे) आ जाये और सिर्फ़ जान बचाने के लिये इस्लाम का कलिमा पढ़ ले तो मुसलमानों पर लाज़िम कर दिया कि फ़ौरन अपना हाथ रोक लें। इस तरह तो वे किसी दुश्मन पर भी क़ाबू नहीं पा सकते, मगर अल्लाह तआ़ला ने उनके छुपे भेदों को अपने ज़िम्मे लेकर चमत्कारी अन्दाज़ में यह कर दिखाया कि अ़मली तौर पर मुसलमानों को किसी मैदाने जंग में ऐसा इम्तिहान पेश नहीं आया, अलबत्ता सुलह की हालत में सैकड़ों मुनाफ़िक़ पैदा हुए जिन्होंने धोखा देने के लिये अपने आपको मुसलमान ज़ाहिर किया और बज़ाहिर नमाज़ रोज़ा भी अदा करने लगे। उनमें से कुछ कम-ज़र्फ़ लोगों का तो इतना ही मक़सद था कि मुसलमानों से कुछ फ़ायदे हासिल कर लें और दुश्मनी करने के बावजूद उनके बदला लेने से बचे रहें। और कुछ वे भी थे जो सियासी मक़सद के लिये मुसलमानों के राज़ मालूम करने और मुख़ालिफ़ों से साज़िश करने के लिये ऐसा कर रहे थे, मगर अल्लाह तआ़ला के क़ानून ने उन सब के बारे में मुसलमानों को यही हिदायत दी कि वे उनके साथ मुसलमानों जैसा मामला करें, जब तक ख़ुद उनकी तरफ़ से इस्लाम-दुश्मनी और समझौते का उल्लंघन साबित न हो जाये।

क़ुरआन की यह तालीम तो उस सूरत में थी जबकि इस्लाम के दुश्मन अपनी दुश्मनी से बाज़ आ जाने का इक़रार और समझौता कर लें। और दूसरी सूरत यह है कि वे अपनी ज़िद

और दुश्मनी पर कायम रहें, इसके बारे में हुक्म इसके बाद की आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَإِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمُوْا أَنَّ اللّٰهَ مَوْلٰكُمْ. نِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيْرُ○

यानी अगर वे बात न मानें तो तुम यह समझ लो कि अल्लाह तआला तुम्हारा मददगार हिमायती है, और वह बहुत अच्छा हिमायती और बहुत अच्छा मददगार है।

इसका हासिल यह है कि अगर वे अपने ज़ुल्म व ज़्यादती और कुफ़्र व शिर्क से बाज़ न आयें तो मुसलमानों के ज़िम्मे वही हुक्म है जो ऊपर बयान हुआ कि उनसे जंग जारी रखें। और जंग व जिहाद चूँकि बड़े लश्कर और बहुत से हथियारों और साज़ व सामान पर आदतन मौक़ूफ़ है और मुसलमानों को आ़म तौर पर ये चीज़ें कम हासिल थीं, इसलिये यह हो सकता था कि मुसलमानों को जंग का हुक्म भारी मालूम हो, या वे अपनी संख्या की कमी और सामान की कमी की वजह से यह महसूस करने लगें कि हम मुक़ाबले में कामयाब नहीं हो सकते। इसलिये इसका इलाज इस तरह किया गया कि मुसलमानों को बतलाया गया कि अगरचे संख्या और सामान उन लोगों के पास मुसलमानों से ज़्यादा हो मगर वे अल्लाह तआ़ला की ग़ैबी मदद व हिमायत कहाँ से लायेंगे जो मुसलमानों को हासिल है, जिसको वे हर मैदान में अपने साथ महसूस करते और देखते रहे हैं। और फ़रमाया कि यूँ तो इमदाद व हिमायत दुनिया में हर फ़रीक़ किसी न किसी से हासिल कर ही लेता है मगर काम का मदार उस मददगार की ताक़त व क़ुव्वत और इल्म व तजुर्बे पर होता है। और यह ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला की ताक़त व क़ुव्वत और जानने व देखने से ज़्यादा तो क्या बराबर भी सारे जहान को हासिल नहीं हो सकता, क्योंकि वह सबसे बेहतर हिमायती और मददगार है।

पारा नम्बर 10 (वअ़्लमू)

وَاعْلَمُوْٓا أَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّنْ شَيْءٍ فَأَنَّ لِلّٰهِ خُمُسَهٗ وَلِلرَّسُوْلِ وَلِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَ
ابْنِ السَّبِيْلِ إِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ وَمَآ أَنْزَلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۗ
وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝

वअ़्लमू अन्नमा ग़निम्तुम् मिन् शैइन् फ़-अन्-न लिल्लाहि ख़ुमु-सहू व लिर्रसूलि व लिज़िल्क़ुर्बा वल्यतामा वल्मसाकीनि वब्निस्सबीलि इन् कुन्तुम् आमन्तुम् बिल्लाहि व मा अन्ज़ल्ना	और जान रखो कि जो कुछ तुमको ग़नीमत मिले किसी चीज़ से सो अल्लाह के वास्ते है उसमें से पाँचवाँ हिस्सा और रसूल के वास्ते और उसके रिश्तेदारों के वास्ते और यतीमों और मोहताजों और मुसाफ़िरों के वास्ते, अगर तुमको यक़ीन

अ़ला अ़ब्दिना यौमल्-फ़ुरक़ानि यौमल्-तक़ल्जम्आ़नि, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (41)	है अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो हम ने उतारी अपने बन्दे पर फ़ैसले के दिन, जिस दिन भिड़ गईं दोनों फ़ौजें, और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है। (41)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (इस बात को) जान लो कि जो चीज़ (काफ़िरों से) ग़नीमत के तौर पर तुमको हासिल हो तो (उसका हुक्म यह है कि) (उसके कुल पाँच हिस्से किये जायें, जिनमें से चार हिस्से तो मुजाहिदीन का हक़ है और एक हिस्सा यानी) उसका पाँचवाँ हिस्सा (फिर पाँच हिस्सों पर तक़सीम होगा जिनमें से एक तो) अल्लाह का और उसके रसूल का है (यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मिलेगा, जिनको देना गोया ऐसा ही है जैसे कि अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में पेश कर दिया) और (एक हिस्सा) आपके रिश्तेदारों का है, और (एक हिस्सा) यतीमों का है, और (एक हिस्सा) ग़रीबों का है, और (एक हिस्सा) मुसाफ़िरों का है, अगर तुम अल्लाह पर यक़ीन रखते हो और उस चीज़ पर (यक़ीन रखते हो) जिसको हमने अपने बन्दे (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) पर फ़ैसले के दिन (यानी) जिस दिन कि (बदर में) (मोमिनों व काफ़िरों की) दोनों जमाअ़तें आपस में आमने-सामने हुई थीं, नाज़िल फ़रमाया था। (इससे मुराद फ़रिश्तों के माध्यम से ग़ैबी मदद है, यानी अगर हम पर और हमारे ग़ैबी इनामात पर यक़ीन रखते हो तो इस हुक्म को जान लो और अ़मल करो। यह इसलिये बढ़ा दिया कि पाँचवाँ हिस्सा निकालना भारी और नागवार न हो, और यह समझ लें कि यह सारी ग़नीमत अल्लाह ही की इमदाद से तो हाथ आई, फिर अगर हमको एक पाँचवाँ हिस्सा न मिला तो क्या हुआ, वो चार पाँचवे हिस्से भी तो हमारी क़ुदरत से ख़ारिज थे बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की क़ुदरत से हासिल हुए) और अल्लाह तआ़ला (ही) हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखने वाले हैं (फिर तुम्हारा तो इतना भी हक़ न बनता था, यह भी बहुत मिल गया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस आयत में ग़नीमत के माल के अहकाम और उसकी तक़सीम का क़ानून बयान हुआ है। इससे पहले चन्द ज़रूरी अलफ़ाज़ की वज़ाहत सुन लीजिए।

लफ़्ज़ **ग़नीमत** लुग़त में उस माल के लिये बोला जाता है जो दुश्मन से हासिल किया जाये। शरीअ़त की इस्तिलाह में ग़ैर-मुस्लिमों से जो माल जंग व लड़ाई और फ़तह व ग़लबे के ज़रिये हासिल हो उसको ग़नीमत कहते हैं, और जो सुलह व रज़ामन्दी से हासिल हो जैसे जिज़या व ख़िराज (टैक्स) वग़ैरह उसको **फ़ै** कहा जाता है। क़ुरआने करीम में इन्हीं दो लफ़्ज़ों से इन दोनों क़िस्मों के अहकाम बतलाये गये हैं। सूरः अनफ़ाल में माले ग़नीमत के अहकाम का ज़िक्र है जो

जंग व लड़ाई के वक़्त ग़ैर-मुस्लिमों से हासिल हो।

यहाँ सबसे पहले एक बात पेशे नज़र रहनी चाहिये, वह यह कि इस्लामी और क़ुरआनी नज़रिये के मुताबिक़ तमाम कायनात की असली मिल्कियत सिर्फ़ उस ज़ाते हक़ तआ़ला की है जिसने उन्हें पैदा किया है, इनसान की तरफ़ किसी चीज़ की मिल्कियत का सिर्फ़ एक ही तरीक़ा है कि अल्लाह तआ़ला ने अपने क़ानून के ज़रिये किसी शख़्स की मिल्कियत क़रार दे दी हो। जैसे सूरः यासीन में चौपाये जानवरों के ज़िक्र में इरशाद फ़रमायाः

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا خَلَقْنَا لَهُمْ مِّمَّا عَمِلَتْ اَيْدِيْنَآ اَنْعَامًا فَهُمْ لَهَا مٰلِكُوْنَ.

यानी क्या ये लोग नहीं देखते कि चौपायों को हमने अपने हाथों से बनाया, फिर लोग उनके मालिक बन गये। मतलब यह है कि उनकी मिल्कियत ज़ाती नहीं, हमने अपने फ़ज़्ल से उनको मालिक बना दिया।

जब कोई क़ौम अल्लाह तआ़ला से बग़ावत करती है यानी कुफ़्र व शिर्क में मुब्तला हो जाती है तो पहले हक़ तआ़ला उनकी इस्लाह (सुधार) के लिये अपने रसूल और किताबें भेजते हैं, जो बदबख़्त अल्लाह के इस इनाम से भी मुतास्सिर नहीं होते तो अल्लाह तआ़ला अपने रसूलों को उनके मुक़ाबले में जंग व जिहाद का हुक्म दे देते हैं, जिसका हासिल यह होता है कि उन बाग़ियों के जान व माल सब मुबाह (हलाल व जायज़) कर दिये गये, उनको अल्लाह तआ़ला के दिये हुए मालों से नफ़ा उठाने का हक़ नहीं रहा, बल्कि उनके माल सरकार के हक़ में ज़ब्त हो गये। उन्हीं ज़ब्त हुए मालों का दूसरा नाम **माल-ए-ग़नीमत** है। जो काफ़िरों की मिल्कियत से निकलकर ख़ालिस हक़ तआ़ला की मिल्कियत में रह गये।

उन ज़ब्त हुए मालों के लिये पुराने ज़माने से हक़ तआ़ला का क़ानून यह रहा है कि उनसे किसी को फ़ायदा उठाने की इजाज़त नहीं होती थी बल्कि ऐसे मालों को जमा करके किसी खुली जगह रख दिया जाता और आसमान से एक बिजली आकर उनको जला देती थी। यही पहचान होती थी उस जिहाद के क़ुबूल होने की।

ख़ातमुल-अम्बिया हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को चन्द ख़ुसूसियतें हक़ तआ़ला की तरफ़ से अ़ता हुईं, उनमें एक यह भी है कि माले ग़नीमत आपकी उम्मत के लिये हलाल कर दिया गया (जैसा कि मुस्लिम शरीफ़ की हदीस में है)। और हलाल भी ऐसा कि उसको तमाम मालों से पाक और बेहतरीन माल कहा जाता है। वजह यह है कि जो माल इनसान अपनी मेहनत और कमाई से हासिल करता है उसमें इनसानों की मिल्कियत से वास्ता दर वास्ता मुन्तक़िल होकर एक माल उसकी मिल्कियत में आता है और उन वास्तों में हराम व नाजायज़ या बुरे तरीक़ों का शुब्हा व गुमान रहता है, बख़िलाफ़ माले ग़नीमत के कि काफ़िरों की मिल्कियत उनसे ख़त्म होकर डायरेक्ट हक़ तआ़ला की मिल्कियत रह गयी और अब जिसको मिलता है डायरेक्ट हक़ तआ़ला की मिल्कियत से मिलता है, जिसमें कोई शुब्हा और हराम होने या बुरा होने का गुमान नहीं रहता। जैसे कुएँ से निकाला हुआ पानी या ख़ुद अपने आप उगी

हुई घास जो डायरेक्ट हक़ तआ़ला का इनाम इनसान को मिलता है कोई इनसानी वास्ता (माध्यम) दरमियान में नहीं होता।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि माले ग़नीमत जो पिछली उम्मतों के लिये हलाल नहीं था उसे उम्मते मुहम्मदिया के लिये इनाम के तौर पर हलाल कर दिया गया। ज़िक्र हुई आयत में उसकी तक़सीम का ज़ाब्ता (क़ानून) इस उनवान से बयान फ़रमाया गया है कि:

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّنْ شَیْءٍ

इसमें अ़रबी लुग़त के क़ायदे के एतिबार से अव्वल तो लफ़्ज़ 'मा' आ़म होने पर दलालत करता है, फिर उस उमूम की अतिरिक्त ताकीद के लिये लफ़्ज़ 'मिन शैइन' बढ़ाया गया, जिसके मायने यह हैं कि जो कुछ छोटी बड़ी चीज़ माले ग़नीमत में हासिल हो वह सब इसी क़ानून के तहत दाख़िल है, किसी चीज़ को मामूली या छोटा समझकर कोई शख़्स तक़सीम के क़ानून के अ़लावा अगर ले लेगा तो वह सख़्त मुजरिम क़रार पायेगा। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक सूई और उसका धागा भी जो माले ग़नीमत का हिस्सा हो किसी के लिये उसका बग़ैर अपने शरई हिस्से के ले लेना जायज़ नहीं। और माले ग़नीमत में से कोई चीज़ बग़ैर हिस्से के लेने को हदीस में "ग़लूल" फ़रमाकर उस पर सख़्त वईद (सज़ा की धमकी और डाँट) फ़रमाई है, और आ़म चोरी से ज़्यादा सख़्त हराम क़रार दिया है।

तक़सीम (बंटवारे) का क़ानून यह उनवान देकर तमाम मुजाहिद मुसलमानों को इससे बाख़बर कर दिया गया कि अल्लाह तआ़ला ने यह माल तुम्हारे लिये हलाल कर दिया है मगर एक ख़ास ज़ाब्ते (उसूल) के तहत हलाल है, उसके ख़िलाफ़ अगर कोई लेगा तो वह जहन्नम का एक अंगारा होगा।

क़ुरआनी क़ानून का यही वह इम्तियाज़ (ख़ूबी और विशेषता) है जो दुनिया के दूसरे क़ानूनों को हासिल नहीं। और यही क़ानूने क़ुरआनी की कामिल तासीर और कामयाबी का असली राज़ है कि पहले ख़ौफ़े ख़ुदा व आख़िरत को सामने करके उससे डराया गया, दूसरे नम्बर में क़ानूनी सज़ायें भी जारी की गयीं।

वरना ग़ौर का मक़ाम है कि ऐन मैदाने जंग की अफ़रा-तफ़री के वक़्त जो माल ग़ैर-मुस्लिमों के क़ब्ज़े से हासिल किये जायें, जिनकी तफ़सील न पहले से मुसलमानों के अमीर के इल्म में है न किसी दूसरे के, और मौक़ा मैदाने जंग का है जो उमूमन जंगल और बयाबान होते हैं, जिनमें छुपने-छुपाने के हज़ारों मौक़े होते हैं, सिर्फ़ क़ानून के ज़ोर से उन मालों की हिफ़ाज़त किसी के बस में नहीं, सिर्फ़ ख़ुदा व आख़िरत का ख़ौफ़ ही यह चीज़ थी जिसने एक-एक मुसलमान को उन मालों में मामूली सा तसर्रुफ़ (उलट-फेर) करने से बाज़ रखा।

अब तक़सीम और बंटवारे के इस ज़ाब्ते (क़ानून) को देखिये। इरशाद फ़रमायाः

فَاَنَّ لِلّٰهِ خُمُسَهٗ وَلِلرَّسُوْلِ وَلِذِی الْقُرْبٰی وَالْیَتٰمٰی وَالْمَسٰکِیْنِ وَابْنِ السَّبِیْلِ

यानी माले ग़नीमत का पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह का और उसके रसूल का और उसके

रिश्तेदारों का और यतीमों, मिस्कीनों, मुसाफ़िरों का है।

यहाँ पहले तो यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि ज़ाब्ता (क़ानून और उसूल) पूरे माले ग़नीमत की तक़सीम का बयान हो रहा है मगर क़ुरआन ने सिर्फ़ उसके पाँचवें हिस्से की तक़सीम का ज़ाब्ता यहाँ ज़िक्र फ़रमाया, बाक़ी चार हिस्सों का कोई ज़िक्र नहीं किया गया। इसमें क्या राज़ है और बाक़ी चार हिस्सों की तक़सीम का क्या क़ानून है? लेकिन क़ुरआन में ग़ौर व ख़ौज़ करने से इन दोनों बातों का जवाब इन्हीं लफ़्ज़ों से निकल आता है कि क़ुरआने करीम ने जिहाद करने वाले मुसलमानों को ख़िताब करके फ़रमाया- 'मा ग़निमतुम' यानी जो कुछ तुमने ग़नीमत में हासिल किया। इसमें इशारा पाया जाता है कि यह माल उन हासिल करने वालों का हक़ है और इसके बाद जब यह इरशाद फ़रमा दिया कि उसमें से पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह और रसूल वग़ैरह का है तो इसका नतीजा साफ़ यह निकल आया कि बाक़ी चार हिस्से ग़नीमत हासिल करने वाले यानी मुजाहिदीन के हैं। जैसे क़ुरआने करीम के क़ानूने विरासत में एक जगह इरशाद है:

وَوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ.

यानी जब किसी शख़्स के वारिस उसके माँ-बाप हों तो माँ का तीसरा हिस्सा है। यहाँ भी सिर्फ़ माँ के ज़िक्र पर बस किया गया, जिससे मालूम हुआ कि बाक़ी दो हिस्से बाप का हक़ हैं। इसी तरह 'मा ग़निमतुम' के बाद जब सिर्फ़ पाँचवें हिस्से को अल्लाह के लिये रखा गया तो मालूम हुआ कि बाक़ी चार हिस्से मुजाहिदीन का हक़ हैं। फिर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बयान और अ़मल ने इसको और इसकी पूरी तफ़सीलात को वाज़ेह कर दिया कि ये चार हिस्से मुजाहिदीन में एक ख़ास क़ानून के तहत तक़सीम फ़रमाये।

अब उस पाँचवें हिस्से की तफ़सील सुनिये जिसको क़ुरआने करीम ने इस आयत में मुतैयन फ़रमा दिया है। क़ुरआनी अलफ़ाज़ में इस जगह छह अलफ़ाज़ बयान हुए हैं:

لِلّٰهِ، لِلرَّسُوْلِ، لِذِی الْقُرْبٰی، الْيَتٰمٰی، الْمَسٰكِيْنَ، ابْنِ السَّبِيْلِ.

इसमें लफ़्ज़ 'लिल्लाहि' तो बड़ा और मुख्य उनवान है उन ख़र्च की जगहों का जिनमें यह पाँचवाँ हिस्सा तक़सीम होगा, यानी ये सब मौक़े ख़ालिस अल्लाह के लिये हैं। और इस लफ़्ज़ के इस जगह लाने में एक ख़ास हिक्मत है जिसकी तरफ़ तफ़सीरे मज़हरी में इशारा किया गया है। वह यह कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके ख़ानदान के लिये सदक़ों का माल हराम क़रार दिया है कि वह आपकी शान के लायक़ नहीं, क्योंकि आ़म लोगों के मालों को पाक करने के लिये उनमें से निकाला हुआ हिस्सा है जिसको हदीस में "औसाख़ुन्नास" फ़रमाया है, यानी लोगों का मैल-कुचैल। वह शाने नुबुव्वत के लायक़ नहीं।

माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से में से चूँकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके ख़ानदान को भी क़ुरआन की इस आयत ने हिस्सा दिया है इसलिये इस पर सचेत किया गया कि यह हिस्सा लोगों की मिल्कियत से मुन्तक़िल होकर नहीं आया बल्कि डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला शानुहू की तरफ़ से है। जैसा कि अभी ज़िक्र किया गया है कि माले ग़नीमत काफ़िरों की

मिल्क से निकलकर डायरेक्ट हक् तआला की ख़ालिस मिल्कियत हो जाता है, फिर अल्लाह तआला की तरफ़ से इनाम के तौर पर तक़सीम होता है। इसलिये इस बात की तरफ़ इशारा करने के लिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और "आपके रिश्तेदारों" को जो हिस्सा माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से में से दिया गया है वह लोगों के सदके का नहीं बल्कि डायरेक्ट हक् तआला की तरफ़ से फ़ज़्ल व इनाम है। आयत के शुरू में फ़रमाया गया 'लिल्लाहि' यानी यह सब माल असल में ख़ालिस मिल्कियत अल्लाह तआला की है, उसी के फ़रमान के मुताबिक़ उक्त ख़र्च की जगहों में ख़र्च किया जायेगा।

इसलिये इस ख़ुम्स (पाँचवें हिस्से) के ख़र्च करने के असली मौक़े पाँच रह गये- रसूल, रिश्तेदार, यतीम, मिस्कीन, मुसाफ़िर। फिर इनमें पात्रता के दर्जे अलग-अलग और भिन्न हैं। क़ुरआने करीम के बयान की ख़ूबी और स्पष्टता देखिये कि इन पात्रता के दर्जों का फ़र्क़ किस बारीक और लतीफ़ अन्दाज़ से ज़ाहिर फ़रमाया गया है, कि इन पाँच में से पहले दो पर हर्फ़े लाम लाया गया - 'लिर्रसूलि', व 'लिज़िल्क़ुरबा' और बाक़ी तीन क़िस्मों को बग़ैर हर्फ़े लाम के आपस में एक दूसरे से जोड़कर ज़िक्र कर दिया गया।

हर्फ़े लाम अरबी भाषा में किसी ख़ुसूसियत (विशेषता) के इज़हार के लिये इस्तेमाल किया जाता है। लफ़्ज़ 'लिल्लाहि' में हर्फ़ लाम मिल्कियत को ख़ास करने के बयान के लिये है, कि असल मालिक सब चीज़ों का अल्लाह तआला है। और लफ़्ज़ 'लिर्रसूलि' में पात्रता की ख़ुसूसियत (विशेषता) का बयान मक़सूद है कि अल्लाह तआला ने माले ग़नीमत के पाँचवें हिस्से के ख़र्च करने और तक़सीम करने का हक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अता फ़रमाया। जिसका हासिल इमाम तहावी की तहक़ीक़ और तफ़सीरे मज़हरी की तक़रीर के मुताबिक़ यह है कि अगरचे इस जगह ख़ुम्स (पाँचवे हिस्से) के ख़र्च के मौक़ों और स्थानों में पाँच नामों का ज़िक्र है लेकिन दर हक़ीक़त इसमें पूरा इख़्तियार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हासिल है कि आप अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ इन पाँच क़िस्मों में ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को ख़र्च फ़रमायें जैसा कि सूरः अनफ़ाल की पहली आयत में पूरे माले ग़नीमत का हुक्म यही था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ जहाँ चाहें ख़र्च फ़रमायें, जिसको चाहें दें। आयत "वअ्लमू अन्नमा ग़निमतुम........" ने कुल माले ग़नीमत के पाँच हिस्से करके चार को मुजाहिदीन का हक़ क़रार दे दिया मगर पाँचवाँ हिस्सा बदस्तूर उसी हुक्म में रहा कि उसका ख़र्च करना रसूलुल्लाह की मर्ज़ी पर छोड़ा गया, सिर्फ़ इतनी बात का इज़ाफ़ा हुआ कि उस पाँचवें हिस्से के पाँच मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) बयान कर दिये गये कि ये उनमें सीमित रहेगा। मगर मुहक़्क़िक़ीन की अक्सर जमाअत के नज़दीक आपके ज़िम्मे यह लाज़िम नहीं था कि उस ख़ुम्स के पाँच हिस्से बराबर करें और आयत में दर्ज हुई पाँचों क़िस्मों में बराबर तक़सीम करें, बल्कि सिर्फ़ इतना ज़रूरी था कि ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को इन्हीं पाँच क़िस्मों के अन्दर सब को या कुछ को अपनी मर्ज़ी और बेहतर समझने के मुताबिक़ अता फ़रमायें।

इसकी सबसे बड़ी स्पष्ट दलील खुद इस आयत के अलफ़ाज़ और उनमें बयान की हुई ख़र्च करने की जगहों की क़िस्में हैं कि ये सब क़िस्में अ़मली तौर पर अलग-अलग नहीं बल्कि आपस में साझा और संयुक्त भी हो सकती हैं, मसलन जो शख़्स रिश्तेदारों में दाख़िल है वह यतीम भी हो सकता है, मिस्कीन और मुसाफ़िर भी। इसी तरह मिस्कीन और मुसाफ़िर यतीम भी हो सकते हैं और रिश्तेदार भी, जो मिस्कीन है वह मुसाफ़िर की फ़ेहरिस्त में भी आ सकता है। अगर इन सब क़िस्मों में अलग-अलग बराबर तक़सीम कराना मक़सूद होता तो ये क़िस्में ऐसी होनी चाहिये थीं कि एक क़िस्म का आदमी दूसरी क़िस्म में दाख़िल न हो, वरना फिर यह लाज़िम आयेगा कि जो क़रीबी रिश्तेदारों में से है और वह यतीम भी है मिस्कीन भी मुसाफ़िर भी तो उसको हर हैसियत से एक-एक हिस्सा मिलाकर चार हिस्से दिये जायें, जैसा कि मीरास की तक़सीम का यही क़ायदा है कि एक शख़्स को मय्यित के साथ विभिन्न क़िस्म की निकटतायें (रिश्तेदारियाँ) हासिल हैं तो हर रिश्ते का हिस्सा उसको अलग मिलता है, और उम्मत में इसका कोई क़ायल नहीं कि एक शख़्स को चार हिस्से दिये जायें। इससे मालूम हुआ कि मक़सूद इस आयत का हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर यह पाबन्दी आ़यद करना नहीं है कि इन सब क़िस्मों को ज़रूर ही दें और बराबर दें, बल्कि मक़सूद यह है कि ग़नीमत के पाँचवे हिस्से का माल इन पाँच क़िस्मों में से जिस क़िस्म पर जितना ख़र्च करना आपकी राय में मुनासिब हो उतना दे दें।

(तफ़सीरे मज़हरी)

यही वजह है कि हज़रत फ़ातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने जब इस खुम्स (माले ग़नीमत के पाँचवे हिस्से) में से एक ख़ादिम का सवाल हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पेश किया और घर के कामों में अपनी मेहनत व मशक़्क़त और कमज़ोरी का सबब भी ज़ाहिर किया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह उज़्र फ़रमाकर उनको देने से इनकार कर दिया कि मेरे सामने तुम्हारी ज़रूरत से ज़्यादा सुफ़्फ़ा वाले सहाबा की ज़रूरत है, जो बहुत ही ज़्यादा ग़रीबी और तंगी में मुब्तला हैं, उनको छोड़कर मैं तुम्हें नहीं दे सकता।

(सही बुख़ारी व मुस्लिम)

इससे वाज़ेह हो गया कि हर एक क़िस्म का अलग हक़ नहीं था वरना क़रीबी रिश्तेदारों के हक़ में हज़रत फ़ातिमा ज़हरा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से कौन मुक़द्दम (पहले और आगे) होता। बल्कि यह सब ख़र्च करने की जगहों का बयान है पात्रता और हक़दार बनने का बयान नहीं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से की तक़सीम

इमामों की अक्सरियत के नज़दीक ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में जो हिस्सा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का रखा गया वह आपके नुबुव्वत व रिसालत के पद की बिना पर ऐसा ही था जैसे आपको खुसूसी तौर पर यह भी हक़ दिया गया था कि पूरे माले ग़नीमत में

आप अपने लिये कोई चीज़ चुन और छाँट करके ले लें जिसकी वजह से कुछ ग़नीमतों में से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुछ चीज़ें ली भी थीं। और ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में से आप अपना और अपने घर वालों का ख़र्च अदा फ़रमाते थे। आपकी वफ़ात के बाद यह हिस्सा ख़ुद-ब-ख़ुद ख़त्म हो गया क्योंकि आपके बाद कोई रसूल व नबी नहीं।

ख़ुम्स में क़रीबी रिश्तेदारों का हिस्सा

इसमें तो किसी का मतभेद नहीं कि फ़क़ीर और ग़रीब रिश्तेदारों का हक़ ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में ख़र्च के दूसरे मौक़ों यानी यतीम, मिस्कीन, मुसाफ़िर से पहले है। क्योंकि रिश्तेदारों में के ग़रीब-ग़ुरबा की इमदाद ज़कात व सदक़ात से नहीं हो सकती, ज़कात व सदक़ों के दूसरे ख़र्च होने वाले मालों से भी हो सकती है (जैसा कि हिदाया में इसकी वज़ाहत की गयी है)। अलबत्ता मालदार रिश्तेदारों को उसमें से दिया जायेगा या नहीं, इसमें इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. का फ़रमाना यह है कि ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी जो अपने क़रीबी रिश्तेदारों को अ़ता फ़रमाते थे तो उसकी दो बुनियादें थीं- एक उनकी ज़रूरतमन्दी व तंगदस्ती, दूसरे दीन को क़ायम करने और इस्लाम की रक्षा में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुसरत व इमदाद। दूसरा सबब तो नबी करीम की वफ़ात के साथ ख़त्म हो गया सिर्फ़ पहला सबब तंगदस्ती व आवश्यकता वाला होना रह गया, इसकी बिना पर क़ियामत तक हर इमाम व अमीर उनको दूसरों से आगे और पहले रखेगा। (हिदाया, तफ़सीरे जस्सास) इमाम शाफ़ई रह. से भी यही क़ौल नक़ल किया गया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और कुछ फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) के नज़दीक रिश्तेदारों वाला हिस्सा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रिश्ते और निकटता के हिसाब से हमेशा के लिये बाक़ी है, जिसमें मालदार व ग़रीब सब शरीक हैं, अलबत्ता वक़्त का हाकिम अपनी राय और बेहतर समझने के मुताबिक़ उनको हिस्सा देगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

और असल चीज़ इस मामले में ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन का अ़मल है कि उन्होंने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद क्या अ़मल किया। हिदाया के लेखक ने इसके मुताल्लिक़ लिखा है:

ان الخلفاء الاربعة الراشدين قسّموه علٰى ثلثة اسهم.

चारों ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन (यानी हज़रत अबू बक्र, हज़रत उमर, हज़रत उस्मान और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हुम) ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद ग़नीमत के पाँचवे हिस्से को सिर्फ़ तीन क़िस्मों में तक़सीम फ़रमाया है- यतीम, मिस्कीन, फ़क़ीर।

अलबत्ता हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से साबित है कि नबी करीम के ग़रीब रिश्तेदारों को ग़नीमत के पाँचवे हिस्से में से दिया करते थे। (अबू दाऊद) और ज़ाहिर है कि यह ख़ुसूसियत सिर्फ़ फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की नहीं दूसरे ख़ुलफ़ा का भी यही अ़मल होगा।

और जिन रिवायतों से यह साबित है कि सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु अपने आख़िरी ज़माना-ए-ख़िलाफ़त तक नबी करीम के रिश्तेदारों का हक़ निकालते थे और हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू को उसका मुतवल्ली (ज़िम्मेदार) बनाकर रिश्तेदारों में तक़सीम कराते थे। (किताबुल-ख़िराज, इमाम अबू यूसुफ़) तो यह इसके विरुद्ध नहीं है कि वह तक़सीम रिश्तेदारों में के ग़रीबों के लिये ख़ास हो। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

फ़ायदाः ज़विल-क़ुरबा (रिश्तेदारों में कौन लोग शामिल हैं इस) का निर्धारण ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने अमल से इस तरह फ़रमा दिया कि बनू हाशिम (हाशिम की औलाद) तो आपका अपना कबीला ही था, बनू मुत्तलिब (मुत्तलिब की औलाद) को भी उनके साथ इसलिये शामिल फ़रमा लिया था कि ये लोग भी इस्लाम से पहले और इस्लाम के आने के बाद कभी बनू हाशिम से अलग नहीं हुए यहाँ तक कि मक्का के क़ुरैश ने बनू हाशिम का जब खाने-पीने का बायकाट किया और उनको अबी तालिब की घाटी में बन्द कर दिया तो बनू मुत्तलिब को अगरचे क़ुरैश ने बायकाट में दाख़िल नहीं किया था मगर ये लोग अपनी रज़ामन्दी और ख़ुशी से बायकाट में शरीक हो गये। (तफ़सीरे मज़हरी)

बदर की लड़ाई के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया गया

ऊपर बयान हुई आयत में बदर के दिन को यौमुल-फ़ुरक़ान फ़रमाया है, वजह इसकी यह है कि सबसे पहले माद्दी और ज़ाहिरी तौर पर मुसलमानों की खुली फ़तह और काफ़िरों की सबक़ लेने वाली शिकस्त उस दिन में होने की बिना पर कुफ़्र व इस्लाम का ज़ाहिरी फ़ैसला भी उस दिन हो गया।

إِذْ أَنتُم بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُم بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوَىٰ وَالرَّكْبُ أَسْفَلَ
مِنكُمْ ۚ وَلَوْ تَوَاعَدتُّمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِي الْمِيعَادِ ۙ وَلَٰكِن لِّيَقْضِيَ اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا لِّيَهْلِكَ
مَنْ هَلَكَ عَن بَيِّنَةٍ وَيَحْيَىٰ مَنْ حَيَّ عَن بَيِّنَةٍ ۗ وَإِنَّ اللَّهَ لَسَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٤٢﴾ إِذْ يُرِيكَهُمُ اللَّهُ
فِي مَنَامِكَ قَلِيلًا ۖ وَلَوْ أَرَاكَهُمْ كَثِيرًا لَّفَشِلْتُمْ وَلَتَنَازَعْتُمْ فِي الْأَمْرِ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ سَلَّمَ ۗ إِنَّهُ
عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٤٣﴾ وَإِذْ يُرِيكُمُوهُمْ إِذِ الْتَقَيْتُمْ فِي أَعْيُنِكُمْ قَلِيلًا وَيُقَلِّلُكُمْ فِي أَعْيُنِهِمْ
لِيَقْضِيَ اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا ۗ وَإِلَى اللَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ ﴿٤٤﴾ ع ٥

इज़् अन्तुम् बिल्अुद्वतिद्दुन्या व हुम् बिल्अुद्वतिल्-क़ुस्वा वर्रक्बु	जिस वक़्त तुम थे इस किनारे पर और वे उस किनारे पर और क़ाफ़िला नीचे उतर गया था तुम से, और अगर तुम आपस

अस्फ़-ल मिन्कुम्, व लौ तवाअ़त्तुम् लख़्त-लफ़्तुम् फ़िल्मीआ़दि व लाकिल्-लियक़्ज़ियल्लाहु अम्रन् का-न मफ़्अूलल्-लियस्लि-क मन् ह-ल-क अ़म्-बय्यि-नतिंव्-व यह्या मन् हय्-य अ़म्बय्यि-नतिन्, व इन्नल्ला-ह ल-समीअुन् अ़लीम (42) इज़् युरीकहुमुल्लाहु फ़ी मनामि-क क़लीलन्, व लौ अराकहुम् कसीरल् ल-फ़शिल्तुम् व ल-तनाज़अ़्तुम् फ़िल्अम्रि व लाकिन्नल्ला-ह सल्ल-म, इन्नहू अ़लीमुम्-बिज़ातिस्-सुदूर (43) व इज़् युरीकुमूहुम् इज़िल्तक़ैतुम् फ़ी अअ़्युनिकुम् क़लीलंव्-व युक़ल्लिलुकुम् फ़ी अअ़्युनिहिम् लि-यक़्ज़ियल्लाहु अम्रन् का-न मफ़्अूलन्, व इलल्लाहि तुर्जअुल्-उमूर (44) ✿

में वायदा करते तो न पहुँचते वायदे पर एक साथ लेकिन अल्लाह को कर डालना था एक काम को जो मुक़र्रर हो चुका था, ताकि मरे जिसको मरना है हुज्जत (दलील) क़ायम होने के बाद और जिये जिसको जीना है हुज्जत क़ायम होने के बाद, और बेशक अल्लाह सुनने वाला जानने वाला है। (42) जब अल्लाह ने वे काफ़िर दिखलाये तुझको तेरे सपने में थोड़े, और अगर तुझको बहुत दिखला देता तो तुम लोग नामर्दी करते और झगड़ा डालते काम में, लेकिन अल्लाह ने बचा लिया, उसको ख़ूब मालूम है जो बात है दिलों में। (43) और जब तुमको दिखलाई वह फ़ौज मुक़ाबले के वक़्त तुम्हारी आँखों में थोड़ी और तुमको थोड़ा दिखलाया उनकी आँखों में, ताकि कर डाले अल्लाह एक काम जो मुक़र्रर हो चुका था, और अल्लाह तक पहुँचता है हर काम। (44) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(यह वह वक़्त था कि) जब तुम (उस मैदान के) इधर वाले किनारे पर थे और वे लोग (यानी काफ़िर उस मैदान के) उधर वाले किनारे पर थे (इधर वाले से मुराद मदीना से नज़दीक का मौक़ा और उधर वाले से मुराद मदीना से दूर का मौक़ा) और वह (क़ुरैश का) क़ाफ़िला तुमसे नीचे की तरफ़ (बचा हुआ) था, (यानी समुद्र के किनारे-किनारे जा रहा था। हासिल यह कि पूरे जोश का सामान जमा हो रहा था कि दोनों आपस में आमने-सामने थे कि हर एक दूसरे को देखकर जोश में आये। उधर क़ाफ़िला रास्ते ही में था जिसकी वजह से काफ़िरों के लश्कर को उसकी मदद का ख़्याल दिल में बैठा हुआ जिससे और जोश में ज़्यादती हो, ग़र्ज़ कि वह ऐसा

सख़्त वक़्त था, फिर भी ख़ुदा तआ़ला ने तुम पर ग़ैबी मदद नाज़िल की जैसा ऊपर इरशाद हुआ है "अन्ज़लना अ़ला अ़ब्दिना") और (वह तो मस्लेहत यह हुई कि इत्तिफ़ाक़न मुक़ाबला हो गया वरना) अगर (पहले से आ़दत व मामूल के अनुसार) तुम (और वे) (लड़ाई के लिये) कोई बात तय करते (कि फ़ुलाँ वक़्त लड़ेंगे) तो (मौजूदा हालात का तक़ाज़ा यह था कि) ज़रूर उस तय करने के बारे में तुममें मतभेद होता, (यानी चाहे सिर्फ़ मुसलमानों में आपस में इसलिये कि सामान और हथियारों की कमी थी, कोई कुछ कहता कोई कुछ कहता। और चाहे काफ़िरों के साथ झगड़ा व विवाद होता जिसकी वजह से इस तरफ़ सामान व हथियारों की कमी और उस तरफ़ मुसलमानों का रौब, बहरहाल दोनों तरह इस जंग की नौबत न आती। पस इस जंग के बाद जो फ़ायदे सामने आये वो न आते जिनका बयान "ताकि मरे जिसको मरना है...." में आता है) लेकिन (अल्लाह तआ़ला ने ऐसा सामान कर दिया कि इसकी नौबत नहीं आई, बिना इरादे के लड़ाई ठन गयी) ताकि जो बात अल्लाह को करनी मन्ज़ूर थी उसको पूरी कर दे, यानी ताकि (हक़ का निशान ज़ाहिर हो जाये और) जिसको बरबाद (यानी गुमराह) होना है वह निशान आने के बाद बरबाद हो, और जिसको ज़िन्दा (हिदायत पाने वाला) होना है वह (भी) निशान आने के बाद ज़िन्दा हो, (मतलब यह कि अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर था लड़ाई होना ताकि एक ख़ास तरीक़े से इस्लाम का हक़ होना ज़ाहिर हो जाये कि इस क़द्र अफ़राद और सामान की कमी के बावजूद मुसलमान ग़ालिब आये जो कि आ़म मामूल के ख़िलाफ़ और एक चमत्कारी बात है, जिससे मालूम हुआ कि इस्लाम हक़ है। पस इससे अल्लाह की हुज्जत पूरी हो गयी। उसके बाद जो गुमराह होगा वह हक़ के स्पष्ट और वाज़ेह होने के बाद होगा, जिसमें अ़ज़ाब का पूरा हक़दार होना ज़ाहिर हो गया और उज़्र की गुंजाईश ही न रही। इसी तरह जिसको हिदायत मिलनी होगी वह हक़ को क़ुबूल कर लेगा। लड़ाई की इस हिक्मत का ख़ुलासा यह हुआ कि हक़ वाज़ेह हो जाये) और बेशक अल्लाह तआ़ला ख़ूब सुनने वाले, ख़ूब जानने वाले हैं (कि इस हक़ के स्पष्ट और वाज़ेह होने के बाद ज़बान और दिल से कौन कुफ़्र करता है और कौन ईमान लाता है)।

(और वह वक़्त भी ज़िक्र करने के क़ाबिल है) जब अल्लाह ने आपके सपने में आपको वे लोग कम दिखलाये (चुनाँचे आपने सहाबा को उस सपने की ख़बर की, उनके दिल ख़ूब मज़बूत हो गये) और अगर अल्लाह आपको उन लोगों को ज़्यादा करके दिखा देते (और आप सहाबा से फ़रमा देते) तो (ऐ सहाबा) तुम्हारी हिम्मतें हार जातीं, और इस मामले (यानी जंग) में तुम में आपस में झगड़ा (व मतभेद) हो जाता, लेकिन अल्लाह ने (उस कम-हिम्मती और झगड़े से तुमको) बचा लिया, बेशक वह दिलों की बात को ख़ूब जानता है। (उसको मालूम था कि इस तरह कमज़ोरी पैदा होगी और इस तरह मज़बूती, इसलिये ऐसी तदबीर की) और (सिर्फ़ सपने ही में आपको कम दिखलाने पर बस नहीं किया बल्कि हिक्मत को पूरा करने के लिये जागने की हालत में मुक़ाबले के वक़्त मुसलमानों की नज़र में भी काफ़िर कम दिखलाई दिये जैसा कि इसके उलट भी हुआ जो कि हक़ीक़त के मुताबिक़ भी था, चुनाँचे फ़रमाते हैं कि उस वक़्त को

याद करो) जबकि अल्लाह तुमको जबकि तुम आमने-सामने हुए, वे लोग तुम्हारी नज़र में कम करके दिखला रहे थे और (इसी तरह) उनकी निगाह में तुमको कम करके दिखला रहे थे, ताकि जो बात अल्लाह को करनी मन्ज़ूर थी उसको पूरा कर दे (जैसा कि पहले बयान हो चुका है कि जो मरे व मर जाये.........) और सब मुक़द्दमे ख़ुदा ही की तरफ़ लौटाये जाएँगे (वह हलाक होने वाले और ज़िन्दा रहने वाले यानी गुमराह और हिदायत पाने वाले को सज़ा व जज़ा देंगे)।

मआरिफ़ व मसाईल

बदर की लड़ाई कुफ़्र व इस्लाम का वह पहला मुक़ाबला और जंग थी जिसने ज़ाहिरी और माद्दी तौर पर भी इस्लाम की बरतरी और हक़्क़ानियत का सुबूत दिया, इसलिये क़ुरआने करीम ने इसकी तफ़सीलात बयान करने को ख़ास प्रमुखता दी। उपर्युक्त आयतों में इसी का बयान है। जिसके ज़िक्र में बहुत सी हिक्मतों और मस्लेहतों के अ़लावा एक ख़ास मस्लेहत इसका इज़हार है कि इस लड़ाई में ज़ाहिरी और माद्दी तौर पर मुसलमानों के फ़तह पाने की कोई संभावना न थी और मक्का के मुश्रिकों की शिकस्त का कोई गुमान व ख़्याल न था। मगर अल्लाह तआ़ला की ग़ैबी क़ुव्वत ने सारे साज़ व सामान और ज़ाहिरी असबाब की काया पलट दी। इसी वाक़िए की वज़ाहत के लिये इन आयतों में ग़ज़वा-ए-बदर के जंग के मोर्चे का पूरा नक़्शा क़ुरआने करीम ने बयान फ़रमाया है। इन आयतों के ख़ुलासे से पहले चन्द अलफ़ाज़ की वज़ाहत देख लीजिए।

'उदवतुन' के मायने एक तरफ़ (दिशा) के आते हैं और लफ़्ज़ 'दुनिया' अदना से बना है जिसके मायने हैं ज़्यादा क़रीब। आख़िरत के मुक़ाबले में इस जहान को भी 'दुनिया' इसलिये कहा जाता है कि यह आख़िरत के जहान की तुलना में इनसान की तरफ़ ज़्यादा क़रीब है। और लफ़्ज़ 'क़ुस्वा' अक़्सा से बना है 'अक़्सा' के मायने हैं बहुत दूर।

बयालीसवीं आयत में हलाकत (मौत) और उसके मुक़ाबले में हयात (ज़िन्दगी) का ज़िक्र आया है। इन दोनों लफ़्ज़ों से मौत व हयात के ज़ाहिरी मायने मुराद नहीं बल्कि मानवी मौत व हयात या हलाकत व निजात मुराद है। मानवी ज़िन्दगी इस्लाम व ईमान है और मौत शिर्क व कुफ़्र। क़ुरआने करीम ने कई जगह ये अलफ़ाज़ इस मायने में इस्तेमाल किये। एक जगह इरशाद फ़रमाया है:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيْكُمْ.

यानी ऐ ईमान वालो! तुम कहा मानो अल्लाह व रसूल का जब तुमको वे ऐसी चीज़ की तरफ़ बुलायें जिसमें तुम्हारी हयात (ज़िन्दगी) है। मुराद हयात से वह वास्तविक ज़िन्दगी और हमेशा की राहत है जो ईमान व इस्लाम के सिले में मिलती है। अब आयतों की तफ़सीर यह हुई कि बयालीसवीं आयत में जंगे-बदर के लड़ाई के मोर्चे का नक़्शा यह बतलाया गया है कि मुसलमान 'उदवा-ए-दुनिया' के पास थे और काफ़िर 'उदवा-ए-क़ुस्वा' के पास। मुसलमानों का मक़ाम उस मैदान के उस किनारे पर था जो मदीने से क़रीब था और काफ़िर मैदान के दूसरे

किनारे पर थे जो मदीने से दूर था। और अबू सुफ़ियान का तिजारती क़ाफ़िला जिसकी वजह से यह जिहाद खड़ा किया गया था वह भी मक्का से आने वाले काफ़िरों के लश्कर से क़रीब और मुसलमानों की पकड़ से बाहर तीन मील के फ़ासले पर समन्दर के किनारे-किनारे चल रहा था।

जंग के इस नक़्शे के बयान से मक़सद यह बतलाना है कि जंगी एतिबार से मुसलमान बिल्कुल बेमौक़ा ग़लत जगह ठहरे थे, जहाँ से दुश्मन पर क़ाबू पाने का बल्कि अपनी जान बचाने का भी कोई इमकान (संभावना) ज़ाहिरी एतिबार से न था। क्योंकि उस मैदान की वह जानिब जो मदीना से क़रीब थी एक रेतीली ज़मीन थी जिसमें चलना भी दूभर था। फिर पानी की कोई जगह उनके पास न थी। और मदीना से दूर वाली जानिब जिस पर काफ़िरों ने अपना पड़ाव डाला था वह साफ़ ज़मीन थी और पानी भी वहाँ से क़रीब था।

और उस मैदान के दोनों किनारों का पता देकर यह भी बतला दिया कि दोनों लश्कर बिल्कुल आमने-सामने थे कि किसी की ताक़त या कमज़ोरी दूसरे से छुपी न रह सकती। साथ ही यह भी बतला दिया कि मक्का के मुश्रिकों के लश्कर को यह भी इत्मीनान हासिल था कि हमारा तिजारती क़ाफ़िला मुसलमानों की पहुँच से निकल चुका है। अब अगर हमें ज़रूरत पड़े तो वह भी हमारी इमदाद कर सकता है। इसके उलट मुसलमान अपनी जगह के एतिबार से भी तकलीफ़ व परेशानी में थे और कहीं से मदद मिलने का भी कोई गुमान व ख़्याल न था। और यह बात पहले से मुतैयन और हर लिखे-पढ़े आदमी को मालूम है कि मुसलमानों के लश्कर की कुल तायदाद तीन सौ तेरह थी और काफ़िरों की तायदाद एक हज़ार। मुसलमानों के पास न सवारियों की काफ़ी तायदाद थी और न हथियारों की। उसके मुक़ाबले में काफ़िरों का लश्कर इन सब चीज़ों से लैस था।

मुसलमान इस जिहाद में न किसी हथियारबन्द लश्कर से जंग की तैयारी करके निकले थे, वक़्ती तौर पर अचानक एक तिजारती क़ाफ़िले का रास्ता रोकने और दुश्मन की ताक़त को तोड़ने के ख़्याल से सिर्फ़ तीन सौ तेरह मुसलमान बेसामानी के आलम में निकल खड़े हुए थे, अचानक ग़ैर-इरादी तौर पर एक हज़ार जवानों के हथियारबन्द लश्कर से मुक़ाबला पड़ गया।

क़ुरआन की इस आयत ने बतलाया कि लोगों की नज़र में यह वाक़िआ अगरचे एक इत्तिफ़ाक़ी हादसे की सूरत में बिना इरादे के पेश आया, लेकिन दुनिया में जितने इत्तिफ़ाक़ात ग़ैर-इख़्तियारी सूरत से पेश आया करते हैं उनकी सतह और सूरत अगरचे महज़ इत्तिफ़ाक़ की होती है लेकिन कायनात के बनाने वाले की नज़र में वो सब के सब एक स्थिर निज़ाम की लगी बंधी कड़ियाँ होती हैं, उनमें कोई चीज़ बेजोड़ या बेमौक़ा नहीं होती। जब वह पूरा निज़ाम सामने आ जाये उस वक़्त इनसान को पता लग सकता है कि उस इत्तिफ़ाक़ी वाक़िए में क्या-क्या हिक्मतें छुपी थीं।

बदर की लड़ाई ही के वाक़िए को ले लीजिए। इसकी इत्तिफ़ाक़ी और ग़ैर-इख़्तियारी सूरत से ज़ाहिर होने में यह मस्लेहत थी किः

وَلَوْ تَوَاعَدْتُّمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِي الْمِيْعٰدِ

यानी अगर दुनिया की आ़म जंगों की तरह यह जंग भी तमाम पहलुओं पर ग़ौर व फ़िक्र और आपसी क़रारदादों के ज़रिये लड़ी जाती तो हालात का तक़ाज़ा यह था कि यह जंग होती ही नहीं, बल्कि इसमें मतभेद और विवाद पड़ जाता, चाहे इस तरह कि ख़ुद मुसलमानों की राय में अपनी कम संख्या व कमज़ोरी और सामने वाले की अधिकता व क़ुव्वत को देखकर सहमति न हो पाती या इस तरह कि दोनों फ़रीक़ यानी मुसलमान व काफ़िर तयशुदा वायदे पर मैदान में न पहुँचते। मुसलमान तो अपनी कम संख्या व कमज़ोरी को देखकर आगे बढ़ने की हिम्मत न करते और काफ़िरों पर हक़ तआ़ला ने मुसलमानों का रौब जमाया हुआ था, वे अपनी अधिक संख्या और ताक़त के बावजूद मुक़ाबले पर आने से घबराते।

इसलिये क़ुदरत के स्थिर निज़ाम ने दोनों तरफ़ ऐसे हालात पैदा कर दिये कि ज़्यादा सोचने समझने का मौक़ा ही न मिले। मक्का वालों को तो अबू सुफ़ियान् के क़ाफ़िले की घबराई हुई फ़रियाद ने एक हौलनाक सूरत में सामने आकर बेसोचे-समझे चलने पर आमादा कर दिया। मुसलमानों को इस ख़्याल ने कि हमारे मुक़ाबले पर कोई जंगी हथियारबन्द लश्कर नहीं, एक मामूली तिजारती क़ाफ़िला है। मगर अ़लीम व ख़बीर (सब कुछ जानने वाले और हर चीज़ की ख़बर रखने वाले यानी अल्लाह तआ़ला) को मन्ज़ूर यह था कि दोनों में बाक़ायदा जंग हो जाये ताकि उस जंग के बाद जो परिणाम इस्लाम की फ़तह की शक्ल में ज़ाहिर होने वाले हैं वो सामने आ जायें। इसी लिये फ़रमायाः

وَلٰكِنْ لِّيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا.

यानी इन हालात के बावजूद जंग इसलिये होकर रही कि अल्लाह तआ़ला को जो काम करना है उसको पूरा कर दिखाये। और वह यह था कि एक हज़ार जवानों के हथियारबन्द सामान से लैस लश्कर के मुक़ाबले में तीन सौ तेरह साज़ व सामान से ख़ाली, फ़ाक़े के मारे हुए मुसलमानों की एक टोली और वह भी जंग के मोर्चे के एतिबार से बेमौक़ा, जब इस पहाड़ से टकराती है तो यह पहाड़ टुकड़े-टुकड़े हो जाता है, और यह छोटी सी जमाअ़त कामयाब होती है, जो खुली आँखों यह दिखाता है कि इस जमाअ़त की पीठ पर कोई बड़ी क़ुदरत और ताक़त काम कर रही थी, जिससे यह एक हज़ार का लश्कर मेहरूम था। और यह भी ज़ाहिर है कि इसकी ताईद इस्लाम की वजह से और उसकी मेहरूमी कुफ़्र की वजह से थी। जिससे हक़ व बातिल और खरे खोटे का पूरा फ़र्क़ हर समझदार इनसान के सामने आ गया। इसी लिये आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ ۢ بَيِّنَةٍ وَّيَحْيٰى مَنْ حَيَّ عَنْ ۢ بَيِّنَةٍ.

यानी बदर के वाक़िए में इस्लाम की खुली हक़्क़ानियत और कुफ़्र व शिर्क के बातिल व मरदूद होने को इसलिये खोल दिया गया कि आईन्दा जो हलाकत में पड़े वह देख-भालकर पड़े, और जो ज़िन्दा रहे वह भी देख-भालकर रहे। अंधेरे और मुग़ालते में कोई काम न हो।

इस आयत के अलफ़ाज़ में हलाकत से मुराद कुफ़्र और हयात व ज़िन्दगी से मुराद इस्लाम

है। मतलब यह है कि हक़ सामने आ जाने और खुल जाने के बाद ग़लत-फ़हमी का शुब्हा व गुमान और उज़्र तो ख़त्म हो गया, अब जो कुफ़्र इख़्तियार करता है वह देखती आँखों हलाकत (तबाही) की तरफ़ जा रहा है, और जो इस्लाम इख़्तियार करता है वह देख-भालकर हमेशा की ज़िन्दगी इख़्तियार कर रहा है। फिर फ़रमायाः

وَاِنَّ اللّٰهَ لَسَمِيْعٌ عَلِيْمٌ۝

यानी अल्लाह तआ़ला ख़ूब सुनने वाले जानने वाले हैं कि सब के दिलों में छुपे हुए कुफ़्र व ईमान तक उनके सामने हैं, और हर एक की सज़ा व जज़ा भी।

तैंतालीसवीं और चवालीसवीं दोनों आयतों में क़ुदरत के एक ख़ास करिश्मे का ज़िक्र है जो ग़ज़वा-ए-बदर के मैदान में इस ग़र्ज़ के लिये अमल में लाया गया कि ऐसा न होने पाये कि दोनों लश्करों में से कोई भी मैदाने जंग छोड़कर इस जंग को ही ख़त्म कर डाले, क्योंकि उस जंग के नतीजे में माद्दी हैसियत से भी इस्लाम की हक़्क़ानियत का प्रदर्शन करना मुक़द्दर था।

और वह क़ुदरत का करिश्मा यह था कि काफ़िरों का लश्कर अगरचे वास्तव में मुसलमानों से तीन गुना था मगर अल्लाह तआ़ला ने महज़ अपनी कामिल क़ुदरत से मुसलमानों को उनकी तायदाद बहुत कम करके दिखलाई, ताकि मुसलमानों में कमज़ोरी और मतभेद व विवाद पैदा न हो जाये। और यह वाक़िआ दो मर्तबा पेश आया- एक मर्तबा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सपने में दिखला गया, आपने सब मुसलमानों से बतला दिया, जिससे उनकी हिम्मत बढ़ गयी। दूसरी मर्तबा ऐन मैदाने जंग में जबकि दोनों फ़रीक़ आमने-सामने खड़े थे, मुसलमानों को उनकी तायदाद कम दिखलाई गयी। आयत 43 में सपने का वाक़िआ और 44 में जागने की हालत का वाक़िआ बयान हुआ है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हमारी नज़रों में अपना मुक़ाबिल लश्कर ऐसा नज़र आ रहा था कि मैंने अपने क़रीब के एक आदमी से कहा कि ये लोग नब्बे आदमियों की संख्या में होंगे। उस शख़्स ने कहा कि नहीं सौ होंगे।

आख़िरी आयत में इसके साथ यह भी ज़िक्र हुआ हैः

يُقَلِّلُكُمْ فِيْٓ اَعْيُنِهِمْ

यानी अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को भी मुक़ाबले में आये लश्कर की नज़र में कम करके दिखलाया। इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि मुसलमानों की तायदाद तो हक़ीक़त ही में कम थी, वह सही तायदाद उनको दिखला दी, और यह भी हो सकते हैं कि जितनी असली तायदाद थी उससे भी कम करके दिखलाया गया, जैसा कि कुछ रिवायतों में है कि अबू जहल ने मुसलमानों के लश्कर को देखकर अपने साथियों से कहा कि इनकी संख्या तो इससे ज़्यादा मालूम नहीं होती जिनकी ख़ुराक एक ऊँट हो। अ़रब में किसी लश्कर की तायदाद मालूम करने के लिये इससे अन्दाज़ा लगाया जाता था कि कितने जानवर उनकी ख़ुराक के लिये ज़िबह होते हैं। एक ऊँट सौ आदमियों की ख़ुराक समझा जाता था। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इस मैदाने बदर में वहाँ के कुछ लोगों से मक्का के क़ुरैश के लश्कर का पता

चलाने के लिये पूछा था कि उनके लश्कर में रोज़ाना कितने ऊँट ज़िबह किये जाते हैं, तो आपको दस ऊँट रोज़ाना बतलाये गये, जिससे आपने एक हज़ार लश्कर का अनुमान लगाया। ख़ुलासा यह है कि अबू जहल की नज़र में मुसलमान कुल सौ आदमी की संख्या में दिखलाये गये। यहाँ भी कम करके दिखलाने में यह हिक्मत थी कि मुश्रिकों के दिलों पर मुसलमानों का रौब पहले ही न छा जाये, जिसकी वजह से वे मैदान छोड़ भागें।

फ़ायदाः इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि कई बार मोजिज़े के तौर पर और आ़म आ़दत के विपरीत यह भी हो सकता है कि आँखों का देखा हुआ ग़लत हो जाये, जैसे यहाँ हुआ। इसी लिये इस जगह दोबारा फ़रमायाः

لِيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا.

यानी क़ुदरत का यह करिश्मा और आँखों के देखे हुए पर उलट-फेर इसलिये ज़ाहिर किया गया कि जो काम अल्लाह तआ़ला करना चाहते हैं वह पूरा हो जाये। यानी मुसलमानों को कम संख्या और बेसामानी के बावजूद फ़तह देकर इस्लाम की हक़्क़ानियत और इसके साथ ग़ैबी ताईद का इज़हार जो इस जंग से मक़सद था वह पूरा कर दिखाये।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ۝

यानी आख़िरकार सब काम अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ लौटते हैं जो चाहे करे जो चाहे हुक्म दे। कम को ज़्यादा पर और ताक़त को कमज़ोरी पर ग़लबा दे दे। कम को ज़्यादा, ज़्यादा को कम कर दे। मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने ख़ूब फ़रमाया हैः

गर तू ख़्वाही ऐने ग़म शादी शवद् ☆ ऐने बन्द-पाये आज़ादी शवद्
चूँ तू ख़्वाही आतिश आबे ख़ुश शवद् ☆ वर तू ख़्वाही आब हम आतिश शवद्
ख़ाक व बांद व आब व आतिश बन्दा अन्द ☆ बा मन् व तू मुर्दा बा-हक़ ज़िन्दा अन्द

यानी अगर तू चाहे ग़म ख़ुशी में बदल जाये और अगर तू चाहे तो बन्धन से मुक्ति मिल जाये। जब तू चाहे तो आग एक उम्दा पानी की जगह ले ले, और तू चाहे तो पानी को आग का रूप दे दे। मिट्टी, हवा, पानी और आग तेरे हुक्म के ताबे हैं अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।" **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِذَا لَقِيْتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوْا وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝
وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَا تَنَازَعُوْا فَتَفْشَلُوْا وَتَذْهَبَ رِيْحُكُمْ وَاصْبِرُوْا ؕ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ۝
وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَّرِئَآءَ النَّاسِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ
اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इज़ा लक़ीतुम् फ़ि-अतन् फ़स्बुतू वज़्कुरुल्ला-ह कसीरल्-लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून (45) व अतीअ़ुल्ला-ह व रसूलहू व ला तनाज़अ़ू फ़-तफ़्शलू व तज़्ह-ब रीहुकुम् वस्बिरू, इन्नल्ला-ह मअ़स्साबिरीन (46) व ला तकूनू कल्लज़ी-न ख़-रजू मिन् दियारिहिम् ब-तरंव्-व रिआअन्नासि व यसुद्दू-न अ़न् सबीलिल्लाहि, वल्लाहु बिमा यअ़्मलू-न मुहीत (47)	ऐ ईमान वालो! जब भिड़ो किसी फ़ौज से तो क़दम जमाकर रहो और अल्लाह को बहुत याद करो ताकि तुम मुराद पाओ। (45) और हुक्म मानो अल्लाह का और उसके रसूल का और आपस में न झगड़ो, पस नामर्द हो जाओगे और जाती रहेगी तुम्हारी हवा और सब्र करो, बेशक अल्लाह साथ है सब्र वालों के। (46) और न हो जाओ उन जैसे जो कि निकले अपने घरों से इतराते हुए और लोगों के दिखाने को, और रोकते थे अल्लाह की राह से, और अल्लाह के क़ाबू में है जो कुछ वे करते हैं। (47)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! जब तुमको (काफ़िरों की किसी) जमाअ़त से (जिहाद में) मुक़ाबले का इत्तिफ़ाक़ हुआ करे तो (इन आदाब का लिहाज़ रखो। एक यह कि) साबित-क़दम रहो (भागो मत) और (दूसरे यह कि) अल्लाह तआ़ला का ख़ूब कसरत से ज़िक्र करो (कि ज़िक्र से दिल में क़ुव्वत पैदा होती है) उम्मीद है कि तुम (मुक़ाबले में) कामयाब हो (क्योंकि क़दमों और दिल का जमाव जब जमा हो तो कामयाबी ग़ालिब है)। और (तीसरे यह कि जंग से संबन्धित तमाम मामलों में) अल्लाह और उसके रसूल की इताअ़त (का लिहाज़) किया करो (कि कोई कार्रवाई शरीअ़त के ख़िलाफ़ न हो) और (चौथे यह कि अपने इमाम से और आपस में भी) झगड़ा मत करो, वरना (आपस की नाइत्तिफ़ाक़ी से) कम-हिम्मत हो जाओगे (क्योंकि ताक़तें बिखर जायेंगी, एक को दूसरे पर भरोसा न होगा और अकेला आदमी क्या कर सकता है) और तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी (हवा उखड़ने से मुराद रौब का ख़त्म हो जाना है क्योंकि दूसरों को उस नाइत्तिफ़ाक़ी की ख़बर होने से यह बात लाज़िमी है)। और (पाँचवे यह कि अगर कोई मामला नागवारी का पेश आये तो उस पर) सब्र करो, बेशक अल्लाह तआ़ला सब्र करने वालों के साथ हैं (और अल्लाह तआ़ला का साथ उसकी मदद के साथ होने का ज़रिया है) और (छठे यह कि नीयत ख़ालिस रखो, बड़ाई जताने, इतराने और दिखावा करने में) उन (काफ़िर) लोगों के जैसे मत होना कि जो (इसी बदर के वाक़िए में) अपने घरों से इतराते हुए और लोगों को (अपनी

शान व सामान) दिखलाते हुए निकले और (इस घमण्ड व दिखावे के साथ यह भी नीयत थी कि) लोगों को अल्लाह के रास्ते (यानी दीन) से रोकते थे (क्योंकि मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने और चोट देने चले थे जिसका असर आ़म तबीयतों पर भी दीन से दूरी होता) और अल्लाह तआ़ला (उन लोगों को पूरी सज़ा देगा, चुनाँचे वह) उनके आमाल को (अपने इल्म के) घेरे में लिये हुए है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

जंग व जिहाद में कामयाबी के लिये क़ुरआनी हिदायतें

पहली दो आयतों में हक़ तआ़ला ने मुसलमानों को मैदान-ए-जंग और दुश्मन के मुक़ाबले के लिये एक ख़ास हिदायत नामा दिया है जो उनके लिये दुनिया में कामयाबी और फ़तह हासिल करने का और आख़िरत की निजात व फ़लाह का अक्सीर नुस्ख़ा है और इस्लाम के शुरूआ़ती ज़माने की तमाम जंगों में मुसलमानों की आश्चर्यजनक कामयाबियों और फ़ुतूहात का राज़ इसी में छुपा है। और वो चन्द चीज़ें हैं।

अव्वल सबात यानी साबित रहना और जमना। जिसमें दिल का जमाव और क़दमों का डटे रहना दोनों दाख़िल हैं। क्योंकि जब तक किसी शख़्स का दिल मज़बूत और साबित न हो उसका क़दम और जिस्मानी अंग साबित नहीं रह सकते और यह चीज़ ऐसी है जिसको हर मोमिन व काफ़िर जानता और समझता है, और दुनिया की हर क़ौम अपनी जंगों में इसका विशेष ध्यान और पाबन्दी करती है। क्योंकि तजुर्बा रखने वालों से छुपा नहीं कि मैदाने जंग का सबसे पहला और सबसे ज़्यादा कामयाब हथियार दिल और क़दमों का जमाव ही है, दूसरे सारे हथियार इसके बग़ैर बेकार हैं।

दूसरे अल्लाह का ज़िक्र यह वह मख़्सूस और अन्दरूनी हथियार है जिससे मोमिन के सिवा आ़म दुनिया ग़ाफ़िल है। पूरी दुनिया के लिये बेहतरीन हथियार और नये से नया सामान मुहैया करने और फ़ौज के साबित-क़दम रखने की तो पूरी तदबीरें करती है मगर मुसलमानों के इस रूहानी और मानवी हथियार से बेख़बर और नावाक़िफ़ है। यही वजह है कि हर मैदान में जहाँ मुसलमानों का मुक़ाबला इन हिदायतों के मुताबिक़ किसी क़ौम से हुआ मुख़ालिफ़ की पूरी ताक़त और हथियार व सामान को बेकार कर दिया। ज़िक्रुल्लाह की अपनी ज़ाती और मानवी बरकतें तो अपनी जगह हैं ही, यह भी हक़ीक़त है कि क़दम के जमाने का इससे बेहतर कोई नुस्ख़ा भी नहीं। अल्लाह की याद और उस पर भरोसा वह बिजली की ताक़त है जो एक कमज़ोर इनसान को पहाड़ों से टकरा जाने पर तैयार कर देती है और कैसी ही मुसीबत और परेशानी हो अल्लाह की याद सब को हवा में उड़ा देती है, और इनसान के दिल को मज़बूत और क़दम को साबित रखती है।

यहाँ यह बात भी ध्यान में रखिये कि जंग व क़िताल का वक़्त आदतन ऐसा वक़्त होता है कि उसमें कोई किसी को याद नहीं करता, अपनी फ़िक्र पड़ी होती है। इसी लिये अ़रब के जाहिली दौर में शायर मैदाने जंग में भी अपने महबूब को याद करने पर फ़ख़्र किया करते हैं कि वह बड़ी दिल की ताक़त और मुहब्बत की पुख़्तगी की दलील है, जाहिली दौर के एक शायर ने कहा है:

ذکرتك والخطی یخطر بیننا.

यानी मैंने तुझे उस वक़्त भी याद किया जब कि नेज़े हमारे दरमियान लचक रहे थे।

क़ुरआने करीम ने इस ख़तरों भरे मौक़े में मुसलमानों को ज़िक्रुल्लाह की तालीम फ़रमाई और वह भी अधिकता की ताकीद के साथ।

यहाँ यह बात भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि पूरे क़ुरआन में ज़िक्रुल्लाह के सिवा किसी इबादत को कसरत से (अधिकता के साथ) करने का हुक्म नहीं। नमाज़ को बहुत ज़्यादा पढ़ने या रोज़ों को बहुत ज़्यादा रखने का कहीं ज़िक्र नहीं। सबब यह है कि ज़िक्रुल्लाह एक ऐसी आसान इबादत है कि इसमें न कोई बड़ा वक़्त ख़र्च होता है न मेहनत न किसी दूसरे काम में इससे रुकावट पैदा होती है। इस पर अतिरिक्त यह कि अल्लाह तआ़ला ने महज़ अपने फ़ज़्ल से ज़िक्रुल्लाह के लिये कोई शर्त और पाबन्दी, वुज़ू, तहारत, लिबास और क़िब्ले वग़ैरह की भी नहीं लगाई, हर शख़्स हर हाल में, बावुज़ू बेवुज़ू, खड़े बैठे, लेटे कर सकता है, और इस पर अगर इमाम जज़री रह. की उस तहक़ीक़ का इज़ाफ़ा कर लिया जाये जो उन्होंने 'हिस्ने-हसीन' में लिखी है कि ज़िक्रुल्लाह सिर्फ़ ज़बान या दिल से ज़िक्र करने ही को नहीं कहते बल्कि हर जायज़ काम जो अल्लाह तआ़ला और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त में रहकर किया जाये वह भी ज़िक्रुल्लाह है, तो इस तहक़ीक़ पर ज़िक्रुल्लाह का मफ़्हूम इस क़द्र आम और आसान हो जाता है कि सोते हुए भी इनसान को ज़ाकिर (ज़िक्र करने वाला) कह सकते हैं। जैसे कुछ रिवायतों में है:

نَوْمُ الْعَالِمِ عِبَادَةٌ.

यानी आ़लिम की नींद भी इबादत में दाख़िल है। क्योंकि आ़लिम जो अपने इल्म के तक़ाज़े पर अ़मल करता हो उसके लिये यह लाज़िम है कि उसका सोना और जागना सब अल्लाह तआ़ला की इताअ़त ही के दायरे में हो।

मैदाने जंग में ज़िक्रुल्लाह की अधिकता का हुक्म अगरचे बज़ाहिर मुजाहिदीन के लिये एक काम का इज़ाफ़ा नज़र आता है जो आ़दतन मशक़्क़त व मेहनत को चाहता है। लेकिन ज़िक्रुल्लाह की यह अ़जीब ख़ुसूसियत है कि वह मेहनत नहीं लेता बल्कि एक ख़ुशी व ताक़त और लज़्ज़त बख़्शता है, और इनसान के काम में सहायक व मददगार बनता है। वैसे भी मेहनत व मशक़्क़त के काम करने वालों की आ़दत होती है कि कोई कलिमा या गीत गुनगुनाया करते हैं। क़ुरआने करीम ने मुसलमानों को इसका बेहतरीन बदल दे दिया जो हज़ारों फ़ायदों और

हिक्मतों पर आधारित है। इसी लिये आयत के आख़िर में फ़रमायाः

لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ٥

यानी अगर तुमने दिल व क़दम के जमाव और ज़िक्रुल्लाह के दो गुर याद कर लिये और इनको मैदाने जंग में इस्तेमाल किया तो फ़लाह व कामयाबी तुम्हारी है।

मैदाने जंग का ज़िक्र एक तो वह है जो आ़म तौर पर नारा-ए-तकबीर के अन्दाज़ में किया जाता है, इसके अ़लावा अल्लाह तआ़ला पर नज़र और भरोसा व तवक्कुल और दिल से उसकी याद। लफ़्ज़ ज़िक्रुल्लाह इन सब को शामिल है।

छियालीसवीं आयत में एक तीसरी चीज़ की तालीम और की गयी, वह है:

اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ.

यानी अल्लाह और उसके रसूल की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) को लाज़िम पकड़ो। क्योंकि अल्लाह तआ़ला की इमदाद व नुसरत उसकी इताअ़त ही के ज़रिये हासिल की जा सकती है, गुनाह और नाफ़रमानी तो अल्लाह की नाराज़ी और उसके हर फ़ज़्ल से मेहरूमी के असबाब होते हैं। इस तरह मैदाने जंग के लिये क़ुरआनी हिदायत नामे की तीन धारायें हो गयीं- दिल व क़दमों का जमाव, अल्लाह का ज़िक्र, अल्लाह व रसूल की फ़रमाँबरदारी। इसके बाद फ़रमायाः

وَلَا تَنَازَعُوْا فَتَفْشَلُوْا وَتَذْهَبَ رِيْحُكُمْ وَاصْبِرُوْا.

इसमें नुक़सानदेह पहलुओं पर तंबीह करके उनसे बचने की हिदायत है। और वह नुक़सान का पहलू जो जंग की कामयाबी में रुकावट होता है वह आपसी झगड़ा व इख़्तिलाफ़ है। इसलिये फ़रमायाः

وَلَا تَنَازَعُوْا.

यानी आपस में झगड़ा और खींचतान न करो, वरना तुममें बुज़दिली फैल जायेगी और तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी।

इसमें आपसी झगड़ों के दो नतीजे बयान किये गये हैं- एक यह कि तुम ज़ाती तौर पर कमज़ोर और बुज़दिल हो जाओगे। दूसरे यह कि तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी, दुश्मन की नज़रों में हक़ीर हो जाओगे। आपसी खींचतान और झगड़े से दूसरों की नज़र में हक़ीर (बेवज़न और बेहक़ीक़त) हो जाना तो आसानी से समझ में आने वाली चीज़ है लेकिन ख़ुद अपनी क़ुव्वत पर इसका क्या असर पड़ता है कि उसमें कमज़ोरी और बुज़दिली आ जाये। इसकी वजह यह है कि आपसी मेल-मिलाप, एकजुटता और भरोसे की सूरत में हर एक इनसान के साथ पूरी जमाअ़त की ताक़त लगी हुई होती है, इसलिये एक आदमी अपने अन्दर अपनी जमाअ़त के बराबर क़ुव्वत महसूस करता है, और जब आपसी इत्तिहाद व भरोसा न हो तो उसकी अकेली क़ुव्वत रह गयी, वह ज़ाहिर है कि जंग व क़िताल के मैदान में कोई चीज़ नहीं।

इसके बाद इरशाद फ़रमाया 'वस्बिरू' यानी सब्र को लाज़िम पकड़ो। मज़मून के अगले पिछले हिस्से से ऐसा मालूम होता है कि यह झगड़े, विवाद और मनमुटाव से बचने का कामयाब

नुस्ख़ा बतलाया गया है, और बयान इसका यह है कि कोई जमाअ़त ख़्याल व मक़सद में कितनी ही एकजुट हो मगर इनसानी अफ़राद की तबई विशेषताएँ ज़रूर विभिन्न हुआ करती हैं, और किसी मक़सद (उद्देश्य) के लिये कोशिश व मेहनत में अ़क्ल व तजुर्बे वालों की रायों का मतभेद भी लाज़िमी है। इसलिये दूसरों के साथ चलने और उनको साथ रखने के लिये इसके सिवा कोई चारा नहीं कि आदमी ख़िलाफ़े तबीयत बातों पर सब्र करने और उनको नज़र-अन्दाज़ करने का आ़दी हो, और अपनी राय पर इतना जमाव और ज़िद न हो कि उसको क़ुबूल न किया जाये तो लड़ बैठे। इसी सिफ़त का दूसरा नाम सब्र है।

आजकल यह तो हर शख़्स जानता और कहता है कि आपस का झगड़ा बहुत बुरी चीज़ है मगर उससे बचने का जो गुर है कि आदमी ख़िलाफ़े तबीयत बातों पर सब्र करने का आ़दी बने, अपनी बात मनवाने और चलाने की फ़िक्र में न पड़े, यह बहुत कम लोगों में पाया जाता है। इसी लिये एकता व इत्तिफ़ाक़ के सारे भाषण और नसीहतें बेफ़ायदा होकर रह जाते हैं। आदमी को दूसरे से अपनी बात मनवाने पर तो ताक़त नहीं होती मगर ख़ुद दूसरे की बात मान लेना और अगर उसकी अ़क्ल व दियानत का तक़ाज़ा यही है कि उसको न माने तो कम से कम झगड़े से बचने के लिये ख़ामोशी इख़्तियार कर लेना तो बहरहाल इख़्तियार में है, इसलिये क़ुरआने करीम ने झगड़े से बचने की हिदायत के साथ-साथ सब्र की तालीम भी हर फ़र्द और हर जमाअ़त को कर दी, ताकि झगड़े से बचना अ़मली दुनिया में आसान हो जाये।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ध्यान है कि क़ुरआने करीम ने इस जगह "ला तना-ज़ऊ" फ़रमाया है, यानी आपसी खींचतान और मनमुटाव को रोका है, राय के इख़्तिलाफ़ या उसके इज़हार से मना नहीं किया। राय का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) जो दियानत और इख़्लास (ईमानदारी और सच्चाई) के साथ हो वह कभी झगड़े की सूरत इख़्तियार नहीं किया करता। झगड़ा व विवाद वहीं होता है जहाँ मतभेद के साथ अपनी बात मनवाने और दूसरे की बात न मानने का जज़्बा काम कर रहा हो। और यही वह जज़्बा है जिसको क़ुरआने करीम ने 'वस्बिरू' के लफ़्ज़ से ख़त्म किया है, और आख़िर में सब्र करने का एक अ़ज़ीमुश्शान फ़ायदा बतलाकर सब्र की कड़वाहट को दूर फ़रमा दिया। इरशाद फ़रमायाः

إِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ۝

यानी सब्र करने वालों को अल्लाह तआ़ला का साथ हासिल होता है, अल्लाह तआ़ला हर वक़्त हर हाल में उनका साथी होता है। और यह इतनी बड़ी दौलत है कि दोनों जहान की सारी दौलतें इसके मुक़ाबले में कुछ नहीं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुछ लड़ाईयों और जंगी मुहिमों में इन्हीं हिदायतों को याद दिलाने और ध्यान में रखने के लिये ऐन मैदाने जंग में यह ख़ुतबा दिया "ऐ लोगो! दुश्मन से मुक़ाबले की तमन्ना न करो बल्कि अल्लाह तआ़ला से आ़फ़ियत और अमन माँगो और जब मजबूरन मुक़ाबला हो ही जाये तो फिर सब्र और जमाव को लाज़िम पकड़ो, और यह समझ लो कि जन्नत तलवारों के साये में है।" (मुस्लिम शरीफ़)

सैंतालीसवीं आयत में एक और नुक़सान देने वाले पहलू पर तंबीह और उससे परहेज़ की हिदायत दी गयी है। वह है अपनी ताक़त व अधिकता पर नाज़ या काम में इख़्लास के बजाय अपनी कोई और ग़र्ज़ पोशीदा होना, क्योंकि ये दोनों चीज़ें भी बड़ी-बड़ी ताक़तवर जमाअ़तों को शिकस्त से दोचार कर दिया करती हैं।

इस आयत में इशारा मक्का के क़ुरैश के हालात की तरफ़ भी है जो अपने तिजारती क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये भारी संख्या में फ़ौज और सामान लेकर अपनी क़ुव्वत व अधिकता पर इतराते हुए निकले थे। और जब तिजारती क़ाफ़िला मुसलमानों की पकड़ से बाहर हो गया उस वक़्त भी इसलिये वापस नहीं हुए कि अपनी बहादुरी का प्रदर्शन करना था।

मोतबर रिवायतों में है कि जब अबू सुफ़ियान अपना तिजारती क़ाफ़िला लेकर मुसलमानों की पहुँच और पकड़ से बच निकले तो अबू जहल के पास क़ासिद भेजा कि अब तुम्हारे आगे बढ़ने की ज़रूरत नहीं रही, वापस आ जाओ। और भी बहुत से क़ुरैशी सरदारों की यही राय थी, मगर अबू जहल अपने घमण्ड व गुरूर और शोहरत की तलब के जज़्बे में क़सम खा बैठा कि हम उस वक़्त तक वापस न होंगे जब तक चन्द दिन बदर के मक़ाम पर पहुँचकर अपनी फ़तह का जश्न न मना लें।

जिसके नतीजे में वह और उसके बड़े-बड़े साथी सब वहीं ढेर हुए और एक गढ़े में डाले गये। इस आयत में मुसलमानों को उनके जैसे रवैये और तरीक़े से परहेज़ करने की हिदायत फ़रमाई गयी।

وَإِذْ زَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ أَعْمَالَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمُ
الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ وَإِنِّي جَارٌ لَّكُمْ ۚ فَلَمَّا تَرَاءَتِ الْفِئَتٰنِ نَكَصَ عَلٰى عَقِبَيْهِ وَقَالَ إِنِّي بَرِيءٌ
مِّنْكُمْ إِنِّي أَرٰى مَا لَا تَرَوْنَ إِنِّي أَخَافُ اللّٰهَ ۚ وَاللّٰهُ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ إِذْ يَقُولُ الْمُنٰفِقُونَ ع
وَالَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ غَرَّ هٰؤُلَاءِ دِينُهُمْ ۚ وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ فَإِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

व इज़् ज़य्य-न लहुमुश्शैतानु अअ़्मालहुम् व क़ा-ल ला ग़ालि-ब लकुमुल्यौ-म मिनन्नासि व इन्नी जारुल्-लकुम् फ़-लम्मा तरा-अतिल्-फ़ि-अतानि न-क-स अ़ला अ़क़िबैहि व क़ा-ल इन्नी बरीउम् मिन्कुम् इन्नी अरा मा ला तरौ-न इन्नी	और जिस वक़्त अच्छा दिखने वाला बना दिया शैतान ने उनकी नज़रों में उनके अ़मलों को और बोला कि कोई भी ग़ालिब न होगा तुम पर आज के दिन लोगों में से, और मैं तुम्हारा हिमायती हूँ। फिर जब सामने हुईं दोनों फ़ौजें तो वह उल्टा फिरा अपनी एड़ियों पर और बोला मैं तुम्हारे साथ नहीं हूँ, मैं देखता हूँ जो तुम

अख़्राफ़ुल्ला-ह, वल्लाहु शदीदुल्-इक़ाब (48) ✿	नहीं देखते, मैं डरता हूँ अल्लाह से, और अल्लाह का अ़ज़ाब सख़्त है। (48) ✿
इज़् यक़ूलुल्-मुनाफ़िक़ू-न वल्लज़ी-न फ़ी क़ुलूबिहिम् म-रज़ुन् ग़र्-र हा-उला-इ दीनुहुम्, व मंय्य-तवक्कल् अ़लल्लाहि फ़-इन्नल्ला-ह अ़ज़ीज़ुन् हकीम (49)	जब कहने लगे मुनाफ़िक़ और जिनके दिलों में बीमारी है, ये लोग घमण्डी हैं अपने दीन पर, और जो कोई भरोसा करे अल्लाह पर तो अल्लाह ज़बरदस्त है हिक्मत वाला। (49)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (उस वक़्त का इनसे ज़िक्र कीजिये) जबकि शैतान ने उन (काफ़िरों) को (दिल में ख़्याल डालने के ज़रिये) उनके (कुफ़िया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त व दुश्मनी वाले) आमाल अच्छे करके दिखलाये (कि उन्होंने उन बातों को अच्छा समझा) और (दिल में बात डालने से बढ़कर यह किया कि सामने आकर उनसे) कहा कि (तुमको वह क़ुव्वत व दबदबा हासिल है कि तुम्हारे मुख़ालिफ़) लोगों में से आज कोई तुम पर ग़ालिब आने वाला नहीं और मैं तुम्हारा हिमायती हूँ (न बाहरी दुश्मनों से डरो और न अन्दरूनी दुश्मनों से अन्देशा करो)। फिर जब (काफ़िरों और मुसलमानों की) दोनों जमाअ़तें एक-दूसरे के आमने-सामने हुईं (और उसने फ़रिश्तों का आसमान से उतरना देखा) तो वह उल्टे पाँव भागा और (यह) कहा कि मेरा तुमसे कोई वास्ता नहीं (मैं हिमायती वग़ैरह कुछ नहीं बनता, क्योंकि) मैं उन चीज़ों को देख रहा हूँ जो तुमको नज़र नहीं आतीं (यानी फ़रिश्ते), मैं तो ख़ुदा से डरता हूँ (कभी किसी फ़रिश्ते से दुनिया ही में मेरी ख़बर लिवा दे) और अल्लाह तआ़ला सख़्त सज़ा देने वाले हैं।

और वह वक़्त भी ज़िक्र करने के क़ाबिल है कि जब (मदीना वालों में से) मुनाफ़िक़ लोग और (मक्का वालों में से) जिनके दिलों में (शक की) बीमारी थी (मुसलमानों का बिना सामान व हथियार के काफ़िरों के मुक़ाबले में आ जाना देखकर यूँ) कहते थे कि इन (मुसलमान) लोगों को इनके दीन ने भूल में डाल रखा है (कि अपने दीन के हक़ होने के भरोसे ऐसे ख़तरे में आ पड़े। अल्लाह जवाब देते हैं) और जो शख़्स अल्लाह पर भरोसा करता है तो (वह अक्सर ग़ालिब ही आता है, क्योंकि) बेशक अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त हैं (इसलिये अपने ऊपर भरोसा करने वाले को ग़ालिब कर देते हैं, और कभी इत्तिफ़ाक़ से ऐसा शख़्स मग़लूब हो जाये तो उसमें कुछ मस्लेहत होती है, क्योंकि) वह हिक्मत वाले (भी) हैं (ग़र्ज़ कि ज़ाहिरी सामान व बेसामानी पर मदार नहीं, क़ुदरत वाला कोई और ही है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः अनफ़ाल में शुरू से बदर की लड़ाई में पेश आने वाले वाक़िआ़त और हालात का और उनसे हासिल होनी वाली नसीहतों और सबक़ों का और संबन्धित अहकाम का बयान चल रहा है। इसी में एक वाक़िआ़ मक्का के क़ुरैश को शैतान के फ़रेब देकर मुसलमानों के मुक़ाबले पर उभारने और फिर ऐन मैदाने जंग में साथ छोड़कर अलग हो जाने का है, जो ऊपर दर्ज हुई आयतों के शुरू में बयान हुआ है।

शैतान का यह फ़रेब क़ुरैश के दिलों में वस्वसा डालने की सूरत से था या इनसानी शक्ल में आकर रू-ब-रू गुफ़्तगू से, इसमें दोनों संभावनायें हैं, मगर क़ुरआन के अलफ़ाज़ से ज़्यादातर ताईद दूसरी ही सूरत की होती है कि इनसानी शक्ल में सामने आकर फ़रेब दिया।

इमाम इब्ने जरीर रह. ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जब मक्का के क़ुरैश का लश्कर मुसलमानों के मुक़ाबले के लिये मक्का से निकला तो उनके दिलों पर एक ख़तरा (शंका और डर) इसका सवार था कि हमारे क़रीब में क़बीला बनू बक्र भी हमारा दुश्मन है, ऐसा न हो कि हम मुसलमानों के मुक़ाबले पर जायें और यह दुश्मन क़बीला मौक़ा पाकर हमारे घरों और औ़रतों-बच्चों पर छापा मार दे। क़ाफ़िले के सरदार अबू सुफ़ियान की घबराई हुई फ़रियाद पर तैयार होकर निकल तो खड़े हुए मगर यह ख़तरा उनके लिये पैरों की ज़न्जीरें बना हुआ था कि अचानक शैतान सुराक़ा बिन मालिक की सूरत में इस तरह सामने आया कि उसके हाथ में झण्डा और उसके साथ बहादुर फ़ौज की एक टुकड़ी थी। सुराक़ा बिन मालिक उस इलाक़े और क़बीले का बड़ा सरदार था जिससे हमले का ख़तरा था। उसने आगे बढ़कर क़ुरैशी जवानों के लश्कर से ख़िताब किया और दो तरह से फ़रेब में मुब्तला किया- अव्वल यह किः

لَا غَالِبَ لَكُمُ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ.

यानी आज तमाम लोगों में तुम पर कोई ग़ालिब आने वाला नहीं। मतलब यह था कि मुझे तुम्हारे मुक़ाबिल फ़रीक़ की क़ुव्वत का भी अन्दाज़ा है और तुम्हारी ताक़त व कसरत को भी देख रहा हूँ इसलिये तुम्हें यक़ीन दिलाता हूँ कि तुम बेफ़िक्र होकर आगे बढ़ो, तुम्हीं ग़ालिब रहोगे, कोई तुम्हारे मुक़ाबले पर ग़ालिब आने वाला नहीं।

दूसरे यह किः

اِنِّىْ جَارٌ لَّكُمْ.

यानी तुम्हें जो बनू बक्र वग़ैरह से ख़तरा लगा हुआ है कि वे तुम्हारे पीछे मक्का पर चढ़ दौड़ेंगे, इसकी ज़िम्मेदारी मैं लेता हूँ कि ऐसा न होगा, मैं तुम्हारा मददगार हूँ। मक्का के क़ुरैश सुराक़ा बिन मालिक, उसकी बड़ी शख़्सियत और असर व रसूख़ से पहले से वाक़िफ़ थे, उसकी बात सुनकर उनके दिल जम गये और क़बीला बनू बक्र के ख़तरे से बेफ़िक्र होकर मुसलमानों के

मुक़ाबले के लिये आमादा हो गये।

इस दोहरे फ़रेब से शैतान ने उन लोगों को उनके क़त्ल होने के स्थान की तरफ़ हाँक दियाः

فَلَمَّا تَرَآءَتِ الْفِئَتٰنِ نَكَصَ عَلٰى عَقِبَيْهِ

जब मक्का के मुश्रिक लोगों और मुसलमानों की दोनों जमाअ़तें (बदर के स्थान में) आमने सामने हुईं तो शैतान पिछले पाँव लौट गया।

ग़ज़वा-ए-बदर में चूँकि मक्का के मुश्रिक लोग की पीठ पर एक शैतानी लश्कर भी आ गया था इसलिये अल्लाह तआ़ला ने उनके मुक़ाबले में फ़रिश्तों का लश्कर जिब्रील व मीकाईल के नेतृत्व में भेज दिया। इमाम इब्ने जरीर वग़ैरह ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि शैतान ने जो उस वक़्त इनसानी शक्ल में सुराक़ा बिन मालिक बनकर अपने शैतानी लश्कर का नेतृत्व कर रहा था, जब जिब्रीले अमीन और उनके साथ फ़रिश्तों का लश्कर देखा तो घबरा उठा, उस वक़्त उसका हाथ एक क़ुरैशी जवान हारिस बिन हिशाम के हाथ में था, फ़ौरन उससे अपना हाथ छुड़ाकर भागना चाहा। हारिस ने टोका कि यह क्या करते हो? तो उसके सीने पर मारकर हारिस को गिरा दिया और अपने शैतानी लश्कर को लेकर भाग पड़ा। हारिस ने उसको सुराक़ा समझते हुए कहा कि ऐ अ़रब के सरदार सुराक़ा! तूने तो यह कहा था कि मैं तुम्हारा हामी और मददगार हूँ और ऐन मैदाने जंग में यह हरकत कर रहे हो? तो शैतान ने सुराक़ा की शक्ल में जवाब दियाः

اِنِّىْ بَرِىْٓءٌ مِّنْكُمْ اِنِّىْٓ اَرٰى مَالَا تَرَوْنَ اِنِّىْٓ اَخَافُ اللّٰهَ

यानी मैं तुम्हारे समझौते से बरी होता हूँ क्योंकि मैं वह चीज़ देख रहा हूँ जो तुम्हारी आँखें नहीं देखतीं। मुराद फ़रिश्तों का लश्कर था। और यह कि मैं अल्लाह से डरता हूँ इसलिये तुम्हारा साथ छोड़ता हूँ।

शैतान ने फ़रिश्तों का लश्कर देखा तो उनकी ताक़त से वह वाक़िफ़ था, समझ गया कि अब अपनी ख़ैर नहीं। और यह जो कहा कि मैं अल्लाह से डरता हूँ, इमामे तफ़सीर क़तादा रह. ने कहा कि यह उसने झूठ बोला, अगर वह ख़ुदा से डरा करता तो नाफ़रमानी क्यों करता, मगर अक्सर हज़रात ने फ़रमाया कि डरना भी अपनी जगह सही है, क्योंकि वह अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत और उसके सख़्त अ़ज़ाब को पूरी तरह जानता है, इसलिये न डरने की कोई वजह नहीं, अलबत्ता सिर्फ़ डरना बिना ईमान व इताअ़त के कोई फ़ायदा नहीं रखता।

अबू जहल ने जब सुराक़ा और उसके लश्कर के पीछे हटने से अपने लश्कर की हिम्मत को टूटते देखा तो बात बनाई और कहा कि सुराक़ा के भाग जाने से तुम मुतास्सिर न हो, उसने तो ख़ुफ़िया तौर पर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के साथ साज़िश कर रखी थी। शैतान के पीछे हटने के बाद उनका जो हश्र होना था हो गया। फिर जब ये लोग मक्का वापस आये और इनमें से किसी की मुलाक़ात सुराक़ा बिन मालिक के साथ हुई तो उसने सुराक़ा को मलामत की कि जंगे बदर में हमारी शिकस्त और सारे नुक़सान की ज़िम्मेदारी तुझ पर है, तूने ऐन मैदाने जंग

में मैदान छोड़कर हमारे जवानों की हिम्मत तोड़ दी। उसने कहा कि मैं न तुम्हारे साथ गया न तुम्हारे किसी काम में शरीक हुआ। मैंने तुम्हारी शिकस्त की ख़बर भी तुम्हारे मक्का पहुँचने के बाद सुनी।

यह सब रिवायतें इमाम इब्ने कसीर ने अपनी तफ़सीर में नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि शैतान मरदूद की यह आ़म आ़दत है कि इनसान को बुराई में मुब्तला करके ऐन मौक़े पर अलग हो जाता है। क़ुरआने करीम ने उसकी यह आ़दत बार-बार बयान फ़रमाई है। एक आयत में है:

كَمَثَلِ الشَّيْطٰنِ اِذْ قَالَ لِلْاِنْسَانِ اكْفُرْ فَلَمَّا كَفَرَ قَالَ اِنِّیْ بَرِیْٓءٌ مِّنْكَ اِنِّیْٓ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعٰلَمِیْنَo

शैतानी धोखा व फ़रेब और उससे बचने का तरीक़ा

ऊपर बयान हुई आयत के इस वाक़िए से चन्द फ़ायदे हासिल हुए:

अव्वल यह कि शैतान इनसान का दुश्मन है, इसको नुक़सान पहुँचाने के लिये तरह-तरह के हीले करता और बहरूप बदलता है। कई बार महज़ दिल में वस्वसा (ख़्याल) डाल कर परेशान करता है और कई बार सामने आकर धोखा देता है।

दूसरे यह कि शैतान को अल्लाह तआ़ला ने इसकी क़ुदरत दी है कि वह मुख़्तलिफ़ शक्लों में ज़ाहिर हो सकता है। एक मशहूर हनफ़ी फ़क़ीह (आ़लिम) की किताब 'आकामुल-मरजान फ़ी अहकामिल-जान्न' में इसको वज़ाहत से साबित किया गया है। इसी लिये मुहक़्क़िक़ीन सूफ़ियाये किराम जो कश्फ़ वाले हैं उन्होंने लोगों को इस पर सचेत फ़रमाया है कि किसी शख़्स को देखकर या उसका कलाम सुनकर बग़ैर तहक़ीक़ के उसके पीछे चलना बड़ा ख़तरनाक होता है। कश्फ़ व इल्हाम में भी शैतानी धोखे हो सकते हैं। मौलाना रूमी रह. ने फ़रमाया है:

ऐ बसा इब्लीस आदम-रू-ए-स्त पस बहर दस्ते नशायद दाद दस्त

कि बहुत सी बार इनसानी शक्ल में शैतान होता है इसलिये हर एक के हाथ में अपना हाथ न दे देना चाहिये। **(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

और हाफ़िज़ ने फ़रमाया:

दर राहे इश्क़ वस्वसा अहरमन बसेस्त हुशदार व गोश रा ब-प्याम-ए-सरोश दार

इश्क़ के रास्ते में बहुत सी शैतानी आवाज़ों से भी साबक़ा पड़ता है (यानी बहकाने और ईमान को लूटने वाले मिलते हैं) तू चौकन्ना रह और अल्लाह की तरफ़ से आने वाली आवाज़ (यानी उसके दीन और पैग़ाम) को सुन और उसी की पैरवी कर। **(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

प्यामे सरोश से मुराद अल्लाह की वही (पैग़ाम व दीन) है।

कामयाबी के लिये सिर्फ़ नीयत ही का सही होना काफ़ी नहीं, उससे पहले रास्ता सीधा होना ज़रूरी है

तीसरे यह कि जो लोग कुफ़्र व शिर्क या दूसरे नाजायज़ आमाल में मुब्तला होते हैं इसका

ज़्यादातर सबब यही होता है कि शैतान उनके बुरे आमाल को ख़ूबसूरत, पसन्दीदा और नफ़ा देने वाला ज़ाहिर करके उनके दिल व दिमाग़ को हक़ व सच्चाई और सही नतीजों की तरफ़ से फेर देता है। वे अपने बातिल (ग़लत रास्ते) ही को हक़ और बुरे को भला समझने लगते हैं और हक़ वालों की तरह अपने बातिल पर जान देने के लिये तैयार हो जाते हैं। इसी लिये क़ुरैशी लश्कर और उसके सरदार जब बैतुल्लाह से रुख़्सत हो रहे थे तो बैतुल्लाह के सामने इन अलफ़ाज़ से दुआ करके चले थे कि:

اَللّٰهُمَّ انْصُرْ اَهْدَى الطَّآئِفَتَيْنِ.

यानी ऐ अल्लाह! हम दोनों जमाअ़तों में से जो ज़्यादा हिदायत पर है उसकी मदद फ़रमाईये और फ़तह दीजिये। ये बेख़बर लोग शैतानी फ़रेब में आकर अपने आप ही को ज़्यादा हिदायत पर और हक़ रास्ते वाला समझते थे। और पूरे इख़्लास के साथ (सच्चे दिल से) अपने बातिल की हिमायत व मदद में जान क़ुरबान करते थे।

इससे मालूम हो गया कि सिर्फ़ इख़्लास काफ़ी नहीं जब तक कि अ़मल का रुख़ सही न हो।

इसके बाद की दूसरी आयत में मदीना के मुनाफ़िक़ों और मक्का के मुश्रिकों का एक मुश्तरक (साझा) मक़ूला मुसलमानों के बारे में यह नक़ल किया जो गोया उन पर तरस खाकर कहा गया है कि:

غَرَّ هٰٓؤُلَآءِ دِيْنُهُمْ.

यानी मैदाने बदर में ये मुट्ठी भर मुसलमान इतने भारी और ताक़तवर लश्कर से टकराने आ गये, इन बेचारों को इनके दीन ने फ़रेब में डालकर मौत के मुँह में दे दिया है। अल्लाह तआ़ला ने उनके जवाब में फ़रमायाः

وَمَنْ يَّتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌO

यानी जो शख़्स अल्लाह पर तवक्कुल और भरोसा कर लेता है तो याद रखो कि वह कभी ज़लील नहीं होता, क्योंकि अल्लाह तआ़ला सब पर ग़ालिब है, उसकी हिक्मत के सामने सब की अ़क्ल व समझ रखी रह जाती है। मतलब यह है कि तुम लोग सिर्फ़ ज़ाहिरी चीज़ों और असबाब को जानने वाले और उसी पर भरोसा करने वाले हो, तुम्हें उस छुपी ताक़त की ख़बर नहीं जो उस माद्दे और असबाब के पैदा करने वाले के ख़ज़ानों में है, और जो उन लोगों के साथ होती है जो अल्लाह तआ़ला पर ईमान और भरोसा रखते हैं।

आज भी दीनदार भोले-भाले मुसलमानों को देखकर बहुत से अ़क्ल व समझ के दावेदार यूँ ही कहा करते हैं:

अगले वक़्तों के हैं ये लोग इन्हें कुछ न कहो

लेकिन अगर उनमें अल्लाह पर ईमान और भरोसा पूरा हो तो उन्हें इससे कोई नुक़सान नहीं पहुँच सकता।

وَلَوْ تَرَىٰ إِذْ يَتَوَفَّى الَّذِينَ كَفَرُوا ۙ الْمَلَائِكَةُ
يَضْرِبُونَ وُجُوهَهُمْ وَأَدْبَارَهُمْ وَذُوقُوا عَذَابَ الْحَرِيقِ ۝ ذَٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيكُمْ
وَأَنَّ اللَّهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيدِ ۝ كَدَأْبِ آلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ ۚ كَفَرُوا بِآيَاتِ اللَّهِ
فَأَخَذَهُمُ اللَّهُ بِذُنُوبِهِمْ ۗ إِنَّ اللَّهَ قَوِيٌّ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ ذَٰلِكَ بِأَنَّ اللَّهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً
أَنْعَمَهَا عَلَىٰ قَوْمٍ حَتَّىٰ يُغَيِّرُوا مَا بِأَنفُسِهِمْ ۙ وَأَنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

व लौ तरा इज़् य-तवफ़्फ़ल्लज़ी-न क-फ़रुल्मालाइ-कतु यज़्रिबू-न वुजू-हहुम् व अद्बारहुम् व ज़ूक़ू अ़ज़ाबल्-हरीक़ (50) ज़ालि-क बिमा क़द्द-मत् ऐदीकुम् व अन्नल्ला-ह लै-स बिज़ल्लामिल्-लिल्अ़बीद (51) कदअ्बि आलि फ़िर्औ़-न वल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम्, क-फ़रू बिआयातिल्लाहि फ़-अ-ख़-ज़हुमुल्लाहु बिज़ुनूबिहिम्, इन्नल्ला-ह क़विय्युन् शदीदुल्-अ़िक़ाब (52) ज़ालि-क बिअन्नल्ला-ह लम् यकु मुग़य्यिरन् निअ्-मतन् अन्अ़-महा अ़ला क़ौमिन् हत्ता युग़य्यिरू मा बिअन्फ़ुसिहिम् व अन्नल्ला-ह समीअुन् अ़लीम (53)	और अगर तू देखे जिस वक़्त जान क़ब्ज़ करते हैं काफ़िरों की फ़रिश्ते, मारते हैं उनके मुँह पर और उनके पीछे, और कहते हैं चखो अ़ज़ाब जलने का। (50) यह बदला है उसी का जो तुमने आगे भेजा अपने हाथों और इस वास्ते कि अल्लाह ज़ुल्म नहीं करता बन्दों पर। (51) जैसे दस्तूर फ़िरऔ़न वालों का और जो उनसे पहले थे, कि इनकारी हुए अल्लाह की बातों से, सो पकड़ा उनको अल्लाह ने उनके गुनाहों पर, बेशक अल्लाह ज़ोरावर है सख़्त अ़ज़ाब करने वाला। (52) इसका सबब यह है कि अल्लाह हरगिज़ बदलने वाला नहीं उस नेमत को जो दी थी उसने किसी कौम को जब तक वही न बदल डालें अपने जी की बात, और यह कि अल्लाह सुनने वाला जानने वाला है। (53)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर आप (उस वक़्त का वाक़िआ) देखें (तो अ़जीब वाक़िआ नज़र आये) जबकि फ़रिश्ते इन (मौजूदा) काफ़िरों की जान क़ब्ज़ करते जाते हैं (और) इनके मुँह पर और इनकी पीठ पर मारते जाते हैं, और यह कहते जाते हैं कि (अभी क्या है आगे चलकर) आग की सज़ा

झेलना। (और) यह (अ़ज़ाब) उन (कुफ़िया आमाल) की वजह से है जो तुमने अपने हाथों समेटे हैं और यह बात साबित ही है कि अल्लाह तआ़ला बन्दों पर ज़ुल्म करने वाले नहीं। (सो अल्लाह तआ़ला ने बिना जुर्म के सज़ा नहीं दी, पस) उनकी हालत (इस बारे में कि कुफ़्र पर सज़ा पाने वाले हुए ऐसी है) जैसी फ़िरऔ़न वालों की, और उनसे पहले के (काफ़िर) लोगों की हालत थी कि उन्होंने अल्लाह की आयतों का इनकार किया, सो ख़ुदा तआ़ला ने उनके (उन) गुनाहों पर उनको (अ़ज़ाब में) पकड़ लिया, बेशक अल्लाह तआ़ला बड़ी क़ुव्वत वाले, सख़्त सज़ा देने वाले हैं (कि उनके मुक़ाबले में कोई ऐसी क़ुव्वत नहीं कि उनके अ़ज़ाब को हटा सके, और) यह बात (कि बिना जुर्म हम सज़ा नहीं देते) इस सबब से है (कि हमारा एक मुस्तक़िल क़ायदा मुक़र्रर है और बिना जुर्म सज़ा न देना उसी क़ायदे की रू से है, और वह क़ायदा यह है) कि अल्लाह तआ़ला किसी ऐसी नेमत को जो किसी क़ौम को अ़ता फ़रमाई हो नहीं बदलते जब तक कि वही लोग अपने ज़ाती आमाल को नहीं बदल डालते, और यह (बात साबित ही है) कि अल्लाह तआ़ला बड़े सुनने वाले, बड़े जानने वाले हैं (पस वह बात के बदलने को सुनते हैं और अ़मल के बदलने को जानते हैं। सो इन मौजूदा काफ़िरों ने अपनी यह हालत बदली कि इनमें बावजूद कुफ़्र के शुरू में ईमान लाने की सलाहियत क़रीब थी इनकार व मुख़ालफ़त कर-करके उसको दूर कर डाला, पस हमने अपनी नेमत यानी ढील और छूट देने को जो पहले से उनको हासिल थी अपनी पकड़ से बदल दिया। इसकी वजह यह हुई कि उन्होंने उक्त तरीक़े पर सलाहियत व इस्तेदाद के क़रीब होने की नेमत को बदल डाला)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली दो आयतों में मौत के वक़्त काफ़िरों के अ़ज़ाब और फ़रिश्तों की डाँट-डपट का ज़िक्र है। इसमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया है कि अगर आप इन काफ़िरों का हाल उस वक़्त देखते जबकि अल्लाह के फ़रिश्ते इनकी रूह क़ब्ज़ करने के वक़्त इनके चेहरों और पुश्तों पर मार रहे थे और यह कहते जाते थे कि आग में जलने का अ़ज़ाब चखो, तो आप एक बड़ा डरावना मन्ज़र देखते।

तफ़सीर के इमामों में से कुछ हज़रात ने इसको उन क़ुरैश के काफ़िरों के बारे में क़रार दिया है जो मैदाने बदर में मुसलमानों के मुक़ाबले पर आये थे और अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों की इमदाद के लिये फ़रिश्तों का लश्कर भेज दिया था। इस सूरत में आयत के मायने ये हो गये कि मैदाने बदर में जो क़ुरैशी सरदार मारे गये उनके मारने में फ़रिश्तों का हाथ था, जो उनके सामने से चेहरों पर और पीछे से उनकी पीठों पर मारकर उनको हलाक कर रहे थे, और साथ ही आख़िरत में जहन्नम के अ़ज़ाब की ख़बर सुना रहे थे।

और जिन हज़रात ने आयत के अलफ़ाज़ के आ़म होने की बिना पर इसका मज़मून आ़म रखा है उनके मुताबिक़ आयत के मायने यह हैं कि जब कोई काफ़िर मरता है तो मौत का फ़रिश्ता उसकी रूह क़ब्ज़ करने के वक़्त उसके चेहरे और पुश्त पर मारता है। कुछ रिवायतों में

है कि आग के कोड़े और लोहे के गुर्ज़ उनके हाथ में होते हैं जिनसे वे मरने वाले काफ़िर को मारते हैं। मगर चूँकि इस अ़ज़ाब का ताल्लुक़ इस जहान से नहीं बल्कि क़ब्र के जहान से है जिसको बर्ज़ख़ कहा जाता है इसलिये यह अ़ज़ाब आ़म तौर पर आँखों से नहीं देखा जाता।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह ख़िताब किया गया कि अगर आप देखते तो बड़ा सबक़ लेने वाला मन्ज़र देखते। इससे मालूम हुआ कि मौत के बाद बर्ज़ख़ के जहान में काफ़िरों को अ़ज़ाब होता है मगर उसका ताल्लुक़ ग़ैब की दुनिया से है इसलिये आ़म तौर पर देखा नहीं जाता। क़ब्र के अ़ज़ाब का ज़िक्र क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों में भी आया है और हदीस की रिवायतें तो इस मामले में बेशुमार हैं।

दूसरी आयत में काफ़िरों को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि यह दुनिया व आख़िरत का अ़ज़ाब तुम्हारे अपने हाथों की कमाई है, चूँकि आ़म कारोबार हाथों ही से वजूद में आते हैं इसलिये हाथों का ज़िक्र कर दिया गया। मतलब यह है कि यह अ़ज़ाब तुम्हारे अपने आमाल का नतीजा है। और यह कि अल्लाह तआ़ला अपने बन्दों पर ज़ुल्म करने वाले नहीं कि बिना वजह किसी को अ़ज़ाब में मुब्तला कर दें।

तीसरी आयत में बतलाया गया कि इन मुजरिमों पर अल्लाह तआ़ला का यह अ़ज़ाब कोई अनोखी चीज़ नहीं बल्कि अल्लाह की आ़दत और क़ानून यही है कि अल्लाह तआ़ला अपने बन्दों की हिदायत के लिये उनको अ़क्ल व समझ देते हैं, आस-पास में उनके लिये बेशुमार ऐसी चीज़ें मौजूद होती हैं जिनमें ग़ौर व फ़िक्र करने से वे अल्लाह तआ़ला की अ़ज़ीम क़ुदरत व बड़ाई को पहचानें और आ़जिज़ मख़्लूक़ को उसका शरीक न बनायें, फिर और ज़्यादा तंबीह के लिये अपनी किताबें और रसूल भेजते हैं। अल्लाह के रसूल उनके समझाने-बुझाने में कोई कमी नहीं छोड़ते, वे उनको अल्लाह तआ़ला की ज़बरदस्त क़ुव्वत की निशानियाँ भी मोजिज़ों की शक्ल में दिखलाते हैं। जब कोई फ़र्द (व्यक्ति) या क़ौम इन सब चीज़ों से बिल्कुल आँखें बन्द कर ले और ख़ुदाई चेतावनियों में से किसी पर कान न धरे तो फिर अल्लाह तआ़ला की आ़दत ऐसे लोगों के बारे में यही है कि दुनिया में भी उन पर अ़ज़ाब आता है और आख़िरत के हमेशा के अ़ज़ाब में भी गिरफ़्तार होते हैं। इरशाद फ़रमायाः

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ.

'दअूब' के मायने आ़दत के हैं। मतलब यह है कि जैसे फ़िरऔ़न की आल और उनसे पहले सरकश व नाफ़रमान काफ़िरों के बारे में अल्लाह तआ़ला की आ़दत (क़ानून) दुनिया को मालूम हो चुकी है कि फ़िरऔ़न को उसके सारे ताम-झाम और लाव-लश्कर समेत दरिया में ग़र्क़ कर दिया और उनसे पहले आ़द व समूद की क़ौमों को विभिन्न क़िस्म के अ़ज़ाबों से हलाक कर दिया।

كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ.

उन लोगों ने अल्लाह तआ़ला की आयतों और निशानियों को झुठलाया तो अल्लाह तआ़ला

ने उनको अपने अ़ज़ाब में पकड़ लियाः

اِنَّ اللّٰهَ قَوِیٌّ شَدِیْدُ الْعِقَابِo

वजह यह है कि अल्लाह तआ़ला ताक़तवर है, कोई क़ुव्वत व बहादुरी वाला अपनी क़ुव्वत के बल पर उसके अ़ज़ाब से नहीं छूट सकता। और अल्लाह तआ़ला की सज़ा भी बड़ी सख़्त है।

चौथी आयत में हक़ तआ़ला ने अपने इनाम व अ़ता के क़ायम और बाक़ी रखने का एक नियम बयान फ़रमाया है। इरशाद फ़रमायाः

بِاَنَّ اللّٰهَ لَمْ یَكُ مُغَیِّرًا نِّعْمَةً اَنْعَمَهَا عَلٰی قَوْمٍ حَتّٰی یُغَیِّرُوْا مَا بِاَنْفُسِهِمْ

यानी अल्लाह तआ़ला जो नेमत किसी क़ौम को अ़ता फ़रमाते हैं उसको उस वक़्त तक बदलते नहीं जब तक वे लोग ख़ुद अपने हालात और आमाल को न बदल दें।

यहाँ पहली बात क़ाबिले ग़ौर यह है कि हक़ तआ़ला ने नेमत के अ़ता करने लिये कोई ज़ाब्ता (नियम व क़ानून) नहीं बयान फ़रमाया, न इसके लिये कोई क़ैद व शर्त लगाई, न इसको किसी के अच्छे अ़मल पर निर्भर रखा, क्योंकि अगर ऐसा होता तो सबसे पहली नेमत जो ख़ुद हमारा वजूद है और इसमें हक़ तआ़ला की क़ुदरत की अ़जीब कारीगरी से हज़ारों हैरत-अंगेज़ नेमतें अमानत रखी गयी हैं, ये नेमतें ज़ाहिर है कि उस वक़्त अ़ता हुईं जबकि न हम थे न हमारा कोई अ़मल थाः

मा नबूदेम व तक़ाज़ा-ए-मा न बूद
लुत्फ़े तू नागुफ़्ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तक़ाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तक़ाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे क़ुबूल फ़रमाता है। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

अगर अल्लाह तआ़ला के इनामात व एहसानात बन्दों के नेक आमाल के मुन्तज़िर रहा करते तो हमारा वजूद ही क़ायम न होता।

हक़ तआ़ला की नेमत व रहमत तो उसके रब्बुल-आ़लमीन और रहमान व रहीम होने के नतीजे में ख़ुद-ब-ख़ुद है। हाँ उस नेमत व रहमत के क़ायम और बाक़ी रहने का एक ज़ाब्ता इस आयत में यह बयान किया गया कि जिस क़ौम को अल्लाह तआ़ला कोई नेमत देते हैं उससे उस वक़्त तक वापस नहीं लेते जब तक वह अपने हालात और आमाल को बदलकर ख़ुद ही अल्लाह के अ़ज़ाब को दावत न दे।

हालात के बदलने से मुराद यह है कि अच्छे आमाल और हालात को बदलकर बुरे आमाल और बुरे हालात इख़्तियार कर ले, या यह कि अल्लाह की नेमतें उसे मिलने के वक़्त जिन बुरे आमाल और गुनाहों में मुब्तला था नेमतों के मिलने के बाद उनसे ज़्यादा बुरे आमाल में मुब्तला हो जाये।

इस तफ़सील से यह भी मालूम हो गया कि जिन क़ौमों का ज़िक्र पिछली आयतों में आया

है यानी क़ुरैश के काफ़िर और आले फ़िरऔन, उनका ताल्लुक़ इस आयत से इस बिना पर है कि ये लोग अगरचे अल्लाह तआ़ला की नेमतें मिलने के वक़्त भी कुछ अच्छे हालात में नहीं थे सब के सब मुश्रिक और काफ़िर ही थे, लेकिन इनामात के बाद ये लोग अपने बुरे आमाल और शरारतों में पहले से ज़्यादा तेज़ हो गये।

आले फ़िरऔन ने बनी इस्राईल पर तरह-तरह के ज़ुल्म व सितम करने शुरू कर दिये, फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के मुक़ाबले और मुख़ालफ़त पर आमादा हो गये जो उनके पिछले अपराधों में एक सख़्त इज़ाफ़ा था, जिसके ज़रिये उन्होंने अपने हालात और ज़्यादा बुराई की तरफ़ बदल डाले तो अल्लाह तआ़ला ने भी अपनी नेमत को मुसीबत व अ़ज़ाब से बदल दिया। इसी तरह मक्का के क़ुरैश अगरचे मुश्रिक और बद-अ़मल थे लेकिन उसके साथ उनमें कुछ अच्छे आमाल जैसे सिला-रहमी, मेहमान-नवाज़ी, हाजियों की ख़िदमत, बैतुल्लाह का सम्मान वग़ैरह भी थे, अल्लाह तआ़ला ने उन पर दीन व दुनिया की नेमतों के दरवाज़े खोल दिये। दुनिया में उनकी तिजारतों को तरक़्क़ी दी और ऐसे मुल्क में जहाँ किसी का तिजारती क़ाफ़िला सलामती से न गुज़र सकता था उन लोगों के तिजारती क़ाफ़िले मुल्के शाम व यमन में जाते और कामयाब वापस आते थे, जिसका ज़िक्र क़ुरआने करीम ने सूरः 'लिईलाफ़ि' में "रिह्लतश्शिता-इ वस्सैफ़ि" के उनवान से किया है।

और दीन के एतिबार से वह अ़ज़ीम नेमत उनको अ़ता हुई जो पिछली किसी क़ौम को नहीं मिली थी, कि तमाम नबियों के सरदार ख़ातमुन्नबिय्यीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनमें भेजे गये, अल्लाह तआ़ला की आख़िरी और जामे किताब क़ुरआन उनमें भेजी गयी।

मगर उन लोगों ने अल्लाह तआ़ला के इन इनामों की शुक्रगुज़ारी और क़द्र करने और इनके ज़रिये अपने हालात को सही करने के बजाय पहले से भी ज़्यादा गन्दे कर दिये कि सिला-रहमी को छोड़कर मुसलमान हो जाने वाले भाई भतीजों पर बर्बरता पूर्ण ज़ुल्म व सितम करने लगे। मेहमान-नवाज़ी के बजाय उन मुसलमानों पर दाना-पानी बन्द करने के अ़हद-नामे लिखे गये। हाजियों की ख़िदमत के बजाय मुसलमानों को हरम में दाख़िल होने से रोकने लगे। ये वो हालात थे जिनको क़ुरैश के काफ़िरों ने बदला। इसके नतीजे में अल्लाह तआ़ला ने अपनी नेमतों को मुसीबतों और अ़ज़ाब की सूरत में तब्दील कर दिया कि वह दुनिया में भी ज़लील व रुस्वा हुए और जो ज़ात रहमतुल्-लिल्आ़लमीन बनकर आई थी उसी के ज़रिये उन्होंने अपनी मौत व बरबादी को दावत दे दी।

और तफ़सीरे मज़हरी में तारीख़ की विश्वसनीय किताबों के हवाले से लिखा है कि किलाब बिन मुर्रा जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नसब में तीसरे दादा के दादा हैं, यह शुरू से इब्राहीम व इस्माईल अ़लैहिमस्सलाम के दीन के पाबन्द और उस पर क़ायम थे, और नस्ल दर नस्ल उस दीन का नेतृत्व और सरदारी इनके हाथ में रही। क़ुसई बिन किलाब के ज़माने में इन लोगों में बुतों की पूजा का आग़ाज़ हुआ। इनसे पहले कअ़ब बिन लुवी इनके दीनी पेशवा थे, जुमे के दिन जिसको उनकी भाषा में **अ़रूबा** कहा जाता था, सब लोगों को जमा

करके संबोधित किया करते और बतलाया करते थे कि उनकी औलाद में ख़ातमुल-अम्बिया (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) पैदा होंगे। उनकी पैरवी सब पर लाज़िम होगी। जो उन पर ईमान न लायेगा उसका कोई अ़मल क़ाबिले क़ुबूल न होगा। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में उनके अ़रबी अश्आ़र जाहिलीयत के शायरों में मशहूर व परिचित हैं। और क़ुसई बिन किलाब तमाम हाजियों के लिये खाने और पानी का इन्तिज़ाम करते थे, यहाँ तक कि ये चीज़ें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ानदान में आपके मुबारक ज़माने तक क़ायम रहीं। इसी तारीख़ी वज़ाहत से यह भी कहा जा सकता है कि क़ुरैश के हालात के बदलने से यह मुराद हो कि इब्राहीमी दीन को छोड़कर बुत-परस्ती (मूर्ति-पूजा) इख़्तियार कर ली।

बहरहाल आयत के मज़मून से यह मालूम हुआ कि कई बार हक़ तआ़ला अपनी नेमत कुछ ऐसे लोगों को भी अ़ता फ़रमाते हैं जो अपने अ़मल से उसके पात्र और हक़दार नहीं होते लेकिन नेमत देने के बाद अगर वे अपने आमाल का रुख़ सुधार व दुरुस्ती की तरफ़ फेरने के बजाय बुरे आमाल में और ज़्यादती करने लगें तो फिर यह नेमत उनसे छीन ली जाती है और वे अल्लाह के अ़ज़ाब के हक़दार हो जाते हैं।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ۝

यानी अल्लाह तआ़ला उनकी हर गुफ़्तगू को सुनने वाले और उनके तमाम आमाल व कामों को जानने वाले हैं। इसमें किसी ग़लती या ग़लत-फ़हमी की संभावना नहीं।

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۚ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِ رَبِّهِمْ
فَاَهْلَكْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ ۚ وَكُلٌّ كَانُوْا ظٰلِمِيْنَ ۝ اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ
اللّٰهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝ اَلَّذِيْنَ عٰهَدْتَّ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَهُمْ فِيْ
كُلِّ مَرَّةٍ وَّهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ ۝ فَاِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِمْ مَّنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُوْنَ ۝
وَاِمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً فَانْۢبِذْ اِلَيْهِمْ عَلٰى سَوَآءٍ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَآئِنِيْنَ ۝ ع

कदअ्बि आलि फ़िर्औ-न वल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् कज़्ज़बू बिआयाति रब्बिहिम् फ़-अह्लक्नाहुम् बिज़ुनूबिहिम् व अग़्रक़्ना आ-ल फ़िर्औ-न व कुल्लुन् कानू ज़ालिमीन (54) इन्-न शर्रद्दवाब्बि	जैसे दस्तूर फ़िरऔन वालों का और जो उनसे पहले थे, कि उन्होंने झुठलाईं बातें अपने रब की, फिर हलाक कर दिया हमने उनको उनके गुनाहों पर और डुबो दिया हमने फ़िरऔन वालों को, और सारे ज़ालिम थे। (54) बदतर सब जानदारों में

अ़िन्दल्लाहिल्लज़ी-न क-फ़रू फ़हुम् ला युअ्मिनून (55) अल्लज़ी-न आहत्-त मिन्हुम् सुम्-म यन्क़ुज़ू-न अ़ह्-दहुम् फ़ी कुल्लि मर्रतिंव्-व हुम् ला यत्तक़ून (56) फ़-इम्मा तस्क़फ़न्नहुम् फ़िल्हर्बि फ़-शर्रिद् बिहिम् मन् ख़ल्फ़हुम् लअ़ल्लहुम् यज़्ज़क्करून (57) व इम्मा तख़ाफ़न्-न मिन् क़ौमिन् ख़ियानतन् फ़म्बिज़् इलैहिम् अ़ला सवाइन्, इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल्-ख़ाइनीन (58) ✿	अल्लाह के यहाँ वो हैं जो मुन्किर हुए फिर वे नहीं ईमान लाते। (55) जिनसे तूने समझौता किया है उनमें से फिर वे तोड़ते हैं अपना अ़हद हर बार, और वे डर नहीं रखते। (56) सो अगर कभी तू पाये उनको लड़ाई में तो उनको ऐसी सज़ा दे कि देखकर भाग जायें उनके पिछले ताकि उनको इब्रत हो। (57) और अगर तुझको डर हो किसी क़ौम से दग़ा का तो फेंक दे उनका अ़हद उनकी तरफ़ ऐसी तरह पर कि हो जाओ तुम और वे बराबर, बेशक अल्लाह को पसन्द नहीं आते दग़ाबाज़। (58) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(पस इस बदलने वाले मामले में भी) उनकी हालत फ़िरऔन वालों और उनसे पहले वालों के जैसी हालत है कि उन्होंने अपने रब की आयतों को झुठलाया, इस पर हमने उनको उनके (उन) गुनाहों के सबब हलाक कर दिया और (उनमें) फ़िरऔन वालों को ख़ास तौर पर हलाक किया कि (उनको) ग़र्क़ कर दिया, और वे (फ़िरऔन वाले और पहले वाले) सब ज़ालिम थे। बिला शुब्हा मख़्लूक़ में सबसे बुरे अल्लाह तआ़ला के नज़दीक ये काफ़िर लोग हैं (जब ये अल्लाह के इल्म में ऐसे हैं) तो ये ईमान न लाएँगे। जिनकी यह कैफ़ियत है कि आप उनसे (कई बार) अ़हद ले चुके हैं (मगर) फिर (भी) वे हर बार अपना अ़हद तोड़ डालते हैं, और वे (अ़हद तोड़ने से) डरते नहीं। सो अगर आप लड़ाई में इन लोगों पर क़ाबू पाएँ (और ये आपके हाथ आयें) तो इन (पर हमला करके उस) के ज़रिये से और लोगों को जो कि उनके अ़लावा हैं मुन्तशिर 'यानी तितर-बितर'' कर दीजिये, ताकि वे लोग समझ जाएँ (कि अ़हद को तोड़ने का यह वबाल हुआ, हम ऐसा न करें। यह हुक्म तो उस वक़्त है कि जब उन लोगों ने अ़हद खुलेआ़म तोड़ दिया हो) और अगर (अभी तक खुले तौर पर तो नहीं तोड़ा लेकिन) आपको किसी क़ौम से ख़ियानत (यानी अ़हद तोड़ने) की शंका हो तो (इजाज़त है कि) आप (वह अ़हद) उनको इस तरह वापस कर दीजिये (यानी इस तरह उस अ़हद के बाक़ी न रहने की इत्तिला कर दीजिये) कि (आप और वे उस इत्तिला में) बराबर हो जाएँ, (और बिना ऐसी साफ़ इत्तिला के लड़ना ख़ियानत है और)

बेशक अल्लाह तआला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत का मज़मून बल्कि अलफ़ाज़ तक़रीबन वही हैं जो एक आयत पहले आ चुके हैं:

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ، كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ.

मगर बयान का मक़सद दोनों में अलग-अलग है। पहली आयत में इसका बयान करना मक़सूद था कि उन लोगों का कुफ़्र उनके अ़ज़ाब का सबब बना और इस आयत में मक़सद यह है कि अल्लाह तआ़ला का आ़म क़ानून यह है कि जब किसी क़ौम पर अल्लाह तआ़ला की नेमतें मुतवज्जह हों और वह उनकी क़द्र न पहचाने और अल्लाह के सामने न झुके तो उसकी नेमतें अ़ज़ाब और मुसीबतों से बदल दी जाती हैं। फ़िरऔ़न की क़ौम और उनसे पहली क़ौमों ने भी जब अल्लाह तआ़ला की नेमतों की क़द्र न की तो उनसे नेमतें छीन ली गयीं और नेमतों के बजाय अ़ज़ाब में पकड़ लिये गये। कुछ अलफ़ाज़ में भी कहीं-कहीं फ़र्क़ करके ख़ास-ख़ास इशारे फ़रमाये गये हैं। मसलन पहली आयत में 'क-फ़रू बिआयातिल्लाहि' के अलफ़ाज़ थे और यहाँ 'बिआयाति रब्बिहिम' का लफ़्ज़ है। लफ़्ज़ अल्लाह के बजाय सिफ़त रब ज़िक्र करके इसकी तरफ़ इशारा कर दिया कि ये लोग बड़े ही ज़ालिम हक़ न पहचानने वाले थे कि जो ज़ात उनकी रब (पालने वाली) है इनके वजूद की शुरूआ़त से लेकर मौजूदा हालात तक उसकी नेमतों ही में इनकी परवरिश हुई है, उसी की निशानियों को झुठलाने लगे।

और पहली आयत 'फ़-अ-ख़-ज़हुमुल्लाहु बिज़ुनूबिहिम' फ़रमाया था, यहाँ 'फ़-अह्लक्नाहुम बिज़ुनूबिहिम' इरशाद फ़रमाया। इसमें उस संक्षिप्तता की तफ़सील व ख़ुलासा हो गया, क्योंकि पहली आयत में उनका अ़ज़ाब में पकड़ा जाना ज़िक्र किया गया जिसकी विभिन्न और अनेक सूरतें हो सकती हैं- ज़िन्दा और बाक़ी रहते हुए मुसीबतों में गिरफ़्तार हो जायें या सिरे से उनका वजूद ही ख़त्म कर दिया जाये। इस आयत में "अह्लक्नाहुम" फ़रमाकर स्पष्ट कर दिया कि उन सब क़ौमों की सज़ा सज़ा-ए-मौत थी, हमने उन सब को हलाक कर डाला। हर क़ौम की हलाकत की मुख़्तलिफ़ सूरतें ज़ाहिर हुईं, उनमें से फ़िरऔ़न चूँकि ख़ुदाई का दावेदार था और उसकी क़ौम उसकी तस्दीक़ करती थी इसलिये ख़ुसूसियत के साथ उसका ज़िक्र कर दिया गयाः

وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ.

यानी हमने आले फ़िरऔ़न को ग़र्क़ कर दिया। दूसरी क़ौमों की हलाकत की सूरतें यहाँ बयान नहीं की गयीं, दूसरी आयतों में उसकी भी तफ़सील मौजूद है कि किसी पर ज़लज़ला आया, कोई ज़मीन के अन्दर धंसा दी गयी, किसी की सूरतें बदल दी गयीं, किसी पर हवा का तूफ़ान मुसल्लत हो गया। और आख़िर में मक्का के मुश्रिकों पर ग़ज़्वा-ए-बदर में मुसलमानों के हाथों से अ़ज़ाब आया।

इसके बाद की आयत में उन्हीं काफ़िरों के बारे में इरशाद फ़रमायाः

اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا.

इसमें लफ़्ज़ 'दवाब्ब' दाब्बतुन की जमा (बहुवचन) है जिसके लुग़वी मायने ज़मीन पर चलने वाले के हैं, इसलिये इनसान और जितने जानवर ज़मीन पर चलते हैं सब को यह लफ़्ज़ शामिल है, मगर आ़म मुहावरों में यह लफ़्ज़ ख़ास चौपाये जानवरों के लिये बोला जाता है। उन लोगों का हाल बेशऊर होने में जानवरों से भी ज़्यादा गिरा हुआ था इसलिये इस लफ़्ज़ से ताबीर किया गया। आयत के मायने वाज़ेह हैं कि तमाम जानवरों और इनसानों में सबसे बदतरीन जानवर ये लोग हैं। आख़िर में फ़रमाया 'फ़हुम् ला युअ्मिनून' यानी ये लोग ईमान नहीं लायेंगे। मतलब यह है कि इन लोगों ने अपनी ख़ुदा की दी हुई और फ़ितरी क्षमता व क़ाबलियत को बरबाद कर दिया, चौपाये जानवरों की तरह खाने पीने सोने जागने को ज़िन्दगी का मक़सद बना लिया, इसलिये इनकी ईमान तक पहुँच नहीं हो सकती।

हज़रत सईद बिन जुबैर रह. ने फ़रमाया कि यह आयत यहूदियों के छह आदमियों के बारे में आई है जिनके मुताल्लिक़ हक़ तआ़ला ने पेशगी ख़बर दे दी कि ये लोग आख़िर तक ईमान नहीं लायेंगे।

साथ ही इस लफ़्ज़ में उन लोगों को अ़ज़ाब से अलग रखना मन्ज़ूर है जो अगरचे इस वक़्त काफ़िरों के साथ लगे हुए मुसलमानों और इस्लाम के ख़िलाफ़ जिद्दोजहद में मशग़ूल हैं मगर आईन्दा किसी वक़्त इस्लाम क़ुबूल करके अपनी पहली ग़लत हरकतों से तौबा कर लेंगे। चुनाँचे ऐसा ही हुआ कि उनमें से बहुत बड़ी जमाअ़त मुसलमान होकर न सिर्फ़ ख़ुद नेक व मुत्तक़ी बन गयी बल्कि दुनिया के लिये सुधारक और तक़वे की दाअ़ी (दावत देने वाली) बनकर खड़ी हुई।

तीसरी आयतः

اَلَّذِيْنَ عٰهَدْتَّ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَهُمْ فِيْ كُلِّ مَرَّةٍ وَّهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ○

यह आयत मदीना के यहूदियों बनू क़ुरैज़ा और बनू नज़ीर के मुताल्लिक़ है। पिछली आयतों में मक्का के मुश्रिकों पर बदर के मैदान में मुसलमानों के हाथों अल्लाह का अ़ज़ाब नाज़िल होने का ज़िक्र और पिछली उम्मतों के काफ़िरों से उनकी मिसाल देने का बयान हुआ था, इस आयत में उस ज़ालिम जमाअ़त का ज़िक्र है जो मदीने में हिजरत करने के बाद मुसलमानों के लिये आस्तीन का साँप (यानी छुपी दुश्मन) बनी, और जो एक तरफ़ मुसलमानों के साथ अमन व सुलह की दावेदार थी। दूसरी तरफ़ मक्का के मुश्रिकों में इस्लाम के ख़िलाफ़ सबसे बड़ा झण्डा वाहक अबू जहल था, इसी तरह मदीना के यहूदियों में इसका झण्डा उठाने वाला कअ़ब बिन अशरफ़ था।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब हिजरत के बाद मदीना तय्यिबा में तशरीफ़ लाये और यहाँ रहने लगे। मुसलमानों के बढ़ते हुए ग़लबे व ताक़त को देखकर ये लोग मरऊब तो हुए मगर दिल में इस्लाम की दुश्मनी की आग हमेशा सुलगती रहती थी।

इस्लामी सियासत का तक़ाज़ा था कि जहाँ तक मुम्किन हो मदीना के यहूदियों को किसी न किसी समझौते के तहत साथ लगाया जाये, ताकि वे मक्का वालों को मदद न पहुँचायें। यहूदी भी अपने मरऊब होने की बिना पर इसी के इच्छुक थे।

इस्लामी सियासत का पहला क़दम इस्लामी क़ौमियत

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा पहुँचकर इस्लामी सियासत की सबसे पहली बुनियाद इसको बनाया कि मुहाजिरीन व अन्सार के वतनी और क़ौमी भेदभावों को ख़त्म करके एक नई क़ौमियत इस्लाम के नाम पर क़ायम फ़रमाई। मुहाजिरीन व अन्सार के विभिन्न क़बीलों को आपस में भाई-भाई बना दिया। और आपके ज़रिये अल्लाह तआ़ला ने अन्सार के आपसी झगड़े और विवाद जो सदियों से चले आ रहे थे सब को दूर फ़रमाकर आपस में भी और मुहाजिरीन के साथ भी भाई-भाई बना दिया।

दूसरा क़दम यहूदियों के साथ समझौता

इस सियासत का दूसरा क़दम यह था कि मुक़ाबले में दो थे एक मक्का के मुश्रिक लोग जिनके तकलीफ़ पहुँचाने ने मक्का छोड़ने पर मजबूर कर दिया था। दूसरे मदीना के यहूदी जो अब मुसलमानों के पड़ोसी बन गये थे, इनमें से यहूदियों के साथ एक समझौता किया गया जिसका अ़हद-नामा तफ़सीली लिखा गया। इस समझौते की पाबन्दी मदीना के आस-पास के सब यहूदियों पर और इस तरफ़ तमाम मुहाजिरीन व अन्सार पर लागू थी। समझौते का पूरा मतन (असल इबारत) किताब 'अलबिदाया वन्निहाया' इब्ने कसीर में और सीरत इब्ने हिशाम वग़ैरह में मुफ़स्सल मौजूद है। इसका सब से अहम हिस्सा यह था कि आपसी झगड़ों के वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़ैसला सब के लिये माननीय होगा। दूसरा हिस्सा यह था कि मदीना के यहूदी मुसलमानों के ख़िलाफ़ किसी दुश्मन को ज़ाहिरी या अन्दरूनी तौर पर कोई इमदाद नहीं देंगे। लेकिन उन लोगों ने ग़ज़्वा-ए-बदर के वक़्त अ़हद को तोड़ा और मक्का के मुश्रिकों को हथियारों और जंग के सामान से मदद पहुँचाई। मगर जब ग़ज़्वा-ए-बदर का अन्जाम मुसलमानों की खुली फ़तह और काफ़िरों की बड़ी शिकस्त की सूरत में सामने आया तो फिर उन लोगों पर रौब छा गया और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने हाज़िर होकर अ़र्ज़ किया कि इस मर्तबा हमसे ग़लती हो गयी, इसको माफ़ फ़रमा दें, आईन्दा अ़हद व समझौता नहीं तोड़ेंगे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस्लामी बुर्दबारी व करम जो आपकी आ़दत व मिज़ाज था उसकी बिना पर दोबारा समझौते का नवीकरण फ़रमा दिया, मगर ये लोग अपनी शरारत से मजबूर थे, ग़ज़्वा-ए-उहुद में मुसलमानों की शुरूआ़ती शिकस्त और नुक़सान का इल्म होकर इनके हौसले बढ़ गये और इनका सरदार कअ़ब बिन अशरफ़ ख़ुद सफ़र करके मक्का पहुँचा और मक्का के मुश्रिकों को इस पर तैयार किया गया कि अब वे पूरी तैयारी के साथ

मुसलमानों पर हमला करें और मदीना के यहूदी उनके साथ होंगे।

यह दूसरी बार अ़हद तोड़ना था जो उन लोगों ने इस्लाम के ख़िलाफ़ किया। उक्त आयत में इस बार-बार के अ़हद तोड़ने का ज़िक्र फ़रमाकर उन लोगों की शरारत बयान की गयी है कि ये वे लोग हैं जिनसे आपने समझौता कर लिया मगर ये हर बार अपने अ़हद को तोड़ते रहे। आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ○

यानी ये लोग डरते नहीं। इसका यह मतलब भी हो सकता है कि ये बदनसीब लोग चूँकि दुनिया की हवस में मस्त व बेहोश हैं, आख़िरत की फ़िक्र ही नहीं, इसलिये आख़िरत के अ़ज़ाब से नहीं डरते। और यह मतलब भी हो सकता है कि ऐसे बदकिरदार अ़हद को तोड़ने वाले लोगों का जो बुरा अन्जाम इस दुनिया में हुआ करता है ये लोग अपनी ग़फ़लत व नादानी की वजह से उससे नहीं डरते।

फिर सारी दुनिया ने आँखों से देख लिया कि उन लोगों ने अपनी इस बद-किरदारी (बुरे आमाल और ग़लत चलन) की सज़ा चखी। अबू जहल की तरह कअ़ब बिन अशरफ़ मारा गया, और मदीना के यहूदी वतन से निकाल दिये गये।

चौथी आयत में हक़ तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उन बद-अ़हदों (अ़हद का उल्लंघन करने वालों) के बारे में एक हिदायत नामा दिया जिसके अलफ़ाज़ ये हैं:

فَإِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِى الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِمْ مَّنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُوْنَ○

इसमें लफ़्ज़ 'तस्क़फ़न्नहुम' के मायने हैं उन पर क़ाबू पाने के, और 'शर्रिद' तशरीद के मस्दर से बना है जिसके असली मायने भगा देने और तितर-बितर कर देने के हैं। आयत के मायने यह हैं कि अगर आप किसी जंग में उन पर क़ाबू पा लें तो उनको ऐसी सख़्त दर्दनाक सज़ा दें जो दूसरों के लिये एक सबक़ हो। उनके पीछे जो लोग इस्लाम की दुश्मनी में लगे हैं वे यह समझ लें कि अब ख़ैर इसी में है कि यहाँ से भागकर अपनी जान बचायें। मुराद इससे यह है कि उनको ऐसी सज़ा दी जाये जिसको देखकर मक्का के मुश्रिक लोग और दूसरे दुश्मन क़बीले भी मुतास्सिर हों और आईन्दा उनको मुसलमानों के मुक़ाबले में आने की जुर्रत न रहे।

आयत के आख़िर में 'लअ़ल्लहुम यत्तक़ून' फ़रमाकर रब्बुल-आ़लमीन की आ़म रहमत की तरफ़ इशारा कर दिया कि इस दर्दनाक सज़ा का असली मक़सद भी कोई बदला लेना या अपने गुस्से को ठण्डा करना नहीं बल्कि उन्हीं की यह मस्लेहत और बेहतरी है कि शायद यह सूरतेहाल देखकर ये लोग कुछ होश में आ जायें और अपने किये पर पछताकर अपना सुधार कर लें।

सुलह के समझौते को ख़त्म करने की सूरत

पाँचवीं आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जंग व सुलह के क़ानून की एक अहम धारा बतलाई गयी है जिसमें समझौते की पाबन्दी की ख़ास अहमियत के साथ यह

भी बतलाया गया है कि अगर किसी समझौता करने वाले दूसरे पक्ष की तरफ़ से ख़ियानत यानी अ़हद व समझौता तोड़ने का ख़तरा पैदा हो जाये तो यह ज़रूरी नहीं कि हम समझौते की पाबन्दी को बदस्तूर बाक़ी रखें, लेकिन यह भी जायज़ नहीं कि समझौते को स्पष्ट रूप से ख़त्म कर देने से पहले हम उनके ख़िलाफ़ कोई क़दम उठायें, बल्कि सही सूरत यह है कि उनको इत्मीनान व फ़ुर्सत की हालत में इससे आगाह कर दिया जाये कि तुम्हारी बद-नीयती या उल्लंघन हम पर खुल चुका है, या यह कि तुम्हारे मामलात हमें संदिग्ध नज़र आते हैं इसलिये हम आईन्दा इस समझौते के पाबन्द नहीं रहेंगे, तुमको भी हर तरह का इख़्तियार है कि हमारे ख़िलाफ़ जो कार्रवाई चाहो करो। आयत के अलफ़ाज़ ये हैं:

وَاِمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً فَانْبِذْ اِلَيْهِمْ عَلٰى سَوَآءٍ. اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَآئِنِيْنَ○

यानी अगर आपको किसी समझौता करने वाली क़ौम से ख़ियानत (बद-दियानती) और अ़हद तोड़ने का अन्देशा पैदा हो जाये तो उनका अ़हद उनकी तरफ़ ऐसी सूरत से वापस कर दें कि आप और वे बराबर हो जायें। क्योंकि अल्लाह तआ़ला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते।

मतलब यह है कि जिस क़ौम के साथ सुलह का समझौता हो चुका है उसके मुक़ाबले में कोई जंगी पहल करना ख़ियानत में दाख़िल है और अल्लाह तआ़ला ख़ियानत करने वालों को पसन्द नहीं करते। अगरचे यह ख़ियानत दुश्मन काफ़िरों ही के हक़ में की जाये, वह भी जायज़ नहीं, अलबत्ता अगर दूसरी तरफ़ से अ़हद तोड़ने और समझौते के ख़िलाफ़ करने का ख़तरा पैदा हो जाये तो ऐसा किया जा सकता है कि खुले तौर पर उनको ऐलान के साथ आगाह कर दें कि हम आईन्दा समझौते के पाबन्द नहीं रहेंगे। मगर यह ऐलान ऐसी तरह हो कि मुसलमान और दूसरा फ़रीक़ इसमें बराबर हों। यानी ऐसी सूरत न की जाये कि इस ऐलान व तंबीह से पहले उनके मुक़ाबले की तैयारी कर ली जाये और वे ख़ाली ज़ेहन होने की बिना पर तैयारी न कर सकें, बल्कि जो कुछ तैयारी करनी है वह इस ऐलान व तंबीह के बाद करें।

यह है इस्लाम का अ़दल व इन्साफ़ कि ख़ियानत करने वाले दुश्मनों के भी हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त की जाती है और मुसलमानों को उनके मुक़ाबले में इसका पाबन्द किया जाता है कि समझौता ख़त्म करने से पहले कोई तैयारी भी उनके ख़िलाफ़ न करें। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

अ़हद पूरा करने का एक अ़जीब वाक़िआ़

अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इमाम अहमद बिन हंबल रह. ने सलीम बिन आ़मिर की रिवायत से नक़ल किया है कि हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु का एक क़ौम के साथ एक समय-सीमा तक के लिये जंग बन्दी का समझौता था। हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इरादा फ़रमाया कि इस समझौते के दिनों में अपना लश्कर और जंग का सामान उस क़ौम के क़रीब पहुँचा दें ताकि समझौते की मियाद ख़त्म होते ही वे दुश्मन पर टूट पड़ें। मगर ऐन उस

वक़्त जब हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु का लश्कर उस तरफ़ रवाना हो रहा था यह देखा गया कि एक बड़ी उम्र के आदमी घोड़े पर सवार बड़े ज़ोर से यह नारा लगा रहे हैं:

اَللّٰهُ اَكْبَرُ اَللّٰهُ اَكْبَرُ وَفَاءٌ لَا غَدْرًا.

यानी तकबीर के नारे के साथ यह कहा कि हमको समझौता पूरा करना चाहिये उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी न करनी चाहिये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि जिस क़ौम से कोई सुलह या जंग-बन्दी का समझौता हो जाये तो चाहिये कि उनके ख़िलाफ़ न कोई गिरह खोलें और न बाँधें। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु को इसकी ख़बर की गयी। देखा तो यह कहने वाले बुज़ुर्ग हज़रत अमर बिन अंबसा रज़ियल्लाहु अन्हु सहाबी थे। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़ौरन अपनी फ़ौज को वापसी का हुक्म दे दिया ताकि जंग-बन्दी की मियाद में लश्कर चढ़ाने का क़दम उठाकर ख़ियानत में दाख़िल न हो जायें। (इब्ने कसीर)

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَبَقُوْا ۚ اِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُوْنَ ۞
وَاَعِدُّوْا لَهُمْ مَّا اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ قُوَّةٍ وَّمِنْ رِّبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُوْنَ بِهٖ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ وَ
اٰخَرِيْنَ مِنْ دُوْنِهِمْ ۚ لَا تَعْلَمُوْنَهُمْ ۚ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ ۚ وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ شَيْءٍ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُوْنَ ۞ وَاِنْ جَنَحُوْا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ۚ اِنَّهٗ هُوَ
السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۞ وَاِنْ يُّرِيْدُوْٓا اَنْ يَّخْدَعُوْكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰهُ ۚ هُوَ الَّذِيْٓ اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ وَ
بِالْمُؤْمِنِيْنَ ۞

व ला यह्स-बन्नल्लज़ी-न क-फ़रू स-बक़ू, इन्नहुम् ला युअ्जिज़ून (59) व अअिद्दू लहुम् मस्ततअ्तुम् मिन् क़ुव्वतिंव्-व मिर्रिबातिल्ख़ैलि तुर्हिबू-न बिही अदुव्वल्लाहि व अ़दुव्वकुम् व आख़री-न मिन् दूनिहिम् ला तअ्लमूनहुम् अल्लाहु यअ्लमुहुम्, व मा तुन्फ़िक़ू मिन् शैइन् फ़ी सबीलिल्लाहि युवफ़्-फ़	और यह न समझें काफ़िर लोग कि वे भाग निकले, वे हरगिज़ थका न सकेंगे हमको। (59) और तैयार करो उनकी लड़ाई के वास्ते जो कुछ जमा कर सको क़ुव्वत से और पले हुए घोड़ों से कि उससे धाक पड़े अल्लाह के दुश्मनों पर और तुम्हारे दुश्मनों पर और दूसरों पर उनके अलावा, जिनको तुम नहीं जानते, अल्लाह उनको जानता है, और जो कुछ तुम ख़र्च करोगे अल्लाह की राह में वह पूरा मिलेगा तुमको, और तुम्हारा हक़ न

इलैकुम् व अन्तुम् ला तुज़्लमून (60) व इन् ज-नहू लिस्सल्मि फज्नह् लहा व तवक्कल् अ़लल्लाहि, इन्नहू हुवस्समीअ़ुल्-अ़लीम (61) व इंय्युरीदू अंय्यख़्दअ़ू-क फ-इन्-न हस्ब-कल्लाहु हुवल्लज़ी अय्य-द-क बिनस्रिही व बिल्मुअ्मिनीन (62)	रह जायेगा। (60) और अगर वे झुकें सुलह की तरफ़ तो तू भी झुक उसी तरफ़ और भरोसा कर अल्लाह पर, बेशक वही है सुनने वाला जानने वाला। (61) और अगर वे चाहें कि तुझको दग़ा दें तो तुझको काफ़ी है अल्लाह, उसी ने तुझको ज़ोर दिया अपनी मदद का और मुसलमानों का। (62)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और काफ़िर लोग अपने को यह ख़्याल न करें कि वे बच गये, यक़ीनन वे लोग (ख़ुदा तआ़ला को) आ़जिज़ नहीं कर सकते (कि उसके हाथ न आयें। या तो दुनिया ही में सज़ा में मुब्तला कर देगा वरना आख़िरत में तो यक़ीनी है) और उन (काफ़िरों) से (मुक़ाबला करने) के लिये जिस क़द्र तुमसे हो सके क़ुव्वत (यानी हथियार) से और पले हुए घोड़ों से, सामान दुरुस्त रखो, कि उस (सामान) के ज़रिये से तुम उन पर (अपना) रौब जमाए रखो जो कि (कुफ़्र की वजह से) अल्लाह के दुश्मन हैं और (तुम्हारी फ़िक्र में रहने की वजह से) तुम्हारे दुश्मन हैं, (जिनसे रात-दिन तुमको साबक़ा पड़ता रहता है) और उनके अ़लावा दूसरे (काफ़िरों) पर भी (रौब जमाये रखो) जिनको तुम (यक़ीन के साथ) नहीं जानते (बल्कि) उनको अल्लाह ही जानता है (जैसे फ़ारस और रोम वग़ैरह के काफ़िर, जिनसे उस वक़्त साबक़ा नहीं पड़ा मगर सहाबा का साज़ व सामान और जंग की तैयारी व महारत अपने वक़्त में उनके मुक़ाबले में भी काम आयी और उन पर भी रौब जमा। कुछ तो मुक़ाबले में आकर पराजित हुए कुछ ने जिज़्या देना क़ुबूल किया कि यह भी रौब का असर है) और अल्लाह की राह में (जिसमें जिहाद भी आ गया) जो कुछ भी ख़र्च करोगे (जिसमें वह ख़र्च भी आ गया जो लड़ाई का सामान व हथियार दुरुस्त करने में किया जाये) वह (यानी उसका सवाब) तुमको (आख़िरत में) पूरा-पूरा दे दिया जायेगा, और तुम्हारे लिये (उसमें) कुछ कमी न होगी। और अगर वे (काफ़िर) सुलह की तरफ़ झुकें तो आप (को) भी (इजाज़त है कि अगर उसमें मस्लेहत देखें तो) उस तरफ़ झुक जाईये और (अगर बावजूद मस्लेहत के यह संदेह हो कि यह उनकी चाल न हो तो) तो अल्लाह पर भरोसा रखिये, (ऐसे गुमानों और संदेह से अन्देशा न कीजिये) बिला शुब्हा वह ख़ूब सुनने वाला, ख़ूब जानने वाला है (उनकी बातों और अहवाल को सुनता जानता है, उनका ख़ुद इन्तिज़ाम कर देगा)। और अगर (वास्तव में वह शंका व गुमान सही हो और) वे लोग (सचमुच सुलह से) आपको धोखा देना चाहें तो अल्लाह तआ़ला आप (की मदद और हिफ़ाज़त करने) के लिये काफ़ी हैं, (जैसा कि

इससे पहले भी आपका साथ देते थे चुनाँचे) वह वही है जिसने आपको अपनी (ग़ैबी) इमदाद (फ़रिश्तों) से और (ज़ाहिरी इमदाद यानी) मुसलमानों से क़ुव्वत दी।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में उन काफ़िरों का ज़िक्र है जो ग़ज़वा-ए-बदर में शरीक नहीं थे इसलिये बच गये या शरीक होने के बाद भाग निकले, इस तरह अपनी जान बचा ली। उन लोगों के मुताल्लिक़ इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि ये लोग यूँ न समझें कि हम बच निकले। क्योंकि ग़ज़वा-ए-बदर काफ़िरों के लिये अल्लाह का एक अ़ज़ाब था और उसकी पकड़ से बचना किसी के बस में नहीं। इसलिये फ़रमायाः

إِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُوْنَ۝

यानी ये लोग अपनी चालाकी से अल्लाह को आ़जिज़ नहीं कर सकते, वह जब पकड़ना चाहेंगे ये एक क़दम न सरक सकेंगे। हो सकता है कि दुनिया ही में पकड़ लिये जायें वरना आख़िरत में तो इनकी गिरफ़्तारी ज़ाहिर है।

इस आयत ने इस तरफ़ इशारा कर दिया कि कोई मुजरिम गुनाहगार अगर किसी मुसीबत और तकलीफ़ से निजात पा जाये और फिर भी तौबा न करे बल्कि अपने जुर्म पर डटा रहे तो यह इसकी निशानी न समझो कि वह कामयाब हो गया और हमेशा के लिये छूट गया, बल्कि वह हर वक़्त अल्लाह तआ़ला की गिरफ़्त में है और यह ढील उसके अ़ज़ाब और मुसीबत को और बढ़ा रही है, अगरचे उसको महसूस न हो।

जिहाद के लिये हथियार और जंग के सामान की तैयारी फ़र्ज़ है

दूसरी आयत में इस्लाम की रक्षा और काफ़िरों के मुक़ाबले के लिये तैयारी के अहकाम हैं। इरशाद फ़रमायाः

وَأَعِدُّوْا لَهُمْ مَّا اسْتَطَعْتُمْ

यानी जंग के सामान की तैयारी करो काफ़िरों के लिये जिस क़द्र तुमसे हो सके। इसमें जंग के सामान की तैयारी के साथ ''मस्ततअ़्तुम' की क़ैद लगाकर यह इशारा फ़रमा दिया कि तुम्हारी कामयाबी के लिये यह ज़रूरी नहीं कि तुम्हारे मुक़ाबिल (सामने वाले) के पास जैसा और जितना सामान है तुम भी उतना ही हासिल कर लो, बल्कि इतना काफ़ी है कि अपनी हिम्मत भर जो सामान हो सके वह जमा कर लो तो अल्लाह तआ़ला की नुसरत व इमदाद तुम्हारे साथ होगी।

इसके बाद उस सामान की कुछ तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाईः

مِنْ قُوَّةٍ

यानी मुक़ाबले की क़ुव्वत व ताक़त जमा करो। इसमें तमाम जंगी सामान, हथियार, सवारी वग़ैरह भी दाख़िल हैं और अपने बदन की वर्ज़िश, जंगी तरीक़ों का सीखना भी। क़ुरआने करीम ने इस जगह उस ज़माने के प्रचलित हथियारों का ज़िक्र नहीं फ़रमाया, बल्कि क़ुव्वत का आ़म लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाकर इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि यह क़ुव्वत हर ज़माने और हर मुल्क व मक़ाम के एतिबार से अलग और भिन्न हो सकती है। उस ज़माने के असलेहा तीर, तलवार, नेज़े थे, उसके बाद बन्दूक़ तोप का ज़माना आया। फिर अब बमों और रॉकेटों का वक़्त आ गया। लफ़्ज़ क़ुव्वत इन सब को शामिल है। इसलिये आज के मुसलमानों को अपनी हिम्मत के हिसाब से ऐटमी ताक़त, टैंक और लड़ाकू विमान, समुद्री बेड़े जमा करने चाहियें, क्योंकि यह सब इसी क़ुव्वत के मफ़्हूम (मायने) में दाख़िल हैं। और इसके लिये जिस इल्म व फ़न को सीखने की ज़रूरत पड़े वह सब अगर इस नीयत से हो कि इसके ज़रिये इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा और काफ़िरों के मुक़ाबले का काम लिया जायेगा तो वह भी जिहाद के हुक्म में है।

लफ़्ज़ क़ुव्वत आ़म ज़िक्र करने के बाद एक ख़ास क़ुव्वत का विशेष और स्पष्ट रूप से भी ज़िक्र फ़रमा दियाः

وَمِنْ رِّبَاطِ الْخَيْلِ

लफ़्ज़ 'रिबात' मस्दरी मायने में भी इस्तेमाल होता है और मरबूत के मायने में भी। पहली सूरत में इसके मायने होंगे घोड़े बाँधना या पले हुए घोड़ों को जमा करना। जंग के सामान में से विशेष तौर पर घोड़ों का ज़िक्र इसलिये कर दिया कि उस ज़माने में किसी मुल्क व क़ौम के फ़तह करने में सबसे ज़्यादा प्रभावी व मुफ़ीद घोड़े ही थे। और आज भी बहुत से ऐसे मक़ामात हैं जिनको घोड़ों के बग़ैर फ़तह नहीं किया जा सकता। इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि घोड़ों की पेशानी (माथे) में अल्लाह तआ़ला ने बरकत रख दी है।

सही हदीसों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जंग के सामान जमा करने और उसके इस्तेमाल की मश्क़ करने को बड़ी इबादत और बड़े सवाब का ज़रिया क़रार दिया है। तीर बनाने और चलाने पर बड़े-बड़े अज्र व सवाब का वायदा है।

और चूँकि जिहाद का असल मक़सद इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा और बचाव है और रक्षा व बचाव हर ज़माने और हर क़ौम का अलग होता है इसलिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

جَاهِدُوا الْمُشْرِكِيْنَ بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ وَاَلْسِنَتِكُمْ. (رواه ابوداود والنسائی والدارمی عن انس رضی الله عنه)

इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस तरह रक्षा व बचाव और जिहाद हथियारों से होता है इसी तरह कई बार ज़बान से भी होता है और क़लम भी ज़बान ही के हुक्म में है। इस्लाम और क़ुरआन का बचाव, बेदीनी के हमलों और क़ुरआन व हदीस में किसी तरह की रद्दोबदल का बचाव और रक्षा ज़बान या क़लम से यह भी इस शरई स्पष्ट दलील की बिना पर जिहाद में

दाख़िल है।

उक्त आयत में जंग के सामान की तैयारी का हुक्म देने के बाद उस सामान के जमा करने की मस्लेहत और असल मक़सद भी इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमायाः

تُرْهِبُوْنَ بِهٖ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ.

यानी जंग के सामान और बचाव की चीज़ ज़मा करने का असल मक़सद क़त्ल व क़िताल (जंग और मार-काट) नहीं बल्कि कुफ़्र व शिर्क को पस्त करना और मरऊब व मग़लूब कर देना है, वह कभी सिर्फ़ ज़बान या क़लम से भी हो सकता है और कई बार इसके लिये क़त्ल व क़िताल ज़रूरी होता है। जैसी सूरतेहाल हो उसके मुताबिक़ बचाव और रक्षा करना फ़र्ज़ है।

इसके बाद इरशाद फ़रमाया कि जंग व जिहाद की तैयारी से जिन लोगों को मरऊब करना मक़सूद है उनमें से कुछ को तो मुसलमान जानते हैं और वो वे लोग हैं जिनसे मुसलमानों का मुक़ाबला जारी था, यानी मक्का के काफ़िर और मदीना के यहूदी। और कुछ वे लोग भी हैं जिनको अभी तक मुसलमान नहीं जानते। इससे मुराद पूरी दुनिया के काफ़िर और मुश्रिक हैं जो अभी तक मुसलमानों के मुक़ाबले पर नहीं आये मगर आईन्दा उनसे भी टकराव होने वाला है। क़ुरआने करीम की इस आयत ने बतला दिया कि अगर मुसलमानों ने अपने मौजूदा दुश्मन व मुक़ाबिल के मुक़ाबले की तैयारी कर ली तो इसका रौब सिर्फ़ उन्हीं पर नहीं बल्कि दूर-दूर के काफ़िर किसरा व क़ैसर वग़ैरह पर भी पड़ेगा। चुनाँचे ऐसा ही हुआ और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के दौर में ये सब पराजित व मरऊब हो गये।

जंगी सामान जमा करने और जंग करने में माल की भी ज़रूरत पड़ती है, बल्कि जंग का सामान भी माल ही के ज़रिये तैयार किया जा सकता है, इसलिये आयत के आख़िर में अल्लाह की राह में माल ख़र्च करने की फ़ज़ीलत और उसका बड़ा अज्र इस तरह बयान फ़रमाया है कि इस राह में तुम जो कुछ भी ख़र्च करोगे उसका पूरा-पूरा बदला तुम्हें दे दिया जायेगा। कई बार तो दुनिया में भी माले ग़नीमत की सूरत में यह बदला मिल जाता है वरना आख़िरत का बदला तो मुतैयन (तय) है, और ज़ाहिर है कि वह ज़्यादा क़ाबिले क़द्र है।

तीसरी आयत में सुलह के अहकाम और उससे संबन्धित चीज़ों का बयान है। इरशाद फ़रमायाः

وَاِنْ جَنَحُوْا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا.

लफ़्ज़ 'सल्म' और 'सिल्म' दोनों तरह सुलह के मायने में आता है। आयत के मायने यह हैं कि अगर काफ़िर किसी वक़्त सुलह की तरफ़ झुकें तो आपको भी झुक जाना चाहिये। यहाँ हुक्म देने का कलिमा इख़्तियार देने के लिये इस्तेमाल फ़रमाया है। मुराद यह है कि जब काफ़िर सुलह की तरफ़ माईल हों तो आपको भी इख़्तियार है अगर मुसलमानों की मस्लेहत सुलह में महसूस करें तो सुलह कर सकते हैं। और 'व इन ज-नहू' की क़ैद से मालूम हुआ कि सुलह उसी वक़्त की जा सकती है जब काफ़िरों की तरफ़ से सुलह की इच्छा ज़ाहिर हो। क्योंकि बग़ैर उनकी

इच्छा के अगर मुसलमान ख़ुद ही सुलह की पेशकश करें तो यह उनकी कमज़ोरी समझी जायेगी।

हाँ अगर कोई मौक़ा ऐसा आ पड़े कि मुसलमान किसी मुसीबत व हमले में घिर जायें और अपनी सलामती के लिये कोई सूरत सिवाय सुलह के नज़र न आये तो सुलह में अपनी तरफ़ से पहल करना भी कुछ फ़ुक़हा के क़ौल के मुताबिक़ जायज़ और शरई दलीलों से साबित है।

और चूँकि दुश्मन की जानिब से सुलह की इच्छा होने में यह संदेह रहता है कि वे मुसलमानों को धोखा देकर ग़फ़लत में डाल दें और फिर अचानक से हमला कर दें, इसलिये आयत के आख़िर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी कि:

وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ، إِنَّهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ○

यानी आप अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करें कि वही ख़ूब सुनने वाले जानने वाले हैं। वह उनकी गुफ़्तगू को भी सुनते हैं और उनके दिलों में छुपे हुए इरादों को भी जानते हैं, वह आपकी मदद के लिये काफ़ी हैं। आप ऐसे बेदलील संदेह और शुब्हों व गुमानों पर अपने कामों की बुनियाद न रखें और ऐसे ख़तरों को अल्लाह के हवाले कर दें।

इसके बाद चौथी आयत में इसी मज़मून को और ज़्यादा स्पष्टता और वज़ाहत के साथ इस तरह बयान फ़रमायाः

وَاِنْ يُّرِيْدُوْٓا اَنْ يَّخْدَعُوْكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰهُ هُوَ الَّذِيْٓ اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ وَبِالْمُؤْمِنِيْنَ○

यानी अगर यही संदेह सामने आ जाये कि सुलह करने से उनकी नीयत ख़राब हो, आपको धोखा ही देना चाहें तब भी आप कोई परवाह न करें, क्योंकि अल्लाह तआ़ला आपके लिये काफ़ी हैं, पहले भी अल्लाह तआ़ला ही की इमदाद व ताईद से आपका काम चला है, अल्लाह तआ़ला ने अपनी ख़ास मदद से आपकी ताईद फ़रमाई जो आपकी फ़तह व कामयाबी की असल बुनियाद और हक़ीक़त है और ज़ाहिरी तौर पर मुसलमानों की जमाअ़त आपकी इमदाद के लिये खड़ी कर दी जो ज़ाहिरी असबाब में से है। तो जिस हक़ीक़ी मालिक और क़ादिरे मुतलक़ ने फ़तह व कामयाबी के तमाम असबाब और साधनों को वजूद अ़ता फ़रमाया वह आज भी दुश्मनों के धोखे व फ़रेब के मामले में आपकी मदद फ़रमायेगा। अल्लाह के इसी वायदे के तहत इस आयत के उतरने के बाद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उम्र भर कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ कि दुश्मनों के धोखे फ़रेब से कोई तकलीफ़ पहुँची हो। इसी लिये तफ़सीर के उलेमा ने फ़रमाया है कि यह वायदा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये ऐसा है जैसा कि "वल्लाहु यअ़सिमु-क मिनन्नासि' का वायदा, कि इस आयत के नाज़िल होने के बाद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी निगरानी करने वाले सहाबा किराम को मुत्मईन और कार्यमुक्त फ़रमा दिया था। इसी से यह मालूम होता है कि यह वायदा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस था। (बयानुल-क़ुरआन) दूसरे लोगों को ज़ाहिरी तदबीर और अपने आस-पास के हालात के तहत काम करना चाहिये।

وَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ ۚ لَوْ اَنْفَقْتَ مَا فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا مَّآ اَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ اَلَّفَ بَيْنَهُمْ ۚ اِنَّهٗ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿۶۳﴾ يٰۤاَيُّهَا النَّبِىُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿۶۴﴾ يٰۤاَيُّهَا النَّبِىُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلَى الْقِتَالِ ۚ اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ عِشْرُوْنَ صٰبِرُوْنَ يَغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ يَّغْلِبُوْۤا اَلْفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ﴿۶۵﴾ اَلْـٰٔنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيْكُمْ ضَعْفًا ۚ فَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ صَابِرَةٌ يَّغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ اَلْفٌ يَّغْلِبُوْۤا اَلْفَيْنِ بِاِذْنِ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿۶۶﴾

व अल्ल-फ़ बै-न क़ुलूबिहिम्, लौ अन्फ़क़्-त मा फ़िल्अर्ज़ि जमीअम्-मा अल्लफ़्-त बै-न क़ुलूबिहिम् व लाकिन्नल्ला-ह अल्ल-फ़ बैनहुम्, इन्नहू अ़ज़ीज़ुन् हकीम (63) या अय्युहन्-नबिय्यु हस्बुकल्लाहु व मनित्त-ब-अ़-क मिनल्-मुअ्मिनीन (64) ✿

या अय्युहन्नबिय्यु हर्रिज़िल्-मुअ्मिनी-न अ़लल्-क़ितालि, इंय्यकुम्-मिन्कुम् अ़िश्रू-न साबिरू-न यग़्लिबू मि-अतैनि व इंय्यकुम्-मिन्कुम् मि-अतुंय्यग़्लिबू अल्फ़म्-मिनल्लज़ी-न क-फ़रू बिअन्नहुम् क़ौमुल्-ला यफ़्क़हून (65) अल्आ-न ख़फ़्फ़-फ़ल्लाहु अ़न्कुम् व अ़लि-म अन्-न फ़ीकुम् ज़अ़्फ़न्, फ़-इंय्यकुम्-मिन्कुम् मि-अतुन् साबि-रतुंय्यग़्लिबू मि-अतैनि व इंय्यकुम्-मिन्कुम् अल्फ़ुंय्-यग़्लिबू

और उलफ़त डाली उनके दिलों में, अगर तू ख़र्च कर देता जो कुछ ज़मीन में है सारा न उलफ़त डाल सकता उनके दिलों में लेकिन अल्लाह ने उलफ़त डाली उनमें, बेशक वह ज़ोरावर है हिक्मत वाला। (63) ऐ नबी! काफ़ी है तुझको अल्लाह और जितने तेरे साथ हैं मुसलमान। (64) ✿

ऐ नबी! शौक़ दिला मुसलमानों को लड़ाई का, अगर हों तुम में बीस शख़्स साबित-क़दम रहने वाले तो ग़ालिब हों दो सौ पर, और अगर हो तुम में सौ शख़्स तो ग़ालिब हों हज़ार काफ़िरों पर, इस वास्ते कि वे लोग समझ नहीं रखते। (65) अब बोझ हल्का कर दिया अल्लाह ने तुम पर से और जाना कि तुम में सुस्ती है, सो अगर हों तुम में सौ शख़्स साबित-क़दम रहने वाले तो ग़ालिब हों दो सौ पर, और अगर हों तुम में हज़ार तो ग़ालिब हों दो

अल्फ़ैनि बि-इज़्निल्लाहि, वल्लाहु मअ़स्-साबिरीन (66)	हज़ार पर अल्लाह के हुक्म से, और अल्लाह साथ है साबित-क़दम रहने वालों के। (66)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (मुसलमानों को इमदाद का ज़रिया बनाने के लिये) उनके दिलों में इत्तिफ़ाक़ पैदा कर दिया (चुनाँचे ज़ाहिर है कि अगर आपस में इत्तिफ़ाक़ न हो तो कोई काम ख़ास कर दीन की मदद मिलकर नहीं कर सकते, और उनमें सरदारी की चाहत और आपसी दुश्मनी व नफ़रत के हद से ज़्यादा होने के सबब ऐसी एकता व एकजुटता दुश्वार थी कि) अगर आप (इसके बावजूद कि अ़क्ल व तदबीर भी कामिल रखते हैं और सामान भी उसके लिये आपके पास काफ़ी होता यहाँ तक कि) दुनिया भर का माल (इस काम के लिये) ख़र्च करते तब भी उनके दिलों में इत्तिफ़ाक़ पैदा न कर सकते, लेकिन (यह) अल्लाह ही (का काम था कि उस) ने उनमें आपस में इत्तिफ़ाक़ पैदा कर दिया, बेशक वह ज़बरदस्त हैं (कि जो चाहें अपनी क़ुदरत से कर दें और) हिक्मत वाले हैं (कि जिस तरीक़े से मुनासिब जानें उस काम को कर दें, और जब अल्लाह तआ़ला का अपनी ग़ैबी इमदाद और मोमिनों से आपकी मदद फ़रमाना मालूम हो गया तो) ऐ नबी! (इससे साबित हो गया कि) आपके लिये (हक़ीक़त में) अल्लाह तआ़ला काफ़ी है, और जिन मोमिनों ने आपकी पैरवी की है (ज़ाहिरन) वे काफ़ी हैं।

ऐ पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! आप मोमिनों को जिहाद का शौक़ दिलाईये (और उसके बारे में यह क़ानून सुना दीजिये कि) अगर तुम में के बीस आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो (अपने से दस गुनी संख्या पर यानी) दो सौ पर ग़ालिब आ जाएँगे, और (इसी तरह) तुम में के सौ आदमी हों तो एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जाएँगे। इस वजह से कि वे ऐसे लोग हैं जो (दीन को) कुछ नहीं समझते (और इस वजह से कुफ़्र पर अड़े हुए हैं, और इस सबब से उनको ग़ैबी इमदाद नहीं पहुँचती। इस सबब से वह मग़लूब हो जाते हैं। पस तुम पर वाजिब है कि अपने से दस गुना के मुक़ाबले से भी पीछे न हटो। पहले यह हुक्म नाज़िल हुआ था जब सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम पर भारी हुआ तो उन्होंने अ़र्ज़ किया। एक मुद्दत के बाद यह दूसरी आयत जिससे वह पहला हुक्म ख़त्म हो गया, नाज़िल हुई। यानी) अब अल्लाह ने तुम पर तख़्फ़ीफ़ "यानी कमी और नर्मी" कर दी और मालूम कर लिया कि तुम में हिम्मत की कमी है सो (यह हुक्म दिया जाता है कि) अगर तुम में के सौ आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो (अपने से दोगुनी संख्या पर यानी) दो सौ पर ग़ालिब आ जाएँगे, और (इसी तरह) अगर तुम में के हज़ार होंगे तो दो हज़ार पर अल्लाह के हुक्म से ग़ालिब आ जाएँगे। और (हमने जो साबिर "जमे रहने वालों" की क़ैद लगाई तो इसलिये कि) अल्लाह तआ़ला सब्र करने वालों (यानी जो दिल और क़दम से साबित और जमे रहें उन) के साथ हैं (यानी उनकी मदद करते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः अनफ़ाल की ज़िक्र हुई चार आयतों में से पहली आयत में मुसलमानों की फ़तह व कामयाबी के असली सबब और उसके हासिल होने का तरीक़ा बयान किया गया है। इससे पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह ख़िताब किया गया था कि अल्लाह तआ़ला ही की ज़ात है जिसने अपनी ख़ास मदद से और मुसलमानों की जमाअ़त से आपकी ताईद और मदद फ़रमाई है। इस आयत में यह बतलाया गया है कि मुसलमानों की जमाअ़त से किसी की इमदाद व नुसरत ज़ाहिर है कि सिर्फ़ उसी सूरत में हो सकती है जबकि यह जमाअ़त आपस में मुत्तफ़िक़ और एकजुट हो। और जितना इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता हो उतनी ही उसकी क़ुव्वत और वज़न होता है। आपसी इत्तिहाद व एकजुटता के रिश्ते मज़बूत हैं तो पूरी जमाअ़त मज़बूत व ताक़तवर है, और अगर ये रिश्ते ढीले हैं तो पूरी जमाअ़त ढीली और कमज़ोर है। इस आयत में हक़ तआ़ला ने अपने उस ख़ास इनाम का ज़िक्र फ़रमाया जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ताईद व मदद के लिये आ़म मुसलमानों पर हुआ कि उनके दिलों में मुकम्मल एकता व मुहब्बत पैदा कर दी गयी। हालाँकि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मदीने की हिजरत से पहले उनके दो क़बीलों- **औस व ख़ज़्रज** में आपस में भयानक जंगें लड़ी जा चुकी थीं और झगड़े चलते रहते थे। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बरकत से अल्लाह तआ़ला ने उन जानी दुश्मनों को आपस में घुला-मिला दिया और भाई-भाई बना दिया। मदीना में क़ायम होने वाली नई इस्लामी हुकूमत के बाक़ी व क़ायम रहने और दुश्मनों पर ग़ालिब आने का असली और अन्दरूनी सबब तो अल्लाह तआ़ला की नुसरत व इमदाद थी, और ज़ाहिरी सबब मुसलमानों की आपस में मुकम्मल उलफ़त व मुहब्बत और इत्तिफ़ाक़ व एकजुटता थी।

इसी के साथ इस आयत में यह भी बतला दिया गया कि विभिन्न (यानी एक-दूसरे से विमुख) लोगों के दिलों को जोड़कर उनमें उलफ़त व मुहब्बत पैदा करना किसी इनसान के बस का काम नहीं, सिर्फ़ उस ज़ात का काम है जिसने सब को पैदा किया है। अगर कोई इनसान सारी दुनिया की दौलत भी इस काम के लिये ख़र्च कर डाले कि आपस में नफ़रत व दुश्मनी रखने वाले लोगों के दिलों में उलफ़त पैदा कर दे तो वह कभी इस पर क़ाबू नहीं पा सकता।

मुसलमानों का आपस में वास्तविक और पायदार इत्तिफ़ाक़ अल्लाह तआ़ला की इताअ़त-गुज़ारी पर मौक़ूफ़ है

इससे यह भी मालूम हुआ कि लोगों के दिलों में आपसी उलफ़त व मुहब्बत अल्लाह तआ़ला का इनाम है, और यह भी ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी के साथ उसके इनाम को हासिल नहीं किया जा सकता, बल्कि इनाम के हासिल करने के लिये उसकी इताअ़त व रज़ा

की तलब शर्त है।

जमाअ़तों और व्यक्तियों के बीच एकता व इत्तिफ़ाक़ एक ऐसी चीज़ है जिसके अच्छा, पसन्दीदा और मुफ़ीद होने से किसी मज़हब व मिल्लत और किसी फ़िक्र व नज़र (विचार धारा) वाले को इख़्तिलाफ़ (इनकार व विरोध) नहीं हो सकता, और इसी लिये हर शख़्स जो लोगों की इस्लाह (सुधार) की फ़िक्र करता है वह उनको आपस में मुत्तफ़िक़ (एकजुट) करने पर ज़ोर देता है, लेकिन आ़म दुनिया इस हक़ीक़त से बेख़बर है कि दिलों का पूरा और पायदार इत्तिफ़ाक़ ज़ाहिरी तदबीरों से हासिल नहीं होता, यह सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की इताअ़त व रज़ा तलब करने से हासिल होता है। क़ुरआने हकीम ने इस हक़ीक़त की तरफ़ कई आयतों में इशारे फ़रमाये हैं। एक जगह इरशाद है:

وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوْا.

इसमें झगड़े व विवाद और आपसी फूट से बचने की यह तदबीर बतलाई गयी है कि सब मिलकर अल्लाह की रस्सी यानी क़ुरआन या इस्लामी शरीअ़त को मज़बूत थाम लें तो सब आपस में ख़ुद-बख़ुद मुत्तफ़िक़ हो जायेंगे और आपसी फूट और विवाद ख़त्म हो जायेंगे। राय का इख़्तिलाफ़ दूसरी चीज़ है और वह जब तक अपनी हद के अन्दर रहे फूट और झगड़े का सबब कभी नहीं बनता। झगड़ा फ़साद तभी होता है जबकि शरई हदों से निकला जाये। आज इत्तिफ़ाक़-इत्तिफ़ाक़ तो सब पुकारते हैं मगर इत्तिफ़ाक़ के मायने हर शख़्स के नज़दीक यह होते हैं कि लोग मेरी बात मान लें तो इत्तिफ़ाक़ हो जाये। और दूसरे भी इत्तिफ़ाक़ के लिये इसी फ़िक्र में होते हैं कि वे हमारी बात मान लें तो इत्तिफ़ाक़ हो जाये। हालाँकि जब रायों का इख़्तिलाफ़ (भेद) अ़क़्ल व दियानत रखने वालों में लाज़िमी और ज़रूरी है तो यह ज़ाहिर है कि अगर हर शख़्स दूसरे के साथ मुत्तफ़िक़ होने को इस पर मौक़ूफ़ रखे कि दूसरा उसकी बात मान ले तो क़ियामत तक आपस में इत्तिफ़ाक़ नहीं हो सकता, बल्कि इत्तिफ़ाक़ की सही और फ़ितरी सूरत वही है जो क़ुरआन ने बतलाई कि दोनों मिलकर किसी तीसरे की बात को तस्लीम कर लें और तीसरा वही होना चाहिये जिसके फ़ैसले में ग़लती की संभावना न हो। वह ज़ाहिर है कि हक़ तआ़ला ही हो सकता है, इसलिये उक्त आयत में इसकी हिदायत फ़रमाई गयी कि सब मिलकर अल्लाह की किताब को मज़बूत थाम लो तो आपस के झगड़े ख़त्म होकर पूरा इत्तिफ़ाक़ पैदा हो जायेगा। एक दूसरी आयत में इरशाद है:

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَيَجْعَلُ لَهُمُ الرَّحْمٰنُ وُدًّا.

यानी जो लोग ईमान लायें और नेक अ़मल करें अल्लाह तआ़ला उनमें आपस में मुहब्बत व दोस्ती पैदा फ़रमा देते हैं। इस आयत ने वाज़ेह कर दिया कि दिलों में असली मुहब्बत व दोस्ती पैदा होने का सही तरीक़ा ईमान और नेक अ़मल की पाबन्दी है, इसके बग़ैर अगर कहीं कोई इत्तिफ़ाक़ व इत्तिहाद ज़ाहिरी तौर पर क़ायम कर भी लिया जाये तो वह बिल्कुल बेबुनियाद और कमज़ोर होगा, ज़रा सी ठेस में ख़त्म हो जायेगा। जिसको दुनिया की तमाम क़ौमों के हालात व

तजुर्बात से देखा जाता है। ख़ुलासा यह है कि इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर हक़ तआ़ला के उस इनाम की वज़ाहत की गयी है जो मदीना के तमाम क़बीलों के दिलों में उलफ़त पैदा करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इमदाद व नुसरत के लिये उनको एक मज़बूत दीवार की तरह बनाकर किया गया है।

दूसरी आयत में भी यही मज़मून ख़ुलासे के तौर पर बयान फ़रमाकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली दी गयी है कि आपके लिये हक़ीक़त के एतिबार से अल्लाह तआ़ला और ज़ाहिर के एतिबार से मोमिनों की जमाअ़त काफ़ी है, आप किसी बड़े से बड़े दुश्मन की संख्या या सामान से भयभीत न हों। मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया है कि यह आयत बदर की जंग के मैदान में जंग शुरू होने से पहले नाज़िल हुई थी ताकि कम संख्या वाले, बेसामान अपने मुक़ाबिल की भारी संख्या और ज़्यादा सामान से मरऊब न हो जायें।

तीसरी और चौथी आयत में मुसलमानों के लिये एक जंगी क़ानून का ज़िक्र है कि उनको किस हद तक अपने हरीफ़ (मुक़ाबिल और प्रतिद्वंदी) के मुक़ाबले पर जमना फ़र्ज़ और उससे हटना गुनाह है। पिछली आयतों और वाक़िआत में इसका ज़िक्र तफ़सील के साथ आ चुका है कि अल्लाह तआ़ला की ग़ैबी इमदाद मुसलमानों के साथ होती है इसलिये उनका मामला दुनिया की आ़म क़ौमों के जैसा मामला नहीं, यह थोड़े भी बहुत सारों पर ग़ालिब आ सकते हैं, जैसा कि क़ुरआने करीम में इरशाद है:

كَمْ مِّنْ فِئَةٍ قَلِيْلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيْرَةً م بِإِذْنِ اللّٰهِ.

(यानी बहुत सी कम संख्या वाली जमाअ़तें अल्लाह तआ़ला के हुक्म से अधिक संख्या वाले मुक़ाबिल पर ग़ालिब आ जाती हैं)

इसलिये इस्लाम के सबसे पहले जिहाद ग़ज़्वा-ए-बदर में दस मुसलमानों को सौ आदमियों के बराबर क़रार देकर यह हुक्म दिया गया कि:

अगर तुम में बीस आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो दो सौ दुश्मनों पर ग़ालिब आ जायेंगे, और अगर तुम सौ होगे तो एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जाओगे।

इस इबारत में उनवान एक ख़बर का रखा गया है कि सौ मुसलमान एक हज़ार काफ़िरों पर ग़ालिब आ जायेंगे, मगर मक़सद यह हुक्म देना है कि सौ मुसलमानों को एक हज़ार काफ़िरों के मुक़ाबले से भागना जायज़ नहीं। ख़बर का उनवान रखने में मस्लेहत यह है कि मुसलमानों के दिल इस ख़ुशख़बरी से मज़बूत हो जायें कि अल्लाह का वायदा हमारी हिफ़ाज़त और ग़लबे का है। अगर हुक्म को हुक्म देने के अलफ़ाज़ की सूरत क़ानून बनाकर पेश किया जाता तो फ़ितरी तौर पर वह भारी मालूम होता।

ग़ज़्वा-ए-बदर पहले पहल की जंग ऐसी हालत में थी जबकि मुसलमानों की कुल तायदाद ही बहुत कम थी, और वे भी सब के सब जंग के मोर्चे पर गये न थे बल्कि फ़ौरी तौर पर जो लोग तैयार हो सके वही उस जंग की फ़ौज बने, इसलिये इस जिहाद में सौ मुसलमानों को एक

हज़ार काफ़िरों का मुक़ाबला करने का हुक्म दिया, और ऐसे अन्दाज़ में दिया कि फ़तह व मदद का वायदा साथ था।

चौथी आयत में इस हुक्म को आगे के लिये निरस्त करके दूसरा हुक्म यह दिया गया कि:

अब अल्लाह तआ़ला ने कमी कर दी और मालूम कर लिया कि तुम में हिम्मत की कमी है सो अगर तुम में के सौ आदमी साबित-क़दम रहने वाले होंगे तो दो सौ पर ग़ालिब आ जायेंगे।

यहाँ भी मक़सद यह है कि सौ मुसलमानों को दो सौ काफ़िरों के मुक़ाबले से भागना जायज़ नहीं। पहली आयत में एक मुसलमान को दस के मुक़ाबले से बचना और भागना मना क़रार दिया था इस आयत में एक को दो के मुक़ाबले से गुरेज़ से मना किया गया। और यही आख़िरी हुक्म है जो हमेशा के लिये जारी और बाक़ी है।

यहाँ भी हुक्म को हुक्म के उनवान से नहीं बल्कि ख़बर और ख़ुशख़बरी के अन्दाज़ से बयान फ़रमाया गया है, जिसमें इशारा है कि एक मुसलमान को दो काफ़िरों के मुक़ाबले पर जमने का हुक्म (अल्लाह की पनाह) कोई बेइन्साफ़ी या सख़्ती नहीं, बल्कि अल्लाह तआ़ला ने मुसलमान में उसके ईमान की वजह से वह क़ुव्वत रख दी है कि उनमें का एक दो के बराबर रहता है।

मगर दोनों जगह इस फ़तह व मदद की ख़ुशख़बरी को इस शर्त के साथ बाँधा गया है कि ये मुसलमान साबित-क़दम रहने (यानी मुक़ाबले में जमने) वाले हों और ज़ाहिर है कि क़त्ल व क़िताल के मैदान में अपनी जान को ख़तरे में डालकर साबित-क़दम रहना उसी का काम हो सकता है जिसका ईमान कामिल हो। क्योंकि कामिल ईमान इनसान को शहादत के शौक़ का जज़्बा अ़ता करता है और यह जज़्बा उसकी ताक़त को बहुत कुछ बढ़ा देता है।

आयत के आख़िर में आ़म क़ानून की सूरत में बतला दिया:

وَاللّٰهُ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ۝

यानी अल्लाह तआ़ला साबित-क़दम रहने वालों का साथी है। इसमें मैदाने जंग में साबित क़दम रहने वाले भी शामिल हैं और आ़म शरई अहकाम की पाबन्दी पर साबित-क़दम रहने वाले हज़रात भी। उन सब के लिये अल्लाह की मदद और साथ का वायदा है और यह साथ ही उनकी फ़तह व कामयाबी का असली राज़ है। क्योंकि जिसको क़ादिरे मुतलक़ का साथ नसीब हो गया उसको सारी दुनिया मिलकर भी अपनी जगह से नहीं हिला सकती।

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّكُوْنَ لَهٗٓ اَسْرٰى حَتّٰى يُثْخِنَ فِي
الْاَرْضِ ۭ تُرِيْدُوْنَ عَرَضَ الدُّنْيَا ڰ وَاللّٰهُ يُرِيْدُ الْاٰخِرَةَ ۭ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝ لَوْلَا كِتٰبٌ مِّنَ اللّٰهِ
سَبَقَ لَمَسَّكُمْ فِيْمَآ اَخَذْتُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ فَكُلُوْا مِمَّا غَنِمْتُمْ حَلٰلًا طَيِّبًا ڮ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

मा का-न लि-नबिय्यिन् अंय्यकू-न लहू अस्रा हत्ता युस्ख़ि-न फ़िल्अर्ज़ि, तुरीदू-न अ-रज़द्दुन्या वल्लाहु युरीदुल् आख़ि-र-त, वल्लाहु अज़ीज़ुन् हकीम (67) लौ ला किताबुम्-मिनल्लाहि स-ब-क़ लमस्सकुम् फ़ीमा अख़ज़्तुम् अ़ज़ाबुन् अ़ज़ीम (68) फ़कुलू मिम्मा ग़निम्तुम् हलालन् तय्यिबंव्-वत्तक़ुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (69) ❁	नबी को नहीं चाहिए कि अपने यहाँ रखे क़ैदियों को जब तक ख़ूब रक्तपात न कर ले मुल्क में, तुम चाहते हो असबाब दुनिया का और अल्लाह के यहाँ चाहिए आख़िरत, और अल्लाह ज़ोरावर है हिक्मत वाला। (67) अगर न होती एक बात जिसको लिख चुका अल्लाह पहले से तो तुमको पहुँचता इस लेने में बड़ा अ़ज़ाब। (68) सो खाओ जो तुमको ग़नीमत में मिला हलाल सुथरा। और डरते रहो अल्लाह से, बेशक अल्लाह है बख़्शने वाला मेहरबान। (69) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ऐ मुसलमानो! तुमने नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जो उन क़ैदियों से कुछ लेकर छोड़ देने का मश्विरा दिया यह बेजा था, क्योंकि) नबी (की शान) के लायक़ नहीं कि उनके क़ैदी (बाक़ी) रहें (बल्कि क़त्ल कर दिए जाएँ) जब तक कि वह ज़मीन में अच्छी तरह (काफ़िरों का) ख़ून न बहा लें (क्योंकि जिहाद के लागू होने की असली ग़र्ज़ फ़साद को दूर करना है, और बिना उस सज़ा के जिसमें काफ़िरों का ज़ोर व ताक़त बिल्कुल टूट जाये फ़साद को दूर करना मुम्किन नहीं, पस इस नौबत से पहले क़ैदियों का ज़िन्दा छोड़ देना आपकी सुधारक शान के मुनासिब नहीं, अलबत्ता जब ऐसी क़ुव्वत हासिल हो जाये फिर क़त्ल ज़रूरी नहीं बल्कि और सूरतें भी जायज़ की गयी हैं। पस ऐसी नामुनासिब राय तुमने आपको क्यों दी) तुम तो दुनिया का माल व असबाब चाहते हो (इसलिये फ़िदये की राय दी) और अल्लाह तआ़ला आख़िरत (की मस्लेहत) को चाहते हैं (और वह इसमें है कि काफ़िर ख़ौफ़ से मग़लूब हो जायें जिसमें आज़ादी से इस्लाम का नूर व हिदायत फैले और बिना रोक-टोक लोग ख़ूब ज़्यादा मुसलमान हों और निजात पायें) और अल्लाह तआ़ला बड़े ज़बरदस्त हैं, बड़ी हिक्मत वाले हैं (वह तुमको काफ़िरों पर ग़ालिब करते और कामयाबियों की अधिकता से तुमको मालदार कर देते अगरचे किसी हिक्मत के सबब इसमें देर होती, जो फ़ेल तुमसे ज़ाहिर हुआ है वह ऐसा नापसन्दीदा है कि) अगर ख़ुदा तआ़ला का एक लिखा हुआ (मुक़द्दर) न हो चुकता (वह यह कि उन क़ैदियों में के लोग मुसलमान हो जायेंगे जिससे संभाविक फ़साद उत्पन्न न होगा। अगर यह न होता) तो जो मामला तुमने इख़्तियार किया है उसके बारे में तुम पर कोई बड़ी सज़ा आ पड़ती। (लेकिन चूँकि कोई फ़साद

न हुआ और इत्तिफ़ाक़न तुम्हारा मश्विरा सही निकल आया इसलिये तुम सज़ा से बच गये, यानी हमने इस फ़िदये को जायज़ कर दिया) सो जो कुछ तुमने (उनसे फ़िदये में) लिया है उसको हलाल पाक (समझकर) खाओ और अल्लाह तआ़ला से डरते रहो (कि आईन्दा हर तरह की एहतियात रखो) बेशक अल्लाह तआ़ला बड़े बख़्शने वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (कि तुम्हारा गुनाह भी माफ़ कर दिया, यह मग़फ़िरत है, और फ़िदया भी हलाल कर दिया यह रहमत है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों का ताल्लुक़ ग़ज़वा-ए-बदर (बदर की जंग) के एक ख़ास वाक़िए से है इसलिये इनकी तफ़सीर से पहले हदीस की सही और विश्वसनीय रिवायतों के ज़रिये उस वाक़िए का बयान ज़रूरी है।

वाक़िआ यह है कि ग़ज़वा-ए-बदर इस्लाम में सबसे पहला जिहाद है और अचानक पेश आया है, उस वक़्त तक जिहाद से संबन्धित अहकाम की तफ़सील क़ुरआन में नाज़िल नहीं हुई थी। जिहाद में अगर माले ग़नीमत हाथ आ जाये तो उसे क्या किया जाये, दुश्मन के सिपाही अपने क़ब्ज़े में आ जायें तो उनको गिरफ़्तार करना जायज़ है या नहीं, और गिरफ़्तार कर लिया जाये तो फिर उनके साथ मामला क्या करना चाहिये।

माले ग़नीमत के मुताल्लिक़ पिछले तमाम अम्बिया की शरीअ़तों में क़ानून यह था कि मुसलमानों को उससे नफ़ा उठाना और इस्तेमाल करना हलाल नहीं था, बल्कि हुक्म यह था कि पूरा माले ग़नीमत जमा करके किसी मैदान में रख दिया जाये और दस्तूरे इलाही यह था कि आसमान से एक आग आती और उस सारे माल को जलाकर ख़ाक कर देती। यही निशानी उस जिहाद के मक़बूल होने की समझी जाती थी। अगर माले ग़नीमत को जलाने के लिये आसमानी आग न आये तो यह इसकी पहचान होती थी कि जिहाद में कोई कोताही रही है जिसके सबब वह अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल नहीं।

सही बुख़ारी व मुस्लिम की रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे पाँच चीज़ें ऐसी अ़ता की गयी हैं जो मुझसे पहले किसी नबी को अ़ता नहीं हुईं। उनमें से एक यह भी है कि काफ़िरों से हासिल होने वाला माले ग़नीमत किसी के लिये हलाल नहीं था मगर मेरी उम्मत के लिये हलाल कर दिया गया। माले ग़नीमत का इस उम्मत के लिये ख़ुसूसी तौर पर हलाल होना अल्लाह तआ़ला के तो इल्म में था मगर ग़ज़वा-ए-बदर के वाक़िए तक इसके बारे में कोई वही (अल्लाह का हुक्म) हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर उसके हलाल होने के बारे में नाज़िल नहीं हुई थी। और ग़ज़वा-ए-बदर में सूरतेहाल यह पेश आई कि अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को बिल्कुल ख़िलाफ़े अन्दाज़ा ग़ैर-मामूली (असाधारण) फ़तह अ़ता फ़रमाई। दुश्मन ने माल भी छोड़ा जो बतौर ग़नीमत मुसलमानों के हाथ आया और उनके बड़े-बड़े सत्तर सरदार मुसलमानों ने गिरफ़्तार कर लिये। मगर इन दोनों चीज़ों के जायज़ होने की स्पष्टता अल्लाह के किसी पैग़ाम के ज़रिये अभी तक नहीं हुई थी।

इसलिये सहाबा-ए-किराम की इस जल्दबाज़ी पर नाराज़गी का इज़हार हुआ। इसी गुस्से व नाराज़गी का इज़हार एक वही के ज़रिये किया गया जिसमें जंगी क़ैदियों के बारे में बज़ाहिर तो मुसलमानों को दो चीज़ों का इख़्तियार दिया गया था मगर उसी इख़्तियार देने में एक इशारा इसकी तरफ़ भी कर दिया गया था कि मसले के दोनों पहलुओं में से अल्लाह तआला के नज़दीक एक पसन्दीदा और दूसरा नापसन्दीदा है। तिर्मिज़ी, सुनन नसाई, सही इब्ने हिब्बान में हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि उस मौक़े पर हज़रत जिब्रीले अमीन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आये और यह हुक्म सुनाया कि आप सहाबा किराम को दो चीज़ों में इख़्तियार दे दीजिये- एक यह कि उन क़ैदियों को क़त्ल करके दुश्मन का दबदबा व ज़ोर हमेशा के लिये ख़त्म कर दें, दूसरे यह कि उनको फ़िदया यानी कुछ माल लेकर छोड़ दिया जाये। लेकिन इस दूसरी सूरत में अल्लाह का हुक्म यह तयशुदा है कि इसके बदले अगले साल मुसलमानों के इतने ही आदमी शहीद होंगे जितने क़ैदी आज माल लेकर छोड़ दिये जायेंगे। यह सूरत अगरचे इख़्तियार की थी और सहाबा किराम को दोनों चीज़ों का इख़्तियार दे दिया गया था मगर दूसरी सूरत में सत्तर मुसलमानों की शहादत का फ़ैसला ज़िक्र करने में इस तरफ़ एक हल्का सा इशारा ज़रूर मौजूद था कि यह सूरत अल्लाह तआला के नज़दीक पसन्द नहीं, क्योंकि अगर यह पसन्द होती तो सत्तर मुसलमानों का ख़ून इसके नतीजे में लाज़िम न होता।

सहाबा किराम के सामने जब ये दोनों सूरतें बतौर इख़्तियार के पेश हुईं तो कुछ सहाबा किराम का ख़्याल यह हुआ कि अगर इन लोगों को फ़िदया लेकर छोड़ दिया गया तो बहुत मुम्किन है कि ये सब या इनमें के कुछ किसी वक़्त मुसलमान हो जायें, जो असली फ़ायदा और जिहाद का मक़सद है। दूसरे यह भी ख़्याल था कि मुसलमान इस वक़्त गुर्बत व तंगदस्ती की हालत में हैं अगर सत्तर आदमियों का माली फ़िदया इनको मिल गया तो इनकी तकलीफ़ भी दूर होगी और आईन्दा के लिये जिहाद की तैयारी में भी मदद मिल जायेगी। रहा सत्तर मुसलमानों का शहीद होना तो यह मुसलमानों के लिये ख़ुद एक नेमत व सआदत है, उससे घबराना नहीं चाहिये। इन ख़्यालात को सामने रखते हुए सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु और अक्सर सहाबा किराम ने यही राय दी कि इन क़ैदियों को फ़िदया लेकर आज़ाद कर दिया जाये, सिर्फ़ हज़रत उमर बिन ख़त्ताब और सअद बिन मुआज़ वग़ैरह चन्द हज़रात ने इस राय से इख़्तिलाफ़ (मतभेद) करके उन सब को क़त्ल कर देने की राय इस बुनियाद पर दी कि यह एक इत्तिफ़ाक़ है कि इस्लाम के मुक़ाबले में क़ुव्वत व ताक़त जमा करने वाले सारे क़ुरैशी सरदार इस वक़्त क़ाबू में आ गये हैं, इनका इस्लाम क़ुबूल करना तो एक दूर की बात और संभावित चीज़ है मगर यह गुमान ग़ालिब है कि ये लोग वापस होकर पहले से ज़्यादा मुसलमानों के ख़िलाफ़ सरगर्मी का सबब बनेंगे।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जो रहमतुल-लिल्आलमीन होकर तशरीफ़ लाये थे और पूरी तरह रहमत थे, सहाबा किराम की दो रायें देखकर आपने उस राय को क़ुबूल कर लिया

जिसमें क़ैदियों के मामले में रहमत और सहूलत थी, कि फ़िदया लेकर छोड़ दिया जाये। आपने सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को ख़िताब करके फ़रमायाः

لو اتفقتما ما خالفتكما.

यानी अगर तुम दोनों किसी एक राय पर सहमत हो जाते तो मैं तुम्हारी राय के ख़िलाफ़ न करता। (तफ़सीरे मज़हरी) राय के इख़्तिलाफ़ (मतभेद) के वक़्त मख़्लूक़ पर आपकी रहमत व शफ़क़त का तक़ाज़ा यही हुआ कि उनके मामले में आसानी इख़्तियार की जाये। चुनाँचे ऐसा ही हुआ। और इसके नतीजे में अगले साल ग़ज़वा-ए-उहुद के मौक़े पर अल्लाह के इशारे के मुताबिक़ सत्तर मुसलमानों के शहीद होने का वाक़िआ पेश आया।

تُرِيْدُوْنَ عَرَضَ الدُّنْيَا.

में उन सहाबा किराम को ख़िताब है जिन्होंने फ़िदया लेकर छोड़ने की राय दी थी। इस आयत में बतलाया गया कि आप हज़रात ने हमारे रसूल को नामुनासिब मश्विरा दिया। क्योंकि किसी नबी के लिये यह मुनासिब नहीं है कि उसको दुश्मनों पर क़ाबू मिल जाये तो उनकी क़ुव्वत व दबदबे को न तोड़े और फ़सादी क़िस्म के दुश्मन को बाक़ी रखकर मुसलमानों के लिये हमेशा की मुसीबत क़ायम कर दे।

इस आयत मेंः

حَتّٰى يُثْخِنَ فِى الْاَرْضِ.

के अलफ़ाज़ आये हैं। लफ़्ज़ 'इस्ख़ान' के मायने लुग़त में किसी की क़ुव्वत और शान व शौकत को तोड़ने में मुबालग़े से काम लेने के हैं। इसी मायने की ताकीद के लिये लफ़्ज़ः

فِى الْاَرْضِ.

लाया गया, जिसका हासिल यह है कि दुश्मन की शान व बल को ख़ाक में मिला दे।

जिन सहाबा किराम ने फ़िदया लेकर छोड़ देने की राय दी थी अगरचे उनकी राय में एक पहलू ख़ालिस दीनी था, यानी आज़ादी के बाद उन लोगों के मुसलमान हो जाने की उम्मीद, मगर साथ ही दूसरा पहलू अपने ज़ाती फ़ायदे का भी था कि उनको माल हाथ आ जायेगा। और अभी तक शरीअ़त के किसी स्पष्ट हुक्म से उस माल का जायज़ होना भी साबित न था, इसलिये इनसानों का वह समाज जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरबियत की निगरानी में उस पैमाने पर बनाया जा रहा था कि उनका मर्तबा फ़रिश्तों से भी आगे हो, उनके लिये यह माल की तरफ़ ध्यान भी एक क़िस्म की ख़ता और गुनाह समझी गयी। और जो काम जायज़ व नाजायज़ कामों से मुरक्कब (मिश्रित) हो उसका मजमूआ़ नाजायज़ ही कहलाता है, इसलिये सहाबा किराम का यह अ़मल नाराज़गी के क़ाबिल क़रार देकर यह इरशाद नाज़िल हुआः

تُرِيْدُوْنَ عَرَضَ الدُّنْيَا وَاللّٰهُ يُرِيْدُ الْاٰخِرَةَ، وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌO

यानी तुम लोग दुनिया को चाहते हो हालाँकि अल्लाह तआ़ला तुमसे यह चाहता है कि तुम आख़िरत के तालिब बनो।

यहाँ बतौर नाराज़गी व डाँट के उनके सिर्फ़ उस फ़ेल का ज़िक्र किया गया जो नाराज़गी का कारण था, दूसरा सबब यानी क़ैदियों के मुसलमान हो जाने की उम्मीद, इसका यहाँ ज़िक्र नहीं फ़रमाया। जिसमें इस तरफ़ इशारा है कि सहाबा किराम जैसी पाकबाज़ मुख़्लिस जमाअ़त के लिये ऐसी साझा नीयत जिसमें कुछ दीन का हिस्सा हो कुछ अपने दुनियावी नफ़े का, यह भी क़ाबिले क़ुबूल नहीं। यहाँ यह बात भी क़ाबिले ध्यान है कि इस आयत में नाराज़गी व चेतावनी का ख़िताब सहाबा किराम की तरफ़ है अगरचे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी उनकी राय को क़ुबूल फ़रमाकर एक तरह से उनके साथ शिर्कत कर ली थी, मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह अ़मल ख़ालिस आपके "रहमतुल्-लिल्आ़लमीन" होने का प्रतीक था, कि सहाबा में राय का इख़्तिलाफ़ होने की सूरत में उस सूरत को इख़्तियार फ़रमा लिया जो क़ैदियों के हक़ में सहूलत व मेहरबानी की थी।

आयत के आख़िर में 'वल्लाहु अ़ज़ीज़ुन हकीम' फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त, हिक्मत वाले हैं। अगर आप लोग जल्दबाज़ी न करते तो वह अपने फ़ज़्ल से आगे की फ़ुतूहात में तुम्हारे लिये माल व दौलत का भी सामान कर देते।

दूसरी आयत भी इसी नाराज़गी का पूरक है जिसमें फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआ़ला का एक तक़दीर का लिखा हुआ न हो चुका होता तो जो काम तुमने इख़्तियार किया कि माल लेकर क़ैदियों को छोड़ने का फ़ैसला कर लिया, इसके बारे में तुम पर कोई बड़ी सज़ा आ पड़ती।

इस तक़दीर के लिखे से क्या मुराद है, इसके बारे में तिर्मिज़ी में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि माले ग़नीमत तुमसे पहले किसी क़ौम किसी उम्मत के लिये हलाल नहीं था, बदर के मौक़े में जब मुसलमान माले ग़नीमत जमा करने में लग गये हालाँकि अभी तक उनके लिये माले ग़नीमत हलाल नहीं किया गया था, इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि माले ग़नीमत के हलाल होने का हुक्म नाज़िल होने से पहले मुसलमानों का यह क़दम उठाना ऐसा गुनाह था कि इस पर अ़ज़ाब आ जाना चाहिये था, लेकिन चूँकि अल्लाह तआ़ला का यह हुक्म लौह-ए-महफ़ूज़ में लिखा हुआ था कि इस उम्मत के लिये माले ग़नीमत हलाल किया जायेगा इसलिये मुसलमानों की इस ख़ता पर अ़ज़ाब नाज़िल नहीं किया था। (तफ़सीरे मज़हरी)

हदीस की कुछ रिवायतों में है कि इस आयत के नाज़िल होने पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह का अ़ज़ाब बिल्कुल सामने आ चुका था, अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से रोक दिया, और अगर अ़ज़ाब आ जाता तो सिवाय उमर बिन ख़त्ताब और सअ़द बिन मुआ़ज़ के कोई उससे न बचता। इससे मालूम होता है कि अ़ज़ाब व नाराज़गी का सबब क़ैदियों से फ़िदया लेकर छोड़ देना था और तिर्मिज़ी की पहले बयान हुई रिवायत से इसका सबब माले ग़नीमत जमा करना मालूम होता है, मगर दोनों में कोई टकराव नहीं, क़ैदियों से फ़िदया

लेना भी माले ग़नीमत ही का हिस्सा है।

मसलाः बयान हुई आयत में क़ैदियों से फ़िदया लेकर आज़ाद करने या माले ग़नीमत जमा करने पर जो नाराज़गी नाज़िल हुई और अल्लाह के अ़ज़ाब से डराया गया मगर फिर माफ़ी दे दी गयी, इससे यह बात स्पष्ट न हुई कि आईन्दा के लिये इन मामलों में मुसलमानों को क्या करना चाहिये। इसलिये अगली आयत में माले ग़नीमत का मसला तो साफ़ कर दिया गयाः

فَكُلُوا مِمَّا غَنِمْتُمْ

यानी जो माले ग़नीमत तुमको हाथ आ गया है वह अब खा सकते हो, वह आईन्दा के लिये तुम्हारे वास्ते हलाल कर दिया गया। मगर इसमें भी एक शुब्हा यह रह जाता है कि माले ग़नीमत हलाल करने का हुक्म तो अब मिला है, इस हुक्म से पहले जो ग़लती से जमा कर लिया गया था शायद उसमें किसी क़िस्म की बुराई हो इसलिये इसके बाद 'हलालन् तय्यिबन्' फ़रमाकर यह शुब्हा भी दूर कर दिया गया कि अगरचे हुक्म के नाज़िल होने से पहले माले ग़नीमत जमा करने का इक़दाम दुरुस्त न था मगर अब जबकि माले ग़नीमत हलाल होने का हुक्म आ गया तो पहला जमा किया हुआ भी बग़ैर किसी कराहत (बुराई) के हलाल है।

मसलाः यहाँ उसूले फ़िक़्ह का एक मसला ध्यान में रखने और याद रखने के क़ाबिल है कि जब किसी नाजायज़ अमल करने के बाद मुस्तक़िल आयत के ज़रिये उस माल को हलाल करने का हुक्म नाज़िल हो जाये तो पहले के उठाये हुए क़दम का उसमें कोई असर नहीं रहता। वह माल हलाल व पाक हो जाता है, जैसा कि यहाँ हुआ। लेकिन इसी की एक दूसरी नज़ीर यह है कि किसी मामले में हुक्म तो पहले से नाज़िल शुदा था मगर उसका ज़हूर अमल करने वालों पर नहीं था, इस बिना पर उसके ख़िलाफ़ अमल कर गुज़रे, बाद में मालूम हुआ कि हमारा यह अमल क़ुरआन व सुन्नत के फ़ुलाँ हुक्म के ख़िलाफ़ था, तो इस सूरत में हुक्म के ज़ाहिर होने के बाद वह माल हलाल नहीं रहता अगरचे पहले की ग़लती को माफ़ भी कर दिया जाये।

(नूरुल-अनवार मुल्ला जीवन)

ज़िक्र हुई आयत में माले ग़नीमत को हलाल व पाक तो क़रार दे दिया गया मगर आयत के आख़िर में यह क़ैद लगा दी गयी 'वत्तक़ुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम'। इसमें इशारा कर दिया कि माले ग़नीमत अगरचे हलाल कर दिया गया है मगर वह भी एक ख़ास क़ानून के तहत हलाल हुआ है, उस क़ानून के ख़िलाफ़ या अपने हक़ से ज़्यादा लिया जायेगा तो वह जायज़ नहीं।

यहाँ दो मामले थे- एक माले ग़नीमत, दूसरे क़ैदियों को फ़िदया लेकर छोड़ना। पहले मामले के मुताल्लिक़ तो इस आयत ने बात साफ़ कर दी मगर दूसरा मामला अभी तक साफ़ नहीं हुआ, इसके मुताल्लिक़ सूरः मुहम्मद में यह आयत नाज़िल हुईः

فَإِذَا لَقِيتُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا فَضَرْبَ الرِّقَابِ، حَتَّىٰ إِذَا أَثْخَنتُمُوهُمْ فَشُدُّوا الْوَثَاقَ فَإِمَّا مَنًّا ، بَعْدُ وَإِمَّا فِدَاءً حَتَّىٰ تَضَعَ الْحَرْبُ أَوْزَارَهَا.

(यानी जब जंग में काफ़िरों से तुम्हारा मुक़ाबला हो तो उनकी गर्दनें मार दो यहाँ तक कि

जब तुम ख़ून बहाने के ज़रिये उनकी क़ुव्वत व ज़ोर तोड़ चुको तो फिर उनको क़ैद करके मज़बूत बाँधो। उसके बाद या तो उन पर एहसान करके बग़ैर किसी मुआवज़े के आज़ाद कर दो या फ़िदया लेकर छोड़ दो। यहाँ तक कि जंग अपने हथियार डाल दे।)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि ग़ज़वा-ए-बदर में क़ैदियों को फ़िदया लेकर आज़ाद करने पर अल्लाह की नाराज़गी नाज़िल हुई, यह इस्लाम का पहला जिहाद था, उस वक़्त तक काफ़िरों की क़ुव्वत व दबदबा टूट नहीं चुका था, इत्तिफ़ाक़न उन पर एक मुसीबत पड़ गयी थी, फिर जब इस्लाम और मुसलमानों को मुकम्मल ग़लबा हासिल हो गया तो अल्लाह तआ़ला ने वह हुक्म मन्सूख़ (निरस्त व ख़त्म) करने के लिये सूरः मुहम्मद की उक्त आयत नाज़िल फ़रमा दी। जिसमें नबी करीम और मुसलमानों को क़ैदियों के बारे में चार इख़्तियार दे दिये गये- वो हैं:

إنْ شَاء وا قتلوهم وان شاء وا استعبدوهم وان شاء وا فادوهم وان شاء وا اعتقوهم.

यानी चाहें तो सब को क़त्ल कर दें, या चाहें तो ग़ुलाम बना लें, या चाहें तो फ़िदया लेकर छोड़ दें, या चाहें तो बग़ैर फ़िदये के आज़ाद कर दें। (तफ़सीरे मज़हरी)

उक्त चार इख़्तियारों में से पहले दो पर तो पूरी उम्मत की सहमति और एक राय है कि मुसलमानों के अमीर के लिये क़ैदियों को क़त्ल कर देने का भी इख़्तियार है और ग़ुलाम बना लेने का भी, लेकिन उनको बिना मुआवज़े छोड़ देने या मुआवज़ा लेकर छोड़ देने में उम्मत के फ़ुक़हा का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है।

इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल, इमाम सौरी, इमाम इस्हाक़ और ताबिईन में से हज़रत हसन बसरी और अ़ता का क़ौल यह है कि ये दोनों सूरतें भी मुसलमानों के अमीर के लिये जायज़ हैं कि क़ैदियों को मुआवज़ा लेकर छोड़ दे या बिना मुआवज़े के आज़ाद कर दे, या मुसलमान क़ैदियों से तबादला कर ले।

और इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम अबू यूसुफ़, इमाम मुहम्मद, इमाम औज़ाई, इमाम क़तादा, इमाम ज़स्हाक, इमाम सुद्दी और इमाम इब्ने जुरैज फ़रमाते हैं कि बिना मुआवज़े के छोड़ना तो बिल्कुल जायज़ नहीं, फ़िदया लेकर छोड़ना भी इमाम अबू हनीफ़ा रह. के मशहूर मज़हब में जायज़ नहीं। अलबत्ता किताब 'सियर-ए-कबीर' की रिवायत यह है कि अगर मुसलमानों को माल की ज़रूरत हो तो फ़िदया लेकर छोड़ सकते हैं। अलबत्ता मुसलमान क़ैदियों के तबादले में उनको छोड़ देना इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ व इमाम मुहम्मद के नज़दीक जायज़ है। (तफ़सीरे मज़हरी)

जिन हज़रात ने फ़िदया लेकर या बिना फ़िदये के छोड़ देने की इजाज़त दी है वे हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के क़ौल के मुताबिक़ सूरः मुहम्मद की आयत को सूरः अनफ़ाल की आयत का नासिख़ (निरस्त व मौक़ूफ़ करने वाला) और सूरः अनफ़ाल की आयत को मन्सूख़ (हुक्म के एतिबार से निरस्त और रद्द) क़रार देते हैं। हनफ़ी फ़ुक़हा ने सूरः मुहम्मद की आयत को मन्सूख़ क़रार दिया है और सूरः अनफ़ाल की आयतः

فَشَرِّدْبِهِمْ مَّنْ خَلْفَهُمْ.

और आयतः

اُقْتُلُوا الْمُشْرِكِيْنَ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ.

को उसका नासिख़ (हुक्म को रद्द और निरस्त करने वाला) क़रार दिया है, इसलिये क़ैदियों को आज़ाद कर देना चाहे फ़िदया लेकर हो या बिना फ़िदये के, उनके नज़दीक जायज़ नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी)

लेकिन अगर सूरः अनफ़ाल की आयत के अलफ़ाज़ और सूरः मुहम्मद के अलफ़ाज़ में ग़ौर किया जाये तो ऐसा मालूम होता है कि इन दोनों में कोई नासिख़ व मन्सूख़ नहीं, बल्कि दो विभिन्न हालतों के दो हुक्म हैं।

सूरः अनफ़ाल की आयत में भी असल हुक्म क़त्ल के ज़रिये काफ़िरों की ताक़त को तोड़ देना है और सूरः मुहम्मद की आयत में भी जो क़ैदियों को बिना मुआवज़े के या मुआवज़ा लेकर आज़ाद करने का इख़्तियार दिया गया है उससे पहले ख़ून बहाने के ज़रिये कुफ़्र की ताक़त के टूट जाने का बयान हो चुका है, उसके बाद यह भी इख़्तियार है कि क़ैदियों को फ़िदये पर या बिना फ़िदये के आज़ाद कर दिया जाये।

इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रह. की 'सियर-ए-कबीर' वाली रिवायत का भी यही मन्शा हो सकता है कि मुसलमानों के हालात और ज़रूरत पर नज़र करके दोनों क़िस्म के अहकाम दिये जा सकते हैं। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِّمَنْ فِيْٓ اَيْدِيْكُمْ مِّنَ الْاَسْرٰٓى اِنْ يَّعْلَمِ اللّٰهُ فِيْ قُلُوْبِكُمْ خَيْرًا
يُّؤْتِكُمْ خَيْرًا مِّمَّآ اُخِذَ مِنْكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَاِنْ يُّرِيْدُوْا خِيَانَتَكَ
فَقَدْ خَانُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ فَاَمْكَنَ مِنْهُمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

या अय्युहन्नबिय्यु क़ुल् लिमन् फ़ी ऐदीकुम् मिनल्अस्रा इंय्यअ्-लमिल्लाहु फ़ी क़ुलूबिकुम् ख़ैरंय्युअ्तिकुम् ख़ैरम् मिम्मा उख़ि-ज़ मिन्कुम् व यग़्फ़िर् लकुम्, वल्लाहु ग़फ़ूरुर्रहीम (70) व इंय्युरीदू ख़ियान-त-क फ़-क़द् ख़ानुल्ला-ह मिन् क़ब्लु फ़-अम्क-न मिन्हुम्, वल्लाहु अ़लीमुन् हकीम (71)	ऐ नबी! कह दे उनसे जो तुम्हारे हाथ में हैं क़ैदी अगर जानेगा अल्लाह तुम्हारे दिलों में कुछ नेकी तो देगा तुमको बेहतर उससे जो तुमसे छिन गया और तुमको बख़्शेगा, और अल्लाह है बख़्शने वाला मेहरबान। (70) और अगर चाहेंगे तुझसे दग़ा करनी सो वे दग़ा कर चुके हैं अल्लाह से इससे पहले, फिर उसने उनको पकड़वा दिया, और अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (71)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ पैग़म्बर! आपके कब्ज़े में जो कैदी हैं (उनमें जो मुसलमान हो गये हैं) आप उनसे फ़रमा दीजिये कि अगर अल्लाह तआ़ला को तुम्हारे दिल में ईमान मालूम होगा (यानी तुम दिल से मुसलमान हुए होगे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला का इल्म तो हक़ीक़त के मुताबिक़ होता है, अल्लाह तआ़ला मुसलमान उसी को जानेंगे जो वास्तव में मुसलमान होगा, और जो शख़्स ग़ैर-मुस्लिम होगा उसको ग़ैर-मुस्लिम ही जानेंगे। पस अगर तुम दिल से मुसलमान होगे) तो जो कुछ (फ़िदये में) तुमसे लिया गया है (दुनिया में) उससे बेहतर तुमको दे देगा, और (आख़िरत में) तुमको बख़्श देगा, और अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले हैं (इसलिये तुमको बख़्श देंगे और) बड़ी रहमत वाले हैं (इसलिये तुमको बेहतरीन बदला देंगे)। और अगर (फ़र्ज़ कर लो) ये लोग (सच्चे दिल से मुसलमान न हुए हों बल्कि इस्लाम को ज़ाहिर करने से सिर्फ़ आपको धोखा ही देना चाहें और दिल में) आपके साथ ख़ियानत करने का (यानी अ़हद तोड़कर मुख़ालफ़त व मुक़ाबले का) इरादा रखते हों तो (कुछ फ़िक्र न कीजिए अल्लाह तआ़ला उनको फिर आपके हाथों में गिरफ़्तार करा देगा जैसे) इससे पहले उन्होंने अल्लाह के साथ ख़ियानत की थी (और आपकी मुख़ालफ़त और मुक़ाबला किया) फिर अल्लाह तआ़ला ने उनको (आपके हाथों में) गिरफ़्तार करा दिया, और अल्लाह तआ़ला ख़ूब जानने वाले हैं (कि कौन ख़ियानत करने वाला है और) बड़ी हिक्मत वाले हैं (ऐसी सूरतें पैदा कर देते हैं जिससे ख़ियानत करने वाला पस्त हो जाये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

जंग-ए-बदर के क़ैदियों को फ़िदया लेकर छोड़ दिया गया। इस्लाम और मुसलमानों के वे दुश्मन जिन्होंने उनके सताने, मारने, क़त्ल करने में किसी वक़्त भी कोई कसर उठा नहीं रखी और जब मौक़ा मिल गया इन्तिहाई वहशियाना अत्याचार उन पर किये, मुसलमानों के हाथों में क़ैद हो जाने के बाद उनकी जान-बख़्शी कर देना कोई मामूली बात न थी, उनके लिये बड़ी ग़नीमत और बहुत बड़ा लुत्फ़ व करम था, फ़िदये में जो रक़म उनसे ली गयी वह बहुत मामूली थी।

अल्लाह तआ़ला का लुत्फ़ व करम देखिये कि इस मामूली रक़म के देने से जो एक क़िस्म की तकलीफ़ उनको पेश आई उसको भी किस तरह दूर फ़रमाया जाता है। उक्त आयत में इरशाद है कि अगर अल्लाह तआ़ला तुम्हारे दिलों में कोई ख़ैर पायेंगे तो जो कुछ तुमसे लिया गया है उससे बेहतर तुम्हें दे देंगे। और इस पर अतिरिक्त यह कि तुम्हारे पिछले गुनाह बख़्श देंगे। ख़ैर से मुराद ईमान और इख़्लास है। मतलब यह है कि आज़ाद होने के बाद उन क़ैदियों में जो लोग ईमान व इस्लाम को इख़्लास (सच्चे दिल) के साथ इख़्तियार कर लेंगे तो जो कुछ फ़िदये में दिया है उससे ज़्यादा और बेहतर उनको मिल जायेगा। क़ैदियों को आज़ाद व ख़ुदमुख़्तार कर देने के साथ इस तरह दावत दी गयी कि वे आज़ादी के साथ अपने नफ़े नुक़सान

पर ग़ौर करें। चुनाँचे वाक़िआ़त सामने हैं कि उन लोगों में से जो मुसलमान हो गये अल्लाह तआ़ला ने उनकी मग़फ़िरत और जन्नत के बुलन्द दर्जों के अ़लावा दुनिया में भी उनको इतना माल व दौलत दे दिया जो उनके फ़िदये से कई दर्जे ज़ायद था।

अक्सर मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यह आयत हज़रत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बारे में नाज़िल हुई थी, क्योंकि वह भी बदर के क़ैदियों में शामिल थे और उनसे भी फ़िदया लिया गया था। उनकी ख़ुसूसियत इस मामले में यह थी कि जंगे बदर में यह मक्का से अपने साथ तक़रीबन सात सौ गिन्नी सोना लेकर चले थे ताकि वह काफ़िरों के लश्कर पर ख़र्च किया जाये। और अभी यह ख़र्च होने नहीं पाया था कि वह उस सोने सहित गिरफ़्तार कर लिये गये।

जब फ़िदया देने का वक़्त आया तो इन्होंने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मेरे साथ जो सोना था उसको मेरे फ़िदये की रक़म में लगा लिया जाये। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो माल आप कुफ़्र की इमदाद के लिये लाये थे वह तो मुसलमानों का माले ग़नीमत बन गया, फ़िदया उसके अ़लावा होना चाहिये। और साथ ही यह भी फ़रमाया कि अपने दो भतीजों अ़क़ील बिन अबी तालिब और नौफ़ल बिन हारिस का फ़िदया भी आप अदा करें। हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि अगर इतना माली बोझ मुझ पर डाला गया तो मुझे क़ुरैश से भीख माँगनी पड़ेगी, मैं बिल्कुल फ़क़ीर हो जाऊँगा। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया क्यों! क्या आपके पास वह माल मौजूद नहीं जो मक्का से रवानगी के वक़्त आपने अपनी बीवी उम्मुल-फ़ज़्ल के हवाले किया है। हज़रत अ़ब्बास ने पूछा कि आपको यह कैसे मालूम हुआ जबकि यह मैंने रात की अंधेरी और तन्हाई में अपनी बीवी के सुपुर्द किया था, और कोई तीसरा आदमी उससे वाक़िफ़ नहीं। आपने फ़रमाया कि मुझे मेरे रब ने उसकी पूरी तफ़सील बतला दी। हज़रत अ़ब्बास के दिल में यह सुनकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चे रसूल होने का यक़ीन हो गया। इससे पहले भी वह आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दिल से मोतक़िद थे मगर कुछ शुब्हात थे जो अल्लाह तआ़ला ने इस वक़्त दूर फ़रमा दिये और वह दर हक़ीक़त उसी वक़्त से मुसलमान हो गये। मगर उनका बहुत सारा रुपया मक्का के क़ुरैश के ज़िम्मे क़र्ज़ था। अगर यह उसी वक़्त अपने मुसलमान होने का ऐलान कर देते तो यह रुपया मारा जाता, इसलिये ऐलान नहीं किया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी किसी से इसका इज़हार नहीं किया। मक्का फ़तह होने से पहले इन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इसकी इजाज़त चाही कि मक्का से हिजरत करके मदीना तय्यिबा आ जायें मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनको यही मश्विरा दिया कि अभी हिजरत न करें।

हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की इस गुफ़्तगू पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह उक्त आयत में आया हुआ वायदा भी उनको बतला दिया कि अगर आपने इस्लाम क़ुबूल

कर लिया और इख़्लास के साथ मोमिन हो गये तो जो कुछ माल फ़िदये में ख़र्च किया है उससे बेहतर अल्लाह तआ़ला आपको अता फ़रमा देंगे। चुनाँचे हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु इस्लाम ज़ाहिर करने के बाद फ़रमाया करते थे कि मैं तो इस वायदे का नज़ारा अपनी आँखों से देख रहा हूँ। क्योंकि मुझसे बीस औक़िया सोना फ़िदये में लिया गया था, इस वक़्त मेरे बीस गुलाम मुख़्तलिफ़ जगहों में तिजारत का कारोबार कर रहे हैं और किसी का कारोबार बीस हज़ार दिरहम से कम का नहीं है। और इस पर अतिरिक्त यह इनाम है कि मुझे हाजियों को आब-ए-ज़मज़म पिलाने की ख़िदमत मिल गयी है जो मेरे नज़दीक ऐसा सम्मानित और क़ाबिले क़द्र काम है कि सारे मक्का वालों के माल भी इसके मुक़ाबले में बेहक़ीक़त समझता हूँ।

ग़ज़वा-ए-बदर के कैदियों में से कुछ लोग मुसलमान हो गये थे मगर उनके बारे में यह खटक लोगों के दिल में थी कि शायद ये लोग मक्का पहुँचकर इस्लाम से फिर जायें और फिर हमें कोई नुक़सान पहुँचायें। हक़ तआ़ला ने इसके बाद वाली आयत में इस ख़तरे को इस तरह दूर फ़रमा दियाः

اِنْ يُّرِيْدُوْا خِيَانَتَكَ فَقَدْ خَانُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ فَاَمْكَنَ مِنْهُمْ. وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌo

यानी अगर ये लोग आपके साथ ख़ियानत (बददियानती) ही का इरादा कर लें तो इससे आपको कोई नुक़सान न पहुँचेगा। ये तो वही लोग हैं जो इससे पहले अल्लाह के साथ ख़ियानत कर चुके हैं यानी रोज़-ए-अव्वल के किये हुए वायदे व अ़हद में जो अल्लाह तआ़ला के रब्बुल-आ़लमीन होने का इक़रार किया था उसकी मुख़ालफ़त करने लगे थे। लेकिन उनकी यह ख़ियानत ख़ुद उन्हीं के लिये नुक़सानदेह साबित हुई कि अंजामकार ज़लील व रुस्वा और गिरफ़्तार हुए। और अल्लाह तआ़ला तो दिलों के राज़ों को जानने वाले और बड़ी हिक्मत वाले हैं। अगर ये लोग अब भी आपकी मुख़ालफ़त करने लगेंगे तो अल्लाह तआ़ला के क़ब्ज़े से बाहर कहाँ चले जायेंगे, वह फिर इनको इसी तरह पकड़ लेगा। पिछली आयत में आज़ाद होने वाले क़ैदियों को इस्लाम की तरफ़ दावत लुभावने अन्दाज़ में दी गयी थी, इस आयत में डराने के ज़रिये उनको आगाह कर दिया कि तुम्हारी दुनिया व आख़िरत की भलाई इस्लाम व ईमान में सीमित और निहित है।

यहाँ तक काफ़िरों के साथ क़त्ल व क़िताल (जंग व जिहाद) और उनके क़ैद करने, आज़ाद करने के और उनसे सुलह व समझौते के अहकाम का बयान हो रहा था। अगली आयतों में सूरत के आख़िर तक इसी सिलसिले के एक ख़ास अध्याय का ज़िक्र और उसके अहकाम की कुछ तफ़सील बयान हुई है और वो हिजरत के अहकाम हैं, क्योंकि काफ़िरों के साथ मुक़ाबले में कभी ऐसे हालात भी पेश आ सकते हैं कि न मुसलमानों को उनके मुक़ाबले पर क़त्ल व क़िताल की ताक़त है और न वे सुलह पर राज़ी हैं। ऐसी कमज़ोरी की हालत में इस्लाम और मुसलमानों की निजात की राह हिजरत है, कि उस शहर और मुल्क को छोड़कर किसी दूसरी ज़मीन में जाकर क़ियाम करें, जहाँ इस्लामी अहकाम पर आज़ादाना अ़मल हो सके।

إِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَ هَاجَرُوْا وَ جٰهَدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَ اَنْفُسِهِمْ
فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالَّذِيْنَ اٰوَوْا وَّ نَصَرُوْٓا اُولٰٓئِكَ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ وَالَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا وَلَمْ يُهَاجِرُوْا مَا لَكُمْ مِّنْ وَّلَايَتِهِمْ مِّنْ شَيْءٍ حَتّٰى يُهَاجِرُوْا ۚ وَاِنِ اسْتَنْصَرُوْكُمْ
فِي الدِّيْنِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ اِلَّا عَلٰى قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝
وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ اِلَّا تَفْعَلُوْهُ تَكُنْ فِتْنَةٌ فِي الْاَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيْرٌ ۝
وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالَّذِيْنَ اٰوَوْا وَّنَصَرُوْٓا اُولٰٓئِكَ
الربع هُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا ۭ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ ۝ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْۢ بَعْدُ وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا مَعَكُمْ
ع ١٠ فَاُولٰٓئِكَ مِنْكُمْ ۭ وَاُولُوا الْاَرْحَامِ بَعْضُهُمْ اَوْلٰى بِبَعْضٍ فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝

इन्नल्लज़ी-न आमनू व हाजरू व जाहदू बिअम्वालिहिम् व अन्फ़ुसिहिम् फ़ी सबीलिल्लाहि वल्लज़ी-न आवव्-व न-सरू उलाइ-क बअ्ज़ुहुम् औलिया-उ बअ्ज़िन्, वल्लज़ी-न आमनू व लम् युहाजिरू मा लकुम् मिंव्वला-यतिहिम् मिन् शैइन् हत्ता युहाजिरू व इनिस्तन्सरूकुम् फ़िद्दीनि फ़-अलैकुमुन्नस्रु इल्ला अ़ला क़ौमिम् बैनकुम् व बैनहुम् मीसाक़ुन्, वल्लाहु बिमा तअ्मलू-न बसीर (72) वल्लज़ी-न क-फ़रू बअ्ज़ुहुम् औलिया-उ बअ्ज़िन्, इल्ला तफ़्अ़लूहु तकुन् फ़ित्नतुन् फ़िल्अर्ज़ि व फ़सादुन् कबीर (73) वल्लज़ी-न

जो लोग ईमान लाये और घर छोड़ा और लड़े अपने माल और जान से अल्लाह की राह में, और जिन लोगों ने जगह दी और मदद की वे एक दूसरे के रफ़ीक़ (साथी) हैं, और जो ईमान लाये और घर नहीं छोड़ा तुमको उनके साथ (दोस्ती) से कुछ काम नहीं जब तक वे घर न छोड़ आयें, और अगर वे तुमसे मदद चाहें दीन में तो तुमको लाज़िम है उनकी मदद करनी, मगर मुक़ाबले में उन लोगों के कि उनमें और तुममें अ़हद हो, और अल्लाह जो तुम करते हो उसको देखता है। (72) और जो लोग काफ़िर हैं वे एक-दूसरे के रफ़ीक़ (साथी) हैं, अगर तुम यूँ न करोगे तो फ़ितना फैलेगा मुल्क में और बड़ी ख़राबी होगी। (73) और जो लोग ईमान

आमनू व हाजरू व जाहदू फ़ी सबीलिल्लाहि वल्लज़ी-न आवव्- व न-सरू उलाइ-क हुमुल्-मुअ्मिनू-न हक़्क़न्, लहुम् मग़्फ़ि-रतुंव्-व रिज़्क़ुन् करीम (74) वल्लज़ी-न आमनू मिम्-बअ्दु व हाजरू व जाहदू म-अ़कुम् फ़-उलाइ-क मिन्कुम्, व उलुल्-अरहामि बअ्ज़ुहुम् औला बिबअ्ज़िन् फ़ी किताबिल्लहि, इन्नल्ला-ह बिकुल्लि शैइन् अ़लीम (75) ✿ ❖	लाये और अपने घर छोड़े और लड़े अल्लाह की राह में और जिन लोगों ने उनको जगह दी और उनकी मदद की वही हैं सच्चे मुसलमान, उनके लिये बख़्शिश है और रोज़ी इ़ज़्ज़त की। (74) और जो ईमान लाये उसके बाद और घर छोड़ आये और लड़े तुम्हारे साथ होकर सो वे लोग भी तुम्हीं में हैं, और रिश्तेदार आपस में हक़दार ज़्यादा हैं एक दूसरे के अल्लाह के हुक्म में, तहक़ीक़ कि अल्लाह हर चीज़ से ख़बरदार है। (75) ✿ ❖

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने हिजरत भी की और अपने माल और जान से अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी किया (ये सब चीज़ें हिजरत के साथ जुड़ी हुई हैं, मीरास के हुक्म का इन पर मदार नहीं, और इससे मुराद वे हज़रात हैं जिन्होंने मदीना के लिये हिजरत की), और जिन लोगों ने (उन मुहाजिरों को) रहने को जगह दी और (उनकी) मदद की (और इससे मदीना के अन्सार हज़रात मुराद हैं) ये (दोनों क़िस्म के) लोग आपस में एक-दूसरे के वारिस होंगे। और जो लोग ईमान तो लाये और हिजरत नहीं की, तुम्हारा (यानी मुहाजिरों का) उनसे मीरास का कोई ताल्लुक़ नहीं, (न ये उनके वारिस न वे इनके) जब तक कि वे हिजरत न करें (और जब हिजरत कर लें फिर वे भी इसी हुक्म में दाख़िल हो जायेंगे)। और (अगरचे उनसे तुम्हारा वारिस होने का ताल्लुक़ न हो लेकिन) अगर वे तुमसे दीन के काम (यानी काफ़िरों के साथ जंग) में मदद चाहें तो तुम्हारे ज़िम्मे (उनकी) मदद करना (वाजिब) है, मगर उस क़ौम के मुक़ाबले में (नहीं) कि तुम में और उनमें आपस में (सुलह का) अ़हद हो, और अल्लाह तआ़ला तुम्हारे सब कामों को देखते हैं (पस उनके मुक़र्रर किये हुए अहकाम में ख़लल डालकर अल्लाह की नाराज़ी का पात्र मत बनना)।

और (जिस तरह आपस में तुम में वारिस होने का ताल्लुक़ है इसी तरह) जो लोग काफ़िर हैं वे आपस में एक-दूसरे के वारिस हैं (न तुम उनके वारिस न वे तुम्हारे वारिस), अगर इस (ऊपर ज़िक्र हुए हुक्म) पर अ़मल न करोगे (बल्कि बावजूद दीन में एक-दूसरे के मुख़ालिफ़ होने के सिर्फ़ रिश्तेदारी की बिना पर मोमिन व काफ़िर में वारिस होने का ताल्लुक़ क़ायम रखोगे) तो

दुनिया में बड़ा फ़ितना और बड़ा फ़साद फैलेगा (क्योंकि विरासत का सिलसिला होने से सब एक जमाअ़त समझी जायेगी और बिना अलग जमाअ़त हुए इस्लाम को क़ुव्वत व शौकत हासिल नहीं हो सकती, और इस्लाम का कमज़ोर रहना दुनिया में पूरी तरह फ़ितना व फ़साद फैलने और बाक़ी रहने का कारण है जैसा कि ज़ाहिर है) और (मुहाजिरीन व अन्सार के बीच वारिस बनने के इस हुक्म में हर चन्द कि सब मुहाजिरीन बराबर हैं चाहे हुज़ूरे पाक के ज़माने में उन्होंने हिजरत की हो या बाद में, लेकिन फ़ज़ीलत व मर्तबे में आपस में भिन्न हैं, चुनाँचे) जो लोग (पहले) मुसलमान हुए और उन्होंने (नबी की हिजरत के ज़माने में) हिजरत की, और (शुरू ही से) अल्लाह की राह में जिहाद (भी) करते रहे, और जिन लोगों ने (उन हिजरत करने वालों को) अपने यहाँ ठहराया और (उनकी) मदद की, ये लोग (तो) ईमान का पूरा हक़ अदा करने वाले हैं, (क्योंकि उसका हक़ यही है कि उसके क़ुबूल करने में पहले करे) उनके लिये (आख़िरत में बड़ी) मग़फ़िरत और (जन्नत में बड़ी) इज़्ज़त वाली रोज़ी (मुक़र्रर) है। और जो लोग (नबी के हिजरत के ज़माने के) बाद के ज़माने में ईमान लाये और हिजरत की और तुम्हारे साथ जिहाद किया, (यानी काम तो सब किये मगर बाद में) सो ये लोग (अगरचे फ़ज़ीलत में तुम्हारे बराबर नहीं लेकिन फिर भी) तुम्हारी ही गिनती में हैं, (फ़ज़ीलत में तो इस हैसियत से क्योंकि आमाल के फ़र्क़ से मर्तबे में बढ़ोतरी हो जाती है और मीरास के अहकाम में पूरी तरह क्योंकि आमाल की ज़्यादती से शरई अहकाम में फ़र्क़ नहीं होता)। और (इन बाद वाले मुहाजिरीन में) जो लोग (आपस में पहले वाले मुहाजिरीन के) रिश्तेदार हैं (अगरचे फ़ज़ीलत व रुतबे में कम हों लेकिन मीरास के एतिबार से) किताबुल्लाह (यानी शरई हुक्म या मीरास की आयत) में एक-दूसरे (की मीरास) के (दूसरे रिश्तेदारों के मुक़ाबले में) ज़्यादा हक़दार हैं (चाहे ग़ैर-रिश्तेदार फ़ज़ीलत व रुतबे में ज़्यादा हों), बेशक अल्लाह तआ़ला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं (इसलिये हर वक़्त की मस्लेहत के मुनासिब हुक्म मुक़र्रर फ़रमाते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ये सूरः अनफ़ाल की आख़िरी चार आयतें हैं। इनमें असल मक़सूद हिजरत के वो अहकाम हैं जिनका ताल्लुक़ मुहाजिर मुसलमानों की विरासत से है। इसके मुक़ाबले में ग़ैर-मुहाजिर मुसलमान और ग़ैर-मुस्लिमों की विरासत का भी ज़िक्र आया है।

ख़ुलासा इन अहकाम का यह है कि जिन लोगों पर शरई अहकाम आ़यद (लागू) होते हैं वे शुरू में दो क़िस्म पर हैं- मुस्लिम, काफ़िर। फिर मुस्लिम उस वक़्त के लिहाज़ से दो क़िस्म के थे एक मुहाजिर जो मक्का से हिजरत फ़र्ज़ होने पर मदीना तय्यिबा में आकर मुक़ीम हो गये थे। दूसरे ग़ैर-मुहाजिर जो किसी जायज़ उ़ज़्र (माक़ूल मजबूरी) से या किसी दूसरी वजह से मक्का ही में रह गये थे।

आपसी रिश्तेदारी और नज़दीकी इन सब क़िस्म के अफ़राद में पाई जाती थी, क्योंकि इस्लाम के शुरू दौर में अधिकतर ऐसा था कि बेटा मुसलमान है बाप काफ़िर, या बाप मुसलमान

है बेटा काफ़िर। इसी तरह भाई भतीजों और नाने मामूँ वग़ैरह का हाल था। और मुसलमान मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर में रिश्तेदारियाँ होना तो ज़ाहिर ही है।

अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल रहमत और हिक्मत की वजह से मरने वाले इनसान के छोड़े हुए माल का मुस्तहिक़ उसी के क़रीबी अ़ज़ीज़ों, रिश्तेदारों को क़रार दिया है हालाँकि असल हक़ीक़त यह थी कि जिसको जो कुछ दुनिया में मिला वह सब का सब अल्लाह तआ़ला की असली मिल्क था, उसी की तरफ़ से ज़िन्दगी भर इस्तेमाल करने, फ़ायदा उठाने के लिये इनसान को देकर वक़्ती और अस्थायी मालिक बना दिया गया था, इसलिये अ़क़्ल व इन्साफ़ का तक़ाज़ा तो यह था कि हर मरने वाले का तर्का (छोड़ा हुआ माल) अल्लाह तआ़ला की मिल्क की तरफ़ लौट जाता, जिसकी अ़मली सूरत इस्लामी बैतुल-माल में दाख़िल करना था, जिसके ज़रिये अल्लाह तआ़ला की सारी मख़्लूक़ की परवरिश और तरबियत (पालन-पोषण) होती है। मगर ऐसा करने में एक तो हर इनसान के तबई जज़्बात को ठेस लगती जबकि वह जानता कि मेरा माल मेरे बाद न मेरी औलाद को मिलेगा न माँ-बाप और बीवी को। और फिर उसका यह परिणाम भी तबई तौर पर लाज़िमी सा था कि कोई शख़्स अपना माल बढ़ाने और उसको महफ़ूज़ रखने की फ़िक्र न करता, सिर्फ़ अपनी ज़िन्दगी की हद तक आवश्यकतायें जमा रखने से ज़ायद कोई शख़्स मेहनत व कोशिश न करता। और यह ज़ाहिर है कि इसका नतीजा पूरे इनसानों और शहरों के लिये तबाही व बरबादी की सूरत इख़्तियार करता।

इसलिये हक़ तआ़ला शानुहू ने मीरास को इनसान के रिश्तेदारों का हक़ क़रार दे दिया, ख़ास तौर से ऐसे रिश्तेदारों का जिनके फ़ायदे ही के लिये वह अपनी ज़िन्दगी में माल जमा करता और तरह-तरह की मेहनत मशक़्क़त उठाता था।

इसके साथ इस्लाम ने उस अहम मक़सद को भी विरासत की तक़सीम में सामने रखा जिसके लिये इनसान की पैदाईश हुई, यानी अल्लाह तआ़ला की इताअ़त व इबादत। और उसके लिहाज़ से पूरी इनसानी दुनिया को दो अलग-अलग क़ौमें क़रार दे दिया- मोमिन और काफ़िर। क़ुरआन की आयतः

خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَّمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ.

का यही मतलब है।

इसी दो क़ौमी नज़रिये ने नसबी और ख़ानदानी रिश्तों को मीरास की हद तक ख़त्म कर दिया, कि न किसी मुसलमान को किसी काफ़िर रिश्तेदार की मीरास से कोई हिस्सा मिलेगा और न किसी काफ़िर का किसी मुसलमान रिश्तेदार की विरासत में कोई हक़ होगा। पहली दो आयतों में यही मज़मून बयान हुआ है। और यह हुक्म हमेशा के लिये और नाक़ाबिले तब्दील है कि इस्लाम के शुरू ज़माने से लेकर क़ियामत तक यही इस्लाम का उसूले विरासत है।

इसी के साथ एक दूसरा हुक्म मुसलमान मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर दोनों की आपस में विरासत का है। जिसके बारे में पहली आयत में यह बतलाया गया है कि मुसलमान जब तक

मक्का से हिजरत न करे उस वक़्त तक उसका ताल्लुक़ भी हिजरत करने वाले मुसलमानों से विरासत के बारे में कटा हुआ है, न मुहाजिर मुसलमान अपने ग़ैर-मुहाजिर मुसलमान रिश्तेदार का वारिस होगा और न ग़ैर-मुहाजिर किसी मुहाजिर मुसलमान की विरासत में से कोई हिस्सा पायेगा। यह हुक्म ज़ाहिर है कि उस वक़्त तक था जब तक कि मक्का मुकर्रमा फ़तह नहीं हुआ था, मक्का फ़तह होने के बाद तो ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐलान फ़रमा दिया थाः

لا هجرة بعد الفتح.

यानी मक्का फ़तह होने के बाद हिजरत का हुक्म ख़त्म हो गया। और जब हिजरत का हुक्म ही ख़त्म हो गया तो हिजरत न करने वालों से बेताल्लुक़ी का सवाल ख़त्म हो गया।

इसी लिये अक्सर मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया है कि यह हुक्म मक्का फ़तह होने से मन्सूख़ (ख़त्म और निरस्त) हो चुका है और मुहक़्क़िक़ उलेमा के नज़दीक यह हुक्म भी हमेशा के लिये ग़ैर-मन्सूख़ (ख़त्म न होने वाला) है, मगर हालात के ताबे बदला है। जिन हालात में क़ुरआन उतरने के वक़्त यह हुक्म आया था अगर किसी ज़माने में या किसी मुल्क में फिर वैसे ही हालात पैदा हो जायें तो फिर यही हुक्म जारी हो जायेगा।

वज़ाहत और ख़ुलासा इसका यह है कि मक्का फ़तह होनें से पहले हर मुसलमान मर्द व औरत पर मक्का से हिजरत को लाज़िमी फ़र्ज़ क़रार दिया गया था। इस हुक्म की तामील में सिवाय चन्द गिने-चुने मुसलमानों के सभी मुसलमान हिजरत करके मदीना तय्यिबा आ गये थे और उस वक़्त मक्का से हिजरत न करना इसकी पहचान बन गया था कि वह मुसलमान नहीं, इसलिये उस वक़्त ग़ैर-मुहाजिर का इस्लाम भी संदिग्ध और शक में था, इसलिये मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर की आपसी विरासत को ख़त्म कर दिया गया था।

अब अगर किसी मुल्क में फिर भी ऐसे ही हालात पैदा हो जायें कि वहाँ रहकर इस्लामी फ़राईज़ की अदायेगी बिल्कुल न हो सके तो उस मुल्क से हिजरत करना फिर फ़र्ज़ हो जायेगा और ऐसी हालत में बिना प्रबल उज़्र के हिजरत न करना अगर यक़ीनी तौर पर कुफ़्र की निशानी हो जाये तो फिर भी यही हुक्म आयद होगा कि मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर में आपसी विरासत जारी न रहेगी। इस तक़रीर से यह भी स्पष्ट हो गया कि मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर में विरासत का ताल्लुक़ ख़त्म होने का हुक्म दर हक़ीक़त कोई अलग से और नया हुक्म नहीं बल्कि वह पहला ही हुक्म है जो मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम में विरासत के ख़त्म होने को बयान करता है। फ़र्क़ इतना है कि कुफ़्र की इस पहचान की वजह से विरासत से तो मेहरूम कर दिया गया मगर महज़ इतनी निशानी की वजह से उसको काफ़िर नहीं क़रार दिया, जब तक उससे खुले और स्पष्ट तौर पर कुफ़्र का सुबूत न हो जाये।

और ग़ालिबन इसी मस्लेहत से इस जगह एक और हुक्म ग़ैर-मुहाजिर मुसलमानों का ज़िक्र कर दिया गया है कि अगर वे मुहाजिर मुसलमानों से मदद व सहयोग के तालिब हों तो मुहाजिर

मुसलमानों को उनकी इमदाद करना ज़रूरी है। ताकि यह मालूम हो जाये कि ग़ैर-मुहाजिर मुसलमानों को बिल्कुल काफ़िरों की सफ़ में नहीं रखा बल्कि उनका यह इस्लामी हक़ बाक़ी रखा गया कि ज़रूरत के वक़्त उनकी इमदाद की जाये।

और चूँकि इस आयत का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) एक ख़ास हिजरत है यानी मक्का से मदीना की तरफ़, और ग़ैर-मुहाजिर मुसलमान वही थे जो मक्का में रह गये थे और मक्का के काफ़िरों के घेरे में थे, तो यह ज़ाहिर है कि उनका इमदाद तलब करना उन्हीं मक्का के काफ़िरों के मुक़ाबले में हो सकता था। और जब क़ुरआने करीम ने मुहाजिर मुसलमानों को उनकी इमदाद का हुक्म दे दिया तो बज़ाहिर इससे यह समझा जा सकता था कि हर हाल में और हर क़ौम के मुक़ाबले में उनकी इमदाद करना मुसलमानों पर लाज़िम कर दिया गया है अगरचे वह क़ौम जिसके मुक़ाबले पर उनको इमदाद दरकार है उससे मुसलमानों का कोई जंग बन्दी का समझौता भी हो चुका हो। हालाँकि इस्लामी उसूल में अ़दल व इन्साफ़ और मुआ़हदे व संधि की पाबन्दी एक अहम फ़रीज़ा है। इसलिये इसी आयत में बयान हुए हुक्म से एक सूरत को अलग कर दिया गया कि अगर ग़ैर-मुहाजिर मुसलमान मुहाजिर मुसलमानों से किसी ऐसी क़ौम के मुक़ाबले पर मदद तलब करें जिससे मुसलमानों ने युद्ध न करने का समझौता कर रखा है तो फिर अपने भाई मुसलमानों की इमदाद भी उन काफ़िरों के मुक़ाबले में जायज़ नहीं जिनसे समझौता कर रखा है।

यह है पहली दो आयतों के मज़मून का ख़ुलासा। अब अलफ़ाज़ से इसको मिलाकर देखिये। इरशाद होता है:

إِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجٰهَدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَالَّذِينَ اٰوَوْا وَّنَصَرُوْٓا أُولٰٓئِكَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَآءُ بَعْضٍ. وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَلَمْ يُهَاجِرُوا مَا لَكُمْ مِّنْ وَّلَايَتِهِمْ مِّنْ شَيْءٍ حَتّٰى يُهَاجِرُوا.

यानी वे लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने अल्लाह के लिये अपने वतन और प्यारों व रिश्तेदारों को छोड़ा और अल्लाह की राह में अपने मालों और जानों से जिहाद किया, माल ख़र्च करके हथियार और जंग का सामान ख़रीदा और मैदान-ए-जंग के लिये अपनी जानों को पेश कर दिया। इससे मुराद शुरू के मुहाजिरीन हैं। और वे लोग जिन्होंने रहने को जगह दी और मदद की। इससे मुराद मदीना के अन्सार हैं। इन दोनों फ़रीक़ के बारे में यह इरशाद फ़रमाया कि वे आपस में एक दूसरे के वली हैं। फिर फ़रमाया कि वे लोग जो ईमान तो ले आये मगर हिजरत नहीं की, तुम्हारा उनसे कोई ताल्लुक़ नहीं जब तक वे हिजरत न करें।

इस जगह क़ुरआने करीम ने लफ़्ज़ 'वली' और 'वलायत' इस्तेमाल फ़रमाया है जिसके असली मायने दोस्ती और गहरे ताल्लुक़ के हैं। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु, हसन रह., क़तादा रह., मुजाहिद रह. वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने फ़रमाया कि इस जगह वलायत से मुराद विरासत और वली से मुराद वारिस है, और कुछ हज़रात ने वलायत के लुग़वी मायने यानी दोस्ती और मदद व सहायता ही मुराद लिये हैं।

पहली तफ़सीर के मुताबिक़ आयत का मतलब यह हुआ कि मुसलमान मुहाजिर व अन्सार आपस में एक दूसरे के वारिस होंगे, उनका विरासत का ताल्लुक़ न ग़ैर-मुस्लिम के साथ क़ायम रहेगा न उन मुसलमानों के साथ जिन्होंने हिजरत नहीं की। पहला हुक्म यानी दीन व धर्म के अलग होने की बिना पर विरासत का ताल्लुक़ ख़त्म होना तो हमेशा के लिये और बाक़ी रहा मगर दूसरा हुक्म मक्का फ़तह होने के बाद जबकि हिजरत ही की ज़रूरत न रही तो मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर में विरासत के ताल्लुक़ का ख़त्म होने का हुक्म भी बाक़ी न रहा। इससे कुछ फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने इस पर दलील पकड़ी है कि जिस तरह मज़हब का अलग और भिन्न होना विरासत का ताल्लुक़ टूट जाने और ख़त्म होने का सबब है इसी तरह दारैन (स्थानों और जगहों) का अलग-अलग होना भी विरासत के कट जाने और ख़त्म होने का सबब है, जिसकी तफ़सीली बहस मसाईल की किताबों में बयान हुई है।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَاِنِ اسْتَنْصَرُوْكُمْ فِى الدِّيْنِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ اِلَّا عَلٰى قَوْمٍۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ ۗ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ○

यानी ये लोग जिन्होंने हिजरत नहीं की अगरचे इनसे विरासत का ताल्लुक़ ख़त्म कर दिया गया है मगर वे बहरहाल मुसलमान हैं, अगर वे अपने दीन की हिफ़ाज़त के लिये मुहाजिर मुसलमानों से मदद तलब करें तो उनके ज़िम्मे उनकी इमदाद करना वाजिब है। मगर इसके साथ अ़दल व इन्साफ़ के उसूलों और समझौते व अ़हद की पाबन्दी को हाथ से नहीं जाने देना चाहिये। अगर वे किसी ऐसी क़ौम के मुक़ाबले पर तुम से इमदाद तलब करें जिस क़ौम से तुम्हारा युद्ध न करने का मुआ़हदा व समझौता हो चुका है तो उनके मुक़ाबले में उन मुसलमानों की इमदाद भी जायज़ नहीं।

सुलह हुदैबिया के वक़्त ऐसा ही वाक़िआ़ पेश आया। जिस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मक्का के काफ़िरों से सुलह कर ली और सुलह की शर्तों में यह भी दाख़िल था कि मक्का से जो शख़्स अब मदीना जाये उसको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम वापस कर दें। ऐन इसी मामला-ए-सुलह के वक़्त अबू जन्दल रज़ियल्लाहु अ़न्हु जिनको मक्का के काफ़िरों ने क़ैद करके तरह-तरह की तकलीफ़ों में डाला हुआ था, किसी तरह हाज़िरे ख़िदमत हो गये और अपने ऊपर हुए ज़ुल्मों का इज़हार करके रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मदद के तालिब हुए। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो रहमते आ़लम बनकर आये थे एक मज़लूम मुसलमान की फ़रियाद से कितने मुतास्सिर हुए होंगे इसका अन्दाज़ा करना भी हर शख़्स के लिये आसान नहीं, मगर इस मुतास्सिर होने के बावजूद उक्त आयत के हुक्म के मुताबिक़ उनकी इमदाद करने से उज़्र फ़रमाकर वापस कर दिया।

उनकी यह वापसी सभी मुसलमानों के लिये बुरी तरह दिल को दुखाने वाली थी मगर सरवरे कायनात सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के हुक्म के मातहत गोया इसको देख रहे थे कि अब इन ज़ुल्मों और अत्याचारों की उम्र ज़्यादा नहीं रही, और चन्द दिन के सब्र का सवाब अबू

जन्दल को और मिलना है, उसके बाद बहुत जल्द मक्का फ़तह होकर ये सारे क़िस्से ख़त्म होने वाले हैं। बहरहाल उस वक़्त क़ुरआनी हुक्म के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने समझौते की पाबन्दी को उनकी व्यक्तिगत मुसीबत पर तरजीह दी। यही इस्लामी शरीअ़त की वह विशेष ख़ूबी है जिसने उनको दुनिया में फ़तह व इज़्ज़त और आख़िरत की कामयाबी का मालिक बनाया है। वरना आ़म तौर पर दुनिया की हुकूमतें समझौतों का एक खेल खेलती हैं जिसके ज़रिये कमज़ोर को दबाना और ताक़तवर को फ़रेब देना मक़सद होता है। जिस वक़्त अपनी ज़रा सी मस्लेहत सामने होती है तो सौ तरह की बातें बनाकर समझौते को ख़त्म कर डालते हैं और इल्ज़ाम दूसरों के सर लगाने की फ़िक्र करते हैं।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ.

यानी काफ़िर लोग आपस में एक दूसरे के वली हैं। लफ़्ज़ वली जैसा कि पहले बयान हो चुका है एक आ़म मफ़्हूम रखता है जिसमें विरासत भी दाख़िल है और मामलात की वलायत व सरपरस्ती भी। इसी लिये इस आयत से मालूम हुआ कि काफ़िर लोग आपस में एक दूसरे के वारिस समझे जायेंगे, और विरासत के बंटवारे का जो क़ानून उनके अपने मज़हब में राईज है उनकी विरासत के मामले में उसी क़ानून को नाफ़िज़ (लागू) किया जायेगा। साथ ही उनके यतीम बच्चों का वली लड़कियों के निकाह का वली भी उन्हीं में से होगा जिसका ख़ुलासा यह है कि ख़ानदानी और शादी-विवाह के मसाईल में ग़ैर-मुस्लिमों का अपना मज़हबी क़ानून इस्लामी हुकूमत में सुरक्षित रखा जायेगा।

आयत के आख़िर में इरशाद हैः

اِلَّا تَفْعَلُوْهُ تَكُنْ فِتْنَةٌ فِى الْاَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيْرٌ ۝

यानी अगर तुमने ऐसा न किया तो पूरी ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद फैल जायेगा।

इस जुमले का ताल्लुक़ उन तमाम अहकाम के साथ है जो इससे पहले ज़िक्र किये गये हैं, मसलन यह कि मुहाजिरीन और अन्सार को आपस में एक दूसरे का वली (वारिस व सरपरस्त) होना चाहिये, जिसमें आपसी इमदाद व सहायता भी दाख़िल है और विरासत भी। दूसरे यह कि उस वक़्त के मुहाजिर और ग़ैर-मुहाजिर मुसलमानों में आपस में विरासत का ताल्लुक़ न रहना चाहिये, मगर इमदाद व सहायता का ताल्लुक़ अपनी शर्तों के साथ बाक़ी रहना चाहिये। तीसरे यह कि काफ़िर आपस में एक दूसरे के वली हैं, उनके वलायत और विरासत के क़ानून में कोई दख़ल अन्दाज़ी मुसलमानों को नहीं करनी चाहिये।

अगर इन अहकाम पर अ़मल न किया गया तो ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद फैल जायेगा। यह तंबीह ग़ालिबन इसलिये की गयी कि जो अहकाम इस जगह बयान हुए हैं वो अ़दल व इन्साफ़ और आ़म अमन के लिये बुनियादी उसूल की हैसियत रखते हैं। क्योंकि इन आयतों ने यह वाज़ेह कर दिया कि आपसी इमदाद व सहयोग और विरासत का ताल्लुक़ जैसे रिश्तेदारी पर

आधारित है ऐसे ही इसमें मज़हबी और दीनी रिश्ता भी क़ाबिले लिहाज़ है। बल्कि नसबी रिश्ते पर दीनी रिश्ते को तरजीह हासिल है। इसी वजह से काफ़िर मुसलमान का और मुसलमान काफ़िर का वारिस नहीं हो सकता, अगरचे वे आपस में नसबी रिश्ते से बाप और बेटे या भाई भाई हों। इसके साथ ही मज़हबी भेदभाव और कट्टरता तथा जाहिली दौर की बेजा तरफ़दारी की रोकथाम करने के लिये यह भी हिदायत दे दी गयी है कि मज़हबी रिश्ता अगरचे इतना ताक़तवर और मज़बूत है मगर समझौते की पाबन्दी इससे भी ज़्यादा अहम, पहले और क़ाबिले तरजीह है। मज़हबी तास्सुब के जोश में समझौते का उल्लंघन करना जायज़ नहीं। इसी तरह यह भी हिदायत दे दी गयी कि काफ़िर आपस में एक दूसरे के वली और वारिस हैं, उनकी व्यक्तिगत वलायत व विरासत में दख़ल-अन्दाज़ी न की जाये। देखने को तो ये चन्द ऊपर के और आंशिक अहकाम हैं मगर दर हक़ीक़त विश्व शांति के लिये अ़दल व इन्साफ़ के बेहतरीन और मुकम्मल बुनियादी उसूल हैं। इसी लिये इस जगह इन अहकाम को बयान फ़रमाने के बाद ऐसे अलफ़ाज़ से तंबीह फ़रमाई गयी जो आ़म तौर पर दूसरे अहकाम के लिये नहीं की गयी, कि अगर तुमने इन अहकाम पर अ़मल न किया तो ज़मीन में फ़ितना और बड़ा फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) फैल जायेगा। इन अलफ़ाज़ में भी इसकी तरफ़ इशारा है कि ये अहकाम फ़ितने व फ़साद को रोकने में ख़ास दख़ल और असर रखते हैं।

तीसरी आयत में मक्का से हिजरत करने वाले सहाबा और उनकी मदद करने वाले मदीना के अन्सार की तारीफ़ व प्रशंसा और उनके सच्चा मुसलमान होने की गवाही और उनसे मग़फ़िरत और इ़ज़्ज़त वाली रोज़ी का वायदा बयान हुआ है। इरशाद फ़रमायाः

أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا.

यानी यही लोग सच्चे पक्के मुसलमान हैं। इसमें इशारा इस तरफ़ है कि हिजरत न करने वाले हज़रात भी अगरचे मुसलमान हैं मगर उनका इस्लाम कामिल भी नहीं और यक़ीनी भी नहीं, क्योंकि यह संभावना व गुमान और शुब्हा भी है कि वास्तव में मुनाफ़िक़ हों, बज़ाहिर इस्लाम का दावा रखते हों। इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

لَهُمْ مَغْفِرَةٌ.

यानी उनके लिये तयशुदा है मग़फ़िरत। जैसा कि सही हदीसों में हैः

اَلْإِسْلَامُ يَهْدِمُ مَا كَانَ قَبْلَهٗ وَالْهِجْرَةُ تَهْدِمُ مَا كَانَ قَبْلَهَا.

यानी मुसलमान हो जाना पिछले सब गुनाहों के अंबार को ढहा देता है, इसी तरह हिजरत करना पिछले सब गुनाहों को ख़त्म कर देता है।

चौथी आयत में मुहाजिरीन के विभिन्न तब्क़ों का हुक्म बयान फ़रमाया है कि अगरचे उनमें कुछ लोग शुरू के हिजरत करने वाले हैं जिन्होंने सुलह हुदैबिया से पहले हिजरत की और कुछ दूसरे दर्जे के मुहाजिर हैं जिन्होंने सुलह हुदैबिया के बाद हिजरत की, और इसकी वजह से उनके आख़िरत के दर्जों में फ़र्क़ होगा मगर दुनिया के अहकाम में उनका हुक्म भी वही है जो शुरू के

हिजरत करने वाले हज़रात का है, कि वे एक दूसरे के वारिस हैं। इसी लिये मुहाजिरीन को ख़िताब करके इरशाद फ़रमायाः

فَاُولٰٓئِكَ مِنْكُمْ.

यानी ये दूसरे दर्जे के मुहाजिरीन भी तुम्हारे ही दर्जे में शामिल हैं, इसी लिये विरासत के अहकाम में भी उनका हुक्म आम मुहाजिरीन की तरह है।

यह सूरः अनफ़ाल की बिल्कुल आख़िरी आयत है, इसके आख़िर में मीरास के क़ानून का एक मुकम्मल क़ानून बयान फ़रमाया गया है जिसके ज़रिये उस वक़्ती और अस्थायी हुक्म को रद्द और निरस्त कर दिया गया है जो हिजरत के शुरू के दौर में मुहाजिरीन और अन्सार के बीच भाईचारे के ज़रिये एक दूसरे का वारिस बनने के मुताल्लिक़ जारी हुआ थाः

وَاُولُوا الْاَرْحَامِ بَعْضُهُمْ اَوْلٰى بِبَعْضٍ فِىْ كِتٰبِ اللّٰهِ.

लफ़्ज़ 'उलू' अरबी भाषा में साहिब के मायने में आता है, जिसका तर्जुमा उर्दू में वाले से किया जाता है। 'उलुल-अक़्ल' अक़्ल वाले, 'उलुल-अम्र' अम्र वाले, इसलिये 'उलुल-अरहाम' के मायने हुए 'अरहाम वाले'। अरहाम रहम की जमा (बहुवचन) है, जो असल में उस अंग का नाम है जिसके अन्दर बच्चे की रचना अमल में आती है, और चूँकि रिश्तेदारी का ताल्लुक़ रहम की शिर्कत से क़ायम होता है इसलिये उलुल-अरहाम रिश्तेदारों के मायने में इस्तेमाल होता है।

आयत के मायने यह हैं कि अगरचे एक उमूमी वलायत (रिश्ता) सब मुसलमानों को आपस में एक दूसरे के साथ हासिल है, जिसके सबब ज़रूरत के वक़्त एक दूसरे की इमदाद व सहयोग भी वाजिब होता है, और एक दूसरे के वारिस भी होते हैं, लेकिन जो मुसलमान आपस में क़राबत और रिश्ते का ताल्लुक़ रखते हों वे दूसरे मुसलमानों से पहले हैं 'फ़ी किताबिल्लाहि' के मायने इस जगह 'फ़ी हुक्मिल्लाहि' के हैं। यानी अल्लाह तआ़ला ने अपने ख़ास हुक्म से यह क़ानून बना दिया है।

इस आयत ने यह ज़ाब्ता (उसूल और क़ायदा) बता दिया कि विरासत का बंटवारा रिश्तेदारी के मेयार पर होना चाहिये। और लफ़्ज़ उलुल-अरहाम क़रीबी और रिश्तेदारों के लिये आम बोला जाता है, उनमें से ख़ास-ख़ास रिश्तेदारों के हिस्से तो ख़ुद क़ुरआने करीम ने सूरः निसा में मुतैयन फ़रमा दिये, जिनको इल्मे मीरास की परिभाषा में अहल-ए-फ़राईज़ या ज़विल-फ़ुरूज़ कहा जाता है। उनको देने के बाद जो माल बचे वह इस आयत के एतिबार से दूसरे रिश्तेदारों में तक़सीम होना चाहिये। और यह भी ज़ाहिर है कि सब रिश्तेदारों में किसी माल का तक़सीम करना किसी की ताक़त में नहीं, क्योंकि दूर की रिश्तेदारी तो बिला शुब्हा सारी दुनिया के इनसानों के बीच मौजूद है क्योंकि सब के सब एक ही बाप और माँ यानी आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम से पैदा हुए हैं। इसलिये रिश्तेदारों में तक़सीम करने की अ़मली सूरत यही हो सकती है कि क़रीबी रिश्तेदारों को दूर वालों पर मुक़द्दम (आगे और पहले) रखकर क़रीब के सामने दूर वाले को मेहरूम किया जाये। जिसका तफ़सीली बयान रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की

हदीसों में इस तरह मौजूद है कि ज़विल-फ़रूज़ के हिस्से देने के बाद जो कुछ बचे वह मरने वाले के अ़सबात यानी बाप-दादा की तरफ़ वाले रिश्तेदारों को दर्जा-ब-दर्जा दिया जाये, यानी क़रीबी अ़सबा को दूर वाले पर आगे रखकर क़रीब के सामने दूर वाले को मेहरूम किया जाये।

और अगर अ़सबात (बाप-दादा की तरफ़ वाले रिश्तेदारों) में से कोई भी ज़िन्दा मौजूद नहीं तो फिर बाक़ी रिश्तेदारों में तक़सीम किया जाये।

अ़सबात के अ़लावा जो दूसरे रिश्तेदार होते हैं इल्मे मीरास व फ़राईज़ की ख़ास परिभाषा में लफ़्ज़ ज़विल-अरहाम उन्हीं के लिये विशेष कर दिया गया है। लेकिन यह परिभाषा बाद में मुक़र्रर की गयी है, क़ुरआने करीम में 'उलुल-अरहाम' का लफ़्ज़ लुग़वी मायने के मुताबिक़ तमाम रिश्तेदारों को शामिल है, जिसमें ज़विल-फ़ुरूज़, अ़सबात और ज़विल-अरहाम संक्षिप्त रूप से सब दाख़िल हैं।

फिर इसकी कुछ तफ़सील सूरः निसा की आयतों में आ गयी, जिनमें ख़ास-ख़ास रिश्तेदारों के हिस्से हक़ तआ़ला ने ख़ुद मुक़र्रर फ़रमा दिये, जिनको मीरास की इस्तिलाह में ज़विल-फ़ुरूज़ कहते हैं, और बाक़ी के मुताल्लिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

الحقوا الفرائض باهلها فما بقى فهو لاولى رجل ذكر.

यानी जिनके हिस्से क़ुरआन ने तय कर दिये हैं वो पूरे उनको देने के बाद जो कुछ बचे वो उन लोगों को दिये जायें जो मर्द हों और मरने वाले से ज़्यादा क़रीब हों। (बुख़ारी शरीफ़)

इनको मीरास की परिभाषा में अ़सबात कहा जाता है। अगर किसी मय्यित के अ़सबात में कोई मौजूद न हो तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशाद के मुताबिक़ फिर दूसरे रिश्तेदारों को दिया जाता है जिनको इस्तिलाह में ज़विल-अरहाम कहते हैं जैसे मामूँ ख़ाला वग़ैरह।

सूरः अनफ़ाल की इस आख़िरी आयत के आख़िरी जुमले ने इस्लामी विरासत का वह क़ानून मन्सूख़ (रद्द और ख़त्म) कर दिया जो इससे पहली आयतों में बयान हुआ है। जिसकी वज़ाहत के मुताबिक़ मुहाजिरीन व अन्सार में आपस में विरासत जारी होती थी, चाहे उनके बीच कोई रिश्तेदारी न हो। क्योंकि यह हुक्म एक वक़्ती और आपातकालीन हुक्म है जो हिजरत के शुरू के दौर में दिया गया था।

सूरः अनफ़ाल ख़त्म हो गयी, अल्लाह तआ़ला हम सब को इसके समझने और फिर इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमायें।

अल्लाह की मदद व तौफ़ीक़ से इस सूरत की तफ़सीर 28 जुमादल-उख़रा सन् 1381 हिजरी को जुमेरात की रात को पूरी हुई। और इस पर नज़रे-सानी जुमे के दिन 19 जुमादल-ऊला सन् 1390 हिजरी को पूरी हुई। अल्लाह तआ़ला क़ुबूल फ़रमायें। तमाम तारीफ़ें अल्लाह ही के लिये हैं और उसी की मदद और तौफ़ीक़ से यह ख़िदमत अन्जाम पाई और आगे भी उसी की मदद व तौफ़ीक़ दरकार है। (मुहम्मद शफ़ी उफ़ि-य अ़न्हु)

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूरः अनफ़ाल की तफ़सीर पूरी हुई)

* सूरः तौबा *

यह सूरत मदनी है। इसमें 129 आयतें
और 16 रुकूअ़ हैं।

सूरः तौबा

اٰيَاتُهَا (١٢٩) سُوْرَةُ التَّوْبَةِ مَدَنِيَّةٌ (١١٣) رُكُوْعَاتُهَا (١٦)

بَرَآءَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ فَسِيْحُوْا فِي الْاَرْضِ اَرْبَعَةَ
اَشْهُرٍ وَّاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكٰفِرِيْنَ ۝ وَاَذَانٌ مِّنَ اللّٰهِ وَ
رَسُوْلِهٖٓ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ اَنَّ اللّٰهَ بَرِيْٓءٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۙ وَرَسُوْلُهٗ ۭ فَاِنْ تُبْتُمْ
فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۭ وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِعَذَابٍ
اَلِيْمٍ ۝ اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوْكُمْ شَيْـًٔا وَّلَمْ يُظَاهِرُوْا عَلَيْكُمْ
اَحَدًا فَاَتِمُّوْٓا اِلَيْهِمْ عَهْدَهُمْ اِلٰى مُدَّتِهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝ فَاِذَا انْسَلَخَ الْاَشْهُرُ
الْحُرُمُ فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِيْنَ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوْهُمْ وَخُذُوْهُمْ وَاحْصُرُوْهُمْ وَاقْعُدُوْا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ ۚ
فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَخَلُّوْا سَبِيْلَهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

सूरः तौबा मदीना में नाज़िल हुई। इसमें 129 आयतें और 16 रुकूअ़ हैं।

बराअतुम्-मिनल्लाहि व रसूलिही इलल्लज़ी-न आ़हत्तुम् मिनल् मुश्रिकीन (1) फ़सीहू फ़िल्अर्ज़ि अर्ब-अ़-त अश्हुरिंव्वअ़्लमू अन्नकुम् ग़ैरु मुअ़्जिज़िल्लाहि व अन्नल्ला-ह मुख़्ज़िल्-काफ़िरीन (2) व अज़ानुम् मिनल्लाहि व रसूलिही इलन्नासि यौमल्-हज्जिल्-अक्बरि अन्नल्ला-ह बरीउम् मिनल्-मुश्रिकी-न व रसूलुहू, फ़-इन् तुब्तुम् फ़हु-व ख़ैरुल्लकुम् व	साफ़ जवाब है अल्लाह की तरफ़ से और उसके रसूल की, उन मुश्रिकों को जिनसे तुम्हारा अ़हद हुआ था। (1) सो फिर लो इस मुल्क में चार महीने और जान लो कि तुम न थका सकोगे अल्लाह को और यह कि अल्लाह रुस्वा करने वाला है काफ़िरों को। (2) और सुना देना है अल्लाह की तरफ़ से और उसके रसूल की, लोगों को दिन बड़े हज के कि अल्लाह अलग है मुश्रिकों से और उसका रसूल, सो अगर तुम तौबा करो तो तुम्हारे लिये बेहतर है, और अगर न मानो तो

इन् तवल्लैतुम् फ़अ्लमू अन्नकुम् ग़ैरु मुअ्जिज़िल्लाहि, व बश्शिरिल्-लज़ी-न क-फ़रू बि-अ़ज़ाबिन् अलीम (3) इल्लल्लज़ी-न आहत्तुम् मिनल्-मुश्रिकी-न सुम्-म लम् यन्क़ुसूकुम् शैअंव्-व लम् युज़ाहिरू अ़लैकुम् अ-हदन् फ़-अतिम्मू इलैहिम् अ़ह्-दहुम् इला मुद्दतिहिम्, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल्-मुत्तक़ीन (4) फ़-इज़न्स-लख़ल् अश्हुरुल्-हुरुमु फ़क़्तुलुल्-मुश्रिकी-न हैसु वजत्तुमूहुम् व ख़ुज़ूहुम् वह्सुरूहुम् वक़्अुदू लहुम् कुल्-ल मर्सदिन् फ़-इन् ताबू व अक़ामुस्सला-त व आतवुज़्ज़का-त फ़-ख़ल्लू सबीलहुम्, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (5)	जान लो कि तुम हरगिज़ न थका सकोगे अल्लाह को, और ख़ुशख़बरी सुना दे काफ़िरों को दर्दनाक अ़ज़ाब की। (3) मगर जिन मुश्रिकों से तुमने अ़हद किया था फिर उन्होंने कुछ क़सूर न किया तुम्हारे साथ और मदद न की तुम्हारे मुक़ाबले में किसी की, सो उनसे पूरा कर दो उनका अ़हद उनके वायदे तक, बेशक अल्लाह को पसन्द हैं एहतियात वाले। (4) फिर जब गुज़र जायें महीने पनाह के तो मारो मुश्रिकों को जहाँ पाओ और पकड़ो और घेरो और बैठो हर जगह उनकी ताक में, फिर अगर वे तौबा करें और क़ायम रखें नमाज़ और दिया करें ज़कात तो छोड़ दो उनका रस्ता, बेशक अल्लाह है बख़्शने वाला मेहरबान। (5)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अल्लाह की तरफ़ से और उसके रसूल की तरफ़ से, उन मुश्रिकों (के अ़हद) से अलग होना है जिनसे तुमने (बिना मुद्दत तय किये हुए) अ़हद कर रखा था। (यह तीसरी जमाअ़त का हुक्म है, इन जमाअ़तों की तफ़सील मआ़रिफ़ व मसाईल में आ रही है) और (चौथी जमाअ़त यानी जिनसे कुछ भी अ़हद न था उनका भी हुक्म इससे और अच्छी तरह समझ में आ गया, कि जब समझौते वालों से अमान का हुक्म ख़त्म कर दिया तो जिनसे कोई समझौता नहीं हुआ उनसे तो कोई गुमान व ख़्याल अमन का पहले से भी नहीं है) सो (इन दोनों जमाअ़तों को इत्तिला कर दो कि) तुम लोग इस सरज़मीन में चार महीने चल-फिर लो, (इजाज़त है ताकि अपना रहने का ठिकाना और पनाह ढूँढ लो) और (इसके साथ) (यह भी) जान रखो कि (इस मोहलत की बदौलत सिर्फ़ मुसलमानों के हाथ डालने से बच सकते हो लेकिन) तुम ख़ुदा तआ़ला को आ़जिज़ नहीं कर सकते (कि उसके क़ब्ज़े से निकल सको), और यह (भी जान रखो) कि बेशक अल्लाह तआ़ला (आख़िरत में) काफ़िरों को रुस्वा करेंगे (यानी अ़ज़ाब देंगे, तुम्हारा चलना और सफ़र

करना उससे नहीं बचा सकता, और दुनिया में क़त्ल हो जाने का अन्देशा अलग रहा। इसमें लुभाना है तौबा के लिये)।

और (पहली दूसरी जमाअ़त का हुक्म यह है कि) अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से बड़े हज की तारीख़ों में आ़म लोगों के सामने ऐलान किया जाता है कि अल्लाह तआ़ला और उसका रसूल दोनों (बिना किसी मियाद के तय किये अभी) अलग होते हैं उन मुश्रिकों (को अमन देने) से (जिन्होंने ख़ुद अ़हद को तोड़ा। इससे पहली जमाअ़त मुराद है, मगर) फिर (भी उनसे कहा जाता है कि) अगर तुम (कुफ़्र से) तौबा कर लो तो तुम्हारे लिये (दोनों जहान में) बेहतर है, (दुनिया में तो इसलिये कि तुम्हारे अ़हद तोड़ने का जुर्म माफ़ हो जायेगा और क़त्ल से बच जाओगे और आख़िरत में ज़ाहिर है कि निजात होगी) और अगर तुमने (इस्लाम से) मुँह मोड़ा तो यह समझ लो कि तुम ख़ुदा तआ़ला को आ़जिज़ नहीं कर सकोगे (कि कहीं निकल कर भाग जाओ)। और (आगे ख़ुदा को आ़जिज़ न कर सकने की तफ़सीर है कि) उन काफ़िरों को एक दर्दनाक सज़ा की ख़बर सुना दीजिये (जो आख़िरत में ज़ाहिर होगी। यह तो यक़ीनी है और दुनिया की सज़ा का अन्देशा व संभावना अलग। मतलब यह हुआ कि अगर मुँह मोड़ोगे तो सज़ा भुगतोगे) हाँ मगर वे मुश्रिक लोग (इससे अलग हैं) जिनसे तुमने अ़हद लिया, फिर उन्होंने (अ़हद पूरा करने में) तुम्हारे साथ ज़रा कमी नहीं की और न तुम्हारे मुक़ाबले में (तुम्हारे) किसी (दुश्मन) की मदद की (इससे मुराद दूसरे नम्बर की जमाअ़त है) सो उनसे किये हुए मुआ़हदे को उनकी (तयशुदा) मुद्दत तक पूरा करो, (और अ़हद के ख़िलाफ़ न करो, क्योंकि) वाक़ई अल्लाह तआ़ला (अ़हद के ख़िलाफ़ करने से) एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं (पस तुम एहतियात रखोगे तो तुम भी अल्लाह के पसन्दीदा हो जाओगे)।

(आगे पहली जमाअ़त के हुक्म का आख़िरी हिस्सा है कि जब उनको कोई मोहलत नहीं तो अगरचे उनसे भी जंग की गुंजाईश हो सकती थी लेकिन अभी मुहर्रम के ख़त्म तक सम्मानित महीने हैं जिनमें जंग करना मना है) सो (उनके गुज़रने का इन्तिज़ार कर लो और) जब सम्मानित महीने गुज़र जाएँ तो (उस वक़्त) इन मुश्रिकों (यानी पहली जमाअ़त वालों) को जहाँ पाओ वहाँ मारो, और पकड़ो और बाँधो, और दाव-घात के मौक़ों में उनकी ताक में बैठो (यानी लड़ाई में जो-जो होता है सब की इजाज़त है) फिर अगर वे (कुफ़्र से) तौबा कर लें और (इस्लाम के काम करने लगें यानी मसलन) नमाज़ पढ़ने लगें और ज़कात देने लगें तो उनका रास्ता छोड़ दो (यानी उनको क़त्ल न करो और बन्दी मत बनाओ, क्योंकि) वाक़ई अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं (इस वास्ते ऐसे शख़्स का कुफ़्र बख़्श दिया और उसकी जान बचा ली, और यही हुक्म बाक़ी की जमाअ़तों का होगा, उनकी मियादें गुज़रने के बाद)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः बराअत शुरू हो रही है जिसको सूरः तौबा भी कहा जाता है। बराअत इसलिये कहा जाता है कि इसमें काफ़िरों से बराअत (बरी होने) का ज़िक्र है और तौबा इसलिये कि इसमें

मुसलमानों की तौबा क़ुबूल होने का बयान है। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस सूरत की एक ख़ुसूसियत (विशेषता) यह है कि क़ुरआन के मुस्हफ़ों में इस सूरत के शुरू में बिस्मिल्लाह नहीं लिखी जाती, इसके अ़लावा तमाम क़ुरआनी सूरतों के शुरू में बिस्मिल्लाह लिखी जाती है। इसकी वजह मालूम करने से पहले यह जान लेना चाहिये कि क़ुरआन मजीद तेईस साल की मुद्दत में थोड़ा-थोड़ा नाज़िल हुआ है, एक ही सूरत की आयतें विभिन्न वक़्तों में नाज़िल हुईं। जिब्रीले अमीन जब वही लेकर आते तो साथ ही अल्लाह के हुक्म से यह भी बतलाते थे कि यह आयत फ़ुलाँ सूरत में फ़ुलाँ आयत के बाद रखी जाये। उसी के मुताबिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम वही लिखने वालों को हिदायत फ़रमाकर लिखवा देते थे।

और जब एक सूरत ख़त्म होकर दूसरी सूरत शुरू होती थी तो सूरत शुरू होने से पहले बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम नाज़िल होती थी जिससे यह समझ लिया जाता था कि पहली सूरत ख़त्म हो गयी, अब दूसरी सूरत शुरू हो रही है। क़ुरआन मजीद की तमाम सूरतों में ऐसा ही हुआ। सूरः तौबा नाज़िल होने के एतिबार से बिल्कुल आख़िरी सूरतों में से है। इसके शुरू में आ़म दस्तूर के मुताबिक़ न बिस्मिल्लाह नाज़िल हुई और न रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वही लिखने वालों को इसकी हिदायत फ़रमाई। इसी हाल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी।

जामे-ए-क़ुरआन (यानी क़ुरआन को मौजूदा तरतीब में जमा करने और इसकी प्रतियाँ तैयार कराकर अ़रब और अ़रब से बाहर इसको फैलाने वाले) हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अपनी ख़िलाफ़त के दौर में जब क़ुरआन मजीद को किताबी सूरत में तरतीब दिया तो सब सूरतों के ख़िलाफ़ सूरः तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न थी, इसलिये यह शुब्हा हो गया कि शायद यह कोई मुस्तक़िल सूरत न हो बल्कि किसी दूसरी सूरत का हिस्सा हो। अब इसकी फ़िक्र हुई कि अगर यह किसी दूसरी सूरत का हिस्सा हो तो वह कौनसी सूरत हो सकती है। मज़ामीन के एतिबार से सूरः अनफ़ाल इसके मुनासिब मालूम हुई।

और हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से एक रिवायत में यह भी नक़ल किया गया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में इन दोनों सूरतों को क़रीनतैन (यानी मिली हुई) कहा जाता था (तफ़सीरे मज़हरी)। इसलिये सूरः अनफ़ाल के बाद इसको रख दिया गया। यह एहतियात तो इसलिये की गयी कि यह दूसरी सूरत का हिस्सा हो तो इसके साथ रहना चाहिये, मगर शुब्हा और संभावना यह भी थी कि यह अलग मुस्तक़िल सूरत हो, इसलिये लिखने में यह सूरत इख़्तियार की गयी कि सूरः अनफ़ाल के ख़त्म पर सूरः तौबा के शुरू से पहले कुछ जगह ख़ाली छोड़ दी गयी जैसे आ़म सूरतों में बिस्मिल्लाह की जगह होती है।

सूरः बराअत या तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखे जाने की यह तहक़ीक़ ख़ुद क़ुरआन के जामे हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु से अबू दाऊद, नसाई, मुस्नद इमाम अहमद, तिर्मिज़ी में क़ुरआन के व्याख्यापक हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के एक सवाल के जवाब

में मन्क़ूल है। इस सवाल में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह भी मालूम किया था कि क़ुरआन की सूरतों की जो तरतीब क़ायम की गयी है कि सबसे पहले बड़ी सूरतें रखी गयीं जिनमें सौ आयतों से ज़्यादा हों जिनको इस्तिलाह में मिऊन कहा जाता है, उसके बाद वो बड़ी सूरतें रखी गयी हैं जिनमें सौ से कम आयतें हैं जिनको मसानी कहा जाता है। उसके बाद छोटी सूरतें रखी गयी हैं जिनको मुफ़स्सलात कहा जाता है। इस तरतीब का भी तक़ाज़ा यह है कि सूरः तौबा को सूरः अनफ़ाल से पहले रखा जाये क्योंकि सूरः तौबा की आयतें सौ से ज़ायद और अनफ़ाल की सौ से कम हैं। शुरू की सात बड़ी सूरतें जिनको "सबअ़-ए-तिवाल' कहा जाता है इसमें भी बजाय अनफ़ाल के सूरः तौबा ही ज़्यादा मुनासिब है। इसके ख़िलाफ़ करने में क्या मस्लेहत है? हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ये सब बातें सही हैं लेकिन क़ुरआन के मामले में एहतियात का तक़ाज़ा वही है जो इख़्तियार किया गया। क्योंकि अगर सूरः तौबा मुस्तक़िल सूरत न हो बल्कि सूरः अनफ़ाल का हिस्सा हो तो यह ज़ाहिर है कि सूरः अनफ़ाल की आयतें पहले नाज़िल हुई हैं और तौबा की उसके बाद। इसलिये उनको अनफ़ाल की आयतों से पहले लाना बग़ैर वही के जायज़ नहीं, और वही में हमें कोई ऐसी हिदायत नहीं मिली, इसलिये अनफ़ाल को पहले और तौबा को बाद में रखा गया।

इस तहक़ीक़ से यह मालूम हो गया कि सूरः तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखने की वजह यह है कि इसका शुब्हा व गुमान है कि सूरः तौबा अ़लैहदा सूरत न हो बल्कि सूरः अनफ़ाल का हिस्सा हो, इस शुब्हे व गुमान पर यहाँ बिस्मिल्लाह लिखना ऐसा ना-दुरुस्त होगा जैसे कोई शख़्स किसी सूरत के बीच में बिस्मिल्लाह लिख दे।

इसी बिना पर फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) हज़रात ने फ़रमाया है कि जो शख़्स ऊपर से सूरः अनफ़ाल की तिलावत करता आया हो और सूरः तौबा शुरू कर रहा हो वह बिस्मिल्लाह न पढ़े, लेकिन जो शख़्स इसी सूरत के शुरू या बीच से अपनी तिलावत शुरू कर रहा है उसको चाहिये कि बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम पढ़कर शुरू करे। कुछ नावाक़िफ़ यह समझते हैं कि सूर तौबा की तिलावत में किसी हाल में बिस्मिल्लाह पढ़ना जायज़ नहीं, यह ग़लत है और इस पर दूसरी ग़लती यह है कि बजाय बिस्मिल्लाह के ये लोग इसके शुरू में "अऊज़ु बिल्लाहि मिनन्नार" पढ़ते हैं जिसका कोई सुबूत हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम से नहीं है।

और हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से जो हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह मन्क़ूल है कि सूरः बराअत के शुरू में बिस्मिल्लाह न लिखने की वजह यह है कि "बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम" अमान है और सूरः बराअत में काफ़िरों के अमान और अ़हद व समझौते को ख़त्म किया गया है, सो यह एक नुक्ता और लतीफ़ा है जो असली सबब के विरुद्ध नहीं। यानी असली सबब तो यही है कि सूरः अनफ़ाल और सूरः तौबा के एक होने के शुब्हे की बिना पर बिस्मिल्लाह नहीं लिखी गयी, फिर इस न लिखे जाने का एक लतीफ़ा यह भी हो

सकता है कि इस सूरत में काफ़िरों से बराअत और अमान का उठा लेना बयान हुआ है जो बिस्मिल्लाह के मुनासिब नहीं इसलिये क़ुदरती तौर पर यहाँ ऐसे असबाब पैदा कर दिये गये कि बिस्मिल्लाह यहाँ न लिखी जाये।

सूरः तौबा की उक्त आयतों को पूरे तौर पर समझने के लिये चन्द वाक़िआत का जानना ज़रूरी है जिनके सबब से ये आयतें नाज़िल हुई हैं, इसलिये पहले उन वाक़िआत की मुख़्तसर तफ़सील लिखी जाती है।

1. पूरी सूरः तौबा में चन्द ग़ज़वात (इस्लामी जिहादों व लड़ाईयों) और उनसे संबन्धित वाक़िआत का और उनके तहत में बहुत से अहकाम व मसाईल का बयान हुआ है। मसलन अरब के तमाम क़बीलों से मुआहदों (समझौतों और संधियों) का ख़त्म कर देना, मक्के का फ़तह होना, ग़ज़वा-ए-हुनैन, ग़ज़वा-ए-तबूक। इन वाक़िआत में मक्के का फ़तह होना सबसे पहले सन् 8 हिजरी में फिर ग़ज़वा-ए-हुनैन उसी साल में फिर ग़ज़वा-ए-तबूक रजब सन् 9 हिजरी में फिर अरब के तमाम क़बीलों से समझौते और मुआहदे ख़त्म करने का ऐलान ज़िलहिज्जा सन् 9 हिजरी में हुआ।

2. मुआहदों और समझौतों को ख़त्म कर देने के मुताल्लिक़ जो मज़ामीन इन आयतों में बयान हुए हैं उनका ख़ुलासा यह है कि सन् 6 हिजरी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उमरे का इरादा फ़रमाया और मक्का के क़ुरैश ने आपको मक्का में दाख़िल न होने दिया और हुदैबिया के स्थान में उनसे सुलह हुई। इस सुलह की मियाद तफ़सीर रूहुल-मआनी के बयान के मुताबिक़ दस साल की थी। मक्का में क़ुरैश के अलावा दूसरे क़बीले भी थे, सुलह के समझौते की एक धारा यह भी रखी गयी कि क़ुरैश के अलावा दूसरे क़बीलों में से जिसका जी चाहे वह क़ुरैश का हलीफ़ और साथी बन जाये और जिसका जी चाहे वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हलीफ़ (साथी और दोस्त) होकर आपके साथ हो जाये। चुनाँचे क़बीला ख़ुज़ाआ ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हलीफ़ (साथी) बनना पसन्द किया और आपके साथ हो गये, और क़बीला बनू बक्र ने क़ुरैश के साथ होना इख़्तियार कर लिया। इस समझौते के लिहाज़ से यह लाज़िमी था कि दस साल के अन्दर न आपस में जंग होगी न किसी जंग करने वाले को किसी तरफ़ से कोई मदद दी जायेगी, और जो क़बीला किसी फ़रीक़ का हलीफ़ (साथी) है वह भी उसी के हुक्म में समझा जायेगा, कि उस पर हमला करना या हमलावर को मदद देना समझौते का उल्लंघन समझा जायेगा।

यह समझौता सन् 6 हिजरी में हुआ, सन् 7 हिजरी में समझौते के मुताबिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मय सहाबा किराम के छूटे हुए उमरे की कज़ा करने के लिये मक्का मुअज़्ज़मा तशरीफ़ ले गये और तीन दिन क़ियाम करके समझौते के अनुसार वापस तशरीफ़ ले आये। उस वक़्त तक किसी पक्ष की तरफ़ से सुलह के समझौते का कोई उल्लंघन न हुआ था।

उसके बाद पाँच-छह महीने गुज़रे थे कि क़बीला बनू बक्र ने क़बीला ख़ुज़ाआ पर रात के वक़्त छापा मारा और क़ुरैश ने भी यह समझकर कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

बहुत दूर हैं और रात का वक़्त है आप तक वाक़िए की तफ़सीलात पहुँचना मुश्किल है, उस हमले में बनू बक्र को हथियारों और अपने जवानों से मदद दी।

इन वाक़िआत और हालात के मुताबिक़ जिनको आख़िरकार क़ुरैश ने भी तस्लीम कर लिया सुलह का वह समझौता टूट गया जो हुदैबिया में दस साल के युद्ध विराम का हुआ था।

क़बीला ख़ुज़ाआ जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हलीफ़ थे उन्होंने इस वाक़िए की इत्तिला आपको दे दी। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ुरैश के अ़हद तोड़ने की ख़बर पाकर क़ुरैश के ख़िलाफ़ जंग की ख़ुफ़िया तैयारी शुरू कर दी।

क़ुरैश को बदर व उहुद और अहज़ाब की मुहिमों और लड़ाईयों में मुसलमानों की ग़ैबी और रब्बानी ताक़त का अन्दाज़ा होकर अपनी क़ुव्वत व ताक़त का नशा उतर चुका था, उस वक़्त अ़हद तोड़ने के बाद मुसलमानों की तरफ़ से जंग का ख़तरा तो पैदा हो ही चुका था। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इत्तिला पहुँचने के बाद मुकम्मल ख़ामोशी से यह ख़तरा और ज़्यादा प्रबल हो गया। मजबूर होकर अबू सुफ़ियान को मदीना भेजा कि वह ख़ुद जाकर हालात का अन्दाज़ा लगायें और अगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से जंग की तहरीक का अन्दाज़ा हो तो पिछले वाक़िए पर उज़्र व माज़िरत (माफ़ी-तलाफ़ी) करके आईन्दा के लिये नये सिरे से समझौते का नवीकरण कर लें।

अबू सुफ़ियान को मदीना पहुँचकर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की जंगी तैयारियों का कुछ इल्म हुआ तो परेशान होकर बड़े सहाबा में से एक-एक के पास गये कि वे सिफ़ारिश करके समझौते को नये सिरे से तय करा दें, मगर सब ने उनके पहले के मामलात और मौजूदा कड़वे अनुभवों के सबब इनकार कर दिया और अबू सुफ़ियान नाकाम वापस आये। मक्का के क़ुरैश पर ख़ौफ़ व बेचैनी तारी हो गयी।

इधर बिदाया और इब्ने कसीर की रिवायत के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने 10 रमज़ान सन् 8 हिजरी को मदीना तय्यिबा से सहाबा किराम की भारी संख्या के साथ मक्का पर हमला करने के इरादे से कूच फ़रमाया और आख़िरकार मक्का मुकर्रमा फ़तह हो गया।

मक्का फ़तह होने के वक़्त मग़लूब दुश्मनों के साथ बेमिसाल करीमाना सुलूक

फ़तह के वक़्त क़ुरैश के बहुत से सरदार जो पहले से इस्लाम की हक़्क़ानियत (हक़ और सच होने) का यक़ीन रखते थे मगर बिरादरी के ख़ौफ़ से इज़हार न कर सकते थे, अब उनको मौक़ा मिल गया वे इस्लाम ले आये और जो उस वक़्त भी अपने पुराने मज़हब यानी कुफ़्र पर जमे रहे उनको भी सिवाय चन्द गिनेचुने अफ़राद के रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सब को जान व माल की अमान देकर पैग़म्बराना और चमत्कारी अख़्लाक़ का वह सुबूत दिया

जिसकी दूसरे लोगों से कल्पना भी नहीं हो सकती, उनकी पिछली तमाम दुश्मनियों, अत्याचारों और बेरहमी के वाक़िआत को बिल्कुल नज़र-अन्दाज़ फ़रमाकर इरशाद फ़रमाया कि मैं आज तुमसे वही बात कहता हूँ जो यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम ने अपने भाईयों से उस वक़्त कही थी जब कि वे माँ-बाप के साथ यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के पास मिस्र पहुँचे थे।

لَا تَثْرِيْبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ

यानी तुम्हारे जुल्म व सितम का बदला लेना या कोई सज़ा देना तो क्या हम तुमको मलामत करना भी गवारा नहीं करते।

फ़त्ह-ए-मक्का के वक़्त मुश्रिकों की चार क़िस्में और उनके अहकाम

बहरहाल उस वक़्त मक्का पर मुसलमानों का मुकम्मल क़ब्ज़ा हो गया, मक्का और मक्का के आस-पास में रहने वाले ग़ैर-मुस्लिमों को जान व माल की अमान दे दी गयी। लेकिन उस वक़्त उन ग़ैर-मुस्लिमों के विभिन्न हालात थे। एक क़िस्म के तो वे लोग थे जिनसे हुदैबिया में सुलह का समझौता हुआ और उन्होंने ख़ुद उसको तोड़ दिया, और वही फ़त्ह-ए-मक्का का सबब हुआ। दूसरे कुछ ऐसे लोग थे जिनसे सुलह का समझौता किसी ख़ास मियाद के लिये किया गया और वे उस समझौते पर क़ायम रहे जैसे बनू किनाना के दो क़बीले बनू ज़मरा और बनू मुदलिज जिनसे एक मुद्दत के लिये सुलह हुई थी और सूरः बराअत नाज़िल होने के वक़्त बक़ौल ख़ाज़िन उनकी सुलह की मियाद के नौ महीने बाक़ी थे।

तीसरे कुछ ऐसे लोग भी थे जिनसे सुलह का समझौता बिना किसी मुद्दत को निर्धारित किये हुआ था। चौथे वे लोग थे जिनसे किसी क़िस्म का समझौता न था।

मक्का फ़तह होने से पहले जितने मुश्रिक या अहले किताब से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने समझौते किये उन सब का यह कड़वा तजुर्बा लगातार होता रहा कि उन्होंने छुपे या खुले अ़हद और समझौते को तोड़ा और दुश्मनों से साज़िश करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने की संभावित पूरी कोशिशें कीं। इसलिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने निरंतर तजुर्बे और ख़ुदावन्दी इशारों के मातहत यह फ़ैसला कर लिया था कि आईन्दा उनमें से किसी के साथ सुलह का कोई समझौता न किया जायेगा और अ़रब इलाक़े को एक इस्लामी क़िले की हैसियत से सिर्फ़ मुसलमानों के लिये मख़्सूस कर दिया जायेगा, जिसका तक़ाज़ा यह था कि मक्का और अ़रब के इलाक़े पर हुकूमत व इख़्तियार हासिल होते ही ऐलान कर दिया जाता कि ग़ैर-मुस्लिम यहाँ से दूसरी जगह मुन्तक़िल हो जायें। लेकिन इस्लाम के अ़दल व इन्साफ़ भरे उसूल, रहीमाना सुलूक और रहमतुल-लिल्आ़लमीन की रहमते आ़म्मा के मातहत बिना मोहलत के ऐसा करना मुनासिब न था, इसलिये

सूरः बराअत के शुरू में इन चारों किस्म की ग़ैर-मुस्लिम जमाअतों के अलग-अलग अहकाम नाज़िल हुए।

पहली जमाअत जो मक्का के क़ुरैश की थी, जिन्होंने हुदैबिया के समझौते को ख़ुद तोड़ दिया था, अब ये किसी मज़ीद मोहलत के मुस्तहिक़ न थे, मगर चूँकि यह ज़माना 'सम्मानित महीनों' का ज़माना था जिनमें जंग व क़िताल अल्लाह की जानिब से मना और प्रतिबन्धित था, इसलिये उनके मुताल्लिक़ तो वह हुक्म आया जो सूरः तौबा की पाँचवीं आयत में ज़िक्र हुआ है:

فَإِذَا انْسَلَخَ الْأَشْهُرُ الْحُرُمُ فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ...... الاية.

जिसका हासिल यह था कि इन लोगों ने अ़हद व समझौते को तोड़कर अपना कोई हक़ बाक़ी नहीं छोड़ा मगर 'सम्मानित महीनों' का एहतिराम बहरहाल ज़रूरी है इसलिये सम्मानित महीने ख़त्म होते ही या तो वे अ़रब के ख़ित्ते से निकल जायें या मुसलमान हो जायें, वरना उनसे जंग की जाये।

और दूसरी जमाअ़त जिनसे किसी ख़ास मियाद के लिये सुलह का समझौता किया गया और वे उस पर क़ायम रहे, उनका हुक्म सूरः तौबा की चौथी आयत में यह आयाः

إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوكُمْ شَيْئًا وَلَمْ يُظَاهِرُوا عَلَيْكُمْ أَحَدًا فَأَتِمُّوا إِلَيْهِمْ عَهْدَهُمْ إِلَى مُدَّتِهِمْ. إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ○

यानी वे मुश्रिक लोग जिनसे तुमने सुलह का समझौता कर लिया फिर उन्होंने समझौते पर क़ायम रहने में कोई कमी नहीं की, और न तुम्हारे मुक़ाबले में तुम्हारे किसी दुश्मन की मदद की, तो तुम उनके समझौते को उसकी मुद्दत तक पूरा कर दो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं। यह हुक्म बनू ज़मरा और बनू मुदलिज का था जिसकी रू से उनको नौ महीने की मोहलत मिल गयी।

और तीसरी और चौथी दोनों जमाअ़तों का एक ही हुक्म आया जो सूरः तौबा की पहली और दूसरी आयत में बयान हुआ है:

بَرَآءَةٌ مِنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ إِلَى الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكِينَ. فَسِيحُوا فِي الْأَرْضِ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَاعْلَمُوا أَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللَّهِ. وَأَنَّ اللَّهَ مُخْزِي الْكَافِرِينَ○

यानी अलग होने का ऐलान अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से और उसके रसूल की तरफ़ से है उन मुश्रिकों के लिये जिनसे तुमने मुआ़हदा किया था। सो तुम लोग इस सरज़मीन में चार महीने चल फिर लो, और यह जान लो कि तुम अल्लाह तआ़ला को आ़जिज़ नहीं कर सकते, और यह कि बेशक अल्लाह तआ़ला काफ़िरों को रुस्वा करेंगे।

ग़र्ज़ कि पहली दूसरी आयतों के हिसाब से उन सब लोगों को जिनसे बिना किसी मुद्दत के निर्धारण के कोई मुआ़हदा (समझौता) था, या जिनके साथ कोई मुआ़हदा न था, चार महीने की मोहलत मिल गयी।

और चौथी आयत के एतिबार से उन लोगों को समझौता पूरा होने तक मोहलत मिल गयी जिनके साथ किसी ख़ास मियाद का समझौता था, और पाँचवीं आयत से मक्का के मुश्रिकों को 'सम्मानित महीने' ख़त्म होने तक मोहलत मिल गयी।

काफ़िरों से समझौते ख़त्म हो जाने पर भी उनको मोहलत देने का करीमाना सुलूक

इन अहकाम का लागू होना और मोहलत का शुरू होना उस वक़्त से तय हुआ जबकि इन अहकाम का ऐलान तमाम अ़रब में हो जाये। इस सार्वजनिक ऐलान के लिये यह इन्तिज़ाम किया गया कि सन् 9 हिजरी के हज के दिनों में मिना व अ़रफ़ात की आ़म सभाओं में इसका ऐलान किया जाये जिसका ज़िक्र सूरः तौबा की तीसरी आयत में इस तरह आया है:

وَاَذَانٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖۤ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ اَنَّ اللّٰهَ بَرِیْٓءٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ وَرَسُوْلُهٗ فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِى اللّٰهِ وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ○

यानी सार्वजनिक ऐलान है आ़म लोगों के सामने अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से बड़े हज की तारीख़ों में, इस बात का कि अल्लाह और उसका रसूल दोनों अलग होते हैं इन मुश्रिकों से। फिर अगर तुम तौबा कर लो तो तुम्हारे लिये बेहतर है, और अगर तुमने मुँह मोड़ा तो यह समझ लो कि तुम ख़ुदा को आ़जिज़ नहीं कर सकोगे, और इन काफ़िरों को एक दर्दनाक अ़ज़ाब की ख़बर सुना दीजिये।

समझौता ख़त्म करने के लिये एक अहम हिदायत

काफ़िरों से मुआ़हदा ख़त्म किया जाये तो ऐलान-ए-आ़म और सब को होशियार ख़बरदार किये बग़ैर उनके ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई दुरुस्त नहीं।

चुनाँचे अल्लाह के इस हुक्म की तामील के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सन् 9 हिजरी के हज में हज़रत सिद्दीक़े अक्बर और अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा को मक्का मुकर्रमा भेजकर मैदान-ए-अ़रफ़ात और मिना में जहाँ अ़रब के तमाम क़बीलों का इज्तिमा था यह ऐलान करा दिया, और यह भी ज़ाहिर था कि उस अ़ज़ीमुश्शान मजमे के द्वारा पूरे अ़रब में इस हुक्म का फैल जाना लाज़िमी था। फिर एहतियातन हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु की मारिफ़त यमन में ख़ास तौर पर इसका ऐलान करा दिया।

इस आ़म ऐलान के बाद सूरतेहाल यह हो गयी कि पहली जमाअ़त यानी मक्का के मुश्रिकों को सम्मानित महीनों के ख़ात्मे यानी मुहर्रम सन् 10 हिजरी के ख़त्म तक और दूसरी जमाअ़त को रमज़ान सन् 10 हिजरी तक और तीसरी व चौथी जमाअ़तों को 10 रबीउस्सानी सन् 10 हिजरी तक सीमाओं से निकल जाना चाहिये, और जो इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करे उसके जंग

किया जाना सही है। इस तरह अगले साल के हज के ज़माने तक कोई काफ़िर सीमाओं के अन्दर दाख़िल न रहने पायेगा। जिसका ज़िक्र सूरः तौबा की अट्ठाईसवीं आयत में आयेगा जिसमें इरशाद है:

فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا.

यानी ये लोग इस साल के बाद मस्जिद-ए-हराम (काबा शरीफ़) के पास न जा सकेंगे। और हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादः

لا يحجّنّ بعد العام مشركٌ.

का ही मतलब है। सूरः तौबा की शुरू की पाँच आयतों की तफ़सीर वाक़िआ़त की रोशनी में सामने आ चुकी।

ज़िक्र हुई पाँच आयतों से संबन्धित चन्द मसाईल और फ़ायदे

1. पहला यह कि मक्का फ़तह होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मक्का के क़ुरैश और दूसरे दुश्मन क़बीलों के साथ जो माफ़ी व दरगुज़र और रहम व करम का मामला फ़रमाया उसने अ़मली तौर पर मुसलमानों को यह अख़्लाक़ी सबक़ दिया कि जब तुम्हारा कोई दुश्मन तुम्हारे क़ाबू में आ जाये और तुम्हारे सामने बेबस हो जाये तो उससे पिछली दुश्मनियों और सताने का इन्तिक़ाम न लो बल्कि माफ़ी व करम से काम लेकर इस्लामी अख़्लाक़ का सुबूत दो। अगरचे ऐसा करना अपने तबई जज़्बात को कुचलना है लेकिन इसमें चन्द अ़ज़ीम फ़ायदे हैं- अव्वल ख़ुद अपने लिये कि इन्तिक़ाम (बदला) लेकर अपना ग़ुस्सा उतार लेने से वक़्ती तौर पर अगरचे नफ़्स को कुछ राहत महसूस हो लेकिन यह राहत फ़ना होने वाली है और इसके मुक़ाबले में अल्लाह तआ़ला की रज़ा और जन्नत के बुलन्द दर्जे जो उसको मिलने वाले हैं वो इससे हर हैसियत में ज़्यादा भी हैं और हमेशा रहने वाले भी। और अ़क़्ल का तक़ाज़ा यही है कि हमेशा बाक़ी रहने वाली चीज़ को फ़ानी पर तरजीह दे।

दूसरे यह कि दुश्मन पर क़ाबू पाने के बाद अपने ग़ुस्से के जज़्बात को दबा देना इसका सुबूत है कि उनकी लड़ाई अपने नफ़्स के लिये नहीं बल्कि महज़ अल्लाह तआ़ला के लिये थी और यही वह आला मक़सद है जो इस्लामी जिहाद और आ़म बादशाहों की जंग में फ़र्क़ और जिहाद व फ़साद में फ़र्क़ करने वाला है, कि जो लड़ाई अल्लाह के लिये और उसके अहकाम जारी करने के लिये हो वह जिहाद है वरना फ़साद।

तीसरा फ़ायदा यह है कि दुश्मन जब क़ब्ज़े में आने और मग़लूब होने के बाद इन उम्दा अख़्लाक़ को देखेगा तो शराफ़त का तक़ाज़ा यह है कि उसको इस्लाम और मुसलमानों से मुहब्बत पैदा होगी जो उसके लिये कामयाबी की चाबी है और यही जिहाद का असल मक़सद है।

काफ़िरों से माफ़ी व दरगुज़र के यह मायने नहीं कि उनके नुक़सान से बचने का एहतिमाम भी न किया जाये

2. दूसरा मसला जो ज़िक्र हुई आयतों से समझा गया यह है कि माफ़ी व मेहरबानी के यह मायने नहीं कि दुश्मनों के शर (बुराई और नुक़सान) से अपनी हिफ़ाज़त न करे और उनको ऐसा आज़ाद छोड़ दे कि वे फिर इनको नुक़सान और तकलीफ़ पहुँचाते रहें। बल्कि माफ़ी व करम के साथ अ़क्ल का तक़ाज़ा यह है कि पिछले तजुर्बों से आईन्दा ज़िन्दगी के लिये सबक़ हासिल करे और उन तमाम छेदों को बन्द करे जहाँ से यह ख़ुद दुश्मनों की ज़द में आ सके। इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हकीमाना इरशाद है:

لا يُلدغ المرء من حجر واحد مرتين.

यानी अ़क्लमन्द आदमी एक सुराख़ से दो मर्तबा नहीं डसा जाता। जिस सुराख़ से एक मर्तबा किसी ज़हरीले जानवर ने उसको काटा है उसमें दोबारा हाथ नहीं देता।

सन् 9 हिजरी के बराअत के क़ुरआनी ऐलान और मुश्रिकों को मोहलत व इत्मीनान के साथ हरम की सीमायें ख़ाली कर देने की हिदायतें इसी रणनीति का सुबूत हैं।

3. तीसरा फ़ायदा सूरः तौबा की शुरू की आयतों से यह मालूम हुआ कि कमज़ोर क़ौमों को बिना मोहलत दिये किसी जगह से निकल जाने का हुक्म या उन पर अचानक से हमला करना बुज़दिली और ग़ैर-शरीफ़ाना फ़ेल है। जब ऐसा करना हो तो पहले से आ़म ऐलान कर दिया जाये और उनको इसकी पूरी मोहलत दी जाये कि वे अगर हमारे क़ानून को तस्लीम नहीं करते तो आज़ादी के साथ जहाँ चाहें आसानी से जा सकें, जैसा कि मज़कूरा आयतों में सन् 9 हिजरी के आ़म ऐलान और उसके बाद तमाम जमाअ़तों को मोहलत देने के अहकाम से वाज़ेह हुआ।

4. चौथा मसला उक्त आयतों से यह मालूम हुआ कि किसी क़ौम के साथ सुलह का समझौता कर लेने के बाद अगर मियाद से पहले उस समझौते को ख़त्म कर देने की ज़रूरत पेश आ जाये तो अगरचे चन्द शर्तों के साथ इसकी इजाज़त है, मगर बेहतर यही है कि समझौते को उसकी मियाद तक पूरा कर दिया जाये जैसा कि सूरः तौबा की चौथी आयत में बनू ज़मरा और बनू मुदलिज का समझौता नौ महीने तक पूरा करने का हुक्म आया है।

5. पाँचवाँ मसला इन आयतों से यह मालूम हुआ कि दुश्मनों के साथ हर मामले में इसका ख़्याल रहना चाहिये कि मुसलमानों की दुश्मनी उनकी ज़ात के साथ नहीं बल्कि उनके काफ़िराना अ़क़ीदों व ख़्यालात के साथ है, ज़ो उन्हीं के लिये दुनिया व आख़िरत की बरबादी के असबाब हैं। और मुसलमानों की उनसे मुख़ालफ़त भी दर हक़ीक़त उनकी हमदर्दी और भला चाहने पर आधारित है। इसी लिये जंग व सुलह के हर मक़ाम पर उनको नसीहत व ख़ैरख़्वाही भरी तंबीह और समझाना किसी वक़्त न छोड़ना चाहिये। जैसा कि इन आयतों में जगह-जगह इसका ज़िक्र है कि अगर तुम अपने ख़्यालात से तौबा करने वाले हो गये तो यह तुम्हारे लिये दुनिया व

आख़िरत की कामयाबी है और इसके साथ यह भी बतला दिया कि अगर तौबा करने वाले न हुए तो सिर्फ़ यही नहीं कि तुम दुनिया में क़त्ल व ग़ारत किये जाओगे, जिसको बहुत से काफ़िर अपना क़ौमी कारनामा समझकर इख़्तियार कर लेते हैं, बल्कि यह भी समझ लो कि मरने के बाद भी अ़ज़ाब से निजात न पाओगे। उक्त आयतों में बरी और अलग होने के ऐलान के साथ हमदर्दी के साथ तंबीह व समझाने का सिलसिला भी जारी है।

6. छठा मसला यह है कि चौथी आयत में जहाँ मुसलमानों को सुलह की मियाद के ख़त्म होने तक अ़हद को पूरा करने की हिदायत फ़रमाई गयी है, उसी के साथ आयत को इस जुमले पर ख़त्म किया गया है:

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ٥

यानी बेशक अल्लाह तआ़ला एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं। जिसमें इस तरफ़ इशारा है कि मुआ़हदा व समझौता पूरा करने में बड़ी एहतियात से काम लें। आ़म क़ौमों की तरह इसमें बहाने और तावीलें (उल्टे-सीधे मतलब) निकाल कर उल्लंघन की राह न ढूँढें।

7. सातवाँ मसला पाँचवीं आयत की तफ़सीलात से यह मालूम हुआ कि जब सही मक़सद के लिये किसी क़ौम से जंग छिड़ जाये तो फिर उनके मुक़ाबले के लिये हर तरह की क़ुव्वत पूरे तौर पर इस्तेमाल करना चाहिये। उस वक़्त रहम-दिली या नर्मी दर हक़ीक़त रहम-दिली नहीं बल्कि बुज़दिली होती है।

8. आठवाँ मसला मज़्कूरा पाँचवीं आयत से यह साबित हुआ कि किसी ग़ैर-मुस्लिम के मुसलमान हो जाने पर भरोसा तीन चीज़ों पर मौक़ूफ़ है- एक तौबा, दूसरे नमाज़ को क़ायम करना, तीसरे ज़कात अदा करना। जब तक इस पर अ़मल न हो महज़ कलिमा पढ़ लेने से उनके साथ जंग बन्द न की जायेगी। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद जिन लोगों ने ज़कात देने से इनकार कर दिया था उनके मुक़ाबले पर सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जिहाद करने के लिये इसी आयत से दलील लेकर तमाम सहाबा को मुत्मईन कर दिया था।

9. नवाँ मसला इन आयतों में यह है कि 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' से क्या मुराद है। इसमें हज़राते मुफ़स्सिरीन के विभिन्न अक़वाल हैं, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास, हज़रत फ़ारूक़े आज़म, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हुम वग़ैरह ने फ़रमाया कि 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' से मुराद अ़रफ़े का दिन है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है 'अल्हज्जु अ़-र-फ़तुन' (कि हज अ़रफ़ा है)। (अबू दाऊद, तिर्मिज़ी)

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद यौमुन्नहर (क़ुरबानी का दिन) यानी ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ है। हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. और कुछ दूसरे इमामों ने इन सब अक़वाल को जमा करने के लिये फ़रमाया कि हज के पाँचों दिन 'यौमल् हज्जिल् अक्बरि' का मिस्दाक़ हैं, जिनमें अ़रफ़ा और क़ुरबानी का दिन दोनों दाख़िल हैं, और लफ़्ज़ यौम (दिन) मुफ़रद (एक वचन) लाना इस मुहावरे के मुताबिक़ है जैसे ग़ज़्वा-ए-बदर के चन्द दिनों को क़ुरआन करीम में यौमुल-फ़ुरक़ान (फ़ैसले का दिन) के मुफ़रद नाम से ताबीर किया है। और अ़रब की

आ़म जंगों को लफ़्ज़ यौम ही से ताबीर किया जाता है, अगरचे उनमें कितने ही दिन ख़र्च हुए हों जैसे 'यौम-ए-बुआ़स, यौम-ए-उहुद' वग़ैरह। और चूँकि उमरे को हज्ज-ए-असग़र यानी छोटा हज कहा जाता है इससे नुमायाँ और फ़र्क़ करने के लिये हज को हज्ज-ए-अकबर कहा गया। इससे मालूम हुआ कि क़ुरआनी परिभाषा में हर साल का हज हज्ज-ए-अकबर ही है। अ़वाम में जो यह मशहूर है कि जिस साल अ़रफ़ा जुमे के दिन पड़े सिर्फ़ वही हज्ज-ए-अकबर है, इसकी असलियत इसके सिवा नहीं है कि इत्तिफ़ाक़ी तौर पर जिस साल रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हज्जतुल-विदा हुआ है उसमें अ़रफ़ा जुमे के दिन हुआ था। यह अपनी जगह एक फ़ज़ीलत ज़रूर है मगर आयते मज़कूरा के मफ़्हूम से इसका ताल्लुक़ नहीं।

इमाम जस्सास ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि हज के दिनों को हज्ज-ए-अकबर फ़रमाने से यह मसला भी निकल आया कि हज के दिनों में उमरा नहीं हो सकता, क्योंकि उन दिनों को क़ुरआने करीम ने हज्ज-ए-अकबर के लिये मख़्सूस फ़रमा दिया है।

وَاِنْ اَحَدٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ اسْتَجَارَكَ فَاَجِرْهُ حَتّٰى
يَسْمَعَ كَلٰمَ اللّٰهِ ثُمَّ اَبْلِغْهُ مَاْمَنَهٗ ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْلَمُوْنَ ۟ كَيْفَ يَكُوْنُ لِلْمُشْرِكِيْنَ ع
عَهْدٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعِنْدَ رَسُوْلِهٖۤ اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ فَمَا اسْتَقَامُوْا
لَكُمْ فَاسْتَقِيْمُوْا لَهُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝ كَيْفَ وَاِنْ يَّظْهَرُوْا عَلَيْكُمْ لَا يَرْقُبُوْا فِيْكُمْ
اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً ؕ يُرْضُوْنَكُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ وَتَاْبٰى قُلُوْبُهُمْ ۚ وَاَكْثَرُهُمْ فٰسِقُوْنَ ۟ اِشْتَرَوْا بِاٰيٰتِ
اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا فَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِهٖ ؕ اِنَّهُمْ سَآءَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ لَا يَرْقُبُوْنَ فِيْ
مُؤْمِنٍ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُعْتَدُوْنَ ۝ فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ
فَاِخْوَانُكُمْ فِى الدِّيْنِ ؕ وَنُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝

व इन् अ-हदुम् मिनल् मुश्रिकीन--स्तजार-क फ़-अजिरहु हत्ता यस्म-अ़ कलामल्लाहि सुम्-म अब्लिग़्हु मअ्म-नहू, ज़ालि-क बिअन्नहुम् कौमुल् ला यअ़्लमून (6) ❁ कै-फ़ यकूनु लिल्मुश्रिकी-न अ़ह्दुन् अिन्दल्लाहि व अिन्-द रसूलिही	और अगर कोई मुश्रिक तुझसे पनाह माँगे तो उसको पनाह दे यहाँ तक कि वह सुन ले कलाम अल्लाह का, फिर पहुँचा दे उस को उसकी अमन की जगह, या इस वास्ते कि वे लोग इल्म नहीं रखते। (6) ❁ क्योंकर होवे मुश्रिकों के लिये अ़हद अल्लाह के नज़दीक और उसके रसूल के नज़दीक मगर जिन लोगों से तुमने अ़हद

इल्लल्लज़ी-न आहत्तुम् अिन्दल् मस्जिदिल्-हरामि फ़मस्तक़ामू लकुम् फ़स्तक़ीमू लहुम्, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल् मुत्तक़ीन (7) कै-फ़ व इंय्यज़्हरू अलैकुम् ला यर्क़ुबू फ़ीकुम् इल्लंव्-व ला ज़िम्म-तन्, युर्ज़ूनकुम् बिअफ़्वाहिहिम् व तअ्बा क़ुलूबुहुम् व अक्सरुहुम् फ़ासिक़ून (8) इश्तरौ बिआयातिल्लाहि स-मनन् क़लीलन् फ़-सद्दू अन् सबीलिही, इन्नहुम् सा-अ मा कानू यअ्मलून (9) ला यर्क़ुबू-न फ़ी मुअ्मिनिन् इल्लंव्-व ला ज़िम्म-तन्, व उलाइ-क हुमुल् मुअ्तदून (10) फ़-इन् ताबू व अक़ामुस्सला-त व आतवुज़्ज़का-त फ़-इख़्वानुकुम् फ़िद्दीनि, व नुफ़स्सिलुल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यअ्लमून (11)	किया था मस्जिदे हराम के पास, सो जब तक वे तुमसे सीधे रहें तुम उनसे सीधे रहो, बेशक अल्लाह को पसन्द हैं एहतियात वाले। (7) क्योंकर रहे सुलह और अगर वे तुम पर क़ाबू पायें तो न लिहाज़ करें तुम्हारी रिश्तेदारी का और न अ़हद का, तुमको राज़ी कर देते हैं अपने मुँह की बात से और उनके दिल नहीं मानते, और अक्सर उनमें बद-अ़हद हैं। (8) बेच डाले उन्होंने अल्लाह के हुक्म थोड़ी क़ीमत पर फिर रोका उसके रस्ते से, बुरे काम हैं जो वे लोग कर रहे हैं। (9) नहीं लिहाज़ करते किसी मुसलमान के हक़ में रिश्तेदारी का और न अ़हद का, और वही हैं ज़्यादती पर। (10) सो अगर तौबा करें और क़ायम रखें नमाज़ और देते रहें ज़कात तो तुम्हारे भाई हैं शरीअ़त के हुक्म में, और हम खोलकर बयान करते हैं हुक्मों को जानने वाले लोगों के वास्ते। (11)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर मुश्रिकों में से कोई शख़्स (अमन की मियाद ख़त्म होने के बाद उस ज़माने में जबकि उसे क़त्ल करना जायज़ हो, तौबा और इस्लाम के फ़ायदे व बरकतें सुनकर इस तरफ़ दिलचस्पी ले और इस्लाम की हक़ीक़त और सच्चाई की तलाश की ग़र्ज़ से आपके पास आकर) आप से पनाह का तालिब हो (ताकि इत्मीनान से सुन सके और समझ सके) तो (ऐसी हालत में) आप उसको पनाह दीजिये ताकि वह अल्लाह का कलाम (यानी दीन-ए-हक़ की दलीलें) सुन ले, फिर (उसके बाद) उसको उसकी अमन की जगह पहुँचा दीजिये (यानी पहुँचने दीजिये ताकि वह

सोच-समझकर अपनी राय क़ायम कर ले) यह हुक्म (इतनी पनाह देने का) इस सबब से (दिया जाता) है कि वे ऐसे लोग हैं कि पूरी ख़बर नहीं रखते (इसलिये थोड़ी मोहलत देना ज़रूरी है)।

(पहली जमाअ़त ने जो अ़हद को तोड़ा था उनके अ़हद तोड़ने से पहले भविष्यवाणी के तौर पर फ़रमाते हैं कि) इन (क़ुरैश के) मुश्रिकों का अ़हद अल्लाह तआ़ला के नज़दीक और उसके रसूल के नज़दीक कैसे (रियायत के क़ाबिल) रहेगा (क्योंकि रियायत तो उस अ़हद की होती है जिसको दूसरा शख़्स ख़ुद न तोड़े, वरना रियायत बाक़ी नहीं रहती। मतलब यह कि ये लोग अ़हद को तोड़ देंगे उस वक़्त इस तरफ़ से भी रियायत न होगी) मगर जिन लोगों से तुमने मस्जिदे-हराम (यानी हरम) के नज़दीक अ़हद लिया है (इससे मुराद दूसरी जमाअ़त है जिनको हुक्म से अलग रखने का ऊपर भी ज़िक्र आ चुका है, यानी इनसे उम्मीद है कि ये अ़हद को क़ायम रखेंगे) सो जब तक ये लोग तुमसे सीधी तरह रहें (यानी अ़हद न तोड़ें) तुम भी इनसे सीधी तरह रहो (और अ़हद की मियाद इनसे पूरी कर दो, चुनाँचे बराअत नाज़िल होने के वक़्त से इस मुद्दत में नौ महीने बाक़ी रहे, और उनके अ़हद न तोड़ने के सबब उनकी यह मुद्दत पूरी की गयी) बेशक अल्लाह तआ़ला (अ़हद के ख़िलाफ़ करने से) एहतियात रखने वालों को पसन्द करते हैं (पस तुम भी एहतियात रखने से अल्लाह के पसन्दीदा हो जाओगे। हुक्म से बाहर रहने वाली यह सूरत बयान करके फिर पहली जमाअ़त के मज़मून की तरफ़ लौटते हैं कि) कैसे (उनका अ़हद रियायत के क़ाबिल रहेगा) हालाँकि (उनकी हालत यह है कि) अगर वे तुम पर कहीं ग़लबा पा जायें तो तुम्हारे बारे में न रिश्तेदारी का ख़्याल करें और न क़ौल व क़रार का (क्योंकि उनकी यह सुलह मजबूरी और जिहाद के ख़ौफ़ से है दिल से नहीं, पस) ये लोग तुमको (सिर्फ़) अपनी ज़बानी बातों से राज़ी कर रहे हैं और इनके दिल (उन बातों को) नहीं मानते (पस जब दिल से उस अ़हद को पूरा करने का इरादा नहीं है तो क्या पूरा होगा), और उनमें ज़्यादा आदमी शरीर हैं (कि अ़हद पूरा करना नहीं चाहते। और अगर एक-आध पूरा करना भी चाहता हो तो ज़्यादा के सामने एक दो की कब चलती है, और वजह उनके शरीर होने की यह है कि) उन्होंने अल्लाह के अहकाम के बदले (दुनिया की) बाक़ी न रहने वाली मता "यानी सामान और फ़ायदे" को इख़्तियार कर रखा है (जैसा कि काफ़िरों की हालत होती है कि दीन को छोड़कर दुनिया को उस पर तरजीह देते हैं। जब दुनिया ज़्यादा महबूब होगी तो जब अ़हद तोड़ने में दुनियावी ग़र्ज़ हासिल होती नज़र आयेगी उसमें कुछ अन्देशा न होगा, बख़िलाफ़ उस शख़्स के जो दीन को तरजीह देता है वह अल्लाह के अहकाम और अ़हद के पूरा करने वग़ैरह का पाबन्द होगा) सो (इस दीन पर दुनिया को तरजीह की वजह से) ये लोग अल्लाह तआ़ला के (सीधे) रास्ते से (जिसमें अ़हद का पूरा करना भी दाख़िल है) हटे हुए हैं (और) यक़ीनन इनका यह अ़मल बहुत ही बुरा है।

(और हमने जो ऊपर कहा है 'तो न लिहाज़ करें तुम्हारी रिश्तेदारी का......' सो इसमें तुम्हारी कुछ विशेषता नहीं इनकी तो यह हालत है कि) ये लोग किसी मुसलमान के बारे में (भी) न रिश्तेदारी का पास करें और न क़ौल व क़रार का, और ये लोग (ख़ास तौर पर इस बारे में)

बहुत ही ज़्यादती कर रहे हैं। सो (जब इनके अ़हद पर भरोसा व इत्मीनान नहीं बल्कि अ़हद तोड़ने का शुब्हा व गुमान भी है जैसा कि इसकी भी संभावना है कि अ़हद को पूरा करें, इसलिये हम इनके बारे में विस्तार से हुक्म सुनाते हैं कि) अगर ये लोग (कुफ़्र से) तौबा कर लें (यानी मुसलमान हो जायें) और (उस इस्लाम को ज़ाहिर भी कर दें मसलन) नमाज़ पढ़ने लगें और ज़कात देने लगें तो (फिर उनके अ़हद तोड़ने वग़ैरह पर बिल्कुल नज़र न होगी चाहे उन्होंने कुछ ही किया हो, इस्लाम लाने से) वे तुम्हारे दीनी भाई हो जाएँगे (और पिछला किया हुआ सब माफ़ हो जायेगा) और हम समझदार लोगों (को बतलाने) के लिये अहकाम को ख़ूब तफ़सील से बयान करते हैं (चुनाँचे इस जगह पर भी ऐसा ही किया गया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः तौबा की शुरू की पाँच आयतों में इसका ज़िक्र था कि मक्का फ़तह होने के बाद मक्का और उसके आस-पास के तमाम मुश्रिक व काफ़िर लोगों को जान व माल की आ़म अमान दे दी गयी मगर उनकी पिछली ग़द्दारी और अ़हद तोड़ने के तजुर्बे की बिना पर आईन्दा के लिये उनसे कोई समझौता न किया जाना तय हो गया। इस क़रारदाद के बावजूद जिन लोगों से कोई समझौता इससे पहले हो चुका था और उन्होंने उस अ़हद के ख़िलाफ़ नहीं किया था तो उनके समझौते को मियाद ख़त्म होने तक पूरा करने के अहकाम इन आयतों में नाज़िल हुए। और जिनसे कोई समझौता नहीं था या किसी निर्धारित मियाद का समझौता नहीं था उनके साथ भी यह रियायत की गयी कि उनको फ़ौरी तौर पर मक्का छोड़ देने के हुक्म के बजाय चार महीने की लम्बी मोहलत दे दी गयी कि इस अ़रसे में वे मक्का छोड़कर जहाँ मुनासिब समझें सहूलत व इत्मीनान के साथ चले जायें। या अगर इस्लाम की हक़्क़ानियत (हक़ और सच्चा होना) उन पर रोशन हो चुकी है तो मुसलमान हो जायें।

इन अहकाम का नतीजा यह था कि अगले साल तक मक्का मुकर्रमा सहूलत के साथ उन सब ग़द्दार मुश्रिकों से ख़ाली हो जाये और चूँकि यह ख़ाली करना भी किसी बदले की भावना से नहीं बल्कि लगातार तजुर्बों के बाद अपनी हिफ़ाज़त को देखते हुए अ़मल में लाया गया था, इसलिये उनकी भलाई व बेहतरी का दरवाज़ा अब भी खुला रखा गया, जिसका ज़िक्र छठी आयत में है। जिसका हासिल यह है कि अगर मुश्रिकों में से कोई शख़्स आप से पनाह माँगे तो आपको पनाह देनी चाहिये ताकि वह आपके क़रीब आकर अल्लाह का कलाम सुन सके और इस्लाम के हक़ होने को समझ सके। और सिर्फ़ यही नहीं कि वक़्ती तौर पर उसको पनाह दे दी जाये बल्कि जब वह अपने इस काम से फ़ारिग़ हो जाये तो अपनी हिफ़ाज़त और निगरानी में उसको उस स्थान तक पहुँचाना भी मुसलमानों के ज़िम्मे है जहाँ वह अपने आपको सुरक्षित व मुत्मईन समझता है। आयत के आख़िर में फ़रमाया कि यह हुक्म इसलिये दिया गया है कि ये लोग पूरी ख़बर नहीं रखते, क़रीब आकर बाख़बर हो सकते हैं।

इस आयत से भी चन्द मसाईल और फ़ायदे हासिल हुए जिनको इमाम अबू बक्र जस्सास ने

तफ़सील से बयान किया है।

इस्लाम के हक़ और सच्चा होने को दलीलों के साथ समझाना उलेमा-ए-दीन का फ़र्ज़ है

अव्वल यह कि इस आयत से साबित हुआ कि अगर कोई काफ़िर मुसलमानों से इसका मुतालबा करे कि मुझे इस्लाम की हक़्क़ानियत (हक़ और सच्चा होना) दलील से समझाओ तो मुसलमानों पर लाज़िम है कि उसका मुतालबा पूरा करें।

दूसरे यह कि जो शख़्स इस्लाम की तहक़ीक़ और मालूमात हासिल करने के लिये हमारे पास आये तो हम पर वाजिब है कि उसको इजाज़त दें और उसकी हिफ़ाज़त करें। उसको किसी क़िस्म की तकलीफ़ या नुक़सान पहुँचाना जायज़ नहीं। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि यह हुक्म उस सूरत में है जबकि उसके आने का मक़सद अल्लाह का कलाम सुनना और इस्लाम की तहक़ीक़ करना हो, और अगर कोई दूसरी ग़र्ज़ तिजारत वग़ैरह हो तो वह मुसलमानों की मस्लेहतों और मुसलमानों के हाकिम की मर्ज़ी और राय पर मौक़ूफ़ है, मुनासिब समझे तो इजाज़त दे वरना इख़्तियार है।

बाहरी ग़ैर-मुस्लिमों को ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये

तीसरे यह कि ग़ैर-मुस्लिम हरबी जिसके साथ हमारा कोई समझौता न हो उसको ज़रूरत से ज़्यादा ठहरने की इजाज़त न दी जाये। क्योंकि आयते मज़कूरा में पनाह देने और ठहराने की यह हद मुक़र्रर कर दी गयी है:

حَتّٰى يَسْمَعَ كَلٰمَ اللّٰهِ

यानी उसको अपने यहाँ इतना ठहराओ कि वह अल्लाह का कलाम सुन ले।

चौथे यह कि मुसलमान हाकिम व अमीर के फ़राईज़ में से है कि जब कोई हरबी ग़ैर-मुस्लिम (यानी वह ग़ैर मुस्लिम जिनके साथ मुसलमानों की लड़ाई ठनी हुई हो, अमन का कोई समझौता न हो) किसी ज़रूरत की बिना पर हमसे इजाज़त (वीज़ा) लेकर हमारे मुल्क में दाख़िल हो तो उसके हालात पर नज़र रखे और जब वह अपना काम पूरा कर चुके तो उसको हिफ़ाज़त के साथ वापस कर दे।

सातवीं, आठवीं, नवीं और दसवीं चार आयतों में बराअत के उस ऐलान की हिक्मत का बयान है जो सूरः तौबा की शुरू की आयतों में ज़िक्र किया गया है। इस आयत में अ़हद तोड़ने और समझौते का उल्लंघन करने वाले मुश्रिकों की तबई कमीनगी और मुसलमानों से नफ़रत व

दुश्मनी की शिद्दत का ज़िक्र करके यह बतलाया गया है कि उनसे अ़हद व समझौते के पूरा करने की उम्मीद रखना ही ग़लत है। इरशाद फ़रमाया कि सिवाय चन्द लोगों के जिनसे मस्जिदे हराम के पास तुम्हारा समझौता हुआ था उन मुश्रिकों का कोई अ़हद अल्लाह और उसके रसूल के नज़दीक रियायत के क़ाबिल कैसे हो सकता है, जबकि उनका यह हाल है कि अगर उनको किसी वक़्त भी ज़रा मौक़ा मिल जाये तो वे तुम्हारे बारे में न किसी रिश्तेदारी की रियायत करें न अ़हद व पैमान की। और वजह इसकी यह है कि ये लोग मुआ़हदा और समझौता करने के वक़्त भी दिल में उसके पूरा करने का कोई इरादा नहीं रखते बल्कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ से तुम्हें ख़ुश करना चाहते हैं और उनमें से अक्सर लोग फ़ासिक़ यानी अ़हद को तोड़ने वाले ग़द्दार हैं।

काफ़िरों के मुक़ाबले में भी सच्चाई पर क़ायम रहें

क़ुरआने करीम के इस बयान ने मुसलमानों को यह हिदायत दी कि अपने दुश्मन मुख़ालिफ़ों के मामले में भी जब कोई गुफ़्तगू आये तो सच्चाई और इन्साफ़ को हाथ से न जाने दें, हद से आगे न बढ़ें जैसा कि इन आयतों में मक्का के मुश्रिकों के बारे में इसकी पूरी रियायत की गयी है कि अगरचे चन्द गिनेचुने लोगों के सिवा सभी ने धोखेबाज़ी, ग़द्दारी और अ़हद का उल्लंघन किया था और ऐसे हालात में आ़म तौर पर कहने वाले सभी को बुरा कहा करते हैं, मगर क़ुरआने करीम नेः

اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ.

फ़रमाकर उन लोगों को इससे अलग कर दिया जिन्होंने अ़हद का उल्लंघन नहीं किया, और यह हुक्म दिया कि जब तक वे सही रास्ते पर और अ़हद के पूरा करने पर क़ायम रहें तुम भी अ़हद पर क़ायम रहो, दूसरे लोगों की ख़ियानत (बददियानती) से मुतास्सिर होकर उनके अ़हद को न तोड़ो।

इसके बाद अ़हद तोड़ने वालों का जहाँ यह हाल बयान फ़रमाया कि उन लोगों के दिलों में शुरू ही से ख़ियानत (बेईमानी) थी, अ़हद व समझौते को पूरा करने का इरादा ही न था, यहाँ भी 'अक्सरुहुम फ़ासिक़ून' फ़रमाकर इशारा कर दिया कि उनमें भी सब का यह हाल नहीं, कुछ शरीफ़ लोग ऐसे भी हैं जो अ़हद पर क़ायम रहना चाहते थे मगर दूसरों के सामने उनकी बात न चली।

यह वही मज़मून है जिसकी हिदायत क़ुरआने करीम ने दूसरी जगह साफ़ लफ़्ज़ों में इस तरह दी हैः

لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا.

यानी किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस पर आमादा न कर दे कि तुम इन्साफ़ को छोड़ बैठो।

इसके बाद नवीं आयत में उन ग़द्दार मुश्रिकों की ग़द्दारी की वजह और उनके रोग का सबब

बयान फ़रमाकर उनको भी एक हिदायत नामा दे दिया कि अगर ये ग़ौर करें तो अपनी इस्लाह (सुधार) कर लें और आम मुसलमानों को भी चौकन्ना कर दिया कि जिस सबब से ये लोग ग़द्दारी करने और धोखा देने के जुर्म में मुब्तला हुए उस सबब से पूरे तौर पर परहेज़ को अपना शिआर बना लें। और वह सबब है दुनिया की मुहब्बत, कि दुनिया के माल व असबाब की मुहब्बत ने उनको अन्धा कर दिया है, थोड़े से पैसों के बदले में अल्लाह की आयतों और अपने ईमान को बेच डालते हैं। और उनका यह किरदार बहुत ही बुरा है।

दसवीं आयत में उन्हीं लोगों की हद से ज़्यादा टेढ़ी चाल और गुमराही का यह बयान है:

لَا يَرْقُبُوْنَ فِيْ مُؤْمِنٍ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً.

यानी सिर्फ़ यही नहीं कि उन लोगों ने अ़हद करने वाले मुसलमानों से ग़द्दारी की और उनके ताल्लुक़ और अ़हद व पैमान को पीछे डाल दिया, बल्कि उनका हाल यह है कि किसी मुसलमान के बारे में न ये रिश्ते व ताल्लुक़ की रियायत करने वाले हैं न किसी अ़हद व पैमान की।

मुश्रिकों के उक्त हालात का तबई तक़ाज़ा यह हो सकता था कि मुसलमान उनसे हमेशा के लिये बेज़ार हो जायें और किसी हालत में भी उनके साथ भाईचारे के ताल्लुक़ात क़ायम करने के लिये तैयार न हों। इसीलिये क़ुरआनी अ़दल व इन्साफ़ ने ग्यारहवीं आयत में यह हिदायत दे दी।

فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَاِخْوَانُكُمْ فِي الدِّيْنِ.

यानी अगर ये लोग तौबा कर लें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात अदा करें तो अब ये भी तुम्हारे दीनी भाई हैं।

इसमें बतला दिया कि कोई कैसा ही दुश्मन हो और कितनी ही तकलीफ़ उसने पहुँचाई हो जब वह मुसलमान हो गया तो जिस तरह अल्लाह तआ़ला उसके सब पिछले गुनाहों को माफ़ फ़रमा देते हैं, मुसलमानों पर भी लाज़िम है कि पिछले सब मामलात को दिल से भुला दें और आज से उसको अपना दीनी भाई समझें और बिरादराना ताल्लुक़ के हुक़ूक़ अदा करें।

इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने की तीन शर्तें

इस आयत ने स्पष्ट कर दिया कि इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होने के लिये तीन शर्तें हैं- अव्वल कुफ़्र व शिर्क से तौबा, दूसरे नमाज़, तीसरे ज़कात। क्योंकि ईमान व तौबा तो एक छुपी हुई चीज़ है जिसकी हक़ीक़त का आ़म मुसलमानों को इल्म नहीं हो सकता, इसलिये उसकी दो ज़ाहिरी निशानियों को बयान कर दिया गया, यानी नमाज़ और ज़कात।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इस आयत ने क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने वाले मुसलमानों के ख़ून को हराम कर दिया, यानी जो लोग नमाज़, ज़कात के पाबन्द हों और इस्लाम के ख़िलाफ़ कोई क़ौल व फ़ेल उनका साबित न हो वे तमाम अहकाम में मुसलमान समझे जायेंगे, अगरचे उनके दिल में सही ईमान न हो, या निफ़ाक़ (दोग़लापन) हो।

हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद

ज़कात से इनकार करने वालों पर जिहाद करने के लिये इसी आयत से दलील देकर सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को मुत्मईन किया था। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

आयत के आख़िर में समझौता करने वालों और तौबा करने वालों से संबन्धित ज़िक्र हुए अहकाम की पाबन्दी की ताकीद करने के लिये इरशाद फ़रमायाः

وَنُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ○

यानी हम समझदार लोगों के लिये अहकाम को ख़ूब तफ़सील से बयान करते हैं।

وَاِنْ نَّكَثُوْٓا اَيْمَانَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ فَقَاتِلُوْٓا اَئِمَّةَ الْكُفْرِ ۙ اِنَّهُمْ لَآ اَيْمَانَ لَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَنْتَهُوْنَ ۝ اَلَا تُقَاتِلُوْنَ قَوْمًا نَّكَثُوْٓا اَيْمَانَهُمْ وَهَمُّوْا بِاِخْرَاجِ الرَّسُوْلِ وَهُمْ بَدَءُوْكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ ۭ اَتَخْشَوْنَهُمْ ۚ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝ قَاتِلُوْهُمْ يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ بِاَيْدِيْكُمْ وَيُخْزِهِمْ وَيَنْصُرْكُمْ عَلَيْهِمْ وَيَشْفِ صُدُوْرَ قَوْمٍ مُّؤْمِنِيْنَ ۝ۙ وَيُذْهِبْ غَيْظَ قُلُوْبِهِمْ ۭ وَيَتُوْبُ اللّٰهُ عَلٰي مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝ اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تُتْرَكُوْا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَلَمْ يَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلَا رَسُوْلِهٖ وَلَا الْمُؤْمِنِيْنَ وَلِيْجَةً ۭ وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝ ع ١٠ ٨

व इन्-नकसू ऐमानहुम् मिम्-बअ्दि अ़ह्दिहिम् व त-अ़नू फ़ी दीनिकुम् फ़क़ातिलू अ-इम्मतल्-कुफ़्रि इन्नहुम् ला ऐमा-न लहुम् लअ़ल्लहुम् यन्तहून (12) अला तुक़ातिलू-न क़ौमन् न-कसू ऐमानहुम् व हम्मू बि-इख़्राजिर्रसूलि व हुम् ब-दऊकुम् अव्व-ल मर्रतिन्, अतख़्शौनहुम् फ़ल्लाहु अहक़्क़ु अन् तख़्शौहु इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (13) क़ातिलूहुम् युअ़ज़्ज़िब्हुमुल्लाहु बिऐदीकुम् व युख़्ज़िहिम् व यन्सुर्कुम् अ़लैहिम् व	और अगर वे तोड़ें अपनी क़समें अ़हद करने के बाद और ऐब लगायें तुम्हारे दीन में तो लड़ो कुफ़्र के सरदारों से बेशक उनकी क़समें कुछ नहीं, ताकि वे बाज़ आयें। (12) क्या नहीं लड़ते ऐसे लोगों से जो तोड़ें अपनी क़समें और फ़िक्र में रहें कि रसूल को निकाल दें और उन्होंने पहले छेड़ की तुम से, क्या उनसे डरते हो? सो अल्लाह का डर चाहिए तुमको ज़्यादा अगर तुम ईमान रखते हो। (13) लड़ो उनसे ताकि अ़ज़ाब दे अल्लाह उनको तुम्हारे हाथों और रुस्वा करे और तुमको उन पर ग़ालिब करे और ठंडे करे

यश्फि सुदू-र क़ौमिम्-मुअ्मिनीन (14) व युज़्हिब् ग़ै-ज़ क़ुलूबिहिम्, व यतूबुल्लाहु अ़ला मंय्यशा-उ, वल्लाहु अ़लीमुन् हकीम (15) अम् हसिब्तुम् अन् तुतरकू व लम्मा यअ्लमिल्लाहुल्लज़ी-न जाहदू मिन्कुम् व लम् यत्तख़िज़ू मिन् दूनिल्लाहि व ला रसूलिही व लल्मुअ्मिनी-न वली-जतन्, वल्लाहु ख़बीरुम्-बिमा तअ्मलून (16) ✿	दिल मुसलमान लोगों के। (14) और निकाले उनके दिल की जलन, और अल्लाह तौबा नसीब करेगा जिसको चाहेगा और अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (15) क्या तुम यह गुमान करते हो कि छूट जाओगे और हालाँकि अभी मालूम नहीं किया अल्लाह ने तुम में से उन लोगों को जिन्होंने जिहाद किया है। और नहीं पकड़ा उन्होंने सिवाय अल्लाह के और उसके रसूल के और मुसलमानों के किसी को भेदी, और अल्लाह को ख़बर है जो तुम कर रहे हो। (16) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर वे लोग अ़हद करने के बाद अपनी क़समों (अ़हदों) को तोड़ डालें (जैसा कि उनकी हालत से ज़ाहिर है) और (अ़हद तोड़कर ईमान भी न लायें बल्कि अपने कुफ़्र पर क़ायम रहें जिसका एक असर यह है कि) तुम्हारे दीन (इस्लाम) पर ताना मारें तो तुम लोग इस इरादे से कि ये (अपने कुफ़्र से) बाज़ आ जाएँ उन कुफ़्र के पेशवाओं से (ख़ूब) लड़ो, क्योंकि (इस सूरत में) उनकी क़समें (बाक़ी) नहीं रहीं। (यहाँ तक अ़हद को तोड़ने से पहले ही भविष्यवाणी हो चुकी, आगे अ़हद व समझौते को तोड़ने के बाद उनसे जंग व क़िताल की तरफ़ तवज्जोह दिलाना है कि) तुम ऐसे लोगों से क्यों नहीं लड़ते जिन्होंने अपनी क़समों को तोड़ डाला (और बनू बक्र की ख़ुज़ाआ के मुक़ाबले में मदद की) और रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को वतन से निकालने की तजवीज़ की, और उन्होंने तुमसे ख़ुद पहले छेड़ निकाली (कि तुम्हारी तरफ़ से अ़हद को पूरा करने में कोई कमी नहीं हुई, उन्होंने बैठे-बिठाये ख़ुद एक शोशा छोड़ा, पस ऐसे लोगों से क्यों न लड़ो) क्या उनसे (लड़ने में) तुम डरते हो? (कि उनके पास जमाअ़त ज़्यादा है) सो (अगर यह बात है तो हरगिज़ उनसे मत डरो, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला इस बात के ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं कि तुम उनसे डरो, अगर तुम ईमान रखते हो (और उनसे डरने का तक़ाज़ा यह है कि उनके हुक्म के ख़िलाफ़ मत करो, और वह हुक्म देते हैं जंग व जिहाद का, पस) उनसे लड़ो, अल्लाह तआ़ला (का वायदा है कि) उनको तुम्हारे हाथों सज़ा देगा और उनको ज़लील (व रुस्वा) करेगा, और तुमको उन पर ग़ालिब करेगा, और (उनको इस अ़ज़ाब व सज़ा देने और तुम्हारी नफ़रत से) बहुत-से (ऐसे) मुसलमानों के दिलों को शिफ़ा (सुकून) देगा और उनके दिलों के आक्रोश (ग़ुस्से व ग़ज़ब) को दूर करेगा (जो ख़ुद मुक़ाबले की हिम्मत नहीं रखते और इनकी हरकतों को देखकर दिल ही दिल में

घुटते हैं) और (उन्हीं काफ़िरों में से) जिस पर (तवज्जोह व फ़ज़्ल करना) मन्ज़ूर होगा अल्लाह तआ़ला तवज्जोह (भी) फ़रमायेगा (यानी मुसलमान होने की तौफ़ीक़ देगा, चुनाँचे मक्का फ़तह होने के वक़्त बाज़े लड़े और ज़लील व मक़्तूल हुए और बाज़े मुसलमान हो गये) और अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले, बड़ी हिक्मत वाले हैं (कि इल्म से हर एक का अन्जाम कि इस्लाम है या कुफ़्र जानते हैं, और इसी लिये अपनी हिक्मत से मुनासिब अहकाम मुक़र्रर फ़रमाते हैं)।

(और तुम जो लड़ने से जी चुराते हो चाहे बाज़े ही सही, तो) क्या तुम यह ख़्याल करते हो कि तुम यूँ ही (इसी हाल पर) छोड़ दिये जाओगे, हालाँकि अभी अल्लाह तआ़ला ने (ज़ाहिरी तौर पर) उन लोगों को तो देखा ही नहीं जिन्होंने तुम में से (ऐसे मौक़े पर) जिहाद किया हो, और अल्लाह व रसूल और मोमिनों के सिवा किसी को ख़ुसूसी दोस्त न बनाया हो, (जिसके ज़ाहिर होने का अच्छा ज़रिया ऐसे मौक़े का जिहाद है, जहाँ मुक़ाबला अपनों और रिश्तेदारों से हो कि पूरा इम्तिहान हो जाता है कि कौन अल्लाह को चाहता है और कौन बिरादरी को) और अल्लाह तआ़ला को सब ख़बर है तुम्हारे सब कामों की (पस अगर जिहाद में चुस्ती दिखाओगे या सुस्ती करोगे तो उसी के मुवाफ़िक़ तुमको जज़ा देगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मक्का के क़ुरैश जिनसे सन् 6 हिजरी में हुदैबिया के स्थान पर एक समझौता जंग-बन्दी का हुआ था, उनके बारे में सूरः तौबा की शुरू की आयतों में पेशीनगोई के तौर पर यह इत्तिला दे दी गयी थी कि ये लोग अपने समझौते पर क़ायम न रहेंगे। जिसका ज़िक्र सूरः तौबा की सातवीं आयत में:

كَيْفَ يَكُوْنُ لِلْمُشْرِكِيْنَ عَهْدٌ.

के अलफ़ाज़ में गुज़र चुका है। और फिर आठवीं, नवीं और दसवीं आयतों में उनके अ़हद तोड़ने के कारणों का बयान हुआ। ग्यारहवीं आयत में इसका बयान आया कि अ़हद तोड़ने के इस बड़े जुर्म के बाद भी अगर ये लोग मुसलमान हो जायें और अपने इस्लाम का इज़हार नमाज़ व रोज़े के ज़रिये करने लगें तो फिर मुसलमानों पर लाज़िम है कि इनके पिछले जुर्मों का कोई असर अपने मामलात में बाक़ी न रखें, बल्कि इनको अपना दीनी भाई समझें और बिरादराना मामलात करें। उक्त बारहवीं आयत में इसका बयान है कि भविष्यवाणी के मुताबिक़ जब ये लोग अ़हद व समझौते को तोड़ ही डालें तो फिर इनके साथ मुसलमानों को क्या करना चाहिये।

इसमें इरशाद फ़रमायाः

وَإِنْ نَّكَثُوْٓا اَيْمَانَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوْا فِيْ دِيْنِكُمْ فَقَاتِلُوْٓا اَئِمَّةَ الْكُفْرِ.

"यानी अगर ये लोग अपने समझौते और क़समों को तोड़ डालें और मुसलमान भी न हों बल्कि बदस्तूर तुम्हारे दीन इस्लाम पर ताने व तशने करते रहें तो इन कुफ़्र के पेशवाओं के साथ जंग करो।"

यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि इस जगह मक़ाम का तक़ाज़ा बज़ाहिर यह था कि 'फ़क़ातिलूहुम' फ़रमाया जाता, यानी उन लोगों से जंग व क़िताल करो। क़ुरआने करीम ने इस जगह मुख़्तसर इशारा इस्तेमाल करने के बजाय स्पष्ट तौर परः

فَقَاتِلُوٓا اَئِمَّةَ الْكُفْرِ

फ़रमाया। अईम्मा इमाम की जमा (बहुवचन) है, मायने यह हैं कि ये लोग अपने अ़हद तोड़ने की वजह से कुफ़्र के इमाम और लीडर होकर इसके मुस्तहिक़ हो गये कि इनसे जंग की जाये। इसमें जंग व क़िताल के हुक्म की वजह और सबब भी बयान हो गया, और कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यहाँ कुफ़्र के पेशवाओं से मुराद मक्का वाले क़ुरैश के वे सरदार हैं जो लोगों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उभारने और जंगी तैयारियों में लगे रहते थे, उनसे जंग करने को ख़ास तौर पर इसलिये ज़िक्र फ़रमाया कि मक्का वालों की असल ताक़त का स्रोत यही लोग थे, इसके अ़लावा मुसलमानों की क़रीबी रिश्तेदारी भी इन्हीं लोगों से थी, जिसकी वजह से इसका ख़तरा हो सकता था कि इनके मामले में कोई रियायत बरती जाये। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों को इस्लाम को बुरा-भला कहने की इजाज़त नहीं

दारुल-इस्लाम में ग़ैर-मुस्लिम ज़िम्मियों को इस्लाम पर इल्मी आलोचना की तो इजाज़त है मगर ताने और बुराई करने की इजाज़त नहीं।

"त-अ़नू फ़ी दीनिकुम" के लफ़्ज़ से कुछ हज़रात ने इस पर दलील पकड़ी है कि मुसलमानों के दीन पर ताने व तशने करना अ़हद तोड़ने में दाख़िल है। जो शख़्स इस्लाम और इस्लामी शरीअ़त पर ताने मारे वह मुसलमानों का मुआ़हिद (समझौते वाला पक्ष) नहीं रह सकता, मगर तमाम फ़ुक़हा इस पर सहमत हैं कि इससे मुराद वो ताने और बुराई करना है जो इस्लाम और मुसलमानों का अपमान और ज़लील करने के तौर पर खुलेआ़म की जाये। अहकाम व मसाईल की तहक़ीक़ में कोई इल्मी आलोचना करना इससे अलग है, और लुग़त में इसको ताने व तशने मारना कहते भी नहीं।

इसलिये दारुल-इस्लाम (इस्लामी हुकूमत) के ग़ैर-मुस्लिम बाशिन्दों को इल्मी आलोचना की तो इजाज़त दी जा सकती है, मगर इस्लाम पर ताने मारने और तौहीन व अपमान करने की इजाज़त नहीं दी जा सकती।

इसी आयत में फ़रमायाः

اِنَّهُمْ لَآ اَيْمَانَ لَهُمْ

'यानी ये लोग ऐसे हैं कि इनकी क़सम कोई क़ाबिले एतिबार क़सम नहीं, क्योंकि ये लोग क़सम तोड़ने और अ़हद का उल्लंघन करने के आ़दी हैं। और इस जुमले के यह मायने भी हो

सकते हैं कि जब उन्होंने अपनी क़सम तोड़ दी तो अब मुसलमानों पर भी उनकी क़सम और अ़हद की कोई ज़िम्मेदारी नहीं रही।

आयत के आख़िर में हैः

لَعَلَّهُمْ يَنْتَهُوْنَ ۝

ताकि वे बाज़ आ जायें। इस आख़िरी जुमले में बतला दिया कि मुसलमानों की जंग व जिहाद का मक़सद आ़म दुनिया के लोगों की तरह दुश्मन को सताना और बदले के जोश को ठंडा करना या आ़म बादशाहों की तरह दूसरों का मुल्क छीनना न होना चाहिये, बल्कि उनकी जंग का मक़सद दुश्मनों की ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी और यह जज़्बा होना चाहिये कि वे लोग अपने ग़लत तरीक़े और गुमराही से बाज़ आ जायें।

इसके बाद तेरहवीं आयत में मुसलमानों को जिहाद व क़िताल की तरग़ीब (रुचि दिलाने) के लिये फ़रमाया कि तुम ऐसी क़ौम के साथ जंग के लिये क्यों तैयार न होगे जिसने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को निकालने की योजना बनाई। इससे मुराद मदीना के यहूदी हैं, जिन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मदीना से निकालने का मन्सूबा बनाया था, और कहा थाः

لَيُخْرِجَنَّ الْاَعَزُّ مِنْهَا الْاَذَلَّ.

यानी "ऐसा ज़रूर होगा कि इज़्ज़त व ताक़त वाला कमज़ोर व ज़लील को मदीना से निकाल देगा।" उनके नज़दीक इज़्ज़त वाले वे लोग थे और मुसलमानों को वे कमज़ोर व ज़लील समझते थे, जिसके जवाब में हक़ तआ़ला ने उनके ही क़ौल को इस तरह पूरा कर दिखाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम ने उनको मदीना से निकाल कर यह साबित कर दिया कि इज़्ज़त वाले मुसलमान ही हैं और कमज़ोर व ज़लील यहूदी थे। दूसरी वजह उनसे जंग करने की यह इरशाद फ़रमाईः

وَهُمْ بَدَءُوْكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ.

यानी जंग व क़िताल की पहल उन्हीं लोगों की तरफ़ से हुई, अब तो सिर्फ़ रक्षात्मक कार्रवाई है, जो हर सही फ़ितरत का तक़ाज़ा है।

फिर मुसलमानों के दिलों से उन लोगों का रौब दूर करने के लिये फ़रमायाः

اَتَخْشَوْنَهُمْ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ.

"यानी क्या तुम लोग उनसे ख़ौफ़ खाते हो, हालाँकि ख़ौफ़ और डरना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला से चाहिये।" जिसके अ़ज़ाब को कोई ताक़त टला नहीं सकती, आख़िर में 'इन कुन्तुम मुअ्मिनीन' फ़रमाकर बतला दिया कि ग़ैरुल्लाह से ऐसा ख़ौफ़ खाना जो शरई अहकाम की अदायेगी में बाधा हो सके किसी मोमिन मुसलमान का काम नहीं।

चौदहवीं और पन्द्रहवीं आयत में भी मुसलमानों को जंग व जिहाद की तरग़ीब (शौक़ व रुचि) एक दूसरे उनवान से दी गयी है, जिसमें चन्द चीज़ें बतलाई गयीं।

अव्वल यह कि अगर तुम उनसे जंग के लिये तैयार हो गये तो अल्लाह तआ़ला की मदद तुम्हारे साथ होगी, और यह कौम अपने बुरे आमाल की वजह से अल्लाह के अ़ज़ाब की मुस्तहिक़ तो हो ही चुकी है, मगर इन पर अल्लाह का अ़ज़ाब पिछली क़ौमों की तरह आसमान या ज़मीन से नहीं आयेगा, बल्कि:

يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ بِاَيْدِيْكُمْ.

"यानी इनको अल्लाह तआ़ला तुम्हारे हाथों से अ़ज़ाब देंगे।"

दूसरे यह कि इस जंग के नतीजे में अल्लाह तआ़ला मुसलमानों के दिलों को उस रंज व ग़म से शिफ़ा अ़ता फ़रमायेंगे जो काफ़िरों की तरफ़ से उनको लगातार पहुँचता रहा है।

तीसरे यह कि उनकी ग़द्दारी और अ़हद तोड़ने के सबब जो नाराज़गी व ग़ुस्सा मुसलमानों के दिलों में पैदा हुआ था, उन्हीं के हाथों इनको अ़ज़ाब देकर उनके ग़ुस्से व आक्रोश को दूर फ़रमा देंगे।

पिछली आयत में 'लअ़ल्लहुम यन्तहून' फ़रमाकर मुसलमानों को इसकी हिदायत की गयी थी कि वे किसी क़ौम से अपना ग़ुस्सा उतारने के लिये न लड़ें, बल्कि उनकी बेहतरी व सुधार और हिदायत को मक़सद बनायें। इस आयत में यह बतला दिया कि जब वे अपनी नीयत को अल्लाह के लिये साफ़ कर लें और महज़ अल्लाह के लिये लड़ें तो फिर अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से ऐसी सूरतें भी पैदा फ़रमा देंगे कि उनके ग़म व ग़ुस्से का इन्तिक़ाम भी ख़ुद-ब-ख़ुद हो जाये।

चौथी चीज़ यह इरशाद फ़रमाईः

وَيَتُوْبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ.

'यानी उनमें से जिसके मुताल्लिक़ अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर होगा उसकी तौबा क़ुबूल फ़रमा लेंगे।"

जिससे मालूम हुआ कि इस जिहाद का एक फ़ायदा यह भी होगा कि दुश्मन की जमाअ़त में से बहुत से लोगों को इस्लाम की तौफ़ीक़ हो जायेगी, वे मुसलमान हो जायेंगे। चुनाँचे मक्का फ़तह होने के वक़्त बहुत से सरकश ज़लील व रुस्वा हुए और बहुत से लोग इस्लाम ले आये।

इन आयतों में जिन हालात व वाक़िआ़त की ख़बर भविष्यवाणी के तौर पर दी गयी है इतिहास गवाह है कि वो सब एक-एक करके इसी तरह सामने आये और ज़ाहिर हुए जिस तरह क़ुरआने हकीम ने ख़बर दी थी, इसलिये ये आयतें बहुत से मोजिज़ों पर आधारित हैं।

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يَّعْمُرُوْا مَسٰجِدَ اللّٰهِ شٰهِدِيْنَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ
بِالْكُفْرِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ ښ وَفِي النَّارِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝ اِنَّمَا يَعْمُرُ مَسٰجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ
بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ وَلَمْ يَخْشَ اِلَّا اللّٰهَ فَعَسٰٓى اُولٰۗىِٕكَ اَنْ يَّكُوْنُوْا
مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ۝

मा का-न लिल्मुश्रिकी-न अंय्यअ्मुरू मसाजिदल्लाहि शाहिदी-न अ़ला अन्फ़ुसिहिम् बिल्कुफ़िर, उलाइ-क हबितत् अअ्मालुहुम् व फ़िन्नारि हुम् ख़ालिदून (17) इन्नमा यअ्मुरु मसाजिदल्लाहि मन् आम-न बिल्लाहि वल्यौमिल्-आख़िरि व अक़ामस्सला-त व आतज़्ज़का-त व लम् यख़्-श इल्लल्ला-ह, फ़-अ़सा उलाइ-क अंय्यकूनू मिनल्-मुह्तदीन (18)	मुश्रिकों का काम नहीं कि आबाद करें अल्लाह की मस्जिदें और तस्लीम कर रहे हों अपने ऊपर कुफ़्र को, वे लोग ख़राब गये उनके अ़मल और आग में रहेंगे वे हमेशा। (17) वही आबाद करता है मस्जिदें अल्लाह की जो यक़ीन लाया अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर, और क़ायम किया नमाज़ को और देता रहा ज़कात और न डरा सिवाय अल्लाह के किसी से, सो उम्मीदवार हैं वे लोग कि हों हिदायत वालों में। (18)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

मुश्रिकों में यह क़ाबलियत ही नहीं कि वे अल्लाह की मस्जिदों को (जिनमें मस्जिद-ए-हराम भी आ गयी) आबाद करें, जिस हालत में कि वे ख़ुद अपने ऊपर कुफ़्र (की बातों) का इक़रार कर रहे हैं (चुनाँचे वे ख़ुद अपना चलन और तरीक़ा बतलाने के वक़्त ऐसे अ़क़ीदों का इक़रार करते थे जो वास्तव में कुफ़्र हैं। मतलब यह कि मस्जिदों का आबाद करना अगरचे पसन्दीदा अ़मल है लेकिन बावजूद शिर्क के कि उसके विरुद्ध है इस अ़मल की अहलियत ही मौजूद नहीं है, और इसलिये वह बिल्कुल नाक़ाबिले तवज्जोह है, फिर फ़ख़्र करने की क्या गुंजाईश है)। उन लोगों के (जो मुश्रिक हैं) सब (नेक) आमाल (जैसे मस्जिदों को आबाद करना वग़ैरह) बेकार (और ज़ाया) हैं (इस वजह से कि उनके क़ुबूल होने की शर्त नहीं पाई जाती, और बरबाद अ़मल पर फ़ख़्र ही क्या) और दोज़ख़ में वे लोग हमेशा रहेंगे (क्योंकि वह अ़मल जो कि निजात होने का सबब और ज़रिया है वह तो ज़ाया ही हो गया था) हाँ अल्लाह की मस्जिदों को आबाद करना उन लोगों का काम है (यानी पूरी तरह उनसे मक़बूल होता है) जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर (दिल से) ईमान लाएँ (और हाथ-पैर व ज़ाहिरी हालात से उसका इज़हार भी करें, मसलन इस तरह कि) नमाज़ की पाबन्दी करें और ज़कात दें और (अल्लाह पर ऐसा तवक्कुल रखते हों कि) सिवाय अल्लाह के किसी से न डरें, सो ऐसे लोगों के मुताल्लिक़ उम्मीद (यानी वायदा) है कि अपने मक़सूद (यानी जन्नत व निजात) तक पहुँच जाएँगे (क्योंकि उनके आमाल ईमान की वजह से मक़बूल होंगे, इसलिये आख़िरत में नफ़ा होगा और मुश्रिक लोग इस शर्त से मेहरूम हैं, और जिस अ़मल का कोई फल न मिले उस पर फ़ख़्र करना बेफ़ायदा है)।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में मक्का के मुश्रिकों की टेढ़ी चाल, अ़हद व समझौता तोड़ने और अपने बातिल दीन के लिये हर तरह की कोशिश का और उसके मुक़ाबले पर मुसलमानों को जिहाद की तरग़ीब (रुचि दिलाने) का बयान आया था, इन ज़िक्र हुई आयतों में मुसलमानों को जिहाद की ताकीद के साथ यह बतलाया गया है कि जंग व जिहाद ही वह चीज़ है जिसमें मुसलमान की परीक्षा होती है, मुनाफ़िक़ या कमज़ोर ईमान वाले का फ़र्क़ होता है, और यह इम्तिहान ज़रूरी है।

सोलहवीं आयत में इरशाद फ़रमाया कि क्या तुमने यह समझ रखा है कि तुम सिर्फ़ इस्लाम का कलिमा ज़बान से कह लेने और इस्लाम का दावा कर लेने पर आज़ाद छोड़ दिये जाओगे, जब तक अल्लाह तआ़ला ज़ाहिरी तौर पर भी उन सच्चे और पक्के मुसलमानों को न देख लें जो तुम में से जिहाद करने वाले हैं, और जो अल्लाह और रसूल और मुसलमानों के सिवा किसी को अपना राज़दार दोस्त नहीं बनाते।

इसी आयत में उन आ़म लोगों को ख़िताब है जो मुसलमान समझे जाते थे, अगरचे उनमें से कुछ मुनाफ़िक़ (सिर्फ़ दिखावे के मुसलमान) भी और कुछ कमज़ोर ईमान वाले और दुविधा में पड़े हुए थे, ऐसे ही लोगों का यह हाल था कि अपने ग़ैर-मुस्लिम दोस्तों को मुसलमानों के राज़ और भेदों पर मुत्तला कर दिया करते थे। इसलिये इस आयत में मुख़्लिस (सच्चे) मुसलमान की दो निशानियाँ बतला दी गयीं।

सच्चे मुसलमान की दो निशानियाँ

अव्वल यह कि अल्लाह के वास्ते काफ़िरों से जिहाद करें, दूसरे यह कि किसी ग़ैर-मुस्लिम को अपना राज़दार, दोस्त न बनायें। आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاللّٰهُ خَبِيْرٌ ۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ۝

यानी तुम जो कुछ करते हो अल्लाह तआ़ला उससे बाख़बर हैं। उनके आगे किसी का हीला व तावील (बहाना और इधर-उधर का मतलब) नहीं चल सकती।

यही मज़मून क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में इन अलफ़ाज़ के साथ आया है:

اَحَسِبَ النَّاسُ اَنْ يُّتْرَكُوْٓا اَنْ يَّقُوْلُوْٓا اٰمَنَّا وَهُمْ لَا يُفْتَنُوْنَ۝

"यानी क्या लोगों ने यूँ समझ रखा है कि वे सिर्फ़ ज़बानी अपने आपको मोमिन कहने पर आज़ाद छोड़ दिये जायेंगे, और उनका कोई इम्तिहान न लिया जायेगा।"

किसी ग़ैर-मुस्लिम को हमराज़ दोस्त बनाना दुरुस्त नहीं

ज़िक्र हुई आयत में जो लफ़्ज़ वली-जतुन आया है इसके मायने दख़ल देने वाले और भेदी के हैं। और एक दूसरी आयत में इसी मायने के लिये लफ़्ज़ 'बितानतुन" इस्तेमाल किया गया है,

बिताना के असली मायने उस कपड़े के हैं जो दूसरे कपड़ों के नीचे पेट और बदन के साथ मिला हुआ हो। मुराद इससे ऐसा आदमी है जो अन्दर के राज़ों से वाक़िफ़ हो। उस आयत के अलफ़ाज़ ये हैं:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْا بِطَانَةً مِّنْ دُوْنِكُمْ لَا يَاْلُوْنَكُمْ خَبَالًا.

"ऐ ईमान वालो! अपने मुसलमानों के सिवा किसी को हमराज़ और भेदी दोस्त न बनाओ, वे तुम्हें धोखा देकर बरबाद करने में कोई कसर न छोड़ेंगे।"

इसके बाद सत्रहवीं और अठ्ठारहवीं आयतों में मस्जिद-ए-हराम (काबा शरीफ़ वाली मस्जिद) और दूसरी मस्जिदों को ग़लत और बातिल इबादतों से पाक करने और सही व मक़बूल तरीक़े पर इबादत करने की हिदायतें हैं।

और तफ़सील इसकी यह है कि मक्का फ़तह होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम से उन तमाम बुतों को निकाल डाला जिनकी मुश्रिक लोग इबादत किया करते थे। इस तरह ज़ाहिरी तौर पर तो मस्जिदे हराम बुतों से पाक हो गयी, लेकिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने पुराने दुश्मनों पर ग़ालिब आने के बाद सब को माफ़ी और अमान दे दिया था, और वे मुश्रिक लोग अब भी बैतुल्लाह और सम्मानित हरम में इबादत व तवाफ़ वग़ैरह अपने बातिल तरीक़ों पर किया करते थे।

अब ज़रूरत इस बात की थी कि जिस तरह मस्जिदे हराम को बुतों से पाक कर दिया गया, इसी तरह बुत-परस्ती और उसके तमाम बातिल तरीक़ों से भी इस पवित्र ज़मीन को पाक किया जाये। और उससे पाक करने की ज़ाहिरी सूरत यही थी कि मुश्रिक लोगों का दाख़िला मस्जिदे हराम में वर्जित और प्रतिबन्धित कर दिया जाये। लेकिन यह उस दिये हुए अमान के ख़िलाफ़ होता, और मुआ़हदे की पाबन्दी इस्लाम में इन सब चीज़ों से पहले और अहम थी, इसलिये फ़ौरी तौर पर ऐसे अहकाम नहीं दिये गये बल्कि मक्का फ़तह होने के अगले ही साल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अकबर और हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा के ज़रिये मिना और अ़रफ़ात के आ़म इज्तिमा में यह ऐलान करा दिया कि आईन्दा कोई मुश्रिकों वाले तर्ज़ की इबादत और हज व तवाफ़ वग़ैरह हरम में न हो सकेगी, और जाहिलीयत में जो नंगे होकर तवाफ़ करने की बुरी रस्म चल पड़ी थी आईन्दा उस हरकत की इजाज़त न दी जायेगी। चुनाँचे हज़रत अ़ली ने मिना के आ़म इज्तिमे में इसका ऐलान कर दिया कि:

لَا يَحُجَّنَّ بَعْدَ الْعَامِ مُشْرِكٌ وَّلَا يَطُوْفَنَّ بِالْبَيْتِ عُرْيَانٌ.

"यानी इस साल के बाद कोई मुश्रिक हज न कर सकेगा, और कोई नंगा आदमी बैतुल्लाह का तवाफ़ न कर सकेगा।"

और यह साल भर की मोहलत इसलिये दे दी गयी कि उनमें बहुत से वे लोग भी थे जिनके साथ मुसलमानों का समझौता था और वे अभी तक अपने समझौते पर क़ायम थे, समझौते की मियाद पूरी होने से पहले उनको किसी नये क़ानून का पाबन्द करना इस्लामी रवादारी के ख़िलाफ़

था, इसलिये एक साल पहले से यह ऐलान जारी कर दिया गया कि सम्मानित हरम को मुश्रिकाना इबादतों और रस्मों से पाक करना तय कर दिया गया है, क्योंकि इस क़िस्म की इबादत दर हक़ीक़त इबादत और मस्जिद की आबादी नहीं बल्कि वीरानी व बरबादी है।

ये मक्का के मुश्रिक अपनी मुश्रिकाना रस्मों को इबादत और मस्जिदे हराम की तामीर व आबादी का नाम देते और इस पर फ़ख़्र किया करते थे, कि हम बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम के मुतवल्ली (प्रबन्धक) और उसके आबाद करने के ज़िम्मेदार हैं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु जब इस्लाम लाने से पहले ग़ज़्वा-ए-बदर में गिरफ़्तार हुए और मुसलमानों ने उनको कुफ़्र व शिर्क पर क़ायम रहने से शर्म दिलाई तो उन्होंने जवाब दिया कि तुम लोग सिर्फ़ हमारी बुराईयाँ याद रखते हो और भलाईयों का कोई ज़िक्र नहीं करते, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हम बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम को आबाद रखने, उसका इन्तिज़ाम करने और हाजियों को पानी पिलाने वग़ैरह की ख़िदमात के ज़िम्मेदार भी हैं। इस पर क़ुरआने करीम की ये आयतें नाज़िल हुईः

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يَّعْمُرُوْا مَسٰجِدَ اللّٰهِ.

यानी मुश्रिकों को यह हक़ नहीं कि वे अल्लाह की मस्जिदों की तामीर करें, क्योंकि मस्जिद सिर्फ़ वही जगह है जो एक अल्लाह की इबादत के लिये बनाई गयी है, शिर्क व कुफ़्र इसके उलट और ज़िद है, वह मस्जिद के आबाद करने के साथ जमा नहीं हो सकती।

मस्जिद की इमारत (आबाद करने) का लफ़्ज़ जो इस आयत में आया है यह कई मायनों में इस्तेमाल किया जाता है- एक ज़ाहिरी दर व दीवार की तामीर, दूसरे मस्जिद की हिफ़ाज़त और सफ़ाई और ज़रूरतों का इन्तिज़ाम, तीसरे इबादत के लिये मस्जिद में हाज़िर होना, उमरे को उमरा इसी मुनासबत से कहा जाता है कि उसमें बैतुल्लाह की ज़ियारत और इबादत के लिये हाज़िरी होती है।

मक्का के मुश्रिक लोग तीनों मायनों के एतिबार से अपने आपको बैतुल्लाह को आबाद करने वाला और मस्जिदे हराम की तामीर का ज़िम्मेदार समझते और इस पर फ़ख़्र (गर्व) किया करते थे। इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने स्पष्ट फ़रमा दिया कि मुश्रिकों को अल्लाह की मस्जिदों की इमारत (आबाद करने और इन्तिज़ाम संभालने) का कोई हक़ नहीं जबकि वे ख़ुद अपने कुफ़्र व शिर्क के गवाह हैं। उन लोगों के आमाल ज़ाया और बरबाद हो गये और वे हमेशा जहन्नम की आग में रहेंगे।

ख़ुद अपने कुफ़्र व शिर्क की गवाही का मतलब या तो यह है कि अपने शिर्क भरे कामों और आमाल के सबब गोया ख़ुद अपने कुफ़्र व शिर्क की गवाही दे रहे हैं, और या यह कि आ़दतन जब किसी ईसाई या यहूदी से पूछा जाये कि तुम कौन हो? तो वह अपने आपको ईसाई या यहूदी कहता है, इसी तरह आग को पूजने वाले और बुत-परस्त अपने कुफ़्र वाले नामों ही से अपना परिचय कराते हैं, यही उनका कुफ़्र व शिर्क को मानना और गवाही है। (इब्ने कसीर)

इस आयत में मस्जिद की तामीर का नकारात्मक पहलू बयान किया गया था कि मुश्रिक लोग इसके अहल (पात्र) नहीं हैं।

दूसरी आयत में मस्जिद की इमारत का सकारात्मक पहलू इस तरह इरशाद फ़रमायाः

إِنَّمَا يَعْمُرُ مَسٰجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ وَلَمْ يَخْشَ اِلَّا اللّٰهَ فَعَسٰٓى اُولٰٓئِكَ اَنْ يَّكُوْنُوْا مِنَ الْمُهْتَدِيْنَ ۝

"यानी मस्जिदों को आबाद करना उन्हीं लोगों का काम है जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान लायें और नमाज़ की पाबन्दी करें और ज़कात दें और सिवाय अल्लाह तआ़ला के किसी से न डरें, सो ऐसे लोगों के बारे में उम्मीद है कि वे अपने मक़सद में कामयाब होंगे।"

मतलब यह है कि मस्जिदों की असली इमारत (बनाना व आबाद करना) सिर्फ़ वही लोग कर सकते हैं जो अ़क़ीदे और अ़मल के एतिबार से अल्लाह के अहकाम के पाबन्द हों। अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हों और नमाज़ ज़कात के पाबन्द हों, और अल्लाह के सिवा किसी से न डरते हों। इस जगह सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला और आख़िरत के दिन पर ईमान का ज़िक्र किया गया, रसूल पर ईमान के ज़िक्र करने की इसलिये ज़रूरत न समझी गयी कि अल्लाह तआ़ला पर ईमान लाने की कोई सूरत सिवाय इसके हो ही नहीं सकती कि रसूल पर ईमान लाये, और उसके ज़रिये जो अहकाम अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आयें उनको दिल से क़ुबूल करे, इसलिये अल्लाह पर ईमान में रसूल पर ईमान फ़ितरी तौर पर दाख़िल है। यही वजह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक मर्तबा सहाबा-ए-किराम से पूछा कि तुम जानते हो कि अल्लाह पर ईमान क्या चीज़ है? सहाबा ने अ़र्ज़ किया कि अल्लाह और रसूल ही ज़्यादा जानते हैं। आपने फ़रमाया कि अल्लाह पर ईमान यह है कि आदमी दिल से इसकी गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई क़ाबिले इबादत नहीं, और यह कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं। इस हदीस ने बतला दिया कि रसूल पर ईमान लाना अल्लाह पर ईमान लाने में दाख़िल और शामिल है। (तफ़सीरे मज़हरी, बुख़ारी व मुस्लिम के हवाले से)

और यह जो इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह के सिवा किसी से न डरे, इसके मायने यह हैं कि दीन के मामले में किसी के ख़ौफ़ से अल्लाह के हुक्म को न छोड़े, वरना डरने की चीज़ों से डरना और दहशत खाना तो अ़क़्ल व फ़ितरत का तक़ाज़ा है। दरिन्दे और ज़हरीले जानवरों से, चोर डाकू से तबई तौर पर डरना इसके ख़िलाफ़ नहीं। यही वजह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के सामने जब जादूगरों ने रस्सियों के साँप बनाकर दिखलाये तो वह डर गयेः

فَاَوْجَسَ فِىْ نَفْسِهٖ خِيْفَةً مُّوْسٰى.

इसलिये तकलीफ़ और नुक़सान पहुँचाने वालों से तबई ख़ौफ़ न क़ुरआनी हुक्म के ख़िलाफ़ है न रिसालत और विलायत के, हाँ उस ख़ौफ़ से मग़लूब होकर अल्लाह तआ़ला के अहकाम में ख़लल डालना, उनको छोड़ देना यह मोमिन की शान नहीं। यही इस जगह मुराद है।

इस आयत से संबन्धित कुछ और मसाईल

और मस्जिद की तामीर (बनाने और आबाद करने) जिसके बारे में इन आयतों में यह ज़िक्र है कि मुश्रिक काफ़िर नहीं कर सकते, बल्कि वह सिर्फ़ नेक सालेह मुसलमान ही का काम है, इससे मुराद मस्जिदों की देखभाल और प्रबन्धन की ज़िम्मेदारी है।

जिसका हासिल यह है कि किसी काफ़िर को किसी इस्लामी वक़्फ़ का मुतवल्ली और प्रबन्धक बनाना जायज़ नहीं। बाक़ी रहा ज़ाहिरी इमारत वग़ैरह का बनाना सो इसमें किसी ग़ैर-मुस्लिम से भी काम लिया जाये तो कोई हर्ज नहीं। (तफ़सीर मराग़ी)

इसी तरह अगर कोई ग़ैर-मुस्लिम सवाब समझकर मस्जिद बना दे या मस्जिद बनाने के लिये मुसलमानों को चन्दा दे दे तो उसका क़ुबूल कर लेना भी इस शर्त से जायज़ है कि उससे किसी दीनी या दुनियावी नुक़सान या इल्ज़ाम का, या आईन्दा उस पर क़ब्ज़ा कर लेने का या एहसान जतलाने का ख़तरा न हो। (दुर्रे मुख़्तार, शामी, मराग़ी)

और इस आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया कि मस्जिदों की इमारत और आबादी सिर्फ़ नेक मुसलमान ही का काम है, इससे यह भी साबित हुआ कि जो शख़्स मस्जिदों की हिफ़ाज़त, सफ़ाई और दूसरी ज़रूरतों का इन्तिज़ाम करता है, और जो इबादत और ज़िक्रुल्लाह के लिये या इल्मे दीन और क़ुरआन पढ़ने पढ़ाने के लिये मस्जिद में आता जाता है उसके ये आमाल उसके कामिल मोमिन होने की गवाही और सुबूत है।

इमाम तिर्मिज़ी और इब्ने माजा ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम किसी शख़्स को देखो कि वह मस्जिद की हाज़िरी का पाबन्द है तो उसके ईमान की गवाही दो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है:

إِنَّمَا يَعْمُرُ مَسٰجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ.

और बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स सुबह शाम मस्जिद में हाज़िर होता है अल्लाह तआ़ला उसके लिये जन्नत का एक दर्जा तैयार फ़रमा देते हैं। और हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु ने रिवायत किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख़्स मस्जिद में आया वह अल्लाह तआ़ला की ज़ियारत करने वाला मेहमान है, और मेज़बान पर हक़ है कि मेहमान का इकराम करे (यानी उसके साथ इज़्ज़त से पेश आये)। (मज़हरी, तबरानी, इब्ने जरीर, बैहक़ी के हवाले से)

मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि मस्जिद की तामीर में यह भी दाख़िल है कि मस्जिद को ऐसी चीज़ों से पाक करे जिनके लिये मस्जिदें नहीं बनाई गयीं, मसलन ख़रीद व फ़रोख़्त, दुनिया की बातें, किसी गुमशुदा चीज़ की तलाश, या दुनिया की चीज़ों का लोगों से सवाल, या फ़ुज़ूल क़िस्म के शे'र, झगड़ा, लड़ाई और शोर-शराबा वग़ैरह। (तफ़सीरे मज़हरी)

اَجَعَلْتُمْ سِقَايَةَ الْحَآجِّ
وَعِمَارَةَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ كَمَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَ الْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَجٰهَدَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ لَا يَسْتَوٗنَ عِنْدَ
اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۘ﴿۱۹﴾ اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ
بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۙ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ ﴿۲۰﴾ يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ
بِرَحْمَةٍ مِّنْهُ وَرِضْوَانٍ وَّجَنّٰتٍ لَّهُمْ فِيْهَا نَعِيْمٌ مُّقِيْمٌ ۙ﴿۲۱﴾ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ
اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿۲۲﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ
عَلَى الْاِيْمَانِ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿۲۳﴾

अ-जअ़ल्तुम् सिक़ा-यतल्-हाज्जि व अ़िमा-रतल् मस्जिदिल्-हरामि कमन् आम-न बिल्लाहि वल्यौमिल्-आख़िरि व जाह-द फ़ी सबीलिल्लाहि, ला यस्तवू-न अ़िन्दल्लाहि, वल्लाहु ला यह्दिल् क़ौमज़्ज़ालिमीन। (19) अल्लज़ी-न आमनू व हाजरू व जाहदू फ़ी सबीलिल्लाहि बिअम्वालिहिम् व अन्फ़ुसिहिम् अअ़्ज़मु द-र-जतन् अ़िन्दल्लाहि, व उलाइ-क हुमुल्-फ़ाइज़ून (20) युबश्शिरुहुम् रब्बुहुम् बिरह्मतिम् मिन्हु व रिज़्वानिंव्-व जन्नातिल्-लहुम् फ़ीहा नअ़ीमुम्-मुक़ीम (21) ख़ालिदी-न फ़ीहा अ-बदन्, इन्नल्ला-ह अ़िन्दहू अज्रुन् अ़ज़ीम (22) या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला	क्या तुमने कर दिया हाजियों का पानी पिलाना और मस्जिदे हराम का बसाना बराबर उसके जो यक़ीन लाया अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर, और लड़ा अल्लाह की राह में, ये बराबर नहीं हैं अल्लाह के नज़दीक, और अल्लाह रास्ता नहीं देता ज़ालिम लोगों को। (19) जो ईमान लाये और घर छोड़ आये और लड़े अल्लाह की राह में अपने माल और जान से, उनके लिये बड़ा दर्जा है अल्लाह के यहाँ, और वही मुराद को पहुँचने वाले हैं। (20) ख़ुशख़बरी देता है उनको परवर्दिगार उनका अपनी तरफ़ से मेहरबानी और रज़ामन्दी की और बाग़ों की कि जिनमें उनको आराम है हमेशा का। (21) रहा करें उनमें हमेशा के लिये, बेशक अल्लाह के पास बड़ा सवाब है। (22) ऐ ईमान वालो! मत पकड़ो अपने बापों को

तत्तख़िज़ू आबा-अकुम् व इख़्वानकुम् औलिया-अ इनिस्त-हब्बुल्-कुफ़्-र अ़लल्-ईमानि, व मंय्य-तवल्लहुम् मिन्कुम् फ़-उलाइ-क हुमुज़्-ज़ालिमून (23)	और भाईयों को साथी अगर वे अ़ज़ीज़ (दोस्त) रखें कुफ़्र को ईमान से, और जो तुम में उनका साथ दे (यानी दोस्ती रखे) सो वही लोग हैं गुनाहगार। (23)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या तुम लोगों ने हाजियों के पानी पिलाने को और मस्जिदे-हराम के आबाद रखने को उस शख़्स (के अ़मल) के बराबर क़रार दे लिया जो कि अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान लाया हो, और उसने अल्लाह की राह में जिहाद किया हो, (वह अ़मल ईमान और जिहाद है, यानी यह अ़मल बराबर नहीं, और जब आमाल बराबर नहीं तो) ये (अ़मल करने वाले) लोग (भी आपस में) बराबर नहीं अल्लाह के नज़दीक (ग़र्ज़ कि अ़मल अ़मल आपस में और अ़मल करने वाले आपस में बराबर नहीं। कलाम का मक़सद यह है कि ईमान और जिहाद में से हर फ़र्द अफ़ज़ल है, पानी पिलाने और मस्जिदे हराम के आबाद करने वाले हर फ़र्द से, यानी ईमान भी दोनों से अफ़ज़ल है। और इससे मुश्रिक लोगों का जवाब हो गया क्योंकि उनमें ईमान न था, और जिहाद भी दोनों कामों से अफ़ज़ल है, इससे जवाब हो गया कुछ मोमिनों का जो कि ईमान के बाद हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम को आबाद करने को जिहाद से बेहतर समझते थे)। और (यह ज़िक्र हुई बात बहुत ही ज़ाहिर है लेकिन) जो लोग बेइन्साफ़ हैं (इससे मुराद मुश्रिक लोग हैं) अल्लाह तआ़ला उनको समझ नहीं देता (इसलिये वे नहीं मानते, बख़िलाफ़ ईमान वालों के कि वे इस तहक़ीक़ को फ़ौरन मान गये)।

(आगे उस मज़मून की वज़ाहत है जो ऊपर 'ला यस्तवू-न' से मक़सूद था, यानी) जो लोग ईमान लाये और (अल्लाह के वास्ते) उन्होंने वतन छोड़ा और अल्लाह की राह में अपने माल और जान से जिहाद किया, वे दर्जे में अल्लाह के नज़दीक (हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम की देखभाल करने वालों के मुक़ाबले में) बहुत बड़े हैं (क्योंकि अगर पानी पिलाने वालों और हरम को आबाद करने वालों में ईमान न हो तब तो यह बड़ाई उन्हीं मुहाजिर व मुजाहिद मोमिनों में सीमित है और अगर उनमें ईमान हो तो अगरचे वे भी बड़े हैं मगर ये ज़्यादा बड़े हैं) और यही लोग पूरे कामयाब हैं (क्योंकि अगर इनके मुक़ाबले वालों में ईमान न हो तब तो कामयाबी ख़ास इन्हीं के लिये है, और अगर ईमान हो तो कामयाबी साझा है, लेकिन इनकी कामयाबी उनसे बड़ी है। आगे उस दर्जे और कामयाबी का बयान है कि) उनका रब उनको ख़ुशख़बरी देता है अपनी तरफ़ से बड़ी रहमत और बड़ी रज़ामन्दी और (जन्नत के) ऐसे बाग़ों की, कि इनके लिये उन (बाग़ों) में हमेशा रहने वाली नेमत होगी (और) उनमें ये हमेशा-हमेशा

को रहेंगे। बेशक अल्लाह तआ़ला के पास बड़ा अज्र है (उसमें से इनको दिया जायेगा)।

ऐ ईमान वालो! अपने बापों को, अपने भाईयों को (अपना) रफ़ीक़ "यानी साथी और दोस्त" मत बनाओ, अगर वे लोग कुफ़्र को ईमान के मुक़ाबले में (ऐसा) प्यारा और पसन्दीदा रखें (कि उनके ईमान लाने की उम्मीद न रहे), और जो शख़्स तुम में से उनके साथ दोस्ती और दिली ताल्लुक़ रखेगा सो ऐसे लोग बड़े नाफ़रमान हैं (मतलब यह कि हिजरत करने और वतन छोड़ने से एक बड़ी रुकावट उन लोगों का ताल्लुक़ है और ख़ुद वही जायज़ नहीं, फिर हिजरत में क्या मुश्किल और कठिनाई है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

शुरू की चार आयतें 19 से 22 तक एक ख़ास वाक़िए से संबन्धित हैं, वह यह कि मक्का के बहुत से मुश्रिक लोग मुसलमानों के मुक़ाबले में इस पर फ़ख़्र (गर्व) किया करते थे कि हम मस्जिदे हराम की आबादी और हाजियों को पानी पिलाने का इन्तिज़ाम करते हैं, इससे बढ़कर किसी का कोई अ़मल नहीं हो सकता। इस्लाम लाने से पहले जब हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ग़ज़वा-ए-बदर में गिरफ़्तार होकर मुसलमानों की क़ैद में आये, और उनके मुस्लिम रिश्तेदारों ने उनको इस पर मलामत की कि आप ईमान की नेमत से मेहरूम हैं तो उन्होंने ने भी यही कहा था कि आप लोग ईमान व हिजरत को अपनी बड़ाई और श्रेष्टा का सरमाया समझते हैं, मगर हम भी तो मस्जिदे हराम की आबादी और हाजियों को पानी पिलाने की अहम ख़िदमत की ज़िम्मेदारी उठाने वाले हैं जिनके बराबर किसी का अ़मल नहीं हो सकता। इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं। (इब्ने कसीर, हज़रत इब्ने अ़ब्बास की रिवायत हज़रत अ़ली बिन अबी तल्हा के हवाले से)

और मुस्नद अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ की कुछ रिवायतों में है कि हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मुसलमान हो जाने के बाद हज़रत तल्हा बिन शैबा, हज़रत अ़ब्बास और हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में आपस में गुफ़्तगू हो रही थी, तल्हा ने कहा कि मुझे वह फ़ज़ीलत (बड़ाई व सम्मान) हासिल है जो तुम में से किसी को हासिल नहीं, कि बैतुल्लाह की चाबी मेरे हाथ में है, मैं अगर चाहूँ तो बैतुल्लाह के अन्दर जाकर रात गुज़ार सकता हूँ। हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैं हाजियों को पानी पिलाने का मुतवल्ली और प्रबन्धक हूँ और मस्जिदे हराम में मेरे इख़्तियारात हैं। हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि मेरी समझ में नहीं आता कि आप हज़रात किस चीज़ पर फ़ख़्र कर रहे हैं, मेरा हाल तो यह है कि मैंने सब लोगों से छह महीने पहले बैतुल्लाह की तरफ़ नमाज़ें पढ़ी हैं, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जिहाद में शरीक रहा हूँ। इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं, जिनमें वाज़ेह कर दिया गया कि कोई अ़मल कितना ही ऊँचा व अफ़ज़ल हो ईमान के बग़ैर अल्लाह के नज़दीक उसकी कोई क़ीमत नहीं, और न शिर्क की हालत में ऐसे आमाल करने वाला अल्लाह के नज़दीक मक़बूल है।

और सही मुस्लिम में हज़रत नौमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह वाक़िआ़ नक़ल किया गया है कि वह एक दिन जुमे के दिन मस्जिदे नबवी में चन्द हज़राते

सहाबा के साथ नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मिम्बर के पास जमा थे। उपस्थित हज़रात में से एक शख़्स ने कहा कि इस्लाम व ईमान के बाद मेरे नज़दीक हाजियों को पानी पिलाने से बढ़कर कोई अ़मल नहीं, और मुझे इसके मुक़ाबले में किसी दूसरे अ़मल की परवाह नहीं। एक दूसरे साहिब ने उनके जवाब में कहा कि नहीं! अल्लाह की राह में जिहाद सबसे बड़ा अ़मल है। इन दोनों में बहस होने लगी तो हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने दोनों को डाँटकर कहा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मिम्बर के पास शोर-शराबा न करो, मुनासिब बात यह है कि जुमे की नमाज़ पढ़ने के बाद यह बात ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम कर लो। इस तजवीज़ के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया गया, इस पर ये आयतें नाज़िल हुईं, जिनमें जिहाद को मस्जिदे हराम की ज़िम्मेदारी संभालने और हाजियों को पानी पिलाने से अफ़ज़ल अ़मल बतलाया गया।

और इसमें कोई दूर की बात नहीं कि आयतों का असल उतरना तो मुश्रिकों के फ़ख़्र व तकब्बुर के जवाब में हुआ हो, फिर उसके बाद जो वाक़िआ़त मुसलमानों में आपस में पेश आये उनमें भी इन्हीं आयतों को दलील के तौर पर पेश किया गया हो, जिससे सुनने वालों को यह महसूस हुआ कि ये आयतें इस वाक़िए में नाज़िल हुईं।

बहरहाल उक्त आयतों में दोनों क़िस्म के वाक़िआ़त का यह जवाब है कि शिर्क के साथ तो कोई अ़मल कितना ही बड़ा हो मक़बूल और क़ाबिले ज़िक्र ही नहीं, इसलिये किसी मुश्रिक को मस्जिद के आबाद करने या हाजियों को पानी पिलाने की वजह से कोई फ़ज़ीलत व बड़ाई मुसलमानों के मुक़ाबले में हासिल नहीं हो सकती, और ईमान के बाद भी ईमान व जिहाद का दर्जा मस्जिदे हराम के आबाद करने और हाजियों को पानी पिलाने की तुलना में बहुत ज़्यादा है। जो मुसलमान ईमान व जिहाद में आगे रहे वे उन मुसलमानों से अफ़ज़ल (बेहतर) हैं जिन्होंने जिहाद में शिर्कत नहीं की, सिर्फ़ मस्जिदे हराम की तामीर और हाजियों के पानी पिलाने की ख़िदमत अन्जाम देते रहे।

इस भूमिका के बाद ज़िक्र हुई आयतों के अलफ़ाज़ और तर्जुमे पर फिर एक नज़र डालिये। इरशाद फ़रमाया कि क्या तुमने हाजियों को पानी पिलाने और मस्जिदे हराम के आबाद रखने को उस शख़्स के बराबर क़रार दिया जो कि अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान लाया हो, और उसने अल्लाह की राह में जिहाद किया हो, यह लोग बराबर नहीं अल्लाह के नज़दीक।

मज़मून का मतलब यह है कि ईमान और जिहाद में से हर एक अफ़ज़ल है, हाजियों को पानी पिलाना और मस्जिद को आबाद करने से। यानी ईमान भी दोनों से अफ़ज़ल है और जिहाद भी। ईमान के अफ़ज़ल होने से मुश्रिकों की बात का जवाब हो गया, और जिहाद के अफ़ज़ल होने से उन मुसलमानों की बात का जवाब हो गया जो मस्जिद के आबाद करने और हाजियों को पानी पिलाने को जिहाद से अफ़ज़ल (बेहतर) कहते थे।

अल्लाह का ज़िक्र जिहाद से अफ़ज़ल है

तफ़सीर-ए-मज़हरी में हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इस आयत में जो मस्जिद के आबाद करने पर जिहाद को फ़ज़ीलत और तरजीह दी गयी है, यह इमारत (आबाद करने) के ज़ाहिरी मायने के एतिबार से है। यानी मस्जिद की तामीर और ज़रूरी इन्तिज़ामात, कि जिहाद का इनके मुक़ाबले में अफ़ज़ल होना माना हुआ है।

लेकिन मस्जिद को आबाद करने के एक दूसरे मायने इबादत और अल्लाह के ज़िक्र के लिये मस्जिद में हाज़िरी के भी आते हैं, और दर हक़ीक़त मस्जिद की असली इमारत व आबादी इसी से है। इस मायने के एतिबार से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के स्पष्ट इरशादात की बिना पर मस्जिद का आबाद करना जिहाद से अफ़ज़ल व आला है, जैसा कि मुस्नद अहमद, तिर्मिज़ी और इब्ने माजा में हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- क्या मैं तुम्हें ऐसा अ़मल बतलाऊँ जो तुम्हारे तमाम आमाल से बेहतर और तुम्हारे मालिक के नज़दीक सबसे ज़्यादा अफ़ज़ल हो, और तुम्हारे दर्जों को सबसे ज़्यादा बुलन्द करने वाला और सोने-चाँदी को अल्लाह की राह में ख़र्च करने से भी अफ़ज़ल हो, और इससे भी अफ़ज़ल हो कि तुम जिहाद में दुश्मन से सख़्त मुक़ाबला करो जिसमें तुम उनको क़त्ल करो वे तुम्हें क़त्ल करें। सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! वह अ़मल ज़रूर बतलाईये। आपने फ़रमाया कि वह अ़मल अल्लाह का ज़िक्र है। इससे मालूम हुआ कि ज़िक्रुल्लाह की फ़ज़ीलत जिहाद से भी ज़्यादा है, और मस्जिद आबाद करना जब ज़िक्रुल्लाह के मायने में लिया जाये तो वह भी जिहाद से अफ़ज़ल है। मगर इस जगह मुश्रिकों का फ़ख़्र व ग़ुरूर ज़ाहिर है कि ज़िक्रुल्लाह और इबादत की बिना पर न था बल्कि ज़ाहिरी तामीर और इन्तिज़ामात की बिना पर था, इसलिये जिहाद को इससे अफ़ज़ल क़रार दिया गया।

और क़ुरआन व सुन्नत के मजमूई इरशादात में ग़ौर करने से मालूम होता है कि किसी अ़मल का दूसरे अ़मल से अफ़ज़ल व आला होना हालात व वाक़िआत के ताबे होता है। कई बार एक अ़मल दूसरे से अफ़ज़ल होता है और हालात बदलने के बाद मामला इसके उलट भी हो सकता है। जिस वक़्त इस्लाम और मुसलमानों की रक्षा की सख़्त ज़रूरत हो उस वक़्त यक़ीनन जिहाद तमाम इबादतों से अफ़ज़ल होगा, जैसा कि ग़ज़वा-ए-ख़न्दक़ में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की चार नमाज़ें क़ज़ा हो जाने के वाक़िए से ज़ाहिर है। और जिस वक़्त ऐसी सख़्त ज़रूरत न हो तो ज़िक्रुल्लाह और इबादत जिहाद के मुक़ाबले में अफ़ज़ल होगा।

आयत के आख़िर में "वल्लाहु ला यह्दिल्-क़ौमज़्ज़ालिमीन" फ़रमाकर यह बतला दिया कि यह कोई गहरी और बारीक बात नहीं बल्कि बिल्कुल स्पष्ट है कि ईमान सारे आमाल की बुनियाद और उन सबसे अफ़ज़ल है, और यह कि जिहाद मस्जिद के आबाद करने और हाजियों को पानी पिलाने के मुक़ाबले में अफ़ज़ल है, मगर अल्लाह तआ़ला बेइन्साफ़ लोगों को समझ नहीं देता, इसलिये वे ऐसी खुली और ज़ाहिरी बातों में भी बेकार की बहस करते रहते हैं।

बीसवीं आयत में उस मज़मून की तफ़सील है जो पहली आयत में "ला यस्तवू-न" के अलफ़ाज़ से बयान किया गया है, यानी ईमान लाने वाले मुजाहिद और सिर्फ़ मस्जिदों की तामीर व आबाद करने वाले और हाजियों को पानी पिलाने वाले अल्लाह के नज़दीक बराबर नहीं हैं। इसमें इरशाद फ़रमायाः

اَلَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِیْ سَبِیْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ○

"यानी वे लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने हिजरत की और अपनी जान व माल से अल्लाह की राह में जिहाद किया, वे अल्लाह के नज़दीक दर्जे में बड़े हैं, और पूरे कामयाब यही लोग हैं।"

क्योंकि उनके मुक़ाबले में जो मुश्रिक हैं उनको तो कामयाबी का कोई दर्जा ही हासिल नहीं, और जो मुसलमान हैं अगरचे कामयाबी में वे भी शरीक हैं, मगर इनकी कामयाबी उनसे बढ़ी हुई है, इसलिये पूरे कामयाब यही लोग हैं।

इक्कीसवीं और बाईसवीं आयतों में इन कामयाब लोगों के बड़े अज्र और आख़िरत के दर्जों का बयान है, फ़रमायाः

یُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِّنْهُ وَرِضْوَانٍ وَّجَنّٰتٍ لَّهُمْ فِیْهَا نَعِیْمٌ مُّقِیْمٌ. خٰلِدِیْنَ فِیْهَآ اَبَدًا، اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِیْمٌ.

"यानी उन लोगों को उनका परवर्दिगार ख़ुशख़बरी सुनाता है अपनी रहमत और रज़ा की और ऐसी जन्नतों की जिनमें उनके लिये हमेशा क़ायम रहने वाली नेमतें होंगी, और ये लोग भी उन नेमतों में हमेशा रहेंगे, उनको यहाँ से कभी न निकाला जायेगा। बेशक अल्लाह के पास बहुत बड़ा अज्र है।"

उक्त आयतों में हिजरत और जिहाद के फ़ज़ाईल का बयान आया है, जिनमें वतन और रिश्तेदारों व क़रीबी लोगों, यार दोस्तों और माल व जायदाद सब को छोड़ना पड़ता है। और ज़ाहिर है कि इनसान की तबीयत पर ये काम सब से ज़्यादा भारी और दुश्वार हैं, इसलिये अगली आयत में इन चीज़ों के साथ हद से ज़्यादा ताल्लुक़ और मुहब्बत की मज़म्मत (निंदा और बुराई) फ़रमाकर मुसलमानों के ज़ेहनों को हिजरत व जिहाद के लिये आमादा किया गया है। इरशाद फ़रमायाः

یٰٓاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِیَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاِیْمَانِ وَمَنْ یَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ○

"यानी ऐ ईमान वालो! तुम अपने बाप-दादा और भाईयों को रफ़ीक़ (साथी) मत बनाओ अगर वे लोग कुफ़्र को ईमान के मुक़ाबले में अज़ीज़ (प्यारा और पसन्दीदा) रखें, और तुम में से जो शख़्स उनके साथ बावजूद उनके कुफ़्र के दोस्ती रखेगा सो ऐसे लोग बड़े नाफ़रमान हैं।"

माँ-बाप भाई-बहन और तमाम रिश्तेदारों से ताल्लुक़ को मज़बूत रखने और उनके साथ अच्छा सुलूक करने की हिदायतों से सारा क़ुरआन भरा हुआ है, मगर इस आयत में यह बतला

दिया कि हर ताल्लुक़ की एक हद है, इनमें से हर ताल्लुक़ चाहे माँ-बाप और औलाद का हो, या सगे भाई-बहन का, अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ताल्लुक़ के मुक़ाबले में नज़र-अन्दाज़ करने के क़ाबिल है। जिस मौक़े पर ये दोनों रिश्ते टकरा जायें तो फिर रिश्ता व ताल्लुक़ अल्लाह व रसूल का ही क़ायम रखना है, उसके मुक़ाबले में सारे ताल्लुक़ात से नज़र हटा लेनी है।

उक्त आयतों से संबन्धित चन्द फ़ायदे और मसाईल

ज़िक्र हुई पाँच आयतों से चन्द फ़ायदे और मसाईल हासिल हुए:

अव्वल यह कि ईमान अ़मल की रूह और जान है, इसके बग़ैर कैसा ही अच्छा अ़मल हो वह सिर्फ़ बेजान सूरत और नाक़ाबिले क़ुबूल है। आख़िरत की निजात में उसकी कोई क़ीमत नहीं, हाँ अल्लाह तआ़ला के यहाँ बेइन्साफ़ी नहीं, काफ़िरों के ऐसे बेरूह नेक आमाल भी बिल्कुल ज़ाया नहीं किये जाते, उनका बदला उनको दुनिया ही में आराम व ऐश और दौलत व राहत देकर बेबाक़ कर दिया जाता है। जिसका बयान क़ुरआने करीम की अनेक आयतों में आया है।

दूसरा फ़ायदा इन आयतों से यह हासिल हुआ कि गुनाह व नाफ़रमानी से इनसान की अ़क़्ल भी ख़राब हो जाती है, अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा समझने लगता है। उन्नीसवीं आयत के आख़िर में "इन्नल्ला-ह ला यह्दिल-क़ौमज़्ज़ालिमीन" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है जैसा कि इसके मुक़ाबले में एक आयत में:

اِنْ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجْعَلْ لَّكُمْ فُرْقَانًا.

फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया है कि फ़रमाँबरदारी व परहेज़गारी से इनसान की अ़क़्ल को ताक़त व ताज़गी मिलती है, सही फ़िक्र नसीब होती है, वह अच्छे बुरे की तमीज़ में ग़लती नहीं करता।

तीसरा मसला यह मालूम हुआ कि नेक आमाल में भी आपस में कम-ज़्यादा दर्जे हैं, और उसी की मुनासबत से अ़मल करने वालों के दर्जों में कमी-ज़्यादती क़ायम होती है। सब अ़मल करने वाले एक दर्जे में नहीं रखे जा सकते। और मदार अ़मल की अधिकता पर नहीं बल्कि अ़मल की अच्छाई और ख़ूबी पर है। सूरः मुल्क में आया है:

لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا.

"यानी अल्लाह तआ़ला तुम्हारी आज़माईश करेंगे कि कौन ज़्यादा अच्छा अ़मल करने वाला है।"

चौथा फ़ायदा यह हासिल हुआ कि राहत व नेमत के हमेशा रहने के लिये दो चीज़ें ज़रूरी हैं- एक यह कि वो नेमतें किसी वक़्त ख़त्म न हो जायें, दूसरे यह कि किसी वक़्त उन लोगों को उन नेमतों से अलग न किया जाये। इसलिये अल्लाह के मक़बूल बन्दों के लिये दोनों चीज़ों की ज़मानत दे दी गयी। 'नईमुम-मुक़ीम' फ़रमाकर नेमतों का हमेशा के लिये होना बयान फ़रमाया

दिया, और 'ख़ालिदी-न फ़ीहा अ-बदन्' फ़रमाकर उन लोगों को कभी उन नेमतों से अलग न करने का इत्मीनान दिला दिया।

असल रिश्ता इस्लाम व ईमान का रिश्ता है

नसबी व वतनी ताल्लुक़ात सब इस पर क़ुरबान करने हैं

पाँचवाँ मसला एक बुनियादी मसला है कि रिश्तेदारी और दोस्ती के सारे ताल्लुक़ात पर अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ताल्लुक़ मुक़द्दम (आगे) है, जो ताल्लुक़ इससे टकराये वह तोड़ने के क़ाबिल है। सहाबा-ए-किराम का वह अ़मल जिसकी वजह से वे सारी उम्मत से अफ़ज़ल व आला क़रार पाये यही चीज़ थी कि उन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर अपनी जान व माल और हर रिश्ते व ताल्लुक़ को क़ुरबान करके ज़बाने हाल से कहा कि हमने अपने तमाम ताल्लुक़ात व जज़्बात को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जोड़ लिया है और बाक़ी सबसे तोड़ लिया है।

बिलाल हब्शी, सुहैब रूमी, सलमान फ़ारसी, मक्का के क़ुरैश और मदीना के अन्सार तो सब आपस में भाई-भाई हो गये, और बदर व उहुद के मैदानों में बाप बेटे, भाई-भाई की तलवारें आपस में टकरा कर इसकी गवाही दी कि उनका मस्लक यह था कि:

हज़ार ख़्रेश कि बेगाना अज़ ख़ुदा बाशद
फ़िदा-ए-यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि ख़ुदा तआ़ला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व क़ुरबान हैं जो कि अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदार है। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

या अल्लाह! हमें भी उन हज़रात की पैरवी नसीब फ़रमा और अपनी मुहब्बत तमाम चीज़ों से ज़्यादा अ़ता फ़रमा और हर चीज़ के ख़ौफ़ से ज़्यादा अपना ख़ौफ़ ग़ालिब फ़रमा। आमीन

قُلْ إِنْ كَانَ آبَاؤُكُمْ وَأَبْنَاؤُكُمْ وَإِخْوَانُكُمْ وَأَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيرَتُكُمْ وَأَمْوَالٌ
اقْتَرَفْتُمُوهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسَاكِنُ تَرْضَوْنَهَا أَحَبَّ إِلَيْكُمْ مِنَ اللَّهِ وَ
رَسُولِهِ وَجِهَادٍ فِي سَبِيلِهِ فَتَرَبَّصُوا حَتَّىٰ يَأْتِيَ اللَّهُ بِأَمْرِهِ ۗ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ﴿٢٤﴾ ع ۳ ۸ ۹

क़ुल् इन् का-न आबाउकुम् व अब्नाउकुम् व इख़्वानुकुम् व अज़्वाजुकुम् व अ़शीरतुकुम् व अम्वालु-निक़्त-रफ़्तुमूहा व तिजारतुन्	तू कह दे अगर तुम्हारे बाप और बेटे और भाई और औरतें और बिरादरी और माल जो तुमने कमाये हैं और सौदागरी जिसके बन्द होने से तुम डरते हो और हवेलियाँ जिनको पसन्द करते हो, तुमको

तख़्शौ-न कसादहा व मसाकिनु तरज़ौनहा अहब्-ब इलैकुम् मिनल्लाहि व रसूलिही व जिहादिन् फ़ी सबीलिही फ़-तरब्बसू हत्ता यअ्तियल्लाहु बिअम्रिही, वल्लाहु ला यह्दिल् क़ौमल्-फ़ासिक़ीन (24) ✿	ज़्यादा प्यारी हैं अल्लाह से और उसके रसूल से और लड़ने से उसकी राह में तो इन्तिज़ार करो यहाँ तक कि भेजे अल्लाह अपना हुक्म, और अल्लाह रास्ता नहीं देता नाफ़रमान लोगों को। (24) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे इसी मज़मून की अधिक तफ़सील है कि ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप (इनसे) कह दीजिये कि अगर तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ और तुम्हारा कुनबा और वो माल जो तुमने कमाये हैं, और वह तिजारत जिसमें निकासी न होने की तुमको शंका हो, और वे घर जिनमें (रहने) को तुम पसन्द करते हो, (अगर ये चीज़ें) तुमको अल्लाह से और उसके रसूल से और उसकी राह में जिहाद करने से ज़्यादा प्यारे हों तो तुम इन्तिज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह तआ़ला (हिजरत न करने की सज़ा का) अपना हुक्म भेज दें (जैसा कि दूसरी आयत में है:

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ...... الٰى قوله .... فَاُولٰٓئِكَ مَاْوٰهُمْ جَهَنَّمُ.

और अल्लाह तआ़ला नाफ़रमानी करने वालों को उनके मक़सूद तक नहीं पहुँचाता (यानी उनका मक़सूद था इन चीज़ों से फ़ायदा उठाना और वह बहुत जल्द उनकी उम्मीद के ख़िलाफ़ मौत से ख़त्म हो जाता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः तौबा की यह आयत दर असल उन लोगों के बारे में नाज़िल हुई जिन्होंने मक्का से हिजरत फ़र्ज़ होने के वक़्त हिजरत नहीं की। माँ-बाप, भाई-बहन, औलाद, बीवी और माल व जायदाद की मुहब्बत ने उनको हिजरत का फ़रीज़ा अदा करने से रोक दिया, उनके बारे में हक़ तआ़ला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हुक्म दिया कि आप उन लोगों से कह दें कि:

"अगर तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ और तुम्हारा कुनबा और वो माल जो तुमने कमाये हैं, और वह तिजारत जिसमें निकासी न होने का तुमको अन्देशा हो, और वह घर जिनको तुम पसन्द करते हो, तुमको अल्लाह से और उसके रसूल से और उसकी राह में जिहाद करने से ज़्यादा प्यारे हों तो तुम मुन्तज़िर रहो यहाँ तक कि अल्लाह

तआला अपना हुक्म भेज दें, और अल्लाह तआला नाफ़रमानी करने वालों को उनके मक़सूद तक नहीं पहुँचाता।''

इस आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया कि ''मुन्तज़िर रहो यहाँ तक कि अल्लाह तआला अपना हुक्म भेज दें।'' इमामे तफ़सीर मुजाहिद रह. ने फ़रमाया कि हुक्म से मुराद जिहाद व किताल और मक्का फ़तह होने का हुक्म है, और मतलब यह है कि उस वक़्त दुनियावी ताल्लुक़ात पर अल्लाह व रसूल के ताल्लुक़ात को क़ुरबान करने वालों का बुरा अन्जाम अन्क़रीब सामने आने वाला है, जबकि मक्का फ़तह होगा और नाफ़रमानी करने वाले ज़लील व रुस्वा होंगे, और उनके ये ताल्लुक़ात उस वक़्त उनके काम न आयेंगे।

और हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि इस जगह हुक्म से मुराद अ़ज़ाब का हुक्म है, कि दुनियावी ताल्लुक़ात पर आख़िरत के ताल्लुक़ात को क़ुरबान करके हिजरत न करने वालों पर अल्लाह तआला का अ़ज़ाब का हुक्म जल्दी ही आने वाला है, या तो दुनिया ही में उन पर अ़ज़ाब आयेगा वरना आख़िरत का अ़ज़ाब तो यक़ीनी है। आयत में इस जगह असल मक़सद तो हिजरत न करने पर वईद (सज़ा की धमकी और डाँट) है, मगर ज़िक्र बजाय हिजरत के जिहाद का किया गया, जो हिजरत के बाद का अगला क़दम है। इसमें इशारा कर दिया गया कि अभी तो सिर्फ़ हिजरत और वतन छोड़ने ही का हुक्म हुआ है, इसमें कुछ लोग हिम्मत हार बैठे, आगे जिहाद का हुक्म आने वाला है जिसमें अल्लाह और रसूल की मुहब्बत पर सारी मुहब्बतों को और ख़ुद अपनी जान को क़ुरबान करना पड़ता है। और यह भी मुम्किन है कि इस जगह हिजरत ही को जिहाद से ताबीर कर दिया हो, क्योंकि वह भी हक़ीक़त में जिहाद ही का एक विभाग है।

और आयत के आख़िर आयत में 'वल्लाहु ला यहदिल् क़ौमल् फ़ासिक़ीन' फ़रमाकर यह भी बतला दिया कि जो लोग हिजरत के हुक्म के बावजूद अपने दुनियावी ताल्लुक़ात को तरजीह देकर अपने प्यारों, रिश्तेदारों और माल व मकान से चिमटे रहे, उनका यह अ़मल दुनिया में भी उनके लिये मुफ़ीद नहीं होगा और उनका यह मक़सद हासिल नहीं होगा कि हमेशा अपने बाल-बच्चों और माल व मकान में अमन व चैन से बैठे रहें, बल्कि जिहाद का हुक्म शुरू होते ही ये सब चीज़ें उनके लिये वबाले जान बन जायेंगी। क्योंकि अल्लाह तआ़ला नाफ़रमानी करने वालों को उनके मक़सूद (उद्देश्य और मन्ज़िल) तक नहीं पहुँचाते।

हिजरत से संबन्धित मसाईल

अव्वलः जब मक्का से मदीना की तरफ़ हिजरत फ़र्ज़ कर दी गयी तो वह सिर्फ़ एक फ़र्ज़ ही नहीं बल्कि मुसलमान होने की निशानी भी थी, जो बावजूद क़ुदरत के हिजरत न करे वह मुसलमान न समझा जाता था। यह हुक्म मक्का फ़तह होने के बाद मन्सूख़ (ख़त्म और निरस्त) हो गया, और असल हुक्म यह बाक़ी रह गया कि जिस ज़मीन पर इनसान को अल्लाह के अहकाम नमाज़ रोज़े वग़ैरह की तामील (पालन करना) मुम्किन न हो उससे हिजरत करना हमेशा के लिये फ़र्ज़ है, बशर्ते कि हिजरत पर क़ुदरत हो।

दूसरा दर्जा यह है कि आदमी हर ऐसी जगह को छोड़ दे जहाँ बुराई व बदकारी का ग़लबा हो, यह हमेशा के लिये मुस्तहब (पसन्दीदा) है। (तफ़सील फ़त्हुल-बारी में है)

ऊपर ज़िक्र हुई आयत में डायरेक्ट ख़िताब तो उन लोगों से है जिन्होंने हिजरत फ़र्ज़ होने के वक़्त दुनियावी ताल्लुक़ात की मुहब्बत से मग़लूब होकर हिजरत नहीं की, लेकिन आयत के अलफ़ाज़ का आम होना तमाम मुसलमानों को यह हुक्म देता है कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत इस दर्जे होनी लाज़िम व वाजिब है कि दूसरा कोई ताल्लुक़ और कोई मुहब्बत उस पर ग़ालिब न आये, और जिसने इस दर्जे की मुहब्बत पैदा न की वह अ़ज़ाब का हक़दार हो गया, उसको अल्लाह के अ़ज़ाब का मुन्तज़िर रहना चाहिये।

सच्चे ईमान की निशानी

सच्चा ईमान इसके बग़ैर नहीं हो सकता कि अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत सारी दुनिया और ख़ुद अपनी जान से भी ज़्यादा हो। इसी लिये एक सही हदीस में जो बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि कोई आदमी उस वक़्त तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसके नज़दीक उसके बाप, औलाद और दुनिया के तमाम लोगों से ज़्यादा महबूब (प्यारा) न हो जाऊँ।

और अबू दाऊद, तिर्मिज़ी में हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिसने किसी से दोस्ती की तो अल्लाह के लिये की और दुश्मनी की तो वह भी अल्लाह ही के लिये और माल को ख़र्च किया तो वह भी अल्लाह के लिये, और किसी जगह ख़र्च करने से रुका तो वह भी अल्लाह के लिये, उसने अपना ईमान मुकम्मल कर लिया।

हदीस की इन रिवायतों से भी साबित हुआ कि ईमान की तकमील इस पर निर्भर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत सब मुहब्बतों पर ग़ालिब हो, और इनसान की दोस्ती दुश्मनी, देना या न देना सब अल्लाह व रसूल के हुक्म के ताबे हो।

इमाम-ए-तफ़सीर क़ाज़ी बैज़ावी वग़ैरह ने फ़रमाया कि बहुत कम लोग हैं जो इस आयत की वईद से अलग और बाहर हों, क्योंकि आ़म तौर पर बड़े से बड़े आ़बिद व ज़ाहिद और आ़लिम व मुत्तक़ी भी बीवी-बच्चों और माल व मता की मुहब्बत से मग़लूब नज़र आते हैं, हाँ मगर जिसको अल्लाह चाहे। साथ ही क़ाज़ी बैज़ावी ने फ़रमाया कि मुहब्बत से मुराद इस जगह इख़्तियारी मुहब्बत है, ग़ैर-इख़्तियारी और तबई मुहब्बत मुराद नहीं, क्योंकि अल्लाह तआ़ला किसी इनसान को उसकी ताक़त व इख़्तियार से ज़्यादा तकलीफ़ (ज़िम्मेदारी) नहीं देते, इसलिये अगर किसी शख़्स का दिल इन दुनियावी ताल्लुक़ात की तबई मुहब्बत से भरा हुआ हो मगर उनसे इतना मग़लूब न हो कि अल्लाह व रसूल के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी की परवाह न करे, तो वह भी इस वईद से बाहर और अल्लाह व रसूल की मुहब्बत को ग़ालिब रखने वाला है। जैसे कोई बीमार दवा की कड़वाहट या ऑप्रेशन की तकलीफ़ से तबई तौर पर घबराता है, मगर अ़क़्ली

तौर पर उसको अपनी निजात व सलामती का ज़रिया समझकर इख़्तियार करता है, तो वह किसी के नज़दीक क़ाबिले मलामत नहीं, और न सही अ़क्ल उसको इस पर मजबूर करती है कि तबई और ग़ैर-इख़्तियारी घबराहट और बुरा समझने को भी दिल से निकाल दे। इसी तरह अगर किसी को माल व औलाद वग़ैरह की मुहब्बत के सबब अल्लाह के कुछ अहकाम की तामील में ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर तकलीफ़ महसूस हो, मगर इसके बावजूद वह उस तकलीफ़ को बरदाश्त करके अल्लाह के अहकाम पूरे करे तो वह भी क़ाबिले मलामत नहीं, बल्कि क़ाबिले तारीफ़ है, और अल्लाह व रसूल की मुहब्बत को इस आयत के मुताबिक़ ग़ालिब रखने वाला कहलायेगा।

हाँ इसमें शुब्हा नहीं कि मुहब्बत का आला मक़ाम यही है कि मुहब्बत तबीयत पर भी ग़ालिब आ जाये, और महबूब के हुक्म की तामील की लज़्ज़त हर कड़वाहट व तकलीफ़ को भी मज़ेदार बना दे। जैसा कि दुनिया की फ़ानी लज़्ज़त व राहत के तलबगारों को रात-दिन देखा जाता है कि बड़ी से बड़ी मेहनत व मशक़्क़त को हंस खेलकर इख़्तियार कर लेते हैं, किसी दफ़्तर की नौकरी में महीने के ख़त्म पर मिलने वाले चन्द सिक्कों की मुहब्बत इनसान की नींद, आराम और सारे ताल्लुक़ात पर ऐसी ग़ालिब आ जाती है कि उसके पीछे हज़ारों मशक़्क़तों को बड़ी कोशिशों, सिफ़ारिशों और रिश्वतों के ज़रिये हासिल करता है।

अल्लाह वालों को यह मक़ाम अल्लाह व रसूल और आख़िरत की नेमतों की मुहब्बत में ऐसा ही हासिल होता है कि उसके मुक़ाबले में कोई तकलीफ़ तकलीफ़ नज़र नहीं आती। बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तीन ख़स्लतें ऐसी हैं कि वो जिस शख़्स में पाई जायें तो उसको ईमान की मिठास हासिल हो जाती है। वे तीन ख़स्लतें ये हैं- एक यह कि अल्लाह और उसका रसूल उसके नज़दीक उनके अ़लावा हर चीज़ से ज़्यादा महबूब हो। दूसरे यह कि वह किसी अल्लाह के बन्दे से सिर्फ़ अल्लाह ही के लिये मुहब्बत रखे। तीसरे यह कि कुफ़्र व शिर्क उसको आग में डाले जाने के बराबर महसूस हो।

इस हदीस में ईमान की मिठास से मुराद मुहब्बत का यही मक़ाम है जो इनसान के लिये हर मशक़्क़त व मेहनत को लज़ीज़ बना देता है। मुहब्बत से बहुत सी कड़वाहटें मिठास में बदल जाती हैं। इसी मक़ाम के मुताल्लिक़ कुछ उलेमा ने फ़रमाया है:

وَإِذَا حَلَتِ الْحَلَاوَةُ قَلْبًا ۝ نَشَطَتْ فِي الْعِبَادَةِ الْأَعْضَاءُ

"यानी जब किसी दिल में ईमान की मिठास पैदा हो जाती है तो इबादत व इताअ़त में उसके आज़ा (बदनी अंग) लज़्ज़त पाने लगते हैं।"

इसी को कुछ रिवायतों में ईमान की ताज़गी से ताबीर किया गया है। और हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी आँखों की ठण्डक नमाज़ में है।

क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि ख़ुदा व रसूल की मुहब्बत का यह मक़ाम एक बहुत बड़ी नेमत है, मगर वह सिर्फ़ अल्लाह वालों की सोहबत व साथ ही से हासिल होती है, इसी लिये सूफ़िया-ए-किराम इसको बुज़ुर्गों की ख़िदमत से हासिल

करना ज़रूरी क़रार देते हैं। 'रूहुल-बयान' के लेखक ने फ़रमाया कि दोस्ती का यह मक़ाम उसी को हासिल होता है जो ख़लीलुल्लाह की तरह अपने माल, औलाद और जान को अल्लाह की मुहब्बत में क़ुरबान करने के लिये तैयार हो।

क़ाज़ी बैज़ावी रह. ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत व शरीअ़त की हिफ़ाज़त और उसमें रुकावटें डालने वालों से इसकी रक्षा भी अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत का एक खुला निशान है। अल्लाह तआ़ला हमें और तमाम मुसलमानों को अपनी और अपने रसूल की मुहब्बत अपनी रज़ा व पसन्दीदगी के मुताबिक़ नसीब फ़रमाये। आमीन।

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فِىْ مَوَاطِنَ كَثِيْرَةٍ ۙ وَّيَوْمَ حُنَيْنٍ ۙ اِذْ اَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَّضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُمْ مُّدْبِرِيْنَ ۞ ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ وَاَنْزَلَ جُنُوْدًا لَّمْ تَرَوْهَا وَعَذَّبَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۚ وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْكٰفِرِيْنَ ۞ ثُمَّ يَتُوْبُ اللّٰهُ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ ۚ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۞

लक़द् न-स-रकुमुल्लाहु फ़ी मवाति-न कसीरतिंव्-व यौ-म हुनैनिन् इज़् अअ़्-जबत्कुम् कस्रतुकुम् फ़-लम् तुग़्नि अन्कुम् शैअंव्-व ज़ाक़त् अ़लैकुमुल्-अर्ज़ु बिमा रहुबत् सुम्-म वल्लैतुम्-मुद्बिरीन (25) सुम्-म अन्ज़लल्लाहु सकीन-तहू अ़ला रसूलिही व अ़लल्-मुअ्मिनी-न व अन्ज़-ल जुनूदल् लम् तरौहा व अ़ज़्ज़बल्लज़ी-न क-फ़रू, व ज़ालि-क जज़ाउल्-काफ़िरीन (26) सुम्-म यतूबुल्लाहु मिम्-बअ़्दि ज़ालि-क अ़ला मंय्यशा-उ, वल्लाहु ग़फ़ूरुर्-रहीम (27)	मदद कर चुका है अल्लाह तुम्हारी बहुत मैदानों में, और हुनैन के दिन, जब ख़ुश हुए तुम अपनी अधिकता पर, फिर वह कुछ काम न आई तुम्हारे और तंग हो गई तुम पर ज़मीन बावजूद अपनी फ़राख़ी के, फिर हट गये तुम पीठ देकर। (25) फिर उतारी अल्लाह ने अपनी तरफ़ से तसकीन (सुकून व इत्मीनान) अपने रसूल पर और ईमान वालों पर और उतारीं फ़ौजें कि जिनको तुमने नहीं देखा और अ़ज़ाब दिया काफ़िरों को, और यही सज़ा है इनकारियों की। (26) फिर तौबा नसीब करेगा अल्लाह उसके बाद जिसको चाहे, और अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (27)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तुमको ख़ुदा तआ़ला ने (लड़ाई के) बहुत-से मौक़ों में (काफ़िरों पर) ग़लबा दिया, (जैसे बदर वग़ैरह) और हुनैन के दिन भी (जिसका क़िस्सा अ़जीब व ग़रीब है, तुमको ग़लबा दिया) जबकि (यह वाक़िआ़ हुआ था कि) तुमको अपने मजमे के ज़्यादा होने से ग़र्रा "यानी एक तरह का अभिमान" हो गया था, फिर वह ज़्यादती तुम्हारे लिए कुछ कारामद न हुई, और (काफ़िरों के तीर बरसाने से ऐसी परेशानी हुई कि) तुम पर ज़मीन बावजूद अपनी (इस) फ़राख़ी के तंगी करने लगी, फिर (आख़िर) तुम पीठ देकर भाग खड़े हुए। फिर (उसके बाद) अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल (के दिल) पर और दूसरे मोमिनों (के दिलों) पर अपनी (तरफ़ से) तसल्ली नाज़िल फ़रमाई, और (मदद के लिये) ऐसे लश्कर (आसमान से) नाज़िल फ़रमाये जिनको तुमने नहीं देखा (मुराद फ़रिश्ते हैं जिसके बाद तुम फिर जंग के लिये मुस्तैद हुए और ग़ालिब आये) और (अल्लाह तआ़ला ने) काफ़िरों को सज़ा दी (कि उन पर शिकस्त और क़त्ल व क़ैद की आफ़त पड़ी) और यह काफ़िरों की (दुनिया में) सज़ा है। फिर (इसके बाद) ख़ुदा तआ़ला (उन काफ़िरों में से) जिसको चाहें तौबा नसीब कर दें (चुनाँचे बहुत से मुसलमान हो गये) और अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं (कि जो शख़्स उनमें से मुसलमान हुआ उसके सब पिछले गुनाह माफ़ करके जन्नत का हक़दार बना दिया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में ग़ज़वा-ए-हुनैन की शिकस्त व फ़तह के वाक़िआ़त और उनके तहत में बहुत से उसूली और उनसे निकलने वाले मसाईल और फ़ायदों का बयान है, जैसा कि इससे पहली सूरत में मक्का के फ़तह होने और उससे संबन्धित बातों का ज़िक्र था। आयत के शुरू में हक़ तआ़ला ने अपने उस इनाम व एहसान का ज़िक्र फ़रमाया है जो मुसलमानों पर हर मौक़े और हर हालत में होता रहा है। इरशाद फ़रमायाः

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فِيْ مَوَاطِنَ كَثِيْرَةٍ.

"यानी अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी मदद फ़रमाई बहुत से मक़ामात में" और इस भूमिका के बाद ख़ुसूसियत के साथ फ़रमायाः

وَّيَوْمَ حُنَيْنٍ.

"यानी हुनैन की जंग के दिन भी अल्लाह तआ़ला की मदद पहुँची।"

ग़ज़वा-ए-हुनैन (हुनैन की लड़ाई) को विशेषता के साथ इस वजह से बयान फ़रमाया है कि उसमें बहुत से वाक़िआ़त और हालात उम्मीद के ख़िलाफ़ अ़जीब अन्दाज़ से ज़ाहिर हुए जिनमें ग़ौर करने से इनसान के ईमान में मज़बूती और अ़मल में हिम्मत पैदा होती है, इसलिये उक्त आयतों की लफ़्ज़ी तफ़सीर से पहले इस ग़ज़वे (जंग और मुहिम) के ज़रूरी वाक़िआ़त जो हदीस

व तारीख़ की मोतबर किताबों में ज़िक्र हुए हैं किसी क़द्र तफ़सील से बयान कर देना मुनासिब है, ताकि उक्त आयतों के समझने में आसानी हो और जिन फ़ायदों के लिये ये वाक़िआत बयान फ़रमाये गये हैं वो सामने आ जायें। इन वाक़िआत का ज़्यादातर हिस्सा तफ़सीर-ए-मज़हरी से लिया गया है, जिनमें हदीस व तारीख़ की किताबों के हवाले से वाक़िआत का ज़िक्र है।

हुनैन मक्का मुकर्रमा और ताईफ़ के बीच में एक जगह का नाम है, जो मक्का मुकर्रमा से दस मील से कुछ ज़्यादा फ़ासले पर स्थित है। रमज़ान 8 हिजरी में जब मक्का मुकर्रमा फ़तह हुआ और मक्का के क़ुरैश ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने हथियार डाल दिये तो अ़रब का एक बहुत बड़ा मशहूर बहादुर लड़ाका और मालदार क़बीला हवाज़िन जिसकी एक शाख़ ताईफ़ के रहने वाले बनू सक़ीफ़ भी थे, उनमें हलचल मच गयी। उन्होंने जमा होकर यह कहना शुरू किया कि मक्का फ़तह हो जाने के बाद मुसलमानों को काफ़ी क़ुव्वत हासिल हो गयी है, उससे फ़ारिग़ होने के बाद लाज़िमी है कि उनका रुख़ हमारी तरफ़ होगा, इसलिये अ़क्लमन्दी की बात यह है कि उनके हमलावर होने से पहले हम ख़ुद उन पर हमला कर दें। इस काम के लिये क़बीला हवाज़िन ने अपनी सब शाख़ों को जो मक्का से ताईफ़ तक फैली हुई थीं जमा कर लिया। इस क़बीले के सब बड़े-छोटे सिवाय चन्द गिने-चुने अफ़राद के जिनकी तायदाद सौ से भी कम थी, सब ही जमा हो गये।

इस तहरीक (आंदोलन) के लीडर मालिक बिन औ़फ़ थे, जो बाद में मुसलमान हो गये, और इस्लाम के बड़े झण्डा वाहक साबित हुए। उस वक़्त मुसलमानों के ख़िलाफ़ हमले का सबसे ज़्यादा जोश इन्हीं में था। क़बीले की भारी अक्सरियत ने इनकी राय से इत्तिफ़ाक़ करके जंग की तैयारियाँ शुरू कर दीं। इस क़बीले की छोटी-छोटी दो शाख़ें बनू कअ़ब और बनू किलाब इस राय से सहमत नहीं हुईं, अल्लाह तआ़ला ने उनको कुछ समझ दे दी थी, उन्होंने कहा कि अगर पूरब से पश्चिम तक सारी दुनिया भी मुहम्मद के ख़िलाफ़ जमा हो जायेगी तो वह उन सब पर भी ग़ालिब आयेंगे, हम ख़ुदाई ताक़त के साथ जंग नहीं कर सकते। बाक़ी सब के सब ने अ़हद किये और मालिक इब्ने औ़फ़ ने उन सब को पूरी क़ुव्वत से जंग पर क़ायम रहने की एक तदबीर यह की कि हर शख़्स के तमाम बाल-बच्चे और घर वाले भी साथ चलें, और अपना-अपना पूरा माल भी साथ लेकर निकलें, जिसका मक़सद यह था कि वे मैदान से भागने लगें तो बीवी-बच्चों और माल की मुहब्बत उनके पाँव की ज़न्जीर बन जाये, मैदान से भागने का उनके लिये कोई मौक़ा न रहे। उनकी तायदाद के बारे में इतिहासकारों के क़ौल विभिन्न हैं, हाफ़िज़े हदीस अ़ल्लामा इब्ने हजर वग़ैरह ने ज़्यादा सही इसको क़रार दिया है कि चौबीस या अट्ठाईस हज़ार का मजमा था, और कुछ हज़रात ने चार हज़ार की तायदाद बयान की है। यह मुम्किन है कि सब बीवी-बच्चों और औरतों समेत तायदाद चौबीस या अट्ठाईस हज़ार हो, और लड़ने वाले जवान उनमें चार हज़ार हों।

बहरहाल रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मक्का मुकर्रमा में उनके ख़तरनाक इरादों की इत्तिला मिली तो आपने उनके मुक़ाबले पर जाने का इरादा फ़रमा लिया। मक्का

मुकर्रमा पर हज़रत अत्ताब बिन असीद को अमीर बनाया, और हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु को उनके साथ लोगों को इस्लामी तालीमात सिखाने के लिये छोड़ा, और मक्का के क़ुरैश से असलेहा और जंग का सामान माँगे के तौर पर लिया। सफ़वान बिन उमैया जो क़ुरैश का सरदार था, बोल उठा कि क्या आप यह सामाने जंग हमसे ज़बरदस्ती करके लेना (यानी छीनना) चाहते हैं? रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नहीं बल्कि माँगे के तौर पर लेते हैं, जिसकी वापसी हमारे ज़िम्मे होगी। यह सुनकर उसने सौ ज़िरहें माँगे के तौर पर और नोफ़ल बिन हारिस ने तीन हज़ार नेज़े इसी तरह पेश कर दिये। इमाम ज़ोहरी रह. की रिवायत के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम चौदह हज़ार सहाबा का लश्कर लेकर उस जिहाद की तरफ़ मुतवज्जह हुए, जिनमें बारह हज़ार मदीना के अन्सार थे, जो मक्का फ़तह करने के लिये आपके साथ आये थे, और दो हज़ार वे मुसलमान थे जो मक्का और मक्का के आस-पास के लोगों में से मक्का फ़तह होने के वक़्त मुसलमान हो गये थे, जिनको तलक़ा कहा जाता है। शव्वाल (इस्लामी साल के दसवें महीने) की छठी तारीख़ शनिवार के दिन आप इस जंग के लिये निकले और फ़रमाया कि कल इन्शा-अल्लाह तआ़ला हमारा पड़ाव ख़ैफ़ बनी कनाना के उस मक़ाम पर होगा जहाँ जमा होकर मक्का के क़ुरैश ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ बायकाट के लिये अहद नामा लिखा था।

यह चौदह हज़ार मुजाहिदीन का लश्कर तो जिहाद के लिये निकला, इनके साथ मक्का के बेशुमार लोग मर्द व औरत तमाशाई बनकर निकले, जिनके दिलों में उमूमन यह था कि अगर इस मौक़े पर मुसलमानों को शिकस्त हो तो हमें भी अपना इन्तिक़ाम (बदला) लेने का मौक़ा मिलेगा, और ये कामयाब हों तो भी हमारा कोई नुक़सान नहीं।

इसी क़िस्म के लोगों में एक शैबा बिन उस्मान भी थे, जिन्होंने बाद में मुसलमान होकर ख़ुद अपना वाक़िआ बयान किया कि ग़ज़वा-ए-बदर में मेरा बाप हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु के हाथ से और चचा हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहू के हाथ से मारा गया था, जिसके बदले का जोश और हद से ज़्यादा ग़ुस्सा मेरे दिल में था, मैं इस मौक़े को ग़नीमत जानकर मुसलमानों के साथ हो लिया कि जब कहीं मौक़ा पाऊँ तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर हमला कर दूँ। मैं उनके साथ होकर हर वक़्त मौक़े की तलाश में रहा, यहाँ तक कि उस जिहाद के शुरूआती वक़्त में जब कुछ मुसलमानों के पाँव उखड़े और वे भागने लगे तो मैं मौक़ा पाकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़रीब पहुँचा, मगर देखा कि दाहिनी तरफ़ हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु आप की हिफ़ाज़त कर रहे हैं और बायीं तरफ़ अबू सुफ़ियान इब्ने हारिस, इसलिये मैं पीछे की तरफ़ पहुँचकर इरादा ही कर रहा था कि एक ही बार में तलवार से आप पर हमला कर दूँ कि अचानक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नज़र मुझ पर पड़ी और आपने मुझे आवाज़ दी कि शैबा! यहाँ आओ। अपने क़रीब बुलाकर अपना हाथ मुबारक मेरे सीने पर रख दिया और दुआ की कि या अल्लाह! इससे शैतान को दूर कर दे। अब जो मैं नज़र उठाता हूँ तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे दिल में अपने आँख, कान और

जान से भी ज़्यादा महबूब हो जाते हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे हुक्म दिया कि जाओ काफ़िरों का मुक़ाबला करो, अब तो मेरा यह हाल था कि मैं अपनी जान आप पर क़ुरबान कर रहा था और बड़ी बहादुरी के साथ दुश्मन का मुक़ाबला किया। जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस जिहाद से वापस आये तो मैं ख़िदमत में हाज़िर हुआ, आपने मेरे दिल के तमाम ख़्यालात की निशानदेही कर दी, कि तुम मक्का से इस नीयत से चले थे और मेरे गिर्द मेरे क़त्ल के लिये घूम रहे थे, मगर अल्लाह तआ़ला का इरादा तुमसे नेक काम लेने का था जो होकर रहा।

इसी तरह का वाक़िआ़ नज़र बिन हारिस को पेश आया कि वह भी इसी नीयत से हुनैन गये थे। वहाँ पहुँचकर अल्लाह तआ़ला ने उनके दिल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मासूमियत और मुहब्बत डाल दी, और एक मर्दे मुजाहिद बनकर दुश्मनों की सफ़ों से टकरा गये।

इसी सफ़र में अबू बर्दा बिन नय्यार रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यह वाक़िआ़ पेश आया कि औतास के स्थान पर पहुँचकर देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक दरख़्त के नीचे तशरीफ़ रखते हैं, और एक और शख़्स आपके पास बैठा है। आपने ज़िक्र फ़रमाया कि मैं सो गया था, यह शख़्स आया और मेरी तलवार अपने क़ब्ज़े में लेकर मेरे सर पर खड़ा हो गया और कहने लगा कि ऐ मुहम्मद! अब बतलाओ तुम्हें कौन मेरे हाथ से बचा सकता है? मैंने जवाब दिया कि अल्लाह बचा सकता है। यह सुनकर तलवार उसके हाथ से गिर गयी। अबू बर्दा ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! इजाज़त दीजिए कि मैं इस दुश्मने ख़ुदा की गर्दन मार दूँ, यह दुश्मन क़ौम का जासूस मालूम होता है। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अबू बर्दा ख़ामोश रहो, अल्लाह तआ़ला मेरी हिफ़ाज़त करने वाला है, जब तक कि मेरा दीन सारे दीनों पर ग़ालिब न आ जाये। और आपने उस शख़्स को कोई मलामत भी न फ़रमाई, और आज़ाद छोड़ दिया।

हुनैन के मक़ाम पर पहुँचकर मुसलमानों ने पड़ाव डाला तो हज़रत सुहैल बिन हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अ़न्हु रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में यह ख़बर लेकर हाज़िर हुए कि एक घोड़े सवार आदमी अभी दुश्मन की तरफ़ से आया है, वह बतला रहा है कि क़बीला-ए-हवाज़िन पूरा का पूरा मय अपने सब सामान के मुक़ाबले पर आ गया है। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह सुनकर मुस्कुराये और कहा कि परवाह न करो, यह सारा सामान मुसलमानों के लिये माले ग़नीमत बनकर हाथ आयेगा।

इस जगह ठहरकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन हद्दाद को जासूस बनाकर भेजा कि दुश्मन के हालात का पता चलायें। वह उनकी क़ौम में जाकर दो दिन रहे, सब हालात देखते सुनते रहे। उनके लीडर और कमाण्डर मालिक बिन औ़फ़ को देखा कि वह अपने लोगों से कह रहा है कि मुहम्मद को अब तक किसी बहादुर तजुर्बेकार क़ौम से साबक़ा नहीं पड़ा, मक्का के भोले-भाले क़ुरैशियों का मुक़ाबला करके उन्हें अपनी ताक़त का घमण्ड हो गया। अब उनको पता लगेगा, तुम सब लोग सुबह होते ही इस तरह सफ़ बन्दी करो

कि हर एक के पीछे उसके बीवी बच्चे और माल हो, और अपनी तलवार की म्यानों को तोड़ डालो, और सब मिलकर एक ही बार में हल्ला बोलो। ये लोग जंग के बड़े तजुर्बेकार थे, अपनी फ़ौज के चन्द दस्तों को विभिन्न घाटियों में छुपा दिया था।

इस तरफ़ काफ़िरों के लश्कर की यह तैयारियाँ थीं, दूसरी तरफ़ मुसलमानों का यह पहला जिहाद था, जिसमें चौदह हज़ार सिपाही मुक़ाबले के लिये निकले थे, और जंग का सामान भी हमेशा से ज़्यादा था, और ये लोग बदर व उहुद के मैदानों में यह देख चुके थे कि सिर्फ़ तीन सौ तेरह बेसामान लोगों ने एक हज़ार के ज़बरदस्त लश्कर पर फ़तह पाई, तो आज अपनी अधिक संख्या और तैयारी पर नज़र करके हाकिम और बज़्ज़ार की रिवायत के मुताबिक़ उनमें से कुछ की ज़बान से ऐसे कलिमात निकल गये कि आज तो यह मुम्किन नहीं कि हम किसी से हार जायें, आज तो मुक़ाबले की देर है कि दुश्मन फ़ौरन भागेगा।

मालिकुल-मुल्क वल्म-लकूत (यानी अल्लाह तआ़ला) को यही चीज़ नापसन्द थी कि अपनी ताक़त पर कोई भरोसा किया जाये। चुनाँचे मुसलमानों को इसका सबक़ इस तरह मिला कि जब क़बीला हवाज़िन ने अपनी योजना के मुताबिक़ एक ही बार में हल्ला बोला और घाटियों में छुपे हुए दस्तों ने चारों तरफ़ से घेरा डाला, गर्द व ग़ुबार ने दिन को रात बना दिया तो सहाबा किराम के पाँव उखड़ गये और भागने लगे। सिर्फ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी सवारी पर सवार पीछे हटने के बजाय आगे बढ़ रहे थे, और बहुत थोड़े से सहाबा-ए-किराम जिनकी तायदाद तीन सौ और कुछ हज़रात ने एक सौ या इससे भी कम बतलाई है, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जमे रहे। वे भी यह चाहते थे कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आगे न बढ़ें।

यह हालत देखकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हुक्म दिया कि बुलन्द आवाज़ से सहाबा को पुकारो कि वे लोग कहाँ हैं जिन्होंने पेड़ के नीचे जिहाद की बैअ़त की थी, और सूरः ब-क़रह वाले हज़रात कहाँ हैं, और वे अन्सार कहाँ हैं जिन्होंने जान की बाज़ी लगाने का अ़हद किया था। सब को चाहिये कि वापस आयें और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यहाँ हैं।

हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की एक आवाज़ बिजली की तरह दौड़ गयी और फ़ौरन सब भागने वालों को शर्मिन्दगी हुई, और बड़ी बहादुरी के साथ लौटकर दुश्मन का पूरा मुक़ाबला किया। उसी हालत में अल्लाह तआ़ला ने फ़रिश्तों की मदद भेज दी, उनका कमाण्डर मालिक बिन औ़फ़ अपने बाल-बच्चों और सब माल को छोड़कर भागा, और ताईफ़ के क़िले में जा छुपा, और फिर बाक़ी पूरी क़ौम भाग खड़ी हुई। उनके सत्तर सरदार मारे गये, कुछ मुसलमानों के हाथ से कुछ बच्चे ज़ख़्मी हो गये तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सख़्ती से मना फ़रमाया। उनका सब माल मुसलमानों के क़ब्ज़े में आया, छह हज़ार जंगी क़ैदी, चौबीस हज़ार ऊँट, चालीस हज़ार बकरियाँ, चार हज़ार औक़िया चाँदी हाथ आई।

पहली और दूसरी आयत में इसी मज़मून का बयान है। इरशाद फ़रमाया कि जब तुमको

अपने मजमे की अधिकता से घमण्ड हो गया था फिर वह अधिकता तुम्हारे कुछ काम न आई और ज़मीन बावजूद फ़राख़ी के तुम पर तंग हो गयी। फिर तुम पीठ देकर भाग खड़े हुए। फिर अल्लाह तआ़ला ने अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमाई अपने रसूल पर और मुसलमानों पर, और ऐसे लश्कर फ़रिश्तों के नाज़िल कर दिये जिनको तुमने नहीं देखा, और काफ़िरों को तुम्हारे हाथ से सज़ा दिलवा दी।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ.

'यानी फिर अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल पर और सब मुसलमानों पर अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी।'

मायने इसके यह हैं कि ग़ज़वा-ए-हुनैन के शुरूआ़ती हल्ले में जिन सहाबा-ए-किराम के पाँव उखड़ गये थे अल्लाह तआ़ला ने उनके दिलों पर अपनी तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी, जिससे उनके उखड़े हुए क़दम जम गये और भागने वाले फिर लौट आये; और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर और उन सहाबा पर जो मज़बूती के साथ मोर्चे पर जमे रहे तसल्ली नाज़िल फ़रमाने का मतलब यह है कि उनको अपनी फ़तह क़रीब नज़र आने लगी, और चूँकि तसल्ली की ये दो किस्में थीं- एक भागने वालों के लिये, दूसरी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जमे रहने वालों के लिये, इसी तरफ़ इशारा करने के लियेः

عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ.

को अलग-अलग बयान फ़रमाया गया है।

इसके बाद फ़रमायाः

وَاَنْزَلَ جُنُوْدًا لَّمْ تَرَوْهَا.

यानी ऐसे लश्कर नाज़िल फ़रमा दिये जिनको तुमने नहीं देखा। इससे मुराद लोगों का आ़म तौर पर न देखना है, इक्का-दुक्का हज़रात से जो कुछ रिवायतों में इस लश्कर का देखना मन्क़ूल है वह इसके ख़िलाफ़ नहीं।

फिर फ़रमायाः

وَعَذَّبَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْكٰفِرِيْنَ٥

"यानी काफ़िरों को अल्लाह तआ़ला ने सज़ा दे दी और काफ़िरों की यही सज़ा है।"

इस सज़ा से मुराद उनका मुसलमानों के हाथों पराजय और मग़लूब होना है, जो खुले तौर सब के सामने आया। मतलब यह है कि यह दुनियावी सज़ा थी, जो फ़ौरी तौर पर मिल गयी, आगे आख़िरत के मामले का ज़िक्र बाद वाली आयत में इस तरह आया हैः

ثُمَّ يَتُوْبُ اللّٰهُ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ٥

"यानी फिर ख़ुदा तआ़ला जिसको चाहें तौबा नसीब कर दें, और अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत करने वाले, बड़ी रहमत करने वाले हैं।"

इसमें इशारा है कि इस जिहाद में जिन लोगों को मुसलमानों के हाथों मग़लूब और पराजित होने की सज़ा मिल चुकी है, और अभी तक वे अपने कुफ़्र पर क़ायम हैं, उनमें से भी कुछ लोगों को ईमान की तौफ़ीक़ नसीब होगी, चुनाँचे ऐसा ही वाक़िआ पेश आया जिसकी तफ़सील यह है:

हुनैन की फ़तह, हवाज़िन व सक़ीफ़ के सरदारों का मुसलमान होकर हाज़िर होना और क़ैदियों की वापसी

हुनैन में क़बीला हवाज़िन व सक़ीफ़ के कुछ सरदार मारे गये, कुछ भाग खड़े हुए। उनके साथ जो उनके बीवी-बच्चे और माल थे वो मुसलमानों के क़ैदी और माले ग़नीमत बनकर मुसलमानों के हाथ आये। जिसमें छह हज़ार क़ैदी, चौबीस हज़ार ऊँट, चालीस हज़ार से ज़्यादा बकरियाँ और चार हज़ार औक़िया चाँदी थी, जिसके तक़रीबन चार मन (160 किलो) होते हैं, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अबू सुफ़ियान बिन हर्ब को ग़नीमत के मालों का निगराँ मुक़र्रर फ़रमाया।

फिर हारे हुए हवाज़िन और सक़ीफ़ ने विभिन्न मक़ामात पर मुसलमानों के ख़िलाफ़ इज्तिमा किया मगर हर मक़ाम पर उनको शिकस्त होती गयी। वे सख़्त मरऊब होकर ताईफ़ के अति मज़बूत क़िले में क़िला-बन्द हो गये। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पन्द्रह बीस दिन इस क़िले का घेराव किया। ये क़िले में बन्द दुश्मन अन्दर ही से तीर बरसाते रहे, सामने आने की किसी को हिम्मत न हुई। सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! इन लोगों के लिये बद्दुआ फ़रमाईये, मगर आपने उनके लिये हिदायत की दुआ़ फ़रमाई और आख़िरकार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम से मश्चिरा फ़रमाकर वापसी का इरादा फ़रमाया, और जऊ़राना के स्थान पर पहुँचकर इरादा फ़रमाया कि पहले मक्का मुअ़ज़्ज़मा जाकर उमरा अदा करें, फिर मदीना तय्यिबा को वापसी हो। मक्का वालों की बड़ी तायदाद जो तमाशाई बनकर मुसलमानों की हार-जीत का इम्तिहान करने आई थी, इस जगह पहुँचकर उनमें से बहुत लोगों ने मुसलमान होने का ऐलान कर दिया।

इसी मक़ाम पर पहुँचकर माले ग़नीमत की तक़सीम का इन्तिज़ाम किया गया था। अभी ग़नीमत के माल तक़सीम हो ही रहे थे कि अचानक हवाज़िन के चौदह सरदारों का एक मण्डल ज़ुहैर बिन सर्द के नेतृत्व में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ जिनमें हुज़ूरे पाक के दूध-शरीक चचा अबू यरक़ान भी थे। उन्होंने हाज़िर होकर अ़र्ज़ किया कि हम मुसलमान हो चुके हैं और यह दरख़्वास्त की कि हमारे बाल-बच्चे और माल हमें वापस दे दिये जायें। इस दरख़्वास्त में अ़र्ज़ किया गया कि या रसूलल्लाह! हम दूध-शरीक होने के रिश्ते से आपके क़रीबी और अपने हैं, और जो मुसीबत हम पर पड़ी है वह आपसे छुपी नहीं। आप हम पर एहसान फ़रमायें। मण्डल का सरदार एक शायर आदमी था, उसने कहा कि या रसूलल्लाह! अगर हम रोम या इराक़ के बादशाह से अपनी ऐसी मुसीबत के पेशे नज़र कोई दरख़्वास्त करते

तो हमारा ख़्याल यह है कि वे भी हमारी दरख़्वास्त को रद्द न करते, और आपको तो अल्लाह तआ़ला ने ऊँचे अख़्लाक़ में सबसे ज़्यादा विशेषता अ़ता फ़रमायी है। आप से हम बड़ी उम्मीद लेकर आये हैं।

रह्मतुल-लिल्आ़लमीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये यह मौक़ा दोहरी मुश्किल का था। एक तरफ़ इन लोगों पर रहम व करम का तक़ाज़ा यह कि इनके सब क़ैदी और माल इनको वापस कर दिये जायें, दूसरी तरफ़ यह कि ग़नीमत के मालों में तमाम मुजाहिदीन का हक़ होता है, उन सब को उनके हक़ से मेहरूम कर देना इन्साफ़ की रू से दुरुस्त नहीं। इसलिये सही बुख़ारी की रिवायत के मुताबिक़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनके जवाब में फ़रमायाः

मेरे साथ किस क़द्र मुसलमानों का लश्कर है जो इन मालों के हक़दार हैं। मैं सच्ची और साफ़ बात को पसन्द करता हूँ इसलिये आप लोगों को इख़्तियार देता हूँ कि या तो अपने क़ैदी वापस ले लो या ग़नीमत के माल। इन दोनों में से जिसको तुम चुनो वह तुम्हें दे दिये जायेंगे। सब ने क़ैदियों की वापसी को इख़्तियार किया, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तमाम सहाबा को जमा फ़रमाकर एक ख़ुतबा दिया, जिसमें अल्लाह की हम्द व सना के बाद फ़रमाया किः

> "ये तुम्हारे भाई तौबा करके आये हैं। मैं यह चाहता हूँ कि इनके क़ैदी इनको वापस दे दिये जायें, तुम में से जो लोग ख़ुशदिली के साथ अपना हिस्सा वापस देने के लिये तैयार हों वे एहसान करें और जो इसके लिये तैयार न हों तो हम उनको आईन्दा फ़ै के माल में से इसका बदला दे देंगे।"

हुक़ूक़ के मामले में राय कैसे ली जाये, इसकी तालीम

हुक़ूक़ के मामले में सार्वजनिक राय मालूम करने के लिये अ़वामी जलसों की आवाज़ें काफ़ी नहीं, हर एक से अलग राय मालूम करनी चाहिये।

हर तरफ़ से यह आवाज़ उठी कि हम दिल की ख़ुशी के साथ सब क़ैदी वापस करने के लिये तैयार हैं, मगर अ़दल व इन्साफ़ और हुक़ूक़ के मामले में एहतियात को सामने रखते हुए रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस तरह की मुख़्तलिफ़ आवाज़ों को काफ़ी न समझा और फ़रमाया कि मैं नहीं जानता कि कौन लोग अपना हक़ छोड़ने के लिये दिल की ख़ुशी से तैयार हुए और कौन ऐसे हैं जो शर्मा-शर्मी ख़ामोश रहे। मामला लोगों के हुक़ूक़ का है, इसलिये ऐसा किया जाये कि हर जमाअ़त और ख़ानदान के सरदार अपनी-अपनी जमाअ़त के लोगों से अलग-अलग सही बात मालूम करके मुझे बतायें।

इसके मुताबिक़ सरदारों ने हर एक से अलग-अलग इजाज़त हासिल करने के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतलाया कि सब लोग दिल की ख़ुशी से अपना हक़ छोड़ने के लिये तैयार हैं तब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ये सब क़ैदी उनको वापस कर दिये।

यही वे लोग थे जिनके तौबा कर लेने के बारे में मज़कूरा तीसरी आयत में इरशाद फ़रमाया गया है:

ثُمَّ يَتُوْبُ اللّٰهُ مِنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ......... الاٰيَة.

ग़ज़वा-ए-हुनैन (हुनैन की जंग) में पेश आने वाले वाक़िआत की जो तफ़सील बयान की गयी है इसका कुछ हिस्सा तो ख़ुद क़ुरआने करीम में बयान हुआ है और बाक़ी हदीस की विश्वसनीय रिवायतों से लिया गया है। (तफ़सीरे मज़हरी व इब्ने कसीर)

अहकाम व मसाईल

इन वाक़िआत के ज़िमन में बहुत से अहकाम व हिदायतें और ज़िमनी फ़वाईद आये हैं। वही इन वाक़िआत को बयान करने का असल मक़सद हैं।

उक्त आयतों में सबसे पहली हिदायत तो यह दी गयी कि मुसलमानों को किसी वक़्त भी अपने संगठन और ताक़त पर घमण्ड न होना चाहिये। जिस तरह कमज़ोरी और बेसामानी के वक़्त उनकी नज़र अल्लाह तआ़ला की मदद व नुसरत पर रहती है इसी तरह क़ुव्वत व ताक़त के वक़्त भी उनका मुकम्मल भरोसा सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की इमदाद ही पर होना चाहिये।

ग़ज़वा-ए-हुनैन में मुसलमानों की संख्यात्मक अधिकता और लड़ाई के सामान के काफ़ी होने की वजह से कुछ सहाबा किराम की ज़बान पर जो बड़ा बोल आ गया था कि आज तो किसी की मजाल नहीं जो हमसे बाज़ी लेजा सके, अल्लाह तआ़ला को अपनी इस महबूब जमाअ़त की ज़बान से ऐसे कलिमात पसन्द न आये, और उसका नतीजा यह हुआ कि शुरूआ़ती हल्ले के वक़्त मुसलमानों के पाँव उखड़ गये और भागने लगे, फिर अल्लाह तआ़ला ही की ग़ैबी मदद से यह मैदान फ़तह हुआ।

पराजित व मग़लूब काफ़िरों के मालों में अ़दल व इन्साफ़ और एहतियात

दूसरी हिदायत इस वाक़िए से यह हासिल हुई कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ग़ज़वा-ए-हुनैन के लिये मक्का के पराजित ग़ैर-मुस्लिमों से जो जंग का सामान ज़िरहें और नेज़े लिये थे, यह ऐसा मौक़ा था कि उनसे ज़बरदस्ती भी ये चीज़ें ली जा सकती थीं, मगर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आ़रियत कहकर लिया और फिर सब को उनकी माँगे के तौर पर ली हुई चीज़ें वापस कर दीं।

इस वाक़िए ने मुसलमानों को दुश्मनों के साथ भी पूरे अ़दल व इन्साफ़ और रहम व करम के मामले का सबक़ दिया।

तीसरी हिदायत उस इरशादे नबवी से हासिल हुई जिसमें हुनैन की तरफ़ जाते हुए ख़ैफ़े बनी

कनाना में पड़ाव के वक़्त फ़रमाया कि कल हम ऐसे मक़ाम पर पड़ाव करेंगे जिसमें बैठकर हमारे दुश्मन मक्का के क़ुरैशियों ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ बायकाट की क़रारदाद (प्रस्ताव) पर समझौता किया था। इसमें इशारा है कि जब मुसलमानों को हक़ तआ़ला ने फ़तह व ताक़त अ़ता फ़रमा दी तो अपने पिछले मुसीबत के दर्द को न भुला दें, ताकि अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा हो सके। हवाज़िन के शिकस्त खाये हुए लोगों के बार-बार हमलावर होने और तीर बसाने के जवाब में रहमतुल-लिल्आ़लमीन की मुबारक ज़बान से बद्दुआ़ के बजाय उनके लिये हिदायत की दुआ़ मुसलमानों को यह सबक़ दे रही है कि मुसलमानों की जंग व जिहाद का मक़सद सिर्फ़ दुश्मन को पस्त व पराजित करना नहीं, बल्कि उनको हिदायत पर लाना है। इसलिये इसकी कोशिश से किसी वक़्त ग़फ़लत न होनी चाहिये।

तीसरी आयत ने यह हिदायत कर दी कि जो काफ़िर मुक़ाबले में मग़लूब (पराजित) हो जायें उनमें से भी मायूस न हों कि शायद अल्लाह तआ़ला उनको फिर इस्लाम व ईमान की हिदायत दे दें, जैसा कि हवाज़िन के मण्डल के इस्लाम लाने के वाक़िए से साबित हुआ।

हवाज़िन क़बीले के वफ़्द की दरख़्वास्त पर उनके जंगी क़ैदियों की वापसी के वक़्त जब सहाबा-ए-किराम के मजमे से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सवाल किया और मजमे की तरफ़ से यह आवाज़ें आयीं कि हम सब उनकी वापसी के लिये दिल की ख़ुशी से रज़ामन्द हैं, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको काफ़ी न समझा बल्कि अलग-अलग हर एक की इजाज़त मालूम करने का एहतिमाम फ़रमाया।

इससे साबित हुआ कि हुक़ूक़ के मामले में जब तक दिल की ख़ुशी का इत्मीनान न हो जाये किसी का हक़ लेना जायज़ नहीं, मजमे के रौब या लोगों की शर्म से किसी का ख़ामोश रहना रज़ामन्दी के लिये काफ़ी नहीं। इसी से हज़राते-ए-फ़ुक़हा ने फ़रमाया कि किसी शख़्स पर अपने दबदबे और शान का रौब डालकर किसी दीनी मक़सद के लिये चन्दा करना भी दुरुस्त नहीं, क्योंकि ऐसे हालात में बहुत से शरीफ़ आदमी महज़ शर्मा-शर्मी कुछ दे देते हैं, पूरी रज़ामन्दी नहीं होती। इस तरह के माल में बरकत भी नहीं होती।

يَآيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْمُشْرِكُوْنَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ
الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا ۚ وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيْكُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖٓ اِنْ شَآءَ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इन्नमल्-मुश्रिकू-न न-जसुन् फ़ला यक़्रबुल्-मस्जिदल्-हरा-म बअ्-द आ़मिहिम्	ऐ ईमान वालो! मुश्रिक जो हैं सो पलीद (नापाक) हैं, सो नज़दीक न आने पायें मस्जिदे हराम के इस साल के बाद, और अगर तुम डरते हो फ़क़्र (ग़ुर्बत और

हाज़ा व इन् ख़िफ़्तुम् ऐ़ल-तन् फ़सौ-फ़ युग़्नीकुमुल्लाहु मिन् फ़ज़्लिही इन् शा-अ, इन्नल्ला-ह अ़लीमुन् हकीम (28)	तंगदस्ती) से तो आईन्दा ग़नी कर देगा तुमको अल्लाह अपने फ़ज़्ल से अगर चाहे, बेशक अल्लाह सब कुछ जानने वाला, हिक्मत वाला है। (28)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! मुश्रिक लोग (अपने गन्दे और नापाक अ़क़ीदों की वजह से) बिल्कुल नापाक हैं, सो (इस नापाकी पर जो अहकाम निकलते हैं उनमें से एक यह है कि) ये लोग इस साल के बाद मस्जिदे-हराम (यानी हरम) के पास (भी) न आने पायें (यानी हरम के अन्दर दाख़िल न हों) और अगर तुमको (इस हुक्म के जारी करने से इस वजह से) तंगदस्ती का अन्देशा हो (कि लेन-देन इन्हीं से ज़्यादा जुड़ा हुआ है, जब ये न रहेंगे तो काम कैसे चलेगा) तो (ख़ुदा पर भरोसा रखो) ख़ुदा तुमको अपने फ़ज़्ल से अगर चाहेगा (उनका) मोहताज न रखेगा, बेशक अल्लाह (अहकाम की मस्लेहतों को) ख़ूब जानने वाला है (और उन मस्लेहतों के पूरा करने के मामले में) बड़ा हिक्मत वाला है (इसलिये यह हुक्म मुक़र्रर किया और तुम्हारी ग़ुर्बत व तंगदस्ती के ख़ात्मे का सामान भी कर देगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः तौबा के शुरू में काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत का ऐलान किया गया था, उपरोक्त आयत में बराअत के उस ऐलान से संबन्धित अहकाम का ज़िक्र हैं। बराअत के ऐलान का हासिल यह था कि साल भर के अ़रसे में तमाम काफ़िरों के समझौते और संधियाँ ख़त्म या पूरे कर दिये जायें, और ऐलान के एक साल बाद कोई मुश्रिक हरम की सीमाओं में न रहने पाये।

इस आयत में इसी का बयान एक ख़ास अन्दाज़ में किया गया है, जिसमें इस हुक्म की हिक्मत व मस्लेहत भी बतला दी और इसकी तामील में जो कुछ मुसलमानों को ख़तरे थे उनका भी जवाब दे दिया। इसमें लफ़्ज़ नजस इस्तेमाल फ़रमाया है, जो नजासत के मायने में है, और नजासत कहा जाता है हर गन्दगी को, जिससे इनसान की तबीयत नफ़रत करे। इमाम राग़िब अस्फ़हानी रह. ने फ़रमाया कि इसमें वह नजासत भी दाख़िल है जो आँख, नाक या हाथ वग़ैरह से महसूस हो, और वह भी जो इल्म व अ़क़्ल के ज़रिये मालूम हो, इसलिये लफ़्ज़ नजस उस ग़िलाज़त और गन्दगी को भी शामिल है जो ज़ाहिरी तौर पर सब महसूस करते हैं, और उस बातिनी नजासत को भी जिसकी बिना पर शरअ़न वुज़ू या ग़ुस्ल वाजिब होता है, जैसे जनाबत (नापाकी की हालत) या माहवारी व निफ़ास (बच्चे की पैदाईश के बाद आने वाले ख़ून) के ख़त्म होने के बाद की हालत, और वह बातिनी नजासत भी जिसका ताल्लुक़ इनसान के दिल से है,

जैसे बुरे अ़क़ीदे और घटिया अख़्लाक़।

उक्त आयत में **इन्नमा** का लफ़्ज़ लाया गया है जो ख़ास और सीमित करने के लिये इस्तेमाल होता है, इसलिये 'इन्नमल् मुश्रिकू-न न-जसुन' के मायने यह हो गये कि मुश्रिक लोग निरी नजासत ही हैं, और सही बात यह है कि आ़म तौर पर मुश्रिकों में तीनों क़िस्म की नजासतें (गंदगियाँ) होती हैं, क्योंकि बहुत सी ज़ाहिरी नापाक चीज़ों को वे नापाक नहीं समझते, इसलिये उन ज़ाहिरी नजासतों से भी नहीं बचते जैसे शराब और उससे बनी हुई चीज़ें, और अन्दरूनी नजासत से नापाकी के बाद पाक होने के गुस्ल वग़ैरह के तो वे मोतक़िद (यक़ीन रखने वाले) ही नहीं। इसी तरह बुरे अ़क़ीदों और घटिया अख़्लाक़ को भी वे कुछ नहीं समझते।

इसी लिये ज़िक्र हुई आयत में मुश्रिकों को निरी नजासत क़रार देकर यह हुक्म दिया गयाः

فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا.

"यानी ऐसा करना चाहिये कि इस साल के बाद ये मुश्रिक लोग मस्जिदे हराम के पास न जा सकें।"

मस्जदे हराम का लफ़्ज़ आ़म तौर पर तो उस जगह के लिये बोला जाता है जो बैतुल्लाह के गिर्द चारदीवारी से घिरी हुई है, लेकिन क़ुरआन व हदीस में कई बार यह लफ़्ज़ मक्का के पूरे हरम के लिये भी इस्तेमाल हुआ है, जो कई मील मुरब्बा का रक़्बा और चारों तरफ़ हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम की स्थापित की हुई सीमाओं से घिरा हुआ है, जैसा कि मेराज के वाक़िए में "मिनल्-मस्जिदिल् हरामि" से सब के नज़दीक यही मायने मुराद लिये गये हैं। क्योंकि मेराज का वाक़िआ़ परिचित मस्जिदे हराम के अन्दर से नहीं बल्कि हज़रत उम्मे हानी रज़ियल्लाहु अ़न्हा के मकान से हुआ है। इसी तरह आयते करीमाः

اِلَّا الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ.

में मस्जिदे हराम से पूरा हरम ही मुराद है, क्योंकि सुलह के जिस वाक़िए का इसमें ज़िक्र है वह हुदैबिया के स्थान पर हुआ है, जो हरम की हदों से बाहर उससे मिला हुआ है। (जस्सास)

इसलिये आयत के मायने यह हो गये कि इस साल के बाद मुश्रिकों का दाख़िला हरम की सीमाओं में वर्जित और प्रतिबन्धित है। इस साल से मुराद कौनसा साल है, कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि सन् 10 हिजरी मुराद है, मगर मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक सन् 9 हिजरी वरीयता प्राप्त है, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बराअत का ऐलान हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़रिये हज के दिनों में इसी 9 हिजरी में कराया है, इसलिये सन् 9 हिजरी से 10 हिजरी तक मोहलत का साल है, 10 हिजरी के बाद यह क़ानून नाफ़िज़ हुआ।

मुश्रिकों के मस्जिदे हराम में दाख़िले की मनाही का मतलब

मुश्रिकीन के मस्जिदे हराम में दाख़िले की मनाही का मतलब और यह कि यह मनाही

मस्जिदे हराम की ख़ुसूसियत है या सब मस्जिदों के लिये आम है।

उक्त आयत में जो हुक्म दिया गया है कि सन् 10 हिजरी के बाद से कोई मुश्रिक मस्जिदे हराम के पास न जाने पाये इसके बारे में तीन बातें ग़ौर-तलब हैं, कि यह हुक्म मस्जिदे हराम के साथ मख़्सूस है या दुनिया की दूसरी मस्जिदें भी इसी हुक्म में दाख़िल हैं। और अगर मस्जिदे हराम के साथ मख़्सूस है तो किसी मुश्रिक का दाख़िला मस्जिदे हराम में पूरी तरह मना है या सिर्फ़ हज व उमरे के लिये दाख़िले की मनाही है, वैसे जा सकता है। तीसरे यह कि आयत में यह हुक्म मुश्रिकों का बयान किया गया है, काफ़िर अहले किताब भी इसमें शामिल हैं या नहीं?

इन तफ़सीलात के मुताल्लिक़ चूँकि क़ुरआन के अलफ़ाज़ ख़ामोश हैं इसलिये क़ुरआनी इशारात और हदीस की रिवायतों को सामने रखकर मुज्तहिद इमामों ने अपने अपने इज्तिहाद (ग़ौर व फ़िक्र और क़ुरआन व हदीस में खोज) के मुताबिक़ अहकाम बयान फ़रमाये। इस सिलसिले में पहली बहस इसमें है कि क़ुरआने करीम ने मुश्रिकों को नजस (नापाक और गंदगी) किस एतिबार से क़रार दिया है, अगर ज़ाहिरी नजासत या अन्दरूनी नापाकी वग़ैरह मुराद है तो ज़ाहिर है कि किसी मस्जिद में नजासत का दाख़िल करना जायज़ नहीं। इसी तरह जनाबत वाले (यानी नापाक, जिस पर ग़ुस्ल वाजिब हो) शख़्स या माहवारी व ज़चगी वाली औरत का दाख़िला किसी मस्जिद में जायज़ नहीं। और अगर इसमें नजासत से मुराद कुफ़्र व शिर्क की बातिनी नजासत है तो मुम्किन है कि इसका हुक्म ज़ाहिरी नजासत से अलग हो।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि मदीना के फ़ुक़हा इमाम मालिक वग़ैरह ने फ़रमाया कि मुश्रिक लोग हर मायने के एतिबार से नापाक हैं, ज़ाहिरी नजासत से भी उमूमन बचाव नहीं करते और जनाबत (नापाक हो जाने) वग़ैरह के बाद ग़ुस्ल का भी एहतिमाम नहीं करते, और कुफ़्र व शिर्क की अन्दरूनी नजासत तो उनमें है ही, इसलिये यह हुक्म तमाम मुश्रिकों और तमाम मस्जिदों के लिये आम है। और इसकी दलील में हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रह. का यह फ़रमान पेश किया जिसमें उन्होंने शहरों के हाकिमों को हिदायत की थी कि काफ़िरों को मस्जिदों में दाख़िल न होने दें, इस फ़रमान में इसी आयते मज़कूरा को तहरीर फ़रमाया था।

साथ ही यह कि हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

لَا اُحِلُّ الْمَسْجِدَ لِحَائِضٍ وَّلَاجُنُبٍ.

"यानी मस्जिद में दाख़िल होना किसी माहवारी वाली औरत या जुनुबी (जिस पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो, यानी नापाक) शख़्स के लिये मैं हलाल नहीं समझता।"

और मुश्रिक व काफ़िर लोग उमूमन नापाकी की हालत में ग़ुस्ल का एहतिमाम नहीं करते, इसलिये उनका दाख़िला मसाजिद में वर्जित और मना है।

इमाम शाफ़ई रह. ने फ़रमाया कि यह हुक्म मुश्रिकों, काफ़िरों और अहले किताब सब के लिये आम है, मगर मस्जिदे हराम के लिये मख़्सूस है, दूसरी मसाजिद में उनका दाख़िला वर्जित नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) और दलील में समामा इब्ने उसाल का वाक़िआ पेश करते हैं कि

मुसलमान होने से पहले यह गिरफ़्तार हुए तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनको मस्जिदे नबवी के एक सुतून से बाँध दिया था।

इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक आयत में मुश्रिकों को मस्जिदे हराम के क़रीब जाने से मना करने का मतलब यह है कि आईन्दा साल से उनको मुश्रिकाना तर्ज़ पर हज व उमरा करने की इजाज़त न होगी, और दलील यह है कि जिस वक़्त हज के मौसम में हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़रिये बराअत का ऐलान कर दिया गया तो उसमें ऐलान इसी का था किः

لا يحجن بعد العام مشرك.

जिसमें ज़ाहिर कर दिया गया था कि इस साल के बाद कोई मुश्रिक हज न कर सकेगा, इसलिये इस आयत में 'अल्मस्जिदल् हराम' के मायने भी इस ऐलान के मुताबिक़ यही हैं कि उनको हज व उमरे की मनाही कर दी गयी, और किसी ज़रूरत से अमीरुल-मोमिनीन की इजाज़त से दाख़िल हो सकते हैं। सक़ीफ़ के प्रतिनिधि मण्डल का वाक़िआ इसका सुबूत है कि फ़त्हे-मक्का के बाद जब उनका एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो आपने उनको मस्जिद में ठहराया, हालाँकि ये लोग उस वक़्त काफ़िर थे। सहाबा किराम ने अ़र्ज़ भी किया- या रसूलल्लाह! ये नापाक क़ौम है, तो आपने फ़रमाया कि मस्जिद की ज़मीन पर इन लोगों की नापाकी का कोई असर नहीं पड़ता। (जस्सास)

इस रिवायत ने यह बात भी स्पष्ट कर दी कि क़ुरआने करीम में मुश्रिकों को नापाक और गन्दगी कहने से उनकी कुफ़्र व शिर्क की गन्दगी मुराद है, जैसा कि इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. का मस्लक है। इसी तरह हज़रत जाबिर इब्ने अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई मुश्रिक मस्जिद के पास न जाये, सिवाय उसके कि वह किसी मुसलमान का गुलाम या बाँदी हो तो ज़रूरत की वजह से उसको दाख़िल कर सकते हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

यह हदीस भी इसका सुबूत है कि ज़ाहिरी गन्दगी को सबब क़रार देकर मुश्रिकों को मस्जिदे हराम से नहीं रोका गया वरना इसमें गुलाम और बाँदी की कोई तख़्सीस (ख़ास करना) न थी, बल्कि बुनियाद असल कुफ़्र व शिर्क और उनके ग़लबे का ख़तरा है, गुलाम व बाँदी में यह ख़तरा नहीं, उनको इजाज़त दे दी गयी। इसके अ़लावा ज़ाहिरी नापाकी के एतिबार से तो मुसलमान भी इसमें दाख़िल हैं कि नजासत या ग़ुस्ल वाजिब होने की हालत में उनके लिये भी मस्जिदे हराम का दाख़िला वर्जित और मना है।

और अक्सर उलेमा की तफ़सीर के मुताबिक़ मस्जिदे हराम से इस जगह जब पूरा हरम मुराद है तो वह भी इसी को चाहता है कि यह मनाही ज़ाहिरी नापाकी व गंदगी की बुनियाद पर नहीं बल्कि कुफ़्र व शिर्क की नजासत की बिना पर है। इसी लिये सिर्फ़ मस्जिदे हराम में उनका दाख़िला मना और वर्जित नहीं किया गया बल्कि पूरे सम्मानित हरम में वर्जित और मना क़रार

दिया गया, क्योंकि वह इस्लाम का एक क़िला है, उसमें किसी ग़ैर-मुस्लिम को रखना गवारा नहीं किया जा सकता।

इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा रह. की इस तहक़ीक़ का हासिल यह है कि अगरचे नजासतों (गंदगियों व नापाकियों) से मस्जिदों को पाक करना भी एक मुस्तक़िल मसला है, जो क़ुरआन मजीद और हदीसों से साबित है, लेकिन इस आयत का ताल्लुक़ इस मसले से नहीं बल्कि इस्लाम के उस सियासी हुक्म से है जिसका ऐलान सूरः बराअत के शुरू में किया गया है, कि जितने मुश्रिक मक्का में मौजूद थे उन सबसे सम्मानित हरम को ख़ाली कराना मक़सूद था, लेकिन अ़दल व इन्साफ़ और रहम व करम के तक़ाज़े से मक्का फ़तह होते ही सब को एक दम ख़ारिज करने का हुक्म नहीं दिया गया, बल्कि जिन लोगों से किसी ख़ास मियाद का समझौता था और वे लोग उस समझौते पर क़ायम रहे तो उनके समझौते की मियाद पूरी करके और बाक़ियों को कुछ-कुछ मोहलत देकर साल भर के अन्दर इस तजवीज़ को पूरा करना पेशे नज़र था। इसी का बयान इस आयत में आया कि इस साल के बाद मुश्रिकों का दाख़िला हरम की हदों में मना और वर्जित हो जायेगा। वे मुश्रिकाना तरीक़े पर हज व उमरा न करने पायेंगे।

और जिस तरह सूरः तौबा की आयतों में स्पष्ट तौर पर यह बयान कर दिया गया है कि सन् 9 हिजरी के बाद कोई मुश्रिक हरम की हदों में दाख़िल न हो सकेगा, हदीस की रिवायतों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस दायरे को और फैलाकर पूरे अ़रब ख़ित्ते के लिये भी हुक्म दे दिया था, मगर हुज़ूरे पाक के दौर में इसकी तकमील न होने पाई, फिर सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु भी दूसरे हंगामी मसाईल की वजह से इस पर तवज्जोह न दे सके, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अपने ज़माने में इस हुक्म को नाफ़िज़ फ़रमाया।

अब रहा काफ़िरों की नजासत (नापाकी व गंदगी) और मस्जिदों को नजासतों से पाक करने का मसला, वह अपनी जगह है, जिसके मसाईल फ़िक़्हा की किताबों में तफ़सील से बयान हुए हैं। कोई मुसलमान भी ज़ाहिरी नजासत (नापाकी व गंदगी) या नापाकी की हालत में किसी मस्जिद में दाख़िल नहीं हो सकता, और आ़म काफ़िर व मुश्रिक हों या अहले किताब वे भी उमूमन इन नजासतों से पाक नहीं होते, इसलिये बिना सख़्त ज़रूरत के उनका दाख़िला भी किसी मस्जिद में जायज़ नहीं।

इस आयत की रू से जब काफ़िर व मुश्रिक का दाख़िला हरम में मना और वर्जित कर दिया गया तो मुसलमानों के सामने एक आर्थिक समस्या यह पेश आयी कि मक्का में कोई पैदावार नहीं, बाहर के आने वाले ही अपने साथ ज़रूरत की चीज़ें लाते थे, और हज के मौसम में मक्का वालों के लिये सब ज़रूरतें जमा हो जाती थीं। अब उनका दाख़िला मना हो जाने के बाद काम कैसे चलेगा? इसका जवाब क़ुरआन में यह दिया गया कि:

وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيْكُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖٓ اِنْ شَآءَ.

"यानी अगर तुम्हें आर्थिक समस्याओं का डर हो तो समझ लो कि तमाम मख़्लूक़ की रोज़ी का निज़ाम अल्लाह तआ़ला के हाथ में है। अगर वह चाहेंगे तो तुम्हें उन सब काफ़िरों से

बेपरवाह कर देंगे। और यहाँ "अगर चाहेंगे" की क़ैद लगाने का मतलब यह नहीं कि इसमें कोई शक व शुब्हा है, बल्कि इशारा इस बात की तरफ़ है कि सिर्फ़ माद्दी असबाब पर नज़र रखने वालों के लिये अगरचे यह बात बहुत दूर की और मुश्किल नज़र आती है कि ज़ाहिरी तौर पर रोज़ी का ज़रिया और माध्यम यही ग़ैर-मुस्लिम थे, इनका दाख़िला वर्जित और मना करना अपने लिये रोज़ी व रोज़गार के साधनों को ख़त्म करने के बराबर है, मगर उनको मालूम होना चाहिये कि अल्लाह तआ़ला इन माद्दी असबाब (माध्यमों और साधनों) का मोहताज नहीं, जब उनका इरादा किसी काम के बारे में हो जाये तो सब असबाब मुवाफ़िक़ होते चले जाते हैं, बस चाहने की देर है और कुछ नहीं। इसलिये इन् शा-अ फ़रमाकर इसकी तरफ़ इशारा कर दिया।

قَاتِلُوا الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَلَا يُحَرِّمُوْنَ مَا حَرَّمَ
اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَلَا يَدِيْنُوْنَ دِيْنَ الْحَقِّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حَتّٰى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَّدٍ وَّهُمْ
صٰغِرُوْنَ ۝ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ ۚ ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ ع 10
بِاَفْوَاهِهِمْ ۚ يُضَاهِـُٔوْنَ قَوْلَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَبْلُ ۚ قٰتَلَهُمُ اللّٰهُ ۚ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝

क़ातिलुल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्लाहि व ला बिल्यौमिल्-आख़िरि व ला युहर्रिमू-न मा हर्रमल्लाहु व रसूलुहू व ला यदीनू-न दीनल्-हक़्क़ि मिनल्लज़ी-न ऊतुल्किता-ब हत्ता युअ्तुल् जिज़्य-त अंय्यदिंव्-व हुम् साग़िरून (29) ✿	लड़ो उन लोगों से जो ईमान नहीं लाते अल्लाह पर और न आख़िरत के दिन पर, और न हराम जानते हैं उसको जिसको हराम किया अल्लाह ने और उसके रसूल ने, और न क़ुबूल करते हैं दीन सच्चा उन लोगों में से जो अहले किताब हैं, यहाँ तक कि वे जिज़्या दें अपने हाथ से ज़लील होकर। (29) ✿
व क़ालतिल्-यहूदु अ़ुज़ैरु-निब्नुल्लाहि व क़ालतिन्नसारल्-मसीहुब्नुल्लाहि, ज़ालि-क क़ौलुहुम् बिअफ़्वाहिहिम् युज़ाहिऊ-न क़ौलल्लज़ी-न क-फ़रू मिन् क़ब्लु, क़ात-लहुमुल्लाहु अन्ना युअ्फ़कून (30)	और यहूद ने कहा कि उज़ैर अल्लाह का बेटा है और ईसाईयों ने कहा कि मसीह अल्लाह का बेटा है। ये बातें कहते हैं अपने मुँह से, रीस करने लगे पहले काफ़िरों की बात की, हलाक करे उनको अल्लाह, कहाँ से फिरे जाते हैं। (30)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अहले किताब जो कि न ख़ुदा पर (पूरा-पूरा) ईमान रखते हैं और न क़ियामत के दिन पर (पूरा ईमान रखते हैं), और न उन चीज़ों को हराम समझते हैं जिनको ख़ुदा तआ़ला ने और उसके रसूल (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने हराम बतलाया है, और न सच्चे दीन (इस्लाम) को क़ुबूल करते हैं, उनसे यहाँ तक लड़ो कि वे मातहत होकर और रइय्यत बनकर जिज़्या "यानी इस्लामी हुकूमत में रहने का टैक्स" देना मन्ज़ूर करें।

और यहूद (में से कुछ) ने कहा कि (नऊज़ु बिल्लाह) उज़ैर (अ़लैहिस्सलाम) ख़ुदा के बेटे हैं, और ईसाइयों (में से अक्सर) ने कहा कि मसीह (अ़लैहिस्सलाम) ख़ुदा के बेटे हैं, यह उनका क़ौल है उनके मुँह से कहने का (जिसका वास्तव में कहीं नाम व निशान नहीं)। ये भी उन लोगों जैसी बातें करने लगे जो इनसे पहले काफ़िर हो चुके हैं (मुराद अ़रब के मुश्रिक लोग हैं जो फ़रिश्तों को ख़ुदा की बेटियाँ कहते थे। मतलब यह कि उनको तो ये भी काफ़िर समझते हैं, फिर उन्हीं के जैसी कुफ़्रिया बातें बकते हैं। और पहले होना इस मायने पर है कि मुश्रिक लोगों की गुमराही पुरानी थी) ख़ुदा इनको ग़ारत करे, ये किधर उल्टे जा रहे हैं (कि ख़ुदा पर ऐसे बोहतान बाँधते हैं, ये तो उनकी कुफ़्रिया बातें थीं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में मक्का के मुश्रिकों से जिहाद व क़िताल का ज़िक्र था, इन आयतों में अहले किताब से जिहाद का बयान है। यह गोया ग़ज़्वा-ए-तबूक की भूमिका है जो अहले किताब के मुक़ाबले में पेश आया है। तफ़सीर दुर्रे मन्सूर में मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत मुजाहिद रह. से नक़ल किया गया है कि ये आयतें ग़ज़्वा-ए-तबूक के बारे में नाज़िल हुई हैं, और लफ़्ज़ अहले किताब अगरचे अपने लुग़वी मायने के एतिबार से हर उस काफ़िर जमाअ़त पर हावी है जो किसी आसमानी किताब पर ईमान रखती हो, लेकिन क़ुरआने करीम की परिभाषा में यह लफ़्ज़ सिर्फ़ यहूदियों व ईसाईयों के लिये इस्तेमाल हुआ है, क्योंकि अ़रब के आस-पास में अहले किताब के यही दो फ़िर्क़े परिचित थे, इसी लिये क़ुरआने करीम ने अ़रब के मुश्रिकों को संबोधित करते हुए फ़रमाया है:

اَنْ تَقُوْلُوْٓا اِنَّمَآ اُنْزِلَ الْكِتٰبُ عَلٰى طَآئِفَتَيْنِ مِنْ قَبْلِنَا وَاِنْ كُنَّا عَنْ دِرَاسَتِهِمْ لَغٰفِلِيْنَ۝

और जिहाद व जंग का जो हुक्म इस आयत में अहले किताब के मुक़ाबले में दिया गया है वह दर हक़ीक़त अहले किताब के साथ मख़्सूस नहीं, बल्कि काफ़िरों की तमाम जमाअ़तों का यही हुक्म है, क्योंकि इस आयत में जंग के हुक्म की जो वजह आगे बयान की गयी हैं वो सब काफ़िरों में साझा हैं, तो हुक्म भी साझा और संयुक्त होना चाहिये, मगर ज़िक्र में अहले किताब की ख़ुसूसियत इसलिये की गयी कि यह मुम्किन था कि मुसलमानों को उनके मुक़ाबले में जिहाद

व क़िताल (जंग) करने से इस बिना पर झिझक हो कि ये लोग किसी दर्जे में ईमान रखते हैं, तौरात व इंजील और हज़रत मूसा व ईसा अ़लैहिमस्सलाम पर इनका ईमान है, तो मुम्किन था कि पहले नबियों और उनकी किताबों के साथ इनका मन्सूब होना मुसलमानों के लिये जिहाद से रुकावट का सबब बन जाये, इसलिये विशेष तौर पर उनके साथ जंग व क़िताल का ज़िक्र कर दिया गया।

दूसरे इस जगह ज़िक्र में अहले किताब के साथ तख़्सीस (ख़ास) करने से इस तरफ़ भी इशारा हो गया कि एक हैसियत से ये लोग ज़्यादा सज़ा के मुस्तहिक़ हैं, क्योंकि ये इल्म रखने वाले थे, इनके पास तौरात व इंजील का इल्म था, जिनमें आख़िरी नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ज़िक्र मुबारक और हुलिया तक तफ़सील से बयान हुआ है। उस इल्म के बावजूद इनका कुफ़्र व इनकार और इस्लाम व मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशें, तो एक हैसियत से इनका जुर्म ज़्यादा सख़्त हो गया, इसलिये ख़ुसूसी तौर पर इनसे जंग का ज़िक्र किया गया।

जंग के हुक्म के चार कारण इस आयत में बतलाये गये हैं- अव्वलः

لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ.

यानी वे अल्लाह पर ईमान नहीं रखते। दूसरेः

وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ.

यानी आख़िरत पर ईमान नहीं रखते। तीसरेः

لَا يُحَرِّمُوْنَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ.

यानी उन चीज़ों को हराम नहीं समझते जिनको अल्लाह ने हराम बतलाया है। चौथेः

لَا يَدِيْنُوْنَ دِيْنَ الْحَقِّ.

यानी सच्चे दीन को क़ुबूल नहीं करते।

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि अहले किताब यहूदी व ईसाई तो बज़ाहिर ख़ुदा तआ़ला पर भी ईमान रखते हैं और आख़िरत व क़ियामत के भी क़ायल हैं, फिर इन चीज़ों पर उनके ईमान की नफ़ी क्यों की गयी? वजह यह है कि महज़ ईमान लाने के अलफ़ाज़ तो काफ़ी नहीं, जिस तरह का ईमान अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मतलूब है, जब उस तरह का ईमान न हुआ तो वह न होने के हुक्म में है। यहूदियों व ईसाईयों ने अगरचे ऐलानिया तौर पर तौहीद का इनकार नहीं किया मगर जैसा कि अगली आयत में आ रहा है कि यहूद ने हज़रत उज़ैर अ़लैहिस्सलाम को और ईसाईयों ने हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा का बेटा कहकर उसकी ख़ुदाई में शरीक ठहरा दिया, इसलिये उनका तौहीद का इक़रार बेकार और ईमान का दावा ग़लत हो गया।

इसी तरह आख़िरत पर जिस तरह का ईमान मतलूब है वह भी अक्सर अहले किताब में नहीं रहा था। उनमें से बहुत से लोग यह अ़क़ीदा रखते थे कि क़ियामत में माद्दी जिस्मों के साथ दोबारा उठना और ज़िन्दा होना न होगा, बल्कि एक क़िस्म की रूहानी ज़िन्दगी होगी, और जन्नत व दोज़ख़ भी कोई ख़ास मक़ामात नहीं, रूह की ख़ुशी का नाम जन्नत और रंज का नाम

जहन्नम है, जो अल्लाह के इरशादात के सरासर ख़िलाफ़ है, इसलिये आख़िरत के दिन पर भी उनका ईमान दर हक़ीक़त ईमान न हुआ।

तीसरी चीज़ जो यह फ़रमाई कि जिन चीज़ों को अल्लाह तआ़ला ने हराम क़रार दिया है ये उनको हराम नहीं समझते। इससे मुराद यह है कि बहुत सी चीज़ें जिनको तौरात या इंजील ने हराम क़रार दिया था ये उसकी हुर्मत के क़ायल नहीं, जैसे सूद, इसी तरह और बहुत सी खाने पीने की चीज़ें जो तौरात व इंजील में हराम क़रार दी गयी थीं इन्होंने उनको हराम न समझा, और उनमें मुब्तला हो गये।

इससे यह मसला भी मालूम हो गया कि जिस चीज़ को अल्लाह तआ़ला ने हराम क़रार दिया है उसको हलाल समझना सिर्फ़ एक गुनाह करने ही का जुर्म नहीं बल्कि कुफ़्र है। इसी तरह किसी हलाल चीज़ को हराम क़रार देना भी कुफ़्र है, हाँ अगर हराम को हराम समझते हुए अ़मली कोताही ग़लती से हो जाये तो वह कुफ़्र नहीं, बुराई और गुनाह है।

उक्त आयत में इन लोगों से जिहाद व क़िताल (जंग) करते रहने की एक हद और इन्तिहा भी बतलाई है:

حَتّٰى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَّدٍ وَّهُمْ صٰغِرُوْنَ○

यानी जंग का यह हुक्म उस वक़्त तक जारी रहेगा जब तक कि ये मातहत होकर, रइय्यत बनकर जिज़्या (टैक्स) देना मन्ज़ूर न कर लें।

जिज़्या के लफ़्ज़ी मायने बदले और जज़ा के हैं, शरीअ़त की परिभाषा में इससे मुराद वह रक़म है जो काफ़िरों से क़त्ल के बदले में ली जाती है।

वजह यह है कि कुफ़्र व शिर्क अल्लाह और रसूल की बग़ावत है, जिसकी असली सज़ा क़त्ल है, मगर अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल रहमत से उनकी सज़ा में यह कमी कर दी कि अगर वे इस्लामी हुकूमत की रइय्यत बनकर आ़म इस्लामी क़ानून के मातहत रहना मन्ज़ूर करें तो उनसे एक मामूली रक़म जिज़्ये की लेकर छोड़ दिया जाये, और इस्लामी मुल्क का बाशिन्दा (रहने वाला) होने की हैसियत से उनकी जान व माल, आबरू की हिफ़ाज़त इस्लामी हुकूमत के ज़िम्मे होगी। उनकी मज़हबी रस्मों में कोई रोक-टोक न की जाये, इसी रक़म को जिज़्या कहा जाता है।

जिज़्ये का निर्धारण अगर आपसी समझौते और रज़ामन्दी से हो तो शरअ़न उसकी कोई हद बन्दी नहीं, जितनी मिक़्दार (मात्रा) और जिस चीज़ पर आपसी समझौता सुलह का हो जाये वही उनसे लिया जायेगा, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नजरान वालों के साथ ऐसा ही मामला फ़रमाया कि उनकी पूरी जमाअ़त से सालाना दो हज़ार हुल्ले देने पर समझौता हो गया। हुल्ला दो कपड़ों के जोड़े को कहते हैं, एक तहबन्द एक चादर। हर हुल्ले की क़ीमत का अन्दाज़ा भी तय कर दिया गया था कि एक औक़िया चाँदी की क़ीमत का होगा, औक़िया चालीस दिरहम यानी हमारे वज़न के एतिबार से तक़रीबन साढ़े ग्यारह तौले चाँदी होती है।

इसी तरह बनू तग़लिब से हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु का इस पर समझौता हुआ कि उनका जिज़या इस्लामी ज़कात के हिसाब से वसूल किया जाये, मगर ज़कात से दुगना।

और अगर मुसलमानों ने किसी मुल्क को जंग के ज़रिये फ़तह किया, फिर वहाँ के बाशिन्दों की जायदादों को उन्हीं की मिल्कियत पर बरक़रार रखा, और वे रइय्यत बनकर रहने पर रज़ामन्द हो गये तो उनके जिज़्ये की मुक़र्रर दर यह होगी जो हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में नाफ़िज़ फ़रमाई कि सरमायेदार मालदारों से चार दिरहम और दरमियानी हालत वालों से इसका आधा सिर्फ़ दो दिरहम, और ग़रीब से जो तन्दुरुस्त और मेहनत मज़दूरी या कारीगरी व तिजारत वग़ैरह के ज़रिये कमाता है उससे इसका भी आधा सिर्फ़ एक दिरहम माहाना, यानी साढ़े तीन माशे चाँदी या उसकी क़ीमत ली जाये, और जो बिल्कुल ग़रीब या अपाहिज या अपंग व विकलांग हैं उनसे कुछ न लिया जाये। इसी तरह औरतों, बच्चों, बूढ़ों और उनके दुनिया से किनाराकश धार्मिक पेशवाओं से कुछ न लिया जाये।

इतनी थोड़ी और मामूली मात्रा के लेने के लिये भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिदायतें ये थीं कि किसी शख़्स पर उसकी ताक़त से ज़्यादा भार न डाला जाये, और जो शख़्स किसी ग़ैर-मुस्लिम बाशिन्दे पर ज़ुल्म करेगा तो मैं क़ियामत के दिन ज़ालिम के मुक़ाबले में उस ग़ैर-मुस्लिम की हिमायत करूँगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसी तरह की रिवायतों से कुछ फ़िक़्हा के इमामों का मज़हब यह है कि दर असल जिज़्ये की कोई ख़ास दर शरीअ़त में मुक़र्रर नहीं है, बल्कि हाकिमे वक़्त की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर है, उन लोगों के हालात का जायज़ा लेकर उसके मुनासिब तजवीज़ करें।

इस बयान से यह हक़ीक़त भी स्पष्ट हो गयी कि जिज़्या काफ़िरों से क़त्ल की सज़ा ख़त्म करने का मुआवज़ा है, इस्लाम का बदला नहीं। इसलिये यह शुब्हा नहीं हो सकता कि थोड़े से दाम लेकर इस्लाम से विमुख होने और कुफ़्र पर क़ायम रहने की इजाज़त कैसे दे दी गयी, और इसकी वाज़ेह दलील यह है कि अपने मज़हब पर क़ायम रहते हुए इस्लामी हुकूमत में रहने की इजाज़त बहुत से उन लोगों को भी मिलती है जिनसे जिज़या नहीं लिया जाता, मसलन औरतें, बच्चे, बूढ़े, मज़हबी पेशवा, अपाहिज माज़ूर। अगर जिज़या इस्लाम का बदला होता तो उनसे भी लिया जाना चाहिये था।

उक्त आयत में जिज़्या देने के साथ जो "अंय्-यदिन्" फ़रमाया है इसमें हर्फ़ अ़न सबब के मायने में और यदिन् क़ुव्वत व ग़लबे के मायने में है। और मायने यह हैं कि यह जिज़्ये का देना इख़्तियारी चन्दे या ख़ैरात के तौर पर न हो बल्कि इस्लामी ग़लबे को तस्लीम करने और उसके मातहत रहने की हैसियत से हो (जैसा कि तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में है) और 'व हुम् साग़िरून' के मायने इमाम शाफ़ई रह. की तफ़सीर के मुताबिक़ ये हैं कि वे लोग इस्लाम के आ़म (जनरल) क़ानून के पालन को अपने ज़िम्मे लाज़िम क़रार दें। (रूहुल-मआ़नी व मज़हरी)

और इस आयत में जो यह हिदायत की गयी है कि जब ये लोग जिज़या अदा करना मन्ज़ूर कर लें तो जंग बन्द कर दी जाये, इसमें फ़ुक़हा की अक्सरियत के नज़दीक तमाम काफ़िर

शामिल हैं, चाहे अहले किताब हों या ग़ैर-अहले किताब, अलबत्ता अ़रब के मुश्रिक लोग इस हुक्म से अलग और बाहर हैं, कि उनसे जिज़्या क़ुबूल नहीं किया गया।

दूसरी आयत में इसी मज़मून की और अधिक तफ़सील है, जिसका ज़िक्र पहली आयत में संक्षिप्त रूप से आया है कि ये अहले किताब अल्लाह पर ईमान नहीं रखते, इस दूसरी आयत में फ़रमाया कि यहूद तो हज़रत उज़ैर अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा का बेटा कहते हैं और ईसाई हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को, इसलिये उनका तौहीद (अल्लाह को एक मानने) और ईमान का दावा ग़लत हुआ। फिर फ़रमायाः

ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ

"यानी ये उनका क़ौल है उनके मुँह से" इसके मायने यह भी हो सकते हैं कि ये लोग साफ़ तौर पर अपनी ज़बानों से इसका इक़रार करते हैं, कोई छुपी चीज़ नहीं। और ये मायने भी हो सकते हैं कि कुफ़्र का यह कलिमा सिर्फ़ उनकी ज़बानों पर है, न इसकी कोई वजह बता सकते हैं न दलील। फिर इरशाद फ़रमायाः

يُضَاهِئُوْنَ قَوْلَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَبْلُ. قٰتَلَهُمُ اللّٰهُ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ۝

"यानी ये उन लोगों के जैसी बातें करने लगे जो इनसे पहले काफ़िर हो चुके हैं, ख़ुदा इनको ग़ारत करे, ये किधर उल्टे जा रहे हैं।"

मतलब यह है कि यहूदी व ईसाई नबियों को ख़ुदा का बेटा कहने में ऐसे ही हो गये जैसे पिछले काफ़िर व मुश्रिक लोग थे, कि फ़रिश्तों को और लात व मनात को ख़ुदा की बेटियाँ कहते थे।

اِتَّخَذُوْٓا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ
وَالْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ ۚ وَمَآ اُمِرُوْٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوْٓا اِلٰهًا وَّاحِدًا ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ سُبْحٰنَهٗ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝٣١
يُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّطْفِئُوْا نُوْرَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ وَيَاْبَى اللّٰهُ اِلَّآ اَنْ يُّتِمَّ نُوْرَهٗ وَلَوْ كَرِهَ الْكٰفِرُوْنَ ۝٣٢ هُوَ
الَّذِيْٓ اَرْسَلَ رَسُوْلَهٗ بِالْهُدٰى وَدِيْنِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهٗ عَلَى الدِّيْنِ كُلِّهٖ ۙ وَلَوْ كَرِهَ الْمُشْرِكُوْنَ ۝٣٣ النصف
يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ الْاَحْبَارِ وَالرُّهْبَانِ لَيَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَ
يَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۗ وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۙ
فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٣٤ يَّوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ
وَظُهُوْرُهُمْ ۗ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ۝٣٥

इत्त-ख़ज़ू अह्बारहुम् व रुह्बानहुम्	ठहरा लिया उन्होंने अपने आ़लिमों और

अर्बाबम् मिन् दूनिल्लाहि वल्मसीहब्-न मर्य-म व मा उमिरू इल्ला लियअ्बुदू इलाहंव्वाहिदन् ला इला-ह इल्ला हु-व, सुब्हानहू अ़म्मा युश्रिकून (31) युरीदू-न अंय्युत्फ़िऊ नूरल्लाहि बिअफ़्वाहिहिम् व यअ्बल्लाहु इल्ला अंय्युतिम्-म नूरहू व लौ करिहल् काफ़िरून (32) हुवल्लज़ी अर्स-ल रसूलहू बिल्हुदा व दीनिल्-हक़्क़ि लियुज़्हि-रहू अ़लद्दीनि कुल्लिही व लौ करिहल् मुश्रिकून। (33) ● या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इन्-न कसीरम् मिनल् अह्बारि वर्रुह्बानि ल-यअ्कुलू-न अम्वालन्नासि बिल्बातिलि व यसुद्दू-न अ़न् सबीलिल्लाहि, वल्लज़ी-न यक्निज़ूनज़्ज़-ह-ब वल्-फ़िज़्ज़-त व ला युन्फ़िक़ूनहा फ़ी सबीलिल्लाहि फ़-बश्शिर्हुम् बिअ़ज़ाबिन् अलीम (34) यौ-म युह्मा अ़लैहा फ़ी नारि जहन्न-म फ़तुक्वा बिहा जिबाहुहुम् व जुनूबुहुम् व ज़ुहूरुहुम्, हाज़ा मा कनज़्तुम् लिअन्फ़ुसिकुम् फ़ज़ूक़ू मा कुन्तुम् तक्निज़ून (35)

दुर्वेशों को ख़ुदा, अल्लाह को छोड़कर, और मसीह मरियम के बेटे को भी, और उनको हुक्म यही हुआ था कि बन्दगी करें एक माबूद की, किसी की बन्दगी नहीं उसके सिवा, वह पाक है उनके शरीक बतलाने से। (31) चाहते हैं कि बुझा दें रोशनी अल्लाह की अपने मुँह से, और अल्लाह न रहेगा बिना पूरा किये अपनी रोशनी के, और पड़े बुरा मानें काफ़िर। (32) उसी ने भेजा अपने रसूल को हिदायत और सच्चा दीन देकर ताकि उसको ग़लबा दे हर दीन पर, और पड़े बुरा मानें मुश्रिक। (33) ● ऐ ईमान वालो! बहुत से आ़लिम और दुर्वेश अहले किताब के खाते हैं माल लोगों के नाहक़ और रोकते हैं अल्लाह की राह से, और जो लोग गाड़कर रखते हैं सोना और चाँदी और उसको ख़र्च नहीं करते अल्लाह की राह में, सो उनको ख़ुशख़बरी सुना दे दर्दनाक अ़ज़ाब की। (34) जिस दिन कि आग दहकायेंगे उस माल पर दोज़ख़ की, फिर दाग़ेंगे उससे उनके माथे और करवटें और पीठें (कहा जायेगा) यह है जो तुमने गाड़कर रखा था अपने वास्ते, अब मज़ा चखो अपने गाड़ने का। (35)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे कुफ़्रिया कामों का बयान है कि) उन्होंने (यानी यहूदियों व ईसाईयों ने फ़रमाँबरदारी में) ख़ुदा (की तौहीद) को छोड़कर अपने आ़लिमों और बुज़ुर्ग हस्तियों को (इताअ़त के एतिबार से) रब बना रखा है (कि हलाल व हराम करने में उनकी इताअ़त अल्लाह की इताअ़त की तरह करते हैं कि शरीअ़त के हुक्म पर उनके क़ौल को तरजीह देते हैं और ऐसी फ़रमाँबरदारी बिल्कुल इबादत है। पस इस हिसाब से वे उनकी इबादत करते हैं) और मसीह मरियम के बेटे को भी (एक एतिबार से रब बना रखा है कि उनको अल्लाह का बेटा कहते हैं, जिससे उनको ख़ुदा मानना लाज़िम आता है) हालाँकि उनको (अल्लाह की किताबों में) सिर्फ़ यह हुक्म किया गया है कि सिर्फ़ एक (बरहक़) माबूद की इबादत करें जिसके सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, वह इनके शिर्क से पाक है। (यह तो बयान था बातिल की पैरवी करने का, आगे बयान है इसका कि वे हक़ दीन को रद्द करते हैं, कि यह भी कुफ़्र है, यानी) वे लोग (यूँ) चाहते हैं कि अल्लाह के नूर (यानी दीने इस्लाम) को अपने मुँह से (फूँक मार-मारकर) बुझा दें (यानी मुँह से रद्द व एतिराज़ की बातें इस ग़र्ज़ से करते हैं कि दीने हक़ को तरक़्क़ी न हो) हालाँकि अल्लाह तआ़ला अपने (ज़िक्र हुए) नूर को कमाल (ऊँचाईयों और शिखर) तक पहुँचाये बग़ैर नहीं मानेगा, चाहे काफ़िर लोग (जिनमें ये भी आ गये) कैसे ही नाख़ुश हों। (चुनाँचे) वह (अल्लाह) ऐसा है कि (इसी नूर के पूरा करने के लिये) उसने अपने रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को हिदायत (का सामान यानी क़ुरआन) और सच्चा दीन (यानी इस्लाम) देकर (दुनिया में) भेजा है, ताकि इस (दीन) को (जो कि वही ज़िक्र किया गया नूर है, बाक़ी के) तमाम दीनों पर ग़ालिब कर दे (कि यही पूरा करना है) चाहे मुश्रिक (जिनमें ये भी दाख़िल हो गये) कैसे ही नाख़ुश हों।

ऐ ईमान वालो! अक्सर अहबार और रुहबान (यानी यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुज़ुर्ग अ़वाम) लोगों के माल नाजायज़ तरीक़े से खाते (उड़ाते) हैं (यानी हक़ के अहकाम को छुपाकर अ़वाम की मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ फ़तवा देकर उनसे नज़राने लेते हैं) और (इसकी वजह से वे) अल्लाह की राह (यानी दीने इस्लाम) से (लोगों को) रोकते हैं (क्योंकि आ़म लोग उनके झूठे फ़तवों के धोखे में आकर गुमराही में फंसे रहते हैं और हक़ को क़ुबूल बल्कि तलब भी नहीं करते) और (अपने हद से बढ़े हुए लालच के सबब माल भी जमा करते हैं जिसके बारे में यह धमकी है कि) जो लोग सोना-चाँदी जमा करके रखते हैं और उनको अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते (यानी ज़कात नहीं निकालते) सो आप उनको एक बड़ी दर्दनाक सज़ा की ख़बर सुना दीजिए। जो कि उस दिन ज़ाहिर होगी कि उनको (पहले) दोज़ख़ की आग में तपाया जाएगा फिर उनसे उनकी पेशानियों "यानी माथों" और उनकी करवटों और उनकी पुश्तों को दाग़ दिया जायेगा। (और यह जतलाया जायेगा कि) यह है वह जिसको तुमने अपने वास्ते जमा करके रखा था, सो अब अपने जमा करने का मज़ा चखो।

मआरिफ़ व मसाईल

इन चारों आयतों में यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा और बुज़ुर्गों व आ़बिदों की गुमराही और उनकी कुफ़्र भरी बातों और आमाल का ज़िक्र है। **अहबार** 'हिब्र' की जमा (बहुवचन) है और **रूहबान** 'राहिब' की जमा है। 'हिब्र' यहूदियों व ईसाईयों के आ़लिम को और राहिब आ़बिद व ज़ाहिद को कहा जाता है।

पहली आयत में फ़रमाया है कि इन लोगों ने अपने उलेमा और इबादत-गुज़ारों को अल्लाह के सिवा अपना रब और माबूद बना रखा है। इसी तरह ईसा बिन मरियम अ़लैहिस्सलाम को अपना रब बना लिया है। हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को रब व माबूद बनाना तो इसलिये ज़ाहिर है कि वे उनको ख़ुदा तआ़ला का बेटा मानते और कहते थे, और उलेमा व बुज़ुर्गों को माबूद बनाने का जो इल्ज़ाम उन पर लगाया गया है अगरचे वे स्पष्ट तौर पर उनको अपना रब न कहते थे, इसकी वजह यह है कि उन्होंने पूर्ण फ़रमाँबरदारी जो ख़ालिस अल्लाह जल्ल शानुहू का हक़ है इस हक़ को उनके हवाले कर दिया था, कि हर हाल में उनके कहने की पैरवी करते थे, चाहे उनका क़ौल अल्लाह और रसूल के ख़िलाफ़ ही क्यों न हो। तो यह ज़ाहिर है कि किसी की ऐसी इताअ़त (फ़रमाँबरदारी व पैरवी) करना कि अल्लाह व रसूल के फ़रमान के ख़िलाफ़ भी कहे तो उसकी इताअ़त न छोड़े, यह ऐसा ही है जैसे किसी को अपना रब और माबूद कहे, जो खुला हुआ कुफ़्र है।

इससे मालूम हुआ कि दीनी मसाईल से नावाक़िफ़ अ़वाम के लिये उलेमा के फ़तवे की पैरवी या इज्तिहादी मसाईल में मुज्तहिद इमामों की पैरवी करना, इसका इस आ़यत से कोई ताल्लुक़ नहीं, क्योंकि यह पैरवी हक़ीक़त में ख़ुदा और रसूल ही के अहकाम का पालन करना होता है। इल्म व नज़र रखने वाले हज़रात डायरेक्ट अल्लाह व रसूल के कलाम को देखकर उस पर अ़मल करते हैं, और नावाक़िफ़ अ़वाम उलेमा से पूछकर उन्हीं अहकाम पर अ़मल करते हैं, और जो उलेमा इज्तिहाद (क़ुरआन व हदीस में ग़ौर व फ़िक्र करके अहकाम मालूम कर लेने का) दर्जा नहीं रखते वे भी इज्तिहादी मसाईल में मुज्तहिद इमामों की पैरवी करते हैं। यह पैरवी ख़ुद क़ुरआने करीम के हुक्म के मुताबिक़ है और हक़ तआ़ला ही की इताअ़त (हुक्मों का पालन और फ़रमाँबरदारी) है जैसा कि इरशाद है:

فَسْئَلُوْٓا اَهْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ○

"यानी अगर तुम ख़ुद ख़ुदा और रसूल के अहकाम से वाक़िफ़ नहीं तो इल्म रखने वालों से पूछकर अ़मल किया करो।"

यहूदियों व ईसाईयों के अ़वाम ने अल्लाह की किताब और अल्लाह व रसूल के अहकाम को पूरी तरह नज़र-अन्दाज़ करके ख़ुदग़र्ज़ पेशेवर उलेमा या जाहिल इबादत-गुज़ारों के क़ौल व अ़मल ही को अपना दीन बना लिया था, इसकी निंदा व बुराई इस आयत में फ़रमाई गयी है।

इसके बाद फ़रमाया कि उन लोगों ने यह गुमराही इख़्तियार कर ली हालाँकि उनको अल्लाह

तआला की तरफ़ से सिर्फ़ एक अल्लाह की इबादत का हुक्म दिया गया था जो उन तमाम चीज़ों के शिर्क से पाक है जिनको ये लोग अल्लाह तआला का शरीक ठहराते हैं।

इस आयत में तो उनकी बातिल की पैरवी और ग़ैरुल्लाह की नाजायज़ इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) का ज़िक्र था, इसके बाद की आयत में उनकी एक और गुमराही का ज़िक्र है कि ये लोग सिर्फ़ इसी पर बस नहीं करते कि ख़ुद गुमराही में पड़े हुए हैं, बल्कि हिदायत और दीने हक़ के मिटाने और रद्द करने की कोशिश करते हैं। इसी मज़मून को मिसाल के तौर पर इस तरह बयान फ़रमाया है कि ये लोग अपने मुँह की फूँकों से अल्लाह के नूर को बुझाना चाहते हैं, हालाँकि यह इनके बस की बात नहीं, अल्लाह तआला यह तय कर चुके हैं कि वह अपने नूर यानी दीने इस्लाम को मुकम्मल और पूरा ही करेंगे चाहे काफ़िर लोग कैसे ही नाख़ुश हों।

इसके बाद तीसरी आयत के मज़मून का ख़ुलासा भी यही है कि अल्लाह तआला ने अपने रसूल को हिदायत का सामान यानी क़ुरआन और दीने हक़ यानी इस्लाम देकर इसी लिये भेजा है ताकि इसको दुनिया के बाक़ी तमाम दीनों पर ग़ालिब कर दे, तक़रीबन इन्हीं लफ़्ज़ों के साथ क़ुरआने करीम में अनेक आयतें आई हैं, जिनमें यह वायदा है कि दीने इस्लाम को दुनिया के तमाम दीनों पर ग़ालिब किया जायेगा।

तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि दीने इस्लाम को तमाम दूसरे दीनों पर ग़ालिब करने की यह ख़ुशख़बरी अक्सर ज़मानों और अक्सर हालात के एतिबार से है, जैसा कि हज़रत मिक़्दाद की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- रू-ए-ज़मीन पर कोई कच्चा पक्का मकान बाक़ी न रहेगा जिसमें इस्लाम का कलिमा दाख़िल न हो जाये, इज़्ज़तदारों की इज़्ज़त के साथ और ज़लील लोगों की ज़िल्लत के साथ, जिनको अल्लाह तआला इज़्ज़त देंगे वे मुसलमान हो जायेंगे और जिनको ज़लील करना होगा वे इस्लाम को क़ुबूल तो न करेंगे मगर इस्लामी हुकूमत के ताबे (अधीन) हो जायेंगे। चुनाँचे अल्लाह तआला का यह वायदा पूरा हुआ, एक हज़ार साल के क़रीब इस्लाम की शान व शौकत पूरी दुनिया पर छाई रही।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और पहले बुज़ुर्गों के मुबारक दौर में तो इस नूर की तकमील व पूर्णता को सारी दुनिया देख ही चुकी है, और आईन्दा भी दलीलों और तथ्यों के एतिबार से हर ज़माने में दीने इस्लाम ऐसा मुकम्मल दीन है कि किसी माक़ूल पसन्द इनसान को इस पर एतिराज़ करने और इसमें कोई कमी निकालने का मौक़ा नहीं मिल सकता। इसलिये काफ़िरों की मुख़ालफ़तों के बावजूद यह दीने हक़ अपनी हुज्जत व दलील के एतिबार से हमेशा ग़ालिब है, और जब मुसलमान इस दीन की पूरी पैरवी करें तो उनका ज़ाहिरी ग़लबा और हुकूमत व सल्तनत भी इसके लवाज़िम (अनिवार्यता) में से है, जैसा कि इस्लामी इतिहास का तजुर्बा इस पर सुबूत व गवाह है कि जब भी मुसलमानों ने क़ुरआन व सुन्नत पर पूरी तरह अ़मल किया तो कोई पहाड़ व दरिया उनके इरादों की राह में रुकावट नहीं बन सका, और ये पूरी दुनिया पर ग़ालिब आकर रहे। और जब कभी जहाँ कहीं इनको मग़लूब व पराजित होने की नौबत आई है तो वह क़ुरआन व सुन्नत के अहकाम से ग़फ़लत और उल्लंघन का बुरा नतीजा था, जो इनके

सामने आया, दीने हक़ फिर भी अपनी जगह कामयाब व विजयी ही रहा।

चौथी आयत में मुसलमानों को संबोधित करके यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुज़ुर्गों के ऐसे हालात का ज़िक्र है जिनकी वजह से अ़वाम में गुमराही फैली। मुसलमानों को मुख़ातब करने से शायद इस तरफ़ इशारा है कि अगरचे ये हालात यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुज़ुर्गों के बयान हो रहे हैं लेकिन इनको भी इससे सचेत रहना चाहिये कि उनके ऐसे हालात न हो जायें।

इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि यहूदियों व ईसाईयों के बहुत से उलेमा व बुज़ुर्गों का यह हाल है कि बातिल (ग़लत और ग़ैर-हक़) तरीक़ों से लोगों का माल खाते हैं और अल्लाह तआ़ला के सीधे रास्ते से उनको रोकते हैं।

यहूदियों व ईसाईयों के अक्सर उलेमा व बुज़ुर्गों का यही हाल था और ऐसे हालात में आ़म तौर पर कहने वाले सभी को बुरा कहा करते हैं, लेकिन क़ुरआने करीम ने इस जगह लफ़्ज़ **कसीरन** (ज़्यादातर) का इज़ाफ़ा करके मुसलमानों को दुश्मनों के मामले में भी एहतियात के साथ कलाम करने की तालीम फ़रमा दी, कि यह हाल सब लोगों की तरफ़ मन्सूब नहीं फ़रमाया, बल्कि यह फ़रमाया कि उनमें बहुत से लोग ऐसा करते हैं। उनकी गुमराही यह बतलाई गयी कि वे लोगों के माल बातिल (नाजायज़) तरीक़े से खाते हैं। बातिल तरीक़े से मुराद यह है कि वे लोग कई बार उन लोगों से पैसे लेकर अल्लाह की किताब तौरात के हुक्म के ख़िलाफ़ फ़तवा दे देते थे, और कई बार अल्लाह के अहकाम छुपाने और उसमें मिलावट करने से काम लेते थे। इससे आगे बढ़कर उनकी यह गुमराही बतलाई गयी कि वे कमबख़्त सिर्फ़ ख़ुद ही गुमराह नहीं बल्कि दूसरे हिदायत व हक़ के इच्छुक लोगों को अल्लाह के रास्ते से रोकने का सबब भी हैं। क्योंकि जब लोग अपने मुक़्तदाओं (धर्म गुरुओं) को ऐसे काम करते देखें तो उनमें भी हक़ परस्ती की भावना मर जाती है। इसके अ़लावा उनके ग़लत फ़तवों की बुनियाद पर वे गुमराही और ग़लती ही को अच्छा और सही समझने लगते हैं।

यहूदियों व ईसाईयों के उलेमा व बुज़ुर्गों की यह बीमारी कि पैसों के लालच में ग़लत फ़तवा दे दें, चूँकि माल की मुहब्बत और दुनिया के लालच की वजह से पैदा हुई थी, इसलिये उक्त आयत में माल की मुहब्बत के अन्दर हद बढ़ने के बुरे परिणामों और दर्दनाक अ़ज़ाब का बयान और इस बीमारी से निजात हासिल करने का तरीक़ा ज़िक्र किया गया है। इरशाद है:

وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍo

"यानी जो लोग सोने-चाँदी को जमा करते रहते हैं और उसको अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते उनको दर्दनाक अ़ज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दीजिये।"

"उसको ख़र्च नहीं करते हैं" के लफ़्ज़ों से इस तरफ़ इशारा हो गया कि जो लोग ज़रूरत के मुताबिक़ अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं तो बाक़ी बचा जमा किया हुआ माल उनके हक़ में नुक़सानदेह नहीं।

हदीस में ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस माल की ज़कात अदा कर दी जाये वह 'माल जमा करने' में दाख़िल नहीं। (अबू दाऊद, अहमद वग़ैरह)

जिससे मालूम हुआ कि ज़कात निकालने के बाद जो माल बाक़ी रहे उसका जमा रखना कोई गुनाह नहीं। इमामों और फ़ुक़हा की अक्सरियत का यही मस्लक है।

"उसमें से ख़र्च नहीं करते हैं" में उस से फ़िज़्ज़ा की तरफ़ इशारा है, जिसके मायने चाँदी के हैं। ऊपर सोने और चाँदी दो चीज़ों का ज़िक्र था मगर इशारा सिर्फ़ चाँदी की तरफ़ किया गया। तफ़सीरे मज़हरी में इसको इस बात का इशारा क़रार दिया है कि जब किसी शख़्स के पास सोना और चाँदी थोड़ा-थोड़ा मौजूद हो तो एतिबार चाँदी का किया जायेगा, सोने की क़ीमत भी चाँदी के हिसाब में लगाकर ज़कात अदा की जायेगी।

पाँचवीं आयत में उस दर्दनाक अ़ज़ाब की तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई है:

يَوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ، هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ○

"यानी ज़कात न अदा करने वालों को यह दर्दनाक अ़ज़ाब उस दिन होगा जबकि उनके जमा किये हुए सोने-चाँदी को जहन्नम की आग में तपाया जायेगा, फिर उससे उनकी पेशानियों, करवटों और पुश्तों पर दाग़ दिये जायेंगे, और उनसे ज़बानी सज़ा के तौर पर कहा जायेगा कि यह वह चीज़ है जिसको तुमने अपने लिये जमा किया था, सो अपने जमा किये हुए सरमाये को चखो। इससे मालूम हुआ कि अ़मल का बदला वही अ़मल है, जो सरमाया नाजायज़ तौर पर जमा किया था, या असल सरमाया तो जायज़ था मगर उसकी ज़कात अदा नहीं की तो ख़ुद वह सरमाया ही उन लोगों का अ़ज़ाब बन गया।

इस आयत में दाग़ लगाने के लिये पेशानियों, करवटों, पुश्तों का ज़िक्र किया गया है। या तो इससे मुराद पूरा बदन है, और या फिर इन तीन चीज़ों को ख़ास करना इस बिना पर है कि बख़ील (कन्जूस और लालची) आदमी जो अपना सरमाया अल्लाह की राह में ख़र्च करना नहीं चाहता, जब कोई माँगने वाला या ज़कात का तलबगार उसके सामने आता है तो उसको देखकर सबसे पहले उसकी पेशानी (माथे) पर बल आते हैं, फिर उससे नज़र बचाने के लिये यह दायें बायें मुड़ना चाहता है, और इससे भी माँगने वाला न छोड़े तो उसकी तरफ़ पुश्त (पीठ) कर लेता है, इसलिये पेशानी, करवट और पुश्त इस अ़ज़ाब के लिये मख़्सूस किये गये।

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ ؕ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ ۙ فَلَا تَظْلِمُوْا فِيْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ
وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِيْنَ كَآفَّةً كَمَا يُقَاتِلُوْنَكُمْ كَآفَّةً ؕ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ۝٣٦ اِنَّمَا
النَّسِيْٓءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ يُضَلُّ بِهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُحِلُّوْنَهٗ عَامًا وَّيُحَرِّمُوْنَهٗ عَامًا لِّيُوَاطِـُٔوْا عِدَّةَ مَا
حَرَّمَ اللّٰهُ فَيُحِلُّوْا مَا حَرَّمَ اللّٰهُ ؕ زُيِّنَ لَهُمْ سُوْٓءُ اَعْمَالِهِمْ ؕ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ۝٣٧ ع ٥ ٨

इन्-न अिद्द-तश्शुहूरि अिन्दल्लाहिस्ना अ-श-र शह्रन् फ़ी किताबिल्लाहि यौ-म ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ मिन्हा अर्ब-अ़तुन् हुरुमुन्, ज़ालिकद्दीनुल्-क़य्यिमु फ़ला तज़्लिमू फ़ीहिन्-न अन्फ़ु-सकुम्, व क़ातिलुल् मुश्रिकी-न काफ़्फ़-तन् कमा युक़ातिलूनकुम् काफ़्फ़-तन्, वअ़्लमू अन्नल्ला-ह मअ़ल्-मुत्तक़ीन (36) इन्नमन्नसी-उ ज़ियादतुन् फ़िल्कुफ़्रि युज़ल्लु बिहिल्लज़ी-न क-फ़रू युहिल्लूनहू आ़मंव्-व युहर्रिमूनहू आ़मल्-लियुवातिऊ अिद्द-त मा हर्रमल्लाहु फ़युहिल्लू मा हर्रमल्लाहु, ज़ुय्यि-न लहुम् सू-उ अअ़्मालिहिम्, वल्लाहु ला यह्दिल् क़ौमल्-काफ़िरीन (37) ✿	महीनों की गिनती अल्लाह के नज़दीक बारह महीने हैं अल्लाह के हुक्म में जिस दिन उसने पैदा किये थे आसमान और ज़मीन उनमें चार महीने हैं अदब के, यही है सीधा दीन सो इनमें ज़ुल्म मत करो अपने ऊपर, और लड़ो सब मुश्रिकों से हर हाल में जैसे वे लड़ते हैं तुम सबसे हर हाल में, और जान लो कि अल्लाह साथ है डरने वालों के। (36) यह जो महीना हटा देना है सो बढ़ाई हुई बात है कुफ़्र के दौर में, गुमराही में पड़ते हैं इस से काफ़िर, हलाल कर लेते हैं इस महीने को एक साल और हराम रखते हैं दूसरे साल, ताकि पूरी कर लें गिनती उन महीनों की जो अल्लाह ने अदब के लिये रखे हैं, फिर हलाल कर लेते हैं जो महीना कि अल्लाह ने हराम किया, भले कर दिये गये उनकी नज़र में उनके बुरे काम, और अल्लाह रास्ता नहीं देता काफ़िर लोगों को। (37) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

यक़ीनन महीनों की गिनती (जो कि) अल्लाह की किताब (यानी शरई अहकाम) में अल्लाह के नज़दीक (मोतबर हैं) बारह महीने (चाँद के) हैं, (और कुछ आज से नहीं बल्कि) जिस दिन उसने (यानी अल्लाह तआ़ला ने) आसमान और ज़मीन पैदा किए थे (उसी दिन से, और) उनमें चार ख़ास महीने अदब के हैं (ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम, रजब) यही (जो ज़िक्र किया गया सच्चा और) सीधा दीन है (यानी इन महीनों का बारह होना और चार का ख़ुसूसियत से सम्मानित महीने होना, और बख़िलाफ़ जाहिलीयत के ज़माने की आ़दत के, कभी साल के महीनों की संख्या बढ़ा देते और कभी सम्मानित महीनों के ख़ास करने को छोड़ देते कि यह बद-दीनी है) सो तुम सब इन (महीनों) के बारे में (दीन के ख़िलाफ़ करके) अपना नुक़सान मत करना (यानी

जाहिलीयत की इस आदत के मुवाफ़िक़ मत करना), और इन मुश्रिकों से (जबकि ये अपनी कुफ़िया हरकतों को जिनमें यह ख़ास आदत भी आ गयी न छोड़ें) सबसे लड़ना जैसा कि वे तुम सब (मुसलमानों) से लड़ने (को हर वक़्त तैयार रहा करते) हैं, और (अगर उनके भारी संख्या और सामान से अन्देशा हो तो) यह जान लो कि अल्लाह तआ़ला मुत्तक़ियों का साथी है (पस ईमान व तक़्वे को अपना शिआ़र रखो और किसी से मत डरो)।

(आगे उनकी जाहिलीयत वाली आ़दत का बयान है कि) यह (महीनों का या उनके सम्मानित होने का आगे को) हटा देना कुफ़्र में और बढ़ोतरी है जिससे (और आ़म) काफ़िर लोग गुमराह किए जाते हैं (इस तरीक़े से) कि वे उस (हराम महीने) को किसी साल (अपने नफ़्सानी स्वार्थ के लिये) हलाल कर लेते हैं, और किसी साल (जब कोई ग़र्ज़ न हो तो) हराम समझते हैं, ताकि अल्लाह तआ़ला ने जो (महीने) हराम किए हैं (सिर्फ़) उनकी गिनती (बिना किसी विशेषता और निर्धारण के) पूरी कर लें, फिर (जब विशेषता व निर्धारण न रहा तो) अल्लाह के हराम किये हुए (महीने) को हलाल कर लेते हैं। उनके बुरे आमाल उनको अच्छे मालूम होते हैं, और (उनके कुफ़्र पर जमे रहने का ग़म करना बेफ़ायदा है क्योंकि) अल्लाह तआ़ला ऐसे काफ़िरों को हिदायत (की तौफ़ीक़) नहीं देता (क्योंकि ये खुद राह पर आना नहीं चाहते)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में काफ़िरों व मुश्रिकों के कुफ़्र व शिर्क, गुमराही और बुरे आमाल का ज़िक्र था। इन दो आयतों में भी इसी सिलसिले का एक मज़मून और अ़रब के जाहिली दौर की एक जाहिलाना बुरी रस्म का बयान और मुसलमानों को उससे बचने व परहेज़ करने की हिदायत है। वह बुरी रस्म एक वाक़िए से संबन्धित है, जिसकी तफ़सील यह है कि पुराने ज़माने से पहले तमाम नबियों की शरीअ़तों में साल के बारह महीने माने जाते थे और उनमें से चार महीने बड़े बरकत वाले और अदब व एहतिराम के महीने समझे जाते थे, तीन महीने लगातार- **ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा** और **मुहर्रम**, और एक **रजब** का महीना।

तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की शरीअ़तें इस पर एकमत हैं कि इन चार महीनों में हर इबादत का सवाब ज़्यादा होता है, और इनमें कोई गुनाह करे तो उसका वबाल और अ़ज़ाब भी ज़्यादा है। पहली शरीअ़तों में इन महीनों के अन्दर क़त्ल व क़िताल (जंग वग़ैरह) भी मना थी।

मक्का मुकर्रमा के रहने वाले चूँकि हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम के वास्ते से हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम की औलाद हैं, इसलिये ये सब लोग हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत व रिसालत के क़ायल और उनकी शरीअ़त को मानने का दावा करते थे, और चूँकि मिल्लते इब्राहीम में भी इन चार महीनों (यानी सम्मानित महीनों) में क़त्ल व क़िताल और शिकार वर्जित और मना था, जाहिलीयत के दौर वाले अ़रबों पर इस हुक्म की तामील इसलिये सख़्त दुश्वार थी कि जाहिली दौर में क़त्ल व क़िताल ही उनका पेशा बनकर रह गया था, इसलिये इसमें आसानी पैदा करने के लिये उन्होंने अपने नफ़्सानी स्वार्थों के लिये तरह

तरह के हीले बहाने निकाले, कभी सम्मानित महीनों के किसी महीने में जंग की ज़रूरत पेश आती या लड़ते लड़ते अदब वाला महीना आ जाता तो कह देते कि अब के साल यह महीना हराम नहीं हुआ अगला महीने हराम (अदब वाला) होगा। मसलन मुहर्रम आ गया तो कहते कि इस साल मुहर्रम का महीना हराम नहीं बल्कि सफ़र का महीना हराम होगा, और मज़ीद ज़रूरत पड़ती तो कहते कि रबीउल-अव्वल हराम होगा। या यह कहते कि इस साल सफ़र का महीना पहले आ गया, मुहर्रम बाद में आयेगा। इस तरह मुहर्रम को सफ़र बना दिया, ग़र्ज़ कि साल भर में चार महीने तो पूरे कर लेते थे लेकिन अल्लाह की मुतैयन की हुई तरतीब और निर्धारण का लिहाज़ न करते थे। जिस महीने को चाहें ज़िलहिज्जा कह दें और जिसको चाहें रमज़ान कह दें जिसको चाहें पहले कर दें जिसको चाहें बाद में कर दें। और कभी ज़्यादा ज़रूरत पड़ती, मसलन लड़ते लड़ते दस महीने गुज़र गये और साल के सिर्फ़ दो ही महीने बाक़ी रह गये तो ऐसे मौक़े पर साल के महीनों की संख्या बढ़ा देते, और कहते कि अब के बरस साल चौदह महीनों का होगा। इसी तरह बाक़ी बचे चार महीनों को अदब व सम्मान वाले महीने बना लेते थे।

ग़र्ज़ कि दीने इब्राहीम का इतना तो एहतिराम करते थे कि साल में चार महीनों का एहतिराम करते और उनमें क़त्ल व क़िताल (लड़ाई और जंग) से बाज़ रहते थे, मगर अल्लाह तआ़ला ने जो तरतीब महीनों की मुतैयन फ़रमाई और उसी तरतीब से चार महीनों को अदब वाले महीने क़रार दिया, इसमें तरह-तरह की तावीलें (मतलब बयान) करके अपनी नफ़्सानी इच्छाओं को पूरा करते थे।

इसका नतीजा यह था कि उस ज़माने में इसका फ़र्क़ और भेद ही दुश्वार हो गया था कि कौनसा महीना रमज़ान या शव्वाल का है और कौनसा ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा या रजब का है। हिजरत के आठवें साल जब मक्का मुकर्रमा फ़तह हुआ और नवें साल में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हज के मौसम में तमाम काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत का ऐलान करने के लिये भेजा तो यह महीना असल हिसाब से अगरचे ज़िलहिज्जा का महीना था, मगर जाहिलीयत के उसी पुराने दस्तूर के मुताबिक़ यह महीना ज़ीक़ादा का क़रार पाया था, और इस साल उनके नज़दीक हज का महीना बजाय ज़िलहिज्जा के ज़ीक़ादा मुक़र्रर था। फिर सन् 10 हिजरी में जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हज्जतुल-विदा के लिये तशरीफ़ ले गये तो क़ुदरती तौर पर ऐसा निज़ाम बन गया कि महीना असली ज़िलहिज्जा का था, जाहिलीयत वालों के हिसाब में भी ज़िलहिज्जा ही क़रार पाया, इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने मिना के ख़ुतबे में इरशाद फ़रमायाः

إِنَّ الزَّمَانَ قَدِ اسْتَدَارَ كَهَيْئَتِهِ يَوْمَ خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ.

यानी ज़माना फिर-फिराकर फिर अपनी उसी हालत व सूरत पर आ गया जिस पर उसको अल्लाह तआ़ला ने ज़मीन व आसमान की पैदाईश के वक़्त रखा था, यानी जो महीना असली ज़िलहिज्जा का था जाहिलीयत वालों के नज़दीक भी इस साल वही महीना ज़िलहिज्जा का महीना

क़रार पाया।

यह थी वह जाहिलीयत की रस्म जो महीनों की संख्या, तरतीब और निर्धारण में कमी-बेशी और रद्दोबदल करके की जाती थी, जिसके नतीजे में उन तमाम शरई अहकाम में ख़लल आता था जो किसी ख़ास महीने या उसकी किसी ख़ास तारीख़ से संबन्धित हैं, या जो साल के शुरू में या ख़त्म से मुताल्लिक़ हैं। मसलन ज़िलहिज्जा के दशक में हज के अहकाम और मुहर्रम के दशक के रोज़े और साल के ख़त्म पर ज़कात वग़ैरह के अहकाम।

बात तो मुख़्तसर सी थी कि महीने का नाम बदल कर आगे पीछे कर दिया, कि मुहर्रम को सफ़र और सफ़र को मुहर्रम बना दिया, लेकिन उसके नतीजे में सैंकड़ों शरई अहकाम की तहरीफ़ (रद्दोबदल) होकर अ़मल बरबाद हुआ। क़ुरआन मजीद की इन दो आयतों में जाहिलीयत की इस रस्म की ख़राबी और मुसलमानों को इससे बचने की हिदायत है।

पहली आयत में इरशाद है:

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا.

इसमें लफ़्ज़ 'इद्दत' तायदाद के मायने में है और शुहूर शह्र की जमा (बहुवचन) है, शह्र के मायने महीना है। मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक महीनों की तायदाद बारह मुतैयन है, इसमें किसी को कमी-बेशी का कोई इख़्तियार नहीं।

इसके बाद 'फ़ी किताबिल्लाहि' का लफ़्ज़ बढ़ाकर बतला दिया कि यह बात पहले दिन से लौह-ए-महफ़ूज़ में लिखी हुई थी। फिर 'यौ-म ख़-लक़स्समावाति वल्अर-ज़' फ़रमाकर इशारा कर दिया कि अल्लाह की तक़दीर इस मामले में अगरचे अज़ल (कायनात के पहले दिन) में जारी हो चुकी थी लेकिन यह महीनों की तरतीब और निर्धारण उस वक़्त अ़मल में आया जब आसमान व ज़मीन पैदा किये गये।

फिर इरशाद फ़रमायाः

مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ.

यानी इन बारह महीनों में से चार महीने हुर्मत (अदब व एहतिराम और सम्मान) वाले हैं, इनको हुर्मत वाला दो मायने के एतिबार से कहा गया- एक तो इसलिये कि इनमें क़त्ल व क़िताल (जंग और मरना-मारना) हराम है, दूसरे इसलिये कि ये महीने बरकत और सम्मान वाले हैं, इनमें इबादतों का सवाब ज़्यादा मिलता है। इनमें से पहला हुक्म तो इस्लामी शरीअ़त में मन्सूख़ (ख़त्म और रद्द) हो गया, मगर दूसरा हुक्म यानी इनका सम्मान व एहतिराम करना इनमें इबादत-गुज़ारी का एहतिराम इस्लाम में भी बाक़ी है।

हज्जतुल-विदा (नबी करीम के आख़िरी हज) के क़ुरबानी वाले दिन के ख़ुतबे (संबोधन) में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इन महीनों का ख़ुलासा यह फ़रमाया कि तीन महीने लगातार हैं- ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम, और एक महीना रजब का है। मगर रजब के महीने के मामले में अ़रब वालों के दो क़ौल मशहूर थे, कुछ कबीले उस महीने को रजब कहते थे जिसको

हम रमज़ान कहते हैं, और क़बीला मुज़र के नज़दीक रजब वह महीना था जो जमादियुस्सानी और शाबान के बीच है। इसलिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको रजब-ए-मुज़र फ़रमाकर यह वज़ाहत भी फ़रमा दी कि जो जमादियुस्सानी और शाबान के बीच है वह रजब का महीना मुराद है।

ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ.

यह है दीन-ए-मुस्तक़ीम। यानी महीनों के निर्धारण, तरतीब और उनमें हर महीना विशेष तौर पर सम्मानित महीनों के मुताल्लिक़ जो अहकाम हैं उनको अल्लाह तआ़ला के पहले दिन से दिये हुए हुक्म के मुताबिक़ रखना ही दीने मुस्तक़ीम है। इसमें अपनी तरफ़ से कमी-बेशी और रद्दोबदल करना टेढ़ी समझ और उल्टी तबीयत की निशानी है।

فَلَا تَظْلِمُوْا فِيْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ.

यानी इन पवित्र महीनों में तुम अपना नुक़सान न कर बैठना कि इनके निर्धारित अहकाम और एहतिराम की ख़िलाफ़वर्ज़ी करो, या इनमें इबादत-गुज़ारी में कोताही करो।

इमाम जस्सास ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि इन बरकत वाले और पवित्र महीनों की विशेषता यह है कि इनमें जो शख़्स कोई इबादत करता है उसको बाक़ी के महीनों में भी इबादत की तौफ़ीक़ और हिम्मत होती है। इसी तरह जो शख़्स कोशिश करके इन महीनों में अपने आपको गुनाहों और बुरे कामों से बचा ले तो साल के बाक़ी महीनों में उसको उन बुराईयों से बचना आसान हो जाता है। इसलिये इन महीनों से फ़ायदा न उठाना एक ज़बरदस्त नुक़सान है।

यहाँ तक मक्का के मुश्रिकों की एक ख़ास जाहिली रस्म का बयान और उसको रद्द व बातिल करना था, आयत के आख़िर में फिर उस हुक्म को दोहराया है जो सूरत के शुरू में दिया गया था कि समझौते की मियाद ख़त्म होने के बाद तमाम मुश्रिकों व काफ़िरों से जिहाद वाजिब है। दूसरी आयत में भी इसी जाहिली रस्म का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया है:

اِنَّمَا النَّسِيْٓءُ زِيَادَةٌ فِى الْكُفْرِ.

लफ़्ज़ नसी मस्दर है, जिसके मायने पीछे हटा देने और बाद में कर देने के हैं, और बाद में हो जाने के मायनों में भी इस्तेमाल होता है।

अ़रब के मुश्रिक लोगों ने इन महीनों के आगे पीछे करने को यह समझा था कि इस तरह हमारे नफ़्सानी स्वार्थ भी ख़त्म न होंगे और अल्लाह के हुक्म की तामील भी हो जायेगी। हक़ तआ़ला ने फ़रमाया कि यह तुम्हारा महीनों को बाद में करना और अपनी जगह से हटा देना कुफ़्र में और बढ़ोतरी है, जिससे उन काफ़िरों की गुमराही और बढ़ती है, कि वे अदब व सम्मान वाले महीनों को किसी साल तो हराम क़रार दें और किसी साल हलाल कर लें:

لِيُوَاطِئُوْا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ.

यानी ताकि वे पूरी कर लें गिनती उन महीनों की जिनको अल्लाह ने हराम क़रार दिया है।

मतलब यह है कि केवल गिनती पूरी कर लेने से हुक्म की तामील नहीं होती, बल्कि जो हुक्म जिस महीने के लिये दिया गया है उसी महीने में उसको पूरा करना ज़रूरी है।

अहकाम व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों से साबित हुआ कि महीनों की जो तरतीब और इन महीनों के जो नाम इस्लाम में परिचित हैं वह इनसानों की बनाई हुई इस्तिलाह (पहचान और परिभाषा) नहीं, बल्कि रब्बुल-आ़लमीन ने जिस दिन आसमान व ज़मीन पैदा किये उसी दिन यह तरतीब और ये नाम और इनके साथ ख़ास-ख़ास महीनों के ख़ास-ख़ास अहकाम मुतैयन फ़रमा दिये थे। इससे यह भी मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक शरई अहकाम में चाँद के महीनों का एतिबार है, उसी चाँद के हिसाब पर तमाम शरई अहकाम- रोज़ा, हज, ज़कात वग़ैरह चलते हैं, लेकिन क़ुरआने करीम ने तारीख़ व साल मालूम करने के लिये जैसे चाँद को अ़लामत क़रार दिया है इसी तरह सूरज को भी इसकी अ़लामत (निशानी और पहचान) फ़रमाया है।

لِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ.

इसलिये तारीख़ व साल का हिसाब चाँद और सूरज दोनों से जायज़ है, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने अपने अहकाम के लिये चाँद के हिसाब को पसन्द फ़रमाया और शरई अहकाम उस पर जारी फ़रमाये, इसलिये चाँद के हिसाब का महफ़ूज़ रखना फ़र्ज़े-किफ़ाया है। अगर सारी उम्मत चाँद का हिसाब छोड़कर उसको भुला दे तो सब गुनाहगार होंगे, और अगर वह महफ़ूज़ रहे तो दूसरे हिसाब का इस्तेमाल भी जायज़ है, लेकिन अल्लाह की सुन्नत और पहले बुज़ुर्गों की सुन्नत (तरीक़े) के ख़िलाफ़ ज़रूर है, इसलिये बिना ज़रूरत उसको इख़्तियार करना अच्छा नहीं।

हिसाब को पूरा करने के लिये जो लोंद का महीना बढ़ाया जाता है, कुछ लोगों ने उसको भी इस आयत के तहत नाजायज़ समझा है, मगर वह सही नहीं, क्योंकि जिस हिसाब में लोंद का महीना बढ़ाते हैं उससे शरई अहकाम का ताल्लुक़ नहीं, जाहिलीयत के ज़माने के लोग चाँद के और शरई महीनों में ज़्यादती करके शरई अहकाम को बदलते थे, इसलिये मना किया गया, लोंद का कोई असर शरई अहकाम पर नहीं पड़ता, इसलिये वह इस मनाही में दाख़िल नहीं।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى الْاَرْضِ ؕ
اَرَضِيْتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مِنَ الْاٰخِرَةِ ۚ فَمَا مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا قَلِيْلٌ ۝ اِلَّا تَنْفِرُوْا
يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ وَّيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّوْهُ شَيْـًٔا ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝
اِلَّا تَنْصُرُوْهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللّٰهُ اِذْ اَخْرَجَهُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ثَانِيَ اثْنَيْنِ اِذْ هُمَا فِي الْغَارِ اِذْ يَقُوْلُ
لِصَاحِبِهٖ لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا ۚ فَاَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلَيْهِ وَاَيَّدَهٗ بِجُنُوْدٍ لَّمْ تَرَوْهَا وَ

جَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ كَفَرُوا السُّفْلَىٰ ۗ وَكَلِمَةُ اللَّهِ هِيَ الْعُلْيَا ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ انْفِرُوا
خِفَافًا وَثِقَالًا وَجَاهِدُوا بِأَمْوَالِكُمْ وَأَنْفُسِكُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۚ ذَٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ
تَعْلَمُونَ ۝ لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيبًا وَسَفَرًا قَاصِدًا لَاتَّبَعُوكَ وَلَٰكِنْ بَعُدَتْ عَلَيْهِمُ الشُّقَّةُ ۚ
وَسَيَحْلِفُونَ بِاللَّهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ يُهْلِكُونَ أَنْفُسَهُمْ وَاللَّهُ يَعْلَمُ إِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ۝ ع

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू मा लकुम् इज़ा क़ी-ल लकुमुन्फ़िरू फ़ी सबीलिल्लाहिस्साक़ल्तुम् इलल्-अर्ज़ि, अ-रज़ीतुम् बिल्हयातिद्दुन्या मिनल्-आख़िरति फ़मा मताअुल्-हयातिद्-दुन्या फ़िल्आख़िरति इल्ला क़लील (38) इल्ला तन्फ़िरू युअ़ज़्ज़िब्कुम् अ़ज़ाबन् अलीमंव्-व यस्तब्दिल् क़ौमन् ग़ैरकुम् व ला तज़ुर्रूहु शैअन्, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (39) इल्ला तन्सुरूहू फ़-क़द् न-सरहुल्लाहु इज़् अख़्र-जहुल्लज़ी-न क-फ़रू सानियस्नैनि इज़् हुमा फ़िल्ग़ारि इज़् यक़ूलु लिसाहिबिही ला तह्ज़न् इन्नल्ला-ह म-अ़ना फ़-अन्ज़लल्लाहु सकीन-तहू अ़लैहि व अय्य-दहू बिजुनूदिल्लम् तरौहा व ज-अ़-ल कलि-मतल्लज़ी-न क-फ़रुस्सुफ़्ला, व कलि-मतुल्लाहि

ऐ ईमान वालो! तुमको क्या हुआ जब तुमसे कहा जाता है कि कूच करो अल्लाह की राह में तो गिरे जाते हो ज़मीन पर, क्या ख़ुश हो गये दुनिया की ज़िन्दगी पर आख़िरत को छोड़कर, सो कुछ नहीं नफ़ा उठाना दुनिया की ज़िन्दगी का आख़िरत के मुक़ाबले में मगर बहुत थोड़ा। (38) अगर तुम न निकलोगे तो देगा तुमको दर्दनाक अ़ज़ाब और बदले में ला देगा और लोग तुम्हारे सिवा, और कुछ न बिगाड़ सकोगे तुम उसका, और अल्लाह सब चीज़ पर क़ादिर है। (39) अगर तुम मदद न करोगे रसूल की तो उसकी मदद की है अल्लाह ने जिस वक़्त उसको निकाला था काफ़िरों ने कि वह दूसरा था दो में का, जब वे दोनों थे ग़ार (गुफ़ा) में, जब वह कह रहा था अपने साथी से तू ग़म न खा, बेशक अल्लाह हमारे साथ है, फिर अल्लाह ने उतारी अपनी तरफ़ से उस पर तसल्ली व सुकून और उसकी मदद को वो फ़ौजें भेजीं कि तुमने नहीं देखीं, और नीचे डाली बात काफ़िरों की, और अल्लाह की बात हमेशा ऊपर है, और

हियल्-अ़ुल्या, वल्लाहु अ़ज़ीज़ुन् हकीम (40) इन्फ़िरू ख़िफ़ाफ़ंव्-व सिक़ालंव्-व जाहिदू बिअम्वालिकुम् व अन्फ़ुसिकुम् फ़ी सबीलिल्लाहि, ज़ालिकुम् ख़ैरुल्लकुम् इन् कुन्तुम् तअ़्लमून (41) लौ का-न अ़-रज़न् क़रीबंव्-व स-फ़रन् क़ासिदल्-लत्त-बअ़ू-क व लाकिम्-बअ़ुदत् अ़लैहिमुश्शुक़्क़तु, व स-यह्लिफ़ू-न बिल्लाहि लविस्त-तअ़्ना ल-ख़रज्ना म-अ़कुम् युह्लिकू-न अन्फ़ु-सहुम् वल्लाहु यअ़्लमु इन्नहुम् लकाज़िबून (42) ✿	अल्लाह ज़बरदस्त है हिक्मत वाला। (40) निकलो हल्के और बोझल और लड़ो अपने माल से और जान से अल्लाह की राह में, यह बेहतर है तुम्हारे हक़ में अगर तुमको समझ है। (41) अगर माल होता नज़दीक और सफ़र हल्का तो वे लोग ज़रूर तेरे साथ हो लेते, लेकिन लम्बी नज़र आई उनको दूरी और अब क़समें खायेंगे अल्लाह की कि अगर हमसे हो सकता तो हम ज़रूर चलते तुम्हारे साथ, वबाल में डालते हैं अपनी जानों को, और अल्लाह जानता है कि वे झूठे हैं। (42) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! तुम लोगों को क्या हुआ कि जब तुमसे कहा जाता है कि अल्लाह की राह में (जिहाद के लिये) निकलो तो तुम ज़मीन को लगे जाते हो? (यानी उठते और चलते नहीं) क्या तुमने आख़िरत के बदले दुनियावी ज़िन्दगी पर क़नाअ़त कर ली? सो दुनियावी ज़िन्दगी से फ़ायदा हासिल करना तो आख़िरत के मुक़ाबले में (कुछ भी नहीं) बहुत कम है। अगर तुम (इस जिहाद के लिये) न निकलोगे तो वह (यानी अल्लाह तआ़ला) तुमको सख़्त सज़ा देगा (यानी तुमको हलाक कर देगा) और तुम्हारे बदले दूसरी क़ौम को पैदा कर देगा (और उनसे अपना काम लेगा) और तुम अल्लाह (के दीन) को कुछ नुक़सान नहीं पहुँचा सकोगे, और अल्लाह को हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत है। अगर तुम लोग उनकी (यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की) मदद न करोगे तो (अल्लाह तआ़ला आपकी मदद करेगा, जैसा कि) अल्लाह तआ़ला आपकी मदद उस वक़्त कर चुका है जबकि (इससे ज़्यादा मुसीबत व परेशानी का वक़्त था, जबकि) आपको काफ़िरों ने (तंग कर-करके मक्का से) जिला-वतन कर दिया था, जबकि दो आदमियों में से एक आप थे (और दूसरे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु आपके साथ थे) जिस वक़्त कि दोनों (हज़रात) ग़ार (-ए-सौर) में (मौजूद) थे, जबकि आप अपने साथी से फ़रमा रहे थे

कि तुम (कुछ) ग़म न करो यक़ीनन अल्लाह तआ़ला (की मदद) हमारे साथ है। सो (वह मदद यह हुई कि) अल्लाह तआ़ला ने आप (के दिल) पर अपनी (तरफ़ से) तसल्ली नाज़िल फ़रमाई और आपको (फ़रिश्तों के) ऐसे लश्करों से क़ुव्वत दी जिनको तुमने नहीं देखा, और अल्लाह तआ़ला ने काफ़िरों की बात (और तदबीर) नीची कर दी (कि वे नाकाम रहे) और अल्लाह ही का बोल-बाला रहा (कि उनकी तदबीर और हिफ़ाज़त ग़ालिब रही) और अल्लाह ज़बरदस्त है, हिक्मत वाला है (इसी लिये उसी की बात और हिक्मत ग़ालिब रही)।

(जिहाद के लिये) निकल पड़ो (चाहे) थोड़े सामान से (हो) और (चाहे) ज़्यादा सामान से (हो) और अल्लाह तआ़ला की राह में अपने माल और जान से जिहाद करो, यह तुम्हारे लिये बेहतर है अगर तुम यक़ीन रखते हो (तो देर मत करो)। अगर कुछ हाथ के हाथ मिलने वाला होता और सफ़र भी मामूली-सा होता तो ये (मुनाफ़िक़) लोग आपके साथ हो लेते, लेकिन इनको तो सफ़र का फ़ासला ही दूर-दराज़ मालूम होने लगा (इसी लिये यहाँ ही रह गये) और अभी (जब तुम लोग वापस आओगे तो) ख़ुदा की क़समें खा जाएँगे कि अगर हमारे बस की बात होती तो हम ज़रूर तुम्हारे साथ चलते। ये लोग (झूठ बोल-बोलकर) अपने आपको तबाह (यानी अ़ज़ाब का हक़दार) कर रहे हैं, और अल्लाह तआ़ला जानता है कि ये लोग यक़ीनन झूठे हैं (बिला शुब्हा ये जा सकते थे मगर नहीं गये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उक्त आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ग़ज़वात (जंगी मुहिमों) में से एक अहम ग़ज़वे (जंग) का बयान और उसके तहत में बहुत से अहकाम और हिदायतें हैं। यह ग़ज़वा ग़ज़वा-ए-तबूक के नाम से जाना जाता है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तक़रीबन आख़िरी ग़ज़वा है।

तबूक मदीना के उत्तर में शाम की सरहद पर एक स्थान का नाम है। शाम उस वक़्त रूमी ईसाईयों की हुकूमत का एक राज्य था, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सन् 8 हिजरी में जब फ़त्हे-मक्का और ग़ज़वा-ए-हुनैन से फ़ारिग़ होकर मदीना तय्यिबा पहुँचे तो उस वक़्त अ़रब ख़ित्ते के अहम हिस्से इस्लामी हुकूमत के अधीन आ चुके थे, और मक्का के मुश्रिकों की आठ वर्षीय लगातार जंगों के बाद अब मुसलमानों को ज़रा सुकून का वक़्त मिला था।

मगर जिस ज़ात के बारे में अल्लाह तआ़ला ने पहले ही 'लियुज़्हि-रहू अ़लद्दीनि कुल्लिही' नाज़िल फ़रमाकर पूरे आ़लम पर छा जाने और उसमें अपने दीने हक़ को ग़ालिब करने की ख़ुशख़बरी दे दी थी उसको और उसके साथियों को फ़ुर्सत कहाँ। मदीना पहुँचते ही मुल्के शाम से आने वाले व्यापारी लोग जो शाम से ज़ैतून का तेल लाकर मदीना वग़ैरह में बेचा करते थे, उन लोगों ने यह ख़बर पहुँचाई कि रोम के बादशाह हिरक़्ल ने अपनी फ़ौजें तबूक के स्थान में शाम की सरहद पर जमा कर दी हैं, और फ़ौजियों को पूरे एक साल की तन्ख़्वाहें पेशगी देकर संतुष्ट और ख़ुश कर दिया है, और अ़रब के कुछ क़बीलों से भी उनकी साठगाँठ है। उनका

इरादा यह है कि मदीना पर एक ही बार में हमला करें।

जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इसकी ख़बर पहुँची तो आपने यह इरादा फ़रमा लिया कि उनके हमला करने से पहले आगे बढ़कर वहीं उनका मुक़ाबला किया जाये जहाँ उनकी फ़ौजें जमा हैं। (तफ़सीरे मज़हरी, मुहम्मद बिन यूसुफ़ सालिही के हवाले से)

यह ज़माना इत्तिफ़ाक़ से सख़्त गर्मी का ज़माना था, और मदीना के हज़रात उमूमन खेती पेशा लोग थे, उनकी खेतियाँ और बाग़ात के फल पक रहे थे जिस पर उनकी सारी रोज़ी-रोटी और पूरे साल के गुज़ारे का मदार था। और यह भी मालूम है कि जिस तरह नौकरी पेशा लोगों की जेबें महीने के आख़िरी दिनों में ख़ाली हो जाती हैं इसी तरह खेती पेशा लोग फ़सल के ख़त्म पर ख़ाली हाथ होते हैं। एक तरफ़ तंगदस्ती दूसरी तरफ़ क़रीब आमदनी की उम्मीद, इस पर अतिरिक्त यह कि गर्मी के मौसम की शिद्दत, इस क़ौम के लिये जिसको अभी-अभी एक मुक़ाबिल के साथ आठ साल लगातार जंगों के बाद ज़रा दम लेने का मौक़ा मिला था, एक इन्तिहाई सब्र वाला इम्तिहान था।

मगर वक़्त का तक़ाज़ा था, और यह जिहाद अपने अन्दाज़ में पहली सब जंगों से इसलिये भी अलग और ख़ास था कि पहले तो अपनी ही तरह के अ़वाम से जंग थी, और यहाँ रोम के बादशाह हिरक़्ल की प्रशिक्षित फ़ौज से मुक़ाबला था। इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा के पूरे मुसलमानों को इस जिहाद के लिये निकलने का हुक्म दे दिया, और कुछ आस-पास के दूसरे क़बीलों को भी जिहाद में शिर्कत के लिये दावत दी थी।

यह सार्वजनिक ऐलान इस्लाम के फ़िदाकारों का एक सख़्त इम्तिहान था, और मुनाफ़िक़ दावेदारों के फ़र्क़ करने का भी। इसके अ़लावा लाज़िमी नतीजे के तौर पर इस्लाम का कलिमा पढ़ने वालों के विभिन्न हालात हो गये, क़ुरआने करीम ने उनमें से हर हालत के मुताल्लिक़ अलग-अलग इरशादात फ़रमाये हैं।

एक हालत उन कामिल व मुकम्मल हज़रात की थी जो बिना किसी संकोच के जिहाद के लिये तैयार हो गये। दूसरे वे लोग जो शुरू में कुछ दुविधा के बाद साथ हो गये, इन दोनों तब्क़ों के मुताल्लिक़ क़ुरआने करीम ने फ़रमायाः

اَلَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ فِيْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ م بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ.

"यानी वे लोग क़ाबिले तारीफ़ हैं जिन्होंने सख़्त तंगी के वक़्त रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इत्तिबा (हुक्म की पैरवी) किया, बाद इसके कि उनमें से एक पक्ष के दिल चूक और ग़लती करने लगे थे।"

तीसरी हालत उन लोगों की थी जो किसी सही उज़्र (मजबूरी) की बिना पर इस जिहाद में न जा सके। उनके मुताल्लिक़ क़ुरआने करीम ने आयतः

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَآءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضٰى.

में उनके उज़्र (मजबूरी) के क़ुबूल होने का इज़हार फ़रमा दिया।

चौथी क़िस्म उन लोगों की थी जो बावजूद कोई उज़्र न होने के अपनी सुस्ती के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए। उनके बारे में कई आयतें नाज़िल हुईं:

اٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ.

और:

اٰخَرُوْنَ مُرْجَوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ.

और:

وَعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا.

तीनों आयतें ऐसे ही हज़रात के बारे में नाज़िल हुईं, जिनमें उनकी काहिली (सुस्ती व लापरवाही) पर डाँट-डपट और तंबीह भी है और आख़िरकार उनकी तौबा के क़ुबूल होने की ख़ुशख़बरी भी।

पाँचवाँ गिरोह मुनाफ़िक़ों का था जो अपने निफ़ाक़ (दिखावे के ईमान और दिल में कुफ़्र होने) की वजह से इस सख़्त इम्तिहान में अपने निफ़ाक़ को छुपा न सका, और जिहाद में शिर्कत से अलग रहा। इस तब्क़े का ज़िक्र बहुत सी आयतों में आया है।

छठा तब्क़ा उन मुनाफ़िक़ों का था जो जासूसी और शरारत के लिये मुसलमानों के साथ हो लिया था, उनकी हालत का ज़िक्र क़ुरआने करीम की इन आयतों में है:

وَفِيْكُمْ سَمّٰعُوْنَ لَهُمْ. وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ لَيَقُوْلُنَّ. وَهَمُّوْا بِمَا لَمْ يَنَالُوْا.

लेकिन इस सारी सख़्ती और तकलीफ़ के बावजूद जिहाद में शिर्कत से रुक जाने वालों की कुल संख्या फिर भी बहुत मामूली थी, भारी अक्सरियत उन्हीं मुसलमानों की थी जो अपने सारे फ़ायदों और राहत को क़ुरबान करके अल्लाह की राह में हर तरह की मशक़्क़त बरदाश्त करने के लिये तैयार हो गये। इसी लिये उस जिहाद में निकलने वाले इस्लामी लश्कर की तायदाद तीस हज़ार थी, जो उससे पहले किसी जिहाद में नज़र नहीं आई।

नतीजा इस जिहाद का यह हुआ कि जब रोम के बादशाह हिरक़्ल को मुसलमानों की इतनी बड़ी जमाअ़त के मुक़ाबले पर आने की ख़बर पहुँची तो उस पर रौब तारी हो गया, मुक़ाबले पर नहीं आया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने फ़रिश्तों जैसी ख़स्लत वाले सहाबा-ए-किराम के लश्कर के साथ चन्द दिन जंग के मोर्चे पर क़ियाम करके जब मुख़ालिफ़ के मुक़ाबले पर आने से मायूस हो गये तो वापस तशरीफ़ ले आये।

जो आयतें ऊपर लिखी गयी हैं बज़ाहिर उनका ताल्लुक़ इस चौथी जमाअ़त से है जो बग़ैर किसी सही उज़्र (मजबूरी) के अपनी सुस्ती और काहिली की बिना पर शरीके जिहाद नहीं हुए। पहली आयत में उनको इस सुस्ती और ग़फ़लत पर तंबीह की गयी और उसके साथ उनके इस ग़फ़लत व काहिली के रोग का सबब और फिर उसका इलाज भी इरशाद फ़रमाया गया, जिसके अंतर्गत यह भी स्पष्ट हो गया कि दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फ़लत तमाम अपराधों और बुराईयों की बुनियाद है।

दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फ़लत तमाम जुर्मों की बुनियाद है

क्योंकि रोग का जो सबब और इलाज इस जगह बयान फ़रमाया गया है अगरचे इस जगह उसका ताल्लुक़ एक ख़ास वाक़िए से था लेकिन अगर ग़ौर किया जाये तो साबित होगा कि दीन के मामले में हर कोताही, सुस्ती, ग़फ़लत और तमाम जराईम और गुनाहों का असली सबब यही दुनिया की मुहब्बत और आख़िरत से ग़फ़लत है। इसी लिये हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

حُبُّ الدُّنْيَا رَأْسُ كُلِّ خَطِيْئَةٍ

यानी दुनिया की मुहब्बत हर ख़ता व गुनाह की बुनियाद (जड़) है। इसीलिये उक्त आयत में फ़रमाया गया कि: "ऐ ईमान वालो! तुम्हें क्या हो गया कि जब तुम्हें अल्लाह के रास्ते में निकलने के लिये कहा जाता है तो तुम ज़मीन को लगे जाते हो (हरकत करना नहीं चाहते), क्या तुम आख़िरत के बदले सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी पर मगन हो गये।"

रोग की जाँच के बाद उसका इलाज अगले जुमले में इस तरह इरशाद हुआ कि:

"दुनियावी ज़िन्दगी से नफ़ा उठाना तो कुछ भी नहीं, बहुत थोड़ा और हक़ीर है।"

जिसका हासिल यह है कि बड़ी फ़िक्र आख़िरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी की करनी चाहिये, और यह आख़िरत की फ़िक्र ही दर हक़ीक़त सारे रोगों का एकमात्र और मुकम्मल इलाज है, और अपराधों व गुनाहों की रोकथाम के लिये बेनज़ीर कामयाब नुस्ख़ा है।

इस्लामी अ़क़ीदों के बुनियादी उसूल तीन हैं- तौहीद, रिसालत और आख़िरत। इनमें आख़िरत का अ़क़ीदा दर हक़ीक़त अ़मल के सुधार की रूह और बुराईयों और गुनाहों के आगे एक लोहे की दीवार है। अगर ग़ौर किया जाये तो बहुत आसानी से मालूम हो जायेगा कि दुनिया में अमन व सुकून इस अ़क़ीदे के बग़ैर क़ायम ही नहीं हो सकता। आजकी दुनिया में माद्दी तरक़्क़ियाँ अपने शिखर को पहुँची हुई हैं, अपराधों की रोकथाम के लिये भी किसी मुल्क व क़ौम में माद्दी तदबीरों की कोई कमी नहीं, क़ानून की जकड़-बन्द और उसके लिये इन्तिज़ामी मशीनरी दिन प्रति दिन तरक़्क़ी पर है, मगर इसके साथ यह भी आँखों देखा हाल है कि जराईम (अपराध) हर जगह और हर क़ौम में दिन-ब-दिन तरक़्क़ी ही पर हैं। हमारी नज़र में इसकी वजह इसके सिवा नहीं कि रोग की जाँच, पहचानने और इलाज का रुख़ सही नहीं। रोग का स्रोत (असल सबब) माद्दा-परस्ती (भौतिकवाद) और माद्दी चीज़ों में व्यस्तता, हद से ज़्यादा मशग़ूली और आख़िरत से ग़फ़लत व मुँह मोड़ना है, और इसका एकमात्र इलाज अल्लाह का ज़िक्र और आख़िरत की फ़िक्र है। जिस वक़्त और जिस जगह भी दुनिया में इस अचूक नुस्ख़े को इस्तेमाल किया गया पूरी क़ौम और उसका समाज सही इनसानियत की तस्वीर बनकर फ़रिश्तों के लिये क़ाबिले रश्क हो गया। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम के ज़माने को सामने रखना इसके लिये काफ़ी दलील है।

आजकी दुनिया अपराधों और बुराईयों पर बन्दिश तो चाहती है मगर ख़ुदा तआ़ला और आख़िरत से ग़ाफ़िल होकर चाहती है, और क़दम-क़दम पर ऐसे सामान जमा करती है जिनमें रहकर ख़ुदा तआ़ला व आख़िरत की तरफ़ ध्यान भी न आये, तो इसका लाज़िमी नतीजा वही था जो आँखों के सामने आ रहा है, कि बेहतर से बेहतर क़ानून और क़ानूनी मशीनरियाँ सब फ़ेल नज़र आती हैं, अपराध और बुराईयाँ अपनी जगह न सिर्फ़ मौजूद बल्कि दिन-ब-दिन तूफ़ानी रफ़्तार से बढ़ रहे हैं। काश एक मर्तबा दुनिया के बुद्धिजीवी इस क़ुरआनी नुस्ख़े को इस्तेमाल करके देखें तो उन्हें मालूम हो कि किस क़द्र आसानी के साथ अपराधों और बुराईयों पर क़ाबू पाया जा सकता है।

दूसरी आयत में सुस्ती और काहिली बरतने वालों को उनके रोग और इलाज पर आगाह व सचेत करने के बाद आख़िरी फ़ैसला यह भी सुना दिया कि:

"अगर तुम जिहाद के लिये न निकले तो अल्लाह तआ़ला तुम्हें दर्दनाक अ़ज़ाब में मुब्तला कर देंगे और तुम्हारी जगह किसी और क़ौम को खड़ा कर देंगे। और दीन पर अ़मल न करने से तुम अल्लाह को या अल्लाह के रसूल को कोई नुक़सान न पहुँचा सकोगे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर क़ादिर है।"

तीसरी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिजरत का वाक़िआ़ पेश करके यह बतला दिया गया कि अल्लाह तआ़ला का रसूल किसी इनसान की नुसरत व मदद का मोहताज नहीं, अल्लाह तआ़ला आपको डायरेक्ट ग़ैब से इमदाद पहुँचा सकते हैं, जैसा कि हिजरत के वक़्त पेश आया, जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को आपकी बिरादरी और वतन के लोगों ने वतन से निकलने पर मजबूर कर दिया, सफ़र में आपका साथी भी एक सिद्दीक़ के सिवा कोई न था। दुश्मनों के प्यादे और सवार पीछा कर रहे थे, आपकी पनाह की जगह भी कोई मज़बूत क़िला न था बल्कि एक ग़ार (खोह और गुफा) था, जिसके किनारे तक तलाश करने वाले दुश्मन पहुँच चुके थे, और ग़ार के साथी हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु को अपनी जान का तो ग़म न था मगर इसलिये सहम रहे थे कि ये दुश्मन सरदार-ए-दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर हमलावर हो जायेंगे, मगर रसूलुल्लाह हिम्मत व मज़बूती के पहाड़ बने हुए न सिर्फ़ ख़ुद मुत्मईन थे बल्कि अपने साथी सिद्दीक़ को फ़रमा रहे थे:

لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا.

"तुम ग़मगीन न हो, क्योंकि अल्लाह हमारे साथ है।"

यह बात कहने को तो दो लफ़्ज़ हैं जिनका बोलना कुछ मुश्किल नहीं, मगर सुनने वाले हालात का पूरा नक़्शा सामने रखकर दिल पर हाथ रखकर देखें कि सिर्फ़ माद्दी चीज़ों और असबाब पर नज़र रखने वाले से यह इत्मीनान मुम्किन ही नहीं। इसका सबब उसके सिवा न था जिसको क़ुरआन ने अगले जुमले में इरशाद फ़रमाया कि:

"अल्लाह तआ़ला ने आपके दिल मुबारक पर तसल्ली नाज़िल फ़रमा दी, और ऐसे लश्करों से आपकी इमदाद फ़रमाई जिनको तुम लोगों ने नहीं देखा।"

यह लश्कर फ़रिश्तों के लश्कर भी हो सकते हैं और पूरे आलम की क़ुव्वतें ख़ुद भी ख़ुदाई लश्कर हैं, वो भी हो सकती हैं। जिसका नतीजा यह हुआ कि आख़िरकार कुफ़्र का कलिमा पस्त होकर रहा और अल्लाह ही का बोलबाला हुआ।

चौथी आयत में फिर ताकीद के तौर पर इस हुक्म को दोहराया कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तुम लोगों को जिहाद के लिये निकलने का हुक्म दे दिया तो तुम पर निकलना हर हाल में फ़र्ज़ हो गया, और इस हुक्म की तामील ही में तुम्हारी हर भलाई छुपी हुई है।

पाँचवीं आयत में ग़फ़लत व सुस्ती की वजह से जिहाद में शरीक न होने वालों के एक उज़्र का बयान करके उसको रद्द किया गया है और फ़रमाया गया है कि यह उज़्र क़ाबिले क़ुबूल नहीं। क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने उनको जो इख़्तियार और क़ुदरत अ़ता फ़रमाई थी उन्होंने उसको अल्लाह की राह में अपनी हिम्मत भर इस्तेमाल नहीं किया, इसलिये हिम्मत व ताक़त न होने का उज़्र (बहाना) सही नहीं।

عَفَا اللّٰهُ عَنْكَ ۚ لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا وَتَعْلَمَ الْكٰذِبِيْنَ ۝ لَا
يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۚ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ ۢ
بِالْمُتَّقِيْنَ ۝ اِنَّمَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوْبُهُمْ فَهُمْ
فِيْ رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُوْنَ ۝ وَلَوْ اَرَادُوا الْخُرُوْجَ لَاَعَدُّوْا لَهٗ عُدَّةً وَّلٰكِنْ كَرِهَ اللّٰهُ انْۢبِعَاثَهُمْ
فَثَبَّطَهُمْ وَقِيْلَ اقْعُدُوْا مَعَ الْقٰعِدِيْنَ ۝ لَوْ خَرَجُوْا فِيْكُمْ مَّا زَادُوْكُمْ اِلَّا خَبَالًا وَّلَاَاوْضَعُوْا
خِلٰلَكُمْ يَبْغُوْنَكُمُ الْفِتْنَةَ ۚ وَفِيْكُمْ سَمّٰعُوْنَ لَهُمْ ۚ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ ۢ بِالظّٰلِمِيْنَ ۝ لَقَدِ ابْتَغَوُا
الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ وَقَلَّبُوْا لَكَ الْاُمُوْرَ حَتّٰى جَآءَ الْحَقُّ وَظَهَرَ اَمْرُ اللّٰهِ وَهُمْ كٰرِهُوْنَ ۝ وَمِنْهُمْ
مَّنْ يَّقُوْلُ ائْذَنْ لِّيْ وَلَا تَفْتِنِّيْ ۚ اَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوْا ۚ وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيْطَةٌ ۢ بِالْكٰفِرِيْنَ ۝ اِنْ
تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ ۚ وَاِنْ تُصِبْكَ مُصِيْبَةٌ يَّقُوْلُوْا قَدْ اَخَذْنَآ اَمْرَنَا مِنْ قَبْلُ وَيَتَوَلَّوْا
وَّهُمْ فَرِحُوْنَ ۝ قُلْ لَّنْ يُّصِيْبَنَآ اِلَّا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَنَا ۚ هُوَ مَوْلٰىنَا ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ
الْمُؤْمِنُوْنَ ۝ قُلْ هَلْ تَرَبَّصُوْنَ بِنَآ اِلَّآ اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ ۚ وَنَحْنُ نَتَرَبَّصُ بِكُمْ اَنْ يُّصِيْبَكُمُ اللّٰهُ
بِعَذَابٍ مِّنْ عِنْدِهٖٓ اَوْ بِاَيْدِيْنَا ۖ فَتَرَبَّصُوْٓا اِنَّا مَعَكُمْ مُّتَرَبِّصُوْنَ ۝

अफ़ल्लाहु अ़न्-क लि-म अज़िन्-त लहुम् हत्ता य-तबय्य-न लकल्लज़ी-न	अल्लाह बख़्शे तुझको, क्यों छूट दे दी तूने उनको यहाँ तक कि ज़ाहिर हो जाते

स-द-क़ू व तअ्-लमल्-काज़िबीन (43) ला यस्तअ्ज़िनुकल्लज़ी-न युअ्मिनू-न बिल्लाहि वल्यौमिल्-आख़िरि अंय्युजाहिदू बिअम्वालिहिम् व अन्फ़ुसिहिम्, वल्लाहु अ़लीमुम् बिल्मुत्तक़ीन (44) इन्नमा यस्तअ्ज़िनुकल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्लाहि वल्यौमिल्-आख़िरि वर्ताबत् क़ुलूबुहुम् फ़हुम् फ़ी रैबिहिम् य-तरद्दून (45) व लौ अरादुल्-ख़ुरू-ज ल-अअ़द्दू लहू अुद्दतंव्-व लाकिन् करिहल्लाहुम्--बिआ़-सहुम् फ़-सब्ब-तहुम् व क़ीलक़्अुदू मअ़ल्-क़ाअ़िदीन (46) लौ ख़-रजू फ़ीकुम् मा ज़ादूकुम इल्ला ख़बालंव्-व ल-औज़अ़ू ख़िलालकुम् यब्ग़ूनकुमुल्-फ़ित्न-त व फ़ीकुम् सम्माअ़ू-न लहुम्, वल्लाहुम् अ़लीमुम्-बिज़्ज़ालिमीन (47) ल-क़दिब्त-ग़वुल् फ़ित्न-त मिन् क़ब्लु व क़ल्लबू ल-कल् उमू-र हत्ता जाअल्-हक़्क़ु व ज़-ह-र अम्रुल्लाहि व हुम् कारिहून (48) व मिन्हुम् मंय्यक़ूलुअ्ज़ल्ली व ला तफ़्तिन्नी,

तुझ पर सच कहने वाले, और जान लेता तू झूठों को। (43) नहीं छूट और रियायत माँगते तुझसे वे लोग जो ईमान लाये अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर, इससे कि लड़ें अपने माल और जान से, और अल्लाह ख़ूब जानता है डर वालों को। (44) छूट वही माँगते हैं तुझसे जो नहीं ईमान लाये अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर और शक में पड़े हैं दिल उनके, सो वे अपने शक ही में भटक रहे हैं। (45) और अगर वे चाहते निकलना तो ज़रूर तैयार करते कुछ सामान उसका लेकिन पसन्द न किया अल्लाह ने उनका उठना, सो रोक दिया उनको और हुक्म हुआ कि बैठे रहो साथ बैठने वालों के। (46) अगर निकलते तुम में तो कुछ न बढ़ाते तुम्हारे लिये मगर ख़राबी, और घोड़े दौड़ाते तुम्हारे अन्दर बिगाड़ करवाने की तलाश में, और तुम में बाज़े जासूस हैं उनके, और अल्लाह ख़ूब जानता है ज़ालिमों को। (47) वे तलाश करते रहे हैं बिगाड़ की पहले से और उलटते रहे हैं तेरे काम यहाँ तक कि आ पहुँचा सच्चा वायदा और ग़ालिब हुआ हुक्म अल्लाह का और वे नाख़ुश ही रहे। (48) और बाज़े उनमें कहते हैं कि मुझको छूट दे और गुमराही में न डाल,

अला फ़िल्-फ़ित्नति स-क़तू, व इन्-न जहन्न-म लमुहीततुम् बिल्काफ़िरीन (49) इन् तुसिब्-क ह-स-नतुन् तसुअ्हुम् व इन् तुसिब्-क मुसीबतुंय्यक़ूलू क़द् अख़ज़्ना अम्-रना मिन् क़ब्लु व य-तवल्लौ व हुम् फ़रिहून (50) क़ुल् लंय्युसीबना इल्ला मा क-तबल्लाहु लना हु-व मौलाना व अ़लल्लाहि फ़ल्य-तवक्कलिल् मुअ्मिनून (51) क़ुल् हल् तरब्बसू-न बिना इल्ला इह्दल् हुस्-नयैनि, व नह्नु न-तरब्बसु बिकुम् अंय्युसी-बकुमुल्लाहु बिअ़ज़ाबिम् मिन् अ़िन्दिही औ बिऐदीना फ़-तरब्बसू इन्ना म-अ़कुम् मु-तरब्बिसून (52)	सुनता है! वे तो गुमराही में पड़ चुके हैं और बेशक दोज़ख़ घेर रही है काफ़िरों को। (49) अगर तुझको पहुँचे कोई ख़ूबी (भलाई और फ़ायदा) तो वह बुरी लगती है उनको, और अगर पहुँचे कोई सख़्ती तो कहते हैं हमने तो संभाल लिया था अपना काम पहले ही, और लौटकर जायें ख़ुशियाँ मनाते। (50) तू कह दे कि हमको हरगिज़ न पहुँचेगा मगर वही जो लिख दिया अल्लाह ने हमारे लिये, वही है हमारा कारसाज़, और अल्लाह ही पर चाहिए कि भरोसा करें मुसलमान। (51) तू कह दे- तुम क्या उम्मीद करोगे हमारे हक़ में मगर दो ख़ूबियों में से एक की, और हम उम्मीदवार हैं तुम्हारे हक़ में कि डाले तुम पर अल्लाह कोई अ़ज़ाब अपने पास से या हमारे हाथों, सो इन्तिज़ार करने वाले रहो हम भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार करने वाले हैं। (52)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अल्लाह तआ़ला ने आपको माफ़ (तो) कर दिया (लेकिन) आपने उनको (ऐसी जल्दी) इजाज़त क्यों दे दी थी? जब तक कि आपके सामने सच्चे लोग ज़ाहिर न हो जाते, और (जब तक कि) आप झूठों को मालूम न कर लेते (ताकि वे खुश तो न होने पाते, कि हमने आपको धोखा दे दिया। और) जो लोग अल्लाह तआ़ला पर और क़ियामत के दिन पर ईमान रखते हैं वे अपने माल और जान से जिहाद करने के बारे में (उसमें शरीक न होने की कभी) आप से रुख़्सत न माँगेंगे (बल्कि वे हुक्म के साथ दौड़ पड़ेंगे), और अल्लाह तआ़ला (उन) मुत्तक़ियों को ख़ूब जानता है (उनको अज्र व सवाब देगा)। अलबत्ता वे लोग (जिहाद में न जाने की) आप से रुख़्सत माँगते हैं जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान नहीं रखते, और उनके दिल (इस्लाम से) शक में पड़े हैं, सो वे अपने शकों में पड़े हुए हैरान हैं (कभी मुवाफ़क़त का ख़्याल

होता है कभी मुख़ालफ़त का), और अगर वे लोग (लड़ाई में) चलने का इरादा करते (जैसा कि वे अपने उज़्र के वक़्त ज़ाहिर करते हैं कि चलने का तो इरादा था लेकिन क्या किया जाये फ़ुलाँ ज़रूरत पेश आ गयी, सो अगर ऐसा होता) तो उस (चलने) का कुछ सामान तो दुरुस्त करते (जैसा कि आदतन यह चीज़ सफ़र का लाज़िमी हिस्सा है) लेकिन (उन्होंने तो शुरू से इरादा ही नहीं किया, और इसमें ख़ैर हुई जैसा कि आगे आता है कि अगर वे तुम में निकलते.... और उसके ख़ैर होने की वजह से) अल्लाह तआ़ला ने उनके जाने को पसन्द नहीं किया, इसलिए उनको तौफ़ीक़ नहीं दी, और (क़ुदरती हुक्म की वजह से यूँ) कह दिया गया कि अपाहिज लोगों के साथ तुम भी यहाँ ही धरे रहो। (और उनके जाने में ख़ैर न होने की वजह यह है कि) अगर ये लोग तुम्हारे साथ शामिल होकर जाते तो सिवाय इसके कि और दोगुना फ़साद करते और क्या होता। (वह फ़साद यह होता कि) तुम्हारे बीच फ़ितना डालने की फ़िक्र में दौड़े-दौड़े फिरते (यानी लगाई बुझाई दिलों में डालने की कोशिश करते, इसलिये उनका न जाना ही अच्छा हुआ) और (अब भी) तुम में उनके कुछ जासूस (मौजूद) हैं (जिनको इससे ज़्यादा फ़साद की तदबीर में महारत नहीं) और (उन) ज़ालिमों को अल्लाह तआ़ला ख़ूब समझेगा।

(और उन लोगों का फ़साद फैलाना और फ़ितने खड़े करना कुछ आज नया नहीं) उन्होंने तो पहले (जंग-ए-उहुद वग़ैरह में) भी फ़ितना खड़ा करने की फ़िक्र की थी, (कि साथ होकर हट गये ताकि मुसलमानों के दिल टूट जायें) और (इसके अ़लावा भी) आप (के सताने और नुक़सान पहुँचाने) के लिये कार्रवाईयों की उलट-फेर करते ही रहे, यहाँ तक कि हक़ (का वायदा) आ गया, और (उसका आना यह है कि) अल्लाह का हुक्म ग़ालिब रहा, और उनको नागवार ही गुज़रता रहा (इसी तरह आईन्दा भी बिल्कुल तसल्ली रखिये कुछ फ़िक्र न कीजिए)। और उन (पीछे रह जाने वाले मुनाफ़िक़ों) में बाज़ा शख़्स वह है जो (आप से) कहता है कि मुझको (जंग में न जाने की और घर रहने की) इजाज़त दे दीजिए और मुझको ख़राबी में न डालिए। ख़ूब समझ लो कि ये लोग ख़राबी में तो पड़ ही चुके हैं (क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नाफ़रमानी और कुफ़्र से बढ़कर और कौनसी ख़राबी होगी) और यक़ीनन (आख़िरत में) दोज़ख़ इन काफ़िरों को घेरेगी। अगर आपको कोई अच्छी हालत पेश आती है तो वह इनके लिए ग़म का सबब होती है, और अगर आप पर कोई हादसा आ पड़ता है तो (ख़ुश होकर) कहते हैं कि हमने तो (इसी लिए) पहले से अपनी एहतियात का पहलू इख़्तियार कर लिया था (कि इनके साथ लड़ाई वग़ैरह में नहीं गये थे) और (यह कहकर) वे ख़ुश होते हुए वापस चले जाते हैं।

आप (जवाब में इनसे दो बातें) फ़रमा दीजिए (एक तो यह) कि हम पर कोई हादसा नहीं पड़ सकता मगर वही जो अल्लाह ने हमारे लिए मुक़द्दर फ़रमाया है, वह हमारा मालिक है (पस मालिके हक़ीक़ी जो तजवीज़ करे मम्लूक को उस पर राज़ी रहना वाजिब है) और (हमारी क्या ख़ुसूसियत है) सब मुसलमानों को अपने सब काम अल्लाह ही के सुपुर्द रखने चाहिएँ। (दूसरी बात यह) आप फ़रमा दीजिए कि (हमारे लिये जैसी अच्छी हालत बेहतर है वैसे ही हादसे भी अन्जाम के एतिबार से बेहतर हैं कि इसमें दरजात बुलन्द होते और गुनाह ख़त्म होते हैं, पस)

तुम तो हमारे हक़ में दो बेहतरियों में से एक बेहतरी ही के मुन्तज़िर रहते हो (यानी तुम जो हमारी हालत के मुन्तज़िर रहते हो कि देखिये क्या हो तो चाहे वह अच्छी हो या मुसीबत, हमारे लिये दोनों ही में बेहतरी है) और हम तुम्हारे हक़ में इसके मुन्तज़िर रहा करते हैं कि अल्लाह तआ़ला तुम पर कोई अ़ज़ाब भेजेगा (चाहे) अपनी तरफ़ से (दुनिया या आख़िरत में) या हमारे हाथों से, (जबकि तुम अपने कुफ़्र को ज़ाहिर कर दो, तो दूसरे काफ़िरों की तरह क़त्ल किये जाओ) सो तुम (अपने तौर पर) इन्तिज़ार करो (और) हम तुम्हारे साथ (अपने तौर पर) इन्तिज़ार में हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस पूरे रुकूअ़ की सत्रह आयतों में से ज़्यादातर में उन मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र है जिन्होंने झूठे उज़्र (मजबूरी और बहाने) पेश करके जंग-ए-तबूक में न जाने की इजाज़त रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से हासिल कर ली थी। इसके ज़िमन में बहुत से अहकाम व मसाईल और हिदायतें हैं।

पहली आयत में एक बारीक अन्दाज़ से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस बात की शिकायत है कि इन मुनाफ़िक़ों ने झूठ बोलकर अपने आपको माज़ूर (मजबूर) ज़ाहिर किया और आपने इससे पहले कि उनके हाल की तहक़ीक़ करके झूठ सच का पता लगाते उनको रुख़्सत (छूट और इजाज़त) दे दी, जिसकी बिना पर ये लोग ख़ुशियाँ मनाते और यह कहते हुए वापस हुए कि हमने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़ूब धोखा दिया। अगरचे अगली आयतों में हक़ तआ़ला ने इसका भी इज़हार फ़रमा दिया कि ये लोग सिर्फ़ बहाना बनाने के लिये उज़्र पेश कर रहे थे, वरना अगर इनको इजाज़त न दी जाती तब भी ये लोग जाने वाले न थे। और एक आयत में इसका भी इज़हार फ़रमाया कि अगर मान लो ये लोग इस जिहाद में जाते भी तो इनसे मुसलमानों को कोई फ़ायदा न पहुँचता, बल्कि इनकी साज़िश और फ़ितने खड़े करने से और ख़तरा होता।

लेकिन मंशा यह है कि इनको अगर इजाज़त न दी जाती तो फिर भी ये जाने वाले तो न थे मगर इनका निफ़ाक़ (दिल से ईमान वाला न होना) खुल जाता, और इनको मुसलमानों पर ये ताने कसने का मौक़ा न मिलता कि हमने उनको ख़ूब बेवक़ूफ़ बनाया। और मक़सद हक़ीक़त में नाराज़गी का इज़हार नहीं बल्कि यह बात है कि आईन्दा उन लोगों की चालों से ख़बरदार रहें और देखने में जो एक क़िस्म की नाराज़गी का इज़हार भी है तो सिर्फ़ लुत्फ़ व इनायत के साथ कि नाराज़गी की बात जो 'लि-म अज़िन्-त लहुम' से शुरू हुई है, यानी आपने उन लोगों को क्यों इजाज़त दे दी, इसके ज़िक्र करने से पहले ही 'अ़फ़ल्लाहु अ़न्-क'' ज़िक्र फ़रमा दिया, जिसके मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला ने आपको माफ़ फ़रमा दिया।

और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पद व मक़ाम और आपके अल्लाह के साथ ताल्लुक़ पर नज़र रखने वाले हज़रात ने फ़रमाया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम को जो बेइन्तिहा ताल्लुक़ अल्लाह तआ़ला शानुहू के साथ था उसको सामने रखते हुए आपका दिल मुबारक इसको बरदाश्त ही नहीं कर सकता था कि हक़ तआ़ला की तरफ़ से किसी मामले में आप से जवाब तलब किया जाये। अगर शुरू में 'लि-म अज़िन्-त लहुम' के अलफ़ाज़ ज़िक्र फ़रमा दिये जाते जिनमें देखने में जवाब-तलबी का उनवान है, तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का दिल मुबारक इसको बरदाश्त न कर सकता। इसलिये उससे पहले 'अ़फ़ल्लाहु अ़न्-क' फ़रमाकर एक तरफ़ तो इस पर मुत्तला कर दिया कि कोई ऐसा काम हो गया है जो अल्लाह के नज़दीक पसन्दीदा न था, दूसरी तरफ़ उसकी माफ़ी की इत्तिला पहले दे दी ताकि अगला कलाम दिल मुबारक पर ज़्यादा भारी न हो।

और लफ़्ज़ माफ़ी से यह शुब्हा न किया जाये कि माफ़ी तो जुर्म व गुनाह की हुआ करती है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम गुनाह से मासूम हैं, तो फिर माफ़ी के यहाँ क्या मायने हो सकते हैं। वजह यह है कि माफ़ी जैसे गुनाह की होती है ऐसे ही नामुनासिब और नापसन्दीदा चीज़ के लिये भी माफ़ी का इस्तेमाल किया जा सकता है, और वह मासूम (गुनाहों से सुरक्षित होने) के विरुद्ध नहीं।

दूसरी और तीसरी आयत में मोमिनों और मुनाफ़िक़ों का यह फ़र्क़ बतला दिया कि अल्लाह तआ़ला पर सही ईमान रखने वाले ऐसे मौक़े पर कभी अपनी जान व माल की मुहब्बत में जिहाद से जान चुराने के लिये आप से रुख़्सत (छूट और इजाज़त) नहीं माँगा करते, बल्कि यह काम सिर्फ़ उन्हीं लोगों का है जिनका अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान सही नहीं, और अल्लाह तआ़ला मुत्तक़ी लोगों को ख़ूब जानते हैं।

चौथी आयत में उनका उज़्र (मजबूरी ज़ाहिर करना) ग़लत होने का एक इशारा यह बतलाया गया है किः

وَلَوْ اَرَادُوا الْخُرُوْجَ لَاَعَدُّوْا لَهٗ عُدَّةً.

यानी अगर वाक़ई ये लोग जिहाद के लिये निकलने का इरादा रखते तो उसके लिये ज़रूरी था कि कुछ तैयारी भी तो करते, लेकिन इन्होंने कोई तैयारी नहीं की, जिससे मालूम हुआ कि उज़्र का बहाना ग़लत था, हक़ीक़त में उनका इरादा ही जिहाद के लिये निकलने का नहीं था।

माक़ूल और नामाक़ूल उज़्र में फ़र्क़

इस आयत से एक अहम उसूल निकला जिससे माक़ूल और नामाक़ूल उज़्र में फ़र्क़ किया जा सकता है। वह यह कि उज़्र उन्हीं लोगों का क़ाबिले क़ुबूल हो सकता है जो हुक्म की तामील के लिये तैयार हों, फिर किसी इत्तिफ़ाक़ी हादसे के सबब माज़ूर हो गये, माज़ूरों के तमाम मामलात का यही हुक्म है। जिसने हुक्म की तामील के लिये कोई तैयारी ही नहीं की और इरादा ही नहीं किया, फिर कोई उज़्र भी पेश आ गया तो यह उज़्र न समझा जायेगा। जो शख़्स नमाज़े जुमा की हाज़िरी के लिये तैयारी मुकम्मल कर चुका है और जाने का इरादा कर रहा है फिर अचानक कोई

ऐसा उज़्र पेश आ गया जिसकी वजह से न जा सका तो उसका उज़्र माक़ूल है, और अल्लाह तआ़ला ऐसे शख़्स को उसकी इबादत का पूरा अज्र अ़ता फ़रमाते हैं, और जिसने कोई तैयारी की ही नहीं, फिर इत्तिफ़ाक़न कोई उज़्र भी सामने आ गया तो वह महज़ एक बहाना है।

सुबह को सवेरे नमाज़ के लिये उठने की तैयारी पूरी की, घड़ी में अलार्म लगाया, या किसी को मुक़र्रर किया जो वक़्त पर जगाये, फिर इत्तिफ़ाक़ से ये तदबीरें ग़लत हो गयीं जिसकी वजह से नमाज़ क़ज़ा हो गयी, जैसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तारीस की रात में पेश आया, कि वक़्त पर जागने के लिये यह इन्तिज़ाम फ़रमाया कि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु को बैठा दिया कि वह सुबह होते ही सब को जगा दें, मगर इत्तिफ़ाक़ से उन पर भी नींद ग़ालिब आ गयी और सूरज निकल आने के बाद सब की आँख खुली, तो यह उज़्र सही और माक़ूल है, जिसकी बिना पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को तसल्ली देते हुए फ़रमायाः

لَا تَفْرِيطَ فِى النَّوْمِ إِنَّمَا التَّفْرِيطُ فِى الْيَقْظَةِ.

"यानी नींद में आदमी माज़ूर है, कोताही वह है जो जागते हुए कोताही करे।" वजह यह थी कि अपनी तरफ़ से वक़्त पर जागने का इन्तिज़ाम मुकम्मल कर लिया गया था।

ख़ुलासा यह है कि हुक्म के पालन के लिये तैयारी करने या न करने ही से किसी उज़्र के माक़ूल या नामाक़ूल होने का फ़ैसला किया जा सकता है, महज़ ज़बानी जमा-ख़र्च से कुछ नहीं होता।

पाँचवीं आयत में धोखे से इजाज़त लेने वाले मुनाफ़िक़ों का यह हाल भी बतला दिया गया कि इनका जिहाद में न जाना ही बेहतर था, अगर ये जाते तो साज़िशों और झूठी ख़बरों से फ़साद ही फैलातेः

وَفِيكُمْ سَمّٰعُونَ لَهُمْ.

"यानी तुम में कुछ भोले-भाले मुसलमान ऐसे भी हैं जो उनकी झूठी अफ़वाहों से प्रभावित हो सकते थे।"

لَقَدِ ابْتَغَوُا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ.

"यानी ये लोग इससे पहले भी ऐसा फ़ितना व फ़साद फैला चुके हैं।" जैसे जंग-ए-उहुद में पेश आया था।

وَظَهَرَ اَمْرُ اللّٰهِ وَهُمْ كٰرِهُوْنَ.

यानी "ग़ालिब आया हुक्म अल्लाह का हालाँकि मुनाफ़िक़ लोग इससे बहुत ग़ुस्से में और बुरा मान रहे थे।" इससे इशारा फ़रमाया कि ग़लबा और फ़तह हक़ तआ़ला के क़ब्ज़े में है, जैसे पहले वाक़िआ़त में आपको फ़तह दी गयी, इस जिहाद में भी ऐसा ही होगा और मुनाफ़िक़ों की सब चालें नाकाम हो जायेंगी।

छठी आयत में एक ख़ास मुनाफ़िक़ जद बिन क़ैस का एक ख़ास बहाना ज़िक्र करके उसकी

गुमराही बयान फ़रमाई है। उसने जिहाद में जाने से यह उज़्र पेश किया था कि मैं नौजवान आदमी हूँ, रूम वालों के मुक़ाबले पर जाऊँगा तो उनकी हसीन औरतों के फ़ितने में मुब्तला हो जाने का ख़तरा है। क़ुरआने करीम ने उसके जवाब में फ़रमायाः

اَلَا فِی الْفِتْنَةِ سَقَطُوْا.

कि ये बेवक़ूफ़ एक ख़्याली फ़ितने का बहाना करके एक यक़ीनी फ़ितने यानी रसूल के हुक्म का उल्लंघन करके और जिहाद को छोड़कर गुनाह में फ़िलहाल मुब्तला हो गये।

وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيْطَةٌ ۢ بِالْكٰفِرِيْنَ۝

यानी जहन्नम इन सब काफ़िरों को अपने घेरे में लिये हुए है, जिससे निकल नहीं सकते। इसका मतलब या तो यह है कि आख़िरत में जहन्नम उनको घेरे में ले लेगी और या यह कि जहन्नम में पहुँचने के असबाब जो इस वक़्त उनको अपने घेरे में लिये हुए हैं, उन्हीं को जहन्नम से ताबीर फ़रमा दिया। इस मायने के एतिबार से गोया फ़िलहाल भी ये लोग जहन्नम ही के दायरे में हैं।

सातवीं आयत में उनकी एक और बेमुरव्वती का बयान है कि ये लोग अगरचे ज़ाहिर में मुसलमानों के साथ मिले रहते हैं लेकिन हाल यह है कि:

اِنْ تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ.

यानी अगर आपको कोई फ़तह और कामयाबी हासिल होती है तो इनको सख़्त नागवार होता है:

وَاِنْ تُصِبْكَ مُصِيْبَةٌ يَّقُوْلُوْا قَدْ اَخَذْنَآ اَمْرَنَا مِنْ قَبْلُ وَيَتَوَلَّوْا وَّهُمْ فَرِحُوْنَ۝

"यानी अगर आपको कोई मुसीबत पहुँचती है तो ये लोग कहने लगते हैं कि हम तो पहले ही जानते थे कि ये लोग अपने आपको मुसीबत में डाल रहे हैं, इसी लिये हमने अपनी मस्लेहत को इख़्तियार किया, इनके साथ शरीक नहीं हुए। और यह कहकर वे ख़ुशी-ख़ुशी वापस हो जाते हैं।

आठवीं आयत में हक़ तआ़ला ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों को मुनाफ़िक़ों की उक्त बातों से प्रभावित न होने और असल हक़ीक़त को हमेशा सामने रखने की हिदायत इन अलफ़ाज़ में दी:

قُلْ لَّنْ يُّصِيْبَنَآ اِلَّا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَنَا ۚ هُوَ مَوْلٰىنَا ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ۝

"यानी आप इन माद्दी असबाब (ज़ाहिरी सामान व संसाधनों) की पूजा करने वालों को बतला दीजिए कि तुम धोखे में हो, ये माद्दी असबाब महज़ एक पर्दा हैं, इनके अन्दर काम करने वाली क़ुव्वत सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की है, हमें जो हाल पेश आता है वह सब वही है जो अल्लाह तआ़ला ने हमारे लिये लिख दिया है, और वही हमारा मौला और मददगार है, और मुसलमानों को चाहिये कि उस पर असली भरोसा रखें, माद्दी असबाब को सिर्फ़ असबाब (माध्यम

एवं साधन) व पहचान ही की हैसियत से देखें, उन पर किसी भलाई या बुराई का मदार न जानें।

तक़दीर पर यक़ीन के साथ तदबीर का इस्तेमाल होना चाहिये, बेतदबीरी का नाम तवक्कुल रखना ग़लत है

इस आयत ने तक़दीर और तवक्कुल के मसले की असल हक़ीक़त भी स्पष्ट कर दी, कि तक़दीर व तवक्कुल पर यक़ीन रखने का यह हासिल न होना चाहिये कि आदमी हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाये, और यह कहे कि जो कुछ क़िस्मत में होगा वह हो जायेगा, बल्कि होना यह चाहिये कि इख़्तियारी असबाब के लिये अपनी पूरी ताक़त और हिम्मत ख़र्च की जाये और अपनी हिम्मत भर असबाब जमा करने के बाद मामले को तक़दीर व तवक्कुल के हवाले करें, नज़र सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला पर रखें कि हर काम के परिणाम उसी की क़ुदरत के कब्ज़े में हैं।

तक़दीर व तवक्कुल के मसले में आ़म दुनिया के लोग बड़ी बेएहतियाती में नज़र आते हैं। कुछ बेदीन लोग तो वे हैं जो सिरे से तक़दीर व तवक्कुल के क़ायल ही नहीं, उन्होंने माद्दी असबाब को ख़ुदा बनाया हुआ है, और कुछ नावाक़िफ़ ऐसे भी हैं जिन्होंने तक़दीर व तवक्कुल को अपनी कम-हिम्मती और बेकारी का बहाना बना लिया है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की जिहाद के लिये पूरी-पूरी तैयारी और उसके बाद इस आयत के नाज़िल होने से इस हद से निकलने और बेएहतियाती को ख़त्म करके सही राह दिखला दी कि इख़्तियारी असबाब भी अल्लाह तआ़ला ही की दी हुई नेमत हैं, उनसे फ़ायदा न उठाना नाशुक्री और बेवक़ूफ़ी है, अलबत्ता असबाब (साधनों और माध्यमों) को असबाब के दर्जे से आगे न बढ़ाओ, और अ़क़ीदा यह रखो कि परिणाम और फल इन असबाब के ताबे नहीं, बल्कि हक़ तआ़ला के फ़रमान के ताबे हैं।

नवीं आयत ने मर्दे-मोमिन की एक अलबेली शान का ज़िक्र करके उनकी मुसीबत पर ख़ुश होने वाले मुनाफ़िक़ों को यह जवाब दे दिया कि तुम जिस चीज़ को हमारे लिये मुसीबत समझकर ख़ुश होते हो हमारे नज़दीक वह मुसीबत भी मुसीबत नहीं, बल्कि राहत व कामयाबी ही की एक दूसरी सूरत है। क्योंकि मर्दे-मोमिन अपने इरादे में नाकाम होकर भी हमेशा के अज्र व सिले का मुस्तहिक़ बनता है, जो सारी कामयाबियों का असली मक़सद है, इसलिये वह नाकाम होकर भी कामयाब रहता है, और बिगड़ने में भी बनता है:

न शोख़ी चल सकी बादे-सबा की बिगड़ने में भी ज़ुल्फ़ उसकी बना की

ज़िक्र हुई आयत में:

تَرَبَّصُوْنَ بِنَآ اِلَّآ اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ

का यही मतलब है। इसके साथ ही यह भी बतला दिया कि काफ़िरों का हाल इसके बिल्कुल उलट है, कि उनको किसी हाल में अ़ज़ाब व मुसीबत से छुटकारा नहीं, या तो दुनिया ही

में मुसलमानों के हाथों उन पर ख़ुदा का अ़ज़ाब आ जायेगा, और इस तरह दुनिया व आख़िरत दोनों में वे अ़ज़ाब चखेंगे। और अगर दुनिया में किसी तरह इससे बच गये तो आख़िरत के अ़ज़ाब से छुटकारे की कोई संभावना नहीं।

قُلْ اَنْفِقُوْا طَوْعًا اَوْ كَرْهًا لَّنْ يُّتَقَبَّلَ مِنْكُمْ ۗ اِنَّكُمْ كُنْتُمْ قَوْمًا
فٰسِقِيْنَ ۝٥٣ وَمَا مَنَعَهُمْ اَنْ تُقْبَلَ مِنْهُمْ نَفَقٰتُهُمْ اِلَّآ اَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَبِرَسُوْلِهٖ وَلَا يَاْتُوْنَ
الصَّلٰوةَ اِلَّا وَهُمْ كُسَالٰى وَلَا يُنْفِقُوْنَ اِلَّا وَهُمْ كٰرِهُوْنَ ۝٥٤ فَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَلَآ اَوْلَادُهُمْ ۗ
اِنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كٰفِرُوْنَ ۝٥٥ وَيَحْلِفُوْنَ
بِاللّٰهِ اِنَّهُمْ لَمِنْكُمْ ۗ وَمَا هُمْ مِّنْكُمْ وَلٰكِنَّهُمْ قَوْمٌ يَّفْرَقُوْنَ ۝٥٦ لَوْ يَجِدُوْنَ مَلْجَاً اَوْ مَغٰرٰتٍ
اَوْ مُدَّخَلًا لَّوَلَّوْا اِلَيْهِ وَهُمْ يَجْمَحُوْنَ ۝٥٧ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّلْمِزُكَ فِى الصَّدَقٰتِ ۚ فَاِنْ اُعْطُوْا مِنْهَا
رَضُوْا وَاِنْ لَّمْ يُعْطَوْا مِنْهَآ اِذَا هُمْ يَسْخَطُوْنَ ۝٥٨ وَلَوْ اَنَّهُمْ رَضُوْا مَآ اٰتٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ ۙ
وَقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ سَيُؤْتِيْنَا اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ وَرَسُوْلُهٗٓ ۙ اِنَّآ اِلَى اللّٰهِ رٰغِبُوْنَ ۝٥٩ ع

क़ुल् अन्फ़िक़ू तौअ़न् औ कर्हल्-लंय्यु-तक़ब्ब-ल मिन्कुम्, इन्नकुम् कुन्तुम् क़ौमन् फ़ासिक़ीन (53) व मा म-न-अ़हुम् अन् तुक़्ब-ल मिन्हुम् न-फ़क़ातुहुम् इल्ला अन्नहुम् क-फ़रू बिल्लाहि व बि-रसूलिही व ला यअ्तूनस्सला-त इल्ला व हुम् कुसाला व ला युन्फ़िक़ू-न इल्ला व हुम् कारिहून (54) फ़ला तुअ्जिब्-क अम्वालुहुम् व ला औलादुहुम्, इन्नमा यरीदुल्लाहु लियुअ़ज़्ज़ि-बहुम् बिहा फ़िल्हयातिद्दुन्या व तज़्ह-क़ अन्फ़ुसुहुम् व हुम् काफ़िरून (55)	कह दे कि माल ख़र्च करो ख़ुशी से या नाख़ुशी से हरगिज़ क़ुबूल न होगा तुमसे, बेशक तुम नाफ़रमान लोग हो। (53) और स्थगित नहीं हुआ क़ुबूल होना उनके ख़र्च का मगर इसी बात पर कि वे मुन्किर हुए अल्लाह से और उसके रसूल से और नहीं आते नमाज़ को मगर हारे जी से, और ख़र्च नहीं करते मगर बुरे दिल से। (54) सो तू ताज्जुब न कर उनके माल और औलाद से, यही चाहता है अल्लाह कि उनको अ़ज़ाब में रखे इन चीज़ों की वजह से दुनिया की ज़िन्दगी में और निकले उनकी जान और वे उस वक़्त तक काफ़िर ही रहें। (55)

व यह्लिफ़ू-न बिल्लाहि इन्नहुम् लमिन्कुम्, व मा हुम् मिन्कुम् व लाकिन्नहुम् क़ौमुंय्यफ़्रक़ून (56) लौ यजिदू-न मल्ज-अन् औ मग़ारातिन् औ मुद्द-ख़लल्-लवल्लौ इलैहि व हुम् यज्महून (57) व मिन्हुम् मंय्यल्मिज़ु-क फ़िस्स-दक़ाति फ़-इन् उअ्तू मिन्हा रज़ू व इल्लम् युअ्तौ मिन्हा इज़ा हुम् यस्-ख़तून (58) व लौ अन्नहुम् रज़ू मा आताहुमुल्लाहु व रसूलुहू व क़ालू हस्बुनल्लाहु सयुअ्तीनल्लाहु मिन् फ़ज़्लिही व रसूलुहू इन्ना इलल्लाहि राग़िबून (59) ✿	और क़समें खाते हैं अल्लाह की कि वे बेशक तुम में हैं और वे तुम में नहीं, व लेकिन वे लोग डरते हैं तुम से। (56) अगर वे पायें कोई पनाह की जगह या गुफ़ा या सर घुसाने को जगह तो उल्टे भागें उसी तरफ़ रस्सियाँ तुड़ाते। (57) और बाज़े उनमें वे हैं कि तुझको ताने देते हैं ख़ैरात बाँटने में, सो अगर उनको मिले उसमें से तो राज़ी हों और अगर न मिले तो जब ही वे नाख़ुश हो जायें। (58) और क्या अच्छा होता अगर वे राज़ी हो जाते उसी पर जो दिया उनको अल्लाह ने और उसके रसूल ने, और कहते कि काफ़ी है हमको अल्लाह और वह देगा हमको अपने फ़ज़्ल से और उसका रसूल, हमको तो अल्लाह ही चाहिए। (59) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन मुनाफ़िक़ों से) फ़रमा दीजिए कि तुम (जिहाद वग़ैरह में) चाहे ख़ुशी से ख़र्च करो या नाख़ुशी से, तुम किसी तरह (ख़ुदा के नज़दीक) मक़बूल नहीं (क्योंकि) बेशक तुम नाफ़रमानी करने वाले लोग हो (मुराद इससे कुफ़्र है जैसा कि आगे आता है)। और उनकी (ख़ैर-) ख़ैरात क़ुबूल होने से और कोई चीज़ इसके अ़लावा रुकावट नहीं कि उन्होंने अल्लाह के साथ और उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया, (इसी को ऊपर नाफ़रमानी कहा था और काफ़िर का कोई अ़मल मक़बूल नहीं) और (इस अन्दरूनी कुफ़्र की निशानी ज़ाहिर में यह है कि) वे लोग नमाज़ नहीं पढ़ते मगर हारे जी से, और (नेक काम में) ख़र्च नहीं करते मगर नागवारी के साथ। (क्योंकि दिल में ईमान तो है नहीं जिससे सवाब की उम्मीद हो और उस उम्मीद से रुचि पैदा हो, केवल बदनामी से बचने के लिये करते हैं जो कुछ करते हैं, और जब वे ऐसे मरदूद हैं) सो उनके माल और औलाद आपको (इस) ताज्जुब में न डालें (कि ऐसे ग़ैर-मक़बूल मरदूद लोगों को इतने इनामात किस तरह अ़ता हुए, क्योंकि ये चीज़ें वास्तव में उनके लिये नेमत नहीं एक क़िस्म का

अ़ज़ाब ही है, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला को सिर्फ़ यह मन्ज़ूर है कि इन (ज़िक्र की हुई) चीज़ों की वजह से दुनियावी ज़िन्दगी में (भी) उनको अ़ज़ाब में गिरफ़्तार रखे और उनकी जान कुफ़्र ही की हालत में निकल जाये (जिससे आख़िरत में भी अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हों, तो जिस माल व औलाद का यह अन्जाम हो उसको इनाम समझना ही ग़लती है)।

और ये (मुनाफ़िक़) लोग अल्लाह तआ़ला की क़समें खाते हैं कि वे तुम में के हैं (यानी मुसलमान हैं) हालाँकि (हक़ीक़त में) वे तुम में के नहीं, लेकिन (बात यह है कि) वे डरपोक लोग हैं (डर के मारे झूठी क़समें खाकर अपने कुफ़्र को छुपाते हैं, ताकि हमारे साथ दूसरे काफ़िरों जैसा मामला मुसलमानों की तरफ़ से न होने लगे, और किसी दूसरी जगह उनका ठिकाना नहीं जहाँ आज़ादी से जाकर रहें, वरना) उन लोगों को अगर कोई पनाह मिल जाती, या (कहीं पहाड़ वग़ैरह में) गुफ़ायें (मिल जाती) या कोई घुस-बैठने की ज़रा सी जगह (मिल जाती) तो ये ज़रूर मुँह उठाकर उधर ही चल देते (मगर यह सूरत है नहीं, इसलिये झूठी क़समें खाकर अपने आपको मुसलमान बताते हैं)।

और उनमें बाज़े वे लोग हैं जो सदक़ों (को तक़सीम करने) के बारे में आप पर ताने मारते हैं (कि उस बंटवारे में नऊज़ु बिल्लाह इन्साफ़ नहीं किया गया) सो अगर उन (सदक़ों) में से (उनकी इच्छा के मुवाफ़िक़) उनको मिल जाता है तो वे राज़ी हो जाते हैं, और अगर उन (सदक़ों) में से उनको (उनकी इच्छा व तमन्ना के मुवाफ़िक़) नहीं मिलता तो वे नाराज़ हो जाते हैं। (जिससे मालूम हुआ कि उनके एतिराज़ का मन्शा असल में कोई उसूल नहीं, बल्कि दुनिया की हिर्स, लालच और ख़ुदग़र्ज़ी है) और (उनके लिये बेहतर होता) अगर वे लोग उस पर राज़ी रहते जो कुछ उनको अल्लाह ने (दिलवाया था) और उसके रसूल ने दिया था, और (उसके मुताल्लिक़) यूँ कहते कि हमको अल्लाह (का दिया) काफ़ी है (हमको इतना ही क़ायदे से मिल सकता था, इसी में ख़ैर व बरकत होगी, और फिर अगर ज़रूरत पेश आयेगी और मस्लेहत होगी तो) आईन्दा अल्लाह अपने फ़ज़्ल से हमको (और) देगा, और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) देंगे। हम (शुरू से) अल्लाह ही की तरफ़ मुतवज्जह हैं (उसी से सब उम्मीदें रखते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहले बयान हुई आयतों में मुनाफ़िक़ों की बद-अख़्लाक़ी और बुरे आमाल का ज़िक्र था, अब इन ज़िक्र की गयी आयतों में भी यही मज़मून है।

إِنَّمَا يُرِيدُ اللَّهُ لِيُعَذِّبَهُم بِهَا

में जो यह इरशाद फ़रमाया कि मुनाफ़िक़ों के माल व औलाद उनके लिये नेमत नहीं अ़ज़ाब हैं, वजह इसकी यह है कि दुनिया की मुहब्बत में फंसना इनसान के लिये इस दुनिया ही में एक अ़ज़ाब व मुसीबत बन जाता है। पहले दुनिया के माल को हासिल करने की तमन्नायें और फिर तदबीरों में कैसी-कैसी जिस्मानी व रूहानी मेहनत, मशक़्क़त और परेशानी उठानी पड़ती है, न दिन का चैन न रात की नींद, न अपने तन बदन की ख़बर, न बाल-बच्चों ही में दिल बहलाने

की फ़ुर्सत। फिर अगर वह हासिल हो गया तो उसकी हिफ़ाज़त और उसके बढ़ाने की फ़िक्र दिन रात का अ़ज़ाब है। और अगर सारी चीज़ें इत्तिफ़ाक़ से तबीयत और इच्छा के मुताबिक़ हासिल भी हो जायें तो उसके घट जाने का अन्देशा और बढ़ाते चले जाने की फ़िक्र किसी वक़्त चैन नहीं लेने देती।

फिर जब आख़िरकार ये चीज़ें मौत के वक़्त या पहले ही उसके हाथ से जाती हैं तो उस पर मायूसी व हसरत मुसल्लत हो जाती है। यह सब अ़ज़ाब ही अ़ज़ाब है, जिसको बेवक़ूफ़ इनसान जिसने राहत के सामान का नाम राहत रख लिया है, और असली राहत यानी दिल के सुकून व इत्मीनान की उसको हवा भी नहीं लगी, इसलिये राहत के सामान ही को राहत समझकर उस पर मगन रहता है, जो हक़ीक़त में उसके लिये दुनिया के चैन व आराम का भी दुश्मन है और आख़िरत के अ़ज़ाब की शुरूआ़त भी।

क्या सदक़ों का माल काफ़िर को दिया जा सकता है?

आख़िरी आयत से मालूम होता है कि सदक़ों के माल में से मुनाफ़िक़ों को भी हिस्सा मिला करता था, मगर वे इच्छा के मुताबिक़ न मिलने पर नाराज़ हो जाते और ताने व तअ़्ने करने लगते थे। यहाँ अगर सदक़ों से मुराद आ़म मायने लिये जायें जिसमें वाजिब और नफ़्ली सब सदक़े सब शामिल हैं तो कोई शुब्हा व एतिराज़ ही नहीं, क्योंकि नफ़्ली सदक़ों में से ग़ैर-मुस्लिमों को देना उम्मत की सर्वसम्मति से जायज़ और सुन्नत से साबित है, और अगर सदक़ों से मुराद इस जगह फ़र्ज़ सदक़े, ज़कात, उश्र वग़ैरह ही हों तो मुनाफ़िक़ों को उसमें से हिस्सा देना इस बिना पर था कि वे अपने-आपको मुसलमान ज़ाहिर करते थे, और ज़ाहिरी कोई हुज्जत (दलील) उनके कुफ़्र पर क़ायम न हुई थी, और अल्लाह तआ़ला ने मस्लेहत के सबब हुक्म यही दे रखा था कि मुनाफ़िक़ों के साथ वही मामला किया जाये जो मुसलमानों के साथ किया जाता था।

(तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन संक्षिप्त रूप से)

لَا يَأْتُوْنَ الصَّلٰوةَ اِلَّا وَهُمْ كُسَالٰى.

इस आयत में मुनाफ़िक़ों की दो निशानियाँ बतलाई गयी हैं- एक यह कि नमाज़ को आयें तो सुस्ती काहिली और हारे जी से आयें, दूसरे अल्लाह की राह में ख़र्च करें तो नागवारी के साथ ख़र्च करें। इसमें मुसलमानों को भी इस पर तंबीह है कि नमाज़ में सुस्ती, काहिली और ज़कात व सदक़ात से दिली नागवारी पैदा होना निफ़ाक़ की निशानी है, मुसलमानों को कोशिश करके इन निशानियों से बचना चाहिये।

اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَآءِ وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْعٰمِلِيْنَ عَلَيْهَا
وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوْبُهُمْ وَفِي الرِّقَابِ وَالْغٰرِمِيْنَ وَفِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۭ فَرِيْضَةً مِّنَ
اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

इन्नमस्स-दक़ातु लिल्फ़ु-क़रा-इ वल्मसाकीनि वल्आ़मिली-न अ़लैहा वल्मुअल्ल-फ़ति क़ुलूबुहुम् व फ़िर्रिक़ाबि वल्ग़ारिमी-न व फ़ी सबीलिल्लाहि वब्निस्सबीलि, फ़री-ज़तम् मिनल्लाहि, वल्लाहु अ़लीमुन् हकीम (60)	ज़कात जो है सो वह हक़ है मुफ़लिसों का और मोहताजों का और ज़कात के काम पर जाने वालों का और जिनका दिल परचाना मन्ज़ूर है, और गर्दनों के छुड़ाने में और जो तावान (जुर्माना) भरें और अल्लाह के रास्ते में और राह के मुसाफ़िर को, मुक़र्रर किया हुआ है अल्लाह का, और अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (60)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(फ़र्ज़) सदक़ात तो सिर्फ़ ग़रीबों का हक़ है और मोहताजों का, और जो कार्यकर्ता उन सदक़ात (के हासिल व वसूल करने) पर मुतैयन हैं, और जिनकी दिलजोई करना (मन्ज़ूर) है, और ग़ुलामों की गर्दन छुड़ाने में (ख़र्च किया जाये) और क़र्ज़दारों के क़र्ज़े (अदा करने) में, और जिहाद (वालों के सामान) में, और मुसाफ़िरों (की इमदाद) में, यह हुक्म अल्लाह की तरफ़ से (मुक़र्रर) है, और अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले बड़ी हिक्मत वाले हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सदक़ात के ख़र्च करने की जगहें

इससे पहली आयतों में सदक़ों के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर कुछ मुनाफ़िक़ों के एतिराज़ों और जवाब का ज़िक्र था, जिसमें मुनाफ़िक़ों ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर यह इल्ज़ाम लगाया था कि आप (अल्लाह की पनाह) सदक़ात की तक़सीम में इन्साफ़ नहीं करते, जिसको चाहते हैं जो चाहते हैं दे देते हैं।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने सदक़ों के ख़र्च करने की जगहों को मुतैयन फ़रमाकर उनकी इस ग़लत-फ़हमी को दूर कर दिया कि अल्लाह तआ़ला ने यह बात ख़ुद मुतैयन फ़रमा दी है कि सदक़ात किन लोगों को देने चाहियें, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सदक़ों के बाँटने में अल्लाह के उसी इरशाद की तामील फ़रमाते हैं, अपनी राय से कुछ नहीं करते।

इसकी तस्दीक़ उस हदीस से भी होती है जो अबू दाऊद और दारे क़ुतनी ने हज़रत ज़ियाद बिन हारिस सुदाई की रिवायत से नक़ल की है। यह फ़रमाते हैं कि मैं रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो मालूम हुआ कि आप उनकी क़ौम के मुक़ाबले के लिये मुसलमानों का एक लश्कर रवाना फ़रमा रहे हैं। मैंने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह!

आप लश्कर न भेजें, मैं इसका ज़िम्मा लेता हूँ कि वे सब ताबेदार व फ़रमाँबरदार होकर आ जायेंगे। फिर मैंने अपनी क़ौम को ख़त लिखा तो सब के सब मुसलमान हो गये, इस पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

يَا اَخَاصُدَاءَ الْمُطَاعَ فِیْ قَوْمِهٖ.

जिसमें गोया उनको यह ख़िताब दिया गया कि यह अपनी क़ौम के महबूब और लीडर हैं। मैंने अ़र्ज़ किया कि इसमें मेरा कोई कमाल नहीं, अल्लाह तआ़ला के करम से उनको हिदायत हो गयी और वे मुसलमान हो गये। यह फ़रमाते हैं कि मैं अभी उस मज्लिस में हाज़िर था कि एक शख़्स हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ सवाल करने के लिये हाज़िर हुआ, आपने उसको यह जवाब दिया किः

"सदक़ात की तक़सीम को अल्लाह तआ़ला ने किसी नबी या ग़ैर-नबी के भी हवाले नहीं किया, बल्कि खुद ही उसके आठ मस्रफ़ (ख़र्च के मौक़े) मुतैयन फ़रमा दिये, अगर तुम उन आठ में दाख़िल हो तो तुम्हें दे सकता हूँ........। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, पेज 168 जिल्द 8)

आयत का शाने नुज़ूल मालूम करने के बाद आयत की मुकम्मल तफ़सीर और व्याख्या सुनने से पहले यह समझ लीजिए कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने तमाम मख़्लूक़ात इनसान व हैवान वग़ैरह को रिज़्क़ देने का वायदा फ़रमाया हैः

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِی الْاَرْضِ اِلَّا عَلَی اللّٰهِ رِزْقُهَا.

और साथ ही अपनी कामिल हिक्मत से ऐसा नहीं किया कि सब को रिज़्क़ में बराबर कर देते, ग़नी व फ़क़ीर का फ़र्क़ न रहता। इसमें इनसान की अख़्लाक़ी तरबियत और दुनिया के निज़ाम (सिस्टम) से संबन्धित सैंकड़ों हिक्मतें हैं जिनकी तफ़सील का यह मौक़ा नहीं। इस हिक्मत के मातहत किसी को मालदार बना दिया किसी को ग़रीब फ़क़ीर, फिर मालदारों के माल में ग़रीब फ़क़ीर का हिस्सा लगा दिया। इरशाद फ़रमायाः

وَفِیْٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُوْمٌ لِّلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُوْمِ.

जिसमें बतला दिया कि मालदारों के माल में अल्लाह तआ़ला ने एक निर्धारित मात्रा का हिस्सा फ़क़ीरों ग़रीबों के लिये रख दिया है, जो उन ग़रीबों का हक़ है।

इससे एक तो यह मालूम हुआ कि मालदारों के माल में से जो सदक़ा निकालने का हुक्म दिया गया है यह कोई उनका एहसान नहीं, बल्कि ग़रीबों व फ़क़ीरों का एक हक़ है, जिसकी अदायेगी उनके ज़िम्मे ज़रूरी है। दूसरे यह भी मालूम हुआ कि यह हक़ अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मुतैयन है, यह नहीं कि जिसका जी चाहे जब चाहे उसमें कमी-बेशी कर दे, अल्लाह तआ़ला ने उस निर्धारित हक़ की मात्रा भी बतलाने का काम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सुपुर्द फ़रमाया, और इसी लिये आपने उसका इस क़द्र एहतिमाम फ़रमाया कि सहाबा-ए-किराम को सिर्फ़ ज़बानी बतला देने पर किफ़ायत नहीं फ़रमाई, बल्कि इस मामले के मुताल्लिक़ तफ़सीली फ़रमान लिखवाकर हज़रत फ़ारूक़े आज़म और अ़मर बिन हज़्म को सुपुर्द

फ़रमाये, जिससे वाज़ेह तौर पर साबित हो गया कि ज़कात के निसाब और हर निसाब में से ज़कात की मात्रा हमेशा के लिये अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के माध्यम से मुतैयन करके बतला दी हैं, उसमें किसी ज़माने और किसी मुल्क में किसी को कमी बेशी या तब्दीली का कोई हक़ नहीं।

सही यह है कि सदके, ज़कात की फ़र्ज़ियत इस्लाम के शुरू दौर ही में मक्का मुकर्रमा के अन्दर नाज़िल हो चुकी थी, जैसा कि इमामे तफ़सीर अ़ल्लामा इब्ने कसीर रह. ने सूरः मुज़्ज़म्मिल की आयत "फ़-अक़ीमुस्सला-त व आतुज़्ज़का-त" से दलील पकड़ी है, क्योंकि यह सूरत वही की बिल्कुल शुरू के ज़माने की सूरतों में से है, उनमें नमाज़ के साथ ज़कात का हुक्म भी है, अलबत्ता हदीस की रिवायतों से ऐसा मालूम होता है कि इस्लाम के शुरू के दौर में ज़कात के लिये कोई ख़ास निसाब या ख़ास मात्रा मुक़र्रर न थी, बल्कि जो कुछ एक मुसलमान की अपनी ज़रूरतों से बच जाये वह सब अल्लाह की राह में ख़र्च किया जाता था, निसाबों का निर्धारण और ज़कात की मात्रा का बयान मदीना तय्यिबा की हिजरत के बाद हुआ है, और फिर ज़कात व सदक़ात की वसूलयाबी का निज़ाम मज़बूती के साथ तो मक्का फ़तह होने के बाद अ़मल में आया है।

इस आयत में सहाबा व ताबिईन के नज़दीक मुत्तफ़िक़ा तौर पर उसी वाजिब सदके के ख़र्च करने के मौक़ों का बयान है जो नमाज़ की तरह मुसलमानों पर फ़र्ज़ है। क्योंकि ख़र्च करने के जो मौक़े और जगहें इस आयत में मुतैयन की गयी हैं वो फ़र्ज़ व वाजिब सदक़ों के ख़र्च करने के मौक़े हैं, नफ़्ली सदक़ों में रिवायतों की वज़ाहतों की बिना पर बहुत गुंजाईश है, वो इन आठ मौक़ों में सीमित नहीं हैं।

अगरचे ऊपर की आयत में सदक़ात का लफ़्ज़ आ़म सदक़ों के लिये इस्तेमाल हुआ है, जिसमें वाजिब और नफ़्ली दोनों दाख़िल हैं, मगर इस आयत में उम्मत एकमत है कि फ़र्ज़ सदक़ों ही के ख़र्च के मौक़ों का बयान मुराद है। और तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि क़ुरआन में जहाँ कहीं लफ़्ज़ सदक़ा बिना किसी क़ैद के बोला गया है और कोई इशारा नफ़्ली सदक़े का नहीं है तो वहाँ फ़र्ज़ सदक़ा ही मुराद होता है।

इस आयत को लफ़्ज़ 'इन्नमा' से शुरू किया गया है। यह लफ़्ज़ सीमित व ख़ास करने के लिये इस्तेमाल होता है। इस शुरू ही के कलिमे ने बतला दिया कि सदक़ों के जो मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) आगे बयान हो रहे हैं तमाम वाजिब सदक़े सिर्फ़ उन्हीं में ख़र्च होने चाहियें, उनके अ़लावा किसी दूसरे ख़ैर के मौक़े और जगह में वाजिब सदक़े ख़र्च नहीं हो सकते। जैसे जिहाद की तैयारी या मस्जिदों व मदरसों की तामीर या दूसरे उमूमी फ़ायदे के इदारे, ये सब चीज़ें भी अगरचे ज़रूरी हैं और इनमें ख़र्च करने का बहुत बड़ा सवाब है, मगर फ़र्ज़ व वाजिब सदक़े जिनकी मात्रा मुतैयन कर दी गयी हैं, उनको इनमें नहीं लगाया जा सकता।

आयत का दूसरा लफ़्ज़ 'सदक़ात' सदक़े की जमा (बहुवचन) है। सदक़ा लुग़त में उस माल के हिस्से को कहा जाता है जो अल्लाह के लिये ख़र्च किया जाये। (क़ामूस) इमाम राग़िब रह. ने

मुफ़्रदातुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि सदक़े को सदक़ा इसलिये कहते हैं कि उसका देने वाला गोया यह दावा करता है कि मैं अपने क़ौल व फ़ेल में सादिक़ (सच्चा) हूँ, इसके ख़र्च करने की कोई दुनियावी ग़र्ज़ नहीं, बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा के लिये ख़र्च कर रहा हूँ। इसी लिये जिस सदक़े में कोई नाम व नमूद या दुनियावी ग़र्ज़ शामिल हो जाये क़ुरआने करीम ने उसको बेकार और बेजान क़रार दिया है।

लफ़्ज़ सदक़ा अपने असली मायने की रू से आ़म है, नफ़्ली सदक़े को भी कहा जाता है, फ़र्ज़ ज़कात को भी। नफ़िल के लिये इसका इस्तेमाल आ़म है ही, फ़र्ज़ के लिये भी क़ुरआने करीम में बहुत जगह यह लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है। जैसेः

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً.

और यही आयत जिसका बयान चल रहा है यानी "इन्नमस्सदक़ातु" वाली, और इसके अ़लावा भी हैं, बल्कि अ़ल्लामा क़ुर्तुबी की तहक़ीक़ तो यह है कि क़ुरआन में जब लफ़्ज़ सदक़ा आ़म और बिना किसी क़ैद के बोला जाता है तो उससे फ़र्ज़ सदक़ा ही मुराद होता है, और हदीस की रिवायतों में लफ़्ज़ सदक़ा हर नेक काम के लिये भी इस्तेमाल हुआ है, जैसे हदीस में है कि किसी मुसलमान से ख़ुश होकर मिलना भी सदक़ा है, किसी बोझ उठाने वाले का बोझ उठवा देना भी सदक़ा है, कुएँ से पानी का डोल अपने लिये निकाला उसमें से किसी को दे देना भी सदक़ा है। इस हदीस में लफ़्ज़ सदक़ा मजाज़ी तौर पर आ़म मायने में इस्तेमाल किया गया है।

तीसरा लफ़्ज़ इसके बाद 'लिल्फ़ुक़-रा-इ' से शुरू हुआ है। इसके शुरू में हर्फ़ लाम है जो तख़्सीस (ख़ास करने) के मायने में इस्तेमाल होता है, इसलिये जुमले के मायने यह होंगे कि तमाम सदक़े सिर्फ़ उन्हीं लोगों का हक़ है जिनका ज़िक्र बाद में किया गया है। अब उन आठ मसारिफ़ (ख़र्च करने के मौक़ों) की तफ़सील सुनिये जो इसके बाद बयान हुए हैं:-

उनमें से पहला मस्रफ़ (ख़र्च का मौक़ा) ग़रीब व फ़क़ीर लोग हैं। दूसरा मिस्कीन लोग। फ़क़ीर और मिस्कीन के असली मायने में अगरचे मतभेद है, एक के मायने हैं जिसके पास कुछ न हो, दूसरे के मायने हैं जिसके पास निसाब (ज़कात की मात्रा) से कम हो। लेकिन ज़कात के हुक्म में दोनों बराबर हैं, कोई मतभेद नहीं। जिसका हासिल यह है कि जिस शख़्स के पास उसकी असली ज़रूरत से ज़ायद निसाब के बराबर माल न हो उसको ज़कात दी जा सकती है, और उसके लिये ज़कात लेना भी जायज़ है। ज़रूरत में रहने का मकान, इस्तेमाली बरतन और कपड़े और फ़र्नीचर वग़ैरह सब दाख़िल हैं। **निसाब** यानी सोना साढ़े सात तौले या चाँदी साढ़े बावन तौले या उसकी क़ीमत। जिसके पास कुछ चाँदी या कुछ पैसे नक़द हैं और थोड़ा सा सोना है तो सब की क़ीमत लगाकर अगर साढ़े बावन तौले चाँदी की क़ीमत के बराबर हो जाये तो वह भी निसाब का मालिक है, उसको ज़कात देना और लेना जायज़ नहीं। और जो शख़्स निसाब वाला नहीं मगर तन्दुरुस्त, ताक़तवर और कमाने के क़ाबिल है और एक दिन का गुज़ारा उसके पास मौजूद है उसको अगरचे ज़कात देना जायज़ है मगर यह जायज़ नहीं कि वह लोगों से

सवाल करता फिरे। इसमें बहुत से लोग ग़फ़लत बरतते हैं, सवाल करना ऐसे लोगों के लिये हराम है। ऐसा शख़्स जो कुछ सवाल करके हासिल करता है उसको रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जहन्नम का अंगारा फ़रमाया है। (अबू दाऊद, हज़रत अ़ली की रिवायत से, क़ुर्तुबी)

हासिल यह है कि फ़क़ीर और मिस्कीन में ज़कात के बारे में कोई फ़र्क़ नहीं, अलबत्ता वसीयत्त के हुक्म में फ़र्क़ पड़ता है कि मसाकीन के लिये वसीयत की है तो कैसे लोगों को दिया जाये, और फ़क़ीरों के लिये है तो कैसे लोगों को दिया जाये, जिसके बयान की यहाँ ज़रूरत नहीं। फ़क़ीर और मिस्कीन के दोनों मस्रफ़ों (ख़र्च करने के मौक़ों) में यह बात साझा है कि जिसको ज़कात का माल दिया जाये वह मुसलमान हो और अपनी असल ज़रूरतों से ज़ायद निसाब के बराबर माल का मालिक न हो।

अगरचे आ़म सदक़े ग़ैर-मुस्लिमों को भी दिये जा सकते हैं, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

تَصَدَّقُوْا عَلٰٓى اَهْلِ الْاَدْيَانِ كُلِّهَا.

"यानी हर मज़हब वाले पर सदक़ा करो।"

लेकिन ज़कात के सदक़े के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यमन भेजने के वक़्त यह हिदायत फ़रमाई थी कि ज़कात का माल सिर्फ़ मुसलमानों के मालदारों से लिया जाये, और उन्हीं के फ़क़ीरों व ग़रीबों पर ख़र्च किया जाये, इसलिये ज़कात के माल को सिर्फ़ मुस्लिम ग़रीबों व मिस्कीनों ही पर ख़र्च किया जा सकता है, ज़कात के अ़लावा दूसरे सदक़े यहाँ तक कि सदक़ा-ए-फ़ित्र भी ग़ैर-मुस्लिम फ़क़ीर को देना जायज़ है। (हिदाया)

और दूसरी शर्त निसाब का मालिक न होने की ख़ुद फ़क़ीर व मिस्कीन के मायने से स्पष्ट हो जाती है, क्योंकि या तो उसके पास कुछ न होगा, या कम से कम निसाब के माल की मिक़्दार से कम होगा, इसलिये फ़क़ीर और मिस्कीन दोनों इतनी बात में साझी हैं कि उनके पास निसाब के बराबर माल मौजूद नहीं। इन दोनों मस्रफ़ों (ख़र्च के मौक़ों) के बाद और छह मसारिफ़ का बयान आया है, उनमें से पहला मस्रफ़ सदक़े के कार्यकर्ता हैं।

तीसरा मस्रफ़ 'सदक़े के आ़मिलीन'

यहाँ आ़मिलीन से मुराद वे लोग हैं जो इस्लामी हुकूमत की तरफ़ से सदक़ात, ज़कात और उश्र वग़ैरह लोगों से वसूल करके बैतुल-माल (सरकारी ख़ज़ाने) में जमा करने की ख़िदमत पर लगाये हुए होते हैं। ये लोग चूँकि अपना पूरा वक़्त इस ख़िदमत में ख़र्च करते हैं इसलिये इनकी ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी इस्लामी हुकूमत पर लागू है। क़ुरआने करीम की इस आयत ने ज़कात के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़ों) में उनका हिस्सा रखकर यह मुतैयन कर दिया कि उनकी मेहनत व ख़िदमत का हक़ इसी ज़कात के फ़ण्ड से दिया जायेगा।

इसमें असल यह है कि हक़ तआ़ला ने मुसलमानों से ज़कात व सदक़ात वसूल करने का

फ़रीज़ा डायरेक्ट रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सुपुर्द फ़रमाया है, जिसका ज़िक्र इसी सूरत में आगे आने वाली इस आयत में हैः

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً.

"यानी वसूल करें आप मुसलमानों के मालों में से सदका।" इस आयत का तफ़सीली बयान तो आईन्दा आयेगा, यहाँ यह बतलाना मन्ज़ूर है कि इस आयत के अनुसार मुसलमानों के अमीर पर यह फ़रीज़ा लागू होता है कि वह ज़कात व सदक़ात वसूल करे, और यह ज़ाहिर है कि अमीर खुद इस काम को पूरे मुल्क में बग़ैर अपने सहयोगियों और मददगारों के नहीं कर सकता, उन्हीं सहयोगियों और मददगारों का ज़िक्र उपर्युक्त आयत में 'वल्आ़मिली-न अ़लैहा' के अलफ़ाज़ से किया गया है।

इन्हीं आयतों की तामील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बहुत से सहाबा-ए-किराम को सदके वसूल करने के लिये आ़मिल (कारकुन) बनाकर विभिन्न ख़ित्तों में भेजा है, और उपर्युक्त आयत की हिदायत के मुवाफ़िक़ ज़कात ही की हासिल शुदा रक़म में से उनको उनका मेहनताना दिया है। उनमें वे सहाबी हज़रात भी शामिल हैं जो ख़ुद मालदार थे। हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सदका किसी ग़नी यानी मालदार के लिये हलाल नहीं, सिवाय पाँच शख़्सों के- एक वह शख़्स जो जिहाद के लिये निकला है और वहाँ उसके पास ज़रूरत के मुताबिक़ माल नहीं, अगरचे घर में मालदार हो। दूसरे सदके का आ़मिल जो सदका वसूल करने की ख़िदमत अन्जाम देता हो। तीसरे वह शख़्स कि अगरचे उसके पास माल है मगर वह मौजूदा माल से ज़्यादा का क़र्ज़दार है। चौथे वह शख़्स जो सदके का माल किसी ग़रीब मिस्कीन से पैसे देकर ख़रीद ले। पाँचवें वह शख़्स जिसे किसी ग़रीब फ़क़ीर ने सदके का हासिल शुदा माल बतौर हदिये-तोहफ़े के पेश कर दिया हो।

रहा यह मसला कि सदके के आ़मिलीन को उसमें से कितनी रक़म दी जाये सो इसका हुक्म यह है कि उनकी मेहनत व काम की हैसियत के मुताबिक़ दी जायेगी।

(अहकामुल-क़ुरआन, जस्सास, तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

अलबत्ता यह ज़रूरी होगा कि आ़मिलीन (सदक़ों को जमा करने वालों) की तन्ख़्वाहें ज़कात की रक़म के आधे से बढ़ने न पायें, अगर ज़कात की वसूलयाबी इतनी कम हो कि आ़मिलीन की तन्ख़्वाहें देकर आधी रक़म भी बाक़ी नहीं रहती तो फिर तन्ख़्वाहों में कमी की जायेगी, आधे से ज़ायद नहीं ख़र्च किया जायेगा। (तफ़सीरे मज़हरी, ज़हीरीया)

उक्त बयान से मालूम हुआ कि सदके के जमा करने के लिये काम करने वालों को जो रक़म ज़कात की मद से दी जाती है वह सदके की हैसियत से नहीं बल्कि उनकी ख़िदमत का मुआ़वज़ा है। इसी लिये ग़नी और मालदार होने के बावजूद भी वे उस रक़म के हक़दार हैं, और ज़कात से उनको देना जायज़ है। और ज़कात के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़ों) की आठ मदों में से सिर्फ़ एक यही मद (रक़म) ऐसी है जिसमें ज़कात की रक़म ख़िदमत के मुआ़वज़े के तौर पर दी

जाती है, वरना ज़कात नाम ही उस अ़तीये का है जो ग़रीबों को बग़ैर किसी मुआ़वज़ा-ए-ख़िदमत के दिया जाये, और अगर किसी ग़रीब फ़क़ीर से कोई ख़िदमत लेकर उसको ज़कात का माल दिया गया तो ज़कात अदा नहीं हुई।

इसी लिये यहाँ दो सवाल पैदा होते हैं- अव्वल यह कि ज़कात के माल को ख़िदमत के मुआ़वज़े में कैसे दिया गया, दूसरे यह कि मालदार के लिये यह ज़कात का माल हलाल कैसे हुआ। इन दोनों सवालों का एक ही जवाब है, कि सदक़े के आ़मिलीन की असली हैसियत को समझ लिया जाये, वह यह है कि ये हज़रात ग़रीबों-फ़क़ीरों के वकील की हैसियत रखते हैं, और यह सब ही जानते हैं कि वकील का क़ब्ज़ा असल मुवक्किल के क़ब्ज़े के हुक्म में होता है, अगर कोई शख़्स अपना क़र्ज़ वसूल करने के लिये किसी को वकील मुख़्तार बना दे, और क़र्ज़दार यह क़र्ज़ वकील को सुपुर्द कर दे तो वकील का क़ब्ज़ा होते ही क़र्ज़दार बरी हो जाता है। तो जब ज़कात की रक़म सदक़े के लिये काम करने वालों ने फ़क़ीरों के वकील होने की हैसियत से वसूल कर ली तो उनकी ज़कात अदा हो गयी, अब यह पूरी रक़म उन फ़क़ीरों की मिल्क है जिनकी तरफ़ से बतौर वकील उन्होंने वसूल की है, अब जो रक़म ख़िदमत के मुआ़वज़े के तौर पर उनको दी जाती है वह मालदारों की तरफ़ से नहीं बल्कि फ़क़ीरों-ग़रीबों की तरफ़ से हुई, और फ़क़ीरों को उसमें हर तरह के तसर्रुफ़ करने का इख़्तियार है। उनको यह भी हक़ है कि जब अपना काम उन लोगों से लेते हैं तो अपनी रक़म में से उनको ख़िदमत का मुआ़वज़ा दे दें।

अब सवाल यह रह जाता है कि फ़क़ीरों-ग़रीबों ने तो उनको वकील मुख़्तार बनाया नहीं, ये उनके वकील कैसे बन गये? इसकी वजह यह है कि इस्लामी हुकूमत का मुखिया जिसको अमीर कहा जाता है वह क़ुदरती तौर पर अल्लाह की जानिब से पूरे मुल्क के फ़क़ीरों-ग़रीबों का वकील होता है, क्योंकि उन सब की ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी उस पर आयद होती है। हुकूमत का मुखिया जिस-जिसको सदक़ों की वसूलयाबी पर आ़मिल (कारकुन) बना दे वे सब उसके नायब की हैसियत से फ़क़ीरों के वकील हो जाते हैं।

इससे मालूम हो गया कि सदक़े के लिये अ़मल करने वालों को जो कुछ दिया गया वह दर हक़ीक़त ज़कात नहीं दी गयी बल्कि ज़कात जिन फ़क़ीरों का हक़ है उनकी तरफ़ से ख़िदमत का मुआ़वज़ा दिया गया, जैसे कोई ग़रीब फ़क़ीर किसी को अपने मुक़द्दमे का वकील बनाये और उसकी ख़िदमत का मुआ़वज़ा ज़कात के हासिल शुदा माल से अदा कर दे तो यहाँ न तो देने वाला बतौर ज़कात के दे रहा है और न लेने वाला ज़कात की हैसियत से ले रहा है।

फ़ायदा

बयान हुई तफ़सील से यह भी मालूम हो गया कि आजकल जो इस्लामी मदरसों और अंजुमनों के मोहतमिम, या उनकी तरफ़ से भेजे हुए सफ़ीर सदक़ात ज़कात वग़ैरह मदरसों और अंजुमनों के लिये वसूल करते हैं, उनका वह हुक्म नहीं जो सदक़े के लिये काम करने वालों का इस आयत में बयान हुआ है, कि ज़कात की रक़म में से उनकी तन्ख़्वाह दी जा सके, बल्कि

उनको मदरसों और अंजुमनों की तरफ़ से अलग से तन्ख़्वाह देना ज़रूरी है, ज़कात की रक़म से उनकी तन्ख़्वाह नहीं दी जा सकती। वजह यह है कि ये लोग फ़क़ीरों-ग़रीबों के वकील नहीं, बल्कि ज़कात देने वाले मालदारों के वकील हैं, उनकी तरफ़ से ज़कात के माल को सही मस्रफ़ पर लगाने का इनको इख़्तियार दिया गया है, इसी लिये इनका क़ब्ज़ा हो जाने के बाद भी ज़कात उस वक़्त तक अदा नहीं होती जब तक ये हज़रात उसको सही मस्रफ़ पर ख़र्च न कर दें।

फ़क़ीरों का वकील न होना इसलिये ज़ाहिर है कि दर हक़ीक़त किसी फ़क़ीर ने इनको अपना वकील बनाया नहीं, और अमीरुल-मोमिनीन की आम वलायत की बिना पर जो ख़ुद-ब-ख़ुद ग़रीबों-फ़क़ीरों की वकालत हासिल होती है वह भी इनको हासिल नहीं, इसलिये सिवाय इसके कोई सूरत नहीं कि इनको ज़कात देने वालों का वकील क़रार दिया जाये, और जब तक ये उस माल को मस्रफ़ (ख़र्च की जगह) पर ख़र्च न कर दें इनका क़ब्ज़ा ऐसा ही है जैसा कि ज़कात की रक़म ख़ुद माल वाले के पास रखी हो।

इस मामले में आम तौर पर ग़फ़लत (लापरवाही) बरती जाती है, बहुत से इदारे ज़कात का फ़ण्ड वसूल करके उसको सालों साल रखे रहते हैं, और ज़कात देने वाले समझते हैं कि हमारी ज़कात अदा हो गयी, हालाँकि उनकी ज़कात उस वक़्त अदा होगी जब उनकी रक़म ज़कात के मसारिफ़ में ख़र्च हो जाये।

इसी तरह बहुत से लोग नावाक़फ़ियत से उन लोगों को सदक़े के लिये काम करने वालों के हुक्म में दाख़िल समझकर ज़कात ही की रक़म से उनकी तन्ख़्वाह देते हैं, यह न देने वालों के लिये जायज़ न लेने वालों के लिये।

एक और सवाल- इबादत पर उजरत

यहाँ एक और सवाल यह पैदा होता है कि क़ुरआन मजीद के इशारात और रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसों की बहुत सी स्पष्टताओं से यह बात साबित है कि किसी इबादत पर उजरत व मुआवज़ा लेना हराम है। मुस्नद अहमद की हदीस में हज़रत अ़ब्दुर्रहमान बिन शिबल की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اِقْرَأُوا الْقُرْاٰنَ وَلَا تَاْكُلُوْا بِهٖ.

"यानी क़ुरआन पढ़ो, मगर उसको खाने का ज़रिया न बनाओ।"

और बाज़ रिवायतों में उस मुआवज़े को जहन्नम का एक टुकड़ा फ़रमाया है जो क़ुरआन पर लिया जाये। इसकी बिना पर उम्मत के फ़ुक़हा का इत्तिफ़ाक़ है कि नेकियों व इबादतों पर उजरत लेना जायज़ नहीं। और यह भी ज़ाहिर है कि सदक़ात वसूल करने का काम एक दीनी ख़िदमत और इबादत है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसको एक क़िस्म का जिहाद फ़रमाया है। इसका तक़ाज़ा यह था कि इस पर भी कोई उजरत व मुआवज़ा लेना हराम होता, हालाँकि क़ुरआने करीम की इस आयत ने स्पष्ट तौर पर इसको जायज़ क़रार दिया, और

ज़कात के आठ मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़ों) में इसको दाख़िल फ़रमाया।

इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में इसके बारे में फ़रमाया है कि जो इबादतें फ़र्ज़े ऐन या वाजिब हैं उन पर उजरत लेना बिल्कुल हराम है, लेकिन जो फ़र्ज़े किफ़ाया हैं उन पर कोई मुआवज़ा लेना इसी आयत के हिसाब से जायज़ है। फ़र्ज़े किफ़ाया के मायने यह हैं कि एक काम पूरी उम्मत या पूरे शहर के ज़िम्मे फ़र्ज़ किया गया है, मगर यह लाज़िम नहीं कि सब ही उसको करें, अगर कुछ लोग अदा कर लें तो सब ज़िम्मेदारी से बरी हो जाते हैं, अलबत्ता अगर कोई भी न करे तो सब गुनाहगार होते हैं।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि इसी आयत से साबित हुआ कि इमामत व ख़िताबत का मुआवज़ा लेना भी जायज़ है, क्योंकि वह भी वाजिब अ़लल्-ऐन नहीं बल्कि वाजिब अ़लल्-किफ़ाया हैं। इसी तरह क़ुरआन व हदीस और दूसरे दीनी उलूम की तालीम का भी यही हाल है, कि ये सब काम पूरी उम्मत के ज़िम्मे फ़र्ज़े किफ़ाया हैं, अगर कुछ लोग कर लें तो सब भारमुक्त हो जाते हैं, इसलिये अगर इस पर कोई मुआवज़ा और तन्ख़्वाह ली जाये तो वह भी जायज़ है।

ज़कात के मसारिफ़ में से चौथा मस्रफ़ (ख़र्च करने की जगह) मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब हैं। ये वे लोग हैं जिनकी दिलजोई के लिये उनको सदक़े दिये जाते थे। आ़म तौर पर यह बयान किया जाता है कि उनमें तीन चार क़िस्म के लोग शामिल थे- कुछ मुसलमान कुछ ग़ैर-मुस्लिम। फिर मुसलमानों में कुछ तो वे लोग थे जो ग़रीब ज़रूरत मन्द भी थे और नवमुस्लिम भी, उनकी दिलजोई इसलिये की जाती थी कि इस्लाम पर पुख़्ता हो जायें। और कुछ वे थे जो मालदार भी थे और मुसलमान हो गये थे, मगर अभी तक ईमान का रंग उनके दिलों में रचा नहीं था। और कुछ वे लोग थे जो ख़ुद तो पक्के मुसलमान थे मगर उनकी क़ौम को उनके ज़रिये हिदायत पर लाना और पुख़्ता करना मक़सूद था। और ग़ैर-मुस्लिमों में भी कुछ वे लोग थे जिनके शर (बुराई) से बचने के लिये उनकी दिलजोई की जाती थी। और कुछ वे थे जिनके बारे में यह तजुर्बा था कि न तब्लीग़ व तालीम से प्रभावित होते हैं, न जंग व सख़्ती से, बल्कि एहसान और अच्छे सुलूक से प्रभावित होते हैं। रहमतुल-लिल्आ़लमीन तो यह चाहते थे कि अल्लाह की मख़्लूक़ को कुफ़्र की अंधेरी से निकाल कर ईमान के नूर में ले आयें, इसके लिये हर वह जायज़ तदबीर करते थे जिससे ये लोग मुतास्सिर हो सकें। ये सब क़िस्में आ़म तौर पर "मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब" में दाख़िल समझी जाती हैं, जिनको सदक़ात का चौथा मस्रफ़ इस आयत में क़रार दिया है।

चौथा मस्रफ़ मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब हैं, इनके मुताल्लिक़ ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि ये वे लोग हैं जिनकी दिलजोई के लिये उनको सदक़ों में से हिस्सा दिया जाता था। आ़म ख़्याल के मुताबिक़ उनमें मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम दोनों तरह के लोग थे, ग़ैर-मुस्लिमों की दिलजोई इस्लाम की तरफ़ दिलचस्पी के लिये और नवमुस्लिमों की दिलजोई इस्लाम पर पुख़्ता करने के लिये की जाती थी। आ़म तौर पर मशहूर यह है कि उनको रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में एक ख़ास वजह और मस्लेहत के लिये जिसका ज़िक्र अभी आ चुका है,

सदक़ात दिये जाते थे। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद जबकि इस्लाम को माद्दी क़ुव्वत भी हासिल हो गयी और काफ़िरों के शर से बचने या नवमुस्लिमों को इस्लाम पर पुख़्ता करने के लिये इस तरह की तदबीरों की ज़रूरत न रही तो वह वजह और मस्लेहत ख़त्म हो गयी, इसलिये उनका हिस्सा भी ख़त्म हो गया, जिसको कुछ फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) ने मन्सूख़ हो जाने से ताबीर फ़रमाया है। फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु, हसन बसरी, इमाम शाबी, इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम मालिक बिन अनस रह. की तरफ़ यही क़ौल मन्सूब है।

और बहुत से हज़रात ने फ़रमाया कि मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब का हिस्सा मन्सूख़ (ख़त्म और रद्द) नहीं, बल्कि सिद्दीके अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़माने में इसको स्थगित करने का मतलब यह है कि ज़रूरत न रहने की वजह से उनका हिस्सा रोक दिया गया, आईन्दा किसी ज़माने में फिर ऐसी ज़रूरत पेश आ जाये तो फिर दिया जा सकता है। इमाम ज़ोहरी, क़ाज़ी अ़ब्दुल-वह्हाब, इब्ने अ़रबी, इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद रह. का यही मज़हब है, लेकिन तहक़ीक़ी और सही बात यह है कि ग़ैर-मुस्लिमों को सदक़ात वग़ैरह से किसी वक़्त किसी ज़माने में हिस्सा नहीं दिया गया, और न ये मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब में दाख़िल हैं, जिनका ज़िक्र सदक़ात के मसारिफ़ में आया है।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने अपनी तफ़सीर में उन सब लोगों के नाम तफ़सील के साथ गिनाये हैं जिनकी दिलजोई के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सदक़ात की मद (फ़ण्ड और रक़म) से हिस्सा दिया है, और ये सब शुमार करने के बाद फ़रमाया है:

وَبِالْجُمْلَةِ فَكُلُّهُمْ مُؤْمِنٌ وَلَمْ يَكُنْ فِيهِمْ كَافِرٌ.

यानी ख़ुलासा यह है कि मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब सब के सब मुसलमान ही थे, उनमें कोई काफ़िर शामिल नहीं था।

इसी तरह तफ़सीरे मज़हरी में है:

لَمْ يَثْبُتْ اَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَعْطٰى اَحَدًا مِّنَ الْكُفَّارِ لِلْاِيْلَافِ شَيْئًا مِّنَ الزَّكٰوةِ.

"यानी यह बात किसी रिवायत से साबित नहीं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने किसी काफ़िर को ज़कात के माल में से उसकी दिलजोई के लिये हिस्सा दिया हो। इसकी ताईद तफ़सीर-ए-कश्शाफ़ की इस बात से भी होती है कि सदक़ात के मसारिफ़ का बयान यहाँ उन काफ़िरों व मुनाफ़िक़ों के जवाब में आया है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर सदक़ों की तक़सीम के बारे में एतिराज़ किया करते थे कि हमको सदक़ात नहीं देते। इस आयत में सदक़ों के मसारिफ़ की तफ़सील बयान फ़रमाने से मक़सद यह है कि उनको बतला दिया जाये कि काफ़िरों का कोई हक़ सदक़े के मालों में नहीं है। अगर मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब में काफ़िर भी शामिल हों तो इस जवाब की ज़रूरत न थी।

तफ़सीरे मज़हरी में उस मुग़ालते (धोखे) को भी अच्छी तरह वाज़ेह कर दिया है जो हदीस की कुछ रिवायतों के सबब लोगों को पेश आया है, जिनसे यह साबित होता है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुछ ग़ैर-मुस्लिमों को कुछ अ़तीये दिये हैं। चुनाँचे सही मुस्लिम और तिर्मिज़ी की रिवायत में जो यह मज़कूर है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सफ़वान इब्ने उमैया को काफ़िर होने के ज़माने में कुछ अ़तीये दिये, इसके मुताल्लिक़ इमाम नववी रह. के हवाले से लिखा है कि ये अ़तीयात ज़कात के माल से न थे, बल्कि ग़ज़्वा-ए-हुनैन के माले ग़नीमत का जो ख़ुम्स (पाँचवाँ हिस्सा) बैतुल-माल में दाख़िल हुआ उसमें से दिये गये। और यह ज़ाहिर है कि बैतुल-माल की इस मद (फ़ण्ड) से मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम दोनों पर ख़र्च करना सब फ़ुक़हा के नज़दीक जायज़ है। फिर फ़रमाया कि इमाम बैहक़ी, इब्ने सय्यिदुन्नास, इमाम इब्ने कसीर रह. वग़ैरह सब ने यही क़रार दिया है कि यह माल देना ज़कात से नहीं बल्कि माले ग़नीमत के ख़ुम्स (पाँचवें हिस्से) में से था।

एक बड़ा फ़ायदा

इससे यह भी मालूम हो गया कि ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में सदक़ों के माल अगरचे बैतुल-माल में जमा किये जाते थे मगर उनका हिसाब बिल्कुल अलग था, और बैतुल-माल की दूसरी मदों जैसे ग़नीमत के पाँचवें हिस्से या कानों से निकलने वाली चीज़ों और ख़ज़ाने के पाँचवें हिस्से वग़ैरह इनका हिसाब अलग, और हर एक के मसारिफ़ (ख़र्च करने के मौक़े) अलग थे, जैसा कि उलेमा हज़रात ने इसकी वज़ाहत फ़रमाई है कि इस्लामी हुकूमत के बैतुल-माल में चार मद (हिसाब व फ़ण्ड) अलग-अलग रहनी चाहियें, और असल हुक्म यह है कि सिर्फ़ हिसाब अलग रखना नहीं बल्कि हर एक मद का बैतुल-माल अलग होना चाहिये, ताकि हर एक को उसके मस्रफ़ में ख़र्च करने की पूरी एहतियात क़ायम रहे, अलबत्ता अगर किसी वक़्त किसी ख़ास मद में कमी हो तो दूसरी मद से बतौर क़र्ज़ लेकर उस पर ख़र्च किया जा सकता है, बैतुल-माल की ये मदें इस तरह हैं:

अव्वल **ख़ुम्स-ए-ग़नाईम** यानी जो माल काफ़िरों से जंग के ज़रिये हासिल हो उसके चार हिस्से मुजाहिदीन में तक़सीम करके बाक़ी पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। और **ख़ुम्स-ए-मआ़दिन** यानी विभिन्न क़िस्म की कानों से निकलने वाली चीज़ों में से पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। **ख़ुम्स-ए-रिकाज़** यानी जो पुराना ख़ज़ाना किसी ज़मीन से बरामद हो उसका भी पाँचवाँ हिस्सा बैतुल-माल का हक़ है। ये तीनों क़िस्म के ख़ुम्स बैतुल-माल की एक ही मद में दाख़िल हैं।

दूसरी मद सदक़ात हैं, जिसमें मुसलमानों की ज़कात, सदक़ा-ए-फ़ित्र और उनकी ज़मीनों का उश्र दाख़िल है।

तीसरी मद ख़िराज और फ़ै का माल है, जिसमें ग़ैर-मुस्लिमों की ज़मीनों से हासिल होने वाला ख़िराज और उनका जिज़या और उनसे हासिल होने वाला व्यापारिक टैक्स और वो तमाम माल दाख़िल हैं जो ग़ैर-मुस्लिमों से उनकी रज़ामन्दी के साथ समझौते के तौर पर हासिल हों।

चौथी मद ज़वाये की है, जिसमें लावारिस माल, लावारिस शख़्स की मीरास वग़ैरह दाख़िल

हैं। इन चार मदों के मसारिफ़ (ख़र्च की जगहें) अगरचे अलग-अलग हैं लेकिन फ़क़ीरों व मसाकीन का हक़ इन चारों मदों में रखा गया है, जिससे अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लामी हुकूमत में क़ौम के इस कमज़ोर हिस्से को मज़बूत करने का किस क़द्र एहतिमाम किया गया है, जो दर हक़ीक़त इस्लामी हुकूमत की विशेषता और ख़ूबी है, वरना दुनिया के आ़म निज़ामों में एक वर्ग विशेष ही बढ़ता रहता है, ग़रीब को उभरने का मौक़ा नहीं मिलता। जिसके रद्देअमल (प्रतिक्रिया) ने इश्तिराकियत और कम्यूनिज़्म (साम्यवाद) को जन्म दिया, मगर वह बिल्कुल एक ग़ैर-फ़ितरी उसूल और बारिश से भागकर परनाले के नीचे खड़े हो जाने के बराबर और इनसानी अख़्लाक़ के लिये ज़हर-ए-क़ातिल है।

ख़ुलासा यह है कि इस्लामी हुकूमत में चार बैतुल-माल चार मदों के लिये अलग-अलग मुक़र्रर हैं और ग़रीबों व मिस्कीनों का हक़ चारों में रखा गया है। उनमें से पहली तीन मदों के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) ख़ुद क़ुरआने करीम ने तफ़सील के साथ मुतैयन फ़रमाकर वाज़ेह तौर पर बयान कर दिये हैं। पहली मद यानी ग़नीमतों के ख़ुम्स के मसारिफ़ का बयान सूरः अनफ़ाल दसवें पारे के शुरू में है, और दूसरी मद यानी सदक़ात के मसारिफ़ का बयान सूरः तौबा की उपर्युक्त साठवीं आयत में आया है, जिसकी तफ़सील इस वक़्त बयान हो रही है, और तीसरी मद जिसको इस्तिलाह में फ़ै के माल से ताबीर किया जाता है, उसका बयान सूरः हश्र में तफ़सील के साथ आया है। इस्लामी हुकूमत की अक्सर मदें फ़ौजी ख़र्चों और हुकूमत के कामों में लगे लोगों की तन्ख़्वाहें वग़ैरह इसी मद से ख़र्च की जाती हैं। चौथी मद यानी लावारिस माल, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायतों और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के तरीक़ा-ए-अ़मल से अपाहिज मोहताजों और लावारिस बच्चों के लिये मख़्सूस है। (शामी, किताबुज़्ज़कात)

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि हज़राते फ़ुक़हा ने बैतुल-माल की चारों मदें बिल्कुल अलग-अलग रखने और अपने-अपने निर्धारित मसारिफ़ में ख़र्च करने की जो हिदायतें दी हैं, यह सब क़ुरआनी इरशादात और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फिर ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के अ़मल व तरीक़े से वाज़ेह तौर पर साबित हैं।

इस अंतरिम फ़ायदे के बाद फिर असल मसले 'मुअल्लफ़तुल-क़ुलूब' को समझिये कि उपर्युक्त बयान में मुहक़्क़िक़ीन, मुहद्दिसीन व फ़ुक़हा की वज़ाहतों से यह बात साबित हो चुकी है कि मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब का हिस्सा किसी काफ़िर को किसी वक़्त भी नहीं दिया गया, न रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर में और न ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के ज़माने में, और जिन ग़ैर-मुस्लिमों को देना साबित है वह सदक़ात व ज़कात की मद से नहीं बल्कि ग़नीमत के ख़ुम्स (पाँचवें हिस्से) में से दिया गया है, जिसमें से हर ज़रूरत मन्द मुस्लिम व ग़ैर-मुस्लिम को दिया जा सकता है। तो मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब सिर्फ़ मुस्लिम रह गये, और उनमें जो ग़रीब हैं उनका हिस्सा बदस्तूर बाक़ी होने पर पूरी उम्मत का इत्तिफ़ाक़ है, मतभेद सिर्फ़ इस सूरत में रह गया कि ये लोग ग़नी (मालदार) निसाब के बराबर माल के मालिक हों तो इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद रह. के नज़दीक चूँकि ज़कात के तमाम मसारिफ़ में ग़रीबी व तंगदस्ती और हाजत-मन्दी

शर्त नहीं, इसलिये वे मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब में ऐसे लोगों को भी दाख़िल करते हैं जो ग़नी और निसाब के बराबर माल वाले हैं। इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा और इमाम मालिक रह. के नज़दीक सदक़े के जमा करने वाले आ़मिलीन के अ़लावा बाक़ी तमाम मसारिफ़ में ग़ुर्बत व हाजत-मन्दी शर्त है। इसलिये मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब का हिस्सा भी उनको इसी शर्त के साथ दिया जायेगा कि वे फ़क़ीर व हाजत-मन्द हों, जैसे तावान भरने वाले, ग़ुलाम व क़ैदी, मुसाफ़िर वग़ैरह सब में इसी शर्त के साथ उनको ज़कात दी जाती है कि वे उस जगह हाजत-मन्द हों, अगरचे वे अपने मक़ाम (वतन और घर) में मालदार हों।

इस तहक़ीक़ का नतीजा यह निकला कि मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब का हिस्सा चारों इमामों के नज़दीक मन्सूख़ (ख़त्म और रद्द) नहीं, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि कुछ हज़रात ने फ़क़ीरों व मसाकीन के अ़लावा किसी दूसरे मस्रफ़ में ग़ुर्बत व हाजत-मन्दी के साथ लाज़िम नहीं किया और कुछ ने यह शर्त लगायी है। जिन हज़रात ने यह शर्त रखी है वे मुअल्लफ़तुल्-क़ुलूब में भी सिर्फ़ उन्हीं लोगों को देते हैं जो ज़रूरत मन्द और ग़रीब हों। बहरहाल यह हिस्सा क़ायम और बाक़ी है। (तफ़सीरे मज़हरी)

यहाँ तक सदक़ात के आठ मसारिफ़ (ख़र्च करने की जगहों) में से चार का बयान आया है, इन चारों का हक़ हर्फ़ **लाम** के तहत बयान हुआ "लिल्फ़ु-क़रा-इ वल्मसाकीनि"। आगे जिन चार मसारिफ़ का ज़िक्र है उनमें उनवान बदल कर **लाम** की जगह हर्फ़ **फ़ी** इस्तेमाल फ़रमाया "व फ़िर्रिक़ाबि वल्-ग़ारिमी-न"। अ़ल्लामा ज़मख़्शरी ने तफ़सीर-ए-कश्शाफ़ में इसकी वजह यह बयान की है कि इससे इस बात की तरफ़ इशारा करना मन्ज़ूर है कि ये आख़िरी चार मसारिफ़ पहले के चार मसारिफ़ के मुक़ाबले में ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं। क्योंकि हर्फ़ **फ़ी** ज़रफ़ियत के लिये बोला जाता है, जिसकी वजह से मायने यह पैदा होते हैं कि सदक़ात को उन लोगों के अन्दर रख देना चाहिये, और उनके ज़्यादा मुस्तहिक़ होने की वजह उनका ज़्यादा ज़रूरत मन्द होना है। क्योंकि जो शख़्स किसी की मिल्क में और ग़ुलाम है आ़म ग़रीबों के मुक़ाबले में वह ज़्यादा तकलीफ़ में है। इसी तरह जो किसी का क़र्ज़दार है और क़र्ज़ वसूल करने वालों का उस पर तक़ाज़ा है वह आ़म ग़रीबों फ़क़ीरों से ज़्यादा तंगी में है कि अपने ख़र्चों की फ़िक्र से भी ज़्यादा क़र्ज़दारों के क़र्ज़े की फ़िक्र उसके ज़िम्मे है।

इन बाक़ी बचे चार मसारिफ़ में सबसे पहले 'व फ़िर्रिक़ाबि' का ज़िक्र फ़रमाया है। रिक़ाब रक़बा की जमा (बहुवचन) है। असल में गर्दन को रक़बा कहते हैं, आ़म बोल-चाल में उस शख़्स को रक़बा कह दिया जाता है जिसकी गर्दन किसी दूसरे की ग़ुलामी में मुक़ैयद हो।

इसमें फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) का मतभेद है कि रिक़ाब से मुराद इस आयत में क्या है? फ़ुक़हा व मुहद्दिसीन की अक्सरियत इस पर है कि इससे मुराद वे ग़ुलाम हैं जिनके आक़ाओं ने माल की कोई मात्रा मुतैयन करके कह दिया है कि इतना माल कमाकर हमें दे दो तो तुम आज़ाद हो, जिसको क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में **मुकातब** कहा जाता है। ऐसे शख़्स को आक़ा इसकी इजाज़त दे देता है कि वह तिजारत या मज़दूरी के ज़रिये माल कमाये

और आक़ा को लाकर दे, उक्त आयत में रिक़ाब से मुराद यह है कि उस शख़्स को ज़कात की रक़म में से हिस्सा देकर उसकी जान छुड़ाने में इमदाद की जाये।

गुलामों की यह किस्म मुफ़स्सिरीन व फ़ुक़हा की सर्वसम्मति से लफ़्ज़ 'व फ़िर्रिक़ाबि' की मुराद है, कि ज़कात की रक़म उनको देकर उनकी गर्दन को छुड़ाने में इमदाद की जाये। इनके अलावा दूसरे गुलामों को ख़रीदकर आज़ाद करना या उनके आक़ाओं को ज़कात की रक़म देकर यह समझौता कर लेना कि वे उनको आज़ाद कर देंगे, इसमें इमामों और दीनी मसाईल के माहिर उलेमा के बीच मतभेद है। इमामों की अक्सरियत- इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल वग़ैरह इसको जायज़ नहीं समझते, और हज़रत इमाम मालिक रह. भी एक रिवायत में जमहूर के साथ सहमत हैं कि 'फ़िर्रिक़ाबि' को सिर्फ़ मुकातब गुलामों के साथ मख़्सूस फ़रमाते हैं, और एक रिवायत में इमाम मालिक रह. से यह भी मन्क़ूल है कि वह फ़िर्रिक़ाबि में आम गुलामों को दाख़िल करके इसकी भी इजाज़त देते हैं कि ज़कात की रक़म से गुलाम ख़रीद कर आज़ाद किये जायें। (अहकामुल-क़ुरआन इब्ने अ़रबी मालिकी)

इमामों व फ़ुक़हा की अक्सरियत जो इसको जायज़ नहीं रखते, उनके सामने एक फ़िक़्ही इश्काल (शुब्हा) है, कि अगर ज़कात की रक़म से गुलाम को ख़रीदकर आज़ाद किया गया तो उस पर सदके की परिभाषा ही पूरी नहीं उतरती, क्योंकि सदक़ा वह माल है जो किसी मुस्तहिक़ को बिना किसी मुआ़वज़े के दिया जाये। ज़कात की रक़म अगर आक़ा को दी जाये तो ज़ाहिर है कि न वह ज़कात का मुस्तहिक़ है और न उसको यह रक़म बिना मुआ़वज़े और बदले के दी जा रही है, और गुलाम जो ज़कात का मुस्तहिक़ (पात्र) है उसको यह रक़म दी नहीं गयी। यह अलग बात है कि इस रक़म के देने का फ़ायदा गुलाम को पहुँच गया कि उसने ख़रीद कर आज़ाद कर दिया, मगर आज़ाद करना सदके की तारीफ़ में दाख़िल नहीं होता, और असल मायने को बिना वजह छोड़कर सदके के मजाज़ी (दूर के) मायने यानी आ़म मुराद लेने का कोई जवाज़ नहीं, और यह भी ज़ाहिर है कि उक्त आयत में सदक़ात के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) बयान किये जा रहे हैं, इसलिये फ़िर्रिक़ाबि का मिस्दाक़ कोई ऐसी चीज़ नहीं बन सकती जिस पर सदके की तारीफ़ ही सादिक़ (फ़िट) न आये, और अगर ज़कात की यह रक़म ख़ुद गुलाम को दी जाये तो गुलाम की कोई मिल्क नहीं होती, वह ख़ुद-ब-ख़ुद आक़ा का माल बन जायेगा, फिर आज़ाद करना न करना भी उसके इख़्तियार में रहेगा।

इस फ़िक़्ही इश्काल की वजह से इमामों और फ़ुक़हा की अक्सरियत ने फ़रमाया कि फ़िर्रिक़ाबि से मुराद सिर्फ़ मुकातब गुलाम हैं। इससे यह भी मालूम हो गया कि सदके की अदायेगी के लिये यह शर्त है कि किसी मुस्तहिक़ को मालिक बनाकर उसके क़ब्ज़े में दे दिया जाये, जब तक मुस्तहिक़ का मालिकाना क़ब्ज़ा उस पर नहीं होगा ज़कात अदा नहीं होगी।

छठा मस्रफ़ 'अलग़ारिमीन'। ग़ारिम की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने क़र्ज़दार के हैं। यह पहले ज़िक्र किया जा चुका है कि पाँचवाँ और छठा मस्रफ़ जो हर्फ़ **फ़ी** के साथ बयान किया गया है, पात्रता और हक़ रखने में पहले चारों मसारिफ़ से ज़्यादा हैं, इसलिये गुलाम को आज़ादी

दिलाने के लिये या क़र्ज़दार को क़र्ज़ अदा करने के लिये देना आम फ़क़ीरों व मसाकीन को देने से ज़्यादा अफ़ज़ल है, शर्त यह है कि उस क़र्ज़दार के पास इतना माल न हो जिससे वह क़र्ज़ अदा कर सके, क्योंकि ग़ारिम लुग़त में ऐसे ही क़र्ज़दार को कहा जाता है। और कुछ इमामों व उलेमा ने यह शर्त भी लगाई है कि यह क़र्ज़ उसने किसी नाजायज़ काम के लिये न लिया हो, और अगर किसी गुनाह के लिये क़र्ज़ कर लिया जैसे शराब वग़ैरह या शादी ग़मी की नाजायज़ रस्में वग़ैरह तो ऐसे क़र्ज़दार को ज़कात की मद से न दिया जायेगा, ताकि उसकी नाफ़रमानी और बेजा फ़ुज़ूल ख़र्ची की हौसला अफ़ज़ाई न हो।

सातवाँ मस्रफ़ 'फ़ी सबीलिल्लाह' है। यहाँ फिर हर्फ़ फ़ी को दोहराया गया। तफ़सीर-ए-कश्शाफ़ में है कि दोबारा इस फ़ी को लाने से इस तरफ़ इशारा करना मन्ज़ूर है कि यह मस्रफ़ (ख़र्च का मौक़ा) पहले सब मसारिफ़ से अफ़ज़ल और बेहतर है। वजह यह है कि इसमें दो फ़ायदे हैं- एक तो ग़रीब मुफ़लिस की इमदाद, दूसरे एक दीनी ख़िदमत में सहयोग, क्योंकि फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में) से मुराद वह ग़ाज़ी और मुजाहिद है, जिसके पास हथियार और जंग का ज़रूरी सामान ख़रीदने के लिये माल न हो, या वह शख़्स जिसके ज़िम्मे हज फ़र्ज़ हो चुका हो मगर उसके पास अब माल नहीं रहा, जिससे वह फ़र्ज़ हज अदा करे। ये दोनों काम ख़ालिस दीनी ख़िदमत और इबादत हैं, इसलिये ज़कात के माल को इन पर ख़र्च करने में एक मुफ़लिस की इमदाद भी है और एक इबादत की अदायेगी में सहयोग भी। इसी तरह फ़ुक़हा हज़रात ने तालिब-इल्मों (दीन का इल्म सीखने वालों) को भी इसमें शामिल किया है कि वे भी एक इबादत की अदायेगी के लिये लेते हैं। (रूहुल-मआनी, ज़हीरिया के हवाले से)

और बदाये के लेखक ने फ़रमाया कि हर वह शख़्स जो कोई नेक काम या इबादत करना चाहता है और उसकी अदायेगी में माल की ज़रूरत है तो वह भी फ़ी सबीलिल्लाह में दाख़िल है, बशर्ते कि उसके पास इतना माल न हो जिससे उस काम को पूरा कर सके, जैसे दीन की तालीम और तब्लीग़ और उनके लिये प्रकाशन व प्रसार, कि अगर कोई ज़कात का हक़दार यह काम करना चाहे तो उसकी इमदाद ज़कात के माल से कर दी जाये, मगर मालदार निसाब के मालिक को नहीं दिया जा सकता।

बयान हुई तफ़सील से मालूम हुआ कि इन तमाम सूरतों में जो 'फ़ी सबीलिल्लाह' की तफ़सीरें मज़कूर हैं उनमें फ़क्र व ज़रूरत मन्दी की शर्त ध्यान में रखी गयी है। ग़नी (मालदार) निसाब के मालिक का इस मद में भी हिस्सा नहीं, सिवाय इसके कि उसका मौजूदा माल उस ज़रूरत को पूरा न कर सकता हो जो जिहाद के लिये पेश आ गयी है। तो अगरचे निसाब के बराबर माल मौजूद होने की वजह से उसको ग़नी (शरई तौर पर मालदार) कह सकते हैं, जैसा कि एक हदीस में उसको ग़नी (मालदार) कहा गया है, मगर वह भी इस एतिबार से फ़क़ीर व हाजत मन्द ही हो गया कि जिस क़द्र माल जिहाद या हज के लिये दरकार है वह उसके पास मौजूद नहीं। फ़त्हुल-क़दीर में शैख़ इब्ने हुमाम रह. ने फ़रमाया कि सदक़ात की आयत में जितने मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) ज़िक्र किये गये हैं हर एक के अलफ़ाज़ ख़ुद इस पर दलालत करते हैं

कि वे ग़रीबी व ज़रूरत की बिना पर मुस्तहिक़ हैं। लफ़्ज़ फ़कीर, मिस्कीन में तो यह ज़ाहिर ही है, रिक़ाब, ग़ारिमीन, फ़ी सबीलिल्लाह, इब्नुस्सबील के अलफ़ाज़ भी इस तरफ़ इशारा करते हैं कि उनकी ज़रूरत पूरी करने की बिना पर उनको दिया जाता है, अलबत्ता आमिलीन को ख़िदमत के मुआवज़े के तौर पर दिया जाता है, इसी लिये इसमें ग़नी व फ़कीर बराबर हैं, जैसे ग़ारिमीन के मस्रफ़ में बयान किया जा चुका है कि जिस शख़्स के ज़िम्मे दस हज़ार रुपया क़र्ज़ है और पाँच हज़ार रुपया उसके पास मौजूद है तो उसको पाँच हज़ार के बराबर ज़कात दी जा सकती है, क्योंकि जो माल उसके पास मौजूद है वह क़र्ज़ की वजह से न होने के हुक्म में है।

तंबीह

लफ़्ज़ **फ़ी सबीलिल्लाह** के लफ़्ज़ी मायने बहुत आम हैं, जो-जो काम अल्लाह की रज़ा तलब करने के लिये किये जायें वो सब उस आम मफ़्हूम के एतिबार से फ़ी सबीलिल्लाह में दाख़िल हैं। जो लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तफ़सीर व बयान और तफ़सीर के इमामों के इरशादात से नज़र हटाकर महज़ लफ़्ज़ी तर्जुमे के ज़रिये क़ुरआन समझना चाहते हैं यहाँ उनको यह मुग़ालता लगा है कि लफ़्ज़ फ़ी सबीलिल्लाह देखकर ज़कात के मसारिफ़ में उन तमाम कामों को दाख़िल कर दिया जो किसी हैसियत से नेकी या इबादत हैं। मस्जिदों, मदरसों, शिफ़ा ख़ानों, मुसाफ़िर ख़ानों वग़ैरह की तामीर, कुएँ, पुल और सड़कें बनाना, और उन उमूमी फ़ायदे के इदारों के मुलाज़िमों की तन्ख़्वाहें और तमाम दफ़्तरी ज़रूरतें इन सब को उन्होंने फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते) में दाख़िल करके ज़कात का मस्रफ़ (ख़र्च करने का मौक़ा) क़रार दे दिया, जो सरासर ग़लत है, और उम्मत की सर्वसम्मति के ख़िलाफ़ है। सहाबा-ए-किराम जिन्होंने क़ुरआन को डायरेक्ट रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पढ़ा और समझा है उनकी और ताबिईन में के इमामों की जितनी तफ़सीरें इस लफ़्ज़ के बारे में नक़ल की गयी हैं उनमें इस लफ़्ज़ को हाजियों और मुजाहिदों के लिये मख़्सूस क़रार दिया गया है।

और एक हदीस में है कि एक शख़्स ने अपने एक ऊँट को फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में) वक़्फ़ कर दिया था तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको फ़रमाया कि इस ऊँट को हाजियों के सफ़र में इस्तेमाल करो। (मब्सूत, सरख़्सी- पेज 10 जिल्द 3)

इमाम इब्ने जरीर और इमाम इब्ने कसीर क़ुरआन की तफ़सीर हदीस की रिवायतों ही से करने के पाबन्द हैं, उन सब ने लफ़्ज़ 'फ़ी सबीलिल्लाह' को ऐसे मुजाहिदों और हाजियों के लिये मख़्सूस किया है जिनके पास जिहाद या हज का सामान न हो, और जिन फ़ुक़हा हज़रात ने तालिब-इल्मों (दीन का इल्म सीखने वालों) या दूसरे नेक काम करने वालों को इसमें शामिल किया है तो इस शर्त के साथ किया है कि वे फ़कीर व हाजत मन्द हों, और यह ज़ाहिर है कि फ़कीर व हाजत मन्द तो ख़ुद ही ज़कात के मसारिफ़ में सब से पहला मस्रफ़ हैं, उनको फ़ी सबीलिल्लाह के मफ़्हूम में शामिल न किया जाता तब भी वे ज़कात के मुस्तहिक़ थे, लेकिन चारों इमामों और उम्मत के फ़ुक़हा में से यह किसी ने नहीं कहा कि अवामी फ़ायदों के इदारों और

मसाजिद व मदारिस की तामीर और उनकी तमाम ज़रूरतें ज़कात के मस्रफ़ (ख़र्च की जगह और मौक़े) में दाख़िल हैं, बल्कि इसके विपरीत इसकी वज़ाहतें फ़रमाई हैं कि ज़कात का माल इन चीज़ों में ख़र्च करना जायज़ नहीं। हनफ़ी फ़ुक़हा में से शम्सुल-अइम्मा सरख़्सी ने **मब्सूत** और **शरह सियर** में और शाफ़ई फ़ुक़हा में से अबू उबैद ने **किताबुल-अमवाल** में और मालिकी फ़ुक़हा में से दरदीर ने **शरह मुख़्तसर ख़लील** में और हंबली फ़ुक़हा में से मुवफ़्फ़क़ ने **मुग़नी** में इसको पूरी तफ़सील से लिखा है।

तफ़सीर के इमामों और उम्मत के फ़ुक़हा के ज़िक्र हुए स्पष्टीकरणें के अलावा अगर एक बात पर ग़ौर कर लिया जाये तो इस मसले के समझने के लिये बिल्कुल काफ़ी है, वह यह कि अगर ज़कात के मसले में इतना उमूम (फैलाव और आम होना) होता कि तमाम नेक कामों, इबादतों और हर क़िस्म की नेकी पर ख़र्च करना इसमें दाख़िल हो तो फिर क़ुरआन में इन आठ मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़ों) का बयान (मआज़ल्लाह) बिल्कुल फ़ुज़ूल हो जाता है, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद जो पहले इसी सिलसिले में बयान हो चुका है कि आपने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने सदक़ात के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) मुतैयन करने का काम नबी को भी सुपुर्द नहीं किया, बल्कि ख़ुद ही उसके आठ मसारिफ़ मुतैयन फ़रमा दिये।

तो अगर फ़ी सबीलिल्लाह के मफ़्हूम में तमाम ताअतें और नेकियाँ दाख़िल हैं और उनमें से हर एक में ज़कात का माल ख़र्च किया जा सकता है तो मआज़ल्लाह (अल्लाह की पनाह) यह इरशादे नबवी बिल्कुल ग़लत ठहरता है। मालूम हुआ कि फ़ी सबीलिल्लाह के लुग़वी तर्जुमे से जो नावाक़िफ़ को उमूम समझ में आता है वह अल्लाह की मुराद नहीं है, बल्कि मुराद वह है जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बयान और सहाबा व ताबिईन की वज़ाहतों से साबित है।

आठवाँ मस्रफ़ **इब्नुस्सबील** है। सबील के मायने रास्ता और इब्न का लफ़्ज़ असल में तो बेटे के लिये बोला जाता है, लेकिन अरबी मुहावरों में इब्न और अबुन और अख़ुन वग़ैरह के अलफ़ाज़ उन चीज़ों के लिये भी बोले जाते हैं जिनका गहरा ताल्लुक़ किसी से हो। इसी मुहावरे के मुताबिक़ इब्नुस्सबील, राहगीर व मुसाफ़िर को कहा जाता है। क्योंकि उनका गहरा ताल्लुक़ रास्ता तय करने और मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचने से है, और ज़कात के मसारिफ़ में इससे मुराद वह मुसाफ़िर है जिसके पास सफ़र में ज़रूरत के मुताबिक़ माल न हो, अगरचे उसके वतन में उसके पास कितना ही माल हो। ऐसे मुसाफ़िर को ज़कात का माल दिया जा सकता है, जिससे वह अपने सफ़र की ज़रूरतें पूरी कर ले, और वतन वापस जा सके।

यहाँ तक उन आठ मसारिफ़ का बयान पूरा हो गया जो उक्त आयत में सदक़ात व ज़कात के लिये बयान फ़रमाये गये हैं, अब कुछ ऐसे मसाईल बयान किये जाते हैं जिनका ताल्लुक़ इन तमाम मसारिफ़ से समान रूप से है।

मसला-ए-तमलीक

फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) की अक्सरियत इस पर एकमत है कि ज़कात के

निर्धारित आठ मसारिफ़ में भी ज़कात की अदायेगी के लिये यह शर्त है कि उन मसारिफ़ में से किसी मुस्तहिक़ को ज़कात के माल पर मालिकाना क़ब्ज़ा दे दिया जाये, बग़ैर मालिकाना क़ब्ज़ा दिये अगर कोई माल उन्हीं लोगों के फ़ायदे के लिये ख़र्च कर दिया गया तो ज़कात अदा नहीं होगी। इसी वजह से चारों इमामों और फ़ुक़हा-ए-उम्मत की अक्सरियत इस पर एकमत हैं कि ज़कात की रक़म को मस्जिदों और मदरसों या शिफ़ाख़ानों, यतीम ख़ानों की तामीर में या उनकी दूसरी ज़रूरतों में ख़र्च करना जायज़ नहीं, अगरचे इन तमाम चीज़ों से फ़ायदा उन फ़ुक़रा और दूसरे हज़रात को पहुँचता है जो ज़कात का मस्रफ़ हैं, मगर उनका मालिकाना क़ब्ज़ा इन चीज़ों पर न होने के सबब ज़कात इससे अदा नहीं होती।

अलबत्ता यतीम ख़ानों में अगर यतीमों का खाना कपड़ा वग़ैरह मालिकाना हैसियत से दिया जाता है तो सिर्फ़ उतने ख़र्च की हद तक ज़कात की रक़म ख़र्च हो सकती है। इसी तरह शिफ़ा ख़ानों में जो दवा ज़रूरत मन्द ग़रीबों को मालिकाना हैसियत से दे दी जाये उसकी क़ीमत ज़कात की रक़म में लगाई जा सकती है। इसी तरह उम्मत के उलेमा की वज़ाहतें हैं कि लावारिस मय्यित का कफ़न ज़कात की रक़म से नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि मय्यित में मालिक होने की सलाहियत नहीं, हाँ यह हो सकता है कि ज़कात की रक़म किसी ग़रीब मुस्तहिक़ को दे दी जाये और वह अपनी ख़ुशी से उस रक़म को लावारिस मय्यित के कफ़न पर ख़र्च कर दे। इसी तरह अगर उस मय्यित के ज़िम्मे क़र्ज़ है तो उस क़र्ज़ को ज़कात की रक़म से डायरेक्ट अदा नहीं किया जा सकता, हाँ उसके वारिस ग़रीब ज़कात के मुस्तहिक़ हों तो उनको मालिकाना तौर से दिया जा सकता है। वे उस रक़म के मालिक होकर अपनी रज़ामन्दी के साथ उस रक़म से मय्यित का क़र्ज़ अदा कर सकते हैं। इसी तरह आ़म फ़ायदों के सब काम जैसे कुआँ या पुल या सड़क वग़ैरह की तामीर, अगरचे इनका फ़ायदा ज़कात के मुस्तहिक़ लोगों को भी पहुँचता है मगर उनका मालिकाना क़ब्ज़ा न होने के सबब इससे ज़कात की अदायेगी नहीं होती।

इन मसाईल में चारों मुज्तहिद इमाम- इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, इमाम मालिक, इमाम अहमद बिन हंबल रह. और फ़ुक़हा-ए-उम्मत की अक्सरियत एकमत है। शम्सुल-अइम्मा सरख़्सी ने इस मसले को इमाम मुहम्मद की किताबों की शरह मब्सूत और शरह सियर में पूरी तहक़ीक़ और तफ़सील के साथ लिखा है, और शाफ़ई, मालिकी, हंबली फ़ुक़हा की आ़म किताबों में इसकी वज़ाहतें मौजूद हैं।

शाफ़ई फ़क़ीह इमाम अबू उबैद ने किताबुल-अमवाल में फ़रमाया कि मय्यित की तरफ़ से उसके क़र्ज़ की अदायेगी या उसके दफ़न के ख़र्चों में और मसाजिद की तामीर में, नहर खोदने वग़ैरह में ज़कात का माल ख़र्च करना जायज़ नहीं, क्योंकि हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. और तमाम इमाम हज़रात इस पर सहमत हैं कि उसमें ख़र्च करने से ज़कात अदा नहीं होती, क्योंकि ये उन आठ मसारिफ़ (ख़र्च करने की जगहों) में से नहीं हैं जिनका ज़िक्र क़ुरआन करीम में आया है।

इसी तरह हंबली फ़क़ीह मुवफ़्फ़क़ रह. ने मुग़नी में लिखा है कि सिवाय उन मसारिफ़ के जिनका बयान क़ुरआने करीम में मज़कूर है और किसी नेक काम में ज़कात का माल ख़र्च करना

जायज़ नहीं, जैसे मस्जिदों या पुलों और पानी की सबीलों की तामीर, या सड़कों की मरम्मत या मुर्दों को कफ़न देना या मेहमानों को खाना खिलाना वग़ैरह, जो बिला शुब्हा सवाब का ज़रिया हैं, मगर सदक़ात के मसारिफ़ में दाख़िल नहीं।

मलिकुल-उलेमा ने बदाये में ज़कात की अदायेगी के लिये तमलीक (मालिक बनाने) की शर्त की यह दलील दी है कि क़ुरआन में उमूमन ज़कात और वाजिब सदक़ात का लफ़्ज़ ईता (देने) के साथ ज़िक्र किया गया है। जैसे फ़रमायाः

اَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ،

اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ،

اِقَامِ الصَّلٰوةِ وَاِيْتَآءِ الزَّكٰوةِ،

اٰتُوْا حَقَّهٗ يَوْمَ حَصَادِهٖ.

वग़ैरह। और लफ़्ज़ ईता लुग़त में अ़ता करने के मायने में आता है। इमाम राग़िब अस्फ़हानी रह. ने मुफ़रदातुल-क़ुरआन में फ़रमायाः

وَالْاِيْتَآءُ الْاِعْطَآءُ وَخُصَّ وَضْعُ الصَّدَقَةِ فِى الْقُرْاٰنِ بِالْاِيْتَآءِ.

"यानी ईता के मायने अ़ता फ़रमाने के हैं, और क़ुरआन में वाजिब सदक़े अदा करने को ईता के लफ़्ज़ के साथ मख़्सूस फ़रमाया है।"

और ज़ाहिर है कि किसी को कोई चीज़ अ़ता करने का असली मतलब यही है कि उसको उस चीज़ का मालिक बना दिया जाये।

और ज़कात व सदक़ात के अ़लावा भी लफ़्ज़ ईता क़ुरआने करीम में मालिक बना देने ही के लिये इस्तेमाल हुआ है, जैसेः

اٰتُوا النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ.

यानी दे दो औरतों को उनके मेहर। ज़ाहिर है कि मेहर की अदायेगी तब ही मानी जाती है जब मेहर की रक़म पर औरत का मालिकाना क़ब्ज़ा करा दे।

दूसरे यह कि क़ुरआने करीम में ज़कात को सदक़े के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया हैः

اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَآءِ.

और सदक़े के असली मायने यही हैं कि किसी फ़क़ीर हाजत मन्द को उसका मालिक बना दिया जाये।

किसी को खाना खिला देना या आ़म फ़ायदे के कामों में ख़र्च कर देना असल मायने के एतिबार से सदक़ा नहीं कहलाता। शैख़ इब्ने हुमाम ने फ़त्हुल-क़दीर में फ़रमाया कि हक़ीक़त सदक़े की भी यही है कि किसी फ़क़ीर को उस माल का मालिक बना दिया जाये। इसी तरह इमाम जस्सास ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि लफ़्ज़ सदक़ा तमलीक (मालिक बना देने) का नाम है। (तफ़सीरे जस्सास, पेज 52 जिल्द 2)

ज़कात अदा करने के मुताल्लिक़ कुछ अहम मसाईल

मसलाः सही हदीस में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु को सदक़ात वसूल करने के बारे में यह हिदायत दी थी किः

خُذْهَا مِنْ اَغْنِيَآئِهِمْ وَرُدَّهَا فِىْ فُقَرَآئِهِمْ.

यानी सदक़ात मुसलमानों के मालदारों से लेकर उन्हीं के फ़क़ीरों में ख़र्च कर दो। इसकी बिना पर फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) ने फ़रमाया है कि बिना ज़रूरत एक शहर या बस्ती की ज़कात दूसरे शहर या बस्ती में न भेजी जाये, बल्कि उसी शहर और बस्ती की फ़क़ीर-ग़रीब उसके ज़्यादा हक़दार हैं, अलबत्ता अगर किसी शख़्स के क़रीबी रिश्तेदार ग़रीब हैं और वे किसी दूसरे शहर में हैं तो अपनी ज़कात उनको भेज सकता है, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसमें दोहरे अज्र व सवाब की ख़ुशख़बरी दी है।

इसी तरह अगर किसी दूसरी बस्ती के लोगों का फ़क़्र व फ़ाक़ा और अपने शहर से ज़्यादा ज़रूरत मालूम हो तो भी वहाँ भेजा जा सकता है, क्योंकि सदक़ात देने का मक़सद फ़क़ीरों की आवश्यकता को दूर करना है, इसी वजह से हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु यमन के सदक़ात में अक्सर कपड़े लिया करते थे ताकि ग़रीब मुहाजिरीन के लिये मदीना तय्यिबा भेज दें।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी, दारे क़ुतनी के हवाले से)

अगर एक शख़्स ख़ुद किसी शहर में रहता है मगर उसका माल दूसरे शहर में है तो जिस शहर में ख़ुद रहता है उसका एतिबार होगा, क्योंकि ज़कात के अदा करने का मुख़ातब यही शख़्स है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

मसलाः जिस माल की ज़कात वाजिब है उसकी अदायेगी के लिये यह भी जायज़ है कि उसी माल का चालीसवाँ हिस्सा निकाल कर मुस्तहिक़ लोगों को दे दे। जैसे तिजारती कपड़ा, बर्तन, फ़र्नीचर वग़ैरह, और यह भी सही है कि ज़कात के माल के बराबर क़ीमत निकाल कर वो क़ीमत मुस्तहिक़ लोगों में तक़सीम करे। सही हदीसों से ऐसा करना साबित है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और कुछ फ़क़ीह इमामों ने फ़रमाया कि इस ज़माने में नक़द क़ीमत ही देना ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि ग़रीबों की ज़रूरतें विभिन्न और अधिक हैं, नक़द पैसों को किसी भी ज़रूरत के काम में लाया जा सकता है।

मसलाः अगर अपने रिश्तेदार ग़रीब लोग ज़कात के मुस्तहिक़ हों तो उनको ज़कात व सदक़ात देना ज़्यादा बेहतर और दोहरा सवाब है- एक सवाब सदक़े का, दूसरा सिला-रहमी का। इसमें यह भी ज़रूरी नहीं कि उनको यह बताकर और ज़ाहिर करके दे कि सदक़ा या ज़कात दे रहा हूँ, किसी तोहफ़े या हदिये के नाम से भी दिया जा सकता है, ताकि लेने वाले शरीफ़ आदमी को अपनी ज़िल्लत और हल्कापन महसूस न हो।

मसलाः जो शख़्स अपने आपको अपने क़ौल या अ़मल से ज़कात का मुस्तहिक़ और ज़रूरत

मन्द ज़ाहिर करे और सदके वग़ैरह का सवाल करे, क्या देने वालों के लिये यह ज़रूरी है कि उसके असली और वास्तविक हालात की तहकीक़ करे, और बग़ैर उसके सदक़ा न दे? इसके बारे में हदीस की रिवायतें और फ़ुक़हा के अक़वाल ये हैं कि इसकी ज़रूरत नहीं, बल्कि उसके ज़ाहिरी हाल से अगर यह गुमान ग़ालिब हो कि यह शख़्स हक़ीक़त में फ़क़ीर और ज़रूरत मन्द है तो उसको ज़कात दी जा सकती है, जैसा कि हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में कुछ लोग बहुत ही शिकस्ता हालत में आये, आपने उनके लिये लोगों से सदक़ात जमा करने के लिये फ़रमाया, काफ़ी मात्रा जमा हो गयी तो वह उनको दे दी गयी। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसकी ज़रूरत नहीं समझी कि उन लोगों के अन्दरूनी हालात की छानबीन फ़रमाते। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

अलबत्ता इमाम क़ुर्तुबी ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि सदक़ों के मसारिफ़ में से एक क़र्ज़दार भी है, अगर कोई शख़्स यह कहे कि मेरे ज़िम्मे इतना क़र्ज़ है, उसकी अदायेगी के लिये मुझे ज़कात की रक़म दे दी जाये तो उस क़र्ज़ का सुबूत उससे तलब करना चाहिये। (क़ुर्तुबी) और ज़ाहिर यह है कि ग़ारिम (जुर्माना भरने वाला), फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह के रास्ते में निकलने वाले), इब्नुस्सबील (मुसाफ़िर) वग़ैरह में भी ऐसी तहक़ीक़ कर लेना दुश्वार नहीं, इन मसारिफ़ में मौक़े के अनुसार तहक़ीक़ कर लेना चाहिये।

मसलाः ज़कात का माल अपने अज़ीज़ रिश्तेदारों को देना ज़्यादा सवाब है, मगर मियाँ बीवी और माँ-बाप व औलाद आपस में एक दूसरे को नहीं दे सकते। वजह यह है कि उनको देना एक हैसियत से अपने ही पास रखना है, क्योंकि उन लोगों के मसारिफ़ (ख़र्च के मौक़े) उमूमन साझा होते हैं। शौहर ने अगर बीवी को या बीवी ने शौहर को अपनी ज़कात दे दी तो दर हक़ीक़त वह अपने ही इस्तेमाल में रही, इसी तरह माँ-बाप और औलाद का मामला है, औलाद की औलाद और दादा परदादा का भी यही हुक्म है कि उनको ज़कात देना जायज़ नहीं।

मसलाः अगर किसी शख़्स ने किसी शख़्स को अपने गुमान के मुताबिक़ मुस्तहिक़ और ज़कात का मस्रफ़ समझकर ज़कात दे दी, बाद में मालूम हुआ कि वह उसी का गुलाम या काफ़िर था तो ज़कात अदा नहीं होगी, दोबारा देनी चाहिये। क्योंकि गुलाम की मिल्कियत तो आक़ा ही की मिल्कियत होती है, वह उसकी मिल्क से निकला ही नहीं, इसलिये ज़कात अदा नहीं हुई, और काफ़िर ज़कात का मस्रफ़ (ख़र्च का मौक़ा) नहीं है।

इसके अलावा अगर बाद में यह साबित हो कि जिसको ज़कात दी गयी है वह मालदार या सैयद हाशमी या अपना बाप या बेटा या बीवी या शौहर है तो ज़कात को दोबारा देने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि ज़कात की रक़म उसकी मिल्क से निकलकर सवाब के महल में पहुँच चुकी है, और मस्रफ़ के निर्धारण में जो ग़लती किसी अंधेरे या मुग़ालते की वजह से हो गयी वह माफ़ है। (दुर्रे मुख़्तार) सदक़ात की आयत की तफ़सीर और उससे संबन्धित मसाईल की तफ़सील ज़रूरत के मुताबिक़ पूरी हो गयी।

وَمِنْهُمُ الَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ النَّبِيَّ وَيَقُوْلُوْنَ هُوَ اُذُنٌ ۭ قُلْ اُذُنُ
خَيْرٍ لَّكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ ۭ وَالَّذِيْنَ
يُؤْذُوْنَ رَسُوْلَ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٦١﴾ يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ لِيُرْضُوْكُمْ ۚ وَاللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗٓ
اَحَقُّ اَنْ يُّرْضُوْهُ اِنْ كَانُوْا مُؤْمِنِيْنَ ﴿٦٢﴾ اَلَمْ يَعْلَمُوْٓا اَنَّهٗ مَنْ يُّحَادِدِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاَنَّ
لَهٗ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدًا فِيْهَا ۭ ذٰلِكَ الْخِزْيُ الْعَظِيْمُ ﴿٦٣﴾ يَحْذَرُ الْمُنٰفِقُوْنَ اَنْ تُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ
سُوْرَةٌ تُنَبِّئُهُمْ بِمَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ۭ قُلِ اسْتَهْزِءُوْا ۚ اِنَّ اللّٰهَ مُخْرِجٌ مَّا تَحْذَرُوْنَ ﴿٦٤﴾ وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ
لَيَقُوْلُنَّ اِنَّمَا كُنَّا نَخُوْضُ وَنَلْعَبُ ۭ قُلْ اَبِاللّٰهِ وَاٰيٰتِهٖ وَرَسُوْلِهٖ كُنْتُمْ تَسْتَهْزِءُوْنَ ﴿٦٥﴾ لَا
تَعْتَذِرُوْا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ ۭ اِنْ نَّعْفُ عَنْ طَاۗىِٕفَةٍ مِّنْكُمْ نُعَذِّبْ طَاۗىِٕفَةًۢ بِاَنَّهُمْ
كَانُوْا مُجْرِمِيْنَ ﴿٦٦﴾

व मिन्हुमुल्लज़ी-न युअ्ज़ूनन्नबिय्-य व यकूलू-न हु-व उज़ुनुन्, कुल् उज़ुनु ख़ैरिल्लकुम् युअ्मिनु बिल्लाहि व युअ्मिनु लिल्मुअ्मिनी-न व रह्मतुल् लिल्लज़ी-न आमनू मिन्कुम्, वल्लज़ी-न युअ्ज़ू-न रसूलल्लाहि लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (61) यह्लिफ़ू-न बिल्लाहि लकुम् लियुर्ज़ूकुम् वल्लाहु व रसूलुहू अहक्कु अंय्युर्ज़ूहु इन् कानू मुअ्मिनीन (62) ▲ अलम् यअ्लमू अन्नहू मंय्युहादिदिल्ला-ह व रसूलहू फ़-अन्-न लहू ना-र जहन्न-म ख़ालिदन् फ़ीहा, ज़ालिकल् ख़िज़्युल्-

और बाज़े उनमें बदगोई करते हैं नबी की और कहते हैं यह शख़्स तो कान है, तू कह कान है तुम्हारे भले के वास्ते, यक़ीन रखता है अल्लाह पर और यक़ीन करता है मुसलमानों की बात का, और रहमत है ईमान वालों के हक़ में तुम में से, और जो लोग बदगोई करते हैं अल्लाह के रसूल की उनके लिये अ़ज़ाब है दर्दनाक। (61) क़समें खाते हैं अल्लाह की तुम्हारे आगे ताकि तुमको राज़ी करें, और अल्लाह को और उसके रसूल को बहुत ज़रूरी है राज़ी करना अगर वे ईमान रखते हैं। (62) ▲ क्या वे जान नहीं चुके कि जो कोई मुकाबला करे अल्लाह से और उसके रसूल से तो उसके वास्ते है दोज़ख़ की आग, हमेशा रहे उसमें, यही

अ़ज़ीम (63) यह़्ज़रुल् मुनाफ़िक़ू-न अन् तुनज़्ज़-ल अ़लैहिम् सूरतुन् तुनब्बिउहुम् बिमा फ़ी क़ुलूबिहिम्, क़ुलिस्तह्ज़िऊ इन्नल्ला-ह मुख़्रिजुम् मा तह़्ज़रून (64) व ल-इन् सअल्तहुम् ल-यक़ूलुन्-न इन्नमा कुन्ना नख़ूज़ु व नल्अ़बु, क़ुल् अबिल्लाहि व आयातिही व रसूलिही कुन्तुम् तस्तह्ज़िऊन (65) ला तअ़्तज़िरू क़द् कफ़र्तुम् बअ़्-द ईमानिकुम्, इन्-नअ़्फ़ु अ़न् ताइ-फ़तिम् मिन्कुम् नुअ़ज़्ज़िब् ताइ-फ़तम् बिअन्नहुम् कानू मुज्रिमीन (66) ✿	है बड़ी रुस्वाई। (63) डरा करते हैं मुनाफ़िक़ इस बात से कि नाज़िल हो मुसलमानों पर ऐसी सूरत कि जता दे उनको जो उनके दिल में है, तू कह दे मज़ाक़ उड़ाते रहो, अल्लाह खोल कर रहेगा उस चीज़ को जिसका तुमको डर है। (64) और अगर तू उनसे पूछे तो वे कहेंगे हम तो बातचीत करते थे और दिल्लगी, तू कह- क्या अल्लाह से और उसके हुक्मों से और उसके रसूल से तुम ठट्ठे करते थे? (65) बहाने मत बनाओ तुम तो काफ़िर हो गये ईमान ज़ाहिर करने के बाद, अगर हम माफ़ कर देंगे तुम में से कुछ को तो अलबत्ता अ़ज़ाब भी देंगे बाज़ों को, इस सबब से कि वे गुनाहगार थे। (66) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उन (मुनाफ़िक़ों) में से बाज़े ऐसे हैं कि नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को तकलीफ़ें पहुँचाते हैं (यानी आपकी शान में ऐसी बातें कहते हैं कि सुनकर आपको तकलीफ़ हो) और (जब कोई रोकता है तो) कहते हैं कि आप हर बात कान देकर सुन लेते हैं (आपको झूठ बोलकर धोखा दे देना आसान है, इसलिये कुछ फ़िक्र नहीं), आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि (तुमको ख़ुद धोखा हुआ, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का किसी बात को सुन लेना दो तरीक़े पर है- एक तस्दीक़ के तौर पर कि दिल से भी उसको सही समझें, दूसरे सादगी और अच्छे अख़्लाक़ के प्रदर्शन के तौर पर, कि बावजूद यह जान लेने के कि यह बात बिल्कुल ग़लत है शराफ़ते नफ़्स और अच्छे अख़्लाक़ की बिना पर उसको टाल दें और कहने वाले पर पकड़ और पूछगछ न करें या उसको स्पष्ट तौर पर न झुठलायें, सो) वह नबी कान देकर तो वही बात सुनते हैं जो तुम्हारे हक़ में ख़ैर (ही ख़ैर) है, (जिसका हासिल और नतीजा यह है) कि वह अल्लाह (की बातें वही से मालूम करके उन) पर ईमान लाते हैं (जिनकी तस्दीक़ का ख़ैर होना तमाम आ़लम के लिये ज़ाहिर है, क्योंकि तालीम देना और अ़दल व इन्साफ़ इसी तस्दीक़ पर मौक़ूफ़ है), और (सच्चे मुख़्लिस) मोमिनों (की बातों) का (जो ईमान व इख़्लास की हैसियत से

हों) यक़ीन करते हैं, (इसका ख़ैर होना भी ज़ाहिर है कि आम अ़दल मौक़ूफ़ है हालात की सही जानकारी पर और उसका माध्यम यही सच्चे मुख़्लिस मोमिन हैं। ग़र्ज़ कि कान देकर और सच्चा समझकर तो सिर्फ़ सच्चे और मुख़्लिस लोगों की बातें सुनते हैं) और (बाक़ी तुम्हारी शरारत भरी बातें जो सुन लेते हैं तो इसकी वजह यह है कि) आप उन लोगों के हाल पर मेहरबानी फ़रमाते हैं जो तुम में ईमान का इज़हार करते हैं (अगरचे दिल में ईमान न हो। पस इस मेहरबानी और अच्छा अख़्लाक़ बरतने की वजह से तुम्हारी बातें सुन लेते हैं और बावजूद उसकी हक़ीक़त समझ जाने के दरगुज़र और ख़ामोशी बरतते हैं। पस उन बातों का सुनना दूसरे अन्दाज़ का है, तुमने अपनी बेवक़ूफ़ी से इसको भी पहले अन्दाज़ और तरीक़े पर महमूल कर लिया। ख़ुलासा यह कि तुम यह समझते हो कि नबी-ए-पाक हक़ीक़त को नहीं समझते और वास्तव में हक़ीक़त को तुम ही नहीं समझते)। और जो लोग अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को तकलीफ़ें पहुँचाते हैं (चाहे उन बातों से जिनके कहने के बाद उज़ुन कहा था या ख़ुद इसी हु-व उज़ुनुन के कहने से, क्योंकि उनका आपको उज़ुन "कान" कहना आपके अपमान के लिये था कि मआ़ज़ल्लाह आपको समझ नहीं, जो कुछ सुन लेते हैं उसको मान लेते हैं) उनके लिए दर्दनाक सज़ा होगी। ये लोग तुम्हारे (मुसलमानों के) सामने अल्लाह तआ़ला की (झूठी) क़समें खाते हैं (कि हमने फ़ुलाँ बात नहीं कही, या हम जंग में फ़ुलाँ मजबूरी से न जा सके) ताकि तुमको राज़ी कर लें (जिस से माल व जान महफ़ूज़ रहे) हालाँकि अल्लाह और उसका रसूल ज़्यादा हक़ रखते हैं, कि अगर ये लोग सच्चे मुसलमान हैं तो उसको राज़ी करें (जो कि मौक़ूफ़ है इख़्लास और ईमान पर)।

क्या इनको ख़बर नहीं कि जो शख़्स अल्लाह की और उसके रसूल की मुख़ालफ़त करेगा (जैसा कि ये लोग कर रहे हैं) तो यह बात तय हो चुकी है कि ऐसे शख़्स को दोज़ख़ की आग (इस तौर पर) नसीब होगी (कि) वह उसमें हमेशा रहेगा (और) यह बड़ी रुस्वाई (की बात) है। मुनाफ़िक़ लोग (तबई तौर पर) इससे अन्देशा करते हैं कि मुसलमानों पर (पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वही के ज़रिये) कोई ऐसी सूरः (मसलन या आयत) नाज़िल (न) हो जाये जो उनको उन (मुनाफ़िक़ों) के दिल के हाल की इत्तिला दे दे। (यानी उन्होंने जो मज़ाक़-ठट्ठा उड़ाने की बातें छुपकर की हैं जो कि मुसलमानों के एतिबार से वो उन भेदों की तरह हैं जो दिलों में छुपे हैं, उनकी ख़बर न हो जाये) आप फ़रमा दीजिये कि अच्छा तुम मज़ाक़ उड़ाते रहो (इसमें उनके मज़ाक़ उड़ाने पर बाख़बर हो जाने को जतला दिया, चुनाँचे आगे ख़ुद इरशाद है कि) बेशक अल्लाह तआ़ला उस चीज़ को ज़ाहिर करके रहेगा जिस (के इज़हार) से तुम अन्देशा करते थे (चुनाँचे ज़ाहिर कर दिया कि तुम मज़ाक़ उड़ा रहे थे) और (ज़ाहिर हो जाने के बाद) अगर आप उनसे (उस मज़ाक़ उड़ाने की वजह) पूछें तो कह देंगे कि हम तो बस मज़ाक़ और दिल्लगी कर रहे थे, (इस कलाम के असली मायने मक़सूद न थे, केवल जी ख़ुश करने को जिससे सफ़र आसानी से कट जाये ऐसी बातें ज़ुबानी कर रहे थे)। आप (उनसे) कह दीजिए कि क्या अल्लाह के साथ और उसकी आयतों के साथ और उसके रसूल के साथ तुम हंसी करते थे?

(यानी चाहे ग़र्ज़ कुछ भी हो मगर यह तो देखो कि तुम मज़ाक़ किसका उड़ा रहे हो, जिनके साथ मज़ाक़ उड़ाना किसी ग़र्ज़ से भी दुरुस्त नहीं) तुम अब (यह बेहूदा) उज़्र मत करो (मतलब यह है कि यह उज़्र स्वीकारीय नहीं, और इस उज़्र से मज़ाक़ उड़ाना जायज़ नहीं हो जाता) तुम तो अपने को मोमिन कहकर कुफ़्र करने लगे (क्योंकि दीन के साथ हंसी-दिल्लगी करना किसी भी तरीक़े से हो, कुफ़्र है। अगरचे दिल में तो पहले भी ईमान न था, अलबत्ता अगर कोई दिल से तौबा कर ले और सच्चा मोमिन बन जाये तो यक़ीनन कुफ़्र और कुफ़्र के अज़ाब से छूट जाये, लेकिन इसकी भी सब को तौफ़ीक़ न होगी, हाँ यह ज़रूर है कि कुछ लोग मुसलमान हो जायेंगे और वे माफ़ कर दिये जायेंगे। पस हासिल यह निकला कि) अगर हम तुम में से कुछ लोगों को छोड़ भी दें (इसलिये कि वे मुसलमान हो गये) फिर भी कुछ को तो (ज़रूर ही) सज़ा देंगे, इस वजह से कि वे (तक़दीरी तौर ही) मुजिरम थे (यानी वे मुसलमान नहीं हुए)।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी पहले गुज़री आयतों की तरह मुनाफ़िक़ों के बेहूदा एतिराज़ों, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तकलीफ़ें पहुँचाने और फिर झूठी क़समें खाकर अपने ईमान का यक़ीन दिलाने के वाक़िआत और उन पर तंबीह है।

पहली आयत में बयान हुआ है कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुताल्लिक़ मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर यह कहते हैं कि "वह तो बस कान हैं" यानी जो कुछ किसी से सुन लेते हैं उसी पर यक़ीन कर लेते हैं, इसलिये हमें कुछ फ़िक्र नहीं, अगर हमारी साज़िश खुल भी गयी तो हम फिर क़सम खाकर आपको अपनी बराअत का यक़ीन दिलायेंगे। जिसके जवाब में हक़ तआ़ला ने उनकी बेवक़ूफ़ी को वाज़ेह फ़रमा दिया कि वह (यानी नबी पाक) जो मुनाफ़िक़ों और मुख़ालिफ़ों की ग़लत बातों को सुनकर अपने बुलन्द अख़्लाक़ की बिना पर ख़ामोश हो रहते हैं, इससे यह न समझो कि आपको वास्तविकता की समझ नहीं, सिर्फ़ तुम्हारे कहने पर यक़ीन करते हैं, बल्कि वह सब की पूरी-पूरी हक़ीक़त से बाख़बर हैं, तुम्हारी ग़लत बातें सुनकर वह तुम्हारी सच्चाई के क़ायल नहीं हो जाते, अलबत्ता अपनी शराफ़ते नफ़्स और करम की बिना पर तुम्हारे मुँह पर तुम्हारी तरदीद नहीं करते।

اِنَّ اللّٰہَ مُخۡرِجٌ مَّا تَحۡذَرُوۡنَ۝

इस आयत में यह ख़बर दी गयी है कि हक़ तआ़ला मुनाफ़िक़ों की गुप्त साज़िशों और शरारतों को ज़ाहिर फ़रमा देंगे, जिसका एक वाक़िआ ग़ज़वा-ए-तबूक से वापसी का है जबकि कुछ मुनाफ़िक़ों ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के क़त्ल की साज़िश की थी, हक़ तआ़ला ने आपको उस पर जिब्रील अ़लैहिस्सलाम के ज़रिये अवगत करके उस रास्ते से हटा दिया जहाँ ये मुनाफ़िक़ लोग इस काम के लिये जमा हुए थे। (तफ़सीरे मज़हरी, तफ़सीरे बग़वी के हवाले से)

और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हक़ तआ़ला ने सत्तर मुनाफ़िक़ों

के नाम मय उनके पिताओं और पूरे निशान पते के रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतला दिये थे, मगर रहमतुल्-लिल्आ़लमीन ने उनको लोगों पर ज़ाहिर नहीं फ़रमाया। (मज़हरी)

اَلْمُنٰفِقُوْنَ وَالْمُنٰفِقٰتُ بَعْضُهُمْ مِّنْ بَعْضٍ ۘ يَاْمُرُوْنَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ
عَنِ الْمَعْرُوْفِ وَيَقْبِضُوْنَ اَيْدِيَهُمْ ؕ نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ ؕ اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ۝ وَعَدَ
اللّٰهُ الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْمُنٰفِقٰتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ؕ هِيَ حَسْبُهُمْ ۚ وَلَعَنَهُمُ
اللّٰهُ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝ كَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ كَانُوْٓا اَشَدَّ مِنْكُمْ قُوَّةً وَّاَكْثَرَ اَمْوَالًا وَّ
اَوْلَادًا ؕ فَاسْتَمْتَعُوْا بِخَلَاقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَاقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ
اَوْلَادًا ؕ فَاسْتَمْتَعُوْا بِخَلَاقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَاقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ
وَخُضْتُمْ كَالَّذِيْ خَاضُوْا ؕ اُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ
الْخٰسِرُوْنَ ۝ اَلَمْ يَاْتِهِمْ نَبَاُ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ قَوْمِ نُوْحٍ وَّعَادٍ وَّثَمُوْدَ ۙ وَقَوْمِ اِبْرٰهِيْمَ
وَاَصْحٰبِ مَدْيَنَ وَالْمُؤْتَفِكٰتِ ؕ اَتَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ ۚ فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوْٓا
اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ ۝

अल्मुनाफ़िक़ू-न वल्मुनाफ़िक़ातु बअ्ज़ुहुम् मिम्-बअ्ज़िन्। यअ्मुरू-न बिल्मुन्करि व यन्हौ-न अ़निल्-मअ्रूफ़ि व यक़्बिज़ू-न ऐदि-यहुम्, नसुल्ला-ह फ़-नसि-यहुम्, इन्नल्-मुनाफ़िक़ी-न हुमुल्-फ़ासिक़ून (67) व-अ़दल्लाहुल् मुनाफ़िक़ी-न वल्मुनाफ़िक़ाति वल्कुफ़्फ़ा-र ना-र जहन्न-म ख़ालिदी-न फ़ीहा, हि-य हस्बुहुम् व ल-अ़-नहुमुल्लाहु व लहुम् अ़ज़ाबुम् मुक़ीम (68) कल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिकुम् कानू अशद्-द

मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें सब की एक चाल है, सिखायें बात बुरी और छुड़ा दें बात भली, और बन्द रखें अपनी मुट्ठी, भूल गये अल्लाह को, सो वह भूल गया उनको, तहक़ीक़ कि मुनाफ़िक़ वही हैं नाफ़रमान। (67) वायदा दिया है अल्लाह ने मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतों को और काफ़िरों को दोज़ख़ की आग का, पड़े रहेंगे उसमें वही बस है उनको, और अल्लाह तआ़ला ने उनको फटकार दिया, और उनके लिये अ़ज़ाब है बरक़रार रहने वाला। (68) जिस तरह तुमसे पहले लोग ज़्यादा थे तुमसे ज़ोर में और ज़्यादा रखते थे माल और औलाद,

मिन्कुम् क़ुव्वतंव्-व अक्स-र अम्वालंव्-व औलादन्, फ़स्तम्तअ़ू बि-ख़ालाक़िहिम् फ़स्तम्तअ़्तुम् बि-ख़लाक़िकुम् कमस्तम्त-अ़ल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिकुम् बि-ख़ालाक़िहिम् व ख़ुज़्तुम् कल्लज़ी ख़ाज़ू, उलाइ-क हबितत् अअ़्मालुहुम् फ़िद्दुन्या वल्आख़िरति व उलाइ-क हुमुल्-ख़ासिरून (69) अलम् यअ़्तिहिम् न-बउल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् क़ौमि नूहिंव्-व आ़दिंव्-व समू-द व क़ौमि इब्राही-म व अस्हाबि मद्य-न वल्मुअ्तफ़िकाति, अतत्हुम् रुसुलुहुम् बिल्बय्यिनाति फ़मा कानल्लाहु लि-यज़्लि-महुम् व लाकिन् कानू अन्फ़ु-सहुम् यज़्लिमून (70)	फिर फ़ायदा उठा गये अपने हिस्से से, फिर फ़ायदा उठाया तुमने अपने हिस्से से जैसे फ़ायदा उठा गये तुमसे पहले अपने हिस्से से, और तुम भी चलते हो उन्हीं की सी चाल। वे लोग मिट गये उनके अ़मल दुनिया में और आख़िरत में और वही लोग पड़े नुक़सान में। (69) क्या पहुँची नहीं उनको ख़बर उन लोगों की जो उनसे पहले थे- नूह की क़ौम की और आ़द की समूद की, और इब्राहीम की क़ौम की और मद्यन वालों की और उन बस्तियों की ख़बर जो उलट दी गई थीं, पहुँचे उनके पास उनके रसूल साफ़ हुक्म लेकर, सो अल्लाह तो ऐसा न था कि उन पर ज़ुल्म करता लेकिन वे अपने ऊपर ख़ुद ही ज़ुल्म करते थे। (70)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

मुनाफ़िक़ मर्द और मुनाफ़िक़ औरतें सब एक तरह के हैं, कि बुरी बात (यानी कुफ़्र और इस्लाम की मुख़ालफ़त) की तालीम देते हैं और अच्छी बात (यानी ईमान व नबी-ए-करीम की पैरवी) से मना करते हैं, और (ख़ुदा की राह में ख़र्च करने से) अपने हाथों को बन्द रखते हैं, उन्होंने ख़ुदा का ख़्याल न किया (यानी फ़रमाँबरदारी न की) तो ख़ुदा ने उनका ख़्याल न किया (यानी उन पर अपनी ख़ास रहमत न की), बेशक ये मुनाफ़िक़ बड़े ही नाफ़रमान हैं। अल्लाह तआ़ला ने मुनाफ़िक़ मर्दों और मुनाफ़िक़ औरतों और (खुले आ़म) कुफ़्र करने वालों से दोज़ख़ की आग का अ़हद कर रखा है, जिसमें वे हमेशा रहेंगे। वह उनके लिये काफ़ी (सज़ा) है, और अल्लाह तआ़ला उनको अपनी रहमत से दूर कर देगा, और उनको (ज़िक्र हुए वायदे के अनुसार) हमेशा का अ़ज़ाब होगा। (ऐ मुनाफ़िक़ो!) तुम्हारी हालत (कुफ़्र और कुफ़्र की सज़ा की पात्रता में) उन लोगों की-सी है जो तुमसे पहले (ज़माने में) हो चुके हैं, जो क़ुव्वत में तुमसे ज़बरदस्त

और माल व औलाद की कसरत में तुमसे भी ज़्यादा थे, तो उन्होंने अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया, सो तुमने भी अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया जैसा कि तुमसे पहले लोगों ने अपने (दुनियावी) हिस्से से ख़ूब फ़ायदा हासिल किया था। और तुम भी (बुरी बातों में) ऐसे ही घुसे जैसे वे लोग (बुरी बातों में) घुसे थे, और उन लोगों के (अच्छे) आमाल दुनिया व आख़िरत (सब) में बेकार गये (कि दुनिया में उन आमाल पर सवाब की ख़ुशख़बरी नहीं, और आख़िरत में सवाब नहीं) और (इसी दुनिया व आख़िरत की बरबादी की वजह से) वे लोग बड़े नुक़सान में हैं (कि दोनों जहान में ख़ुशी और राहत से मेहरूम हैं। पस इसी तरह तुम भी उनकी तरह कुफ़्र करते हो तो उन्हीं की तरह नुक़सान व घाटा उठाने वाले होगे, और जैसे उनके माल व औलाद उनके काम न आये तुम तो इन चीज़ों में उनसे कम हो इसलिये तुम्हारे तो और भी काम न आयेंगे। यह तो आख़िरत के नुक़सान की धमकी हुई, आगे दुनिया के नुक़सान का संदेह जताते हुए सचेत फ़रमाते हैं कि) क्या इन लोगों को उन (के अ़ज़ाब व हलाक होने) की ख़बर नहीं पहुँची जो इनसे पहले हुए हैं, जैसे क़ौमे नूह और आ़द और समूद और इब्राहीम की क़ौम और मद्यन वाले और उल्टी हुई बस्तियाँ (यानी क़ौमे लूत की बस्तियाँ) कि उनके पास उनके पैग़म्बर (हक़ की) साफ़ निशानियाँ लेकर आये (लेकिन न मानने से बरबाद हुए)। सो (इस बरबादी में) अल्लाह ने उन पर ज़ुल्म नहीं किया, लेकिन वे ख़ुद ही अपनी जानों पर ज़ुल्म करते थे (इसी तरह इन मुनाफ़िक़ों को भी डरना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में मुनाफ़िक़ों का एक हाल यह बतलाया कि वे अपने हाथ बन्द रखते हैं 'यक़्बिज़ू-न ऐदियहुम'। तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि हाथ बन्द रखने से मुराद जिहाद का छोड़ना और वाजिब हुक़ूक़ का अदा न करना है।

نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ.

इसके ज़ाहिरी मायने यह हैं कि उन लोगों ने अल्लाह को भुला दिया तो अल्लाह ने उनको भुला दिया। अल्लाह तआ़ला तो भूल से पाक हैं, इस जगह मुराद यह है कि उन लोगों ने अल्लाह के अहकाम को इस तरह छोड़ दिया जैसे भूल गये हों, तो अल्लाह तआ़ला ने भी आख़िरत के सवाब के मामले में उनको ऐसा ही कर छोड़ा कि नेकी और सवाब में कहीं उनका नाम न रहा।

आयत (69) 'कल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिकुम.............' में एक तफ़सीर यह है कि यह ख़िताब मुनाफ़िक़ों को है, जैसा कि ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में आ चुका, और दूसरी तफ़सीर यह है कि ख़िताब मुसलमानों को है यानी तुम लोग भी अपने से पहले लोगों की तरह हो, जिस तरह वे लोग दुनिया की लज़्ज़तों में फंसकर आख़िरत को भुला बैठे और तरह-तरह के गुनाहों और बुरे अख़्लाक़ में मुब्तला हो गये तुम भी ऐसे ही लोग होगे।

इसी आयत की तफ़सीर में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रिवायत किया कि

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम भी वही तरीक़े इख़्तियार करोगे जो तुमसे पहली उम्मतें कर चुकी हैं, हाथ दर हाथ और बालिश्त दर बालिश्त। यानी बिल्कुल उनकी नक़ल उतारोगे, यहाँ तक कि अगर उनमें से कोई गोह के बिल में घुसा है तो तुम भी घुसोगे। हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह रिवायत नक़ल करके फ़रमाया कि इस हदीस की तस्दीक़ के लिये तुम्हारा जी चाहे तो क़ुरआन की यह आयत पढ़ लो 'कल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिकुम' (यानी यही आयत जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है)।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह सुनकर फ़रमायाः

مَا اَشْبَهَ اللَّيْلَةَ بِالْبَارِحَةِ

यानी आजकी रात गुज़री रात से कैसी मिलती-जुलती और समान है। ये बनी इस्राईल हैं हमें उनके साथ तश्बीह दी गयी है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हदीस का मक़सद वाज़ेह है कि आख़िरी ज़माने में मुसलमान भी यहूदियों व ईसाईयों के तरीक़ों पर चलने लगेंगे। और मुनाफ़िक़ों का अ़ज़ाब बयान करने के बाद इसका बयान करना इस तरफ़ भी इशारा है कि यहूदियों व ईसाईयों के तरीक़ों की पैरवी करने वाले मुसलमान वही होंगे जिनके दिलों में मुकम्मल ईमान नहीं, निफ़ाक़ के जरासीम उनमें पाये जाते हैं, उम्मत के नेक लोगों को इससे बचने और बचाने की हिदायत इस आयत में दी गयी है।

وَالْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ يَاْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ
وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَيُطِيعُونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهٗ ط
اُولٰٓئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللّٰهُ ط اِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ وَعَدَ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنٰتِ جَنّٰتٍ
تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِينَ فِيهَا وَمَسٰكِنَ طَيِّبَةً فِي جَنّٰتِ عَدْنٍ ط وَرِضْوَانٌ
مِّنَ اللّٰهِ اَكْبَرُ ط ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ۝ يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ جٰهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنٰفِقِينَ
وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ ط وَمَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ط وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ۝

वल्मुअ्मिनू-न वल्मुअ्मिनातु बअ्ज़ुहुम् औलिया-उ बअ्ज़िन्। यअ्मुरू-न बिल्मअ्रूफ़ि व यन्हौ-न अ़निल्मुन्करि व युक़ीमूनस्सला-त व युअ्तूनज़्-ज़का-त व युतीअ़ूनल्ला-ह व रसूलहू, उलाइ-क स-यर्हमुहुमुल्लाहु,	और ईमान वाले मर्द और ईमान वाली औरतें एक दूसरे के मददगार हैं, सिखलाते हैं नेक बात और मना करते हैं बुरी बात से, और क़ायम रखते हैं नमाज़ और देते हैं ज़कात और हुक्म पर चलते हैं अल्लाह के और उसके रसूल के, वही लोग हैं जिन पर रहम करेगा अल्लाह, बेशक

इन्नल्ला-ह अ़ज़ीज़ुन् हकीम (71) व-अ़दल्लाहुल् मुअ्मिनी-न वल्मुअ्मिनाति जन्नातिन् तज्री मिन् तह़्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा व मसाकि-न तय्यि-बतन् फ़ी जन्नाति अ़द्निन्, व रिज़्वानुम् मिनल्लाहि अक्बरु, ज़ालि-क हुवल् फ़ौज़ुल्-अ़ज़ीम (72) ✿	अल्लाह ज़बरदस्त है हिक्मत वाला। (71) वायदा दिया है अल्लाह ने ईमान वाले मर्दों और ईमान वाली औरतों को बाग़ों का कि बहती हैं नीचे उनके नहरें, रहा करें उन्हीं में और सुथरे मकानों का रहने के बाग़ों में, और रज़ामन्दी अल्लाह की उन सब से बड़ी है, यही है बड़ी कामयाबी। (72) ✿
या अय्युहन्नबिय्यु जाहिदिल्-कुफ़्फ़ा-र वल्मुनाफ़िक़ी-न वग़्लुज़् अ़लैहिम्, व मअ्वाहुम् जहन्नमु, व बिअ्सल्-मसीर (73)	ऐ नबी! लड़ाई कर काफ़िरों से और मुनाफ़िक़ों से और सख़्त-मिज़ाजी अपना उन पर, और उनका ठिकाना दोज़ख़ है और वह बुरा ठिकाना है। (73)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें आपस में एक-दूसरे के (दीनी) साथी हैं, नेक बातों की तालीम देते हैं और बुरी बातों से मना करते हैं, और नमाज़ की पाबन्दी रखते हैं और ज़कात देते हैं, और अल्लाह और उसके रसूल का कहना मानते हैं। उन लोगों पर ज़रूर अल्लाह तआ़ला रहमत करेगा (जिसकी तफ़सील "व-अ़दल्लाहु........." में अभी आगे आती है) बेशक अल्लाह तआ़ला (पूरी तरह) क़ादिर है (पूरा बदला दे सकता है), हिक्मत वाला है (मुनासिब बदला देता है। अब उस रहमत का बयान होता है कि) और अल्लाह तआ़ला ने मुसलमान मर्दों और मुसलमान औरतों से ऐसे बाग़ों का वायदा कर रखा है जिनके नीचे से नहरें चलती होंगी, जिनमें वे हमेशा रहेंगे, और उम्दा मकानों का (वायदा कर रखा है) जो कि उन हमेशा रहने वाले बाग़ों में होंगे, और (इन नेमतों के साथ) अल्लाह तआ़ला की रज़ामन्दी (जो जन्नत वालों को हमेशा-हमेशा हासिल रहेगी, इन) सब (नेमतों) से बड़ी चीज़ है। यह (ज़िक्र हुई जज़ा) बड़ी कामयाबी है।

ऐ नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! काफ़िरों (से तलवार के साथ) और मुनाफ़िक़ों से (ज़बान से) जिहाद कीजिये, और उन पर सख़्ती कीजिये। (ये दुनिया में तो इसके हक़दार हैं) और (आख़िरत में) इनका ठिकाना दोज़ख़ है, और वह बुरी जगह है।

मआरिफ़ व मसाईल

पहले की आयतों में मुनाफ़िक़ों के हालत, उनकी साज़िशों और तकलीफ़ें देने और उनके अज़ाब का बयान था। क़ुरआनी अन्दाज़ के मुताबिक़ मुनासिब था कि इस जगह सच्चे-पक्के मोमिनों के हालात और उनके सवाब और दर्जात का भी बयान आ जाये, उक्त आयतों में इसी का बयान है।

यहाँ यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि इस मौक़े पर मुनाफ़िक़ों और सच्चे मोमिनों के हालात का तुलनात्मक ज़िक्र किया गया, मगर एक जगह मुनाफ़िक़ों के बारे में तो यह फ़रमाया कि 'बअ़्ज़ुहुम मिम्-बअ़्ज़िन्' और उसके मुक़ाबिल मोमिनों का ज़िक्र आया तो उसमें फ़रमाया 'बअ़्ज़ुहुम औलिया-उ बअ़्ज़िन'। इसमें इशारा है कि मुनाफ़िक़ों के आपसी ताल्लुक़ात और रिश्ते तो सिर्फ़ ख़ानदानी शिर्कत या स्वार्थों पर आधारित होते हैं, न उनकी उम्र ज़्यादा होती है और न उन पर वो परिणाम और फल मुरत्तब होते हैं जो दिली दोस्ती और दिली हमदर्दी के ताल्लुक़ पर मुरत्तब होते हैं, बख़िलाफ़ मोमिनों के कि वे एक दूसरे के मुख़्लिस, दिली दोस्त और सच्चे हमदर्द होते हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और चूँकि यह दोस्ती और हमदर्दी ख़ालिस अल्लाह के लिये होती है वह ज़ाहिरन व बातिनन और हाज़िर व ग़ायब एक जैसी होती है, और हमेशा पायदार रहती है। सच्चे मोमिन की यही निशानी है, ईमान और नेक अ़मल की विशेषता ही यह है कि आपस में दोस्ती और मुहब्बत पैदा करता है। क़ुरआने करीम का इरशाद इसी के मुताल्लिक़ है:

سَيَجْعَلُ لَهُمُ الرَّحْمٰنُ وُدًّاo

यानी जो लोग ईमान लाये और नेक अ़मल के पाबन्द हुए अल्लाह तआ़ला उनमें आपस में दिली और गहरी दोस्ती पैदा फ़रमा देते हैं। आजकल हमारे ईमान और नेक अ़मल ही की कोताही है कि मुसलमानों में आपस के ताल्लुक़ात कभी ऐसे नज़र नहीं आते, बल्कि स्वार्थों और ग़र्ज़ों के ताबे हैं।

جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنٰفِقِيْنَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ.

इस आयत में काफ़िरों और मुनाफ़िक़ों दोनों से जिहाद और उनके मामले में सख़्ती इख़्तियार करने का हुक्म रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को दिया गया है, ज़ाहिरी काफ़िरों से जिहाद का मामला तो स्पष्ट है लेकिन मुनाफ़िक़ों से जिहाद का मतलब ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अ़मल व रवैये से यह साबित हुआ कि उनके साथ जिहाद से मुराद ज़बानी जिहाद है, कि उनको इस्लाम की हक़्क़ानियत समझने की तरफ़ दावत दें ताकि वे अपने दावा-ए-इस्लाम में मुख़्लिस हो जायें। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ.

लफ़्ज़ ग़िल्ज़ के अस्ली मायने यह हैं कि मुख़ातब जिस तरह के व्यवहार का हक़दार है उसमें कोई रियायत और नर्मी न बरती जाये, और लफ़्ज़ राफ़त के मुक़ाबिल इस्तेमाल होता है,

जिसके मायने रहमत और नर्म-दिली के हैं।

इमाम क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि इस जगह ग़िल्ज़त इस्तेमाल करने से अ़मली ग़िल्ज़त मुराद है कि उन पर शरई अहकाम जारी करने में कोई रियायत और नर्मी न बरती जाये, ज़बान और कलाम में ग़िल्ज़त (सख़्ती) इख़्तियार करना मुराद नहीं, क्योंकि वह नबियों की सुन्नत और आ़दत के ख़िलाफ़ है, वे किसी से सख़्त-कलामी और बुरा-भला कहना नहीं करते। एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اِذَا زَنَتْ اَمَةُ اَحَدِكُمْ فَلْيَجْلِدْهَا الْحَدَّ وَلَا يُثَرِّبْ عَلَيْهَا.

"अगर तुम्हारी कोई बाँदी ज़िना का जुर्म कर बैठे तो उस पर उसकी शरई सज़ा जारी कर दो मगर ज़बानी मलामत और बुरा-भला कहना न करो।"

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाल में ख़ुद हक़ तआ़ला ने फ़रमायाः

وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيْظَ الْقَلْبِ لَا نْفَضُّوْا مِنْ حَوْلِكَ.

"यानी अगर आप सख़्त कलाम करने वाले और सख़्त-दिल होते तो लोग अपके पास से भाग जाते।"

और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अ़मल व आचरण में भी कहीं यह साबित नहीं कि काफ़िरों व मुनाफ़िक़ों से गुफ़्तगू और ख़िताब में कभी ग़िल्ज़त इख़्तियार फ़रमाई हो।

तंबीह

अफ़सोस कि संबोधन और कलाम में ग़िल्ज़त (सख़्ती और बुरा-भला कहना) जिसको काफ़िरों के मुक़ाबले में भी इस्लाम ने इख़्तियार नहीं किया, आजकल के मुसलमान दूसरे मुसलमानों के बारे में बेधड़क इस्तेमाल करते हैं, और बहुत से लोग तो इसको दीन की ख़िदमत समझकर ख़ुश होते हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوْا ؕ وَلَقَدْ قَالُوْا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَكَفَرُوْا بَعْدَ اِسْلَامِهِمْ وَ
هَمُّوْا بِمَا لَمْ يَنَالُوْا ۚ وَمَا نَقَمُوْٓا اِلَّآ اَنْ اَغْنٰىهُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ مِنْ فَضْلِهٖ ۚ فَاِنْ يَّتُوْبُوْا يَكُ
خَيْرًا لَّهُمْ ۚ وَاِنْ يَّتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۚ وَمَا لَهُمْ
فِى الْاَرْضِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ﴿۷۴﴾ وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ لَئِنْ اٰتٰىنَا مِنْ فَضْلِهٖ
لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُوْنَنَّ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿۷۵﴾ فَلَمَّآ اٰتٰىهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ بَخِلُوْا بِهٖ وَتَوَلَّوْا وَّهُمْ
مُّعْرِضُوْنَ ﴿۷۶﴾ فَاَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِىْ قُلُوْبِهِمْ اِلٰى يَوْمِ يَلْقَوْنَهٗ بِمَآ اَخْلَفُوا اللّٰهَ مَا
وَعَدُوْهُ وَبِمَا كَانُوْا يَكْذِبُوْنَ ﴿۷۷﴾ اَلَمْ يَعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ سِرَّهُمْ وَنَجْوٰىهُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ
عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ﴿۷۸﴾

यह्लिफ़ू-न बिल्लाहि मा क़ालू, व ल-क़द् क़ालू कलि-मतल्कुफ़्रि व क-फ़रू बअ्-द इस्लामिहिम् व हम्मू बिमा लम् यनालू व मा न-क़मू इल्ला अन् अग़्नाहुमुल्लाहु व रसूलुहू मिन् फ़ज़्लिही फ़-इंय्यतूबू यकु ख़ैरल्लहुम् व इंय्य-तवल्लौ युअ़ज़्ज़िब्हुमुल्लाहु अ़ज़ाबन् अलीमन् फ़िद्दुन्या वल्आख़िरति व मा लहुम् फ़िल्अर्ज़ि मिंव्वलिय्यिंव्-व ला नसीर (74) व मिन्हुम् मन् आ़-हदल्ला-ह ल-इन् आताना मिन् फ़ज़्लिही लनस्सद्-द-क़न्-न व ल-नकूनन्-न मिनस्सालिहीन (75) फ़-लम्मा आताहुम् मिन् फ़ज़्लिही बख़िलू बिही व त-वल्लौ व हुम् मुअ़्रिज़ून (76) फ़-अअ़्क़-बहुम् निफ़ाक़न् फ़ी क़ुलूबिहिम् इला यौमि यल्क़ौनहू बिमा अख़्लफ़ुल्ला-ह मा व-अ़दूहु व बिमा कानू यक्ज़िबून (77) अलम् यअ़्लमू अन्नल्ला-ह यअ़्लमु सिर्रहुम् व नज्वाहुम् व अन्नल्ला-ह अ़ल्लामुल् ग़ुयूब (78)

क़समें खाते हैं अल्लाह की कि हमने नहीं कहा और बेशक कहा उन्होंने लफ़्ज़ कुफ़्र का, और इनकारी हो गये मुसलमान होकर, और इरादा किया था उस चीज़ का जो उनको न मिली, और यह सब कुछ इसी का बदला था कि दौलतमन्द कर दिया उनको अल्लाह ने और उसके रसूल ने अपने फ़ज़्ल से, सो अगर तौबा कर लें तो भला है उनके हक़ में और अगर न मानेंगे तो अ़ज़ाब देगा उनको अल्लाह दर्दनाक अ़ज़ाब, दुनिया और आख़िरत में, और नहीं उनका पूरी दुनिया में कोई हिमायती और मददगार। (74) और बाज़े उनमें वे हैं कि अ़हद किया था अल्लाह से कि अगर दे हमको अपने फ़ज़्ल से तो हम ज़रूर ख़ैरात करें और हो जायें हम नेकी वालों में। (75) फिर जब दिया उनको अपने फ़ज़्ल से तो उसमें कन्जूसी की और फिर गये टला कर। (76) फिर इसका असर रख दिया निफ़ाक़ उनके दिलों में जिस दिन तक कि वे उससे मिलेंगे, उस वजह से कि उन्होंने ख़िलाफ़ किया अल्लाह से जो वायदा उससे किया था और इस वजह से कि बोलते थे झूठ। (77) क्या वे जान नहीं चुके कि अल्लाह जानता है उनका भेद और उनका मश्विरा, और यह कि अल्लाह ख़ूब जानता है सब छुपी बातों को। (78)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वे लोग अल्लाह की क़समें खा जाते हैं कि हमने फ़ुलाँ बात (मसलन यह कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़त्ल कर दें) नहीं कही, हालाँकि यक़ीनन उन्होंने कुफ़्र की बात कही थी, (क्योंकि आपके क़त्ल के बारे में गुफ़्तगू करने का कुफ़्र होना ज़ाहिर है) और (वह बात कहकर) अपने (ज़ाहिरी) इस्लाम के बाद (ज़ाहिर में भी) काफ़िर हो गये (चाहे अपने ही मजमे में सही, जिसकी ख़बर मुसलमानों को भी हो गयी और इससे सबके सामने कुफ़्र खुल गया) और उन्होंने ऐसी बात का इरादा किया था जो उनके हाथ न लगी (कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को क़त्ल करना, मगर नाकाम रहे) और यह उन्होंने सिर्फ़ इस बात का बदला दिया है कि उनको अल्लाह ने और उसके रसूल ने अल्लाह के रिज़्क़ से मालदार कर दिया (इस एहसान का बदला उनके नज़दीक यही होगा कि बुराई करें), सो अगर (इसके बाद भी) तौबा करें तो उनके लिये (दोनों जहान में) बेहतर (और नफ़ा देने वाला) होगा (चुनाँचे हज़रत जुल्लास को तौबा की तौफ़ीक़ हो गयी)। और अगर (तौबा से) मुँह मोड़ा (और कुफ़्र व निफ़ाक़ ही पर जमे रहे) तो अल्लाह तआ़ला उनको दुनिया और आख़िरत (दोनों जगह) में दर्दनाक सज़ा देगा (चुनाँचे उम्र भर बदनाम, परेशान और डरते रहना और मरते वक़्त मुसीबत को अपनी आँखों से देखना यह दुनियावी अ़ज़ाब है और आख़िरत में दोज़ख़ में जाना ज़ाहिर ही है) और उनका दुनिया में न कोई यार है और न मददगार (कि अ़ज़ाब से बचा ले, और जब दुनिया ही में कोई यार व मददगार नहीं जहाँ अक्सर मदद हो जाती है तो आख़िरत में तो कोई मदद न हो सकेगी)।

और इन (मुनाफ़िक़ों) में कुछ आदमी ऐसे हैं कि ख़ुदा तआ़ला से अ़हद करते हैं (क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़हद करना और ख़ुदा से अ़हद करना बराबर है, और वह अ़हद यह था कि) अगर अल्लाह तआ़ला हमको अपने फ़ज़्ल से (बहुत-सा माल) अ़ता फ़रमा दे तो हम (उसमें से) ख़ूब ख़ैरात करें, और हम (उसके ज़रिये से) ख़ूब नेक-नेक काम किया करें। सो जब अल्लाह तआ़ला ने उनको अपने फ़ज़्ल से (बहुत-सा माल) दे दिया तो वे उसमें बुख़्ल करने लगे (कि ज़कात न दी) और (इताअ़त से) मुँह मोड़ने लगे, और वे मुँह फेरने के (पहले ही से) आ़दी हैं। सो अल्लाह तआ़ला ने उन (के इस फ़ेल) की सज़ा में उनके दिलों में निफ़ाक़ (क़ायम) कर दिया (जो) ख़ुदा के पास जाने के दिन तक (यानी मरते दम तक) रहेगा, इस सबब से कि उन्होंने ख़ुदा तआ़ला से अपने वायदे में ख़िलाफ़ किया और इस सबब से कि वे (उस वायदे में शुरू ही से) झूठ बोलते थे (यानी वायदे को पूरा करने की नीयत उस वक़्त भी न थी, पस निफ़ाक़ तो उस वक़्त भी दिल में था जिसका परिणाम यह झूठ और वायदा-ख़िलाफ़ी करना है। फिर इस झूठ और उल्लंघन के ज़ाहिर होने से और ज़्यादा ग़ज़ब के हक़दार हुए, और उस ज़्यादा ग़ज़ब का असर यह हुआ कि वह शुरू का निफ़ाक़ अब हमेशा का और ख़त्म न होने वाला हो गया, कि तौबा भी नसीब न होगी। इसी हालत पर मरकर हमेशा हमेशा के लिये जहन्नम में रहना नसीब होगा, और बावजूद छुपे कुफ़्र के जो इस्लाम और फ़रमाँबरदारी का

इज़हार करते हैं तो) क्या उन (मुनाफ़िक़ों) को यह ख़बर नहीं कि अल्लाह तआ़ला को उनके दिल का राज़ और उनका चुपके-चुपके गोपनीय बातें करना सब मालूम है, और यह कि अल्लाह तआ़ला तमाम ग़ैब की बातों को ख़ूब जानते हैं (और इसलिये वह ज़ाहिरी इस्लाम और इताअ़त उनके काम नहीं आ सकते, ख़ास तौर पर आख़िरत में, पस जहन्नम की सज़ा ज़रूरी है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत 'यहलिफ़ू-न बिल्लाहि' में फिर मुनाफ़िक़ों का तज़किरा है, कि वे अपनी मज्लिसों में कुफ़्र के कलिमे कहते रहते हैं, फिर अगर मुसलमानों को इत्तिला हो गयी तो झूठी क़समें खाकर अपनी बराअत साबित करते हैं। इस आयत के शाने नुज़ूल में इमाम बग़वी रह. ने यह वाक़िआ़ नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ग़ज़्वा-ए-तबूक के मौक़े पर एक संबोधन किया, जिसमें मुनाफ़िक़ों की बदहाली और बुरे अन्जाम का ज़िक्र फ़रमाया। मौजूद लोगों में एक मुनाफ़िक़ जुल्लास भी मौजूद था, उसने अपनी मज्लिस में जाकर कहा कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) जो कुछ कहते हैं अगर वह सच है तो हम गधों से भी ज़्यादा बदतर हैं, उसका यह कलिमा एक सहाबी हज़रत आ़मिर बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने सुन लिया तो उन्होंने कहा बेशक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो कुछ फ़रमाया वह सच है और तुम वाक़ई गधों से भी ज़्यादा बदतर हो।

जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तबूक के सफ़र से वापस मदीना तय्यिबा पहुँचे तो आ़मिर बिन क़ैस रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह वाक़िआ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सुनाया, मगर जुल्लास अपने कहे से मुकर गया, और कहने लग कि आ़मिर बिन क़ैस ने मुझ पर तोहमत बाँधी है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दोनों को हुक्म दिया कि मिंबरे नबवी के पास खड़े होकर क़सम खायें, जुल्लास ने बेधड़क झूठी क़सम खाई और फिर दुआ़ के लिये हाथ उठाये कि या अल्लाह! अपने रसूल पर वही के द्वारा इस मामले की हक़ीक़त खोल दे। उनकी दुआ़ पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों ने आमीन कही, अभी ये लोग उस जगह से हटे भी नहीं थे कि जिब्रीले अमीन वही लेकर हाज़िर हो गये, जिसमें यही ज़िक्र हुई आयत थी।

जुल्लास ने जब आयत सुनी तो फ़ौरन खड़े होकर कहने लगे कि या रसूलल्लाह! अब मैं इक़रार करता हूँ कि यह ग़लती मुझसे हुई थी, और आ़मिर बिन क़ैस ने जो कुछ कहा वह सच था। मगर इसी आयत में हक़ तआ़ला ने मुझे तौबा का भी हक़ दे दिया है, मैं अब अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत माँगता हूँ और तौबा करता हूँ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमा ली, और बाद में यह अपनी तौबा पर क़ायम रहे। इनके हालात दुरुस्त हो गये। (तफ़सीरे मज़हरी)

कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने इसी तरह के दूसरे वाक़िआ़त इसके शाने नुज़ूल में बयान फ़रमाये हैं, ख़ुसूसन इसलिये कि इस आयत का एक जुमला यह भी है:

وَهَمُّوا بِمَا لَمْ يَنَالُوا.

यानी उन्होंने इरादा किया एक ऐसे काम का जिसमें वह कामयाब नहीं हो सके। इससे मालूम होता है कि यह आयत किसी ऐसे वाकिए से संबन्धित है जिसमें मुनाफ़िक़ों ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ कोई साज़िश की थी, जिसमें वे कामयाब नहीं हो सके। जैसे इसी ग़ज़वा-ए-तबूक से वापसी का वाकिआ मशहूर है कि बारह आदमी मुनाफ़िक़ों में से पहाड़ की एक घाटी में इस ग़र्ज़ से छुपकर बैठे थे कि जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यहाँ पहुँचे तो अचानक से एक साथ मिलकर हमला करके आपको क़त्ल कर दें, जिब्रीले अमीन ने आपको ख़बर दे दी तो आप उस रास्ते से हट गये, और उनकी साज़िश मिट्टी में मिल गयी।

और कुछ दूसरे वाकिआत भी मुनाफ़िक़ों की तरफ़ से ऐसे पेश आये हैं, मगर इसमें टकराव, या असंभावना की कोई बात नहीं, हो सकता है वो सब ही वाक़िआत इस आयत में मुराद हों।

दूसरी आयतः

وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ.

भी एक ख़ास वाकिए से संबन्धित है, जो इब्ने जरीर, इब्ने अबी हातिम, इब्ने मर्दूया, तबरानी और बैहक़ी ने हज़रत अबू उमामा रज़ियल्लाहु अ़न्हु बाहिली की रिवायत से नक़ल किया है कि एक शख़्स सालबा इब्ने हातिब अन्सारी ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर यह दरख़्वास्त की कि आप दुआ करें कि मैं मालदार हो जाऊँ। आपने फ़रमाया कि क्या तुमको मेरा तरीक़ा पसन्द नहीं, क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, अगर में चाहता तो मदीना के पहाड़ सोना बनकर मेरे साथ फिरा करते, मगर मुझे ऐसी मालदारी पसन्द नहीं। यह शख़्स चला गया, मगर दोबारा फिर आया और फिर यही दरख़्वास्त इस वायदे और इक़रार के साथ पेश की कि अगर मुझे माल मिल गया तो मैं हर हक़ वाले को उसका हक़ पहुँचाऊँगा। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दुआ कर दी, जिसका असर यह ज़ाहिर हुआ कि उसकी बकरियों में बेपनाह ज़्यादती शुरू हुई, यहाँ तक कि मदीना की जगह उस पर तंग हो गयी तो बाहर चला गया, और ज़ोहर अ़सर की दो नमाज़ें मदीना में आकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ पढ़ता था, बाक़ी नमाज़ें भी जंगल में जहाँ उसका यह माल था वहीं अदा करता था।

फिर उन्हीं बकरियों में और ज़्यादती इतनी हो गयी कि यह जगह भी तंग हो गयी और मदीना शहर से दूर जाकर कोई जगह ली, वहाँ से सिर्फ़ जुमे की नमाज़ के लिये मदीना में आता और पाँचों वक़्त की नमाज़ें वहीं पढ़ने लगा। फिर उस माल की अधिकता और बढ़ी तो यह जगह भी छोड़नी पड़ी और मदीना से बहुत दूर चला गया, जहाँ जुमा और जमाअ़त सबसे मेहरूम हो गया।

कुछ अ़रसे के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लोगों से उसका हाल मालूम

किया तो लोगों ने बतलाया कि उसका माल इतना ज़्यादा हो गया कि शहर के क़रीब में उसकी गुंजाईश ही नहीं, इसलिये किसी दूर जगह पर जाकर वह रहने लगा है, और अब यहाँ नज़र नहीं पड़ता। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह सुनकर तीन मर्तबा फ़रमाया "वै-ह साल-ब-त" यानी सालबा पर अफ़सोस है, सालबा पर अफ़सोस है, सालबा पर अफ़सोस है।

इत्तिफ़ाक़ से उसी ज़माने में सदक़ात की आयत नाज़िल हो गयी, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुसलमानों के सदक़ात वसूल करने का हुक्म दिया गया है यानीः

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً.

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मवेशियों (जानवरों) के सदक़ात का मुकम्मल क़ानून लिखवाकर दो शख़्सों को सदक़े के कार्यकर्ता की हैसियत से मुसलमानों के मवेशी के सदक़ात वसूल करने के लिये भेज दिया, और उनको हुक्म दिया कि सालबा बिन हातिब के पास भी पहुँचें, और बनी सुलैम के एक और शख़्स के पास जाने का भी हुक्म दिया।

ये दोनों जब सालबा के पास पहुँचे और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़रमान दिखाया तो सालबा कहने लगा कि यह तो जिज़या (एक तरह का टैक्स) हो गया, जो ग़ैर-मुस्लिमों से लिया जाता है, और फिर कहा कि अच्छा अब तो आप जायें जब वापस हों तो यहाँ आ जायें। ये दोनों चले गये।

और दूसरे शख़्स सुलैमी ने जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़रमान सुना तो अपने मवेशी ऊँट और बकरियों में जो सबसे बेहतर जानवर थे, सदक़े के निसाब के मुताबिक़ वो जानवर लेकर ख़ुद रसूले पाक के उन दोनों क़ासिदों के पास पहुँच गये, उन्होंने कहा कि हमें तो हुक्म यह है कि जानवरों में आला (उच्च क्वालिटी) छाँट कर न लें, बल्कि दरमियाने दर्जे के वसूल करें, इसलिये हम तो ये नहीं ले सकते। सुलैमी ने ज़िद की कि मैं अपनी ख़ुशी से यही पेश करना चाहता हूँ, यही जानवर क़ुबूल कर लीजिए।

फिर ये दोनों हज़रात दूसरे मुसलमानों से सदक़ात वसूल करते हुए वापस आये तो फिर सालबा के पास पहुँचे, तो उसने कहा कि लाओ सदक़ात का वह क़ानून मुझे दिखलाओ। फिर उसको देखकर यही कहने लगा कि यह तो एक क़िस्म का जिज़या हो गया, जो मुसलमानों से नहीं लेना चाहिये। अच्छा अब तो आप जायें मैं ग़ौर करूँगा फिर कोई फ़ैसला करूँगा।

जब ये दोनों हज़रात वापस मदीना तय्यिबा पहुँचे और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने इनसे हालात पूछने से पहले ही फिर वह कलिमा दोहराया जो पहले फ़रमाया थाः

يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ.

(यानी सालबा पर सख़्त अफ़सोस है) यह जुमला तीन मर्तबा इरशाद फ़रमाया। फिर सुलैमी शख़्स के मामले पर ख़ुश होकर उसके लिये दुआ फ़रमाई। इस वाक़िए पर यह आयत उतरीः

وَمِنْهُمْ مَّنْ عٰهَدَ اللّٰهَ.

यानी उनमें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने अल्लाह से अ़हद किया था कि अगर अल्लाह तआ़ला उनको माल अ़ता फ़रमा देंगे तो वे सदका ख़ैरात करेंगे, और उम्मत के नेक लोगों की तरह सब हक़ वालों, रिश्तेदारों और ग़रीबों के हुक़ूक़ अदा करेंगे। फिर जब अल्लाह ने उनको अपने फ़ज़्ल से माल दिया तो बुख़्ल (कन्जूसी) करने लगे, और अल्लाह और रसूल की इताअ़त से फिर गये।

فَاَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِيْ قُلُوْبِهِمْ

यानी अल्लाह तआ़ला ने उनकी इस बद-अ़मली और अ़हद के ख़िलाफ़ करने के नतीजे में उनके दिलों में निफ़ाक़ को और पुख़्ता कर दिया, कि अब उनको तौबा की तौफ़ीक़ ही न होगी।

फ़ायदा

इससे मालूम हुआ कि कुछ बुरे आमाल की नहूसत ऐसी होती है कि तौबा की तौफ़ीक़ छीन ली जाती है। नऊज़ु बिल्लाहि मिन्हा।

इमाम इब्ने जरीर ने हज़रत अबू उमामा की तफ़सीली रिवायत जो अभी ज़िक्र की गयी है इसके आख़िर में लिखा है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सालबा के लियेः

يَاوَيْحَ ثَعْلَبَةَ

तीन मर्तबा फ़रमाया तो उस मज्लिस में सालबा के कुछ क़रीबी और रिश्तेदार लोग भी मौजूद थे। यह सुनकर उनमें से एक आदमी फ़ौरन सफ़र करके सालबा के पास पहुँचा और उसको बुरा-भला कहा, और बतलाया कि तुम्हारे बारे में क़ुरआन की आयत नाज़िल हो गयी। यह सुनकर सालबा घबराया और मदीना हाज़िर होकर दरख़्वास्त की कि मेरा सदका क़ुबूल कर लिया जाये। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे हक़ तआ़ला ने तुम्हारा सदका क़ुबूल करने से मना फ़रमा दिया है, यह सुनकर सालबा अपने सर पर ख़ाक डालने लगा।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह तो तुम्हारा अपना अ़मल है, मैंने तुम्हें हुक्म दिया तुमने पालन न किया, अब तुम्हारा सदका क़ुबूल नहीं हो सकता। सालबा नाकाम वापस हो गया, और उसके कुछ दिन बाद ही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी और सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ख़लीफ़ा हुए तो सालबा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहा कि मेरा सदका क़ुबूल कर लीजिये। हज़रत सिद्दीक़े अकबर ने फ़रमाया जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ुबूल नहीं किया तो मैं कैसे क़ुबूल कर सकता हूँ।

फिर सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की वफ़ात के बाद सालबा, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और वही दरख़्वास्त की और वही जवाब मिला जो सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने दिया था। फिर हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़माना-ए-ख़िलाफ़त में उनसे दरख़्वास्त की, उन्होंने भी इनकार कर दिया, और ख़िलाफ़ते उस्मान के ज़माने में ही सालबा मर गया (अल्लाह तआ़ला आमाल की बुराई से हमारी हिफ़ाज़त

फ़रमाये)। (तफ़सीरे मज़हरी)

मसला

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि जब सालबा तौबा करके हाज़िर हो गया तो उसकी तौबा क्यों क़ुबूल न की गयी। वजह ज़ाहिर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को वही के ज़रिये मालूम हो गया था कि यह अब भी इख़्लास के साथ (सच्चे दिल से) तौबा नहीं कर रहा है, इसके दिल में निफ़ाक़ मौजूद है, केवल वक़्ती मस्लेहत से मुसलमानों को धोखा देकर राज़ी करना चाहता है, इसलिये क़ुबूल नहीं। और जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसको मुनाफ़िक़ क़रार दे दिया तो बाद के ख़ुलीफ़ाओं को उसका सदक़ा क़ुबूल करने का हक़ नहीं रहा, क्योंकि ज़कात के लिये मुसलमान होना शर्त है, अलबत्ता रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद चूँकि किसी शख़्स के दिल का निफ़ाक़ यक़ीनी और निश्चित तौर पर किसी को मालूम नहीं हो सकता इसलिये आईन्दा का हुक्म यही है कि जो शख़्स तौबा कर ले और इस्लाम व ईमान का इक़रार कर ले तो उसके साथ मुसलमानों के जैसा मामला किया जाये, चाहे उसके दिल में कुछ भी हो। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

اَلَّذِيْنَ يَلْمِزُوْنَ الْمُطَّوِّعِيْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ فِى الصَّدَقٰتِ وَالَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ
اِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُوْنَ مِنْهُمْ ۭ سَخِرَ اللّٰهُ مِنْهُمْ ۡ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝ اِسْتَغْفِرْ لَهُمْ
اَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ ۭ اِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِيْنَ مَرَّةً فَلَنْ يَّغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوْا
بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۝ ع ١٠/٨

अल्लज़ी-न यल्मिज़ूनल् मुत्तव्विअ़ी-न मिनल् मुअ्मिनी-न फ़िस्स-दक़ाति वल्लज़ी-न ला यजिदू-न इल्ला जुह्दहुम् फ़-यस्ख़रू-न मिन्हुम्, सख़िरल्लाहु मिन्हुम् व लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (79) इस्तग़्फ़िर् लहुम् औ ला तस्तग़्फ़िर् लहुम्, इन् तस्तग़फ़िर् लहुम् सब्अ़ी-न मर्रतन् फ़-लंय्यग़्फ़िरल्लाहु लहुम्, ज़ालि-क	वे लोग जो ताने मारते हैं उन मुसलमानों पर जो दिल खोलकर ख़ैरात करते हैं और उन पर जो नहीं रखते मगर अपनी मेहनत का, फिर उन पर ठट्ठे करते हैं, अल्लाह ने उनसे ठट्ठा किया है, और उनके लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है। (79) तू उनके लिये बख़्शिश माँग या न माँग, अगर तू उनके लिये सत्तर बार बख़्शिश माँगे तो भी हरगिज़ न बख़्शेगा उनको अल्लाह, यह इस वास्ते कि वे मुन्किर हुए

बिअन्नहुम् क-फ़रू बिल्लाहि व रसूलिही, वल्लाहु ला यहिदल् कौमल्-फ़ासिक़ीन (80) ✪	अल्लाह से और उसके रसूल से, और अल्लाह रास्ता नहीं देता नाफ़रमान लोगों को। (80) ✪

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये (मुनाफ़िक़ लोग) ऐसे हैं कि नफ़्ली सदक़ा देने वाले मुसलमानों पर सदक़ात के बारे में (थोड़ा होने पर) ताना मारते हैं, और (ख़ासकर) उन लोगों पर (और ज़्यादा) जिनको सिवाय मेहनत (व मज़दूरी की आमदनी) के और कुछ मयस्सर नहीं होता (और वे बेचारे उसी मज़दूरी में से हिम्मत करके कुछ सदक़ा निकाल देते हैं), यानी उनसे मज़ाक़-ठट्ठा करते हैं (यानी ताना तो सब ही को देते हैं कि क्या थोड़ी सी चीज़ सदक़े में लाये हो, और उन मेहनत-कश ग़रीबों का मज़ाक़ भी उड़ाते हैं कि लो ये भी सदक़ा देने के क़ाबिल हो गये) अल्लाह उनको इस मज़ाक़ उड़ाने का (तो ख़ास) बदला देगा और (उमूमी ताना मारने का यह बदला मिलेगा ही कि) उनके लिए (आख़िरत में) दर्दनाक सज़ा होगी। आप चाहे उन (मुनाफ़िक़ों) के लिए इस्तिग़फ़ार (माफ़ी व मग़फ़िरत की प्रार्थना) करें या उनके लिए इस्तिग़फ़ार न करें (दोनों हाल बराबर हैं कि उनको उससे कोई नफ़ा नहीं होगा, उनकी मग़फ़िरत नहीं की जायेगी) अगर आप उनके लिए सत्तर बार (यानी बहुत ज़्यादा) भी इस्तिग़फ़ार करेंगे तब भी अल्लाह तआ़ला उनको न बख़्शेगा। यह इस वजह से है कि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया, और अल्लाह तआ़ला ऐसे नाफ़रमान लोगों को (जो कभी ईमान और हक़ की तलब ही न करें) हिदायत नहीं किया करता (इस वजह से ये उम्र भर कुफ़्र ही पर क़ायम रहे और उसी पर मर गये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में नफ़्ली सदक़ात देने वाले मुसलमानों पर मुनाफ़िक़ों के ताने मारने व कटाक्ष करने का ज़िक्र है। सही मुस्लिम में है कि हज़रत अबू मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हमें सदक़े का हुक्म दिया गया और हमारा हाल यह था कि हम मेहनत मज़दूरी करते थे (कोई माल हमारे पास न था, उसी मज़दूरी से जो कुछ हमें मिलता था उसी में से सदक़ा भी निकालते थे)। चुनाँचे अबू अ़क़ील ने आधा साअ़ (तक़रीबन पौने दो सैर) सदक़ा पेश किया, दूसरा आदमी आया उसने उससे कुछ ज़्यादा सदक़ा किया। मुनाफ़िक़ लोग उन पर ताने मारने लगे कि क्या हक़ीर और ज़रा सी चीज़ सदक़े में लाये, अल्लाह तआ़ला को ऐसी चीज़ की ज़रूरत नहीं। और जिसने कुछ ज़्यादा सदक़ा किया उस पर यह इल्ज़ाम लगाया कि उसने लोगों को दिखलाने के लिये सदक़ा किया है। इस पर यह आयत नाज़िल हुई।

दूसरी आयत में जो मुनाफ़िक़ों के बारे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह

फ़रमाया गया कि आप उनके लिये इस्तिग़फ़ार करें या न करें बराबर है, और कितना ही इस्तिग़फ़ार करें उनकी मग़फ़िरत नहीं होगी, इसका पूरा बयान आगे आने वाली आयत 'ला तुसल्लि.......'' (यानी आयत नम्बर 84) के तहत आयेगा।

فَرِحَ الْمُخَلَّفُوْنَ بِمَقْعَدِهِمْ خِلٰفَ رَسُوْلِ اللّٰهِ وَكَرِهُوْٓا اَنْ يُّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ
وَاَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَقَالُوْا لَا تَنْفِرُوْا فِي الْحَرِّ ۭ قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ اَشَدُّ حَرًّا ۭ لَوْ كَانُوْا يَفْقَهُوْنَ ۝
فَلْيَضْحَكُوْا قَلِيْلًا وَّلْيَبْكُوْا كَثِيْرًا ۚ جَزَاۗءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝ فَاِنْ رَّجَعَكَ اللّٰهُ اِلٰى طَاۗىِٕفَةٍ
مِّنْهُمْ فَاسْتَاْذَنُوْكَ لِلْخُرُوْجِ فَقُلْ لَّنْ تَخْرُجُوْا مَعِيَ اَبَدًا وَّلَنْ تُقَاتِلُوْا مَعِيَ عَدُوًّا ۭ
اِنَّكُمْ رَضِيْتُمْ بِالْقُعُوْدِ اَوَّلَ مَرَّةٍ فَاقْعُدُوْا مَعَ الْخٰلِفِيْنَ ۝

फ़रिहल्-मुख़ल्लफ़ू-न बिमक़्अ़दिहिम् ख़िला-फ़ रसूलिल्लाहि व करिहू अंय्युजाहिदू बिअम्वालिहिम् व अन्फ़ुसिहिम् फ़ी सबीलिल्लाहि व क़ालू ला तन्फ़िरू फ़िल्हर्रि, क़ुल् नारु जहन्न-म अशद्दु हर्रन्, लौ कानू यफ़्क़हून (81) फ़ल्यज़्हकू क़लीलंव् वल्यब्कू कसीरन् जज़ाअम्-बिमा कानू यक्सिबून (82) फ़-इर्र-ज-अ़कल्लाहु इला ताइ-फ़तिम् मिन्हुम् फ़स्तअ्-ज़नू-क लिल्ख़ुरूजि फ़क़ुल्-लन् तख़्रुजू मअि-य अ-बदंव्-व लन् तुक़ातिलू मअि-य अ़दुव्वन्, इन्नकुम् रज़ीतुम् बिल्क़ुअूदि अव्व-ल मर्रतिन् फ़क़्अुदू मअ़ल्-ख़ालिफ़ीन (83)	ख़ुश हो गये पीछे रहने वाले अपने बैठ रहने से अलग होकर रसूलुल्लाह से और घबराये इससे कि लड़ें अपने माल से और जान से अल्लाह की राह में, और बोले कि मत कूच करो गर्मी में, तू कह- दोज़ख़ की आग सख़्त गर्म है, अगर उनको समझ होती। (81) सो वे हंस लें थोड़ा और रोयें बहुत ज़्यादा, बदला उसका जो वे कमाते थे। (82) सो अगर फिर ले जाये तुझको अल्लाह किसी फ़िर्क़े की तरफ़ उनमें से, फिर इजाज़त चाहें तुझसे निकलने की तो तू कह देना कि तुम हरगिज़ न निकलोगे मेरे साथ कभी, और न लड़ोगे मेरे साथ होकर किसी दुश्मन से, तुमको पसन्द आया बैठ रहना पहली बार सो बैठे रहो पीछे रहने वालों के साथ। (83)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये पीछे रह जाने वाले खुश हो गये अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के (जाने के) बाद अपने बैठे रहने पर, और इनको अल्लाह तआ़ला की राह में अपने माल और जान के साथ जिहाद करना नागवार हुआ (दो वजह से- अव्वल कुफ़्र, दूसरे आराम-तलबी) और (दूसरों को भी) कहने लगे कि तुम (ऐसी तेज़) गर्मी में (घर से) मत निकलो। आप (जवाब में) कह दीजिये कि जहन्नम की आग (इससे भी) ज़्यादा (तेज़ और) गर्म है (सो ताज्जुब है कि इस गर्मी से तो बचते हो और जहन्नम में जाने का खुद सामान कर रहे हो, कि कुफ़्र व मुख़ालफ़त को नहीं छोड़ते) क्या ख़ूब होता अगर वे समझते। सो (इन ज़िक्र हुई बातों का नतीजा यह है कि दुनिया में) थोड़े दिनों हंस (खेल) लें और (फिर आख़िरत में) बहुत दिनों (यानी हमेशा) रोते रहें (यानी हंसना थोड़े दिनों का है फिर रोना हमेशा-हमेशा का), उन कामों के बदले में जो कुछ (कुफ़्र, निफ़ाक़ और मुख़ालफ़त) किया करते थे।

(जब उनका हाल मालूम हो गया) तो अगर खुदा तआ़ला आपको (इस सफ़र से मदीना को सही-सालिम) उनके किसी गिरोह की तरफ़ वापस लाये (गिरोह इसलिये कहा कि मुम्किन है कि कुछ लोग उस वक़्त तक मर जायें, या कोई कहीं चला जाये और) फिर ये लोग (खुशामद करने और पहले इल्ज़ाम को दूर करने के लिये किसी जिहाद में आपके साथ) चलने की इजाज़त माँगें (और दिल में उस वक़्त भी यही होगा कि ऐन वक़्त पर कुछ बहाना कर देंगे) तो आप यूँ कह दीजिए कि (अगरचे इस वक़्त बातें बना रहे हो, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे दिल की बात बतला दी है, इसलिये पूरे एतिमाद के साथ कहता हूँ कि) तुम कभी भी मेरे साथ (जिहाद में) न चलोगे, और न मेरे साथ होकर किसी (दीन के) दुश्मन से लड़ोगे (जो कि असली मक़सद है चलने से, क्योंकि) तुमने पहले भी बैठे रहने को पसन्द किया था (और अब भी इरादा वही है) तो (ख़्वाह-मख़्वाह झूठी बातें क्यों बनाते हो, बल्कि पहले की तरह अब भी) उन लोगों के साथ बैठे रहो (जो वाक़ई) पीछे रह जाने के लायक़ ही हैं (किसी मजबूरी की वजह से जैसे बूढ़े, बच्चे और औरतें)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर से मुनाफ़िक़ों के हालात का सिलसिला चल रहा है जो ग़ज़वा-ए-तबूक में आ़म हुक्म के बावजूद शरीक नहीं हुए। उपर्युक्त आयतों में भी उन्हीं का एक हाल और फिर उसकी आख़िरत की सज़ा की वईद और दुनिया में आईन्दा के लिये उनका नाम इस्लाम के मुजाहिदों की फ़ेहरिस्त से ख़ारिज कर देना और आईन्दा उनको किसी जिहाद में शिर्कत की इजाज़त न होना बयान हुआ है।

'मुख़ल्लफ़ू-न' मुख़ल्लफ़ुन् की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं मतरूक, यानी जिसको छोड़ दिया गया हो। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये लोग तो यह समझकर खुश हो रहे

हैं कि हमने अपनी जान को मुसीबत में डालने से बचाया और जिहाद में शिर्कत नहीं की, मगर हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआ़ला ने उनको इस क़ाबिल नहीं समझा कि वे इस फ़ज़ीलत (सम्मान) को पा सकें, इसलिये वे जिहाद के छोड़ने वाले नहीं बल्कि वे ख़ुद छोड़े हुए हैं, कि अल्लाह व रसूल ने ही उनको छोड़ देने के क़ाबिल समझा।

خِلٰفَ رَسُوْلِ اللّٰهِ.

लफ़्ज़ 'ख़िलाफ़' के मायने यहाँ 'पीछे' और 'बाद' के भी हो सकते हैं। अबू उबैद ने यही मायने लिये हैं, जिसका मतलब यह हुआ कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के जिहाद पर चले जाने के बाद आपके पीछे रह जाने पर ख़ुश हो रहे हैं, जो दर हक़ीक़त ख़ुशी की चीज़ नहीं।

दूसरे मायने ख़िलाफ़ के इस जगह मुख़ालफ़त भी हो सकते हैं, कि ये लोग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म की मुख़ालफ़त करके घर में बैठे रहे, और सिर्फ़ ख़ुद ही नहीं बैठे बल्कि दूसरों को भी यह तालीम की कि:

لَا تَنْفِرُوْا فِي الْحَرِّ.

यानी गर्मी के ज़माने में जिहाद के लिये न निकलो।

यह पहले मालूम हो चुका है कि ग़ज़वा-ए-तबूक का हुक्म उस वक़्त हुआ था जबकि गर्मी सख़्त पड़ रही थी, हक़ तआ़ला ने उनकी बात का जवाब यह दिया:

قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ اَشَدُّ حَرًّا.

यानी ये बदनसीब इस वक़्त की गर्मी को तो देख रहे हैं और उससे बचने की फ़िक्र कर रहे हैं, इसके नतीजे में ख़ुदा और रसूल के हुक्म की नाफ़रमानी पर जो जहन्नम की आग से साबक़ा पड़ने वाला है उसकी फ़िक्र नहीं करते। क्या यह मौसम की गर्मी जहन्नम की गर्मी से ज़्यादा है? उसके बाद फ़रमाया:

فَلْيَضْحَكُوْا قَلِيْلًا..................الخ

जिसके लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि हंसो थोड़ा, रोओ ज़्यादा। यह लफ़्ज़ अगरचे हुक्म के लफ़्ज़ के साथ लाया गया है मगर मुफ़स्सिरीन हज़रात ने इसको ख़बर (सूचना देने) के मायने में क़रार दिया है, और हुक्म के लफ़्ज़ से ज़िक्र करने की यह हिक्मत बयान की है कि ऐसा होना निश्चित और यक़ीनी है। यानी यह बात यक़ीनी तौर पर होने वाली है कि इन लोगों की यह ख़ुशी और हंसी सिर्फ़ चन्द दिन की है, उसके बाद आख़िरत में हमेशा के लिये रोना ही रोना होगा। इब्ने अबी हातिम ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस आयत की तफ़सीर में नक़ल किया है कि:

اَلدُّنْيَا قَلِيْلٌ فَلْيَضْحَكُوْا فِيْهَا مَاشَاءُوْا فَاِذَا انْقَطَعَتِ الدُّنْيَا وَصَارُوْآ اِلَى اللّٰهِ فَلْيَسْتَانِفُوا الْبُكَآءَ بُكَآءً لَاتَنْقَطِعُ اَبَدًا.

"दुनिया चन्द दिन की है, इसमें जितना चाहो हंस लो। फिर जब दुनिया ख़त्म होगी और अल्लाह के पास हाज़िर होंगे तो रोना शुरू होगा, जो कभी ख़त्म न होगा।"

दूसरी आयत में 'लन् तख़्रुजू' का इरशाद है। इसका मफ़्हूम उपर्युक्त ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में तो यह लिया गया है कि ये लोग अगर आईन्दा किसी जिहाद में शिर्कत का इरादा भी करें तो चूँकि इनके दिलों में ईमान नहीं, वह इरादा भी इख़्लास (नेक नीयती) से न होगा। जब निकलने का वक़्त आयेगा उस वक़्त पहले की तरह हीले-बहाने करके टल जायेंगे। इसलिये आपको हुक्म हुआ कि जब वे किसी जहाद में शरीक होने को ख़ुद भी कहें तो आप यह असल हक़ीक़त उनको बतला दें कि तुम्हारे किसी क़ौल व फ़ेल पर भरोसा नहीं, तुम न जिहाद को निकलोगे न इस्लाम के किसी दुश्मन से मेरे साथ जंग व लड़ाई करोगे।

मुफ़स्सिरीन में के अक्सर हज़रात ने फ़रमाया है कि यह हुक्म उनके लिये दुनियावी सज़ा के तौर पर नाफ़िज़ किया गया, कि अगर वे सचमुच किसी जिहाद में शिर्कत को कहें तो भी उन्हें शरीक न किया जाये।

وَلَا تُصَلِّ عَلٰٓى اَحَدٍ مِّنْهُمْ مَّاتَ اَبَدًا وَّلَا تَقُمْ عَلٰى قَبْرِهٖ ؕ اِنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَ رَسُوْلِهٖ وَمَاتُوْا وَهُمْ فٰسِقُوْنَ ۞

व ला तुसल्लि अ़ला अ-हदिम् मिन्हुम् मा-त अ-बदंव्-व ला तक़ुम् अ़ला क़ब्रिही, इन्नहुम् क-फ़रू बिल्लाहि व रसूलिही व मातू व हुम् फ़ासिक़ून (84)	और नमाज़ न पढ़ उनमें से किसी पर जो मर जाये कभी, और न खड़ा हो उसकी क़ब्र पर, वे मुन्किर हुए अल्लाह से और उसके रसूल से, और वे मर गये नाफ़रमान। (84)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उनमें कोई मर जाये तो उस (के जनाज़े) पर कभी नमाज़ न पढ़िये और न (दफ़न के लिये) उसकी क़ब्र पर खड़े होईए, क्योंकि उन्होंने अल्लाह और उसके रसूल के साथ कुफ़्र किया है और वे कुफ़्र ही की हालत में मरे हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सही हदीसों से उम्मत की सर्वसम्मति से साबित है कि यह आयत अ़ब्दुल्लाह इब्ने उबई मुनाफ़िक़ की मौत और उस पर जनाज़े की नमाज़ के बारे में नाज़िल हुई, और बुख़ारी व मुस्लिम की रिवायत से साबित है कि उसके जनाज़े पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नमाज़ पढ़ी, पढ़ने के बाद यह आयत नाज़िल हुई और उसके बाद आपने कभी किसी मुनाफ़िक़ के जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी।

सही मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इस आयत के नाज़िल होने के वाक़िए की यह तफ़सील बयान की गयी है कि जब अ़ब्दुल्लाह बिन उबई इब्ने सलूल मर गया तो उसके बेटे हज़रत अ़ब्दुल्लाह जो पक्के सच्चे मुसलमान और सहाबी थे, वह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और दरख़्वास्त की कि आप अपना कुर्ता अ़ता फ़रमायें ताकि में अपने बाप को उसका कफ़न पहनाऊँ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी क़मीस मुबारक अ़ता फ़रमा दी। फिर हज़रत अ़ब्दुल्लाह ने यह भी दरख़्वास्त की कि आप उसके जनाज़े की नमाज़ भी पढ़ायें, आपने क़ुबूल फ़रमा लिया और नमाज़े जनाज़ा के लिये खड़े हो गये तो हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने आपका कपड़ा पकड़कर अ़र्ज़ किया कि आप इस मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा पढ़ते हैं हालाँकि अल्लाह तआ़ला ने आपको इनकी नमाज़े जनाज़ा से मना फ़रमा दिया है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुझे अल्लाह तआ़ला ने इख़्तियार दिया है कि मैं दुआ़-ए-मग़फ़िरत करूँ या न करूँ, और आयत में जो सत्तर मर्तबा इस्तिग़फ़ार पर भी मग़फ़िरत न होने का ज़िक्र है तो मैं सत्तर मर्तबा से ज़्यादा इस्तिग़फ़ार कर सकता हूँ। आयत से मुराद सूरः तौबा की वही आयत है जो अभी गुज़र चुकी है, यानीः

اِسْتَغْفِرْ لَهُمْ اَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ اِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِيْنَ مَرَّةً فَلَنْ يَّغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ.

फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़ी, नमाज़ के बाद ही यह आयत नाज़िल हुईः

لَا تُصَلِّ عَلٰٓى اَحَدٍ مِّنْهُمْ............الخ.

(यानी यही आयत नम्बर 84) चुनाँचे उसके बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी किसी मुनाफ़िक़ के जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी।

ज़िक्र हुए वाक़िए पर चन्द शुब्हात और उनके जवाब

यहाँ एक सवाल तो यह पैदा होता है कि अ़ब्दुल्लाह बिन उबई एक ऐसा मुनाफ़िक़ था जिसका निफ़ाक़ विभिन्न वक़्तों में ज़ाहिर भी हो चुका था, और सब मुनाफ़िक़ों का सरदार माना जाता था, उसके साथ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह विशेष सुलूक कैसे हुआ कि उसके कफ़न के लिये अपनी क़मीस मुबारक अ़ता फ़रमा दी?

इसका जवाब यह है कि इसके दो सबब हो सकते हैं- अव्वल उसके बेटे जो पक्के-सच्चे सहाबी थे, उनकी दरख़्वास्त पर सिर्फ़ उनकी दिलजोई के लिये ऐसा किया गया। दूसरा सबब एक और भी हो सकता है जो बुख़ारी की हदीस में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि ग़ज़वा-ए-बदर के मौक़े पर जब कुछ क़ुरैशी सरदार गिरफ़्तार किये गये तो उनमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा अ़ब्बास भी थे। आपने देखा कि उनके बदन पर कुर्ता नहीं, तो सहाबा से इरशाद फ़रमाया कि इनको क़मीस पहना दी जाये। हज़रत अ़ब्बास

रज़ियल्लाहु अन्हु लम्बे क़द के थे, अ़ब्दुल्लाह बिन उबई के सिवा किसी की क़मीस उनके बदन पर फ़िट न आयी, तो अ़ब्दुल्लाह बिन उबई की क़मीस लेकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने चचा अ़ब्बास को पहना दी थी, उसके इसी एहसान का बदला अदा करने के लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी क़मीस उनको अ़ता फ़रमा दी। (क़ुर्तुबी)

दूसरा सवाल यहाँ यह है कि फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह अ़र्ज़ किया कि अल्लाह तआ़ला ने आपको मुनाफ़िक़ के जनाज़े की नमाज़ से मना फ़रमाया है, यह किस बिना पर कहा? क्योंकि उससे पहले किसी आयत में स्पष्ट तौर पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा से मना नहीं फ़रमाया गया। इससे ज़ाहिर यही है कि हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने मनाही का मज़मून इसी सूरः तौबा की ऊपर बयान हुई आयत 'इस्तग़्फ़िर लहुम.......................' से समझा होगा। तो अब सवाल यह होता है कि अगर यह आयत नमाज़े जनाज़ा की मनाही पर दलालत करती है तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इससे मनाही क्यों न क़रार दी, बल्कि यह फ़रमाया कि इस आयत में मुझे इख़्तियार दिया गया है।

जवाब यह है कि दर हक़ीक़त आयत के अलफ़ाज़ का ज़ाहिरी मतलब इख़्तियार ही देना है, और यह भी ज़ाहिर है कि सत्तर मर्तबा का ज़िक्र भी इस जगह सीमित करने के लिये नहीं बल्कि अधिकता बयान करने के लिये है। तो इस आयत का हासिल इसके ज़ाहिरी मफ़्हूम के एतिबार से यह हो गया कि मुनाफ़िक़ की मग़फ़िरत तो न होगी, चाहे आप कितनी ही मर्तबा इस्तिग़फ़ार कर लें। लेकिन इसमें स्पष्ट तौर पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस्तिग़फ़ार करने से रोका भी नहीं गया, और क़ुरआने करीम की सूरः यासीन की एक दूसरी आयत इसकी नज़ीर है, जिसमें फ़रमाया गया है:

سَوَآءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنْذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ۝

जैसे इस आयत ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को डराने और तब्लीग़ से मना नहीं किया बल्कि दूसरी आयतों से तब्लीग़ व दावत का सिलसिला उनके लिये भी जारी रखना साबित है:

بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ.

और:

اِنَّمَآ اَنْتَ مُنْذِرٌ وَّلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ.

वग़ैरह।

हासिल यह है कि आयतः

ءَاَنْذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ.

से तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इख़्तियार ही देना साबित हुआ था, फिर मुस्तक़िल दलील से डराने को जारी रखना साबित हो गया। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम ने उक्त आयत से भी यह तो समझ लिया था कि इसकी मग़फ़िरत नहीं होगी, मगर किसी दूसरी आयत के ज़रिये अब तक आपको इस्तिग़फ़ार करने से रोका भी नहीं गया था।

और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जानते थे कि मेरी क़मीस से या नमाज़ पढ़ाने से इसकी तो मग़फ़िरत नहीं होगी, मगर इससे दूसरी इस्लामी मस्लेहतें हासिल होने की उम्मीद थी, कि उसके ख़ानदान के लोग और दूसरे काफ़िर जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह मामला उसके साथ देखेंगे तो वे इस्लाम के क़रीब आ जायेंगे और मुसलमान हो जायेंगे, और स्पष्ट मनाही नमाज़ पढ़ने की उस वक़्त तक मौजूद न थी, इसलिये आपने नमाज़ पढ़ ली।

इस जवाब का सुबूत एक तो वह जुमला है जो सही बुख़ारी में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि अगर मुझे यह मालूम होता कि सत्तर मर्तबा से ज़्यादा दुआ़-ए-मग़फ़िरत करने से इसकी मग़फ़िरत हो जायेगी तो मैं यह भी करता। (क़ुर्तुबी)

दूसरा सुबूत वह हदीस है जिसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरा कुर्ता उसको अल्लाह के अ़ज़ाब से नहीं बचा सकता, मगर मैंने यह काम इसलिये किया कि मुझे उम्मीद है कि इस अ़मल से उसकी क़ौम के हज़ार आदमी मुसलमान हो जायेंगे। चुनाँचे मग़ाज़ी इब्ने इस्हाक़ और तफ़सीर की कुछ किताबों में है कि इस वाक़िए को देखकर ख़ज़रज क़बीले के एक हज़ार आदमी मुसलमान हो गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी जिल्द 8 पेज 221)

ख़ुलासा यह है कि पहली आयत से ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी यह तो यक़ीन हो गया था कि हमारे किसी अ़मल से इस मुनाफ़िक़ की मग़फ़िरत नहीं होगी, मगर चूँकि आयत के ज़ाहिरी अलफ़ाज़ में इख़्तियार दिया गया था और किसी दूसरी आयत से भी इसकी मनाही अब तक नहीं आई थी, दूसरी तरफ़ एक काफ़िर के एहसान से दुनिया में निजात हासिल करने का फ़ायदा भी था, और इस मामले में दूसरे काफ़िरों के मुसलमान होने की उम्मीद व संभावना भी, इसलिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नमाज़ पढ़ने को तरजीह दी। और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह समझा कि जब इस आयत से यह साबित हो गया कि मग़फ़िरत नहीं होगी तो इसके लिये नमाज़े जनाज़ा पढ़कर दुआ़-ए-मग़फ़िरत करना एक बेकार और बेफ़ायदा काम है, जो नुबुव्वत की शान के ख़िलाफ़ है। इसी को उन्होंने मनाही से ताबीर फ़रमाया, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अगरचे इस फ़ेल को अपने आप में मुफ़ीद न समझते थे मगर दूसरों के इस्लाम लाने का फ़ायदा सामने था, इसलिये यह काम बेकार न रहा। इस तरह न रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अ़मल पर कोई शुब्हा रहता है न फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के क़ौल पर। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

अलबत्ता जब स्पष्ट तौर पर यह आयत नाज़िल हो गयी 'ला तुसल्लि' (यानी यही सूरः तौबा की आयत 84) तो मालूम हुआ कि अगरचे नमाज़ पढ़ने में एक दीनी मस्लेहत आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने थी, मगर उसमें एक ख़राबी और भी थी, जिसकी तरफ़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ध्यान नहीं हुआ, वह यह कि ख़ुद सच्चे मुसलमानों में इस अ़मल से एक बेदिली पैदा होने का ख़तरा था कि इनके यहाँ सच्चे मुसलमान और मुनाफ़िक़

सब एक पल्ले में तौले जाते हैं। इस ख़तरे को सामने रखते हुए क़ुरआन में यह मनाही नाज़िल हो गयी, और फिर कभी आपने किसी मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा नहीं पढ़ी।

मसलाः इस आयत से मालूम हुआ कि किसी काफ़िर के जनाज़े की नमाज़ और उसके लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत जायज़ नहीं।

मसलाः इसी आयत से यह भी साबित हुआ किसी काफ़िर के सम्मान व इकराम के लिये उसकी क़ब्र पर खड़ा होना या उसकी ज़ियारत के लिये जाना हराम है। इब्रत (सबक़) हासिल करने के लिये हो या किसी मजबूरी के लिये तो वह इसके विरुद्ध नहीं, जैसा कि हिदाया में है कि अगर किसी मुसलमान का काफ़िर रिश्तेदार मर जाये और उसका कोई वली वारिस न हो तो मुसलमान रिश्तेदार उसको इसी तरह सुन्नत तरीक़े की रियायत किये बग़ैर गढ़े में दबा सकता है। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

وَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَاَوْلَادُهُمْ ۭ اِنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّعَذِّبَهُمْ
بِهَا فِى الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كٰفِرُوْنَ ﴿٨٥﴾ وَاِذَآ اُنْزِلَتْ سُوْرَةٌ اَنْ اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَجَاهِدُوْا مَعَ
رَسُوْلِهِ اسْتَاْذَنَكَ اُولُوا الطَّوْلِ مِنْهُمْ وَقَالُوْا ذَرْنَا نَكُنْ مَّعَ الْقٰعِدِيْنَ ﴿٨٦﴾ رَضُوْا بِاَنْ يَّكُوْنُوْا مَعَ
الْخَوَالِفِ وَطُبِعَ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُوْنَ ﴿٨٧﴾ لٰكِنِ الرَّسُوْلُ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَعَهٗ جٰهَدُوْا
بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ لَهُمُ الْخَيْرٰتُ ۡ وَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ﴿٨٨﴾ اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ جَنّٰتٍ
تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۭ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ﴿٨٩﴾ ع ١١ ٩ ١٧

व ला तुअ्जिब्-क अम्वालुहुम् व औलादुहुम्, इन्नमा युरीदुल्लाहु अंय्युअ़ज़्ज़ि-बहुम् बिहा फ़िद्दुन्या व तज़्ह-क़ अन्फ़ुसुहुम् व हुम् काफ़िरून (85) व इज़ा उन्ज़िलत् सूरतुन् अन् आमिनू बिल्लाहि व जाहिदू म-अ़ रसूलिहिस्तअ्ज़-न-क उलुत्तौलि मिन्हुम् व क़ालू ज़र्ना नकुम् मअ़ल् क़ाअ़िदीन (86) रज़ू बिअंय्यकूनू मअ़ल्-ख़्वालिफ़ि व तुबि-अ़ अ़ला	और ताज्जुब न कर उनके माल और औलाद से, अल्लाह तो यही चाहता है कि अ़ज़ाब में रखे उनको इन चीज़ों के सबब दुनिया में और निकले उनकी जान और वे उस वक़्त तक काफ़िर ही रहें। (85) और जब नाज़िल होती है कोई सूरत कि ईमान लाओ अल्लाह पर और लड़ाई करो उसके रसूल के साथ होकर तो तुझसे रुख़्सत माँगते हैं गुंजाईश व क़ुदरत वाले उनमें के और कहते हैं कि हमको छोड़ दे कि रह जायें साथ बैठने वालों के। (86) ख़ुश हुए कि रह जायें पीछे रहने वाली

क़ुलूबिहिम् फ़हुम् ला यफ़्क़हून (87) लाकिनिर्रसूलु वल्लज़ी-न आमनू म-अ़हू जाहदू बिअम्वालिहिम् व अन्फ़ुसिहिम्, व उलाइ-क लहुमुल्-ख़ैरातु व उलाइ-क हुमुल् मुफ़्लिहून (88) अ-अ़द्दल्लाहु लहुम् जन्नातिन् तज्री मिन् तह्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा, ज़ालिकल् फ़ौज़ुल्-अ़ज़ीम (89) ❁	औरतों के साथ, और मुहर कर दी गयी उनके दिलों पर सो वे नहीं समझते। (87) लेकिन रसूल और जो लोग ईमान लाये हैं साथ उसके वे लड़े हैं अपने माल और जान से, और उन्हीं के लिये हैं ख़ूबियाँ, और वही हैं मुराद को पहुँचने वाले। (88) तैयार कर रखे हैं अल्लाह ने उनके वास्ते बाग़ कि बहती हैं नीचे उनके नहरें, रहा करें उनमें, यही है बड़ी कामयाबी। (89) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उनके माल और औलाद आपको (इस) ताज्जुब में न डालें (कि अल्लाह के ग़ज़ब के पात्र ऐसे लोगों पर ये नेमतें कैसे हुईं, सो वास्तव में ये उनके लिये नेमतें नहीं बल्कि अ़ज़ाब के सामान हैं, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला को सिर्फ़ यह मन्ज़ूर है कि इन (ज़िक्र हुई चीज़ों) की वजह से उनको दुनिया में (भी) अ़ज़ाब में गिरफ़्तार रखे और उनका दम कुफ़्र ही की हालत में निकल जाए (जिससे आख़िरत में भी अ़ज़ाब में मुब्तला रहें)। और जब कभी क़ुरआन का कोई टुकड़ा (इस मज़मून में) नाज़िल किया जाता है कि तुम (दिल के ख़ुलूस से) अल्लाह पर ईमान लाओ और उसके रसूल के साथ होकर जिहाद करो, तो उनमें के ताक़त वाले आप से रुख़्सत "यानी न जाने के लिए छूट" माँगते हैं और (रुख़्सत का यह मज़मून होता है कि) कहते हैं- हमको इजाज़त दीजिए कि हम भी यहाँ ठहरने वालों के साथ रह जाएँ (अलबत्ता ईमान व इख़्लास के दावे में कुछ करना नहीं पड़ता, इसको कह दिया कि हम तो मुख़्लिस हैं) वे लोग (निहायत बेग़ैरती के साथ) घर में बैठी औरतों के साथ रहने पर राज़ी हो गये और उनके दिलों पर मोहर लग गई, जिससे वे (ग़ैरत या बेग़ैरती को) समझते ही नहीं। हाँ लेकिन रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) और आपके साथ में जो मुसलमान हैं उन्होंने (इस हुक्म को माना और) अपने मालों से और अपनी जानों से जिहाद किया, और इन्हीं के लिए सारी ख़ूबियाँ हैं, और यही लोग कामयाब हैं। (और वह ख़ूबी और कामयाबी यह है कि) अल्लाह तआ़ला ने उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीचे से नहरें जारी हैं (और) वे उनमें हमेशा के लिये रहेंगे, यह बड़ी कामयाबी है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में भी उन्हीं मुनाफ़िक़ों का हाल बयान किया गया जो ग़ज़्वा-ए-तबूक में शरीक होने से हीले-बहाने करके रुक गये थे। उन मुनाफ़िक़ों में कुछ मालदार ख़ुशहाल लोग भी थे, उनके हाल से मुसलमानों को यह ख़्याल हो सकता था कि जब ये लोग अल्लाह के नज़दीक मर्दूद व नामक़बूल हैं तो इनको दुनिया में ऐसी नेमतें क्यों मिलीं।

इसके जवाब में पहली आयत में फ़रमाया कि अगर ग़ौर करोगे तो उनके माल व औलाद उनके लिये रहमत व नेमत नहीं बल्कि दुनिया में भी अ़ज़ाब ही हैं, आख़िरत का अ़ज़ाब इसके अ़लावा है। दुनिया में अ़ज़ाब होना इस तरह है कि माल की मुहब्बत, उसकी हिफ़ाज़त की और फिर उसके बढ़ाने की फ़िक्रें उनको ऐसी लगी रहती हैं कि किसी वक़्त किसी हाल चैन नहीं लेने देतीं। राहत का साज़ व सामान उनके पास कितना ही हो मगर राहत नहीं होती, जो दिल के सुकून व इत्मीनान का नाम है। इसके अ़लावा यह दुनिया का माल व असबाब चूँकि उनको आख़िरत से ग़ाफ़िल करके कुफ़्र व नाफ़रमानी में व्यस्त रखने का सबब भी बन रहा है इसलिये अ़ज़ाब का सबब होने की वजह से भी इसको अ़ज़ाब कहा जा सकता है, इसी लिये क़ुरआन के अलफ़ाज़ में 'लियुअ़ज़्ज़ि-बहुम बिहा' फ़रमाया, कि अल्लाह तआ़ला इन मालों ही के ज़रिये उनको सज़ा देना चाहता है।

'उलुत्तौलि' (ताक़त व गुंजाईश वालों) का लफ़्ज़ ख़ास करने के लिये नहीं, बल्कि इससे ताक़त व गुंजाईश न रखने वाले लोगों का हाल और भी अच्छी तरह मालूम हो गया, कि उनके पास तो एक ज़ाहिरी उज़्र (मजबूरी और बहाना) भी था।

وَجَآءَ الْمُعَذِّرُوْنَ مِنَ الْاَعْرَابِ لِيُؤْذَنَ لَهُمْ وَقَعَدَ الَّذِيْنَ كَذَبُوا

اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ ۚ سَيُصِيْبُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٩٠﴾

व जाअल्-मुअ़ज़्ज़िरू-न मिनल्-अअ़्राबि लियुअ्ज़-न लहुम् व क़-अ़दल्लज़ी-न क-ज़बुल्ला-ह व रसूलहू, सयुसीबुल्लज़ी-न क-फ़रू मिन्हुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (90)	और आये बहाना करने वाले गंवार ताकि उनको रुख़्सत मिल जाये और बैठ रहें जिन्होंने झूठ बोला था अल्लाह से और उसके रसूल से, अब पहुँचेगा उनको जो काफ़िर हैं उनमें दर्दनाक अ़ज़ाब। (90)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ बहाना बनाने वाले लोग देहातियों में से आये ताकि उनको (घर रहने की) इजाज़त

मिल जाये और (उन देहातियों में से) जिन्होंने ख़ुदा से और उसके रसूल से (ईमान के दावे में) बिल्कुल ही झूठ बोला था, वे बिल्कुल ही बैठ रहे, (झूठे बहाने करने भी न आये) उनमें से जो (आख़िर तक) काफ़िर रहेंगे उनको (आख़िरत में) दर्दनाक अ़ज़ाब होगा (और जो तौबा कर लें तो अ़ज़ाब से बच जायेंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस तफ़सील से मालूम हुआ कि उन देहातियों में दो क़िस्म के लोग थे- एक तो वे जो हीले बहाने पेश करने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए कि उनको जिहाद में चलने से रुख़्सत (छूट) दे दी जाये, और कुछ ऐसे नाफ़रमान व सरफिरे भी थे जिन्होंने इसकी भी परवाह नहीं कि रुख़्सत ले लें, वे अपने आप ही अपने घरों में बैठ रहे।

हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जद बिन क़ैस को जिहाद में न जाने की इजाज़त दे दी तो चन्द मुनाफ़िक़ लोग भी ख़िदमत में हाज़िर हुए और कुछ हीले बहाने पेश करके जिहाद छोड़ने की इजाज़त माँगी। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इजाज़त तो दे दी मगर यह समझ लिया कि ये झूठे बहाने कर रहे हैं, इसलिये उनसे मुँह फेर लिया, इस पर यह आयत नाज़िल हुई, जिसने बतला दिया कि उनका उज़्र (मजबूरी ज़ाहिर करना और बहाने बनाना) क़ाबिल क़ुबूल नहीं, इसलिये उनको दर्दनाक अ़ज़ाब की वईद सुनाई गयी। अलबत्ता इसके साथ 'अल्लज़ी-न क-फ़रू मिन्हुम' फ़रमाकर इशारा कर दिया कि उनमें से कुछ लोगों का उज़्र कुफ़्र व निफ़ाक़ की वजह से नहीं था बल्कि तबई सुस्ती के सबब था, वे इन काफ़िरों के अ़ज़ाब में शामिल नहीं।

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَآءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضٰى وَلَا عَلَى الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ مَا يُنْفِقُوْنَ حَرَجٌ اِذَا نَصَحُوْا لِلّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۔ مَا عَلَى الْمُحْسِنِيْنَ مِنْ سَبِيْلٍ ۔ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَّلَا عَلَى الَّذِيْنَ اِذَا مَآ اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَآ اَجِدُ مَآ اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ ۔ تَوَلَّوْا وَّاَعْيُنُهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوْا مَا يُنْفِقُوْنَ ۝ اِنَّمَا السَّبِيْلُ عَلَى الَّذِيْنَ يَسْتَاْذِنُوْنَكَ وَهُمْ اَغْنِيَآءُ ۔ رَضُوْا بِاَنْ يَّكُوْنُوْا مَعَ الْخَوَالِفِ ۔ وَطَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝

लै-स अ़लज़्ज़ु-अ़फ़ा-इ व ला अ़लल्-मर्ज़ा व ला अ़लल्लज़ी-न ला यजिदू-न मा युन्फ़िक़ू-न ह-रजुन् इज़ा न-सहू लिल्लाहि व रसूलिही,	नहीं है ज़ईफ़ों पर और न मरीज़ों पर और न उन लोगों पर जिनके पास नहीं है ख़र्च करने को, कुछ गुनाह जबकि दिल से साफ़ हों अल्लाह और उसके रसूल के साथ, नहीं है नेकी वालों पर इल्ज़ाम की

मा अ़लल्-मुह्सिनी-न मिन् सबीलिन्, वल्लाहु ग़फ़ूरुर्रहीम (91) व ला अ़लल्लज़ी-न इज़ा मा अतौ-क लितह्मि-लहुम् क़ुल्-त ला अजिदु मा अह्मिलुकुम् अ़लैहि तवल्लौ व अअ्युनुहुम् तफ़ीज़ु मिनद्-दम्अि ह-ज़नन् अल्ला यजिदू मा युन्फ़िक़ून (92) इन्नमस्सबीलु अ़लल्लज़ी-न यस्तअ्ज़िनून-क व हुम् अग़्निया-उ रज़ू बिअंय्यकूनू मअ़ल् ख़्वालिफ़ि व त-बअ़ल्लाहु अ़ला क़ुलूबिहिम् फ़हुम् ला यअ्लमून (93)	कोई राह और अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (91) और न उन लोगों पर कि जब तेरे पास आये ताकि तू उनको सवारी दे, तूने कहा मेरे पास कोई चीज़ नहीं कि तुमको उस पर सवार कर दूँ तो उल्टे फिरे और उनकी आँखों से बहते थे आँसू इस ग़म में कि नहीं पाते वह चीज़ जो ख़र्च करें। (92) राह इल्ज़ाम की तो उन पर है जो रुख़्सत माँगते हैं तुझसे और वे मालदार हैं, ख़ुश हुए इस बात से कि वे रह जायें साथ पीछे रहने वालों के, और मुहर कर दी अल्लाह ने उनके दिलों पर सो वे नहीं जानते। (93)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

कम ताक़त वाले लोगों पर कोई गुनाह नहीं, और न बीमारों पर, और न उन लोगों पर जिनको (जिहाद के सामान की तैयारी में) ख़र्च करने को मयस्सर नहीं, जबकि ये लोग अल्लाह और रसूल के साथ (दूसरे अहकाम में) ख़ुलूस (सही नीयत) रखें (और दिल से इताअ़त करते रहें तो) इन नेक काम करने वालों पर किसी क़िस्म का इल्ज़ाम (आयद) नहीं (क्योंकि अल्लाह तआ़ला किसी पर उसकी ताक़त से ज़्यादा बोझ नहीं डालता) और अल्लाह पाक बड़ी मग़फ़िरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (कि अगर ये लोग अपने इल्म में माज़ूर हों और अपनी तरफ़ से नेकी व फ़रमाँबरदारी में कोशिश करें और वास्तव में कुछ कमी रह जाये तो माफ़ कर देंगे)। और न उन लोगों पर (कोई गुनाह और इल्ज़ाम है) कि जिस वक़्त वे आपके पास इस वास्ते आते हैं कि आप उनको कोई सवारी दे दें और आप (उनसे) कह देते हैं कि मेरे पास तो कोई चीज़ नहीं जिस पर मैं तुमको सवार कर दूँ, तो वे (नाकाम) इस हालत से वापस चले जाते हैं कि उनकी आँखों से आँसू बहते होते हैं, इस ग़म में कि (अफ़सोस) उनको (जिहाद के सामान की तैयारी में) ख़र्च करने को कुछ भी मयस्सर नहीं (न ख़ुद है और न दूसरी जगह से मिला। ग़र्ज़ कि इन ज़िक्र हुए माज़ूरों पर कोई पकड़ नहीं)। पस इल्ज़ाम (और पकड़) तो सिर्फ़ उन लोगों पर है जो बावजूद सामान (और ताक़त) वाले होने के (घर रहने की) इजाज़त चाहते हैं, वे लोग (निहायत

बेशर्मी से) घर में बैठी औरतों के साथ रहने पर राज़ी हो गये, और अल्लाह ने उनके दिलों पर मुहर लगा दी, जिससे वे (गुनाह व सवाब को) जानते ही नहीं।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुई आयतों में ऐसे लोगों के हालात का बयान था जो दर हक़ीक़त जिहाद में शिर्कत से माज़ूर न थे मगर सुस्ती के सबब उज़्र (बहाना) करके बैठ रहे, या ऐसे मुनाफ़िक़ जिन्होंने अपने कुफ़्र व निफ़ाक़ की वजह से हीले-बहाने गढ़कर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इजाज़त ले ली थी, और कुछ वे नाफ़रमान भी थे जिन्होंने उज़्र करने और इजाज़त लेने की भी ज़रूरत न समझी, वैसे ही बैठ रहे, उनका ग़ैर-माज़ूर होना और उनमें जो कुफ़्र व निफ़ाक़ के मुजरिम थे उनके लिये दर्दनाक अ़ज़ाब का होना पिछली आयतों में बयान हुआ है।

उपर्युक्त आयतों में उन मुख़्लिस (पक्के-सच्चे) मुसलमानों का ज़िक्र है जो हक़ीक़त में माज़ूर (मजबूर) होने के सबब जिहाद में शरीक न हो सके। उनमें कुछ तो अंधे या बीमार माज़ूर थे जिनका उज़्र सब के सामने था, और कुछ वे लोग भी थे जो जिहाद में शिर्कत के लिये तैयार थे, बल्कि जिहाद में जाने के लिये बेक़रार थे, मगर उनके पास सफ़र के लिये सवारी का जानवर न था, सफ़र लम्बा और मौसम गर्मी का था, उन्होंने अपने जज़्बा-ए-जिहाद और सवारी न होने की मजबूरी का ज़िक्र करके रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से दरख़्वास्त की कि हमारे लिये सवारी का कोई इन्तिज़ाम हो जाये।

तफ़सीर व तारीख़ की किताबों में इस क़िस्म के अनेक वाक़िआत लिखे हैं, कुछ का मामला तो यह हुआ कि शुरू में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे उज़्र कर दिया कि हमारे पास सवारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं, मगर ये लोग रोते हुए वापस हुए और रोते रहे तो अल्लाह तआ़ला ने उनके लिये ऐसा सामान कर दिया कि छह ऊँट रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास उसी वक़्त आ गये, आपने ये उनको दे दिये। (तफ़सीरे मज़हरी) और उनमें से तीन आदमियों के लिये सवारी का इन्तिज़ाम हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने कर दिया हालाँकि वे इससे पहले बहुत बड़ी तायदाद का इन्तिज़ाम अपने ख़र्च से कर चुके थे।

कुछ वे भी रहे कि जिनको आख़िर तक सवारी न मिली और मजबूर होकर रह गये। बयान हुई आयतों में उन्हीं सब हज़रात का ज़िक्र आया है जिनका उज़्र अल्लाह तआ़ला ने क़ुबूल फ़रमाया। आख़िर में फिर इस पर तंबीह फ़रमा दी कि वबाल तो सिर्फ़ उन लोगों पर है जिन्होंने क़ुदरत व ताक़त के बावजूद जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहना औरतों की तरह पसन्द कियाः

إِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَسْتَأْذِنُونَكَ وَهُمْ أَغْنِيَاءُ.

का यही मतलब है।

पारा (11) यअ्तज़िरू-न

يَعْتَذِرُوْنَ اِلَيْكُمْ اِذَا رَجَعْتُمْ اِلَيْهِمْ ۭ قُلْ لَّا تَعْتَذِرُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ لَكُمْ قَدْ نَبَّاَنَا اللّٰهُ مِنْ اَخْبَارِكُمْ
وَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُوْلُهٗ ثُمَّ تُرَدُّوْنَ اِلٰى عٰلِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ
تَعْمَلُوْنَ ۝ سَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا انْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ لِتُعْرِضُوْا عَنْهُمْ ۭ فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمْ ۭ اِنَّهُمْ
رِجْسٌ ۡ وَّمَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۚ جَزَاۗءًۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝ يَحْلِفُوْنَ لَكُمْ لِتَرْضَوْا عَنْهُمْ ۚ فَاِنْ تَرْضَوْا عَنْهُمْ
فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ۝

यअ्तज़िरू-न इलैकुम् इज़ा र-जअ्तुम् इलैहिम्, क़ुल्-ला तअ्तज़िरू लन्-नुअ्मि-न लकुम् क़द् नब्ब-अनल्लाहु मिन् अख़्बारिकुम्, व स-यरल्लाहु अ-म-लकुम् व रसूलुहू सुम्-म तुरद्दू-न इला आ़लिमिल्-ग़ैबि वश्शहादति फ़युनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् तअ्मलून (94) स-यह्लिफ़ू-न बिल्लाहि लकुम् इज़न्क़लब्तुम् इलैहिम् लितुअ्रिज़ू अ़न्हुम्, फ़-अअ्रिज़ू अ़न्हुम्, इन्नहुम् रिज्सुंव्-व मअ्वाहुम् जहन्नमु जज़ाअम् बिमा कानू यक्सिबून (95) यह्लिफ़ू-न लकुम् लितर्ज़ौ अ़न्हुम् फ़-इन् तर्ज़ौ अ़न्हुम् फ़-इन्नल्ला-ह ला यर्ज़ा अ़निल् क़ौमिल्-फ़ासिक़ीन (96)

बहाने लायेंगे तुम्हारे पास जब तुम लौटकर जाओगे उनकी तरफ़, तू कह बहाने मत बनाओ हम हरगिज़ न मानेंगे तुम्हारी बात, हमको बता चुका है अल्लाह तुम्हारे हालात, और अभी देखेगा अल्लाह तुम्हारे काम और उसका रसूल फिर तुम लौटाये जाओगे उस छुपे और खुले के जानने वाले की तरफ़, सो वह बतलायेगा तुमको जो तुम कर रहे थे। (94) अब क़समें खायेंगे अल्लाह की तुम्हारे सामने जब तुम लौटकर जाओगे उनकी तरफ़ ताकि तुम उनसे दरगुज़र करो, सो तुम दरगुज़र करो उनसे बेशक वे लोग पलीद हैं और उनका ठिकाना दोज़ख़ है, बदला उनके कामों का। (95) वे लोग क़समें खायेंगे तुम्हारे सामने ताकि तुम उनसे राज़ी हो जाओ, सो अगर तुम राज़ी हो गये उनसे तो अल्लाह राज़ी नहीं होता नाफ़रमान लोगों से। (96)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये लोग तुम्हारे (सब के) सामने उज़्र पेश करेंगे जब तुम उनके पास वापस जाओगे (सो ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप (सब की तरफ़ से साफ़) कह दीजिए कि (बस रहने दो) यह उज़्र पेश मत करो, हम कभी तुमको सच्चा न समझेंगे, (क्योंकि) अल्लाह तआ़ला हमको तुम्हारी (असली हालत की) ख़बर दे चुके हैं (कि तुमको कोई वास्तविक उज़्र न था) और (ख़ैर) आगे भी अल्लाह तआ़ला और उसका रसूल तुम्हारी कारगुज़ारी देख लेंगे (मालूम हो जायेगा कि तुम अपने गुमान के मुताबिक़ कितने फ़रमाँबरदार और मुख़्लिस हो)। फिर ऐसे के पास लौटाये जाओगे जो छुपे और ज़ाहिर सब का जानने वाला है (जिससे तुम्हारा कोई एतिक़ाद कोई अ़मल छुपा नहीं) फिर वह तुमको बतला देगा जो-जो कुछ तुम करते थे (और उसका बदला देगा)। हाँ वे अब तुम्हारे सामने अल्लाह की क़समें खा जाएँगे (कि हम माज़ूर थे) जब तुम उनके पास वापस जाओगे, ताकि तुम उनको उनकी हालत पर छोड़ दो (और मलामत वग़ैरह न करो), सो तुम (उनका मतलब पूरा कर दो और) उनको उनकी हालत पर छोड़ दो, (इस फ़ानी ग़र्ज़ के हासिल होने से उनका कुछ भला न होगा, क्योंकि) वे लोग बिल्कुल गन्दे हैं, और (अख़ीर में) उनका ठिकाना दोज़ख़ है, उन कामों के बदले में जो कुछ वे (निफ़ाक़ व मुख़ालफ़त वग़ैरह) किया करते थे। (और इसका भी तक़ाज़ा यही है कि उनको उनके हाल पर छोड़ दिया जाये, क्योंकि उनसे बात करने से मक़सद है उनकी इस्लाह और इसकी उनकी ख़बासत की वजह से उम्मीद नहीं, और साथ ही) ये इसलिए क़समें खाएँगे कि तुम उनसे राज़ी हो जाओ। सो (अव्वल तो तुम अल्लाह के दुश्मनों से राज़ी ही क्यों होने लगे, लेकिन मान लो) अगर तुम उनसे राज़ी भी हो जाओ तो (उनको क्या लाभ, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला तो ऐसे शरीर लोगों से राज़ी नहीं होता (और बिना अल्लाह के राज़ी हुए मख़्लूक़ का राज़ी होना बेफ़ायदा है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयतों में उन मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र था जिन्होंने ग़ज़वा-ए-तबूक में निकलने से पहले झूठे हीले-बहाने करके जिहाद में जाने से उज़्र कर दिया था। उपर्युक्त आयतों में उनका ज़िक्र है जिन्होंने जिहाद से वापसी के बाद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपनी जिहाद से ग़ैर-हाज़िरी के झूठे उज़्र (हीले-बहाने) पेश किये। ये आयतें मदीना तय्यिबा वापस आने से पहले नाज़िल हो चुकी थीं जिनमें इस आईन्दा पेश आने वाले वाक़िए की ख़बर थी कि जब आप मदीना वापस पहुँचेंगे तो मुनाफ़िक़ लोग उज़्र करने के लिये आपके पास आयेंगे, चुनाँचे इसी तरह वाक़िआ़ पेश आया।

ज़िक्र हुई आयतों में उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तीन हुक्म दिये गये- अव्वल यह कि जब ये उज़्र करने के लिये आयें तो आप उनसे कह दें कि फ़ुज़ूल झूठे उज़्र न करो, हम तुम्हारी बात की पुष्टि न करेंगे, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने वही के ज़रिये हमें

तुम्हारे सब हालात और ख़्यालात और तुम्हारी शरारत और दिलों में छुपे हुए ख़ुफ़िया इरादे सब बतला दिये हैं, जिससे तुम्हारा झूठा होना हम पर खुल गया। इसलिये उज़्र बयान करना फ़ुज़ूल है। उसके बाद फ़रमायाः

وَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ............ الآية.

इसमें उनको मोहलत दी गयी कि अब भी तौबा कर लें, निफ़ाक़ छोड़कर सच्चे मुसलमान हो जायें। क्योंकि इसमें यह फ़रमाया कि आईन्दा अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल तुम्हारा अ़मल देखेंगे कि वह क्या और कैसा रहता है, उसके मुताबिक़ अ़मल होगा। अगर तुम तौबा करके सच्चे मुसलमान हो गये तो तुम्हारे गुनाह माफ़ हो जायेंगे वरना ये झूठे हीले-बहाने तुम्हें कोई फ़ायदा न देंगे।

दूसरा हुक्म दूसरी आयत में बयान हुआ है कि ये लोग आपकी वापसी के बाद झूठी क़समें खाकर आपको मुत्मईन करना चाहेंगे, और मक़सद उससे यह होगा कि आप उनकी जिहाद में इस ग़ैर-हाज़िरी को नज़र-अन्दाज़ कर दें, इस पर मलामत न करें। इस पर यह इरशाद हुआ कि उनकी यह इच्छा आप पूरी कर दें, यानी आप उनसे मुँह फेर लें, न तो उन पर मलामत व तंबीह करें और न उनसे अच्छे ताल्लुक़ात रखें, क्योंकि मलामत से तो कोई फ़ायदा नहीं, जब उनके दिल में ईमान ही नहीं और उसकी तलब भी नहीं तो मलामत करने (बुरा-भला कहने) से क्या होगा, फ़ुज़ूल अपना वक़्त क्यों बरबाद किया जाये।

तीसरा हुक्म तीसरी आयत में यह है कि ये लोग क़समें खाकर आपको और मुसलमानों को राज़ी करना चाहेंगे, इसके बारे में हक़ तआ़ला ने यह हिदायत फ़रमा दी कि उनकी यह इच्छा पूरी न की जाये, आप उनसे राज़ी न हों। और यह भी फ़रमा दिया कि फ़र्ज़ करो अगर आप राज़ी भी हो गये तो उनको कोई फ़ायदा इसलिये नहीं पहुँचेगा कि अल्लाह तआ़ला उनसे राज़ी नहीं है, और अल्लाह कैसे राज़ी हो जबकि ये अपने कुफ़्र व मुनाफ़क़त पर क़ायम हैं।

اَلْاَعْرَابُ اَشَدُّ كُفْرًا وَّنِفَاقًا وَّاَجْدَرُ اَلَّا يَعْلَمُوْا حُدُوْدَ مَآ
اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى رَسُوْلِهٖ ۗ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿٩٧﴾ وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يَّتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ مَغْرَمًا وَّيَتَرَبَّصُ
بِكُمُ الدَّوَآئِرَ ۚ عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٩٨﴾ وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يُّؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ
الْاٰخِرِ وَيَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ قُرُبٰتٍ عِنْدَ اللّٰهِ وَصَلَوٰتِ الرَّسُوْلِ ۚ اَلَآ اِنَّهَا قُرْبَةٌ لَّهُمْ ۚ سَيُدْخِلُهُمُ اللّٰهُ
فِىْ رَحْمَتِهٖ ۗ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٩٩﴾ ع ١٢/١

अल्अअ़्राबु अशद्दु कुफ़्रंव्-व निफ़ाक़ंव्-व अज्दरु अल्ला यअ़्लमू	गंवार बहुत सख़्त हैं कुफ़्र में और निफ़ाक़ में, और इसी लायक़ हैं कि न सीखें वो क़ायदे जो नाज़िल किये अल्लाह ने अपने

हुदू-द मा अन्ज़लल्लाहु अ़ला रसूलिही, वल्लाहु अ़लीमुन् हकीम (97) व मिनल्-अअ्राबि मंय्यत्तख़िज़ु मा युन्फ़िक़ु मग़्रमंव्-व य-तरब्बसु बिकुमुद्दवाइ-र, अ़लैहिम् दाइ-रतुस्-सौ-इ, वल्लाहु समीअुन् अ़लीम (98) व मिनल्-अअ्राबि मंय्युअ्मिनु बिल्लाहि वल्यौमिल् आख़िरि व यत्तख़िज़ु मा युन्फ़िक़ु क़ुरुबातिन् अ़िन्दल्लाहि व स-लवातिर्रसूलि, अला इन्नहा क़ुर्बतुल्लहुम् सयुद्ख़िलु-हुमुल्लाहु फ़ी रह्मतिही, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (99) ✽	रसूल पर, और अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (97) और बाज़े गंवार ऐसे हैं कि शुमार करते हैं अपने ख़र्च करने को तावान और इन्तिज़ार करते हैं तुम पर ज़माने की गर्दिशों का, उन्हीं पर आये बुरी गर्दिश, और अल्लाह सुनने वाला जानने वाला है। (98) और बाज़े गंवार वे हैं कि ईमान लाते हैं अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर और शुमार करते हैं अपने ख़र्च करने को नज़दीक होना अल्लाह से और दुआ़ लेनी रसूल की। सुनता है! वह उनके हक़ में नज़दीकी है, दाख़िल करेगा उनको अल्लाह अपनी रहमत में, बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (99) ✽

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(इन मुनाफ़िक़ों में जो) देहाती लोग (हैं वे अपनी सख़्त-मिज़ाजी की वजह से) कुफ़्र और निफ़ाक़ में बहुत ही सख़्त लोग हैं, और (आ़लिमों और अ़क़्लमन्दों से दूरी की वजह से) उनको ऐसा होना ही चाहिए कि उनको उन अहकाम का इल्म न हो जो अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) पर नाज़िल फ़रमाये हैं (क्योंकि जब जानने वालों से दूर दूर रहेंगे तो उनका जाहिल रहना तो इसका लाज़िमी नतीजा है, और इसी वजह से मिज़ाज में सख़्ती और इन दोनों चीज़ों से कुफ़्र व निफ़ाक़ से शिद्दत होगी) और अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले, बड़ी हिक्मत वाले हैं (वह इन सब बातों पर बाख़बर हैं और हिक्मत से मुनासिब सज़ा देंगे)। और इन (ज़िक्र हुए मुनाफ़िक़) देहातियों में से बाज़ा-बाज़ा ऐसा है कि (कुफ़्र व निफ़ाक़ और अज्ञानता के अ़लावा कन्जूसी और दुश्मनी की सिफ़तें भी अपने अन्दर रखता है, यहाँ तक कि) जो कुछ (जिहाद और ज़कात वग़ैरह के मौक़ों में मुसलमानों की शर्मा शर्मी) वह ख़र्च करता है उसको (एक) जुर्माना (की तरह) समझता है (यह तो कन्जूसी है) और (दुश्मनी यह है कि) तुम मुसलमानों के वास्ते (ज़माने की) गर्दिशों का मुन्तज़िर रहता है (कि कहीं इन पर कोई हादसा पड़ जाये तो इनका ख़ात्मा हो, सो) बुरा वक़्त उन ही (मुनाफ़िक़ों) पर (पड़ने वाला) है (चुनाँचे

फ़ुतूहात (विजय और कामयाबियों) की वुस्अ़त हुई, काफ़िर ज़लील हुए, उनकी सारी हसरतें दिल ही में रह गयीं, और तमाम उम्र रंज और ख़ौफ़ में कटी)। और अल्लाह तआ़ला (उनके कुफ़्र व निफ़ाक़ की बातें) सुनते हैं (और उनके दिली ख़्यालात यानी ख़र्च करने को जुर्माना समझने और मुसलमानों का बुरा चाहने को) जानते हैं (पस इन सब की सज़ा देंगे)।

और बाज़े देहात वाले ऐसे भी हैं जो अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर (पूरा-पूरा) ईमान रखते हैं, और जो कुछ (नेक कामों में) ख़र्च करते हैं उसको अल्लाह के पास क़ुर्ब "यानी निकटता" हासिल होने का सबब और रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की दुआ़ (लेने) का ज़रिया बनाते हैं, (क्योंकि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़दते शरीफ़ा थी कि ऐसे मौक़ों पर ख़र्च करने वाले को दुआ़ देते थे जैसा कि हदीसों में है)। याद रखो कि (उनका) यह (ख़र्च करना) बेशक उनके लिये निकटता का सबब है (और दुआ़ का होना तो ये ख़ुद देख-सुन लेते हैं, इसकी ख़बर देने की ज़रूरत न थी, और वह निकटता यह है कि) ज़रूर उनको अल्लाह तआ़ला अपनी (ख़ास) रहमत में दाख़िल कर लेंगे (क्योंकि) अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं (पस उनकी ख़तायें माफ़ करके अपनी रहमत में ले लेंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहले की आयतों में मदीना के मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र था, इन आयतों में उन मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र है जो मदीना के आस-पास और देहात के रहने वाले थे।

आराब यह लफ़्ज़ अ़रब की जमा (बहुवचन) नहीं, बल्कि इस्मे जमा है, जो देहात के बाशिन्दों के लिये बोला जाता है। इसका एक वचन बनाना होता है तो आराबी कहते हैं, जैसे अन्सार का वाहिद अन्सारी आता है।

उनका हाल उक्त आयतों में यह बतलाया कि ये कुफ़्र व निफ़ाक़ में शहर वालों से भी बढ़े हुए हैं, जिसकी वजह यह बतलाई कि ये लोग इल्म और उलेमा से दूर रहने के सबब उमूमन जहालत और सख़्ती में मुब्तला होते हैं, सख़्त-दिल होते हैं:

اَجْدَرُ اَلَّا يَعْلَمُوْا حُدُوْدَ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ.

यानी उन लोगों का माहौल ही ऐसा है कि वे अल्लाह की नाज़िल की हुई हदों से बेख़बर रहें, क्योंकि न क़ुरआन उनके सामने आता है न उसके मायने व मतलब और अहकाम से उनको वाक़फ़ियत होती है।

दूसरी आयत में भी इन्हीं आराब (देहातियों) का एक हाल यह बयान किया गया है कि ये लोग जो ज़कात वग़ैरह में ख़र्च करते हैं उसको तावान (जुर्माना और डांड) समझकर देते हैं, वजह यह है कि दिल में ईमान तो है नहीं, महज़ अपने कुफ़्र को छुपाने के लिये नमाज़ भी पढ़ लेते हैं और फ़र्ज़ ज़कात भी दे देते हैं, मगर दिल में कुढ़ते हैं कि यह माल फ़ुज़ूल गया। इसी लिये इस इन्तिज़ार में रहते हैं कि किसी तरह मुसलमानों पर कोई मुसीबत पड़े और उनको शिकस्त हो जाये तो इस तावान से हमें छुटकारा मिले।

'अद्‌दवाइर' दायरे की जमा (बहुवचन) है। अ़रबी लुग़त के एतिबार से दायरा उस बदली हुई हालत को कहते हैं जो पहली अच्छी हालत के बाद बुरी हो जाये, इसी लिये क़ुरआने करीम ने उनके जवाब में फ़रमायाः

عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ.

यानी उन्हीं पर बुरी हालत आने वाली है, और ये अपने आमाल और बातों की बिना पर और ज़्यादा ज़लील होंगे।

देहाती मुनाफ़िक़ों के हालात का ज़िक्र करने के बाद क़ुरआनी अन्दाज़ के मुताबिक़ तीसरी आयत में उन देहातियों का ज़िक्र करना भी मुनासिब समझा गया जो सच्चे और पक्के मुसलमान हैं, ताकि मालूम हो जाये कि देहात के बाशिन्दे भी सब एक जैसे नहीं होते, उनमें नेक और सच्चे मुसलमान और समझदार लोग भी होते हैं, उनका हाल यह है कि वे जो ज़कात व सदक़ात देते हैं तो उसको अल्लाह तआ़ला की निकटता का ज़रिया समझकर और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ़ओं की उम्मीद पर देते हैं।

सदक़ात का अल्लाह तआ़ला की निकटता का ज़रिया होना तो ज़ाहिर ही है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ़ओं की उम्मीद इस बिना पर है कि क़ुरआने हकीम ने जहाँ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुसलमानों से ज़कात के माल वसूल करने का हुक्म दिया है वहीं यह भी हिदायत फ़रमाई है कि ज़कात अदा करने वालों के लिये आप दुआ़ भी किया करें, जैसा कि आगे आने वाली आयत में इरशाद है:

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيْهِمْ بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ.

इस आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सदक़ात वसूल करने के लिये यह हुक्म भी दिया है कि उनके लिये दुआ़ किया करें, यह हुक्म लफ़्ज़ सलात के साथ आया है 'व सल्लि अ़लैहिम' इसी लिये ऊपर ज़िक्र हुई आयत में भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुआ़ओं को लफ़्ज़ सलवात से ताबीर किया है।

وَالسّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ مِنَ الْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ وَالَّذِيْنَ
اتَّبَعُوْهُمْ بِاِحْسَانٍ ۙ رَّضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ وَاَعَدَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ تَحْتَهَا الْاَنْهٰرُ
خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۗ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۝

वस्साबिक़ूनल् अव्वलू-न मिनल्-मुहाजिरी-न वल्-अन्सारि वल्लज़ीनत्त-बअूहुम् बि-इह्सानिर्-रज़ियल्लाहु अ़न्हुम् व रज़ू अ़न्हु व	और जो लोग पुराने हैं सबसे पहले हिजरत करने वाले और मदद करने वाले और जो उनकी पैरवी करने वाले हुए नेकी के साथ, अल्लाह राज़ी हुआ उनसे

अ-अ़द्-द लहुम् जन्नातिन् तज्री तह्तहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा अ-बदन्, ज़ालिकल् फ़ौज़ुल्-अ़ज़ीम (100)	और वे राज़ी हुए उससे, और तैयार कर रखे हैं वास्ते उनके बाग़ कि बहती हैं नीचे उनके नहरें, रहा करें उनमें हमेशा, यही है बड़ी कामयाबी। (100)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जो मुहाजिरीन और अन्सार (ईमान लाने में सब उम्मत से) पहले और मुक़द्दम हैं, और (बक़ीया उम्मत में) जितने इख़्लास के साथ (ईमान लाने में) उनके पैरोकार हैं, अल्लाह उन सबसे राज़ी हुआ (कि उनका ईमान क़ुबूल फ़रमाया, जिस पर उनको जज़ा मिलेगी) और वे सब उससे (यानी अल्लाह से) राज़ी हुए (कि इताअ़त इख़्तियार की, जिसकी जज़ा से यह रज़ा और ज़्यादा होगी) और उसने (यानी अल्लाह ने) उनके लिए ऐसे बाग़ तैयार कर रखे हैं जिनके नीचे नहरें जारी होंगी, जिनमें वे हमेशा-हमेशा रहेंगे (और) यह बड़ी कामयाबी है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इससे पहली आयत में पक्के-सच्चे देहाती मोमिनों का ज़िक्र था, इस आयत में तमाम पक्के-सच्चे मोमिनों का ज़िक्र है, जिनमें उनके फ़ज़ीलत वाले दर्जों का भी बयान है।

اَلسّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ مِنَ الْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ.

इस जुमले में अक्सर हज़राते मुफ़स्सिरीन ने हर्फ़ मिन तबईज़िया क़रार देकर मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा-ए-किराम के दो तब्क़े क़ायम किये हैं- एक शुरू के और पहले हज़रात का, दूसरा दूसरे दर्जे के हज़राते सहाबा-ए-किराम का।

फिर इसमें अक़वाल विभिन्न हैं, बाज़ हज़रात ने सहाबा-ए-किराम में से शुरू के और पहले उनको क़रार दिया है जिन्होंने दोनों क़िब्लों की तरफ़ नमाज़ पढ़ी है, यानी क़िब्ला बदलने से पहले जो मुसलमान हो चुके थे, वे साबिक़ीन-ए-अव्वलीन (शुरू के और पहले) हैं, यह क़ौल सईद बिन मुसैयब और क़तादा रह. का है। हज़रत अ़ता बिन अबी रबाह ने फ़रमाया कि साबिक़ीन-ए-अव्वलीन वे सहाबा हैं जो ग़ज़्वा-ए-बदर में शरीक हुए, और इमाम शाबी रह. ने फ़रमाया कि जो सहाबा हुदैबिया की बैअ़त-ए-रिज़वान में शरीक हुए वे साबिक़ीन-ए-अव्वलीन (शुरू के और पहले) हैं, और हर क़ौल के मुताबिक़ बाक़ी सहाबा-ए-किराम मुहाजिर हों या अन्सार साबिक़ीन-ए-अव्वलीन के बाद दूसरे दर्जे में हैं। (तफ़सीरे मज़हरी, तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और तफ़सीरे मज़हरी में एक क़ौल यह भी नक़ल किया है कि हर्फ़ मिन को इस आयत में तबईज़ के लिये न लिया जाये बल्कि बयान के मायने में हो तो मफ़्हूम इस जुमले का यह होगा कि तमाम सहाबा-ए-किराम बाक़ी उम्मत के मुक़ाबले में साबिक़ीन-ए-अव्वलीन हैं, और 'मिनल्

मुहाजिरी-न वल्अन्सारि' इसका बयान है। बयानुल-क़ुरआन का ख़ुलासा-ए-तफ़सीर जो ऊपर नक़ल किया गया उसमें इसी तफ़सीर को इख़्तियार किया गया है।

पहली तफ़सीर के मुताबिक़ सहाबा-ए-किराम में दो तब्क़े हो जाते हैं- एक साबिक़ीने अव्वलीन का, दूसरा वह जो क़िब्ला बदलने या ग़ज़्वा-ए-बदर या बैअ़त-ए-रिज़्वान के बाद मुसलमान हुए। और आख़िरी तफ़सीर का हासिल यह हुआ कि सहाबा-ए-किराम सब के सब साबिक़ीने अव्वलीन ही हैं, क्योंकि उनका ईमान बाक़ी उम्मत से पहले और साबिक़ है।

وَالَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُمْ بِاِحْسَانٍ.

"यानी जिन लोगों ने आमाल व अख़्लाक़ में साबिक़ीन-ए-अव्वलीन (पहले और शुरू वालों) की पैरवी मुकम्मल तरीक़े पर की।"

पहले जुमले की पहली तफ़सीर के मुताबिक़ उन लोगों में पहला दर्जा उन मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा का है जो क़िब्ला बदलने या ग़ज़्वा-ए-बदर या बैअ़त-ए-हुदैबिया के बाद मुसलमान होकर सहाबा-ए-किराम में दाख़िल हुए। दूसरा दर्जा उनके बाद के सब मुसलमानों का है जो क़ियामत तक ईमान, नेक आमाल और ऊँचे अख़्लाक़ में सहाबा किराम के नमूने पर चले, और उनकी मुकम्मल पैरवी की। और दूसरी तफ़सीर के मुताबिक़ 'अल्लज़ीनत्त-बऊ' में सहाबा-ए-किराम के बाद के हज़रात दाख़िल हैं जिनको इस्तिलाह में ताबिईन कहा जाता है, और फिर उन इस्तिलाही ताबिईन के बाद क़ियामत तक आने वाले वे सब मुसलमान भी इसमें शामिल हैं जो ईमान व नेक अ़मल में सहाबा-ए-किराम की मुकम्मल पैरवी करें।

सहाबा-ए-किराम सब के सब बिना किसी को अलग किये जन्नती और अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं

मुहम्मद बिन कअ़ब क़ुरज़ी रह. से किसी ने मालूम किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सहाबा-ए-किराम के बारे में आप क्या फ़रमाते हैं? उन्होंने कहा कि सहाबा-ए-किराम सब के सब जन्नत में हैं अगरचे वे लोग हों जिनसे दुनिया में ग़लतियाँ और गुनाह भी हुए हैं। उस शख़्स ने मालूम किया कि यह बात आपने कहाँ से कही (इसकी क्या दलील है)? उन्होंने फ़रमाया कि क़ुरआने करीम की यह आयत पढ़ोः

اَلسّٰبِقُوْنَ الْاَوَّلُوْنَ.

(यानी यही आयत 100) इसमें तमाम सहाबा किराम के बारे में बिना किसी शर्त के 'रज़ियल्लाहु अ़न्हुम व रज़ू अ़न्हु' (कि उनसे अल्लाह राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए) इरशाद फ़रमाया है, अलबत्ता ताबिईन (उनकी पैरवी करने वालों) के मामले में 'नेकी के साथ पैरवी' की शर्त लगाई गयी है, जिससे मालूम हुआ कि सहाबा-ए-किराम बिना किसी क़ैद व शर्त के सब के सब बिना किसी को अलग किये अल्लाह की रज़ा से सम्मानित हैं।

तफ़सीरे मज़हरी में यह क़ौल नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि मेरे नज़दीक सब सहाबा-ए-किराम के जन्नती होने पर इससे भी ज़्यादा स्पष्ट सुबूत इस आयत में है:

لَا يَسْتَوِىْ مِنْكُمْ مَّنْ اَنْفَقَ مِنْ قَبْلِ الْفَتْحِ وَقٰتَلَ اُولٰٓئِكَ اَعْظَمُ دَرَجَةً مِّنَ الَّذِيْنَ اَنْفَقُوْا مِنْ ۢ بَعْدُ وَقٰتَلُوْا. وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى.

इस आयत में पूरी स्पष्टता से यह बयान कर दिया गया है कि सहाबा-ए-किराम अव्वलीन (शुरू वाले) हों या आख़िरीन (बाद वाले) सब से अल्लाह तआ़ला ने हुस्ना यानी जन्नत का वायदा फ़रमाया है।

और हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जहन्नम की आग उस मुसलमान को नहीं छू सकती जिसने मुझे देखा है या मेरे देखने वालों को देखा है।

(तिर्मिज़ी हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से)

तंबीहः जो लोग सहाबा-ए-किराम के आपसी विवादों और उनमें पेश आने वाले वाक़िआ़त की बिना पर कुछ सहाबा-ए-किराम के मुताल्लिक़ ऐसी आलोचनायें करते हैं जिनको पढ़कर पढ़ने वालों के दिल उनकी तरफ़ से बदगुमानी में मुब्तला हो सकें, वे अपने आपको एक ख़तरनाक रास्ते पर डाल रहे हैं। अल्लाह तआ़ला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

وَمِمَّنْ حَوْلَكُمْ مِّنَ الْاَعْرَابِ مُنٰفِقُوْنَ ۛؕ وَمِنْ اَهْلِ الْمَدِيْنَةِ ۛؔ
مَرَدُوْا عَلَى النِّفَاقِ ۟ لَا تَعْلَمُهُمْ ؕ نَحْنُ نَعْلَمُهُمْ ؕ سَنُعَذِّبُهُمْ مَّرَّتَيْنِ ثُمَّ يُرَدُّوْنَ اِلٰى عَذَابٍ عَظِيْمٍ ۚ

व मिम्मन् हौलकुम् मिनल्-अअ़्राबि मुनाफ़िक़ू-न, व मिन् अह़्लिल्-मदीनति म-रदू अ़लन्निफ़ाक़ि, ला तअ़्लमुहुम्, नह़्नु नअ़्लमुहुम्, सनुअ़ज़्ज़िबुहुम् मर्रतैनि सुम्-म युरद्दू-न इला अ़ज़ाबिन् अ़ज़ीम (101)	**और बाज़े तुम्हारे गिर्द के गंवार मुनाफ़िक़ हैं, और बाज़े लोग मदीना वाले अड़ रहे हैं निफ़ाक़ पर तू उनको नहीं जानता हमको वे मालूम हैं, उनको हम अ़ज़ाब देंगे दो बार, फिर वे लौटाये जायेंगे बड़े अ़ज़ाब की तरफ़। (101)**

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ तुम्हारे आस-पास वाले देहातियों में और कुछ मदीना वालों में ऐसे मुनाफ़िक़ हैं कि निफ़ाक़ की आख़िरी हद को पहुँचे हुए हैं (कि) आप (भी) उनको नहीं जानते (कि ये मुनाफ़िक़ हैं, बस) उनको हम ही जानते हैं। हम उनको (यानी मुनाफ़िक़ों को आख़िरत से पहले भी) दोहरी सज़ा देंगे (एक निफ़ाक़ की दूसरे निफ़ाक़ में हद से बढ़ने की) और फिर (आख़िरत में) वे बड़े भारी अ़ज़ाब की तरफ़ (यानी जहन्नम में हमेशा के लिये) भेजे जाएँगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहले की बहुत सी आयतों में उन मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र आया है जिनका निफ़ाक़ (दिल से ईमान वाला न होना) उनकी बातों और कामों से ज़ाहिर हो चुका था और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पहचानते थे कि ये मुनाफ़िक़ हैं। इस आयत में ऐसे मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र है जिनका निफ़ाक़ हद से ज़्यादा बढ़ा होने की वजह से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर अब तक छुपा रहा, इस आयत में ऐसे सख़्त मुनाफ़िक़ों पर आख़िरत से पहले ही दो अ़ज़ाब होने का ज़िक्र आया है- एक दुनिया ही में कि हर वक़्त अपने निफ़ाक़ को छुपाने की फ़िक्र और ज़ाहिर होने के डर में मुब्तला रहते हैं, और इस्लाम और मुसलमानों से बेहद दुश्मनी व नफ़रत रखने के बावजूद ज़ाहिर में उनकी इ़ज़्ज़त व सम्मान और उनकी पैरवी पर मजबूर होना भी कुछ कम अ़ज़ाब नहीं, और दूसरा अ़ज़ाब क़ब्र व बर्ज़ख़ का अ़ज़ाब है जो क़ियामत व आख़िरत से पहले ही उनको पहुँचेगा।

وَاٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّاٰخَرَ سَيِّئًا ۭ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْهِمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيْهِمْ بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ ۭ اِنَّ صَلٰوتَكَ سَكَنٌ
لَّهُمْ ۭ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝ اَلَمْ يَعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ هُوَ يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهٖ وَيَاْخُذُ الصَّدَقٰتِ
وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ ۝ وَقُلِ اعْمَلُوْا فَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُوْلُهٗ وَالْمُؤْمِنُوْنَ ۭ وَسَتُرَدُّوْنَ
اِلٰى عٰلِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ وَاٰخَرُوْنَ مُرْجَوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ اِمَّا
يُعَذِّبُهُمْ وَاِمَّا يَتُوْبُ عَلَيْهِمْ ۭ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝

व आख़रूनअ़्-त-रफ़ू बिज़ुनूबिहिम् ख़-लतू अ़-मलन् सालिहंव्-व आख़-र सय्यिअन्, अ़सल्लाहु अंय्यतू-ब अ़लैहिम्, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (102) ख़ुज़् मिन् अम्वालिहिम् स-द-क़तन् तुतह्हिरुहुम् व तुज़क्कीहिम् बिहा व सल्लि अ़लैहिम्, इन्-न सलात-क	और बाज़े लोग हैं कि इक़रार किया उन्होंने अपने गुनाहों का, मिलाया उन्होंने एक काम नेक और दूसरा बुरा, क़रीब है कि अल्लाह माफ़ करे उनको, बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (102) ले उनके माल में से ज़कात कि पाक करे तू उनको और बरकत वाला करे तू उनको उसकी वजह से, और दुआ़ दे उनको, बेशक तेरी दुआ़ उनके लिये तस्कीन (सुकून का सामान) है और

स-कनुल्लहुम्, वल्लाहु समीअुन् अ़लीम (103) अलम् यअ़्लमू अन्नल्ला-ह हु-व यक़्बलुत्तौब-त अ़न् अ़िबादिही व यअ्ख़ुज़ुस्स-दक़ाति व अन्नल्ला-ह हुवत्-तव्वाबुर्रहीम (104) व क़ुलिअ़्मलू फ़-स-यरल्लाहु अ़-म-लकुम् व रसूलुहू वल्-मुअ्मिनू-न, व सतुरद्दू-न इला आ़लिमिल्-ग़ैबि वश्शहा-दति फ़-युनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् तअ़्मलून (105) व आख़रू-न मुर्जौ-न लिअम्रिल्लाहि इम्मा युअ़ज़्ज़िबुहुम् व इम्मा यतूबु अ़लैहिम्, वल्लाहु अ़लीमुन् हकीम (106)	अल्लाह सब कुछ सुनता जानता है। (103) क्या वे जान नहीं चुके कि अल्लाह ख़ुद क़ुबूल करता है तौबा अपने बन्दों से और लेता है ज़कातें, और यह कि अल्लाह ही तौबा क़ुबूल करने वाला मेहरबान है। (104) और कह कि अ़मल किये जाओ फिर आगे देख लेगा अल्लाह तुम्हारे काम को और उसका रसूल और मुसलमान, और तुम जल्द लौटाये जाओगे उसके पास जो तमाम छुपी और ख़ुली चीज़ों से वाक़िफ़ है, फिर वह जता देगा तुमको जो कुछ तुम करते थे। (105) और बाज़े वे लोग हैं कि उनका काम ढील में है हुक्म पर अल्लाह के, या तो वह उनको अ़ज़ाब दे और या उनको माफ़ करे, और अल्लाह सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (106)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कुछ और लोग हैं जो अपनी ख़ता के इक़रारी हो गये। जिन्होंने मिले-जुले अ़मल किए थे, कुछ भले (जैसे अपनी ग़लती स्वीकार करना जिसका मन्शा शर्मिन्दगी है और यही तौबा है, और जैसे और जंगें जो पहले हो चुकी हैं। ग़र्ज़ कि ये काम तो अच्छे किये) और कुछ बुरे (किये जैसे बिना किसी मजबूरी के पीछे रह जाना और बैठ रहना, सो) अल्लाह तआ़ला से उम्मीद (यानी उनका वायदा) है कि उन (के हाल) पर रहमत के साथ तवज्जोह फ़रमाएँ (यानी तौबा क़ुबूल कर लें), बेशक अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले, बड़ी रहमत वाले हैं।

(जब इस आयत से तौबा क़ुबूल हो चुकी और वे हज़रात सुतूनों से खुल चुके तो अपना माल आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में लेकर आये और दरख़्वास्त की कि इसको अल्लाह की राह में ख़र्च किया जाये, तो इरशाद हुआ कि) आप उनके मालों में से सदक़ा (जिसको ये लाये हैं) ले लीजिए, जिसके (लेने के) ज़रिये से आप उनको (गुनाह के आसार से) पाक व साफ़ कर देंगे। और (जब आप लें तो) उनके लिये दुआ़ कीजिए, बेशक आपकी दुआ़ उनके लिये (दिल के) इत्मीनान का सबब है, और अल्लाह तआ़ला (उनके स्वीकार कर लेने को) ख़ूब सुनते हैं (और उनकी शर्मिन्दगी को) ख़ूब जानते हैं। (इसलिये उनके इख़्लास को देखकर

आपको ये अहकाम दिये गये। इन ज़िक्र हुए नेक आमाल यानी तौबा, किये पर शर्मिन्दगी और ख़ैर के रास्ते में ख़र्च करने की तरग़ीब, और बुरे आमाल जैसे जंग में शिर्कत से पीछे और बैठ रहने वग़ैरह से आईन्दा के लिये डरावा है। पस पहले शौक़ व प्रेरणा है यानी) क्या उनको यह ख़बर नहीं कि अल्लाह तआ़ला ही अपने बन्दों की तौबा क़ुबूल करता है और वही सदक़ों को क़ुबूल फ़रमाता है (और क्या उनको ख़बर नहीं कि) अल्लाह तआ़ला ही तौबा क़ुबूल करने (की सिफ़त में, और) रहमत करने (की सिफ़त) में कामिल हैं। (इसी लिये उनकी तौबा क़ुबूल की, और अपनी रहमत से माल क़ुबूल करने का हुक्म और उनके लिये दुआ़ करने का हुक्म फ़रमाया। पस आईन्दा भी ख़ता या गुनाह हो जाने पर तौबा कर लिया करें, और अगर तौफ़ीक़ हो तो ख़ैर-ख़ैरात किया करें) और (रुचि दिलाने के बाद आगे डरावा और चेतावनी है, यानी) आप (उनसे यह भी) कह दीजिए कि (जो चाहो) अ़मल किये जाओ, सो (अव्वल तो दुनिया ही में) अभी देख लेता है तुम्हारे अ़मल को अल्लाह और उसका रसूल और ईमान वाले, (पस बुरे अ़मल पर दुनिया ही में ज़िल्लत और रुस्वाई हो जाती है) और (फिर आख़िरत में) ज़रूर तुमको ऐसे (यानी अल्लाह) के पास जाना है जो तमाम छुपी और खुली चीज़ों को जानने वाला है। सो वह तुमको तुम्हारा सब किया हुआ बतला देगा। (पस बुरे अ़मल से जैसे जंग में साथ जाने से पीछे रह जाने वग़ैरह से आईन्दा एहतियात रखो, यह पहली क़िस्म का बयान था, आगे दूसरी क़िस्म का ज़िक्र है) और कुछ और लोग हैं जिनका मामला ख़ुदा का हुक्म आने तक मुल्तवी "यानी अधर में" है कि (सच्चे दिल से तौबा न करने की वजह से) उनको सज़ा देगा या (सच्चे दिल से करने की वजह से) उनकी तौबा क़ुबूल कर लेगा, और अल्लाह (सच्चे दिल और नेक-नीयती से होने या न होने का हाल) ख़ूब जानने वाला है (और) बड़ा हिक्मत वाला है (पस अपनी हिक्मत के तक़ाज़े के सबब सच्चे दिल से की गयी तौबा को क़ुबूल करता है, और सच्चे दिल से न की गयी को क़ुबूल नहीं करता, और अगर कभी बिना तौबा के माफ़ करने में हिक्मत हो तो ऐसा भी कर देता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ग़ज़्वा-ए-तबूक (तबूक की लड़ाई) के लिये जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से आ़म ऐलान और सब मुसलमानों को चलने का हुक्म हुआ तो ज़माना सख़्त गर्मी का था, मन्ज़िल दूर-दराज़ की थी, और एक बाक़ायदा बड़ी हुकूमत की प्रशिक्षित फ़ौज से मुक़ाबला था, जो इस्लाम की तारीख़ में पहला ही वाक़िआ़ था। ये असबाब थे जिनकी वजह से इस हुक्म के बारे में लोगों के हालात भिन्न हो गये और उनकी जमाअ़तों की कई क़िस्में हो गयीं।

एक क़िस्म सच्चे और मुख़्लिस हज़रात की थी जो पहला हुक्म सुनते ही बिना किसी शंका के जिहाद के लिये तैयार हो गये, दूसरी क़िस्म वे लोग थे जो शुरू में कुछ शंका और दुविधा में रहे फिर साथ हो लिये। आयतः

اَلَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ فِيْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ ۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ

में उन्हीं हज़रात का ज़िक्र है।

तीसरी क़िस्म उन हज़रात की है जो वाक़ई माज़ूर थे, इसलिये न जा सके। उनका ज़िक्र आयतः

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ.

में है। चौथी क़िस्म उन सच्चे मोमिनों की है जो उज़्र न होने के बावजूद सुस्ती काहिली के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए, उनका ज़िक्र उपर्युक्त आयत नम्बर 102 और आयत नम्बर 106 में आया है। पाँचवीं क़िस्म मुनाफ़िक़ों की थी जो निफ़ाक़ के सबब जिहाद में शरीक नहीं हुए, उनका ज़िक्र पीछे गुज़री बहुत सी आयतों में आ चुका है। खुलासा यह है कि पहले बयान हुई आयतों में ज़्यादातर ज़िक्र पाँचवीं क़िस्म यानी मुनाफ़िक़ों का हुआ है, उपर्युक्त आयतों में चौथी क़िस्म के हज़रात का ज़िक्र है जो मोमिन होने के बावजूद सुस्ती व काहिली के कारण जिहाद में शरीक नहीं हुए।

पहली आयत में फ़रमाया कि कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने अपने गुनाहों का इक़रार कर लिया, उन लोगों के आमाल मिले-जुले हैं, कुछ अच्छे कुछ बुरे, उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमा लें। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि दस हज़रात थे जो बिना किसी सही उज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक में न गये थे, फिर उनको अपने फ़ेल पर शर्मिन्दगी हुई, उनमें से सात आदमियों ने अपने आपको मस्जिदे नबवी के सुतूनों के साथ बाँध लिया, और यह अ़हद किया कि जब तक हमारी तौबा क़ुबूल करके खुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हमें न खोलेंगे हम इसी तरह बंधे हुए क़ैदी रहेंगे। उन हज़रात में अबू लुबाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नाम पर सब रिवायतें सहमत हैं, दूसरे हज़रात के नामों के बारे में रिवायतें अलग-अलग हैं।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब उनको बंधा हुआ देखा और मालूम हुआ कि उन्होंने अ़हद यह किया है कि जब तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम खुद उनको न खोलेंगे उस वक़्त तक बंधे रहेंगे, तो आपने फ़रमाया कि मैं भी अल्लाह की क़सम खाता हूँ कि उस वक़्त तक न खोलूँगा जब तक अल्लाह तआ़ला मुझे इनके खोलने का हुक्म न देगा, क्योंकि जुर्म बड़ा है। इस पर उक्त आयत नाज़िल हुई और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके खोलने का हुक्म दे दिया, और वे खोल दिये गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

हज़रत सईद बिन मुसैयब रह. की रिवायत में है कि जब अबू लुबाबा को खोलने का इरादा किया गया तो उन्होंने इनकार किया और कहा कि जब तक खुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम राज़ी होकर मुझे अपने हाथ से न खोलेंगे मैं बंधा रहूँगा। चुनाँचे सुबह की नमाज़ में जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये तो अपने हाथ मुबारक से उनको खोला।

अच्छे और बुरे मिले-जुले अ़मल क्या थे?

आयत में फ़रमाया है कि उन लोगों के कुछ अ़मल नेक थे, कुछ बुरे। उनके नेक आमाल तो

उनका ईमान, नमाज़, रोज़े की पाबन्दी और इस जिहाद से पहले जंगों व मुहिमों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ शिर्कत और ख़ुद इस तबूक के वाक़िए में अपने जुर्म का इक़रार कर लेना और शर्मिन्दा होकर तौबा करना वग़ैरह हैं। और बुरे अ़मल ग़ज़वा-ए-तबूक में शरीक न होना और अपने अ़मल से मुनाफ़िक़ों की मुवाफ़क़त करना है।

जिन मुसलमानों के आमाल अच्छे-बुरे मिले-जुले हों क़ियामत तक वे भी इस हुक्म में दाख़िल हैं

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में है कि अगरचे यह आयत एक ख़ास जमाअ़त के बारे में नाज़िल हुई है मगर इसका हुक्म क़ियामत तक आ़म है उन मुसलमानों के लिये जिनके आमाल नेक व बद मिले-जुले हों, अगर वे अपने गुनाहों से तौबा कर लें तो उनके लिये माफ़ी और मग़फ़िरत की उम्मीद है।

हज़रत अबू उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि क़ुरआने करीम की यह आयत इस उम्मत के लिये बड़ी उम्मीद दिलाने वाली है, और सही बुख़ारी में हज़रत समुरा बिन जुन्दुब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मेराज की एक तफ़सीली हदीस में है कि सातवें आसमान पर जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुलाक़ात हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के साथ हुई तो उनके पास कुछ लोग देखे जिनके चेहरे सफ़ेद थे, और कुछ ऐसे कि उनके चेहरों में कुछ दाग़-धब्बे थे। ये दूसरी क़िस्म के लोग एक नहर में दाख़िल हुए और ग़ुस्ल करके वापस आये तो उनके चेहरे भी बिल्कुल साफ़ सफ़ेद हो गये थे। जिब्रील अ़लैहिस्सलाम ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतलाया कि ये सफ़ेद चेहरे वाले वे लोग हैं जो ईमान लाये और फिर गुनाहों से पाक साफ़ रहे:

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَلَمْ يَلْبِسُوْٓا اِيْمَانَهُمْ بِظُلْمٍ.

और दूसरे ये लोग हैं जिन्होंने मिले-जुले अच्छे-बुरे सब तरह के काम किये, फिर तौबा कर ली, अल्लाह ने उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमा ली और गुनाह माफ़ हो गये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً.

इस आयत का वाक़िआ़ यह है कि जिन हज़रात का ऊपर ज़िक्र हुआ कि बिना उ़ज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक से पीछे रह गये थे, फिर शर्मिन्दा होकर अपने आपको मस्जिद के सुतूनों से बाँध लिया, फिर उपर्युक्त आयत में उनकी तौबा की क़ुबूलियत नाज़िल हुई और क़ैद से खोले गये तो इन हज़रात ने शुक्राने के तौर पर अपना सारा माल सदक़ा करने के लिये पेश कर दिया। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ुबूल करने से इनकार फ़रमाया कि मुझे माल लेने का हुक्म नहीं है, इस पर यह आयत नम्बर 103 नाज़िल हुई और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पूरे माल के बजाय एक तिहाई माल का सदक़ा करना क़ुबूल फ़रमा लिया, क्योंकि आयत में

इसकी तरफ़ इशारा है कि पूरा माल न लिया जाये बल्कि उसका कोई हिस्सा लिया जाये। हर्फ़ मिन इस पर सुबूत है।

इस्लामी हुकूमत की एक ज़िम्मेदारी

मुसलमानों के सदक़ात ज़कात वग़ैरह वसूल करना और उनके सही मस्रफ़ (ख़र्च की जगह) पर ख़र्च करना इस्लामी हुकूमत की ज़िम्मेदारी है। इस आयत में अगरचे शाने नुज़ूल के एतिबार से एक ख़ास जमाअ़त से सदक़ा वसूल करने का हुक्म दिया गया है लेकिन यह आयत अपने मफ़्हूम (मायने) के एतिबार से आ़म है।

तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी, अहकामुल-क़ुरआन, तफ़सीर-ए-जस्सास, तफ़सीर-ए-मज़हरी वग़ैरह में इसी को तरजीह दी गयी है। और क़ुर्तुबी और जस्सास ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अगर इस आयत में शाने नुज़ूल वही ख़ास वाक़िआ़ क़रार दिया जाये जिसका ज़िक्र ऊपर आया है तो फिर भी क़ुरआनी उसूल की रू से यह हुक्म आ़म ही रहेगा, और क़ियामत तक के मुसलमानों पर हावी होगा, क्योंकि क़ुरआने करीम के ज़्यादातर अहकाम ख़ास-ख़ास वाक़िआ़त में नाज़िल हुए मगर उनका दायरा-ए-अ़मल किसी के नज़दीक उस ख़ास वाक़िए तक सीमित नहीं होता, बल्कि जब तक कोई सीमित और ख़ास करने की दलील न हो वह हुक्म तमाम मुसलमानों के लिये आ़म और सब को शामिल ही क़रार दिया जाता है।

यहाँ तक कि पूरी उम्मते मुहम्मदिया का इस पर भी इत्तिफ़ाक़ (सहमति) है कि इस आयत में अगरचे ख़िताब ख़ास नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है मगर यह हुक्म न आपके साथ मख़्सूस है और न आपके ज़माने तक सीमित, बल्कि हर वह शख़्स जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के क़ायम-मक़ाम (जानशीन व नायब बनकर) मुसलमानों का अमीर होगा वह इस हुक्म का मुख़ातब और मामूर (पाबन्द) होगा। उसके फ़राईज़ (ज़िम्मेदारी और कर्तव्य) में दाख़िल होगा कि मुसलमानों की ज़कात व सदक़ात के वसूल करने और सही जगह पर ख़र्च करने का इन्तिज़ाम करे।

हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िलाफ़त के शुरू के ज़माने में जो ज़कात के रोक लेने वालों पर जिहाद करने का वाक़िआ़ पेश आया उसमें भी ज़कात न देने वाले कुछ तो वे लोग थे जो खुल्लम-खुल्ला इस्लाम से बाग़ी और मुर्तद (बेदीन) हो गये थे, और कुछ ऐसे लोग भी थे जो अपने आपको मुसलमान ही कहते थे मगर ज़कात न देने का यह बहाना करते थे कि इस आयत में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हमसे ज़कात व सदक़ात वसूल करने का हुक्म आपकी ज़िन्दगी तक था, हमने उसकी तामील की, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद हज़रत अबू बक्र को क्या हक़ है कि हमसे ज़कात व सदक़ात तलब करें। और शुरू-शुरू में हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को उन पर जिहाद करने से इसी लिये दुविधा और असमंजस की हालत पेश आयी कि ये मुसलमान हैं, एक आयत की आड़ लेकर ज़कात से बचना चाहते हैं, इसलिये इनके साथ वह मामला न किया जाये जो आ़म मुर्तद (इस्लाम से फिर

जाने वालों) के साथ किया जाता है। मगर सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने पूरी हिम्मत और पक्के इरादे के साथ फ़रमाया कि जो शख़्स नमाज़ और ज़कात में फ़र्क़ करेगा हम उस पर जिहाद करेंगे।

इशारा इस बात की तरफ़ था कि जो लोग ज़कात के हुक्म को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस करने और आपके बाद उसके ख़त्म हो जाने के क़ायल हुए वे कल को यह भी कह सकते हैं कि नमाज़ भी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस थी, क्योंकि क़ुरआने करीम में यह आयत आई है:

اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوْكِ الشَّمْسِ.

जिसमें नमाज़ के क़ायम करने के मुख़ातब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं। मगर जिस तरह नमाज़ की आयत का हुक्म पूरी उम्मत के लिये आ़म है और इसको हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस होने की ग़लत तावील उनको कुफ़्र से नहीं बचा सकती, इसी तरह आयत 'ख़ुज़् मिन अमवालिहिम' (यानी आयत नम्बर 103) में यह तावील (मतलब बयान करना) उनको कुफ़्र और इस्लाम से बाहर हो जाने से नहीं बचायेगी। इस पर हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को भी इत्मीनान हो गया और तमाम सहाबा की राय से उन लोगों के ख़िलाफ़ जिहाद किया गया।

ज़कात हुकूमत का टैक्स नहीं बल्कि इबादत है

क़ुरआन-ए-करीम ने ज़िक्र हुई आयत नम्बर 103 में 'ख़ुज़् मिन अमवालिहिम' के बाद जो यह इरशाद फ़रमायाः

صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيْهِمْ بِهَا.

"यानी उनको पाक-साफ़ करने के लिये" इसमें यह इशारा पाया जाता है कि ज़कात व सदक़ात कोई हुकूमत का टैक्स नहीं, जो आ़म हुकूमतें मुल्क का निज़ाम चलाने के लिये वसूल करती हैं, बल्कि इसका मक़सद ख़ुद मालदार लोगों को गुनाहों से पाक साफ़ करना है।

यहाँ यह बात भी ग़ौर करने के क़ाबिल है कि ज़कात व सदक़ात को वसूल करने से दर हक़ीक़त दो फ़ायदे हासिल होते हैं- एक फ़ायदा ख़ुद माल वाले का है कि इसके ज़रिये से वह गुनाहों से और माल की हिर्स व मुहब्बत से पैदा होने वाली अख़्लाक़ी बीमारियों के जरासीम से पाक व साफ़ हो जाता है। दूसरा फ़ायदा यह है कि इसके ज़रिये क़ौम के उस कमज़ोर वर्ग की परवरिश होती है जो ख़ुद अपनी ज़रूरतें मुहैया करने से मजबूर या क़ासिर है, जैसे यतीम बच्चे, बेवा औ़रतें, अपाहिज व माज़ूर मर्द व औ़रतें और आ़म ग़रीब व मिस्कीन लोग वग़ैरह।

लेकिन क़ुरआने हकीम ने इस जगह सिर्फ़ पहला फ़ायदा बयान करने पर बस करके इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि ज़कात व सदक़ात का असल मक़सद पहला ही फ़ायदा है, दूसरा फ़ायदा इससे ज़िमनी तौर पर हासिल हो जाता है। इसलिये अगर मान लो किसी जगह या किसी

वक़्त कोई यतीम, बेवा, फ़क़ीर, मिस्कीन मौजूद न हो तब भी माल वालों से ज़कात का हुक्म ख़त्म न होगा।

इस मज़मून की ताईद इससे भी होती है कि पिछली उम्मतों में जो माल अल्लाह तआ़ला के लिये निकाला जाता था उसका इस्तेमाल किसी के लिये जायज़ न था, बल्कि दस्तूर यह था कि उसको किसी अ़लैहदा जगह पर रख दिया जाता था और आसमानी बिजली आकर उसको जला देती थी। यही निशानी थी इस बात की कि यह सदक़ा अल्लाह तआ़ला ने क़ुबूल फ़रमा लिया। और जहाँ यह आसमानी आग न आती तो सदक़े के ग़ैर-मक़बूल होने की निशानी समझी जाती थी, फिर उस मन्हूस माल को कोई हाथ न लगाता था।

इससे वाज़ेह हो गया कि ज़कात व सदक़ात का हुक्म असल में किसी की ज़रूरत पूरी करने के लिये नहीं, बल्कि वह एक माली हक़ और इबादत है, जैसे नमाज़ व रोज़ा जिस्मानी इबादतें हैं। यह इस उम्मत की ख़ुसूसियत में से है कि जो माल अल्लाह के रास्ते में निकाला गया है इस उम्मत के ग़रीबों और ज़रूरत मन्दों के लिये उसका इस्तेमाल जायज़ कर दिया गया, जैसा कि मुस्लिम शरीफ़ की सही हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इसकी वज़ाहत नक़ल की गयी है।

एक सवाल और उसका जवाब

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि ज़िक्र हुए वाक़िए में जब उन हज़रात की तौबा क़ुबूल कर ली गयी तो गुनाह की माफ़ी और पाकीज़गी तौबा ही के ज़रिये हो चुकी, फिर माल लेने को पाक करने का ज़रिया क़रार देने के मायने क्या होंगे?

जवाब यह है कि अगरचे तौबा से गुनाह माफ़ हो गया मगर गुनाह माफ़ होने के बाद उसकी कुछ अंधेरी और मैल बाक़ी रह सकता है जो आगे फिर भी गुनाह करने का सबब बन सकता है, सदक़ा करने से वह मैल-कुचैल दूर होकर मुकम्मल पाकीज़गी हो जायेगी।

'व सल्लि अ़लैहिम' इसमें लफ़्ज़ सलात से मुराद उनके लिये रहमत की दुआ़ करना है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मन्क़ूल यही है कि कुछ लोगों के लिये आपने लफ़्ज़ सलात ही से दुआ़ फ़रमाई जैसे:

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰٓى اٰلِ اَبِیْ اَوْفٰی

(या अल्लाह! अबू औफ़ा की औलाद पर रहमत फ़रमा) हदीस में आया है, लेकिन बाद में लफ़्ज़ सलात अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की विशेष पहचान बन गयी, इसलिये अक्सर फ़ुक़हा रह. का यह क़ौल है कि अब किसी शख़्स के लिये सलात के लफ़्ज़ के साथ दुआ़ न की जाये, बल्कि इस लफ़्ज़ को सिर्फ़ अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के लिये मख़्सूस रखा जाये, ताकि शुब्हा और धोखा न हो। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन वग़ैरह)

यहाँ आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सदक़ा देने वालों के लिये दुआ़ करने का हुक्म

है, इस वजह से कुछ फ़ुक़हा हज़रात ने फ़रमाया कि इमाम व अमीर को सदक़ा करने वालों के लिये दुआ करना वाजिब है, और कुछ हज़रात ने इसको लाज़िमी हुक्म नहीं बल्कि एक अच्छा और पसन्दीदा अ़मल बतलाया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَاٰخَرُوْنَ مُرْجَوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ.

दस मोमिन हज़रात जो बिना मजबूरी और उज़्र के ग़ज़वा-ए-तबूक से पीछे रह गये थे उनमें से सात ने तो अपनी शर्मिन्दगी व अफ़सोस का पूरा इज़हार अपने आपको मस्जिद के सुतूनों से बाँधकर कर दिया था, उनका हुक्म पहली आयत यानी आयत 102 में आ चुका। इस आयत से बाक़ी वे तीन हज़रात मुराद हैं जिन्होंने यह अ़मल मस्जिद में क़ैद होने का नहीं किया था, और इस तरह खुले तौर पर इक़रार नहीं किया। उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को हुक्म दे दिया कि मुसलमान उनका बायकाट करें, उनसे सलाम कलाम बन्द कर दें। यह मामला होने के बाद उनकी हालत ठीक हो गयी और सच्चे दिल के साथ अपने जुर्म व ख़ता का इक़रार करके उन्होंने तौबा कर ली तो उनके लिये भी माफ़ी के अहकाम दे दिये गये। (सही बुख़ारी व मुस्लिम)

وَالَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا مَسْجِدًا ضِرَارًا وَّكُفْرًا وَّتَفْرِيْقًا بَيْنَ الْمُؤْمِنِيْنَ وَاِرْصَادًا لِّمَنْ حَارَبَ
اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ مِنْ قَبْلُ ۚ وَلَيَحْلِفُنَّ اِنْ اَرَدْنَآ اِلَّا الْحُسْنٰى ۚ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ﴿۱۰۷﴾ لَا تَقُمْ
فِيْهِ اَبَدًا ۚ لَمَسْجِدٌ اُسِّسَ عَلَى التَّقْوٰى مِنْ اَوَّلِ يَوْمٍ اَحَقُّ اَنْ تَقُوْمَ فِيْهِ ۚ فِيْهِ رِجَالٌ يُّحِبُّوْنَ اَنْ
يَّتَطَهَّرُوْا ۚ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَّهِّرِيْنَ ﴿۱۰۸﴾ اَفَمَنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى تَقْوٰى مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٍ خَيْرٌ اَمْ مَّنْ
اَسَّسَ بُنْيَانَهٗ عَلٰى شَفَا جُرُفٍ هَارٍ فَانْهَارَ بِهٖ فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ ۚ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۰۹﴾ ع ۱۳
لَا يَزَالُ بُنْيَانُهُمُ الَّذِيْ بَنَوْا رِيْبَةً فِيْ قُلُوْبِهِمْ اِلَّآ اَنْ تَقَطَّعَ قُلُوْبُهُمْ ۚ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿۱۱۰﴾ ۲

वल्लज़ीनत्त-ख़ज़ू मस्जिदन् ज़िरारंव्-वकुफ़्रंव्-व तफ़्रीक़म्-बैनल्मुअ्मिनी-न व इर्सादल्-लिमन् हा-रबल्ला-ह व रसूलहू मिन् क़ब्लु, व ल-यह्लिफ़ुन्-न इन् अरद्ना इल्लल्-हुस्ना, वल्लाहु यश्हदु इन्नहुम् लकाज़िबून (107) ला तक़ुम् फ़ीहि अ-बदन्,	और जिन्होंने बनाई है एक मस्जिद ज़िद पर और कुफ़्र पर और फूट डालने को मुसलमानों में, और घात लगाने को उस शख़्स की जो लड़ रहा है अल्लाह से और उसके रसूल से पहले से, और वे क़समें खायेंगे कि हमने तो भलाई ही चाही थी और अल्लाह गवाह है कि वे झूठे हैं। (107) तू न खड़ा हो उसमें कभी, अलबत्ता वह मस्जिद जिसकी बुनियाद

ल-मस्जिदुन् उस्सि-स अलत्तक्वा मिन् अव्वलि यौमिन् अ-हक़्क़ु अन् तक़ू-म फ़ीहि, फ़ीहि रिजालुंय्युहिब्बू-न अंय्यत-तह्हरू, वल्लाहु युहिब्बुल् मुत्तह्हिरीन (108) अ-फ़-मन् अस्स-स बुन्यानहू अला तक़्वा मिनल्लाहि व रिज़्वानिन् ख़ैरुन् अम्-मन् अस्स-स बुन्यानहू अला शफ़ा जुरुफ़िन् हारिन् फ़न्हा-र बिही फ़ी नारि जहन्न-म, वल्लाहु ला यह्दिल् क़ौमज़्-ज़ालिमीन (109) ला यज़ालु बुन्यानुहुमुल्लज़ी बनौ री-बतन् फ़ी क़ुलूबिहिम् इल्ला अन् त-क़त्त-अ क़ुलूबुहुम्, वल्लाहु अलीमुन् हकीम (110) ❁	रखी गई परहेज़गारी पर पहले दिन से वह लायक़ है कि तू खड़ा हो उसमें, उसमें ऐसे लोग हैं जो दोस्त रखते हैं पाक रहने को, और अल्लाह दोस्त रखता है पाक रहने वालों को। (108) भला जिसने बुनियाद रखी अपनी इमारत की अल्लाह से डरने पर और उसकी रज़ामन्दी पर वह बेहतर है या जिसने बुनियाद रखी अपनी इमारत की किनारे पर एक खाई के जो गिरने को है, फिर उसको लेकर ढे पड़ा दोज़ख़ की आग में, और अल्लाह राह नहीं देता ज़ालिम लोगों को। (109) हमेशा रहेगा उस इमारत से जो उन्होंने बनाई थी शुब्हा उनके दिलों में मगर जब टुकड़े हो जायें उनके दिल, और अल्लाह ही सब कुछ जानने वाला हिक्मत वाला है। (110) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (बाज़े ऐसे हैं कि) जिन्होंने (इन उद्देश्यों के लिये) मस्जिद बनाई है कि (इस्लाम को) नुक़सान पहुँचाएँ और (उसमें बैठ-बैठकर) कुफ़्र (यानी रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुश्मनी) की बातें करें, और (उसकी वजह से) ईमान वालों (के मजमे) में फूट डालें। (क्योंकि जब दूसरी मस्जिद बनाई जाये और ज़ाहिर किया जाये कि वह अच्छी नीयत से बनी है तो लाज़िमी है कि पहली मस्जिद का मजमा कुछ न कुछ मुन्तशिर हो ही जाता है) और (यह भी ग़र्ज़ है कि) उस शख़्स के ठहरने का सामान करें जो इस (मस्जिद बनाने) से पहले से ही ख़ुदा और रसूल का मुख़ालिफ़ है (इससे मुराद अबू आमिर राहिब है)। और (पूछो तो) क़समें खा जाएँगे (जैसे एक दफ़ा पहले भी पूछने पर खा चुके हैं) कि सिवाय भलाई के हमारी और कुछ नीयत नहीं (भलाई से मुराद राहत और गुंजाईश है) और अल्लाह गवाह है कि वे (इस दावे में) बिल्कुल झूठे हैं। (जब उस मस्जिद की यह हालत है कि वह असलियत में मस्जिद ही नहीं बल्कि

इस्लाम को नुक़सान पहुँचाने वाली है तो) आप उसमें कभी (नमाज़ के लिये) खड़े न हों। अलबत्ता जिस मस्जिद की बुनियाद अव्वल दिन से (यानी प्रस्तावित दिन से) तक़्वे (और इख़्लास) पर रखी गई है (इससे मुराद मस्जिद-ए-क़ुबा है) वह (वाक़ई) इस लायक़ है कि आप उसमें (नमाज़ के लिये) खड़े हों (चुनाँचे कभी-कभी आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वहाँ तशरीफ़ ले जाते और नमाज़ पढ़ते)। उस (मस्जिद-ए-क़ुबा) में ऐसे (अच्छे) आदमी हैं कि वे ख़ूब पाक होने को पसन्द करते हैं, और अल्लाह तआ़ला ख़ूब पाक होने वालों को पसन्द करता है।

(जब दोनों मस्जिदों के संस्थापकों का हाल मालूम हो गया तो) फिर (समझ लो) क्या ऐसा शख़्स बेहतर है जिसने अपनी इमारत (यानी मस्जिद) की बुनियाद अल्लाह तआ़ला से डरने पर और उसकी रज़ा पर रखी हो, या वह शख़्स (बेहतर होगा) जिसने अपनी इमारत (यानी मस्जिद) की बुनियाद किसी घाटी (यानी गुफा) के किनारे पर रखी हो जो कि गिरने ही को हो, (इससे मुराद बातिल और कुफ़िया उद्देश्य हैं, नापायदारी में उसके साथ तशबीह दी गयी) फिर वह (इमारत) उस (बनाने वाले) को लेकर दोज़ख़ की आग में गिर पड़े (यानी वह इमारत तो गिरी इस वजह से कि वह किनारे पर है, जब वह किनारा पानी से कटकर गिरेगा तो वह इमारत भी गिरेगी, और बनाने वाला गिरा इसलिये कि वह उस इमारत में रहता था, और चूँकि इससे मुराद कुफ़िया उद्देश्य हैं जो दोज़ख़ की तरफ़ लेजाने वाले हैं इसलिये यह फ़रमाया कि वह उसको लेकर जहन्नम में जा गिरी) और अल्लाह तआ़ला ऐसे ज़ालिमों को (दीन की) समझ नहीं देता (कि बनाई तो मस्जिद के नाम से जो कि दीन के निशानात में से है, और ग़र्ज़ें उसमें कैसी कैसी फ़ासिद कर लीं)। उनकी (यह) इमारत (यानी मस्जिद) जो उन्होंने बनाई है (हमेशा) उनके दिलों में (काँटा-सा) खटकती रहेगी, (क्योंकि जिस ग़र्ज़ से बनाई थी वह पूरी न हुई और क़लई खुल गयी सो अलग, और फिर ऊपर से उसको ध्वस्त कर दिया गया, ग़र्ज़ कि कोई अरमान न निकला, इसलिये सारी उम्र उसका अफ़सोस और अरमान बाक़ी रहेगा)। (हाँ) मगर उनके (वे) दिल ही (जिनमें वह अरमान है) फ़ना हो जाएँ तो ख़ैर (वह अरमान भी उस वक़्त ख़त्म हो जाये) और अल्लाह तआ़ला बड़े इल्म वाले, बड़ी हिक्मत वाले हैं (उनकी हालत को जानते हैं और उसी के मुनासिब सज़ा देंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मुनाफ़िक़ों के हालात और ख़िलाफ़े इस्लाम उनकी हरकतों का ज़िक्र ऊपर बहुत सी आयतों में आ चुका है। उपर्युक्त आयतों में भी उनकी एक साज़िश का ज़िक्र है जिसका वाक़िआ यह है कि मदीना तय्यिबा में एक शख़्स अबू आमिर नाम का ज़माना-ए-जाहिलीयत में ईसाई हो गया था, और अबू आमिर राहिब के नाम से मशहूर था। यह वही शख़्स है जिसके लड़के हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु मशहूर सहाबी हैं जिनकी लाश को फ़रिश्तों ने ग़ुस्ल दिया, इसलिये "ग़सील-ए-मलाईका" के नाम से परिचित हुए, मगर बाप अपनी गुमराही और ईसाईयत पर क़ायम रहा।

जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मदीना तय्यिबा तशरीफ़ लाये तो अबू आ़मिर राहिब आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ और इस्लाम पर एतिराज़ किये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के जवाब पर भी इस बदनसीब को इत्मीनान न हुआ, बल्कि यह कहा कि हम दोनों में जो झूठा हो वह मर्दूद और अपने यारों-रिश्तेदारों से दूर होकर सफ़र की हालत में मरे, और कहा कि आपके मुक़ाबले में जो भी दुश्मन आयेगा मैं उसकी मदद करूँगा। चुनाँचे ग़ज़वा-ए-हुनैन तक तमाम ग़ज़वात (लड़ाईयों और जंगों) में मुसलमानों के दुश्मनों के साथ जंग में शिर्कत की, जब हवाज़िन का बड़ा और ताक़तवर क़बीला भी शिकस्त खा गया तो यह मायूस होकर मुल्क शाम भाग गया, क्योंकि यही मुल्क ईसाईयों का मर्कज़ था, वहीं जाकर अपने यारों-रिश्तेदारों से दूर मर गया। जो दुआ़ की थी वह उसके सामने आ गयी। जब किसी शख़्स की रुस्वाई मुक़द्दर होती है तो वह ऐसे ही काम किया करता है, ख़ुद ही अपनी दुआ़ से ज़लील व रुस्वा हुआ।

मगर जब तक ज़िन्दा रहा इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशों में लगा रहा, चुनाँचे रोम के बादशाह क़ैसर को इस पर तैयार करने की कोशिश की कि वह अपने लश्कर से मदीना पर चढ़ाई कर दे और मुसलमानों को यहाँ से निकाल दे।

इसी साज़िश का एक मामला यह पेश आया कि इसने मदीना के मुनाफ़िक़ों को जिनके साथ इसकी साज़बाज़ थी, ख़त लिखा कि मैं इसकी कोशिश कर रहा हूँ कि रोम का बादशाह क़ैसर मदीना पर चढ़ाई करे, मगर तुम लोगों की कोई सामूहिक ताक़त होनी चाहिये जो उस वक़्त क़ैसर की मदद करे। इसकी सूरत यह है कि तुम मदीने ही में एक मकान बनाओ और यह ज़ाहिर करो कि हम मस्जिद बना रहे हैं, ताकि मुसलमानों को शुब्हा न हो। फिर उस मकान में तुम अपने लोगों को जमा करो और जिस क़द्र हथियार और सामान जमा कर सकते हो वह भी करो, यहाँ मुसलमानों के ख़िलाफ़ आपस के मश्विरे से मामलात तय किया करो।

उसके मश्विरे पर बारह मुनाफ़िक़ों ने मदीना तय्यिबा के मौहल्ले क़ुबा में जहाँ हिजरत के मौक़े पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ियाम फ़रमाया और एक मस्जिद बनाई थी वहीं एक दूसरी मस्जिद की बुनियाद रखी। उन मुनाफ़िक़ों के नाम भी इब्ने इस्हाक़ वग़ैरह ने नक़ल किये हैं। फिर मुसलमानों को फ़रेब देने और धोखे में रखने के लिये यह इरादा किया कि ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से एक नमाज़ उस जगह पढ़वा दें, ताकि सब मुसलमान मुत्मईन हो जायें कि यह भी एक मस्जिद है, जैसा कि इससे पहले एक मस्जिद यहाँ बन चुकी है।

उनका एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अ़र्ज़ किया कि क़ुबा की मौजूदा मस्जिद बहुत से लोगों से दूर है, ज़ईफ़ बीमार आदमियों का वहाँ तक पहुँचना मुश्किल है, और ख़ुद मस्जिदे क़ुबा इतनी लम्बी-चौड़ी भी नहीं कि पूरी बस्ती के लोग उसमें समा सकें, इसलिये हमने एक दूसरी मस्जिद इस काम के लिये बनाई है ताकि कमज़ोर व ज़ईफ़ मुसलमानों को फ़ायदा पहुँचे। आप उस मस्जिद में एक नमाज़

पढ़ लें ताकि बरकत हो जाये।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उस वक़्त ग़ज़्वा-ए-तबूक की तैयारी में मशग़ूल थे, आपने यह वायदा कर लिया कि इस वक़्त तो हमें सफ़र दरपेश है, वापसी के बाद हम उसमें नमाज़ पढ़ लेंगे।

लेकिन ग़ज़्वा-ए-तबूक से वापसी के वक़्त जबकि आपने मदीना तय्यिबा के क़रीब एक मक़ाम पर पड़ाव किया तो उक्त आयतें आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल हुई जिनमें उन मुनाफ़िक़ों की साज़िश खोल दी गयी थी। इन आयतों के नाज़िल होने पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने चन्द सहाबा जिसमें आ़मिर बिन सकन और वहशी (हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के क़ातिल) वग़ैरह शरीक थे, उनको हुक्म दिया कि अभी जाकर उस मस्जिद को ढहा दो और उसमें आग लगा दो। ये सब हज़रात उसी वक़्त गये और हुक्म की तामील करके उसकी इमारत को ढहाकर ज़मीन बराबर कर दी। यह तमाम वाक़िआ़ तफ़सीरे क़ुर्तुबी और तफ़सीरे मज़हरी की बयान की हुई रिवायतों से लिया गया है।

तफ़सीरे मज़हरी में मुहम्मद बिन यूसुफ़ सालेही के हवाले से यह भी ज़िक्र किया है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम क़ुबा से मदीना मुनव्वरा में पहुँच गये तो मस्जिद-ए-ज़िरार की जगह ख़ाली पड़ी थी, आपने आ़सिम बिन अ़दी को इसकी इजाज़त दी कि वह उस जगह में अपना घर बना लें, उन्होंने अ़र्ज़ किया- या रसूलल्लाह जिस जगह के बारे में क़ुरआने करीम की ये आयतें नाज़िल हो चुकी हैं मैं तो उस मन्हूस जगह में घर बनाना पसन्द नहीं करता, अलबत्ता साबित बिन अक़रम ज़रूरतमन्द हैं, उनके पास कोई घर नहीं, उनको इजाज़त दे दीजिए कि वह यहाँ मकान बना लें। उनके मश्विरे के मुताबिक़ आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह जगह साबित बिन अक़रम को दे दी, मगर हुआ यह कि जब से हज़रत साबित उस मकान में आकर रहने लगे उनके कोई बच्चा नहीं हुआ या ज़िन्दा नहीं रहा।

इतिहासकारों ने लिखा है कि इनसान तो क्या उस जगह में कोई मुर्ग़ी भी अण्डे देने के क़ाबिल न रही, कोई कबूतर और जानवर भी उसमें फला-फूला नहीं। चुनाँचे उसके बाद से यह जगह आज तक मस्जिद-ए-क़ुबा के कुछ फ़ासले पर वीरान पड़ी है।

वाक़िए की तफ़सील सुनने के बाद उक्त आयतों के मतन को देखिये। पहली आयत में फ़रमायाः

وَالَّذِينَ اتَّخَذُوا مَسْجِدًا

यानी जिस तरह ऊपर दूसरे मुनाफ़िक़ों के अ़ज़ाब और ज़िल्लत व रुस्वाई का ज़िक्र हुआ है ये मुनाफ़िक़ भी उनमें शामिल हैं जिन्होंने मस्जिद का नाम रखकर एक ऐसी इमारत बनाई जिसका मक़सद मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाना था।

इस आयत में उक्त मस्जिद के बनाने की तीन ग़र्ज़ें ज़िक्र की गयी हैं- अव्वल "ज़िरारन" यानी मुसलमान को नुक़सान पहुँचाने के लिये। लफ़्ज़ 'ज़रर' और 'ज़िरार' दोनों अ़रबी भाषा में

नुक़सान पहुँचाने के मायने में इस्तेमाल होते हैं। कुछ हज़रात ने यह फ़र्क़ बयान किया है कि 'ज़रर' तो उस नुक़सान को कहा जाता है जिसमें उसके करने वाले का अपना तो फ़ायदा हो दूसरों को नुक़सान पहुँचे, और 'ज़िरार' दूसरों को वह नुक़सान पहुँचाना है जिसमें उस पहुँचाने वाले का कोई फ़ायदा भी नहीं। चूँकि इस मस्जिद का अन्जाम यही होने वाला था कि बनाने वालों को इससे कोई फ़ायदा न पहुँचे इसलिये यहाँ लफ़्ज़ ज़िरार इस्तेमाल किया गया।

दूसरी ग़र्ज़ उस मस्जिद की 'तफ़रीक़म बैनल्-मुअ्मिनी-न' बतलाई गयी है। यानी उनका मक़सद उस मस्जिद के बनाने से यह भी था कि मुसलमानों की जमाअ़त के दो टुकड़े हो जायें, एक टुकड़ा उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ने वालों का अलग हो जाये और यह कि पुरानी मस्जिदे क़ुबा के नमाज़ी घट जायें और कुछ लोग यहाँ नमाज़ पढ़ा करें।

तीसरी ग़र्ज़ 'इरसादल् लिमन् हारबल्ला-ह' बतलाई गयी। जिसका हासिल यह है कि उस मस्जिद से यह काम भी लेना था कि यहाँ अल्लाह और रसूल के दुश्मनों को पनाह मिले और वे यहाँ मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िश किया करें।

इस मजमूए से यह साबित हो गया कि जिस मस्जिद को क़ुरआने करीम ने मस्जिद-ए-ज़िरार क़रार दिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म से उसको ढहाया गया और आग लगाई गयी, दर हक़ीक़त न वह मस्जिद थी न उसका मक़सद नमाज़ पढ़ने के लिये बनाना था बल्कि मक़ासिद वो तीन थे जिनका ज़िक्र ऊपर आया है। इससे मालूम हो गया कि आजकल अगर किसी मस्जिद के मुक़ाबले में उसके क़रीब कोई दूसरी मस्जिद कुछ मुसलमान बना लें, और बनाने का मक़सद यही आपसी फूट, बिखराव और पहली मस्जिद की जमाअ़त तोड़ना वग़ैरह बुरे मक़ासिद हों तो अगरचे ऐसी मस्जिद बनाने वाले को सवाब तो न मिलेगा बल्कि मुसलमानों में फूट डालने की वजह से गुनाहगार होगा, लेकिन इस सब के बावजूद उस जगह को शरई हैसियत से मस्जिद ही कहा जायेगा, और तमाम आदाब और अहकाम मसाजिद के उस पर जारी होंगे। उसका ढहाना, आग लगाना जायज़ नहीं होगा, और जो लोग उसमें नमाज़ पढ़ेंगे उनकी नमाज़ भी अदा हो जायेगी, अगरचे ऐसा करना (यानी इस तरह बनाना) अपने आप में गुनाह रहेगा।

इससे यह भी मालूम हो गया कि इस दिखावे व नमूद के लिये या ज़िद व हठधर्मी की वजह से जो मुसलमान कोई मस्जिद बना ले अगरचे बनाने वाले को मस्जिद का सवाब न मिलेगा बल्कि गुनाह होगा, मगर उसको क़ुरआनी इस्तिलाह वाली मस्जिद-ए-ज़िरार नहीं कहा जायेगा। बाज़ लोग जो इस तरह की मस्जिद को मस्जिदे ज़िरार कह देते हैं यह दुरुस्त नहीं, अलबत्ता उसको मस्जिदे ज़िरार के जैसी कह सकते हैं, इसलिये उसके बनाने को रोका भी जा सकता है, जैसा कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने एक फ़रमान जारी फ़रमाया था जिसमें हिदायत की गयी थी कि एक मस्जिद के क़रीब दूसरी मस्जिद न बनाई जाये जिससे पहली मस्जिद की जमाअ़त और रौनक़ प्रभावित हो। (तफ़सीर-ए-कश्शाफ़)

इस मस्जिदे ज़िरार के मुताल्लिक़ दूसरी आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हुक्म दिया गया है:

لَا تَقُمْ فِيْهِ اَبَدًا.

इसमें कियाम (खड़े होने) से मुराद नमाज़ के लिये कियाम है। मतलब यह है कि आप इस नाम की मस्जिद में हरगिज़ नमाज़ न पढ़ें।

मसलाः इससे इतना मालूम होता है कि आज भी अगर कोई नई मस्जिद पहली मस्जिद के क़रीब बिना किसी ज़रूरत के महज़ दिखावे व नमूद के लिये या ज़िद व हठधर्मी की वजह से बनाई जाये तो उसमें नमाज़ पढ़ना बेहतर नहीं, अगरचे नमाज़ हो जाती है।

इसी आयत में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह भी हिदायत दी गयी कि आपका नमाज़ पढ़ना उसी मस्जिद में दुरुस्त है जिसकी बुनियाद पहले दिन से तक़वे पर रखी गयी है, और उसमें ऐसे लोग नमाज़ पढ़ते हैं जिनको पाकी और तहारत में पूरी एहतियात पसन्द है, और अल्लाह भी ऐसे पाक रहने वालों को पसन्द करता है।

आयत के मज़मून से ज़ाहिर यह है कि इससे मस्जिदे क़ुबा मुराद है, जिसमें उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नमाज़ पढ़ा करते थे। और हदीस की कुछ रिवायतों से भी इसकी ताईद होती है (जैसा कि इब्ने मर्दूया ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास व अ़मर बिन शैबा से और इब्ने ख़ुज़ैमा ने अपनी सही में उवैमर बिन साअ़िदा से रिवायत किया है। तफ़सीरे मज़हरी)

और कुछ रिवायतों में जो यह आया है कि इससे मुराद मस्जिद-ए-नबवी है वो भी इसके ख़िलाफ़ नहीं, क्योंकि मस्जिदे नबवी जिसकी बुनियाद वही (अल्लाह की तरफ़ से आये पैग़ाम) के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने हाथ मुबारक से रखी, ज़ाहिर है कि उसकी बुनियाद तक़वे पर है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा पाक रहने वाला कौन हो सकता है, इसलिये वह भी इसकी मिस्दाक़ ज़रूर है। (जैसा कि इमाम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया। तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी)

فِيْهِ رِجَالٌ يُّحِبُّوْنَ اَنْ يَّتَطَهَّرُوْا.

उक्त आयत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नमाज़ के लिये उस मस्जिद को ज़्यादा हक़दार क़रार दिया जिसकी बुनियाद शुरू दिन से तक़वे पर रखी गयी कि उस मस्जिद के नमाज़ी ऐसे लोग हैं जो तहारत (पाकी) का बहुत ज़्यादा ख़्याल और एहतिमाम करते हैं। तहारत के मतलब में इस जगह आ़म नापाकी और गन्दगियों से पाक होना भी दाख़िल है और गुनाहों और बुरे व अख़्लाक़ से पाकी भी। मस्जिदे क़ुबा और मस्जिदे नबवी के नमाज़ी उमूमन इन सब सिफ़तों के मालिक थे।

फ़ायदा

इससे यह भी मालूम हुआ कि किसी मस्जिद की फ़ज़ीलत का असली मदार तो इस पर है कि वह इख़्लास (नेक-नीयती) के साथ अल्लाह के लिये बनाई गयी हो, उसमें किसी दिखावे और नाम व नमूद का या किसी और बुरे मक़सद का कोई दख़ल न हो। और यह भी मालूम हुआ कि

नमाज़ियों के नेक, सालेह, आलिम, आबिद होने से भी मस्जिद की फ़ज़ीलत बढ़ जाती है, जिस मस्जिद के नमाज़ी आम तौर पर आलिम, नेक लोग और तक़वे वाले हों उसमें नमाज़ अदा करने की फ़ज़ीलत ज़्यादा है।

तीसरी और चौथी आयत में इस मक़बूल मस्जिद के मुक़ाबले में मुनाफ़िक़ों की बनाई हुई मस्जिदे ज़िरार की बुराई बयान की गयी है, कि उसकी मिसाल ऐसी है जैसे दरिया के किनारे कई बार पानी ज़मीन के हिस्से को अन्दर से खा लेता है और ऊपर ज़मीन की सतह हमवार नज़र आती है, उस पर अगर कोई इमारत बनाये तो ज़ाहिर है कि वह फ़ौरन गिर जायेगी। इसी तरह इस मस्जिदे ज़िरार की बुनियाद नापायेदार थी, इसका अन्जाम यह हुआ कि वह गिर पड़ी और जहन्नम की आग में गयी। जहन्नम की आग में जाना इस मायने में भी हो सकता है कि उसके बनाने वालों के लिये उसने जहन्नम का रास्ता हमवार कर दिया, और कुछ हज़रात ने इसको हक़ीक़त पर भी महमूल किया है कि हक़ीक़त में यह मस्जिद गिराई गयी है तो जहन्नम में गई। वल्लाहु आलम।

आगे फ़रमाया कि उनकी यह तामीर (इमारत) हमेशा उनके शक और निफ़ाक़ को बढ़ाती ही रहेगी, जब तक कि उनके दिल कट न जायें। यानी जब तक उनकी ज़िन्दगी ख़त्म न हो जाये उनका शक व निफ़ाक़ और जलन व ग़ुस्सा बढ़ता ही रहेगा।

إِنَّ اللَّهَ اشْتَرَىٰ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ أَنفُسَهُمْ وَأَمْوَالَهُم بِأَنَّ
لَهُمُ الْجَنَّةَ ۚ يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ فَيَقْتُلُونَ وَيُقْتَلُونَ ۖ وَعْدًا عَلَيْهِ حَقًّا فِي التَّوْرَاةِ وَالْإِنجِيلِ
وَالْقُرْآنِ ۚ وَمَنْ أَوْفَىٰ بِعَهْدِهِ مِنَ اللَّهِ ۚ فَاسْتَبْشِرُوا بِبَيْعِكُمُ الَّذِي بَايَعْتُم بِهِ ۚ وَذَٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ
الْعَظِيمُ ۝ التَّائِبُونَ الْعَابِدُونَ الْحَامِدُونَ السَّائِحُونَ الرَّاكِعُونَ السَّاجِدُونَ الْآمِرُونَ
بِالْمَعْرُوفِ وَالنَّاهُونَ عَنِ الْمُنكَرِ وَالْحَافِظُونَ لِحُدُودِ اللَّهِ ۗ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ۝

इन्नल्लाहश्तरा मिनल्मुअ्मिनी-न अन्फ़ु-सहुम् व अम्वालहुम् बिअन्-न लहुमुल्जन्न-त, युक़ातिलू-न फ़ी सबीलिल्लाहि फ़-यक़्तुलू-न व युक़्तलू-न, वअ्दन् अ़लैहि हक़्क़न् फ़ित्तौराति वल्इन्जीलि वल्क़ुरआनि, व मन् औफ़ा बि-अ़ह्दिही मिनल्लाहि	अल्लाह ने ख़रीद ली मुसलमानों से उनकी जान और उनका माल इस क़ीमत पर कि उनके लिये जन्नत है, लड़ते हैं अल्लाह की राह में फिर मारते हैं और मरते हैं, वादा हो चुका उसके ज़िम्मे पर सच्चा तौरात और इन्जील और क़ुरआन में, और कौन है क़ौल का पूरा अल्लाह से ज़्यादा, सो ख़ुशियाँ करो उस मामले पर

फ़स्तब्शिरू बिबैअ़िकुमुल्लज़ी बायअ़्तुम् बिही, व ज़ालि-क हुवल् फ़ौज़ुल्-अ़ज़ीम (111) अत्ता-इबूनल्-आ़बिदूनल्-हामिदूनस्-सा-इहूनर् -राकिअ़ूनस्-साजिदूनल्-आमिरू-न बिल्मअ़्रूफ़ि वन्नाहू-न अ़निल्मुन्करि वल्हाफ़िज़ू-न लिहुदूदिल्लाहि, व बश्शिरिल् मुअ्मिनीन (112)	जो तुमने किया है उससे, और यही है बड़ी कामयाबी। (111) वे तौबा करने वाले हैं बन्दगी करने वाले शुक्र करने वाले बेताल्लुक रहने वाले रुकूअ़ करने वाले सज्दा करने वाले, हुक्म करने वाले नेक बात का और मना करने वाले बुरी बात से, और हिफ़ाज़त करने वाले उन हदों की जो बाँधी अल्लाह ने, और ख़ुशख़बरी सुना दे ईमान वालों को। (112)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों से उनकी जानों और उनके मालों को इस बात के बदले ख़रीद लिया है कि उनको जन्नत मिलेगी (और ख़ुदा के हाथ माल व जान बेचने का मतलब यह है कि) वे लोग अल्लाह की राह में (यानी जिहाद में) लड़ते हैं, (जिसमें) (कभी) क़त्ल करते हैं और (कभी) क़त्ल किये जाते हैं, (यानी वह बै जिहाद करना है चाहे उसमें क़ातिल होने की नौबत आये या मक़्तूल होने की)। इस (क़िताल) पर (उनसे जन्नत का) सच्चा वायदा (किया गया) है तौरात में (भी) और इन्जील में (भी) और क़ुरआन में (भी), और (यह माना हुआ है कि) अल्लाह से ज़्यादा अपने अ़हद को कौन पूरा करने वाला है (और उसने इस बै पर वायदा जन्नत का किया है) तो (इस हालत में) तुम लोग (जो कि जिहाद कर रहे हो) अपनी इस (ज़िक्र हुई) बै पर जिसका तुमने उससे (यानी अल्लाह पाक से) मामला ठहराया है ख़ुशी मनाओ, (क्योंकि इस बै (सौदे) पर तुमको वायदे अनुसार मज़्कूरा जन्नत मिलेगी) और यह (जन्नत मिलना) बड़ी कामयाबी है (तो ज़रूर तुमको यह सौदा करना चाहिये)। वे (मुजाहिद लोग ऐसे हैं जो अ़लावा जिहाद के इन सिफ़तों को भी अपने अन्दर रखते हैं कि गुनाहों से) तौबा करने वाले हैं (और अल्लाह की) इबादत करने वाले (हैं और अल्लाह की) तारीफ़ करने वाले (हैं और) रोज़ा रखने वाले (हैं और) रुकूअ़ करने वाले (और) सज्दा करने वाले (हैं, यानी नमाज़ पढ़ते हैं और) नेक बातों की तालीम करने वाले (हैं) और बुरी बातों से रोकने वाले (हैं) और अल्लाह की हदों का (यानी उसके अहकाम का) ख़्याल रखने वाले (हैं), और ऐसे मोमिनों को (जिनमें जिहाद और ये सिफ़तें हैं) आप ख़ुशख़बरी सुना दीजिये (कि उनसे जन्नत का वायदा बयान हुआ है)।

मआरिफ़ व मसाईल

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

पहले गुज़री आयतों में जिहाद से बिना उज़्र रुकने की मज़म्मत (बुराई और निंदा) का बयान था, इन आयतों में मुजाहिदीन की फ़ज़ीलत (बड़ाई और श्रेष्ठता) का बयान है।

शान-ए-नुज़ूल

अक्सर हज़राते मुफ़स्सिरीन की वज़ाहत के मुताबिक़ ये आयतें बैअ़त-ए-अ़क़बा में शामिल हज़रात के बारे में नाज़िल हुई हैं जो हिजरत से पहले मक्का मुकर्रमा में मदीना के अन्सार से ली गयी थी, इसी लिये पूरी सूरत के मदनी होने के बावजूद इन आयतों को मक्की कहा गया है।

अ़क़बा पहाड़ के हिस्से को कहा जाता है, इस जगह वह अ़क़बा मुराद है जो मिना में जमरा-ए-अ़क़बा के साथ पहाड़ का हिस्सा है (आजकल हाजियों की अधिकता के सबब पहाड़ का यह हिस्सा साफ़ करके मैदान बना दिया गया है सिर्फ़ जमरा रह गया है) इस अ़क़बा पर मदीना तय्यिबा के हज़रात से तीन मर्तबा बैअ़त ली गयी है, पहली बैअ़त हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत से ग्यारहवें साल में हुई, जिसमें छह हज़रात मुसलमान होकर बैअ़त करके मदीना वापस हुए तो मदीना के घर-घर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और इस्लाम का चर्चा होने लगा। अगले साल हज के मौसम में बारह हज़रात उसी जगह जमा हुए जिनमें पाँच पहले और सात नये थे, सब ने बैअ़त की। अब मदीना में मुसलमानों की ख़ासी तायदाद हो गयी, जो चालीस व्यक्तियों से ज़ायद थी, उन्होंने दरख़्वास्त की कि हमें क़ुरआन पढ़ाने के लिये किसी को भेज दिया जाये, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत मुस्अ़ब बिन उमैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को भेज दिया, उन्होंने मौजूदा मुसलमानों को क़ुरआन भी पढ़ाया और इस्लाम की तब्लीग़ भी की, जिसके नतीजे में मदीना की बड़ी जमाअ़तें इस्लाम के दायरे में आ गयीं।

उसके बाद नुबुव्वत मिलने के तेरहवें साल में सत्तर मर्द व औ़रतें उसी जगह जमा हुए, यह तीसरी बैअ़त-ए-अ़क़बा है जो आख़िरी है, और उमूमन बैअ़ते अ़क़बा से यही बैअ़त मुराद होती है। यह बैअ़त इस्लाम के उसूली अ़क़ीदों व आमाल के साथ ख़ुसूसी तौर पर काफ़िरों से जिहाद और जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हिजरत करके मदीना पहुँचें तो आपकी हिफ़ाज़त व हिमायत पर ली गयी। इसमें हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन रवाहा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! इस वक़्त मुआ़हिदा हो रहा है, आप जो शर्तें अपने रब के मुताल्लिक़ या अपने मुताल्लिक़ करना चाहें वो स्पष्ट कर दी जायें, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं अल्लाह तआ़ला के लिये तो यह शर्त रखता हूँ कि आप सब उसकी इबादत करेंगे, उसके सिवा किसी की इबादत नहीं करेंगे, और अपने लिये यह शर्त है कि मेरी हिफ़ाज़त इस तरह करेंगे जैसे अपनी जानों और अपने माल व औलाद की हिफ़ाज़त करते हो। उन लोगों

ने मालूम किया कि अगर हम ये दोनों शर्तें पूरी कर दें तो हमें इसके बदले में क्या मिलेगा? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया जन्नत मिलेगी। इन सब हज़रात ने ख़ुश होकर कहा कि हम इस सौदे पर राज़ी हैं, और ऐसे राज़ी हैं कि अब इसको न ख़ुद ख़त्म करने की दरख़्वास्त करेंगे, न इसके ख़त्म होने और टूटने को पसन्द करेंगे।

इस जगह चूँकि इस बैअ़त में ज़ाहिरी सूरत एक लेन-देन के मामले की बन गयी तो इस पर यह आयत ख़रीद व बेच के अलफ़ाज़ के साथ नाज़िल हुईः

إِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ.

यह आयत सुनकर सबसे पहले हज़रात बरा बिन मारूर और अबुल-हैसम और अस्अ़द रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ मुबारक पर अपना हाथ रख दिया, कि हम इस मामले पर तैयार हैं। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिफ़ाज़त अपनी औरतों बच्चों की तरह करेंगे, और आपके मुक़ाबले पर अगर दुनिया के काले और गोरे सब जमा हो जायें तो भी हम सब का मुक़ाबला करेंगे।

जिहाद की सबसे पहली यही आयत है

मक्का मुअ़ज़्ज़मा में जिहाद व क़िताल के अहकाम नहीं थे, यह सब से पहली आयत है जो मक्का मुकर्रमा ही में क़िताल (जंग व जिहाद) के बारे में नाज़िल हुई, और इसका अ़मल हिजरत के बाद शुरू हुआ। इसके बाद दूसरी आयत नाज़िल हुईः

اُذِنَ لِلَّذِيْنَ يُقٰتَلُوْنَ.

जब यह बैअ़त-ए-अ़क़बा मक्का के क़ुरैश काफ़िरों से ख़ुफ़िया मुकम्मल हो गयी तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को मक्का मुकर्रमा से मदीना की हिजरत का हुक्म दे दिया, और धीरे-धीरे सहाबा-ए-किराम की हिजरत का सिलसिला शुरू हो गया। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हक़ तआ़ला की तरफ़ से इजाज़त मिलने के मुन्तज़िर रहे, सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने हिजरत का इरादा किया तो आपने उनको अपने साथ के लिये रोक लिया (यह पूरा वाक़िआ़ तफ़सीरे मज़हरी में लिखा हुआ है)।

يُقَاتِلُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ............ (الى)............ فِى التَّوْرٰةِ وَالْاِنْجِيْلِ وَالْقُرْاٰنِ.

इस आयत से मालूम होता है कि जिहाद व क़िताल का हुक्म तमाम पिछली उम्मतों के लिये भी सब किताबों में नाज़िल किया गया, और यह जो मशहूर है कि इंजील में जिहाद का हुक्म नहीं, मुम्किन है कि बाद के लोगों ने जो रद्दोबदल उसमें की हैं उसमें जिहाद के अहकाम को निकाल दिया गया हो। वल्लाहु आलम।

فَاسْتَبْشِرُوْا بِبَيْعِكُمْ.

बैअ़त-ए-अ़क़बा के इस वाक़िए में जो मुआ़हिदा (समझौता) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से हुआ उसकी ज़ाहिरी सूरत ख़रीद व बेच की बन गयी, इसलिये आयत के शुरू में शिरा

(ख़रीद) के लफ़्ज़ से ताबीर किया गया था। इस जुमले में मुसलमानों को मुख़ातब करके फ़रमाया कि बै का यह मामला तुम्हारे लिये नफ़े का सौदा और मुबारक है। क्योंकि एक फ़ानी चीज़ यानी जान व माल देकर हमेशा बाक़ी रहने वाली चीज़ बदले में मिल गयी, और ग़ौर किया जाये तो ख़र्च सिर्फ़ माल हुआ, जान यानी रूह तो मरने के बाद भी बाक़ी रहेगी और हमेशा रहेगी। और माल पर ग़ौर किया जाये तो वह भी तो हक़ तआ़ला ही का दिया हुआ है, इनसान तो अपनी पैदाईश के वक़्त ख़ाली हाथ आया था, उसी ने सब सामान और माल व दौलत का इसको मालिक बनाया है, अपने ही दिये हुए को आख़िरत की नेमतों और जन्नत का मुआ़वज़ा बनाकर जन्नत दे दी। इसी लिये हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अ़जीब बै (सौदा) है कि माल और क़ीमत दोनों तुम्हें ही दे दिये।

हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि सुनो! यह कैसी नफ़े की तिजारत है जो अल्लाह ने हर मोमिन के लिये खोल दी है, और फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने ही तुम्हें माल बख़्शा है तुम उसमें से थोड़ा ख़र्च करके जन्नत ख़रीद लो। (तफ़सीरे मज़हरी)

اَلتَّآئِبُوْنَ الْعٰبِدُوْنَ.......... الآية.

ये सिफ़तें उन्हीं मोमिनों की हैं जिनके बारे में ऊपर यह फ़रमाया है कि अल्लाह ने उनकी जान और माल को जन्नत के बदले में ख़रीद लिया है। अगरचे यह आयत एक ख़ास जमाअ़त के बारे में नाज़िल हुई जो बैअ़ते अ़क़बा में शरीक हुई मगर आयत का मफ़्हूम अल्लाह के रास्ते में तमाम जिहाद करने वालों को शामिल है, और जो गुण व सिफ़तें उनकी 'अत्ताइबू-न........' से बयान किये गये ये शर्त के तौर पर नहीं, क्योंकि जन्नत का वायदा तो सिर्फ़ जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह पर आया है इन सिफ़तों और ख़ूबियों के बयान से मक़सद यह है कि जो लोग जन्नत के अहल होते हैं उनकी ऐसी सिफ़तें हुआ करती हैं, ख़ास तौर पर बैअ़ते अ़क़बा में शरीक होने वाले सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का यही हाल था।

'अस्साइहू-न' के मायने मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक 'साइमून' यानी रोज़ेदारों के हैं। असल में यह लफ़्ज़ सियाहत से लिया गया है, इस्लाम से पहले ईसाई दीन में सियाहत एक इबादत समझी जाती थी, कि इनसान अपने घर-बार को छोड़कर इबादत के लिये निकल खड़ा हो, इस्लाम में इसको रहबानीयत क़रार दिया गया, और इससे मना किया गया। इसके क़ायम-मक़ाम रोज़े की इबादत मुक़र्रर की गयी, क्योंकि सियाहत का मक़सद दुनिया को छोड़ना था, रोज़ा ऐसी चीज़ है कि अपने घर में रहते हुए एक निर्धारित वक़्त में दुनिया की तमाम इच्छाओं को छोड़ देना होता है, और इसी बिना पर कुछ रिवायतों में जिहाद को भी सियाहत क़रार दिया गया है। इब्ने माजा, हाकिम, बैहक़ी ने सही सनद के साथ रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

سِيَاحَةُ اُمَّتِيْ اَلْجِهَادُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ.

"यानी इस उम्मत की सियाहत अल्लाह के रास्ते में जिहाद है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि क़ुरआने करीम में जहाँ कहीं **साइहीन** का लफ़्ज़ आया है उससे मुराद **साइमीन** (रोज़ा रखने वाले) हैं। हज़रत इक्रिमा रह. ने साइहीन की तफ़सीर में फ़रमाया कि ये तालिबे-इल्म हैं जो इल्म सीखने के लिये अपने घर-बार को छोड़कर निकलते हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इस जगह मोमिन मुजाहिदीन की सिफ़तें और गुण ताईबून, आ़बिदून, हामिदून, साइहून, राकिऊन, साजिदून, आमिरू-न बिल्-मारूफ़ वन्नाहू-न अ़निल्-मुन्कर सात चीज़ें बयान फ़रमाने के बाद आठवाँ वस्फ़ (ख़ूबी) 'अल्हाफ़िज़ू-न लिहुदूदिल्लाहि' फ़रमाया। यह दर हक़ीक़त पहले ज़िक्र हुई तमाम सिफ़तों का एक जामे (अपने अन्दर सब को समोने वाला) लफ़्ज़ है, गोया सात सिफ़तों में जो तफ़सील बतलाई गयी उसका संक्षिप्त यह है कि ये लोग अपने हर काम और कलाम में अल्लाह की हदों यानी शरई अहकाम के पाबन्द हैं, उनकी हिफ़ाज़त करते हैं।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ○

यानी जिन मोमिनों की ये सिफ़ात और विशेषतायें हों जो ऊपर बयान की गयीं उनको ऐसी नेमतों की ख़ुशख़बरी सुना दीजिए जिनको किसी का वहम व ख़्याल भी नहीं पा सकता, और न किसी मज़मून व तहरीर से उसको समझाया जा सकता है, और न किसी के कानों ने उनका तज़किरा सुना है, मुराद जन्नत की नेमतें हैं।

مَا كَانَ لِلنَّبِيِّ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَنْ يَّسْتَغْفِرُوْا لِلْمُشْرِكِيْنَ وَلَوْ كَانُوْٓا
اُولِيْ قُرْبٰى مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُمْ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۞ وَمَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰهِيْمَ لِاَبِيْهِ اِلَّا
عَنْ مَّوْعِدَةٍ وَّعَدَهَآ اِيَّاهُ ۚ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهٗٓ اَنَّهٗ عَدُوٌّ لِّلّٰهِ تَبَرَّاَ مِنْهُ ۭ اِنَّ اِبْرٰهِيْمَ لَاَوَّاهٌ حَلِيْمٌ ۞

मा का-न लिन्नबिय्यि वल्लज़ी-न आमनू अंय्यस्तग़्फ़िरू लिल्मुश्रिकी-न व लौ कानू उली क़ुरबा मिम्-बअ़्दि मा तबय्य-न लहुम् अन्नहुम् अस्हाबुल्-जहीम (113) व मा कानस्तिग़्फ़ारु इब्राही-म लि-अबीहि इल्ला अ़म्मौअ़ि-दतिंव् व-अ़-दहा इय्याहु फ़-लम्मा तबय्य-न लहू	लायक़ नहीं नबी को और मुसलमानों को कि बख़्शिश चाहें मुश्रिकों की अगरचे वे हों रिश्तेदार व क़रीबी, जबकि खुल चुका उन पर कि वे हैं दोज़ख़ वाले। (113) और बख़्शिश माँगना इब्राहीम का अपने बाप के वास्ते, सो न था मगर वायदे के सबब कि वायदा कर चुका था उससे, फिर जब खुल गया इब्राहीम पर कि वह

अन्नहू अ़दुव्वुल्-लिल्लाहि त-बर्र-अ मिन्हु, इन्-न इब्राही-म ल-अव्वाहुन् हलीम (114)	दुश्मन है अल्लाह का तो उससे बेज़ार हो गया, बेशक इब्राहीम बड़ा नर्म-दिल था बरदाश्त करने वाला। (114)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को और दूसरे मुसलमानों को जायज़ नहीं कि मुश्रिकों के लिये मग़फ़िरत की दुआ़ माँगें अगरचे वे रिश्तेदार ही (क्यों न) हों, इस (बात) के उन पर ज़ाहिर हो जाने के बाद कि ये लोग दोज़ख़ी हैं (इस वजह से कि काफ़िर होकर मरे हैं)। और (अगर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से से शुब्हा हो कि उन्होंने अपने बाप के लिये दुआ़-ए-मग़फ़िरत की थी तो इसका जवाब यह है कि) इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) का अपने बाप के लिये मग़फ़िरत की दुआ़ माँगना (वह इससे पहले था कि उसका दोज़ख़ी होना ज़ाहिर हो जाये और) वह (भी) सिर्फ़ वायदे के सबब था, जो उन्होंने उससे वायदा कर लिया था (इस क़ौल में 'स-अस्तग़्फ़िरु ल-क रब्बी' ग़र्ज़ कि जवाज़ तो इसलिये था कि उसका दोज़ख़ी होना ज़ाहिर न हुआ था और उसके पेश आने को इससे तरजीह हो गयी थी कि वायदा कर लिया था, वरना बावजूद जायज़ होने के भी ऐसा ज़ाहिर न होता)। फिर जब उन पर यह बात ज़ाहिर हो गई कि वह ख़ुदा का दुश्मन (यानी काफ़िर होकर मरा) है तो वह उससे बिल्कुल बेताल्लुक़ हो गये (कि इस्तिग़फ़ार भी छोड़ दिया, क्योंकि उस वक़्त दुआ़-ए-मग़फ़िरत करना बेमानी है, क्योंकि काफ़िर में मग़फ़िरत होने की गुंजाईश है ही नहीं, जबकि ज़िन्दगी की हालत में दुआ़-ए-मग़फ़िरत करने के मायने उस वक़्त हिदायत की तौफ़ीक़ माँगने के हो सकते हैं, क्योंकि हिदायत की तौफ़ीक़ के लिये मग़फ़िरत लाज़िम है, और रहा यह कि वायदा कर लिया था, वजह इसकी यह है कि) वाक़ई इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) बड़े रहम वाले मिज़ाज, बरदाश्त करने वाली तबीयत के थे (कि इसके बावजूद कि बाप ने उनको कैसी-कैसी सख़्त बातें कहीं, मगर संयम से काम लिया, और उस पर यह भी कि शफ़क़त के जोश से वायदा कर लिया और जब तक फ़ायदा होने की संभावना दिखी उस वायदे को पूरा फ़रमाया, जब नाउम्मीदी हो गयी तो हारकर छोड़ दिया, बख़िलाफ़ तुम्हारे इस्तिग़फ़ार के कि वह मुश्रिकों के मरने के बाद हो रहा है, जिनका शिर्क की हालत पर मरना ज़ाहिरी तौर पर देखने से मालूम है, और शरई अहकाम में ऐसा ज़ाहिर काफ़ी है, फिर क़ियास (अन्दाज़ा करना) कब सही है, और उस क़ियास पर शुब्हे व गुंजाईश बनने का कोई आधार कैसे हो सकता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पूरी सूरः तौबा काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत और अ़लैहदगी के अहकाम पर आधारित है।

सूरत का शुरू ही 'बराअतुम् मिनल्लाहि' से हुआ है, और इसी लिये इस सूरत का एक नाम सूरः बराअत भी परिचित है। ऊपर जिस क़द्र अहकाम आये वो दुनियावी ज़िन्दगी में काफ़िरों व मुश्रिकों से बराअत और ताल्लुक़ ख़त्म करने के बारे में हैं, इस आयत में यही हुक्म आख़िरत की ज़िन्दगी में बराअत और ताल्लुक़ ख़त्म करने के लिये आया है, कि मरने के बाद काफ़िर व मुश्रिक के लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करना भी जायज़ नहीं, जैसा कि इससे पहले एक आयत में मुनाफ़िक़ों की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मना किया गया है।

इस आयत के नाज़िल होने का वाक़िआ सही बुख़ारी व मुस्लिम की रिवायत के मुताबिक़ यह है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा अबू तालिब अगरचे मुसलमान न हुए थे मगर उम्रभर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिमायत व हिफ़ाज़त करते रहे, और इस मामले में बिरादरी के किसी फ़र्द का कहना नहीं माना। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी इसका बड़ा ध्यान था कि किसी तरह यह इस्लाम का कलिमा पढ़ लें और ईमान ले आयें तो शफ़ाअ़त का मौक़ा मिल जायेगा और यह जहन्नम के अ़ज़ाब से बच जायेंगे। मौत की बीमारी में जब उनका आख़िरी वक़्त हुआ तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बड़ी फ़िक्र थी कि इस वक़्त भी कलिमा शरीफ़ पढ़ लें तो काम हो जाये, चुनाँचे उस हालत में आप उनके पास पहुँचे; मगर अबू जहल, अ़ब्दुल्लाह बिन उमैया पहले से वहाँ मौजूद थे। आपने फ़रमाया कि मेरे चचा! कलिमा ला इला-ह इल्लल्लाहु पढ़ लें तो मैं आपकी बख़्शिश के लिये कोशिश करूँगा, मगर अबू जहल बोल उठा कि क्या आप अ़ब्दुल-मुत्तलिब के दीन को छोड़ देंगे? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कई मर्तबा फिर अपना कलाम दोहराया, मगर हर मर्तबा अबू जहल यही बात कह देता, यहाँ तक कि आख़िरी कलाम में अबू तालिब ने यही कहा कि मैं अ़ब्दुल-मुत्तलिब के दीन पर हूँ। इसी हालत में वफ़ात हो गयी, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़सम खाई कि मैं आपके लिये बराबर इस्तिग़फ़ार करता रहूँगा जब तक मुझे उससे मना न कर दिया जाये। इस पर मनाही की यह आयत नाज़िल हुई, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सब मुसलमानों को काफ़िरों व मुश्रिकों के लिये मग़फ़िरत की दुआ करने से मना फ़रमा दिया, चाहे वे क़रीबी रिश्तेदार ही हों।

इस पर कुछ मुसलमानों को यह शुब्हा हुआ कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने भी तो अपने काफ़िर बाप के लिये दुआ की थी, इसके जवाब में दूसरी आयत नाज़िल हुई:

مَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰهِيْمَ............الاٰية.

जिसका हासिल यह है कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने जो अपने वालिद के लिये दुआ की थी उसका मामला यह है कि शुरू में जब तक इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को यह मालूम न था कि आख़िर तक कुफ़्र ही पर क़ायम रहेगा, उसी पर मरेगा, तो उसका दोज़ख़ी होना यक़ीनी नहीं था, उस वक़्त उन्होंने यह वायदा कर लिया था कि मैं आपके लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करूँगा:

سَاَسْتَغْفِرُ لَكَ رَبِّیْ .

फिर जब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पर यह बात खुल गयी कि वह अल्लाह का दुश्मन है यानी कुफ़ ही पर उसका ख़ात्मा हुआ है तो उससे बेताल्लुक़ी इख़्तियार कर ली और इस्तिग़फ़ार (अल्लाह से बख़्शिश की दुआ) करना छोड़ दिया।

क़ुरआन मजीद के विभिन्न मौक़ों में जो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का अपने वालिद के लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत करना नक़ल किया है वह सब इसी पर महमूल होना चाहिये। उसका मतलब यह होगा कि उनको ईमान व इस्लाम की तौफ़ीक़ दे ताकि उनकी मग़फ़िरत हो सके।

ग़ज़वा-ए-उहुद में जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चेहरा-ए-मुबारक को काफ़िरों ने ज़ख़्मी कर दिया तो आप चेहरे से ख़ून साफ़ करते हुए यह दुआ फ़रमा रहे थेः

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِقَوْمِیْ اِنَّهُمْ لَا یَعْلَمُوْنَ.

"यानी या अल्लाह! मेरी क़ौम की मग़फ़िरत फ़रमा दे, वे नादान हैं।"

काफ़िरों के लिये इस दुआ-ए-मग़फ़िरत का हासिल भी यही है कि इनको ईमान व इस्लाम की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दे कि ये मग़फ़िरत के क़ाबिल हो जायें।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि इससे साबित हुआ कि ज़िन्दा काफ़िर के लिये इस नीयत से दुआ-ए-मग़फ़िरत करना जायज़ है कि उसको ईमान की तौफ़ीक़ हो और यह मग़फ़िरत का हक़दार हो जाये।

اِنَّ اِبْرٰهِیْمَ لَاَوَّاهٌ حَلِیْمٌ○

लफ़्ज़ **अव्वाहुन** बहुत से मायनों के लिये इस्तेमाल होता है। इमाम क़ुर्तुबी रह. ने इसमें पन्द्रह क़ौल नक़ल किये हैं, मगर सब मायने एक दूसरे के क़रीब और मिलते-जुलते हैं, कोई बुनियादी टकराव नहीं। उनमें से चन्द मायने ये हैं- बहुत ज़्यादा आह करने वाला, या बहुत ज़्यादा दुआ करने वाला, अल्लाह के बन्दों पर रहम करने वाला, हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से यही मायने नक़ल किये गये हैं।

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِلَّ قَوْمًا بَعْدَ اِذْ هَدٰىهُمْ حَتّٰى يُبَيِّنَ لَهُمْ مَّا يَتَّقُوْنَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَیْءٍ عَلِيْمٌ ﴿۱۱۵﴾ اِنَّ
اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ ؕ وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ﴿۱۱۶﴾

व मा कानल्लाहु लियुज़िल्-ल क़ौमम् बअ्-द इज़् हदाहुम् हत्ता युबय्यि-न लहुम् मा यत्तक़ू-न, इन्नल्ला-ह बिकुल्लि शैइन् अ़लीम (115) इन्नल्ला-ह लहू मुल्कुस्समावाति	और अल्लाह ऐसा नहीं कि गुमराह करे किसी क़ौम को जबकि उनको राह पर ला चुका, जब तक खोल न दे उन पर जिससे उनको बचना चाहिए, बेशक अल्लाह हर चीज़ से वाक़िफ़ है। (115) अल्लाह ही

वल्अर्ज़ि, युह्यी व युमीतु, व मा लकुम् मिन् दूनिल्लाहि मिंव्वलिय्यिंव्-व ला नसीर (116)	की सल्तनत है आसमानों और ज़मीन में, जिलाता है और मारता है, और तुम्हारा कोई नहीं अल्लाह के सिवा हिमायती और न मददगार। (116)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अल्लाह तआला ऐसा नहीं करता कि किसी क़ौम को हिदायत देने के बाद गुमराह कर दे जब तक कि उन चीज़ों को साफ़-साफ़ न बतला दे जिनसे वे बचते रहें (पस जब हमने तुमको (यानी मुसलमानों को) हिदायत की और इससे पहले मुश्रिकों के लिये इस्तिग़फ़ार करने की मनाही न बतलाई थी तो उसके करने से तुमको यह सज़ा नहीं दी जायेगी कि तुम में गुमराही का माद्दा पैदा कर दिया जाये) बेशक अल्लाह तआला हर चीज़ को ख़ूब जानते हैं (सो वह यह भी जानते हैं कि बिना हमारे बतलाये हुए ऐसे अहकाम को कोई नहीं जान सकता, इसलिये उन कामों से नुक़सान भी नहीं पहुँचने देते, और) बेशक अल्लाह ही की हुकूमत है आसमानों और ज़मीन की, वही जिलाता है और मारता है (यानी हर तरह की हुकूमत और क़ुदरत उसी के लिये ख़ास है, जो चाहे हुक्म दे सकता है, और जिस नुक़सान से चाहे बचा सकता है) और तुम्हारा अल्लाह के सिवा न कोई यार है और न मददगार (बल्कि वही यार व मददगार है, इसलिये रोकने से पहले तुमको नुक़सान से बचाता है, और अगर तुमने रोकने और मना करने के बाद हुक्म का पालन न किया तो और कोई बचाने वाला नहीं)।

لَقَدْ تَّابَ اللّٰهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ الَّذِيْنَ
اتَّبَعُوْهُ فِيْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ ۗ اِنَّهٗ بِهِمْ رَءُوْفٌ
رَّحِيْمٌ ﴿١١٧﴾ وَّعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا ۗ حَتّٰٓى اِذَا ضَاقَتْ عَلَيْهِمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ وَضَاقَتْ
عَلَيْهِمْ اَنْفُسُهُمْ وَظَنُّوْٓا اَنْ لَّا مَلْجَاَ مِنَ اللّٰهِ اِلَّآ اِلَيْهِ ۗ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ لِيَتُوْبُوْا ۗ اِنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ
الرَّحِيْمُ ﴿١١٨﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ ﴿١١٩﴾ ع

ल-क़त्ताबल्लाहु अ़लन्नबिय्यि वल्मुहाजिरी-न वल्अन्सारिल्लज़ीनत्-त-बअ़ूहु फ़ी सा-अ़तिल्-अ़ुसरति मिम्-बअ़्दि मा का-द यज़ीग़ु क़ुलूबु फ़रीक़िम् मिन्हुम् सुम्-म ता-ब	अल्लाह मेहरबान हुआ नबी पर और मुहाजिरीन और अन्सार पर जो साथ रहे नबी के मुश्किल की घड़ी में उसके बाद कि क़रीब था कि दिल फिर जायें बाज़ों के उनमें से, फिर मेहरबान हुआ उन पर,

अ़लैहिम्, इन्नहू बिहिम् रऊफ़ुर्रहीम (117) व अ़लस्सलासतिल्लज़ी-न ख़ुल्लिफ़ू हत्ता इज़ा ज़ाक़त् अ़लैहिमुल्-अर्ज़ु बिमा रहुबत् व ज़ाक़त् अ़लैहिम् अन्फ़ुसुहुम् व ज़न्नू अल्ला मल्ज-अ मिनल्लाहि इल्ला इलैहि, सुम्-म ता-ब अ़लैहिम् लि-यतूबू, इन्नल्ला-ह हुवत्तव्वाबुर्-रहीम (118) ✿	बेशक वह उन पर मेहरबान है, रहम करने वाला। (117) और उन तीन शख़्सों पर जिनको पीछे रखा था यहाँ तक कि जब तंग हो गई उन पर ज़मीन बावजूद अपने फैलाव के और तंग हो गईं उन पर उनकी जानें और समझ गये कि कहीं पनाह नहीं अल्लाह से मगर उसी की तरफ़, फिर मेहरबान हुआ उन पर ताकि वे फिर आयें, बेशक अल्लाह ही है मेहरबान रहम वाला। (118) ✿
या अय्युहल्लज़ी-न आमनुत्तक़ुल्ला-ह व कूनू मअ़स्सादिक़ीन (119)	ऐ ईमान वालो! डरते रहो अल्लाह से और रहो साथ सच्चों के। (119)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अल्लाह तआ़ला ने पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाल) पर तवज्जोह फ़रमाई (कि आपको नुबुव्वत और जिहाद की इमामत और तमाम ख़ूबियाँ अ़ता फ़रमाईं) और मुहाजिरीन और अन्सार (के हाल) पर भी (तवज्जोह फ़रमाई कि उनको ऐसी मशक़्क़त के जिहाद में साबित-क़दम रखा) जिन्होंने (ऐसी) तंगी के वक़्त में पैग़म्बर का साथ दिया, इसके बाद कि उनमें से एक गिरोह के दिलों में कुछ डगमगाना हो चला था (और जिहाद में जाने से हिम्मत हारने को थे मगर) फिर उसने (यानी अल्लाह ने) उन (गिरोह) (के हाल) पर तवज्जोह फ़रमाई (कि उनको संभाल लिया और आख़िर साथ हो ही लिये। पस) बेशक अल्लाह उन सब पर बहुत ही शफ़ीक़ (और) मेहरबान है (कि अपनी मेहरबानी से हर एक के हाल पर किस-किस तरह तवज्जोह फ़रमाई)। और उन तीन शख़्सों (के हाल) पर भी (तवज्जोह फ़रमाई) जिनका मामला पीछे डाल दिया "यानी स्थगित कर दिया" गया था, यहाँ तक कि जब (उनकी परेशानी की यह नौबत पहुँची कि) ज़मीन बावजूद अपनी (इतनी बड़ी) वुस्अ़त के उन पर तंगी करने लगी और वे ख़ुद अपनी जान से तंग आ गये और उन्होंने समझ लिया कि ख़ुदा (की पकड़) से कहीं पनाह नहीं मिल सकती सिवाय इसके कि उसी की तरफ़ रुजू किया जाये (उस वक़्त वे ख़ास तवज्जोह के क़ाबिल हुए)। फिर उन (के हाल) पर (भी ख़ास) तवज्जोह फ़रमाई ताकि वे (आगे भी) मुसीबत व नाफ़रमानी के ऐसे मौक़ों में अल्लाह की तरफ़) रुजू (रहा) करें, बेशक अल्लाह तआ़ला बहुत तवज्जोह फ़रमाने वाले, बड़े रहम करने वाले हैं।

ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और (अ़मल में) सच्चों के साथ रहो (यानी जो नीयत और बात में सच्चे हैं उनकी राह चलो ताकि तुम भी सच्चाई इख़्तियार करो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यहाँ से चन्द आयतों पहले आयत 'व आख़रूनअ़्त-रफ़ू' (यानी आयत नम्बर 102) के बयान में यह लिखा गया था कि ग़ज़्वा-ए-तबूक के लिये सब मुसलमानों को निकलने का आ़म हुक्म होने के वक़्त मदीना वाले लोगों की पाँच क़िस्में हो गयी थीं, दो क़िस्में बिना किसी मजबूरी के पीछे रह जाने वालों की थीं जिनका बयान ऊपर की आयतों में तफ़सील के साथ आ चुका है। उपर्युक्त आयतों में सच्चे मुख़्लिस मोमिनों की तीन क़िस्मों का ज़िक्र है- अव्वल वे लोग जो जिहाद का हुक्म पाते ही फ़ौरन तैयार हो गये, उनका बयान उक्त आयत के शुरू के जुमले में:

اتَّبَعُوْهُ فِیْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ.

में हुआ है। दूसरे वे लोग जो शुरू में कुछ दुविधा और असमंजस में रहे, मगर फिर संभल गये और जिहाद के लिये सब के साथ हो गये, उनका बयान इसी आयत के इस जुमले में है:

مِنْۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ.

तीसरे वे मोमिन हज़रात थे जो अगरचे वक़्ती काहिली व सुस्ती की वजह से जिहाद में न गये मगर बाद में शर्मिन्दा हुए और तौबा की और आख़िरकार उन सब की तौबा क़ुबूल हो गयीं। मगर उनमें फिर दो क़िस्में हो गयी थीं। ये कुल दस आदमी थे, जिनमें से सात आदमियों ने तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वापसी के बाद फ़ौरन अपनी शर्मिन्दगी व तौबा का इज़हार इस अन्दाज़ से किया कि अपने आपको मस्जिदे नबवी के सुतूनों से बाँध लिया, कि जब तक हमारी तौबा क़ुबूल न होगी बंधे रहेंगे। उनकी तौबा वाली आयत तो उसी वक़्त नाज़िल हो गयी जिसका बयान पहले हो चुका है। तीन आदमी वे थे जिन्होंने यह अ़मल नहीं किया, उनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को बायकाट और ताल्लुक़ तोड़ लेने का हुक्म दे दिया, कि कोई उनके साथ सलाम व कलाम न करे, जिससे ये हज़रात सख़्त परेशान हो गये। उनका ज़िक्र दूसरी आयतः

وَعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا.

(यानी आयत 118) में हुआ है, जिसमें आख़िरकार उनकी तौबा के क़ुबूल होने का बयान है, और इसके साथ ही उनसे बायकाट का हुक्म ख़त्म कर दिया गयाः

لَقَدْ تَّابَ اللّٰهُ عَلَى النَّبِیِّ وَالْمُهٰجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ الَّذِيْنَ اتَّبَعُوْهُ فِیْ سَاعَةِ الْعُسْرَةِ.

"यानी अल्लाह तआ़ला ने तौबा क़ुबूल कर ली, नबी करीम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) और उन मुहाजिरीन व अन्सार की जिन्होंने तंगी और तकलीफ़ के वक़्त नबी करीम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की पैरवी की।"

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि तौबा तो गुनाह व नाफ़रमानी की वजह से होती है,

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इससे मासूम (सुरक्षित) हैं, उनकी तौबा क़ुबूल करने का क्या मतलब है? इसके अ़लावा मुहाजिरीन व अन्सार में जो सहाबा शुरू ही से जिहाद के लिये तैयार हो गये उन्होंने भी कोई क़सूर नहीं किया था, उनकी तौबा किस जुर्म की थी जो क़ुबूल की गयी? जवाब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने उन सब को गुनाह से बचा दिया, इसी को तौबा के नाम से ताबीर किया गया, या यह कि इन सब हज़रात को हक़ तआ़ला ने तव्वाब (तौबा करने वाला) बना दिया, इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि तौबा की हाजत व ज़रूरत से कोई शख़्स बेपरवाह नहीं, यहाँ तक कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपके मख़्सूस सहाबा भी, जैसा कि एक दूसरी आयत में है:

وَتُوْبُوْٓا اِلَى اللّٰهِ جَمِيْعًا.

"यानी तौबा करो अल्लाह से सब के सब।"

वजह यह है कि अल्लाह की निकटता के दर्जे बेशुमार और असीमित हैं, जो शख़्स जिस मक़ाम पर पहुँचा है उससे आगे भी उससे बुलन्द मक़ाम है, जिसके मुक़ाबले में मौजूदा मक़ाम पर रुक जाना एक नुक़्स व कोताही है। मौलाना रूमी रह. ने इसी मज़मून को एक शे'र में इस तरह बयान फ़रमाया है:

ऐ बिरादर बेनिहायत दुरगहेस्त हर चे बरवे मी रसी बरवे मायेस्त

इस लिहाज़ से मौजूदा मक़ाम पर होने से तौबा की ज़रूरत है, ताकि अगला मक़ाम हासिल हो सके।

'साअ़तिल्-उस्रति'। इसी जिहाद के मौक़े को क़ुरआने करीम ने साअ़तिल-उस्रति से ताबीर किया है, क्योंकि मुसलमान उस वक़्त ग़ुर्बत और तंगी में थे। हज़रत हसन बसरी रह. फ़रमाते हैं कि दस आदमियों के लिये एक सवारी थी जिस पर नम्बर वार सवार होते थे, सफ़र का तोशा (खाने-पीने का सामान) भी बहुत कम और मामूली था। दूसरी तरफ़ गर्मी सख़्त व शदीद थी, पानी भी रास्ते में कहीं कहीं और थोड़ा था।

مِنْۢ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيْغُ قُلُوْبُ فَرِيْقٍ مِّنْهُمْ.

इसमें जो कुछ लोगों के दिलों का 'ज़ैग़' बयान किया गया है इससे मुराद दीन से विमुख होना नहीं बल्कि मौसम की सख़्ती और सामान की कमी के सबब हिम्मत हार देना और जिहाद से जान चुराना है। हदीस की रिवायतें इस पर सुबूत हैं, इसी क़सूर से उनकी तौबा क़ुबूल की गयी।

وَّعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذِيْنَ خُلِّفُوْا.

इसमें "ख़ुल्लिफ़ू" के लफ़्ज़ी मायने यह हैं कि जो पीछे छोड़ दिये गये। मुराद यह है कि जिनकी तौबा का मामला लेट किया गया। ये तीन हज़रात- हज़रत कअ़ब बिन मालिक शायर, हज़रत मुरारा बिन रबीअ़ और हज़रत हिलाल बिन उमैया रज़ियल्लाहु अ़न्हुम हैं। तीनों अन्सारी बुज़ुर्ग थे, जो इससे पहले बैअ़त-ए-अ़क़बा और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ

दूसरी जंगों में शरीक रह चुके थे, मगर इस वक़्त इत्तिफ़ाक़ी तौर से इस चूक और ग़लती में मुब्तला हो गये और मुनाफ़िक़ लोग जो इस जिहाद में अपने निफ़ाक़ की वजह से शरीक नहीं हुए थे उन्होंने भी इनको ऐसे ही मश्विरे दिये जिससे इनकी हिम्मत टूट गयी, मगर जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस जिहाद से वापस आये तो उन सब मुनाफ़िक़ों ने हाज़िर होकर झूठे बहाने और मजबूरियाँ पेश करके और झूठी क़समें खाकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को राज़ी करना चाहा, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनकी अन्दर की हालत को अल्लाह के सुपुर्द किया और ज़ाहिरी क़समों को क़ुबूल कर लिया। ये लोग आराम से रहने लगे, कुछ लोगों ने इन तीनों अन्सारी बुज़ुर्गों को भी यही मश्विरा दिया कि तुम भी झूठे उज़्र करके अपनी सफ़ाई पेश कर दो, मगर इनके दिलों ने मलामत की कि एक गुनाह तो जिहाद से पीछे रह जाने का कर चुके हैं अब दूसरा गुनाह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने झूठ बोलने का करें, इसलिये साफ़-साफ़ अपने क़ुसूर का इक़रार कर लिया, जिसकी सज़ा में इनसे सलाम व कलाम का बायकाट जारी किया गया। अन्जाम यह हुआ कि अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन में उन सब की हक़ीक़त खोल दी, झूठी क़समें खाकर उज़्र करने वालों का पर्दा फ़ाश कर दिया, जिसका ज़िक्र और उनके बुरे अन्जाम का हाल इससे पहली कई आयतों में:

يَعْتَذِرُوْنَ اِلَيْكُمْ اِذَا رَجَعْتُمْ اِلَيْهِمْ............ عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ.

तक बयान हुआ है। और इन तीन बुज़ुर्गों ने जो सच बोला और अपनी ख़ता का इक़रार किया, इनकी तौबा इस आयत में नाज़िल हुई। और पचास दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बेतवज्जोही बरतने और सहाबा किराम के सलाम व कलाम के बायकाट की इन्तिहाई सख़्त मुसीबत झेलने के बाद बड़ी इज़्ज़त और मुबारकबादों के साथ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सब मुसलमानों में मक़बूल हुए।

इन तीनों अन्सारी बुज़ुर्गों के वाक़िए की तफ़सील सही हदीसों की रोशनी में

बुख़ारी व मुस्लिम और हदीस की अक्सर किताबों में इस वाक़िए के मुताल्लिक़ हज़रत कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु की एक लम्बी हदीस लिखी गयी है, जो बहुत से फ़ायदों और मसाईल व हक़ाईक़ पर मुश्तमिल है, इसलिये मुनासिब मालूम हुआ कि उसका पूरा तर्जुमा यहाँ नक़ल कर दिया जाये। इन तीन बुज़ुर्गों में से एक कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु थे उन्होंने अपने वाक़िए की तफ़सील इस तरह बतलाई है कि:

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जितने ग़ज़वात (इस्लामी जंगों) में शिर्कत की मैं उन सब में सिवाय ग़ज़वा-ए-तबूक के आपके साथ शरीक रहा, अलबत्ता ग़ज़वा-ए-बदर का वाक़िआ चूँकि अचानक पेश आया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सब को उसमें शरीक होने का हुक्म भी नहीं दिया था और शरीक न होने वालों पर कोई नाराज़गी भी नहीं

फ़रमाई थी, उसमें भी शरीक न हो सका था, और मैं लैलतुल-अ़क़बा की बैअ़त में भी हाज़िर था, जिसमें हमने इस्लाम की हिमायत व हिफ़ाज़त का अ़हद किया था, और मुझे यह बैअ़ते अ़क़बा की हाज़िरी ग़ज़वा-ए-बदर की हाज़िरी से भी ज़्यादा महबूब है, अगरचे ग़ज़वा-ए-बदर लोगों में ज़्यादा मशहूर है और मेरा वाक़िआ़ ग़ज़वा-ए-तबूक में ग़ैर-हाज़िरी का यह है कि मैं किसी वक़्त भी उस वक़्त से ज़्यादा ख़ुशहाल और मालदार न था। ख़ुदा की क़सम मेरे पास कभी उससे पहले दो सवारियाँ जमा नहीं हुई थीं, जो उस वक़्त मौजूद थीं।

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़दत शरीफ़ ग़ज़वात (जंगों और मुहिमों) के मामले में यह थी कि मदीना से निकलने के वक़्त अपने इरादे को गोपनीय रखने के लिये ऐसा करते थे कि जिस दिशा में जाकर जिहाद करना होता मदीने से उसकी विपरीत दिशा को निकलते थे, ताकि मुनाफ़िक़ लोग मुख़बिरी करके मुक़ाबिल फ़रीक़ को आगाह न कर दें, और फ़रमाया करते थे कि जंग में (इस तरह का) फ़रेब देना जायज़ है।

यहाँ तक कि यह ग़ज़वा-ए-तबूक का वाक़िआ़ पेश आया (यह जिहाद कई वजह से एक अलग हैसियत रखता था) -

1. आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सख़्त गर्मी और तंगदस्ती की हालत में इस जिहाद का इरादा फ़रमाया।

2. सफ़र भी बड़ी दूर का था।

3. मुक़ाबले पर दुश्मन की ताक़त और संख्या बहुत ज़्यादा थी, इसलिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस जिहाद का खुलकर ऐलान कर दिया ताकि मुसलमान इस जिहाद के लिये तैयार हो सकें।

इस जिहाद में शरीक होने वालों की तायदाद सही मुस्लिम की रिवायत के मुताबिक़ दस हज़ार से ज़ायद थी, और हाकिम की रिवायत हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह है कि हम इस जिहाद में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ निकले तो हमारी तायदाद तीस हज़ार से ज़ायद थी।

और इस जिहाद में निकलने वालों की कोई फ़ेहरिस्त (सूची) नहीं लिखी गयी थी, इसलिये जो लोग जिहाद में जाना नहीं चाहते थे उनको यह मौक़ा मिल गया कि हम न गये तो किसी को ख़बर भी न होगी। जिस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस जिहाद के लिये निकले तो वह वक़्त था कि खजूरें पक रही थीं, बाग़ों वाले उनमें मशग़ूल थे, उसी हालत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आ़म मुसलमानों ने सफ़र की तैयारी शुरू कर दी और जुमेरात के दिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस सफ़र का आग़ाज़ किया, और सफ़र के लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जुमेरात का दिन पसन्द था, चाहे सफ़र जिहाद का हो या किसी दूसरे मक़सद का।

मेरा हाल यह था कि मैं रोज़ सुबह को इरादा करता कि जिहाद की तैयारी करूँ मगर बग़ैर किसी तैयारी के वापस आ जाता। मैं दिल में कहता था कि मैं जिहाद पर क़ादिर हूँ मुझे

निकलना चाहिये; मगर यूँ ही आज कल परसों में मेरा इरादा टलता रहा, यहाँ तक कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आ़म मुसलमान जिहाद के लिये रवाना हो गये, फिर भी मेरे दिल में यह आता रहा कि मैं भी रवाना हो जाऊँ और कहीं रास्ते में मिल जाऊँ, और काश कि मैं ऐसा कर लेता, मगर यह काम (अफ़सोस है कि) न हो सका।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ ले जाने के बाद जब मैं मदीने में कहीं जाता तो यह बात मुझे ग़मगीन करती थी कि उस वक़्त पूरे मदीने में या तो वे लोग नज़र पड़ते थे जो निफ़ाक़ में डूबे हुए थे, या फिर ऐसे बीमार माज़ूर जो क़तई तौर पर सफ़र के क़ाबिल न थे। दूसरी तरफ़ पूरे रास्ते में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मेरा ख़्याल कहीं नहीं आया यहाँ तक कि तबूक पहुँच गये, उस वक़्त आपने एक मज्लिस में ज़िक्र किया कि कअ़ब बिन मालिक को क्या हुआ (वह कहाँ है)?

बनू सलमा के लोगों में से एक शख़्स ने कहा या रसूलल्लाह! उनको जिहाद से उनके उम्दा लिबास और उस पर नज़र करते रहने ने रोका है। हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अ़र्ज़ किया कि तुमने यह बुरी बात कही है, या रसूलल्लाह! ख़ुदा की क़सम मैंने उनमें ख़ैर के सिवा कुछ नहीं पाया। यह सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ामोश हो गये।

हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु का बयान है कि जब मुझे यह ख़बर मिली कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम वापस तशरीफ़ ला रहे हैं तो मुझे बड़ी फ़िक्र हुई और क़रीब था कि मैं अपनी ग़ैर-हाज़िरी का कोई उ़ज़्र (मजबूरी और बहाना) घबराकर तैयार कर लेता, और ऐसी बातें पेश कर देता जिनके ज़रिये मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नाराज़ी से बच जाता और इसके लिये अपने घर वालों और दोस्तों से भी मदद ले लेता (मेरे दिल में ये ख़्यालात और वस्वसे घूमते रहे) यहाँ तक कि जब यह ख़बर मिली कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये हैं तो बुरे ख़्यालात मेरे दिल से मिट गये और मैंने समझ लिया कि मैं आपकी नाराज़ी से किसी ऐसी बुनियाद पर नहीं बच सकता जिसमें झूठ हो, इसलिये मैंने बिल्कुल सच बोलने का इरादा कर लिया कि मुझे सिर्फ़ सच ही निजात दिला सकता है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम वापस तशरीफ़ लाये तो (आ़दत के अनुसार) चाश्त के वक़्त यानी सुबह को सूरज कुछ ऊँचा होने के वक़्त मदीना में दाख़िल हुए और आ़दत शरीफ़ यही थी कि सफ़र से वापसी का उमूमन यही वक़्त हुआ करता था, और आ़दत यह थी कि पहले मस्जिद में तशरीफ़ ले जाते, दो रक्अ़तें पढ़ते, फिर हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास जाते, उसके बाद अपनी बीवियों से मिलते थे।

इसी आ़दत के मुताबिक़ आप सबसे पहले मस्जिद में तशरीफ़ ले गये, दो रक्अ़तें अदा कीं फिर मस्जिद में बैठ गये। जब लोगों ने यह देखा तो ग़ज़वा-ए-तबूक में न जाने वाले मुनाफ़िक़ जिनकी संख्या अस्सी से कुछ ऊपर थी ख़िदमत में हाज़िर होकर झूठे उ़ज़्र (मजबूरी और बहाने) पेश करके उस पर झूठी क़समें खाने लगे, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके ज़ाहिरी क़ौल व क़रार और क़समों को क़ुबूल कर लिया, और उनको बैअ़त कर लिया, उनके

लिये दुआ-ए-मग़फ़िरत फ़रमाई और उनके अन्दर के हालात को अल्लाह के सुपुर्द किया।

इसी हाल में मैं भी हाज़िरे ख़िदमत हो गया और चलते-चलते सामने जाकर बैठ गया। जब मैंने सलाम किया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसा तबस्सुम फ़रमाया (यानी मुस्कुराये) जैसे नाराज़ आदमी कभी किया करता है। और कुछ रिवायतों में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपना रुख़ फेरे लिया, तो मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! आप मुझसे चेहरा-ए-मुबारक क्यों फेरते हैं, ख़ुदा की क़सम! मैंने निफ़ाक़ नहीं किया, न दीन के मामले में किसी शुब्हे व शक में मुब्तला हुआ, न उसमें कोई तब्दीली की। आपने फ़रमाया कि फिर जिहाद में क्यों नहीं गये? क्या तुमने सवारी नहीं ख़रीद ली थी?

मैंने अ़र्ज़ किया बेशक या रसूलल्लाह! अगर मैं आपके सिवा दुनिया के किसी दूसरे आदमी के सामने बैठता तो मुझे यक़ीन है कि मैं कोई उज़्र गढ़कर उसकी नाराज़ी से बच जाता, क्योंकि मुझे बहस करने और बात बनाने में महारत हासिल है, लेकिन क़सम है अल्लाह की कि मैंने यह समझ लिया है कि अगर मैंने आप से कोई झूठी बात कही जिससे आप वक़्ती तौर पर राज़ी हो जायें तो कुछ दूर नहीं कि अल्लाह तआ़ला असल हक़ीक़त आप पर खोलकर मुझसे नाराज़ कर देंगे, और अगर मैंने सच्ची बात बतला दी जिससे इस वक़्त आप मुझ पर नाराज़ हों तो मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला मुझे माफ़ फ़रमा देंगे। सही बात यह है कि जिहाद से ग़ायब रहने में मेरा कोई उज़्र (मजबूरी और बहाना) नहीं था, मैं किसी वक़्त भी माली और जिस्मानी तौर पर इतना मज़बूत और पैसे वाला नहीं हुआ था जितना इस वक़्त था।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस शख़्स ने तो सच बोला है। फिर फ़रमाया कि अच्छा जाओ यहाँ तक अल्लाह तआ़ला तुम्हारे मुताल्लिक़ कोई फ़ैसला फ़रमा दें। मैं वहाँ से उठकर चला तो बनू सलमा के चन्द आदमी मेरे पीछे लगे और कहने लगे कि इससे पहले तो हमारे इल्म में तुमने कोई गुनाह नहीं किया, यह तुमने क्या बेवक़ूफ़ी की कि इस वक़्त कोई उज़्र पेश कर देते जैसा दूसरे पीछे रह जाने वालों ने पेश किये, और तुम्हारे गुनाह की माफ़ी के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इस्तिग़फ़ार करना काफ़ी हो जाता। ख़ुदा की क़सम ये लोग मुझे बार-बार मलामत करते रहे यहाँ तक कि मेरे दिल में यह ख़्याल आ गया कि मैं लौट जाऊँ और फिर जाकर अ़र्ज़ करूँ कि मैंने जो बात पहले कही थी वह ग़लत थी, मेरा सही उज़्र (मजबूरी) मौजूद था।

मगर फिर मैंने दिल में कहा कि मैं एक गुनाह के दो गुनाह न बनाऊँ, एक गुनाह तो जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहने का हो चुका है दूसरा गुनाह झूठ बोलने का कर गुज़रूँ। फिर मैंने उन लोगों से पूछा कि जिहाद से पीछे रह जाने वालों में कोई और भी मेरे साथ है, जिसने अपने जुर्म का इक़रार कर लिया हो? उन लोगों ने बतलाया कि दो आदमी और हैं जिन्होंने तुम्हारी तरह जुर्म का इक़रार कर लिया और उनको भी वही जवाब दिया गया जो तुम्हें कहा गया है (कि अल्लाह के फ़ैसले का इन्तिज़ार करो)। मैंने पूछा कि वे दो कौन हैं? उन्होंने बतलाया कि एक मुरारा इब्ने रबीअ़ उमरी, दूसरे हिलाल बिन उमैया वाक़िफ़ी हैं।

इब्ने अबी हातिम की रिवायत में है कि इनमें से पहले (यानी मुरारा रज़ियल्लाहु अन्हु) के जिहाद में ग़ैर-हाज़िर रहने का तो सबब यह हुआ कि उनका एक बाग़ था जिसका फल उस वक़्त पक रहा था, तो उन्होंने अपने दिल में कहा कि तुमने इससे पहले बहुत से ग़ज़वात (इस्लामी जंगों और जिहादों) में हिस्सा लिया है, अगर इस साल जिहाद में न जाओ तो क्या जुर्म है। उसके बाद जब वह अपने गुनाह पर चेते तो उन्होंने अल्लाह से अहद कर लिया कि यह बाग़ मैंने अल्लाह की राह में सदक़ा कर दिया।

और दूसरे बुज़ुर्ग हज़रत हिलाल बिन उमैया का यह वाक़िआ हुआ कि उनके अहल व अयाल (बीवी बच्चे) लम्बी मुद्दत से बिखरे हुए थे, इस मौक़े पर सब जमा हो गये तो यह ख़्याल किया कि इस साल में जिहाद में न जाऊँ, अपने बाल-बच्चों में बसर करूँ। उनको भी जब अपने गुनाह का ख़्याल आया तो उन्होंने यह अहद किया कि अब मैं अपने बीवी-बच्चों से अलैहदगी इख़्तियार कर लूँगा।

हज़रत कअब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि उन लोगों ने ऐसे दो बुज़ुर्गों का ज़िक्र किया जो ग़ज़वा-ए-बदर के मुजाहिदीन में से हैं, तो मैंने कहा कि बस मेरे लिये उन्हीं दोनों बुज़ुर्गों का अमल क़ाबिले पैरवी है। यह कहकर मैं अपने घर चला गया।

उधर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को हम तीनों के साथ सलाम कलाम करने से मना फ़रमा दिया, उस वक़्त हम तो सब मुसलमानों से बदस्तूर मुहब्बत करते थे मगर उन सब का रुख़ हमसे फिर गया था।

इब्ने अबी शैबा की रिवायत में है कि अब हमारा हाल यह हो गया कि हम लोगों के पास जाते तो कोई हम से कलाम न करता, न सलाम करता न सलाम का जवाब देता।

मुस्नद अब्दुर्रज़्ज़ाक़ में है कि उस वक़्त हमारी दुनिया बिल्कुल बदल गयी, ऐसा मालूम होने लगा कि न वे लोग हैं जो पहले थे न हमारे बाग़ और मकान वो हैं जो पहले थे, सब अजनबी नज़र आने लगे। मुझे सबसे बड़ी फ़िक्र यह थी कि अगर मैं इस हाल में मर गया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे जनाज़े की नमाज़ न पढ़ेंगे, या ख़ुदा न ख़्वास्ता इस अरसे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी तो मैं उम्रभर इसी तरह सब लोगों में ज़लील व रुस्वा फिरता रहूँगा। इसकी वजह से मेरे लिये सारी ज़मीन बेगानी और वीरानी नज़र आने लगी। इसी हाल में हम पर पचास रातें गुज़र गयीं, उस ज़माने में मेरे दोनों साथी (मुरारा और हिलाल) तो टूटे दिल से घर में बैठ रहे और रात दिन रोते थे, लेकिन मैं जवान आदमी था, बाहर निकलता और चलता फिरता था, और नमाज़ में सब मुसलमानों के साथ शरीक होता था और बाज़ारों में फिरता था, मगर न कोई मुझसे कलाम करता न मेरे सलाम का जवाब देता। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में नमाज़ के बाद हाज़िर होता और सलाम करता तो यह देखा करता था कि आपके होंठ मुबारक को सलाम के जवाब के लिये हरकत हुई या नहीं, फिर मैं आपके क़रीब ही नमाज़ पढ़ता तो नज़र चुराकर आपकी तरफ़ देखता, तो मालूम होता कि जब मैं नमाज़ में मशग़ूल हो जाता हूँ तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरी

तरफ़ देखते हैं और जब मैं आपकी तरफ़ देखता हूँ तो रुख़ फेर लेते हैं।

जब लोगों की यह बेवफ़ाई लम्बी हुई तो एक दिन मैं अपने चचाज़ाद भाई हज़रत क़तादा के पास गया जो मेरे सब से ज़्यादा दोस्त थे, मैं उनके बाग़ में दीवार फाँदकर दाख़िल हुआ और उनको सलाम किया। ख़ुदा की क़सम! उन्होंने भी मेरे सलाम का जवाब न दिया, मैंने पूछा कि ऐ क़तादा! क्या तुम नहीं जानते कि मैं अल्लाह तआ़ला और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुहब्बत रखता हूँ। इस पर भी क़तादा ने चुप्पी साधे रखी, कोई जवाब नहीं दिया। जब मैंने बार-बार यह सवाल दोहराया तो तीसरी या चौथी मर्तबा में उन्होंने सिर्फ़ इतना कहा कि अल्लाह जानता है और उसका रसूल। मैं रो पड़ा और उसी तरह दीवार फाँदकर बाग़ से बाहर आ गया। उसी ज़माने में एक दिन मैं मदीना के बाज़ार में चल रहा था कि अचानक मुल्क शाम का एक नब्ती शख़्स जो ग़ल्ला फ़रोख़्त करने के लिये शाम से मदीना में आया था, उसको देखा कि लोगों से पूछ रहा है कि क्या कोई मुझे कअ़ब बिन मालिक का पता बता सकता है? लोगों ने मुझे देखकर मेरी तरफ़ इशारा किया। वह आदमी मेरे पास आ गया और मुझे ग़स्सान के बादशाह का एक ख़त दिया जो एक रेशमी रूमाल पर लिखा हुआ था, जिसका मज़मून यह थाः

"अम्मा बाद! मुझे यह ख़बर मिली है कि आपके नबी ने आप से बेवफ़ाई की और आपको दूर कर रखा है, अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें ज़िल्लत और हलाकत की जगह में नहीं रखा है, तुम अगर हमारे यहाँ आना पसन्द करो तो आ जाओ, हम तुम्हारी मदद करेंगे।"

मैंने जब यह ख़त पढ़ा तो कहा कि यह और एक मेरा इम्तिहान और आज़माईश आई कि कुफ़्र वालों को मुझसे इसकी अपेक्षा और उम्मीद हो गयी (कि मैं उनके साथ मिल जाऊँ)। मैं यह ख़त लेकर आगे बढ़ा, एक दुकान पर तन्दूर लगा हुआ था, उसमें झोंक दिया।

हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब पचास में से चालीस रातें गुज़र चुकी थीं तो अचानक देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के एक क़ासिद ख़ुज़ैमा बिन साबित मेरे पास आ रहे हैं, आकर यह कहा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह हुक्म दिया है कि तुम अपनी बीवी से भी अ़लैहदगी इख़्तियार कर लो। मैंने पूछा कि क्या तलाक़ दे दूँ या क्या करूँ? उन्होंने बतलाया कि नहीं अ़मलन उससे अलग रहो, क़रीब न जाओ। इसी तरह का हुक्म मेरे दोनों साथियों के पास भी पहुँचा। मैंने बीवी से कह दिया कि तुम अपने मायके में चली जाओ और वहीं रहो जब तक अल्लाह तआ़ला कोई फ़ैसला फ़रमायें।

हिलाल बिन उमैया की बीवी ख़ौला बिन्ते आसिम यह हुक्म सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुईं और अ़र्ज़ किया कि हिलाल बिन उमैया! एक बूढ़े कमज़ोर आदमी हैं और कोई उनका ख़ादिम नहीं। इब्ने अबी शैबा की रिवायत में यह भी है कि वह निगाह के कमज़ोर भी हैं, क्या आप यह पसन्द नहीं फ़रमायेंगे कि मैं उनकी ख़िदमत करती रहूँ? फ़रमाया कि ख़िदमत करने की मनाही नहीं, अलबत्ता वह तुम्हारे पास न जायें। उन्होंने अ़र्ज़ किया कि वह तो बुढ़ापे की वजह से ऐसे हो गये हैं कि उनमें कोई हरकत ही नहीं, और अल्लाह की क़सम उन पर लगातार रोना तारी है, रात दिन रोते रहते हैं।

कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मुझे भी मेरे कुछ संबन्धियों ने मश्विरा दिया कि तुम भी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से बीवी को साथ रखने की इजाज़त ले लो जैसा कि आपने हज़रत हिलाल को इजाज़त दे दी है। मैंने कहा कि मैं ऐसा नहीं करूँगा, मालूम नहीं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम क्या जवाब दें। इसके अ़लावा मैं जवान आदमी हूँ (बीवी को साथ रखना एहतियात के ख़िलाफ़ है)। चुनाँचे इसी हाल पर मैंने दस रातें और गुज़ारीं, यहाँ तक कि पचास रातें मुकम्मल हो गयीं। मुस्नद अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ की रिवायत में है कि उस वक़्त हमारी तौबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर एक तिहाई रात गुज़रने के वक़्त नाज़िल हुई। उम्मुल-मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा जो उस वक़्त हाज़िर थीं उन्होंने अ़र्ज़ किया कि इजाज़त हो तो कअ़ब बिन मालिक को इसी वक़्त इसकी ख़बर कर दी जाये। आपने फ़रमाया कि ऐसा हुआ तो अभी लोगों का हुजूम हो जायेगा, रात की नींद मुश्किल हो जायेगी।

हज़रत कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि पचासवीं रात के बाद सुबह की नमाज़ पढ़कर मैं अपने घर की छत पर बैठा था और हालत वह थी जिसका ज़िक्र अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन में किया है कि मुझ पर मेरी जान और ज़मीन बावजूद वुस्अ़त के तंग हो चुकी थी। अचानक मैंने सलअ़ पहाड़ के ऊपर से किसी चिल्लाने वाले आदमी की आवाज़ सुनी जो बुलन्द आवाज़ से कह रहा था कि ऐ कअ़ब बिन मालिक! ख़ुशख़बरी हो।

मुहम्मद बिन अ़मर की रिवायत में है कि यह बुलन्द आवाज़ से कहने वाले अबू बक्र थे जिन्होंने सलअ़ पहाड़ पर चढ़कर यह आवाज़ लगाई कि अल्लाह तआ़ला ने कअ़ब की तौबा क़ुबूल फ़रमा ली, ख़ुशख़बरी हो। और उक़्बा की रिवायत में यह है कि यह ख़ुशख़बरी हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अन्हु को सुनाने के लिये दो आदमी दौड़े, उनमें से एक आगे बढ़ गया तो जो पीछे रह गया था उसने यह किया कि सलअ़ पहाड़ पर चढ़कर आवाज़ दे दी, और कहा जाता है कि यह दौड़ने वाले दो बुज़ुर्ग हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ और हज़रत फ़ारूक़े आज़म थे।

कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि यह आवाज़ सुनकर मैं सज्दे में गिर गया और बेइन्तिहा ख़ुशी से रोने लगा, और मुझे मालूम हो गया कि अब आसानी और सहूलत आ गयी। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सुबह की नमाज़ के बाद सहाबा-ए-किराम को हमारी तौबा क़ुबूल होने की ख़बर दी थी, अब सब तरफ़ से लोग हम तीनों को मुबारकबाद देने के लिये दौड़ पड़े। कुछ लोग घोड़े पर सवार होकर मेरे पास पहुँचे मगर पहाड़ से आवाज़ देने वाले की आवाज़ सब से पहले पहुँच गयी।

कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िरी के लिये निकला तो लोग झुण्ड के झुण्ड मुझे मुबारकबाद देने के लिये आ रहे थे। कअ़ब रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैं मस्जिदे नबवी में दाख़िल हुआ तो देखा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ रखते हैं। आपके गिर्द सहाबा-ए-किराम का मजमा है, मुझे देखकर सबसे पहले तल्हा बिन उबैदुल्लाह खड़े होकर मेरी तरफ़ लपके और मुझसे

मुसाफ़ा करके तौबा के क़ुबूल होने पर मुबारकबाद दी। तल्हा का यह एहसान मैं कभी नहीं भूलता। जब मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सलाम किया तो आपका चेहरा-ए-मुबारक ख़ुशी की वजह से चमक रहा था। आपने फ़रमाया कि ऐ कअ़ब! ख़ुशख़बरी हो तुम्हें ऐसे मुबारक दिन की जो तुम्हारी उम्र में पैदाईश से लेकर आज तक सबसे ज़्यादा बेहतर दिन है। मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! यह हुक्म आपकी तरफ़ से है या अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से? आपने फ़रमाया कि नहीं, यह हुक्म अल्लाह तआ़ला का है। तुमने सच बोला था अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी सच्चाई को ज़ाहिर फ़रमा दिया।

जब मैं आपके सामने बैठा तो अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मेरी तौबा यह है कि मैं अपने सब माल व सामान से निकल जाऊँ, कि सब को अल्लाह की राह में सदक़ा कर दूँ। आपने फ़रमाया नहीं! कुछ माल अपनी ज़रूरत के लिये रहने दो, यह बेहतर है। मैंने अ़र्ज़ किया कि अच्छा आधा माल सदक़ा कर दूँ? आपने इससे भी इनकार फ़रमाया, मैंने फिर एक तिहाई माल की इजाज़त माँगी तो आपने इसको क़ुबूल फ़रमा लिया। मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! मुझे अल्लाह ने सच बोलने की वजह से निजात दी है इसलिये मैं अ़हद करता हूँ कि जब तक मैं ज़िन्दा हूँ कभी सच के सिवा कोई कलिमा नहीं बोलूँगा। फिर फ़रमाया कि जब से मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह सच बोलने का अ़हद किया था अल्हम्दु लिल्लाह कि आज तक कोई कलिमा झूठ का मेरी ज़बान पर नहीं आया, और मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआ़ला बाक़ी ज़िन्दगी में मुझे उससे महफ़ूज़ रखेंगे। हज़रत कअ़ब फ़रमाते हैं कि ख़ुदा की क़सम! इस्लाम के बाद इससे बड़ी नेमत मुझे नहीं मिली कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने सच बोला, झूठ से परहेज़ किया, क्योंकि अगर मैं झूठ बोलता तो इसी तरह हलाकत में पड़ जाता जिस तरह दूसरे झूठी क़समें खाने वाले हलाक हुए, जिनके बारे में क़ुरआन में यह नाज़िल हुआ:

سَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا انْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ..................... فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ٥

कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इन तीनों हज़रात से सलाम-कलाम का बायकाट पचास दिन तक जारी रहना शायद इस हिक्मत पर आधारित था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ग़ज़वा-ए-तबूक में पचास दिन ही ख़र्च हुए थे (यह पूरी रिवायत और तफ़सीली वाक़िआ़ तफ़सीरे मज़हरी से लिया गया है)।

हज़रत कअ़ब बिन मालिक की हदीस से संबन्धित फ़ायदे

हज़रत कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने अपने वाक़िए को जिस तफ़सील व विस्तार से बयान फ़रमाया है इसमें मुसलमानों के लिये बहुत से फ़ायदे और हिदायतें हैं। इसी लिये इस जगह इस हदीस को पूरा लिखा गया है। वो फ़ायदे ये हैं:

1. इस हदीस में बतलाया गया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की जंग में जाने की आ़म आ़दत यह थी कि जिस तरफ़ जाना होता उसकी विपरीत दिशा से मदीना तय्यिबा

से रवाना होते, ताकि इस्लाम के मुख़ालिफ़ों को यह मालूम न हो कि आप किस क़ौम या क़बीले के जिहाद के लिये जा रहे हैं। इसी को आपने फ़रमायाः

اَلْحَرْبُ خُدْعَةٌ

यानी जंग में धोखा देना जायज़ है। इससे कुछ लोग इस मुग़ालते में पड़ जाते हैं कि जंग व जिहाद में झूठ बोलकर मुख़ालिफ़ को धोखा देना जायज़ है। यह सही नहीं, बल्कि मुराद इस धोखे से यह है कि अपना अ़मल ऐसा करे जिससे मुख़ालिफ़ लोग धोखे में पड़ जायें, जैसे जिहाद के लिये विपरीत दिशा से निकलना। खुला झूठ बोलकर धोखा देना मुराद नहीं, वह जंग में भी जायज़ नहीं। इसी तरह यह भी समझ लेना चाहिये कि यह अ़मली धोखा जिसको जायज़ क़रार दिया है इसका कोई ताल्लुक़ अ़हद व समझौते से नहीं, और अ़हद का तोड़ना सुलह हो या जंग किसी हाल में जायज़ नहीं।

2. सफ़र के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जुमेरात का दिन पसन्द था, चाहे सफ़र जिहाद का हो या किसी दूसरी ज़रूरत का।

3. अपने किसी बुज़ुर्ग, मुर्शिद, उस्ताद या बाप को राज़ी करने के लिये झूठ बोलना जायज़ भी नहीं और उसका अन्जाम भी अच्छा नहीं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तो असल हक़ीक़त का इल्म वही के ज़रिये हो जाता था, इसलिये झूठ बोलने का बुरा अन्जाम था जैसा कि कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु और दूसरे जंग में पीछे रह जाने वालों के उक्त वाक़िए से वाज़ेह हुआ, आपके बाद दूसरे बुज़ुर्गों को वही तो हो नहीं सकती, इल्हाम व कश्फ़ से इल्म हो जाना भी ज़रूरी नहीं, लेकिन तजुर्बा गवाह है कि झूठ बोलने की एक नहूसत होती है कि क़ुदरती तौर पर ऐसे असबाब जमा हो जाते हैं कि आख़िरकार यह बुज़ुर्ग उससे नाराज़ हो ही जाता है।

4. इस वाक़िए से मालूम हुआ कि किसी गुनाह की सज़ा में मुसलमानों के अमीर को यह भी हक़ है कि किसी शख़्स से सलाम व कलाम बन्द कर देने का हुक्म दे दे, जैसे इस वाक़िए में इन तीन बुज़ुर्गों के मुताल्लिक़ पेश आया।

5. इस वाक़िए से सहाबा-ए-किराम की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ इन्तिहाई मुहब्बत मालूम हुई कि इस नाराज़ी और सलाम व कलाम के बायकाट के ज़माने में भी मुहब्बत से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िरी भी नहीं छोड़ी और कन-अँखियों से देखकर आपकी तवज्जोह और ताल्लुक़ का हाल मालूम करने की फ़िक्र रही।

6. हज़रत कअ़ब बिन मालिक रज़ियल्लाहु अ़न्हु के गहरे दोस्त हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मामला, कि उनके सलाम का जवाब न दिया और कोई कलाम न किया। ज़ाहिर है कि यह किसी दुश्मनी व मुख़ालफ़त या नफ़रत से नहीं बल्कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म की तामील की वजह से था, इससे मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का बनाया हुआ क़ानून सिर्फ़ लोगों के ज़ाहिर पर नाफ़िज़ न होता था बल्कि दिलों पर भी

उसकी हुकूमत होती थी, और हाज़िर व ग़ायब किसी हाल में उसके ख़िलाफ़ न करते थे अगरचे उसमें किसी बड़े से बड़े दोस्त अज़ीज़ के ख़िलाफ़ ही हो।

7. हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास ग़स्सान के बादशाह का ख़त आने और उसको तन्दूर में डालने के वाक़िए से सहाबा-ए-किराम के ईमान की हद से ज़्यादा पुख़्तगी मालूम हुई कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और तमाम मुसलमानों के बायकाट से सख़्त परेशान होने के आ़लम में भी एक बड़े बादशाह के लालच दिलाने से उनके दिल में कोई मैलान व रुझान पैदा नहीं हुआ।

8. तौबा क़ुबूल होने का ऐलान नाज़िल होने के बाद हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु और आ़म सहाबा-ए-किराम का कअ़ब बिन मालिक को ख़ुशख़बरी देने के लिये दौड़ना और उससे पहले सब का सलाम व कलाम तक से सख़्त परहेज़ करना यह ज़ाहिर करता है कि बायकाट के ज़माने में भी उन सब के दिलों में हज़रत कअ़ब से मुहब्बत और ताल्लुक़ था, मगर रसूले पाक के हुक्म के सामने सब कुछ छोड़ा हुआ था। जब तौबा की आयत नाज़िल हुई तो उनके गहरे ताल्लुक़ का अन्दाज़ा हुआ।

9. सहाबा-ए-किराम का हज़रत कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़ुशख़बरी देने और मुबारकबाद के लिये जाने से मालूम हुआ कि किसी ख़ुशी के मौक़े पर अपने दोस्त अहबाब को मुबारकबाद देना सुन्नत से साबित है।

10. किसी गुनाह से तौबा के वक़्त माल का सदक़ा करना गुनाह के असर को दूर करने के लिये बेहतर है, मगर तमाम माल ख़ैरात कर देना अच्छा नहीं, एक तिहाई माल से ज़ायद सदक़ा करना रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पसन्द नहीं फ़रमाया।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ ○

पहले बयान हुई आयतों में जो जिहाद से पीछे और ग़ैर-हाज़िर रहने का वाक़िआ़ कुछ पीछे रह जाने वालों की तरफ़ से पेश आया, फिर उनकी तौबा क़ुबूल हुई, यह सब नतीजा उनके तक़वे और अल्लाह से ख़ौफ़ का था, इसलिये इस आयत में आ़म मुसलमानों को तक़वे (परहेज़गारी) के लिये हिदायत फ़रमाई गयी, और 'कूनू मअ़स्सादिक़ीन' में इस तरफ़ इशारा फ़रमाया गया कि तक़वे की सिफ़त हासिल होने का तरीक़ा नेक और सच्चे लोगों की सोहबत और अ़मल में उनकी मुवाफ़क़त है। इसमें शायद यह इशारा भी हो कि जिन हज़रात से यह चूक और भूल हुई इसमें मुनाफ़िक़ों की सोहबत, पास बैठने और उनके मश्विरे को भी दख़ल था, अल्लाह के नाफ़रमानों की सोहबत से बचना चाहिये और सच्चे लोगों की सोहबत इख़्तियार करनी चाहिये। इस जगह क़ुरआने हकीम ने उलेमा और नेक लोगों के बजाये सादिक़ीन (सच्चों) का लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाकर आ़लिम व नेक की पहचान भी बतला दी है कि नेक सिर्फ़ वही शख़्स हो सकता है जिसका ज़ाहिर व बातिन एक जैसा हो, नीयत व इरादे का भी सच्चा हो, क़ौल का भी सच्चा हो, अ़मल का भी सच्चा हो।

مَا كَانَ لِأَهْلِ الْمَدِينَةِ وَمَنْ حَوْلَهُمْ مِنَ الْأَعْرَابِ أَنْ يَتَخَلَّفُوا عَنْ رَسُولِ اللَّهِ وَلَا يَرْغَبُوا بِأَنْفُسِهِمْ عَنْ نَفْسِهِ ۚ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ لَا يُصِيبُهُمْ ظَمَأٌ وَلَا نَصَبٌ وَلَا مَخْمَصَةٌ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَلَا يَطَئُونَ مَوْطِئًا يَغِيظُ الْكُفَّارَ وَلَا يَنَالُونَ مِنْ عَدُوٍّ نَيْلًا إِلَّا كُتِبَ لَهُمْ بِهِ عَمَلٌ صَالِحٌ ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُضِيعُ أَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٢٠﴾ وَلَا يُنْفِقُونَ نَفَقَةً صَغِيرَةً وَلَا كَبِيرَةً وَلَا يَقْطَعُونَ وَادِيًا إِلَّا كُتِبَ لَهُمْ لِيَجْزِيَهُمُ اللَّهُ أَحْسَنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٢١﴾

मा का-न लिअह्लिल्-मदीनति व मन् हौ-लहुम् मिनल्-अअ्राबि अंय्य-तख़ल्लफ़ू अ़र्रसूलिल्लाहि व ला यर्ग़बू बिअन्फ़ुसिहिम् अ़न्-नफ़्सिही, ज़ालि-क बिअन्नहुम् ला युसीबुहुम् ज़-मउंव्-व ला न-सबुंव्-व ला मख़्म-सतुन् फ़ी सबीलिल्लाहि व ला य-तऊ-न मौतिअंय्यग़ीज़ुल्-कुफ़्फ़ा-र व ला यनालू-न मिन् अ़दुव्विन्-नैलन् इल्ला कुति-ब लहुम् बिही अ़-मलुन् सालिहुन्, इन्नल्ला-ह ला युज़ीअु अज्रल्-मुह्सिनीन (120) व ला युन्फ़िक़ू-न न-फ़-क़तन् सग़ी-रतंव्-व ला कबी-रतंव्-व ला यक़्तअ़ू-न वादियन् इल्ला कुति-ब लहुम् लियज्ज़ि-यहुमुल्लाहु अह्स-न मा कानू यअ़्मलून (121)	न चाहिए मदीने वालों को और उनके आस-पास के गंवारों को कि पीछे रह जायें रसूलुल्लाह के साथ से, और न यह कि अपनी जान को चाहें ज़्यादा रसूल की जान से, यह इस वास्ते कि जिहाद करने वाले नहीं पहुँचती उनको प्यास और न मेहनत और न भूख अल्लाह की राह में और नहीं क़दम रखते कहीं जिससे कि ख़फ़ा हों काफ़िर और न छीनते हैं दुश्मन से कोई चीज़ मगर लिखा जाता है उनके वास्ते इनके बदले नेक अ़मल, बेशक अल्लाह नहीं ज़ाया करता हक़ नेकी करने वालों का। (120) और न ख़र्च करते हैं कोई ख़र्च छोटा और न बड़ा, और न तय करते हैं कोई मैदान मगर लिख लिया जाता है उनके वास्ते, ताकि बदला दे उनको अल्लाह बेहतर उस काम का जो करते थे। (121)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

मदीने के रहने वालों को और जो देहाती उनके आस-पास में (रहते) हैं उनको यह मुनासिब

न था कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) का साथ न दें, और न यह (चाहिए था) कि अपनी जान को उनकी जान से ज़्यादा प्यारा समझें (कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो तकलीफ़ें सहें और ये आराम से बैठे रहें, बल्कि आपके साथ जाना ज़रूरी था और) यह (साथ जाने का ज़रूरी होना) इस सबब से है कि (रसूल की मुहब्बत का हक् अदा करने के अ़लावा उन मुजाहिदीन को बात-बात पर सवाब हासिल हुआ है, अगर ये इख़्लास के साथ जाते तो इनको भी यह मिलता। चुनाँचे) उनको अल्लाह की राह में जो प्यास लगी और जो थकान पहुँची और जो भूख लगी और जो चलना चले, जो काफ़िरों के लिये आक्रोश और गुस्से का सबब हुआ हो, और दुश्मनों की जो कुछ ख़बर ली, इन सब पर उनके नाम एक-एक नेक काम लिखा गया (इसके बावजूद कि इनमें से कुछ काम इख़्तियारी नहीं बल्कि बेक़रारी की हालत के हैं लेकिन मक़बूलियत व महबूबियत के सबब उनको भी इख़्तियारी आमाल की तरह अज्र व सवाब वाला क़रार दिया गया, और इस वायदे में ख़िलाफ़वर्ज़ी होने का कोई शुब्हा नहीं क्योंकि) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला मुख़्लिस लोगों का अज्र ज़ाया नहीं करते (पस वायदा कर लिया तो ज़ाया न होगा)। और (यह भी कि) जो कुछ छोटा या बड़ा उन्होंने ख़र्च किया और जितने मैदान उनको तय करने पड़े, यह सब भी उनके नाम (नेकियों में) लिखा गया ताकि अल्लाह उनको उनके (उन सब) कामों का अच्छे-से-अच्छा बदला दे (क्योंकि जब सवाब लिखा गया तो बदला मिलेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन दोनों आयतों में जिहाद में पीछे और ग़ैर-हाज़िर रह जाने वालों को उनके इस अ़मल पर मलामत और फटकार लगाने और जिहाद में शरीक होने वालों के फ़ज़ाईल और जिहाद के सिलसिले में क़दम क़दम पर हर क़ौल व फ़ेल और हर मेहनत व मशक़्क़त पर बड़े अज्र व बदले का ज़िक्र है, जिसमें जिहाद के वक़्त दुश्मन को कोई तकलीफ़ पहुँचा देना और ऐसी चाल चलना जिससे उनका आक्रोश व गुस्सा बढ़े ये सब नेक आमाल अज्र व सवाब का ज़रिया हैं।

وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُونَ لِيَنفِرُوا كَافَّةً ۚ فَلَوْلَا نَفَرَ مِن كُلِّ فِرْقَةٍ مِّنْهُمْ طَائِفَةٌ لِّيَتَفَقَّهُوا فِي الدِّينِ
وَلِيُنذِرُوا قَوْمَهُمْ إِذَا رَجَعُوا إِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ يَحْذَرُونَ ۝ ع ١٥

व मा कानल्-मुअ्मिनू-न लियन्फ़िरू काफ़्फ़-तन्, फ़लौ ला न-फ़-र मिन् कुल्लि फ़िर्कतिम् मिन्हुम् ताइ-फ़तुल् लि-य-तफ़क़्क़हू फ़िद्दीनि व लियुन्ज़िरू क़ौमहुम् इज़ा र-जअू	और ऐसे तो नहीं मुसलमान कि कूच करें सारे, सो क्यों न निकला हर फ़िर्के में से उनका एक हिस्सा ताकि समझ पैदा करें दीन में और ताकि ख़बर पहुँचायें अपनी क़ौम को जबकि लौटकर आयें उनकी

इलैहिम् लअ़ल्लहुम् यह्ज़रून (122) ✿	तरफ़, ताकि वे बचते रहें। (122) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (हमेशा के लिये) मुसलमानों को यह (भी) न चाहिए कि (जिहाद के लिये) सब-के-सब (ही) निकल खड़े हों (कि इसमें दूसरी इस्लामी ज़रूरतें ठप होती हैं) सो ऐसा क्यों न किया जाये कि उनकी हर बड़ी जमाअ़त में से एक छोटी जमाअ़त (जिहाद में) जाया करे (और कुछ अपने वतन में रह जाया करें) ताकि बाक़ी रहने वाले लोग (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वक़्त में आप से और आपके बाद शहर के उलेमा से) दीन की समझ-बूझ हासिल करते रहें, और ताकि ये लोग अपनी (उस) क़ौम को (जो कि जिहाद में गये हुए हैं) जबकि वे इनके पास वापस आएँ (दीन की बातें सुनाकर ख़ुदा की नाफ़रमानी से) डराएँ। ताकि वे (इनसे दीन की बातें सुनकर बुरे कामों से) एहतियात रखें।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः तौबा में बड़ी अहमियत के साथ ग़ज़वा-ए-तबूक का ज़िक्र लगातार चला आया है, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से आ़म ऐलान किया गया था कि सब मुसलमान उसमें शरीक हों। इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी बिना वास्तविक मजबूरी के जायज़ न थी, जो लोग ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) में मुब्तला हुए उनमें ज़्यादा तो मुनाफ़िक़ थे जिनका ज़िक्र बहुत सी आयतों में ऊपर आया है, कुछ पक्के-सच्चे मोमिन भी थे जो वक़्ती काहिली और सुस्ती के सबब रह गये थे, उनकी तौबा हक़ तआ़ला ने क़ुबूल फ़रमा ली। इन सब वाक़िआ़त से बज़ाहिर यह समझा जा सकता है कि हर जिहाद और ग़ज़वे में सब ही मुसलमानों को निकलना फ़र्ज़ और पीछे रह जाना हराम है, हालाँकि शरई हुक्म यह नहीं, बल्कि जिहाद आ़म हालात में फ़र्ज़े किफ़ाया है, जिसका हुक्म यह है कि मुसलमानों की कुछ जमाअ़त जो जिहाद के लिये काफ़ी हो जिहाद में मशग़ूल रहे तो बाक़ी मुसलमान भी फ़र्ज़ से बरी हो जाते हैं, हाँ अगर जिहाद में शरीक होने वाली जमाअ़त काफ़ी न हो, वह पराजित होने लगे तो आस-पास के मुसलमानों पर उनकी मदद के लिये निकलना और जिहाद में शरीक होना फ़र्ज़ हो जाता है। वे भी काफ़ी न हों तो उनके क़रीब जो मुसलमान हैं उन पर, यहाँ तक कि सारे आ़लम के मुसलमानों पर ऐसी हालत में जिहाद फ़र्ज़े ऐन (लाज़िमी फ़र्ज़) हो जाता है, जिससे भागना और पीछे रहना हराम है।

इसी तरह फ़र्ज़ होने की एक सूरत यह है कि मुसलमानों का अमीर ज़रूरत समझकर आ़म ऐलान करे और सब मुसलमानों को जिहाद की दावत दे, तो उस वक़्त भी जिहाद की शिर्कत फ़र्ज़ और उससे पीछे रहना हराम हो जाता है जैसा कि ग़ज़वा-ए-तबूक के वाक़िए में आ़म ऐलान की वजह से पेश आया। उपर्युक्त आयत में इसी हुक्म को वाज़ेह किया गया है कि यह ग़ज़वा-ए-तबूक में आ़म बुलावे की वजह से ख़ुसूसी हुक्म था, आ़म हालात में जिहाद फ़र्ज़े ऐन

नहीं, कि सब मुसलमानों पर जिहाद में जाना फ़र्ज़ हो, क्योंकि जिहाद की तरह इस्लाम और मुसलमानों के सामूहिक मसाईल और अहम मामलात भी हैं जो जिहाद ही की तरह फ़र्ज़े किफ़ाया हैं, उनके लिये भी मुसलमानों की विभिन्न जमाअ़तों को काम तक़सीम करने के उसूल पर काम करना है, इसलिये सब मुसलमानों को हर जिहाद में निकलना नहीं चाहिये। इसी मज़मून से फ़र्ज़े किफ़ाया की हक़ीक़त भी आप समझ सकते हैं कि जो काम ज़ाती और व्यक्तिगत नहीं सामूहिक हैं और सब मुसलमानों पर उनके पूरा करने की ज़िम्मेदारी है उनको शरीअ़त में फ़र्ज़े किफ़ाया क़रार दिया गया, ताकि काम बाँटने के उसूल पर सब काम अपनी-अपनी जगह चलते रहें और ये सामूहिक फ़राईज़ सब अदा होते रहें। मुसलमान मर्दों पर नमाज़े जनाज़ा और उसका कफ़न-दफ़न करना, मस्जिदें बनाना और उनकी निगरानी, जिहाद, इस्लामी सरहदों की हिफ़ाज़त ये सब इसी फ़र्ज़े किफ़ाया के अंग हैं कि इनकी ज़िम्मेदारी तो पूरे आ़लम के मुसलमानों पर है मगर ज़रूरत के मुताबिक़ कुछ लोग कर लें तो दूसरे मुसलमान भी फ़र्ज़ से मुक्त हो जाते हैं।

इसी फ़र्ज़े किफ़ाया के सिलसिले का एक अहम काम दीनी तालीम है। इस आयत में खुसूसियत से उसके फ़र्ज़ होने का इस तरह ज़िक्र फ़रमाया है कि जिहाद जैसे अहम फ़र्ज़ में भी इस फ़र्ज़ को छोड़ना नहीं, जिसकी सूरत यह है कि हर बड़ी जमाअ़त में से एक छोटी जमाअ़त जिहाद के लिये निकले, और बाक़ी लोग दीन का इल्म हासिल करने में लगें। फिर ये इल्मे दीन हासिल करके जिहाद में जाने वाले मुसलमानों और दूसरे लोगों को दीन का इल्म सिखायेंगे।

दीनी इल्म को हासिल करने का फ़र्ज़ होना और उसके आदाब व फ़राईज़

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया है कि यह आयत दीन का इल्म हासिल करने की असल और बुनियाद है, और ग़ौर किया जाये तो इसी आयत में दीन के इल्म का संक्षिप्त पाठ्यक्रम भी बतला दिया गया है, और इल्म हासिल करने के बाद आ़लिम के फ़राईज़ भी। इसलिये इस मज़मून को किसी क़द्र तफ़सील से लिखा जाता है।

इल्मे दीन के फ़ज़ाईल

इल्मे दीन के फ़ज़ाईल, अ़ज़ीम सवाब और उसके मुताल्लिक़ बातों पर उलेमा ने मुस्तक़िल किताबें लिखी हैं। इस जगह चन्द मुख़्तसर रिवायतें नक़ल की जाती हैं। तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह फ़रमाते हुए सुना है कि 'जो शख़्स किसी रास्ते पर चले जिसका मक़सद इल्म हासिल करना हो, अल्लाह तआ़ला उस चलने के सवाब में उसका रास्ता जन्नत की तरफ़ कर देंगे, और यह कि अल्लाह के फ़रिश्ते तालिब-इल्म (दीन का इल्म हासिल करने वाले) के लिये अपने पर बिछाते हैं, और यह कि आ़लिम के लिये तमाम आसमानों और ज़मीन की मख़्लूक़ात और पानी की

मछलियाँ दुआ व इस्तिग़फ़ार करती हैं, और यह कि आलिम की फ़ज़ीलत कसरत से नफ़्ली इबादत करने वाले पर ऐसी है जैसे चौदहवीं रात के चाँद की फ़ज़ीलत बाक़ी सब सितारों पर, और यह कि उलेमा अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के वारिस हैं, और यह कि अम्बिया अलैहिमुस्सलाम सोने चाँदी की कोई मीरास नहीं छोड़ते लेकिन इल्म की विरासत छोड़ते हैं, तो जिस शख़्स ने इल्म की यह विरासत हासिल कर ली उसने बड़ी दौलत हासिल कर ली।" (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और दारमी ने अपने मुस्नद में यह हदीस रिवायत की है कि "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किसी शख़्स ने मालूम किया कि बनी इस्राईल में दो आदमी थे, एक आलिम था जो सिर्फ़ नमाज़ पढ़ लेता और फिर लोगों को दीन की तालीम देने में मशग़ूल हो जाता था। दूसरा दिन भर रोज़ा रखता और रात को इबादत में खड़ा रहता था। इन दोनो में कौन अफ़ज़ल है? आपने फ़रमाया कि उस आलिम की फ़ज़ीलत आबिद पर ऐसी है जैसी मेरी फ़ज़ीलत तुम में से अदना आदमी पर।" (यह रिवायत इमाम अ़ब्दुल-बर्र ने किताब जामे बयानुल-इल्म में सनद के साथ हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल की है) (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक फ़क़ीह (दीनी इल्म में महारत रखने वाला आलिम) शैतान के मुक़ाबले में एक हज़ार इबादत-गुज़ारों से ज़्यादा ताक़तवर और भारी है। (तिर्मिज़ी, इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से, मज़हरी) और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब इनसान मर जाता है तो उसका अ़मल बन्द और ख़त्म हो जाता है मगर तीन अ़मल ऐसे हैं जिनका सवाब इनसान को मरने के बाद भी पहुँचता रहता है- एक सदक़ा-ए-जारिया' जैसे मस्जिद या दीनी तालीम के लिये इमारत या आम लाभ के इदारे, दूसरे वह इल्म जिससे उसके बाद भी लोग नफ़ा उठाते रहें (मसलन शागिर्द आलिम हो गये, उनसे आगे लोगों को इल्मे दीन सिखाने का सिलसिला चलता रहा, या कोई किताब लिख दी जिससे उसके बाद भी लोग फ़ायदा उठाते रहे), तीसरे नेक औलाद जो उसके लिये दुआ और ईसाल-ए-सवाब करती रहे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इल्मे दीन के फ़र्ज़े-ऐन और फ़र्ज़े-किफ़ाया की तफ़सील

इब्ने अ़दी और बैहक़ी ने सही सनद के साथ हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत किया है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

طَلَبُ الْعِلْمِ فَرِيْضَةٌ عَلٰى كُلِّ مُسْلِمٍ. (از مظهری)

"यानी इल्म हासिल करना फ़र्ज़ है हर एक मुसलमान पर"। यह ज़ाहिर है कि इस हदीस और ऊपर ज़िक्र हुई हदीसों में इल्म से मुराद दीन का इल्म ही है, दुनियावी उलूम व फ़ुनून आम दुनिया के कारोबार की तरह इनसान के लिये ज़रूरी सही, मगर उनके वो फ़ज़ाईल नहीं जो उपर्युक्त हदीसों में आये हैं। फिर इल्मे दीन एक इल्म नहीं, बहुत से उलूम पर मुश्तमिल एक मुकम्मल निज़ाम है, और यह भी ज़ाहिर है कि हर मुसलमान मर्द व औरत इस पर क़ादिर नहीं

कि उन सब उलूम को पूरा हासिल कर सके, इसलिये उक्त हदीस में जो हर मुसलमान पर फ़र्ज़ फ़रमाया है इससे मुराद इल्मे दीन का सिर्फ़ वह हिस्सा है जिसके बग़ैर आदमी न फ़राईज़ अदा कर सकता है न हराम चीज़ों से बच सकता है, जो ईमान व इस्लाम के लिये ज़रूरी है, बाक़ी उलूम की तफ़सीलात, क़ुरआन व हदीस के तमाम मआरिफ़ व मसाईल, फिर उनसे निकाले हुए अहकाम व मसाईल की पूरी तफ़सील, यह न हर मुसलमान की ताक़त में है न हर एक पर फ़र्ज़े ऐन है, अलबत्ता पूरी इस्लामी दुनिया के ज़िम्मे फ़र्ज़े किफ़ाया है। हर शहर में एक आ़लिम इन तमाम उलूम व मसाईल का माहिर मौजूद हो तो बाक़ी मुसलमान इस फ़र्ज़ से बरी और भार मुक्त हो जाते हैं, और जिस शहर या क़सबे में एक भी आ़लिम न हो तो शहर वालों पर फ़र्ज़ है कि अपने में से किसी को आ़लिम बनायें, या बाहर से किसी आ़लिम को बुलाकर अपने शहर में रखें, ताकि ज़रूरत पेश आने पर बारीक मसाईल को उस आ़लिम से फ़तवा लेकर समझ सकें और अ़मल कर सकें। इसलिये इल्मे दीन में फ़र्ज़े ऐन और फ़र्ज़े किफ़ाया की तफ़सील यह है।

फ़र्ज़-ए-ऐन

हर मुसलमान मर्द व औ़रत पर फ़र्ज़ है कि इस्लाम के सही अ़क़ीदों का इल्म हासिल करे और पाकी, नापाकी के अहकाम सीखे। नमाज़ रोज़ा और तमाम इबादतें जो शरीअ़त ने फ़र्ज़ व वाजिब क़रार दी हैं उनका इल्म हासिल करे, जिन चीज़ों को हराम या मक्रूह क़रार दिया है उनका इल्म हासिल करे। जिस शख़्स के पास ज़कात के निसाब के बराबर माल हो उस पर फ़र्ज़ है कि ज़कात के मसाईल व अहकाम मालूम करे, जिसको हज पर जाने की क़ुदरत है उसके लिये फ़र्ज़े ऐन है कि हज के अहकाम व मसाईल मालूम करे, जिसको ख़रीद व बेच (यानी कारोबार) करना पड़े या तिजारत व कारीगरी या मज़दूरी व उजरत के काम करने पड़ें उस पर फ़र्ज़े ऐन है कि ख़रीद व बेच और मज़दूरी व उजरत वग़ैरह के मसाईल व अहकाम सीखे। जब निकाह करे तो निकाह के अहकाम व मसाईल और तलाक़ के अहकाम व मसाईल मालूम करे। ग़र्ज़ कि जो काम शरीअ़त ने हर इनसान के ज़िम्मे फ़र्ज़ व वाजिब किये हैं उनके अहकाम व मसाईल का इल्म हासिल करना भी हर मुसलमान मर्द व औ़रत पर फ़र्ज़ है।

तसव्वुफ़ का इल्म भी फ़र्ज़े-ऐन में दाख़िल है

ज़ाहिरी अहकाम नमाज़, रोज़े को तो सब ही जानते हैं कि फ़र्ज़े ऐन हैं, और इनका इल्म हासिल करना भी फ़र्ज़े ऐन है। हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीरे मज़हरी में इसी आयत के तहत लिखा है कि बातिनी आमाल और बातिनी मुहर्रमात (हराम की गयी चीज़ों) का इल्म जिसको आ़म बोलचाल में इल्मे तसव्वुफ़ कहा जाता है, चूँकि ये बातिनी आमाल भी हर शख़्स पर फ़र्ज़े ऐन हैं तो इनका इल्म भी सब पर फ़र्ज़े ऐन है।

आजकल जिसको इल्म-ए-तसव्वुफ़ कहा जाता है वह भी बहुत से उलूम व मआ़रिफ़ और मुकाशफ़ात व वारदात का मजमूआ़ बन गया है, इस जगह फ़र्ज़े ऐन से मुराद उसका सिर्फ़ वह हिस्सा है जिसमें बातिनी आमाल फ़र्ज़ व वाजिब की तफ़सील है। मसलन सही अ़क़ीदे जिसका

ताल्लुक़ बातिन से है, या सब्र, शुक्र, तवक्कुल, क़नाअ़त वग़ैरह एक ख़ास दर्जे में फ़र्ज़ हैं। या गुरूर व तकब्बुर, हसद व जलन, कन्जूसी व दुनिया का लालच वग़ैरह जो क़ुरआन व सुन्नत की रू से हराम हैं, उनकी हक़ीक़त और इसके हासिल करने या हराम चीज़ों से बचने के तरीक़े मालूम करना भी हर मुसलमान मर्द व औरत पर फ़र्ज़ है। इल्मे तसव्वुफ़ की असल बुनियाद इतनी ही है जो फ़र्ज़े-ऐन है।

फ़र्ज़े-ए-किफ़ाया

पूरे क़ुरआन मजीद के मायने व मसाईल को समझना, तमाम हदीसों को समझना और उनमें मोतबर और ग़ैर-मोतबर की पहचान पैदा करना, क़ुरआन व सुन्नत से जो अहकाम व मसाईल निकलते हैं उन सब का इल्म हासिल करना, इसमें सहाबा व ताबिईन और मुज्तहिद इमामों के अक़्वाल व आसार से वाक़िफ़ होना, यह इतना बड़ा काम है कि पूरी उम्र और सारा वक़्त इसमें ख़र्च करके भी पूरा हासिल होना आसान नहीं। इसलिये शरीअ़त ने इस इल्म को फ़र्ज़े किफ़ाया क़रार दिया है, कि ज़रूरत के मुताबिक़ कुछ लोग ये सब उलूम हासिल कर लें तो बाक़ी मुसलमान अपनी ज़िम्मेदारी से बरी हो जायेंगे।

दीनी इल्म का कोर्स

क़ुरआने हकीम ने इस जगह दीनी इल्म की हक़ीक़त और उसका निसाब (कोर्स) भी एक ही लफ़्ज़ में बतला दिया है, वह है:

لِيَتَفَقَّهُوْا فِى الدِّيْنِ.

यह मौक़ा बज़ाहिर इसका था कि यहाँ:

يَتَعَلَّمُوْنَ الدِّيْنَ.

कहा जाता। यानी दीन का इल्म हासिल करें। मगर क़ुरआन ने इस जगह 'तअ़ल्लुम' (पढ़ने और सीखने) का लफ़्ज़ छोड़कर 'तफ़क़्क़ोह' (समझ हासिल करने) का लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि दीनी इल्म का महज़ पढ़ लेना काफ़ी नहीं, वह तो बहुत से काफ़िर यहूदी ईसाई भी पढ़ते हैं, और शैतान को सबसे ज़्यादा हासिल है, बल्कि इल्मे दीन से मुराद दीन की समझ पैदा करना है, यही लफ़्ज़ 'तफ़क़्क़ोह' का तर्जुमा है। और यह फ़िक़ा से निकला है, फ़िक़ा के मायने समझ-बूझ ही के हैं। यहाँ यह बात भी ध्यान के क़ाबिल है कि क़ुरआने करीम ने इस जगह मुजर्रद के सीग़े से 'लियफ़्क़हुद्दी-न' "यानी ताकि वे दीन को समझ लें" नहीं फ़रमाया, बल्कि 'लिय-तफ़क़्क़हू फ़िद्दीनि' फ़रमाया, जो बाबे 'तफ़अ़्उल' से है, इसके मायने में मेहनत व मशक़्क़त का मफ़्हूम शामिल है। मुराद यह है कि दीन की समझ-बूझ पैदा करने में पूरी मेहनत व मशक़्क़त उठाकर महारत हासिल करें। यह भी ज़ाहिर है कि दीन की समझ-बूझ सिर्फ़ इतनी बात से पैदा नहीं होती कि पाकी, नापाकी या नमाज़, रोज़े, ज़कात, हज के मसाईल मालूम करे, बल्कि दीन की समझ-बूझ यह है कि वह यह समझे कि उसके हर क़ौल

व फ़ेल और हरकत व सुकून का आख़िर में उससे हिसाब लिया जायेगा। उसको इस दुनिया में किस तरह रहना चाहिये, दर असल इसी फ़िक्र का नाम दीन की समझ-बूझ है। इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. ने फ़िक़ा की तारीफ़ (परिभाषा) यह की है कि इनसान उन तमाम कामों को समझ ले जिनका करना उसके लिये ज़रूरी है, और उन तमाम कामों को भी समझ ले जिनसे बचना उसके लिये ज़रूरी है। आजकल जो इल्मे फ़िक़ा आंशिक मसाईल के इल्म को कहा जाता है यह बाद की इस्तिलाह है, क़ुरआन व सुन्नत में फ़िक़ा की हक़ीक़त वही है जो इमामे आज़म रह. ने बयान फ़रमाई है, कि जिस शख़्स ने दीन की किताबें सब पढ़ डालीं मगर यह समझ-बूझ पैदा न की वह क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में आ़लिम नहीं।

इस तहक़ीक़ से मालूम हो गया कि दीनी इल्म हासिल करने का मफ़्हूम क़ुरआन की इस्तिलाह में दीन की समझ-बूझ पैदा करना है, वह जिन माध्यमों से हासिल हो, वह माध्यम और सूत्र चाहे किताबें हों या उस्ताज़ों की सोहबत, सब इस निसाब के अंग हैं।

दीनी इल्म हासिल करने के बाद आ़लिम के फ़राईज़

इस जगह क़ुरआने करीम ने इसको भी एक ही जुमले में पूरा बयान फ़रमा दिया है। वह हैः

لِيُنْذِرُوْا قَوْمَهُمْ

"यानी ताकि वे अपनी क़ौम को अल्लाह की नाफ़रमानी से डरायें।"

यहाँ भी यह बात ग़ौर करने के क़ाबिल है कि इस जुमले में आ़लिम का फ़र्ज़ क़ौम को इनज़ार बतलाया है। इनज़ार का लफ़्ज़ी तर्जुमा हम उर्दू में डराने से करते हैं, मगर यह इसका पूरा तर्जुमा नहीं। उर्दू ज़बान की तंगी की वजह से कोई एक लफ़्ज़ इसके पूरे तर्जुमे को अदा नहीं करता। हक़ीक़त यह है कि डराना कई तरह का होता है- एक डराना दुश्मन, चोर, डाकू या किसी दरिन्दे, ज़हरीले जानवर से है, एक डराना वह है जो बाप अपनी शफ़क़त से औलाद को तकलीफ़देह चीज़ों जैसे आग, ज़हरीले जानवर नुक़सान देने वाली ग़िज़ा से डराता है, जिसका मन्शा शफ़क़त व मुहब्बत होती है। उसका अन्दाज़ व तरीक़ा भी कुछ और ही होता है। इनज़ार इसी क़िस्म के डराने का नाम है। इसी लिये पैग़म्बरों और रसूलों को नज़ीर का लक़ब दिया गया है, और आ़लिम का यह इनज़ार का फ़रीज़ा दर हक़ीक़त नुबुव्वत की विरासत ही का हिस्सा है जो हदीस की दलील से आ़लिम को हासिल होती है।

मगर यहाँ क़ाबिले ग़ौर यह है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के दो लक़ब हैं- बशीर और नज़ीर। नज़ीर के मायने तो अभी आप मालूम कर चुके हैं, बशीर के मायने हैं बशारत और ख़ुशख़बरी सुनाने वाला। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का एक काम यह भी है कि नेक अ़मल करने वालों को ख़ुशख़बरी सुनायें। इस जगह भी अगरचे स्पष्ट तौर पर ज़िक्र इनज़ार (डराने) का किया गया है मगर दूसरी शरई वज़ाहतों से मालूम होता है कि आ़लिम का फ़र्ज़ यह भी है कि नेक

काम करने वालों को ख़ुशख़बरी भी सुनाये, लेकिन इस जगह सिर्फ़ इनज़ार के ज़िक्र पर बस करना इस तरफ़ इशारा है कि इनसान के ज़िम्मे दो काम हैं- एक यह कि जो अमल उसके लिये दुनिया व आख़िरत में फ़ायदेमन्द हैं उनको इख़्तियार करे, दूसरे यह कि जो अमल उसके लिये नुक़सान देने वाले हैं उनसे बचे। उलेमा व विद्वान इस पर सहमत हैं कि इन दोनों कामों में से दूसरा काम सबसे मुक़द्दम और अहम है, इसी को फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) की इस्तिलाह में जलब-ए-मन्फ़अ़त (फ़ायदे का हासिल करना) और दफ़-ए-मज़र्रत (नुक़सान से बचना और दूर रहना) के दो लफ़्ज़ों से ताबीर करके नुक़सान से बचने को फ़ायदा हासिल करने से मुक़द्दम (पहले और ज़रूरी) क़रार दिया है। इसके अ़लावा नुक़सान से बचने और उससे दूर रहने में एक हैसियत से फ़ायदा हासिल करने का मक़सद भी पूरा हो जाता है, क्योंकि जो काम इनसान के लिये मुफ़ीद और ज़रूरी हैं उनका छोड़ना बड़ा नुक़सान है, तो जो शख़्स नुक़सान देने वाले आमाल से बचने और दूर रहने का एहतिमाम करेगा वह ज़रूरी आमाल को छोड़ने से बचने का भी एहतिमाम करेगा।

यहाँ से यह भी मालूम हो गया कि आजकल जो उमूमन नसीहत व तब्लीग़ बहुत कम असरदार होती है उसकी बड़ी वजह यह है कि उसमें इनज़ार (डराने) के आदाब नहीं होते, जिसके बयान के अन्दाज़ और लब व लहजे से शफ़क़त व रहमत और ख़ैरख़्वाही टपकती हो। सामने वाले को यक़ीन हो कि इसके कलाम का मक़सद न मुझे रुस्वा करना है न बदनाम करना, न अपने दिल का गुबार निकालना, बल्कि यह जिस चीज़ को मेरे लिये मुफ़ीद और ज़रूरी समझता है वही मुहब्बत की वजह से मुझे बतला रहा है। अगर आज हमारी तब्लीग़ और शरीअ़त के ख़िलाफ़ काम करने वालों को सुधार की दावत का यह तर्ज़ हो जाये तो इसका एक नतीजा तो निश्चित लाज़िम ही है कि सामने वाले को हमारी गुफ़्तगू से ज़िद पैदा नहीं होगी, वह जवाब देने की फ़िक्र में पड़ने के बजाय अपने आमाल का जायज़ा लेने और अन्जाम सोचने की तरफ़ मुतवज्जह हो जायेगा। और अगर यह सिलसिला जारी रहा तो कभी न कभी उसको क़ुबूल भी करेगा। और दूसरा नतीजा यह लाज़िमी है कि कम से कम इससे आपसी नफ़रत व दुश्मनी और लड़ाई झगड़ा पैदा नहीं होगा, जिसमें आजकल हमारी पूरी क़ौम मुब्तला है।

आख़िर में 'लअ़ल्लहुम यह्ज़रून' फ़रमाकर इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि "आ़लिम" का काम इतना ही नहीं कि अ़ज़ाब से डरा दिया बल्कि इस पर नज़र रखना भी है कि उसकी तब्लीग़ व दावत का असर कितना और क्या हुआ। एक दफ़ा असर नहीं हुआ तो बार-बार करता रहे, ताकि उसका नतीजा 'यह्ज़रून' बरामद हो सके, यानी क़ौम का गुनाहों से बचना। (वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम)

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا قَاتِلُوا الَّذِينَ يَلُونَكُم مِّنَ الْكُفَّارِ وَلْيَجِدُوا فِيكُمْ غِلْظَةً ۚ وَاعْلَمُوا
الربع أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ﴿١٢٣﴾ وَإِذَا مَا أُنزِلَتْ سُورَةٌ فَمِنْهُم مَّن يَقُولُ أَيُّكُمْ زَادَتْهُ هَٰذِهِ إِيمَانًا ۚ فَأَمَّا
الَّذِينَ آمَنُوا فَزَادَتْهُمْ إِيمَانًا وَهُمْ يَسْتَبْشِرُونَ ﴿١٢٤﴾ وَأَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِم مَّرَضٌ فَزَادَتْهُمْ رِجْسًا إِلَىٰ
رِجْسِهِمْ وَمَاتُوا وَهُمْ كَافِرُونَ ﴿١٢٥﴾ أَوَلَا يَرَوْنَ أَنَّهُمْ يُفْتَنُونَ فِي كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً أَوْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ لَا
يَتُوبُونَ وَلَا هُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٢٦﴾ وَإِذَا مَا أُنزِلَتْ سُورَةٌ نَّظَرَ بَعْضُهُمْ إِلَىٰ بَعْضٍ هَلْ يَرَاكُم مِّنْ أَحَدٍ ثُمَّ
انصَرَفُوا ۚ صَرَفَ اللَّهُ قُلُوبَهُم بِأَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُونَ ﴿١٢٧﴾

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू क़ातिलुल्लज़ी-न यलूनकुम् मिनल्कुफ़्फ़ारि वल्यजिदू फ़ीकुम् ग़िल्ज़-तन्, वअ्लमू अन्नल्ला-ह मअ़ल्मुत्तक़ीन (123) ❖ व इज़ा मा उन्ज़िलत् सूरतुन् फ़-मिन्हुम् मंय्यक़ूलु अय्युकुम् ज़ादत्हु हाज़िही ईमानन् फ़-अम्मल्लज़ी-न आमनू फ़ज़ादत्हुम् ईमानंव्-व हुम् यस्तब्शिरून (124) व अम्मल्लज़ी-न फ़ी क़ुलूबिहिम् म-रज़ुन् फ़ज़ादत्हुम् रिज्सन् इला रिज्सिहिम् व मातू व हुम् काफ़िरून (125) अ-वला यरौ-न अन्नहुम् युफ़्तनू-न फ़ी कुल्लि आ़मिम्-मर्र-तन् औ मर्रतैनि सुम्-म ला यतूबू-न व ला हुम् यज़्ज़क्करून (126) व इज़ा मा उन्ज़िलत् सूरतुन्	ऐ ईमान वालो! लड़ते जाओ अपने नज़दीक के काफ़िरों से और चाहिए कि उन पर मालूम हो तुम्हारे अन्दर सख़्ती, और जानो कि अल्लाह साथ है डरने वालों के। (123) ❖ और जब नाज़िल होती है कोई सूरत तो बाज़े उनमें कहते हैं किसका तुम में से ज़्यादा कर दिया इस सूरत ने ईमान, सो जो लोग ईमान रखते हैं उनका ज़्यादा कर दिया उस सूरत ने ईमान और वे ख़ुश-वक़्त होते हैं। (124) और जिनके दिल में रोग है सो उनके लिये बढ़ा दी गन्दगी पर गन्दगी और वे मरने तक काफ़िर ही रहे। (125) क्या नहीं देखते कि वे आज़माये जाते हैं हर वर्ष में एक बार या दो बार फिर भी तौबा नहीं करते और न वे नसीहत पकड़ते हैं। (126) और जब नाज़िल होती है कोई सूरत तो देखने लगता है उनमें

न-ज़-र बअ्ज़ुहुम् इला बअ्ज़िन्, हल् यराकुम् मिन् अ-हदिन् सुम्मन्स-रफ़ू, स-रफ़ल्लाहु क़ुलूबहुम् बिअन्नहुम् क़ौमुल् ला यफ़्क़हून (127)	का एक दूसरे की तरफ़, कि क्या देखता है तुमको कोई मुसलमान, फिर चल देते हैं, फेर दिये है अल्लाह ने उनके दिल इस वास्ते कि वे लोग हैं कि समझ नहीं रखते। (127)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! उन काफ़िरों से लड़ो जो तुम्हारे आस-पास (रहते) हैं, और उनको तुम्हारे अन्दर सख़्ती पाना चाहिए (यानी जिहाद के वक़्त भी मज़बूत रहना चाहिये और वैसे भी जब सुलह का ज़माना न हो उसमें उनसे ढीलापन न बरतना चाहिये) और यह यक़ीन रखो कि अल्लाह की (इमदाद) मुत्तक़ी लोगों के साथ है (पस उनसे डरो मत)। और जब कोई (नई) सूरः नाज़िल की जाती है तो उन (मुनाफ़िक़ों) में से कुछ ऐसे हैं जो (ग़रीब मुसलमानों से मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर) कहते हैं कि (कहो) इस (सूरः) ने तुममें से किसके ईमान में तरक़्क़ी दी। (आगे हक़ तआ़ला इरशाद फ़रमाते हैं कि तुम जवाब चाहते हो) सो (सुनो) जो लोग ईमान वाले हैं इस (सूरः) ने उनके (तो) ईमान में तरक़्क़ी दी है और वे (उस तरक़्क़ी के पाने से) ख़ुश हो रहे हैं। (मगर चूँकि वह दिल का मामला है और तुमको नसीब नहीं इसलिये उसका समझना भी नसीब नहीं, और मज़ाक़ उड़ाते हो) और जिनके दिलों में (निफ़ाक़ की) बीमारी है उस (सूरः) ने उनमें उनकी (पहली) गन्दगी के साथ और (नई) गन्दगी बढ़ा दी, (क्योंकि पहले क़ुरआन के एक हिस्से का इनकार था अब इस नये हिस्से का इनकार और हुआ) और वे कुफ़्र ही की हालत में मर गये (यानी जो उनमें से मर चुके हैं वे काफ़िर मरे और जो इसी ज़िद और हठधर्मी पर रहेंगे वे काफ़िर मरेंगे। जवाब का हासिल यह हुआ कि क़ुरआन में ईमान को तरक़्क़ी देने की बेशक ख़ासियत है लेकिन लेने वाले में क़ाबलियत भी तो हो, और अगर पहले से स्थिर ख़बासत है तो और भी उसको स्थिरता हासिल हो जायेगी 'जैसे बारिश से बाग़ में फूल उगते हैं और बंजर ज़मीन पर घास-फूँस') और क्या उनको नहीं दिखाई देता कि ये लोग हर साल में एक बार या दो बार किसी न किसी आफ़त में फंसे रहते हैं (मगर) फिर भी (अपनी बुरी हरकतों से) बाज़ नहीं आते, और न वे कुछ समझते हैं (जिससे आईन्दा बाज़ आने की उम्मीद हो। यानी उन हादसों से उनको सीख लेनी और इबरत पकड़कर अपना सुधार कर लेना चाहिये था। यह तो उनके मज़ाक़ उड़ाने का बयान हुआ जो वे अपनी मज्लिसों में करते थे, आगे उनके नफ़रत ज़ाहिर करने का बयान है जो मज्लिसे नबवी में उनकी तरफ़ से ज़ाहिर होता था। चुनाँचे इरशाद है) और जब कोई (नई) सूरः नाज़िल की जाती है तो एक-दूसरे को देखने लगते हैं (और इशारे से बातें करते हैं) कि तुमको कोई (मुसलमान) देखता तो नहीं, (कि उठता हुआ देख ले और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जा लगाये) फिर (इशारों ही इशारों में बातें करके वहाँ से उठकर) चल देते

हैं (ये लोग हुज़ूरे पाक की मज्लिस से क्या फिरे) ख़ुदा तआला ने इनका दिल (ही ईमान से) फेर दिया है, इस वजह से कि वे बिल्कुल बे-समझ लोग हैं (कि अपने नफ़े से भागते हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

पहले गुज़री आयतों में जिहाद की रुचि दिलायी गयी थी, उपर्युक्त आयतः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا قَاتِلُوْا............ الاٰية.

में यह तफ़सील बतलाई गयी है कि काफ़िर तो सारी दुनिया में फैले हुए हैं उनसे जंग व जिहाद में क्या तरतीब होनी चाहिये। इस आयत में इरशाद है कि काफ़िरों में से जो लोग तुमसे क़रीब हों पहले उनसे जिहाद किया जाये। क़रीब होना स्थान के एतिबार से भी हो सकता है कि रहने की जगह से जो क़रीब रहने वाले काफ़िर हैं वे जिहाद में मुक़द्दम किये जायें, और रिश्ते, नसब और ताल्लुक़ात के एतिबार से भी जो क़रीब हों वे दूसरों से मुक़द्दम (आगे) किये जायें। क्योंकि इस्लामी जिहाद दर हक़ीक़त उन्हीं की ख़ैरख़्वाही के तक़ाज़े से है, और ख़ैरख़्वाही व हमदर्दी में रिश्तेदार व ताल्लुक़ात वाले मुक़द्दम (पहले और आगे) हैं, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया हैः

وَاَنْذِرْ عَشِيْرَتَكَ الْاَقْرَبِيْنَ ٥

''यानी अपने क़रीबी रिश्तेदारों को अल्लाह के अ़ज़ाब से डरायें।''

चुनाँचे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसकी तामील फ़रमाई और सबसे पहले अपने ख़ानदान के लोगों को जमा करके हक़ का कलिमा पहुँचाया। इसी तरह स्थान के एतिबार से निकटता व दूरी का एतिबार करके मदीने के आस-पास के काफ़िर बनू क़ुरैज़ा, बनू नज़ीर और ख़ैबर वालों को दूसरों पर पहले और आगे रखा गया। उसके बाद बाक़ी अ़रब वालों से जंग व जिहाद हुआ। उससे फ़ारिग़ होने के बाद सबसे आख़िर में रोम के काफ़िरों से जिहाद का हुक्म हुआ, जिसके नतीजे में ग़ज़्वा-ए-तबूक का वाक़िआ पेश आया।

وَلْيَجِدُوْا فِيْكُمْ غِلْظَةً.

ग़िल्ज़त के मायने शिद्दत व क़ुव्वत के हैं। मुराद यह है कि काफ़िरों के साथ बर्ताव में ऐसी सूरत इख़्तियार करो कि वे किसी हैसियत से तुम्हारी कमज़ोरी महसूस न करें।

فَزَادَتْهُمْ اِيْمَانًا.

इस आयत से मालूम हुआ कि क़ुरआनी आयतों की तिलावत, उनमें ग़ौर व फ़िक्र और उनके तक़ाज़े पर अ़मल करने से ईमान में तरक़्क़ी और ज़्यादती पैदा होती है। यह ज़्यादती ईमान के नूर और उसकी मिठास की होती है, जिसका असर यह होता है कि इनसान को अल्लाह व रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त आसान नज़र आने लगती है, इबादत में मज़ा आने लगता है, गुनाहों से तबई नफ़रत पैदा हो जाती है और उनसे नागवारी व परेशानी महसूस होने लगती है।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि जब दिल में ईमान आता है तो एक सफ़ेद नूरानी नुक़्ते (बिन्दू) जैसा होता है, फिर जैसे-जैसे ईमान में तरक़्क़ी होती है तो यह सफ़ेदी बढ़ती जाती है, यहाँ तक कि सारा दिल नूरानी हो जाता है। इसी तरह कुफ़्र व निफ़ाक़ शुरू में एक सियाह दाग़ की तरह दिल पर लगता है, फिर जैसे-जैसे गुनाहों और नाफ़रमानी के काम और कुफ़्र की शिद्दत बढ़ती जाती है यह नुक़्ता (दाग़) बढ़ता रहता है, यहाँ तक कि पूरा दिल सियाह (काला) हो जाता है। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसी लिये सहाबा-ए-किराम एक दूसरे को कहा करते थे कि कुछ देर मिलकर बैठो, दीन और आख़िरत की बातों का मुज़ाकरा करो, ताकि हमारा ईमान बढ़े।

يُفْتَنُوْنَ فِيْ كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً اَوْ مَرَّتَيْنِ.

इसमें मुनाफ़िक़ों को इस पर चेतावनी दी गयी है कि वे अपने निफ़ाक़ और अ़हद तोड़ने वग़ैरह जैसे गुनाहों की वजह से हर साल विभिन्न क़िस्म की मुसीबतों में कभी एक बार कभी दो बार मुब्तला होते रहते हैं। कभी उनके दोस्त यानी मक्का के काफ़िर पराजित हो गये, कभी उनके निफ़ाक़ की बातें खुल गयीं उससे परेशानी में मुब्तला रहे। यहाँ एक, दो का अ़दद ख़ास मुराद नहीं बल्कि यह बतलाना है कि इसका सिलसिला चलता रहता है, क्या इन चीज़ों को देखकर भी उन्हें इब्रत (सीख) नहीं होती।

لَقَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلٌ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ عَزِيْزٌ عَلَيْهِ مَا عَنِتُّمْ حَرِيْصٌ عَلَيْكُمْ بِالْمُؤْمِنِيْنَ رَءُوْفٌ
رَّحِيْمٌ ۝ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ ۖ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۖ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَهُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ ۝ ع ١٦ ٥

ल-क़द् जा-अकुम् रसूलुम् मिन् अन्फ़ुसिकुम् अ़ज़ीज़ुन् अ़लैहि मा अ़नित्तुम् हरीसुन् अ़लैकुम् बिल्मुअ्मिनी-न रऊफ़ुर्रहीम (128) फ़-इन् तवल्लौ फ़क़ुल् हस्बियल्लाहु ला इला-ह इल्ला हु-व, अ़लैहि तवक्कल्तु व हु-व रब्बुल् अ़र्शिल्-अ़ज़ीम (129) ✪	आया है तुम्हारे पास रसूल तुम में का, भारी है उस पर जो तुमको तकलीफ़ पहुँचे, इच्छुक है तुम्हारी भलाई पर, ईमान वालों पर बहुत ही शफ़ीक़ मेहरबान है। (128) फिर भी अगर मुँह फेरें तो कह दे काफ़ी है मुझको अल्लाह, किसी की बन्दगी नहीं उसके सिवा, उसी पर मैंने भरोसा किया और वह मालिक है अ़र्शे अ़ज़ीम का। (129) ✪

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ऐ लोगो!) तुम्हारे पास एक ऐसे पैग़म्बर तशरीफ़ लाए हैं जो तुम्हारी जिन्स (बशर) से हैं

(ताकि तुमको उनसे नफ़ा हासिल करना आसान हो) जिनको तुम्हारी नुक़सान की बात बहुत ही भारी गुज़रती है (चाहते हैं कि तुमको कोई नुक़सान न पहुँचे)। जो तुम्हारे फ़ायदे के बड़े इच्छुक रहते हैं (यह हालत तो सब के साथ है। ख़ास तौर पर) ईमान वालों के साथ (तो) बड़े ही शफ़ीक़ (और) मेहरबान हैं। (ऐसे रसूल से लाभान्वित न होना बड़ी मेहरूमी है) फिर अगर (इस पर भी आपको रसूल मानने से और आपकी पैरवी करने से) ये मुँह मोड़ें तो आप कह दीजिए (मेरा क्या नुक़सान है) मेरे लिये (तो) अल्लाह (हिफ़ाज़त करने वाला और मदद करने वाला) काफ़ी है, उसके सिवा कोई माबूद होने के लायक़ नहीं (पस माबूद होना उसके साथ विशेष है तो लाज़िमी तौर पर इल्म व क़ुदरत के सारे कमालात उसमें बेमिस्ल होंगे, फिर मुझको किसी की मुख़ालफ़त से क्या अन्देशा)। मैंने उसी पर भरोसा कर लिया और वह बड़े भारी अ़र्श का मालिक है (तो और चीज़ें तो उससे बढ़कर उसकी मिल्क में होंगी। पस उस पर भरोसा करने के बाद मुझको कोई अन्देशा नहीं, अलबत्ता तुम अपनी फ़िक्र कर लो, हक़ का इनकार करके कहाँ रहोगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ये सूरः तौबा की आख़िरी आयतें हैं जिनमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अल्लाह की पूरी मख़्लूक़ पर, ख़ुसूसन मुसलमानों पर बेहद मेहरबान और शफ़ीक़ व हमदर्द होना बयान फ़रमाया है, और आख़िरी आयत में आपको यह हिदायत फ़रमाई है कि आपकी सारी कोशिशों के बावजूद अगर फिर भी कुछ लोग ईमान न लायें तो आप सब्र करें और अल्लाह तआ़ला पर तवक्कुल (भरोसा) करें।

सूरः तौबा के आख़िर में यह मज़मून इसलिये लाना मुनासिब हुआ कि इस पूरी सूरत में काफ़िरों से बराअत, ताल्लुक़ ख़त्म करने और जंग व जिहाद का ज़िक्र था जो अल्लाह की तरफ़ दावत देने की आख़िरी शक्ल है, जबकि ज़बानी दावत व तब्लीग़ से सुधार व बेहतरी की उम्मीद न रहे। लेकिन असल काम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का यही है कि शफ़क़त व रहमत और हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही के जज़्बे से अल्लाह की मख़्लूक़ को अल्लाह की तरफ़ आने की दावत दें, और उनकी तरफ़ से मुँह मोड़ना या कोई तकलीफ़ पेश आये तो उसको अल्लाह के सुपुर्द कर दें, उस पर तवक्कुल करें, क्योंकि वह बड़े भारी अ़र्श का रब है। यहाँ अ़र्शे अ़ज़ीम का रब कहकर यह बतलाना मन्ज़ूर है कि वह आ़लम की तमाम कायनात को अपने घेरे में लिये हुए है।

आख़िरी दो आयतें हज़रत उबई बिन कअ़ब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के क़ौल के मुताबिक़ क़ुरआन की आख़िरी आयतें हैं, इनके बाद कोई आयत नाज़िल नहीं हुई और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी। यही क़ौल हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इन दो आयतों के बड़े फ़ज़ाईल हदीस में बयान हुए हैं। हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु

फ़रमाते हैं कि जो शख़्स सुबह व शाम ये आयतें सात मर्तबा पढ़ लिया करे तो अल्लाह तआ़ला उसके तमाम काम आसान फ़रमा देते हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّآ اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ اَللّٰهُمَّ وَفِّقْنِىْ لِتَكْمِيْلِهٖ كَمَا تُحِبُّ وَتَرْضٰى وَالْطُفْ بِنَا فِىْ تَيْسِيْرِ كُلِّ عَسِيْرٍ فَاِنَّ تَيْسِيْرَ كُلِّ عَسِيْرٍ عَلَيْكَ يَسِيْرٌ

ऐ हमारे रब! हमारी तरफ़ से क़ुबूल फ़रमा, बेशक तू ही है सुनने और जानने वाला। या अल्लाह! मुझे अपनी रज़ा व चाहत के साथ इसको पूरा करने की तौफ़ीक़ नसीब फ़रमा और अपनी मेहरबानी से हर तरह की मुश्किल को आसान फ़रमा, बेशक हर मुश्किल को आसान करना तेरे क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में है।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूरः तौबा की तफ़सीर पूरी हुई)

Derived from the works of Mehmut Yazir [12]

" Wema tesha'wn illa en yesha' Allah rabbu el-'alemyn "

Page 50

* सूरः यूनुस *

यह सूरत मक्की है। इसमें 109 आयतें और 11 रुकूअ़ हैं।

सूरः यूनुस

آياتها ١٠٩ (١٠) سُوْرَةُ يُوْنُسَ مَكِّيَّةٌ (٥١) ركوعاتها ١١

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝

الٓرٰ تِلْكَ اٰيٰتُ الْكِتٰبِ الْحَكِيْمِ ۝ اَكَانَ لِلنَّاسِ عَجَبًا اَنْ اَوْحَيْنَآ اِلٰى رَجُلٍ مِّنْهُمْ اَنْ اَنْذِرِ النَّاسَ
وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَنَّ لَهُمْ قَدَمَ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ ؕ قَالَ الْكٰفِرُوْنَ اِنَّ هٰذَا لَسٰحِرٌ مُّبِيْنٌ ۝
اِنَّ رَبَّكُمُ اللّٰهُ الَّذِيْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ فِيْ سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ يُدَبِّرُ الْاَمْرَ ؕ مَا
مِنْ شَفِيْعٍ اِلَّا مِنْۢ بَعْدِ اِذْنِهٖ ؕ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ ؕ اَفَلَا تَذَكَّرُوْنَ ۝ اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا ؕ
وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا ؕ اِنَّهٗ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيْدُهٗ لِيَجْزِيَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ بِالْقِسْطِ ؕ وَالَّذِيْنَ
كَفَرُوْا لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيْمٍ وَّعَذَابٌ اَلِيْمٌۢ بِمَا كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ ۝

وقف النبي صلى الله عليه وسلم

सूरः यूनुस मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 109 आयतें और 11 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-रा। तिल्-क आयातुल् किताबिल्-हकीम (1) अका-न लिन्नासि अ़-जबन् अन् औहैना इला रजुलिम्-मिन्हुम् अन् अन्ज़िरिन्ना-स व बश्शिरिल्लज़ी-न आमनू अन्-न लहुम् क़-द-म सिद्किन् अ़िन्-द रब्बिहिम्, क़ालल्-काफ़िरू-न इन्-न हाज़ा लसाहिरुम्-मुबीन (2) इन्-न रब्बकुमुल्लाहुल्लज़ी ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ फी सित्तति अय्यामिन्

ये आयतें हैं पक्की किताब की। (1) क्या लोगों को ताज्जुब हुआ कि वही भेजी हमने एक मर्द पर उनमें से, यह कि डर सुना दे लोगों को और ख़ुशख़बरी सुना दे ईमान लाने वालों को, कि उनके लिये पाया सच्चा है अपने रब के यहाँ, कहने लगे मुन्किर- बेशक यह तो खुला जादूगर है। (2) तहक़ीक़ कि तुम्हारा रब अल्लाह है जिसने बनाये आसमान और ज़मीन छह दिन में, फिर क़ायम हुआ अ़र्श पर तदबीर करता है काम की, कोई सिफ़ारिश नहीं कर सकता मगर उसकी इजाज़त के

सुम्मस्तवा अ़लल्-अ़र्शि युदब्बिरुल्-अम्-र, मा मिन् शफ़ीअ़िन् इल्ला मिम्-बअ़्दि इज़्निही, ज़ालिकुमुल्लाहु रब्बुकुम् फ़अ़्बुदूहु, अ-फ़ला तज़क्करून (3) इलैहि मर्जिअ़ुकुम् जमीअ़न्, वअ़्दल्लाहि हक़्क़न्, इन्नहू यब्दउल्-ख़ल्-क़ सुम्-म युअ़ीदुहू लियज्ज़ि यल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति बिल्क़िस्ति, वल्लज़ी-न क-फ़रू लहुम् शराबुम्-मिन् हमीमिंव्-व अ़ज़ाबुन् अलीमुम्-बिमा कानू यक्फ़ुरून (4)	बाद, वह अल्लाह है रब तुम्हारा, सो उसकी बन्दगी करो क्या तुम ध्यान नहीं करते? (3) उसी की तरफ़ लौटकर जाना है तुम सब को, वायदा है अल्लाह का सच्चा। वही पैदा करता है पहली बार फिर दोबारा करेगा उसको ताकि बदला दे उनको जो ईमान लाये थे और किये थे काम नेक इन्साफ़ के साथ, और जो काफ़िर हुए उनको पीना है खोलता पानी और अ़ज़ाब है दर्दनाक इसलिए कि कुफ़्र करते थे। (4)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(अलिफ़् लाम रा का मतलब तो अल्लाह को मालूम है) ये (जो आगे आती हैं) हिक्मत से भरी किताब (यानी क़ुरआन) की आयतें हैं (जो हक़ होने की वजह से जानने और मानने के क़ाबिल हैं, और चूँकि जिन पर यह उतरा है उनकी नुबुव्वत का काफ़िर इनकार करते थे इसलिये जवाब में फ़रमाते हैं कि) क्या उन (मक्का के) लोगों को इस बात से ताज्जुब हुआ कि हमने उनमें से एक शख़्स के पास (जो कि उनकी तरह बशर है) वही भेज दी (जिसका ख़ुलासा यह है) कि (आ़म तौर पर ख़ुदा तआ़ला के अहकाम के ख़िलाफ़ करने पर) सब आदमियों को डराईये, और जो ईमान ले आएँ उनको यह ख़ुशख़बरी सुनाईये कि उनके रब के पास (पहुँचकर) उनको पूरा मर्तबा मिलेगा। (यानी अगर ऐसा मज़मून किसी बशर पर वही के ज़रिये से नाज़िल हो जाये तो कोई ताज्जुब का कारण नहीं, मगर) काफ़िर (इस क़द्र अचंभित हुए कि आपके बारे में) कहने लगे कि (नऊ़ज़ु बिल्लाह) यह शख़्स तो बिला शुब्हा खुला जादूगर है (नबी नहीं है, क्योंकि नुबुव्वत बशर के लिये नहीं हो सकती)। बेशक तुम्हारा (असली) रब अल्लाह ही है जिसने आसमानों को और ज़मीन को छह दिन (की मात्रा) में पैदा कर दिया (पस वह आला दर्जे का क़ादिर है) फिर अ़र्श (यानी गोया शाही तख़्त) पर (उस तरह) क़ायम (और जलवा-फ़रमा) हुआ (जो उसकी शान के लायक़ है, ताकि अ़र्श से ज़मीन व आसमान में अहकाम जारी फ़रमाये, जैसा कि आगे इरशाद है कि) वह हर काम की (मुनासिब) तदबीर करता है (पस हकीम भी है,

उसके सामने) कोई सिफ़ारिश करने वाला (सिफ़ारिश) नहीं (कर सकता) बिना उसकी इजाज़त के, (तो अज़ीम भी हुआ, पस) ऐसा अल्लाह तुम्हारा (वास्तविक) रब है, सो तुम उसकी इबादत करो (और शिर्क मत करो), क्या तुम (इन दलीलों के सुनने के बाद) फिर भी नहीं समझते?

तुम सब को उसी के (यानी अल्लाह ही के) पास जाना है, अल्लाह ने (इसका) सच्चा वायदा कर रखा है। बेशक वही पहली बार भी पैदा करता है, फिर (क़ियामत में) वही दोबारा भी पैदा करेगा, ताकि ऐसे लोगों को जो कि ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये, इन्साफ़ के साथ (पूरा-पूरा) बदला दे (और उसमें ज़रा कमी न करे, बल्कि बहुत कुछ ज़्यादा दे दे) और जिन लोगों ने कुफ़्र किया उनके वास्ते (आख़िरत में) पीने को खौलता हुआ पानी मिलेगा और दर्दनाक अ़ज़ाब होगा, उनके कुफ़्र की वजह से।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः यूनुस मक्की सूरतों में से है। कुछ हज़रात ने इसकी सिर्फ़ तीन आयतों को मदनी कहा है जो मदीने की हिजरत के बाद नाज़िल हुई हैं।

इस सूरत में भी क़ुरआन और इस्लाम के बुनियादी मक़ासिद तौहीद, रिसालत, आख़िरत वग़ैरह को दुनियावी कायनात और इसमें होने वाले अनुभवों, तब्दीलियों और देखी जाने वाली चीज़ों से दलील लेकर ज़ेहन में बैठाया गया है। इसके साथ कुछ नसीहत व सबक़ लेने वाले तारीख़ी वाक़िआ़त और क़िस्सों के ज़रिये उन लोगों को डराया गया है जो अल्लाह तआ़ला की इन खुली निशानियों पर नज़र नहीं करते, और इसके अन्तर्गत शिर्क का बातिल होना और उससे संबन्धित कुछ शुब्हात का जवाब दिया गया है। यह खुलासा है इस सूरत के मज़ामीन का।

सूरत के इन मज़ामीन पर ग़ौर करने से यह भी आसानी से समझ में आ सकता है कि पिछली सूरत यानी सूरः तौबा और इस सूरत में आपस में क्या ताल्लुक़ और जोड़ है। सूरः तौबा में इन्हीं मक़ासिद के लिये इनकार करने वालों और काफ़िरों के साथ जिहाद और कुफ़्र व शिर्क की ताक़त को माद्दी असबाब के ज़रिये तोड़ने का बयान था, और यह सूरत चूँकि जिहाद के अहकाम के नाज़िल होने से पहले मक्का में नाज़िल हुई इसलिये इसमें उक्त मक़ासिद को मक्की दौर के क़ानून के मुताबिक़ सिर्फ़ दलीलों व तथ्यों के ज़रिये साबित किया गया है।

अलिफ़् लाम रा। ये "हुरूफ़-ए-मुक़त्तआ़" कहलाते हैं जो क़ुरआन मजीद की बहुत सी सूरतों के शुरू में आये हैं। 'अलिफ़् लाम मीम', 'हा-मीम', ऐन सीन क़ॉफ़' वग़ैरह। इनके मायने की तहक़ीक़ में मुफ़स्सिरीन की बहसें बहुत लम्बी हैं, सहाबा व ताबिईन और पहले उलेमा व बुज़ुर्गों की बड़ी जमाअ़त की तहक़ीक़ इस क़िस्म के तमाम 'हुरूफ़े मुक़त्तआ़' के बारे में यह है कि ये ख़ास भेद और इशारे हैं, इनके मायने ग़ालिबन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतलाये गये हैं, मगर आपने आ़म उम्मत को सिर्फ़ उन उलूम व मआ़रिफ़ से आगाह फ़रमाया जिनको उनके ज़ेहन बरदाश्त कर सकें, और जिनके मालूम न होने से उम्मत के कामों में कोई हर्ज उत्पन्न होता है। हुरूफ़े मुक़त्तआ़ के भेद ऐसे नहीं जिन पर उम्मत का कोई काम

रुका और टिका हो, या इनके न जानने से उनका कोई हर्ज हो, इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इनके मायनों को उम्मत के लिये ग़ैर-ज़रूरी समझकर बयान नहीं फ़रमाया। इसलिये हमें भी इसकी तफ़्तीश में न पड़ना चाहिये, क्योंकि यह बात यक़ीनी है कि अगर इनके मायने जानने में हमारी मस्लेहत (कोई बेहतरी) होती तो रहमते आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उसके बयान करने में कोताही न फ़रमाते।

تِلْكَ اٰيٰتُ الْكِتٰبِ الْحَكِيْمِ○

में लफ़्ज़ 'तिल्-क' से इशारा इस सूरत की आयतों की तरफ़ है जिनका ज़िक्र आगे आता है, और किताब से मुराद क़ुरआन है, इसकी सिफ़त इस जगह "हकीम" के लफ़्ज़ से बयान फ़रमाई है जिसके मायने इस जगह 'हिक्मत वाली किताब' के हैं।

दूसरी आयत में मुश्रिकों के एक शुब्हे और एतिराज़ का जवाब है। शुब्हे का हासिल यह है कि उन लोगों ने अपनी जहालत की वजह से यह क़रार दे रखा था कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से जो रसूल या पैग़म्बर आये वह बशर यानी इनसान नहीं होना चाहिये, बल्कि कोई फ़रिश्ता होना चाहिये। क़ुरआने करीम ने उनके इस बेहूदा ख़्याल का जवाब कई जगह मुख़्तलिफ़ उनवानात से दिया है। एक आयत में इरशाद फ़रमायाः

قُلْ لَّوْ كَانَ فِى الْاَرْضِ مَلٰٓئِكَةٌ يَّمْشُوْنَ مُطْمَئِنِّيْنَ لَنَزَّلْنَا عَلَيْهِمْ مِّنَ السَّمَآءِ مَلَكًا رَّسُوْلًا○

यानी अगर ज़मीन पर बसने वाले फ़रिश्ते होते तो हम उनके लिये रसूल भी किसी फ़रिश्ते ही को बनाते। जिसका हासिल यह है कि रिसालत का मक़सद बग़ैर इसके पूरा नहीं हो सकता कि जिन लोगों की तरफ़ कोई रसूल भेजा जाये उन लोगों में और उस रसूल में आपसी मुनासबत हो। फ़रिश्तों की मुनासबत फ़रिश्तों से और इनसान की इनसान से होती है, जब इनसानों के लिये रसूल भेजना मक़सद है तो किसी बशर ही को रसूल बनाना चाहिये।

इस आयत में एक दूसरे अन्दाज़ से इसी मज़मून को इस तरह बयान फ़रमाया है कि उन लोगों का इस बात पर ताज्जुब करना कि बशर को क्यों रसूल बनाया गया और उसको नाफ़रमान इनसानों को अल्लाह के अ़ज़ाब से डराने और फ़रमाँबरदारों को उसके सवाब की ख़ुशख़बरी सुनाने का काम क्यों सुपुर्द किया गया, यह ताज्जुब ख़ुद ताज्जुब के क़ाबिल है, क्योंकि बशर जिन्स की तरफ़ बशर को रसूल बनाकर भेजना अ़क्ल के तक़ाज़े के ऐन मुताबिक़ है।

इस आयत में ईमान वालों को ख़ुशख़बरी इन अलफ़ाज़ में दी गयीः

اَنَّ لَهُمْ قَدَمَ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ.

इस लफ़्ज़ 'क़दम' के असली मायने तो वही हैं जो उर्दू में समझे जाते हैं यानी पाँव, चूँकि इनसान की कोशिश व अ़मल और उसकी तरक़्क़ी का सबब 'क़दम' ही होता है, इसलिये दूसरे मायनों में बुलन्द मर्तबे को 'क़दम' कह दिया जाता है। और लफ़्ज़ 'क़दम' की निस्बत 'सिद्क़' की तरफ़ करके यह बतला दिया कि यह बुलन्द-मर्तबा जो उनको मिलने वाला है वह हक़ और यक़ीनी भी है और क़ायम व बाक़ी रहने वाला भी। दुनिया के पदों और ओ़हदों की तरह नहीं

कि किसी अ़मल के नतीजे में अव्वल तो उनका हासिल होना ही यक़ीनी नहीं होता, और हासिल भी हो जायें तो उनका बाक़ी रहना यक़ीनी नहीं हो सकता, बल्कि उनका फ़ानी और ख़त्म हो जाने वाला होना यक़ीनी है। कभी तो ज़िन्दगी ही में ख़त्म हो जाता है और मौत के वक़्त तो दुनिया के हर मर्तबे व ओहदे और दौलत व नेमत से इनसान ख़ाली हाथ हो जाता है। ग़र्ज़ कि लफ़्ज़ सिद्क़ के मफ़्हूम में उसका यक़ीनी होना भी शामिल है और कामिल व मुकम्मल कभी ख़त्म न होने वाला होना भी। इसलिये जुमले के मायने यह हुए कि ईमान वालों को यह ख़ुशख़बरी सुना दीजिए कि उनके लिये उनके रब के पास बड़ा दर्जा है जो यक़ीनन मिलेगा और कभी न ख़त्म होने वाली दौलत होगी।

कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि इस जगह लफ़्ज़ 'सिद्क़' लाने में इसकी तरफ़ भी इशारा है कि जन्नत के ये बुलन्द दर्जे सिर्फ़ सिद्क़ व सच्चाई और इख़्लास ही के ज़रिये हासिल हो सकते हैं, ख़ाली ज़बानी जमा-ख़र्च और सिर्फ़ ज़बान से ईमान का कलिमा पढ़ लेना काफ़ी नहीं, जब तक दिल और ज़बान दोनों से सच्चाई के साथ ईमान इख़्तियार न कर लिया जाये, जिसका लाज़िमी नतीजा नेक आमाल की पाबन्दी और बुरे आमाल से परहेज़ है।

तीसरी आयत में तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) को इस नाक़ाबिले इनकार हक़ीक़त के ज़रिये साबित किया गया है कि आसमान और ज़मीन को पैदा करने में और फिर पूरे आ़लम के कामों की तदबीर करने और चलाने में जब अल्लाह तआ़ला का कोई शरीक और साझी नहीं तो फिर इबादत व नेकी में कोई दूसरा कैसे शरीक हो सकता है, बल्कि किसी दूसरे को उसमें शरीक करना बड़ी बेइन्साफ़ी और भारी ज़ुल्म है।

इस आयत में यह इरशाद फ़रमाया है कि अल्लाह तआ़ला ने आसमानों और ज़मीन को छह दिन में पैदा फ़रमाया है, लेकिन हमारे उर्फ़ (बोल-चाल) में दिन उस वक़्त को कहा जाता है जो सूरज के निकलने से छुपने तक होता है, और यह ज़ाहिर है कि आसमान व ज़मीन और सितारों के पैदा होने से पहले सूरज ही का वजूद नहीं तो उसके निकलने और छुपने का हिसाब कैसे हो, इसलिये मुराद यहाँ वक़्त की वह मात्रा है जो सूरज के निकलने और ग़ुरूब के बीच इस जहान में होने वाली थी।

छह दिन के थोड़े से वक़्त में इतने बड़े जहान को जो आसमानों व ज़मीन, सितारों व सय्यारों और आ़लम की तमाम कायनात पर मुश्तमिल है, बनाकर तैयार कर देना उसी पाक ज़ात का मक़ाम है जो बेपनाह क़ुदरत का मालिक है, उसके बनाने और पैदा करने के लिये न पहले से कच्चे मैटेरियल का मौजूद होना ज़रूरी है और न बनाने के लिये किसी स्टॉफ़ और कार्यकर्ताओं की ज़रूरत है, बल्कि उसकी कामिल क़ुदरत का यह मक़ाम है कि जब वह किसी चीज़ को पैदा फ़रमाना चाहे तो बग़ैर किसी सामान और किसी की इमदाद के एक आन में पैदा फ़रमा दे। ये छह दिन की मोहलत भी ख़ास हिक्मत व मस्लेहत की बिना पर इख़्तियार की गयी है वरना उसकी क़ुदरत में यह भी था कि तमाम आसमान व ज़मीन और उसकी कायनात को एक आन (क्षण) में पैदा फ़रमा देता।

इसके बाद फ़रमाया:

ثُمَّ اسْتَوٰی عَلَی الْعَرْشِ.

यानी फिर क़ायम हुआ अ़र्श पर। इतनी बात क़ुरआन व हदीस से साबित है कि रहमान का अ़र्श कोई ऐसी मख़्लूक़ है जो तमाम आसमानों, ज़मीनों और तमाम आ़लम की तमाम कायनात को अपने घेरे में लिये हुए है, सारा जहान उसके अन्दर समाया हुआ है। इससे ज़ायद इसकी हक़ीक़त का मालूम करना इनसान के बस की बात नहीं। जो इनसान अपनी साईन्स की इन्तिहाई तरक़्क़ी के ज़माने में भी सिर्फ़ नीचे के सय्यारों (उपग्रहों) तक पहुँचने की तैयारी में है और वह भी अभी नसीब नहीं, और इसका यह इक़रार है कि ऊपर के सय्यारे हमसे इतने दूर हैं कि वहाँ तक पहुँचने वाले उपकरणों के ज़रिये भी उनकी मालूमात अनुमान और अन्दाज़े से ज़्यादा कोई हक़ीक़त नहीं रखती, और बहुत से सितारे ऐसे भी हैं जिनकी किरनें अभी तक ज़मीन पर नहीं पहुँचीं, हालाँकि प्रकाशीय किरनों की हरकत एक मिनट में लाखों मील बताई जाती है। जब सय्यारों (उपग्रहों) और सितारों तक इनसान की पहुँच का यह हाल है तो आसमान जो इन सब सितारों और सय्यारों से ऊपर और सब पर हावी और इनको घेरने वाला रहमान का अ़र्श है उसकी हक़ीक़त तक इनसान की पहुँच कैसे मुम्किन है।

उक्त आयत से इतना मालूम हुआ कि हक़ तआ़ला ने छह दिन में आसमान व ज़मीन और तमाम कायनात बनाई और उसके बाद अ़र्श पर क़ियाम फ़रमाया।

यह यक़ीनी और ज़ाहिर है कि हक़ तआ़ला जिस्म, जिस्मानियत और उसकी तमाम सिफ़ात व ख़ुसूसियात से ऊपर व बरतर है, न उसका वजूद किसी ख़ास दिशा और जेहत से ताल्लुक़ रखता है न उसका किसी मकान में क़ियाम (ठहरना) इस तरह का है जिस तरह दुनिया की चीज़ों का क़ियाम अपनी-अपनी जगह में होता है। फिर अ़र्श पर क़ियाम फ़रमाना किस तरह और किस अन्दाज़ के साथ है यह उन **मुतशाबिहात** में से है जिनको इनसान की अ़क़्ल व समझ नहीं पा सकती, इसी लिये क़ुरआने हकीम का इरशाद उनके बारे में यह है कि:

وَمَا يَعْلَمُ تَاْوِيْلَهٗٓ اِلَّا اللّٰهُ، وَالرّٰسِخُوْنَ فِی الْعِلْمِ يَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ.

यानी उनको सिवाय ख़ुदा तआ़ला के कोई नहीं जानता, और मज़बूत और सही इल्म वाले उस पर ईमान लाने का इक़रार करते हैं मगर उसकी हक़ीक़त जानने की फ़िक्र में नहीं पड़ते, इसलिये इस क़िस्म के तमाम मामलात में जिनमें हक़ तआ़ला की निस्बत किसी मकान या दिशा की तरफ़ की गयी है, या जिनमें हक़ तआ़ला के लिये हाथ, पैर, पिंडली और चेहरे वग़ैरह अंगों के अलफ़ाज़ क़ुरआन में आये हैं, उलेमा-ए-उम्मत की अक्सरियत का अ़क़ीदा यह है कि इस बात पर ईमान लाया जाये कि ये कलिमात अपनी जगह पर हक़ हैं और इनसे जो मुराद हक़ तआ़ला की है वह सही है, और उसकी कैफ़ियत व हक़ीक़त के जानने की फ़िक्र को अपनी अ़क़्ल से ऊपर की चीज़ होने की बिना पर छोड़ दिया जाये।

न हर जाय मर्कब तवाँ ताख़्तन कि जाहा सिपर बायद अन्दाख़्तन

तर्जुमाः हर जगह अ़क्ल के घोड़े नहीं दौड़ाने चाहियें। कुछ जगह ऐसी भी होती हैं जहाँ हथियार डाल देना ही अ़क्लमन्दी है। मुहम्मद इमरान कासमी बिज्ञानवी

और जिन बाद के उलेमा ने इन चीज़ों के कोई मायने बयान फ़रमाये हैं उनके नज़दीक भी वो सिर्फ़ एक सम्भावित के दर्जे में हैं कि शायद यह मायने हों, उस मायने को वे यक़ीनी नहीं फ़रमाते, और ख़ाली संभावना और गुमान ज़ाहिर है कि किसी हक़ीक़त को स्पष्ट नहीं कर सकते, इसलिये साफ़ और सीधा मस्लक पहले बुज़ुर्गों और सहाबा व ताबिईन ही का है जिन्होंने इन चीज़ों की हक़ीक़त को अल्लाह के इल्म के सुपुर्द करने पर क़नाअ़त फ़रमाई। इसके बाद फ़रमायाः

يُدَبِّرُ الْاَمْرَ.

यानी अ़र्श पर क़ायम होकर वह तमाम जहानों का इन्तिज़ाम ख़ुद अपनी क़ुदरत से अन्जाम देता है।

مَامِنْ شَفِيْعٍ اِلَّا مِنْ م بَعْدِ اِذْنِهٖ.

यानी किसी नबी व रसूल को भी उसकी बारगाह में सिफ़ारिश करने की अपने आप कोई मजाल नहीं, जब तक हक़ तआ़ला ही उनको सिफ़ारिश करने की इजाज़त अ़ता न फ़रमायें वे भी किसी की सिफ़ारिश नहीं कर सकते।

चौथी आयत में आख़िरत के अ़क़ीदे का बयान हैः

اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا.

यानी उसी की तरफ़ लौटना है तुम सब को।

وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا.

यह वायदा है अल्लाह का हक़ और सही।

اِنَّهٗ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيْدُهٗ.

यानी वह पहली बार में पैदा करता है तमाम मख़्लूक़ को और वही उसको क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा फ़रमायेगा। इस जुमले में बतला दिया कि इस पर कोई ताज्जुब करने की बात नहीं कि यह सारी कायनात फ़ना हो जाने के बाद फिर कैसे ज़िन्दा होगी, क्योंकि जिस पवित्र ज़ात के क़ब्ज़े में यह है कि पहली बार में किसी चीज़ को बग़ैर किसी माद्दे (मैटेरियल) के और बग़ैर किसी पहले की शक्ल व सूरत के पैदा कर दे उसके लिये क्या मुश्किल है कि पैदा शुदा मख़्लूक़ को फ़ना करने के बाद फिर दोबारा पैदा कर दे।

هُوَالَّذِیْ جَعَلَ الشَّمْسَ ضِيَآءً وَّالْقَمَرَ نُوْرًا وَّقَدَّرَهٗ مَنَازِلَ لِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَ الْحِسَابَ ۭ مَا خَلَقَ اللّٰهُ ذٰلِكَ اِلَّا بِالْحَقِّ ۚ يُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝ اِنَّ فِی اخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ فِی السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَّقُوْنَ ۝

हुवल्लज़ी ज-अलश्शम्-स ज़ियाअंव्-वल्क-म-र नूरंव्-व क़द्-द-रहू मनाज़ि-ल लितअ्लमू अ़-ददस्सिनी-न वल्हिसा-ब, मा ख़-लक़ल्लाहु ज़ालि-क इल्ला बिल्हक़्क़ि युफ़स्सिलुल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यअ्लमून (5) इन्-न फ़िख़्तिलाफ़िल्-लैलि वन्नहारि व मा ख़-लक़ल्लाहु फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि लआयातिल् लिक़ौमिंय्यत्तक़ून (6)	वही है जिसने बनाया सूरज को चमक और चाँद को चाँदना, और मुक़र्रर कीं उसके लिये मन्ज़िलें ताकि पहचानो गिनती बरसों की और हिसाब, यूँ ही नहीं बनाया अल्लाह ने ये सब मगर तदबीर से, ज़ाहिर करता है निशानियाँ उन लोगों के लिये जिनको समझ है। (5) अलबत्ता बदलने में रात और दिन के और जो कुछ पैदा किया है अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन में, निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो डरते हैं। (6)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने सूरज को चमकता हुआ बनाया और चाँद को (भी) नूरानी बनाया, और उस (की चाल) के लिये मन्ज़िलें मुक़र्रर कीं (कि हर दिन एक मन्ज़िल का सफ़र करता है) ताकि (उन मन्ज़िलों के ज़रिये से) तुम बरसों की गिनती और हिसाब मालूम कर लिया करो। अल्लाह तआ़ला ने ये चीज़ें बेफ़ायदा पैदा नहीं कीं। वह ये दलीलें उन लोगों को साफ़-साफ़ बतला रहे हैं जो समझ रखते हैं। बेशक रात और दिन के एक के बाद दूसरे के आने में और अल्लाह ने जो कुछ आसमानों और ज़मीन में पैदा किया है इन सब में उन लोगों के वास्ते (अल्लाह के एक होने की) दलीलें हैं जो (ख़ुदा का) डर मानते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में दुनिया की कायनात की बहुत सी निशानियाँ बयान हुई हैं जो अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत और हिक्मते बालिग़ा पर गवाह और इसकी दलीलें हैं कि अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त इस पर पूरी तरह क़ादिर है कि इस आ़लम को फ़ना करने और ज़र्रा-ज़र्रा कर देने के बाद फिर उन ज़र्रों को जमा कर दे और फिर नये सिरे से उन सब को ज़िन्दा कर दे और हिसाब व किताब के बाद जज़ा व सज़ा का क़ानून नाफ़िज़ कर दे, और यह कि यही अ़क़्ल व हिक्मत का तक़ाज़ा है। इस तरह ये आयतें उस संक्षिप्तता की तफ़सील हैं जो पीछे गुज़री आयत नम्बर तीन में आसमान व ज़मीन की छह दिन में पैदाईश और फिर अल्लाह तआ़ला के अ़र्श पर क़ायम होने के बाद 'युदब्बिरुल् अम्-र' के अलफ़ाज़ में बयान की थी, कि उसने आ़लम को

सिर्फ़ पैदा करके नहीं छोड़ दिया बल्कि हर वक़्त हर आन में हर चीज़ का निज़ाम व इन्तिज़ाम भी उसी के हाथ में है।

उसी निज़ाम व इन्तिज़ाम (व्यवस्था और प्रबन्धन) का एक हिस्सा यह है:

هُوَالَّذِىْ جَعَلَ الشَّمْسَ ضِيَآءً وَّالْقَمَرَنُوْرًا.

'ज़िया' और 'नूर' दोनों के मायने चमक और रोशनी के हैं, इसी लिये लुग़त के अनेक इमामों ने इन दोनों लफ़्ज़ों को मायने के एतिबार से एक जैसा कहा है। अ़ल्लामा ज़मख़्शरी और तय्यिबी वग़ैरह ने फ़रमाया कि अगरचे रोशनी के मायने इन दोनों लफ़्ज़ों में संयुक्त हैं मगर लफ़्ज़ नूर आ़म है, हर ताक़तवर व कमज़ोर, हल्की और तेज़ रोशनी को नूर कहा जाता है, और ज़ू व ज़िया ताक़तवर और तेज़ रोशनी को कहते हैं। इनसान को दोनों क़िस्म की रोशनियों की ज़रूरत पड़ती है। आ़म कारोबार के लिये दिन की तेज़ रोशनी दरकार है और मामूली कामों के लिये रात की हल्की रोशनी महबूब है। अगर दिन में भी सिर्फ़ चाँद की फीकी रोशनी रहे तो कारोबार में ख़लल आये, और अगर रात को भी सूरज चमकता रहे तो नींद और रात के मुनासिब कामों में ख़लल आये, इसलिये क़ुदरत ने दोनों तरह की रोशनी का इन्तिज़ाम इस तरह फ़रमाया कि सूरज की रोशनी को ज़ू व ज़िया का दर्जा दिया और कारोबार के वक़्त उसको ज़ाहिर फ़रमाया, और चाँद की रोशनी को हल्की और फीकी रोशनी बनाया और रात को उसके ज़ाहिर होने का वक़्त बनाया।

क़ुरआने करीम ने सूरज व चाँद की रोशनियों में फ़र्क़ व भेद को अनेक जगह विभिन्न उनवानों से बयान फ़रमाया है। सूरः नूह में है:

وَجَعَلَ الْقَمَرَ فِيْهِنَّ نُوْرًا وَّجَعَلَ الشَّمْسَ سِرَاجًا ٥

सूरः फ़ुरक़ान में फ़रमायाः

وَجَعَلَ فِيْهَا سِرَاجًا وَّقَمَرًا مُّنِيْرًا ٥

सिराज के मायने चिराग़ के हैं और चूँकि चिराग़ का नूर ज़ाती होता है कि किसी दूसरी चीज़ से हासिल किया हुआ नहीं होता इसलिये कुछ हज़रात ने यह कहा कि 'ज़िया' किसी चीज़ की ज़ाती रोशनी को कहते हैं और 'नूर' उसको जो दूसरे से हासिल की हुई हो। मगर यह बज़ाहिर यूनानी वैज्ञानिकों से प्रभावित होकर कहा गया है वरना लुग़त में इसकी कोई असल नहीं, और क़ुरआने करीम ने भी इसका कोई निश्चित फ़ैसला नहीं किया।

ज़ज्जाज ने लफ़्ज़ 'ज़िया' को 'ज़ू' की जमा (बहुवचन) क़रार दिया है। इसके मुताबिक़ शायद इस तरफ़ इशारा हो कि रोशनी के सात मशहूर रंग और क़िस्में जो दुनिया में पाई जाती हैं सूरज उन तमाम क़िस्मों का जामे है, जो बारिश के बाद इन्द्रधनुष में ज़ाहिर होते हैं। (मनार)

सूरज व चाँद के निज़ाम में क़ुदरत की निशानियों का एक दूसरा मक़सद यह है:

وَقَدَّرَهٗ مَنَازِلَ لِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ.

'क़द्द-र' लफ़्ज़ तक़दीर से बना है। तक़दीर के मायने किसी चीज़ को समय, मकान या

सिफ़ात के एतिबार से एक विशेष मात्रा और पैमाने पर रखने के हैं। रात और दिन के वक़्तों को एक ख़ास पैमाने पर रखने के लिये क़ुरआने करीम ने फ़रमायाः

وَاللّٰهُ يُقَدِّرُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ.

स्थानिक फ़ासले और सफ़री दूरी को एक ख़ास पैमाने पर रखने के लिये दूसरी जगह मुल्के शाम और सबा के बीच की बस्तियों के बारे में फ़रमायाः

وَقَدَّرْنَا فِيْهَا السَّيْرَ.

और आ़म मिक़्दारों के बारे में फ़रमायाः

وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ فَقَدَّرَهٗ تَقْدِيْرًا ۝

लफ़्ज़ 'मनाज़िल' 'मन्ज़िल' की जमा (बहुवचन) है जिसके असली मायने नाज़िल होने और उतरने की जगह के हैं, अल्लाह तआ़ला ने सूरज व चाँद दोनों की रफ़्तार के लिये ख़ास हदें मुक़र्रर फ़रमाई हैं जिनमें से हर एक को मन्ज़िल कहा जाता है। चाँद चूँकि अपना दौरा हर महीने में पूरा कर लेता है इसलिये उसकी मन्ज़िलें तीस या उन्तीस होती हैं, मगर चूँकि हर महीने में चाँद कम से कम एक दिन ग़ायब रहता है इसलिये उमूमन चाँद की मन्ज़िलें अट्ठाईस कही जाती हैं। और सूरज का दौरा साल भर में पूरा होता है उसकी मन्ज़िलें तीन सौ साठ या पैंसठ होती हैं। अ़रब के पुराने जाहिली दौर में भी और हिसाब जानने वालों और आसमानों के हालात और सितारों की चालों का इल्म रखने वालों के नज़दीक भी इन मन्ज़िलों के ख़ास-ख़ास नाम उन सितारों की मुनासबत से रख दिये गये हैं जो इन मन्ज़िलों के बराबर और मुक़ाबिल में पाये जाते हैं। क़ुरआने करीम इन परिभाषिक नामों से ऊपर है, इसकी मुराद सिर्फ़ वो फ़ासले हैं जिनको सूरज व चाँद ख़ास-ख़ास दिनों में तय करते हैं।

ज़िक्र हुई आयत में 'क़द्द-रहू मनाज़ि-ल' एक वचन की ज़मीर के साथ इस्तेमाल किया है हालाँकि मन्ज़िलें सूरज व चाँद दोनों की हैं, इसलिये मुफ़स्सिरीन हज़रात में से कुछ ने फ़रमाया कि अगरचे ज़िक्र एक वचन का है मगर मुराद दोनों हैं, जिसकी मिसालें क़ुरआन और अ़रबी मुहावरों में अधिकता के साथ पाई जाती हैं।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि अगरचे मन्ज़िलें अल्लाह तआ़ला ने सूरज और चाँद दोनों ही के लिये क़ायम फ़रमा दी हैं मगर इस जगह बयान सिर्फ़ चाँद की मन्ज़िलों का मक़्सूद है इसलिये 'क़द्द-रहू' की ज़मीर चाँद की तरफ़ लौट रही है। ख़ास करने की वजह यह है कि सूरज की मन्ज़िलें तो उपकरणों और हिसाब के बग़ैर मालूम नहीं हो सकतीं, उसका निकलना और ग़ुरूब होना एक ही शक्ल व अन्दाज़ में साल के तमाम दिनों में होता रहता है। देखने से किसी को यह पता नहीं चल सकता कि आज सूरज कौनसी मन्ज़िल में है, बख़िलाफ़ चाँद के कि उसके हालात हर दिन भिन्न और अलग होते हैं, महीने के आख़िर में बिल्कुल नज़र नहीं आता। इस तरह की तब्दीलियों को न देखने वाले और अनुभव से ख़ाली लोग भी तारीख़ों का पता चला सकते हैं, मसलन आज मार्च की आठ तारीख़ है, कोई शख़्स सूरज को देखकर यह मालूम नहीं

कर सकता कि आठ है या इक्कीस, बख़िलाफ़ चाँद के कि उसको देखकर भी तारीख़ का पता चलाया जा सकता है।

ज़िक्र हुई आयत में चूँकि यह बतलाना मक़सूद है कि अल्लाह तआ़ला की इन अ़ज़ीमुश्शान निशानियों से इनसान का यह फ़ायदा भी जुड़ा हुआ है कि इनके ज़रिये वह साल और महीना और उसकी तारीख़ों का हिसाब मालूम करे, और यह हिसाब भी अगरचे सूरज व चाँद दोनों ही से मालूम हो सकता है और दुनिया में दोनों तरह के साल और महीने अंग्रेज़ी और चाँद दोनों ही के हिसाब से मालूम हो सकता है और दुनिया में दोनों तरह के साल और महीने अंग्रेज़ी और चाँद के पुराने ज़माने से प्रचलित भी हैं, और क़ुरआने करीम ने भी सूरः बनी इस्राईल की आयत नम्बर 12 में फ़रमायाः

وَجَعَلْنَا الَّيْلَ وَالنَّهَارَ اٰيَتَيْنِ فَمَحَوْنَآ اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَآ اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِّتَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ.

इसमें 'आयतल-लैलि' से मुराद चाँद और 'आयतन्नहारि' से मुराद सूरज है, और दोनों का ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया कि इनसे तुम सालों का अ़दद और महीनों की तारीख़ों का हिसाब मालूम कर सकते हो। और सूरः रहमान में फ़रमायाः

اَلشَّمْسُ وَالْقَمَرُ بِحُسْبَانٍ.

जिसमें बतलाया गया है कि सूरज व चाँद दोनों के ज़रिये तारीख़, महीने और साल का हिसाब मालूम किया जा सकता है।

लेकिन चाँद के ज़रिये महीने और तारीख़ का हिसाब देखने और तजुर्बे से मालूम है बख़िलाफ़ सूरज के कि उसके हिसाबात सिवाय रियाज़ी (हिसाब जानने) वालों के कोई दूसरा नहीं समझ सकता। इसलिये इस आयत में सूरज व चाँद दोनों का ज़िक्र करने के बाद जब उनकी मन्ज़िलें मुक़र्रर करने का ज़िक्र फ़रमाया तो एक वचन की ज़मीर 'क़द्-रहू' इरशाद फ़रमाकर मन्ज़िलें सिर्फ़ चाँद की बयान फ़रमाई गयीं।

और चूँकि इस्लामी अहकाम में हर जगह हर मौक़े पर इसकी रियायत रखी गयी है कि उनकी अदायेगी हर शख़्स के लिये आसान हो, चाहे वह कोई लिखा पढ़ा आदमी हो या अनपढ़, शहरी हो या देहाती, इसी लिये उमूमन इस्लामी अहकाम में चाँद के सन्, महीने और तारीख़ों का एतिबार किया गया है। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, इद्दत वग़ैरह इस्लामी फ़राईज़ व अहकाम में चाँद का हिसाब ही रखा गया है।

इसके यह मायने नहीं कि सूरज का हिसाब रखना या इस्तेमाल करना नाजायज़ है, बल्कि इसका इख़्तियार है कि कोई शख़्स नमाज़, रोज़े, हज, ज़कात और इद्दत के मामले में तो चाँद का हिसाब शरीअ़त के मुताबिक़ इस्तेमाल करे मगर अपने कारोबार, तिजारत वग़ैरह में सूरज का (यानी अंग्रेज़ी तारीख़ों का) हिसाब इस्तेमाल करे, शर्त यह है कि कुल मिलाकर मुसलमानों में चाँद का हिसाब जारी रहे ताकि रमज़ान और हज वग़ैरह के वक़्त मालूम होते रहें, ऐसा न हो कि

उसे जनवरी फ़रवरी वग़ैरह के सिवा कोई महीने ही मालूम न हों। फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस के माहिर उलेमा) ने चाँद का हिसाब बाक़ी रखने को मुसलमानों के ज़िम्मे फ़र्ज़े किफ़ाया क़रार दिया है। और इसमें भी शुब्हा नहीं कि तमाम अम्बिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तथा ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत व तरीक़े में चाँद का ही हिसाब इस्तेमाल किया गया है, इसकी पैरवी बरकत व सवाब का ज़रिया है।

ग़र्ज़ कि उक्त आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की क़ुदरत और कामिल हिक्मत का बयान है कि उसने रोशनी के दो अ़ज़ीमुश्शान और विशाल ख़ज़ाने ज़रूरत के मुनासिब पैदा फ़रमाये और फिर हर एक की रफ़्तार के लिये ऐसे पैमाने मुक़र्रर फ़रमा दिये जिनसे साल, महीना, तारीख़ और वक़्तों के एक-एक मिनट का हिसाब मालूम किया जा सकता है, न कभी उनकी रफ़्तार में फ़र्क़ आता है न कभी आगे पीछे होते हैं, न उन ख़ुदा की बनाई हुई मशीनों में कभी मरम्मत का अन्तराल होता है न उनको ग्रीसिंग की ज़रूरत होती है, न वो कभी घिसती टूटती हैं। जिस शान से कायनात के पहले दिन में चला दिया था आज भी चल रही हैं।

इसके बाद आयत के आख़िर में इसी पर अधिक तंबीह के लिये फ़रमायाः

مَا خَلَقَ اللّٰهُ ذٰلِكَ اِلَّا بِالْحَقِّ يُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ٥

यानी इन सब चीज़ों को अल्लाह तआ़ला ने बेफ़ायदा पैदा नहीं किया बल्कि इनमें बड़ी-बड़ी हिक्मतें और इनसान के लिये बेशुमार फ़ायदे छुपे हुए हैं, वह ये दलीलें उन लोगों को साफ़ साफ़ बतला रहे हैं जो अ़क़्ल व समझ रखते हैं।

इसी तरह दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया कि रात दिन के एक के बाद एक आने में और जो कुछ अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन में पैदा किया है उन सब में उन लोगों के वास्ते (तौहीद व आख़िरत की) दलीलें हैं जो ख़ुदा तआ़ला का डर मानते हैं।

तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) की दलीलें तो क़ुदरत व कारीगरी में बेमिसाल होना और बग़ैर किसी इमदाद के इन तमाम चीज़ों को पैदा करना और ऐसे निज़ाम के साथ चलाना है जो न कभी टूटता है न बदलता है।

और आख़िरत की दलीलें इसलिये हैं कि जिस हिक्मत वाली ज़ात ने इन तमाम चीज़ो को इनसानों के फ़ायदे के लिये बनाया और एक स्थिर निज़ाम का पाबन्द किया, उससे यह मुम्किन नहीं कि कायनात के इस मख़्दूम (यानी इनसान) को उसने बेफ़ायदा महज़ खाने पीने के लिये पैदा किया हो, इसके ज़िम्मे कुछ फ़राईज़ न लगाये हों। और जब यह लाज़िम हुआ कि कायनात के इस मख़्दूम यानी इनसान पर भी कुछ पाबन्दियाँ होनी ज़रूरी हैं तो यह भी लाज़िम हुआ कि उन पाबन्दियों को पूरा करने वालों और न करने वालों का कभी कहीं हिसाब हो, करने वालों को अच्छा बदला मिले और न करने वालों को सज़ा, और यह भी ज़ाहिर है कि इस दुनिया में जज़ा व सज़ा का यह दस्तूर नहीं, यहाँ तो मुजरिम बहुत सी बार मुत्तक़ी पारसा से ज़्यादा अच्छी ज़िन्दगी गुज़ारता है, इसलिये ज़रूरी है कि हिसाब और जज़ा व सज़ा का कोई दिन मुक़र्रर हो, उसी का नाम क़ियामत और आख़िरत है।

إِنَّ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَاءَنَا وَرَضُوا بِالْحَيَوٰةِ الدُّنْيَا وَاطْمَأَنُّوا بِهَا وَالَّذِينَ هُمْ عَنْ آيٰتِنَا
غٰفِلُونَ ۝ أُولٰٓئِكَ مَأْوٰىهُمُ النَّارُ بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ۝ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ يَهْدِيهِمْ رَبُّهُمْ
بِإِيمَانِهِمْ ۚ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْأَنْهٰرُ فِي جَنّٰتِ النَّعِيمِ ۝ دَعْوٰىهُمْ فِيهَا سُبْحٰنَكَ اللّٰهُمَّ وَتَحِيَّتُهُمْ
فِيهَا سَلٰمٌ ۚ وَآخِرُ دَعْوٰىهُمْ أَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِينَ ۝ ع

इन्नल्लज़ी-न ला यरजू-न लिका-अना व रज़ू बिल्हयातिद्दुन्या वत्म-अन्नू बिहा वल्लज़ी-न हुम् अ़न् आयातिना ग़ाफ़िलून (7) उलाइ-क मअ्वाहुमुन्नारु बिमा कानू यक्सिबून (8) इन्नल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति यह्दीहिम् रब्बुहुम् बिईमानिहिम् तज्री मिन् तह्तिहिमुल्-अन्हारु फ़ी जन्नातिन्-नअ़ीम (9) दअ़्वाहुम् फ़ीहा सुब्हान-कल्लाहुम्-म व तहिय्यतुहुम् फ़ीहा सलामुन् व आख़िरु दअ़्वाहुम् अनिल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन (10) ✿	अलबत्ता जो लोग उम्मीद नहीं रखते हमारे मिलने की और ख़ुश हुए दुनिया की ज़िन्दगी पर और इसी पर संतुष्ट हो गये और जो लोग हमारी निशानियों से बेख़बर हैं। (7) ऐसों का ठिकाना है आग, बदला उसका जो कमाते थे। (8) अलबत्ता जो लोग ईमान लाये और काम किये अच्छे, हिदायत करेगा उनको रब उनका उनके ईमान से, बहती हैं उनके नीचे नहरें आराम के बाग़ों में। (9) उनकी दुआ़ उस जगह यह कि पाक ज़ात है तेरी या अल्लाह! और मुलाक़ात उनकी सलाम। और ख़ात्मा उनकी दुआ़ का इस पर कि सब ख़ूबी अल्लाह के लिये जो परवर्दिगार है सारे जहान का। (10) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जिन लोगों को हमारे पास आने का खटका नहीं है और वे दुनिया की ज़िन्दगी पर राज़ी हो गये हैं (आख़िरत की तलब बिल्कुल नहीं करते) और इसमें जी लगा बैठे हैं (आईन्दा की कुछ ख़बर नहीं), और जो लोग हमारी आयतों से (जो कि क़ियामत के दिन उठने पर दलालत करती हैं) बिल्कुल ग़ाफ़िल हैं, ऐसे लोगों का ठिकाना उनके (इन) आमाल की वजह से दोज़ख़ है। (और) यक़ीनन जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक काम किये, उनका रब उनके मोमिन होने की वजह से उनके मक़सद (यानी जन्नत) तक पहुँचा देगा। उनके (ठिकाने के) नीचे नहरें जारी होंगी, चैन के बाग़ों में। (और जिस वक़्त वे जन्नत में जायेंगे और वहाँ की अनोखी चीज़ों को

अचानक देखेंगे तो उस वक़्त) उनके मुँह से यह बात निकलेगी कि सुब्हानल्लाह! और (फिर जब एक दूसरे को देखेंगे तो) उनका आपस में सलाम उसमें यह होगा अस्सलामु अलैकुम! और (जब इत्मीनान से वहाँ जा बैठेंगे और अपनी पुरानी मुसीबतों व दुश्वारियों और उस वक़्त के बेहतरीन हमेशा रहने वाले ऐश की तुलना करेंगे तो) उनकी (उस वक़्त की बातों में) आख़िरी बात यह होगी- अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल-आलमीन (जैसा कि एक दूसरी आयत में है 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अज़्ह-ब अ़न्नल् ह-ज़-न)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत और हिक्मत के ख़ास-ख़ास निशानात आसमान व ज़मीन, सूरज व चाँद वग़ैरह की पैदाईश का ज़िक्र करके आख़िरत व तौहीद के अ़क़ीदे को एक असरदार अन्दाज़ में साबित किया गया था, उपर्युक्त आयतों में से पहली तीन आयतों में यह बतलाया गया है कि दुनिया की कायनात की ऐसी खुली-खुली निशानियों और शहादतों के बावजूद इनसानों के दो वर्ग हो गये- एक वह जिसने क़ुदरत की इन आयतों की तरफ़ ज़रा भी ध्यान न दिया, न अपने पैदा करने वाले मालिक को पहचाना और न इस पर ग़ौर किया कि हम दुनिया के आ़म जानवरों की तरह एक जानवर नहीं, रब्बुल-इ़ज़्ज़त ने हमें अ़क़्ल व समझ और शऊर व होश तमाम जानवरों से ज़्यादा दिया है और सारी मख़्लूक़ात को हमारा ख़ादिम (सेवक) बना दिया है तो हमारे ज़िम्मे भी कोई काम लगाया होगा, और उसका हमें भी हिसाब देना होगा, जिसके लिये ज़रूरी है कि कोई हिसाब और जज़ा का दिन मुक़र्रर हो जिसको क़ुरआनी परिभाषा में क़ियामत और हश्र व नश्र से ताबीर किया जाता है, बल्कि उन्होंने अपनी ज़िन्दगी को आ़म जानवरों की सतह पर रखा। पहली दो आयतों में उन लोगों की ख़ास निशानियाँ बतलाकर उनकी आख़िरत की सज़ा का ज़िक्र किया गया है, फ़रमाया कि "जिन लोगों को हमारे पास आने का खटका नहीं है और उनकी हालत यह है कि आख़िरत की हमेशा वाली ज़िन्दगी और उसकी राहत व तकलीफ़ को भुलाकर सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी पर राज़ी हो गये।

दूसरे यह कि "इस दुनिया में ऐसे मुत्मईन होकर बैठे हैं कि गोया यहाँ से कहीं जाना ही नहीं, हमेशा-हमेशा यहीं रहना है। उनको कभी यह ध्यान नहीं आता कि इस दुनिया से हर शख़्स का रुख़्सत होना तो ऐसा आसानी से समझ में आने वाला मसला है जिसमें कभी किसी को शुब्हा ही नहीं हो सकता, और जब यहाँ से जाना यक़ीनी है तो जहाँ जाना है वहाँ की कुछ तैयारी होनी चाहिये।"

तीसरे यह कि "ये लोग हमारी आयतों और निशानियों से लगातार ग़फ़लत ही ग़फ़लत में हैं। अगर वे आसमान व ज़मीन और उनके बीच की आ़म मख़्लूक़ात में और ख़ुद अपनी जान में ज़रा भी ग़ौर करते तो असल हक़ीक़त का समझना कुछ मुश्किल न होता, और वे इस बेवक़ूफ़ी भरी ग़फ़लत से निकल सकते थे।

ऐसे लोग जिनकी यह निशानियाँ बतलाई गयीं उनकी सज़ा आख़िरत में यह है कि उनका

ठिकाना जहन्नम की आग है, और यह सज़ा ख़ुद उनके अपने अ़मल का नतीजा है।

अफ़सोस है कि क़ुरआने करीम ने जो निशानियाँ काफ़िरों व इनकारियों की बतलाई हैं आज हम मुसलमानों का हाल उनसे कुछ अलग नहीं, हमारी ज़िन्दगी और हमारे दिन रात के कामों और ख़्याल व सोच को देखकर कोई नहीं समझ सकता कि हमें इस दुनिया के सिवा और भी कोई फ़िक्र लगी हुई है, और इसके बावजूद हम अपने आपको पक्का और सच्चा मुसलमान यक़ीन किये हुए हैं, और हक़ीक़त यह है कि सच्चे और पक्के मुसलमान, जैसे कि हमारे बुज़ुर्ग थे उनके चेहरे देखकर ख़ुदा याद आता और यह महसूस होता था कि ये किसी हस्ती का ख़ौफ़ और किसी हिसाब की फ़िक्र दिल में रखते हैं, और तो और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का भी बावजूद गुनाहों से मासूम होने के यही हाल था। शमाईल-ए-तिर्मिज़ी में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अक्सर समय ग़मगीन और चिंतित नज़र आते थे।

तीसरी आयत में उन ख़ुशनसीब इनसानों का ज़िक्र है जिन्होंने अल्लाह जल्ल शानुहू की क़ुदरत की आयतों (निशानियों) में ग़ौर किया और उसको पहचाना, उस पर ईमान लाये और ईमान के तक़ाज़े पर अ़मल करके नेक आमाल के पाबन्द हो गये।

क़ुरआने क़रीम ने उन हज़रात के लिये दुनिया व आख़िरत में जो अच्छा सिला और जज़ा मुक़र्रर फ़रमाई है उसका ज़िक्र इस तरह फ़रमाया है:

أُولَٰئِكَ يَهْدِيهِمْ رَبُّهُمْ بِإِيمَانِهِمْ

यानी उनका रब उनको ईमान की वजह से मन्ज़िले मक़सूद यानी जन्नत दिखलायेगा, जिसमें चैन व आराम के बाग़ों में नहरें बहती होंगी।

इसमें लफ़्ज़ **हिदायत** आया है जिसके मशहूर मायने रास्ता बतलाने और दिखलाने के हैं, और कभी मन्ज़िले मक़सूद तक पहुँचा देने के मायने में भी इस्तेमाल होता है। इस मक़ाम पर यही मायने मुराद हैं, और मन्ज़िले मक़सूद से मुराद जन्नत है जिसकी वज़ाहत बाद के अलफ़ाज़ में हो गयी है। जिस तरह पहले वर्ग की सज़ा उनके अपने करतूत का नतीजा थी इसी तरह इस दूसरे मोमिन तब्क़े की जज़ा के बारे में फ़रमाया कि यह बेहतरीन जज़ा उनको उनके ईमान की वजह से मिली है, और चूँकि ऊपर ईमान के साथ नेक अ़मल का ज़िक्र आ चुका है इसलिये इस जगह ईमान से वही ईमान मुराद होगा जिसके साथ नेक आमाल भी हों। ईमान और नेक अ़मल का बदला बेनज़ीर राहतों और नेमतों का मक़ाम यानी जन्नत है।

चौथी आयत में जन्नत में पहुँचने के बाद जन्नत वालों के चन्द मख़्सूस हालात बतलाये हैं। अव्वल यह कि:

دَعْوٰهُمْ فِيهَا سُبْحٰنَكَ اللّٰهُمَّ

इसमें लफ़्ज़ दअ़्वा अपने मशहूर मायने में नहीं जो कोई मुद्दई अपने मुख़ालिफ़ और सामने वाले के मुक़ाबले में किया करता है, बल्कि इस जगह लफ़्ज़ दअ़्वा दुआ के मायने में है। मायने यह हैं कि जन्नत वालों की दुआ जन्नत में पहुँचने के बाद यह होगी कि वे सुब्हानकल्लाहुम्-म कहते रहेंगे, यानी अल्लाह जल्ल शानुहू की पाकी बयान किया करेंगे।

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि दुआ़ तो आ़म उर्फ़ में किसी चीज़ की दरख़्वास्त और किसी मक़सद के तलब करने को कहा जाता है, सुब्हानकल्लाहुम्-म में न कोई दरख़्वास्त है न तलब, इसको दुआ़ किस हैसियत से कहा गया?

जवाब यह है कि इस कलिमे से बतलाना यह मक़सूद है कि जन्नत वालों को जन्नत में हर राहत हर मतलब मन-माने अन्दाज़ से ख़ुद-बख़ुद हासिल होगी, किसी चीज़ को माँगने और दरख़्वास्त करने की ज़रूरत ही न होगी, इसलिये दरख़्वास्त व तलब और परिचित दुआ़ के क़ायम-मक़ाम उनकी ज़बानों पर सिर्फ़ अल्लाह की तस्बीह होगी और वह भी दुनिया की तरह कोई इबादत का फ़रीज़ा अदा करने के लिये नहीं बल्कि वे तस्बीह के इस कलिमे से लज़्ज़त महसूस करेंगे और अपनी ख़ुशी से सुब्हानकल्लाहुम्-म कहा करेंगे। इसके अ़लावा एक हदीस-ए-क़ुदसी में है कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया- "जो बन्दा मेरी तारीफ़ व सना में हर वक़्त लगा रहे यहाँ तक कि उसको अपने मतलब की दुआ़ माँगने की भी फ़ुर्सत न रहे तो मैं उसको तमाम माँगने वालों से बेहतर चीज़ दूँगा, यानी बिना माँगे उसके सब काम पूरे कर दूँगा।" इस हैसियत से भी लफ़्ज़ 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' को दुआ़ कह सकते हैं।

इसी मायने के एतिबार से सही बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जब कोई तकलीफ़ व बेचैनी पेश आती तो आप यह दुआ़ पढ़ा करते थेः

لَآ اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ الْعَظِيْمُ الْحَلِيْمُ، لَآ اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ، لَآ اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَرَبُّ الْاَرْضِ وَرَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيْمِ.

ला इला-ह इल्लल्लाहुल्-अज़ीमुल् हलीमु, ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुल-अ़र्शिल् अ़ज़ीम। ला इला-ह इल्लल्लाहु रब्बुस्समावाति व रब्बुल-अर्ज़ि व रब्बुल-अ़र्शिल् करीम।

और इमाम तबरी ने फ़रमाया कि पहले बुज़ुर्ग इसको **दुआ़-ए-कर्ब** कहा करते थे, और मुसीबत व परेशानी के वक़्त ये कलिमात पढ़कर दुआ़ माँगा करते थे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और इमाम इब्ने जरीर, इब्ने मुन्ज़िर वग़ैरह ने एक रिवायत यह भी नक़ल की है कि जन्नत वालों को जब किसी चीज़ की ज़रूरत और इच्छा होगी तो वे सुब्हानकल्लाहुम्-म कहेंगे, यह सुनते ही फ़रिश्ते उनके मतलब की चीज़ हाज़िर कर देंगे, गोया कलिमा सुब्हानकल्लाहुम्-म जन्नत वालों की एक ख़ास परिभाषा होगी जिसके ज़रिये वे अपनी इच्छा का इज़हार करेंगे और फ़रिश्ते हर मर्तबा उसको पूरा कर देंगे। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी व क़ुर्तुबी)

इस लिहाज़ से भी कलिमा सुब्हानकल्लाहुम्-म को दुआ़ कहा जा सकता है।

जन्नत वालों का दूसरा हाल यह बतलाया किः

تَحِيَّتُهُمْ فِيْهَا سَلٰمٌ

'तहिय्या' उर्फ़ में उस कलिमे को कहा जाता है जिसके ज़रिये किसी आने वाले या मिलने वाले शख़्स का स्वागत किया जाता है, जैसे सलाम या ख़ुश-आमदीद या 'अह्लंव्-व सह्लन्'

वग़ैरह। इस आयत ने बतलाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से या फ़रिश्तों की तरफ़ से जन्नत वालों का तहिय्या लफ़्ज़ 'सलाम' से होगा। यानी यह ख़ुशख़बरी कि तुम हर तकलीफ़ और नागवार चीज़ से सलामत रहोगे। यह सलाम ख़ुद हक़ तआ़ला की तरफ़ से भी हो सकता है जैसे सूरः यासीन में है:

سَلٰمٌ قَوْلًا مِّنْ رَّبٍّ رَّحِيْمٍ٥

और फ़रिश्तों की तरफ़ से भी हो सकता है जैसे एक दूसरी जगह इरशाद है:

وَالْمَلٰٓئِكَةُ يَدْخُلُوْنَ عَلَيْهِمْ مِّنْ كُلِّ بَابٍ، سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ.

यानी फ़रिश्ते जन्नत वालों के पास हर दरवाज़े से 'सलामुन अ़लैकुम' कहते हुए दाख़िल होंगे। और इन दोनों बातों में कोई टकराव नहीं, कि किसी वक़्त डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला का सलाम पहुँचे और किसी वक़्त फ़रिश्तों की तरफ़ से। और सलाम का लफ़्ज़ अगरचे दुनिया में दुआ़ है लेकिन जन्नत में पहुँचकर तो हर मतलब हासिल होगा इसलिये वहाँ यह लफ़्ज़ दुआ़ के बजाय ख़ुशख़बरी का कलिमा होगा। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

जन्नत वालों का तीसरा हाल यह बतलाया कि:

اٰخِرُ دَعْوٰهُمْ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ٥

यानी जन्नत वालों की आख़िरी दुआ़ 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन' होगी।

मतलब यह है कि जन्नत वालों को जन्नत में पहुँचने के बाद अल्लाह तआ़ला की मारिफ़त (पहचान) में तरक़्क़ी नसीब होगी जैसा कि हज़रत शहाबुद्दीन सहरवर्दी रह. ने अपने एक रिसाले में फ़रमाया कि जन्नत में पहुँचकर आ़म जन्नत वालों को इल्म व मारिफ़त का वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो दुनिया में उलेमा का है, और उलेमा को वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो यहाँ अम्बिया का है, और अम्बिया को वह मक़ाम हासिल हो जायेगा जो दुनिया में तमाम नबियों के सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हासिल है, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को वहाँ अल्लाह की निकटता का सबसे ऊँचा मक़ाम हासिल होगा, और मुम्किन है कि उसी मक़ाम का नाम मक़ाम-ए-महमूद हो, जिसके लिये अज़ान की दुआ़ में आपने दुआ़ करने की हिदायत फ़रमाई है।

ख़ुलासा यह है कि जन्नत वालों की शुरू की दुआ़ 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' और आख़िरी दुआ़ 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन' होगी। इसमें अल्लाह जल्ल शानुहू की सिफ़ात की दो क़िस्मों की तरफ़ इशारा है- एक जलाल की सिफ़ातें, जिनमें अल्लाह जल्ल शानुहू के हर ऐब और हर बुराई से पाक होने का ज़िक्र है, दूसरी 'बुज़ुर्गी व बड़ाई की सिफ़ात जिनमें उसकी बुज़ुर्गी व बरतरी और आला कमाल का ज़िक्र है। क़ुरआने करीम की आयत:

تَبٰرَكَ اسْمُ رَبِّكَ ذِى الْجَلٰلِ وَالْاِكْرَامِ٥

में इन दोनों क़िस्मों की तरफ़ इशारा किया गया है। ग़ौर करने से मालूम होगा कि 'सुब्हानियत' अल्लाह तआ़ला की जलाल वाली सिफ़ात में से है और तारीफ़ व सना का हक़दार

होना इकराम व बुज़ुर्गी वाली सिफ़ात में से है, और तबई तरतीब के मुताबिक़ जलाल वाली सिफ़ात इकराम व बुज़ुर्गी वाली सिफ़ात से मुक़द्दम (पहले और श्रेष्ठ) हैं, इसलिये जन्नत वाले शुरू में जलाल वाली सिफ़ात को "सुब्हानकल्लाहुम्-म" के लफ़्ज़ से बयान करेंगे और आख़िर में इकराम व बड़ाई वाली सिफ़ात को 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन' के लफ़्ज़ से ज़िक्र करेंगे, यही उनका रात दिन का मश्ग़ला है।

और इन तीनों हालात की तबई तरतीब यह है कि जन्नत वाले जब 'सुब्हानकल्लाहुम्-म' कहेंगे तो इसके जवाब में उनको हक़ तआ़ला की तरफ़ से सलाम पहुँचेगा, उसके नतीजे में वे 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन' कहेंगे। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

अहकाम व मसाईल

अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने अपनी किताब अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि जन्नत वालों के इस अ़मल के मुताबिक़ खाने पीने और तमाम कामों में सुन्नत यह है कि बिस्मिल्लाह से शुरू करे और अल्हम्दु लिल्लाह पर ख़त्म करे। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला को यह पसन्द है कि बन्दा जब कोई चीज़ खाये पिये तो बिस्मिल्लाह से शुरू करे और फ़ारिग़ होकर अल्हम्दु लिल्लाह कहे।

मुस्तहब है कि दुआ़ करने वाला आख़िर में कहा करे 'व आख़िरु दअ़्वाना अनिल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन'। और अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि बेहतर यह है कि इसके साथ सूरः सॉफ़्फ़ात की आख़िरी आयतें भी पढ़े, यानी सुब्हा-न रब्बि-क रब्बिल्-इ़ज़्ज़ति अ़म्मा यसिफ़ून। व सलामुन् अ़लल्-मुर्सलीन। वल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन।

وَلَوْ يُعَجِّلُ اللّٰهُ لِلنَّاسِ الشَّرَّ اسْتِعْجَالَهُمْ

بِالْخَيْرِ لَقُضِيَ اِلَيْهِمْ اَجَلُهُمْ ۚ فَنَذَرُ الَّذِيْنَ لَا يَرْجُوْنَ لِقَآءَنَا فِيْ طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ۝ وَاِذَا مَسَّ
الْاِنْسَانَ الضُّرُّ دَعَانَا لِجَنْۢبِهٖٓ اَوْ قَاعِدًا اَوْ قَآئِمًا ۚ فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُ ضُرَّهٗ مَرَّ كَاَنْ لَّمْ يَدْعُنَآ اِلٰى
ضُرٍّ مَّسَّهٗ ۚ كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلْمُسْرِفِيْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ وَلَقَدْ اَهْلَكْنَا الْقُرُوْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَمَّا ظَلَمُوْا ۙ وَ
جَآءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ وَمَا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْا ۚ كَذٰلِكَ نَجْزِي الْقَوْمَ الْمُجْرِمِيْنَ ۝ ثُمَّ جَعَلْنٰكُمْ
خَلٰٓئِفَ فِي الْاَرْضِ مِنْ بَعْدِهِمْ لِنَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُوْنَ ۝ وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنٰتٍ ۙ قَالَ
الَّذِيْنَ لَا يَرْجُوْنَ لِقَآءَنَا ائْتِ بِقُرْاٰنٍ غَيْرِ هٰذَآ اَوْ بَدِّلْهُ ۚ قُلْ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ اُبَدِّلَهٗ مِنْ تِلْقَآئِ
نَفْسِيْ ۚ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوْحٰٓى اِلَيَّ ۚ اِنِّيْٓ اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبِّيْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ ۝ قُلْ لَّوْ شَآءَ
اللّٰهُ مَا تَلَوْتُهٗ عَلَيْكُمْ وَلَآ اَدْرٰىكُمْ بِهٖ ۖ فَقَدْ لَبِثْتُ فِيْكُمْ عُمُرًا مِّنْ قَبْلِهٖ ۚ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝ فَمَنْ
اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰيٰتِهٖ ۚ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الْمُجْرِمُوْنَ ۝

व लौ युअ़ज्जिलुल्लाहु लिन्नासिश्-शर्र स्तिअ़्जा-लहुम् बिल्ख़ैरि लक़ुज़ि-य इलैहिम् अ-जलुहुम्, फ़-न-ज़रुल्लज़ी-न ला यर्जू-न लिक़ा-अना फ़ी तुग़्यानिहिम् यअ़्महून (11) व इज़ा मस्सल्-इन्सानज़्ज़ुर्रु दआ़ना लिजम्बिही औ क़ाअ़िदन् औ क़ाइमन् फ़-लम्मा कशफ़्ना अ़न्हु ज़ुर्-रहू मर्-र क-अल्लम् यद्अ़ुना इला ज़ुर्रिम्-मस्-सहू, कज़ालि-क ज़ुय्यि-न लिल्मुस्रिफ़ी-न मा कानू यअ़्मलून (12) व ल-क़द् अह्लक्नल्-क़ुरू-न मिन् क़ब्लिकुम् लम्मा ज़-लमू व जाअत्हुम् रुसुलुहुम् बिल्बय्यिनाति व मा कानू लियुअ्मिनू, कज़ालि-क नज्ज़िल् क़ौमल्-मुज्रिमीन (13) सुम्-म जअ़ल्नाकुम् ख़लाइ-फ़ फ़िल्अर्ज़ि मिम्-बअ़्दिहिम् लिनन्ज़ु-र कै-फ़ तअ़्मलून (14) व इज़ा तुत्ला अ़लैहिम् आयातुना बय्यिनातिन् क़ालल्लज़ी-न ला यर्जू-न लिक़ा-अनअ्ति बिक़ुर्आनिन् ग़ैरि हाज़ा औ बद्दिल्हु, क़ुल् मा यकूनु ली अन् उबद्दि-लहू मिन् तिल्क़ा-इ

और अगर जल्दी पहुँचा दे अल्लाह लोगों को बुराई जैसे कि जल्दी माँगते हैं वे भलाई तो ख़त्म कर दी जाये उनकी उम्र, सो हम छोड़े रखते हैं उनको जिनको उम्मीद नहीं हमारी मुलाक़ात की, उनकी शरारत में हैरान व परेशान। (11) और जब पहुँचे इनसान को तकलीफ़, पुकारे हमको पड़ा हुआ या बैठा या खड़ा, फिर जब हम खोल दें उससे वह तकलीफ़ चला जाये गोया कभी न पुकारा था हमको किसी तकलीफ़ पहुँचने पर, इसी तरह पसन्द आया बेबाक लोगों को जो कुछ कर रहे हैं। (12) और अलबत्ता हम हलाक कर चुके हैं जमाअ़तों को तुमसे पहले जब वे ज़ालिम हो गये, हालाँकि लाये थे उनके पास रसूल उनके खुली निशानियाँ, और हरगिज़ न थे ईमान लाने वाले, यूँ ही सज़ा देते हैं हम गुनाहगारों की क़ौम को। (13) फिर तुमको हमने नायब बनाया ज़मीन में उनके बाद ताकि देखें तुम क्या करते हो। (14) और जब पढ़ी जाती हैं उनके सामने हमारी स्पष्ट आयतें, कहते हैं वे लोग जिनको उम्मीद नहीं हमसे मुलाक़ात की- ले आ कोई क़ुरआन इसके अ़लावा या इसको बदल डाल। तू कह दे मेरा काम नहीं कि इसको बदल डालूँ अपनी तरफ़ से, मैं ताबेदारी करता हूँ उसी की जो हुक्म आये मेरी तरफ़, मैं डरता हूँ अगर

नफ़्सी इन् अत्तबिअु इल्ला मा यूहा इलय्-य इन्नी अख़ाफ़ु इन् अ़सैतु रब्बी अ़ज़ा-ब यौमिन् अ़ज़ीम (15) क़ुल् लौ शा-अल्लाहु मा तलौतुहू अ़लैकुम् व ला अद्राकुम् बिही फ़-क़द् लबिस्तु फ़ीकुम् अुमुरम्-मिन् क़ब्लिही, अ-फ़ला तअ़्क़िलून (16) फ़-मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबन् औ कज़्ज़-ब बिआयातिही, इन्नहू ला युफ़्लिहुल् मुज्रिमून (17)	नाफ़रमानी करूँ अपने रब की बड़े दिन के अ़ज़ाब से। (15) कह दे अगर अल्लाह चाहता तो मैं न पढ़ता इसको तुम्हारे सामने और न वह तुमको ख़बर करता इसकी, क्योंकि मैं रह चुका हूँ तुम में एक उम्र इससे पहले, क्या फिर तुम नहीं सोचते? (16) फिर उससे बड़ा ज़ालिम कौन जो बाँधे अल्लाह पर बोहतान या झुठलाये उसकी आयतों को, बेशक भला नहीं होता गुनाहगारों का। (17)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर अल्लाह तआ़ला लोगों पर (उनके जल्दी मचाने के मुताबिक़) जल्दी से नुक़सान डाल दिया करता, जिस तरह वे फ़ायदे के लिये जल्दी मचाते हैं (और उसके मुवाफ़िक़ वह फ़ायदा जल्द ज़ाहिर कर देता है, इसी तरह अगर नुक़सान भी ज़ाहिर कर दिया करता) तो उनका (अ़ज़ाब का) वायदा कभी का पूरा हो चुका होता (लेकिन हमारी हिक्मत जिसका बयान अभी आता है, चूँकि इसको नहीं चाहती हैं) सो (इसलिये) हम उन लोगों को जिनको हमारे पास आने का खटका नहीं है, उनके हाल पर (बिना अ़ज़ाब के चन्द दिन) छोड़े रखते हैं कि अपनी सरकशी में भटकते रहें (और अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ हो जायें, और वह हिक्मत यही है)। और जब इनसान को (यानी उनमें से कुछ को) कोई तकलीफ़ पहुँचती है तो हमको पुकारने लगता है, लेटे भी, बैठे भी, खड़े भी (और उस वक़्त कोई बुत वग़ैरह याद नहीं रहता, तमाम झूठे माबूदों को भूल बैठता है) फिर जब (उसकी दुआ़ व प्रार्थना के बाद) हम उसकी वह तकलीफ़ उससे हटा देते हैं तो फिर अपनी पहली हालत पर आ जाता है (और हमसे ऐसा बेताल्लुक़ हो जाता है) कि गोया जो तकलीफ़ उसको पहुँची थी उसके (हटाने के) लिये कभी हमको पुकारा ही न था। (और फिर वही शिर्क की बातें करने लगता है, फिर वह अल्लाह को पुकारना भुला देता है और शिर्क करने लगता है) इन हद से निकलने वालों के (बुरे) आमाल इनको इसी तरह अच्छे मालूम होते हैं (जिस तरह हमने अभी बयान किया है)।

और हमने तुमसे पहले बहुत-से गिरोहों को (तरह-तरह के अ़ज़ाब से) हलाक कर दिया है

जबकि उन्होंने ज़ुल्म (यानी कुफ़्र व शिर्क) किया हालाँकि उनके पास उनके पैग़म्बर दलीलें लेकर आये, और वे (अपनी हद से बढ़ी हुई दुश्मनी के सबब) ऐसे कब थे कि ईमान ले आते, हम मुजरिम लोगों को ऐसी ही सज़ा दिया करते हैं (जैसा कि हमने अभी बयान किया है)। फिर उनके बाद दुनिया में उनकी जगह हमने तुमको आबाद किया ताकि (ज़ाहिरी तौर पर भी) हम देख लें कि तुम किस तरह काम करते हो (आया वैसा ही शिर्क व कुफ़्र करते हो या ईमान लाते हो)। और जब उनके सामने हमारी आयतें पढ़ी जाती हैं जो बिल्कुल साफ़-साफ़ हैं तो ये लोग जिनको हमारे पास आने का खटका नहीं है (आप से यूँ) कहते हैं कि (या तो) इसके अ़लावा कोई (पूरा) दूसरा क़ुरआन (ही) लाईये (जिसमें हमारे तरीक़े और चलन के ख़िलाफ़ मज़ामीन न हों) या (कम-से-कम) इसी (क़ुरआन) में कुछ रद्दोबदल कर दीजिये (कि हमारे मस्लक के ख़िलाफ़ मज़ामीन इससे निकाल दीजिये और उनके इस कहने से यह भी मालूम हो गया कि वे लोग क़ुरआन को हुज़ूरे पाक का कलाम समझते थे, अल्लाह तआ़ला इसी बिना पर जवाब तालीम फ़रमाते हैं कि) आप यूँ कह दीजिये कि (इस बात को छोड़िये कि ऐसे मज़ामीन को निकालना अपने आप में कैसा है, ख़ुद) आप (यूँ) कह दीजिये कि मुझसे यह नहीं हो सकता कि मैं अपनी तरफ़ से इसमें कोई रद्दोबदल कर दूँ (और जब कुछ हिस्से का निकालना भी मुम्किन नहीं तो पूरे को बदल डालने की किसी भी हालत में संभावना ही नहीं, क्योंकि वह मेरा कलाम तो है ही नहीं बल्कि अल्लाह का कलाम है, जो वही के ज़रिये से आया है। जब यह है तो) बस मैं तो उसी की पैरवी करूँगा जो मेरे पास वही के ज़रिये से पहुँचा है (और फ़र्ज़ कर लो ख़ुदा न ख़्वास्ता) अगर मैं (वही का इत्तिबा न करूँ बल्कि) अपने रब की नाफ़रमानी करूँ तो मैं एक बड़े भारी दिन के अ़ज़ाब का अन्देशा रखता हूँ (जो नाफ़रमान लोगों के लिये ख़ास है और नाफ़रमानी के सबब तुम्हारे नसीब में है, सो मैं तो उस अ़ज़ाब या उसके सबब यानी नाफ़रमानी की जुर्रत नहीं रखता, और अगर उनको इसके वही होने में कलाम है और यह आप ही का कलाम समझे जाते हैं तो) आप (यूँ) कह दीजिये कि (यह तो ज़ाहिर है कि यह कलाम अनोखा और दूसरों को आ़जिज़ कर देने वाला है, कोई बशर इस पर क़ादिर नहीं हो सकता चाहे मैं हूँ या तुम हो, सो) अगर ख़ुदा तआ़ला को मन्ज़ूर होता (कि मैं यह बेमिसाल कलाम तुमको न सुना सकूँ और अल्लाह तआ़ला मेरे ज़रिये से तुमको इसकी इत्तिला न दे) तो (मुझ पर इसको नाज़िल न फ़रमाता। पस) न तो मैं तुमको यह (कलाम) पढ़कर सुनाता, और न वह (यानी अल्लाह तआ़ला) तुमको इसकी इत्तिला देता (पस जब मैं तुमको सुना रहा हूँ और मेरे ज़रिये से तुमको इत्तिला हो रही है तो इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला को इस मोजिज़े वाले कलाम का सुनवाना और इत्तिला करना मन्ज़ूर हुआ, और सुनाना और इत्तिला देना बिना वही के इसके आ़जिज़ कर देने वाला होने की वजह से मुम्किन नहीं। इससे मालूम हुआ कि वह वही अल्लाह की तरफ़ से उतरी हुई और उसका कलाम है) क्योंकि (आख़िर) इस (कलाम के ज़ाहिर करने) से पहले भी तो मैं उम्र के एक बड़े हिस्से तक तुममें रह चुका हूँ (फिर अगर यह मेरा कलाम है तो या तो इतनी मुद्दत तक एक जुमला भी इस अन्दाज़ का न निकला और या अचानक इतनी बड़ी

बात बना ली, यह तो बिल्कुल अ़क्ल के ख़िलाफ़ है) फिर क्या तुम इतनी अ़क्ल नहीं रखते हो।

(जब इसका अल्लाह का कलाम और हक़ होना साबित हो गया और फिर भी तुम मुझसे इसमें रद्दोबदल और संशोधन की दरख़्वास्त करते हो और इसको नहीं मानते तो समझ लो कि) उस शख़्स से ज़्यादा कौन ज़ालिम होगा जो अल्लाह पर झूठ बाँधे (जैसे कि तुम मेरे बारे में कहते हो) या उसकी आयतों को झूठा बतलाये (जैसे कि तुम लोगों ने अपने लिये यही चलन बना रखा है) यक़ीनन ऐसे मुजरिमों को हरगिज़ फ़लाह न होगी (बल्कि हमेशा के अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत का ताल्लुक़ उन लोगों से है जो आख़िरत के इनकारी हैं, इसी वजह से जब उनको आख़िरत के अ़ज़ाब से डराया जाता है तो वे मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर कहने लगते हैं कि अगर तुम सच्चे हो तो यह अ़ज़ाब अभी बुला लो, या यह कि फिर यह अ़ज़ाब जल्द क्यों नहीं आ जाता। जैसे नज़र बिन हारिस ने कहा था "या अल्लाह! अगर यह बात सच्ची है तो हम पर आसमान से पत्थर बरसा दीजिये या और कोई सख़्त अ़ज़ाब भेज दीजिये।"

पहली आयत में इसका यह जवाब दिया गया है कि अल्लाह तआ़ला तो हर चीज़ पर क़ादिर हैं, यह वायदा किया गया अ़ज़ाब फ़ौरन इस वक़्त भी नाज़िल फ़रमा सकते हैं मगर वह अपनी कामिल हिक्मत और लुत्फ़ व करम से ऐसा नहीं करते। ये नादान जो अपने हक़ में बद्दुआ़ करते और मुसीबत तलब करते हैं, अगर अल्लाह तआ़ला इनकी बद्दुआ़ को भी इसी तरह जल्द क़ुबूल फ़रमा लिया करते जिस तरह इनकी अच्छी दुआ़ को अक्सर कर लेते हैं तो ये सब हलाक हो जाते।

इससे मालूम हुआ कि ख़ैर की और अच्छी दुआ़ के मुताल्लिक़ तो हक़ तआ़ला की यह आ़दत है कि अक्सर जल्द क़ुबूल कर लेते हैं, और कभी किसी हिक्मत व मस्लेहत से क़ुबूल न होना इसके ख़िलाफ़ नहीं, मगर जो इनसान कभी अपनी नादानी से और कभी किसी गुस्से और रंज से अपने लिये या अपने बाल-बच्चों के लिये बद्दुआ़ कर बैठता है या आख़िरत के इनकार की बिना पर अ़ज़ाब को खेल समझकर अपने लिये दावत देता है, उसको फ़ौरन क़ुबूल नहीं करते बल्कि मोहलत देते हैं ताकि मुन्किर को ग़ौर व फ़िक्र करके अपने इनकार से बाज़ आने का मौक़ा मिले, और अगर किसी वक़्ती रंज व गुस्से या दिल-तंग होने के सबब बद्दुआ़ कर बैठा है तो उसको इसकी मोहलत मिल जाये कि अपने भले-बुरे को देखे और अन्जाम पर नज़र डालकर उससे बाज़ आ जाये।

इमाम इब्ने जरीर तबरी ने हज़रत क़तादा रह. की रिवायत से और इमाम बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत मुजाहिद रह. की रिवायत से नक़ल किया है कि इस जगह बद्दुआ़ से मुराद यह है कि कई बार कोई इनसान गुस्से की हालत में अपनी औलाद या माल व दौलत के तबाह होने की

बद्दुआ कर बैठता या इन चीज़ों पर लानत के अलफ़ाज़ कह डालता है, अल्लाह तआला अपने लुत्फ़ व करम से ऐसी दुआ क़ुबूल करने में जल्दी नहीं फ़रमाते। इमाम क़ुर्तुबी रह. ने इस जगह एक रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- मैंने अल्लाह जल्ल शानुहू से दुआ की है कि वह किसी दोस्त अज़ीज़ की बद्दुआ उसके दोस्त अज़ीज़ के हक़ में क़ुबूल न फ़रमायें। और शहर बिन हूशब रह. फ़रमाते हैं कि मैंने कुछ किताबों में पढ़ा है कि जो फ़रिश्ते इनसानों की ज़रूरतें पूरी करने पर मुक़र्रर हैं अल्लाह जल्ल शानुहू ने अपने फ़ज़्ल व करम से उनको यह हिदायत कर रखी है कि मेरा बन्दा जो रंज व गुस्से में कुछ बात कहे उसको न लिखो। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इसके बावजूद कई बार कोई क़ुबूलियत की घड़ी आती है जिसमें इनसान की ज़बान से जो बात निकले वह फ़ौरन क़ुबूल हो जाती है, इसलिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपनी औलाद और माल के लिये कभी बद्दुआ न करो, ऐसा न हो कि वह वक़्त दुआ की क़ुबूलियत का हो और यह बद्दुआ फ़ौरन क़ुबूल हो जाये (और तुम्हें बाद में पछताना पड़े)। सही मुस्लिम में यह हदीस हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से ग़ज़वा-ए-बवात के वाक़िए के तहत नक़ल की गयी है।

इन सब रिवायतों का हासिल यह है कि उक्त आयत का असल ख़िताब अगरचे आख़िरत के मुन्किरों और उनके फ़ौरी अ़ज़ाब के मुतालबे से संबन्धित है लेकिन इसके आम होने में वे मुसलमान भी दाख़िल हैं जो किसी रंज व गुस्से की वजह से अपने या अपने माल व औलाद के लिये बद्दुआ कर बैठते हैं, अल्लाह तआला की आदत उसके फ़ज़्ल व करम की वजह से दोनों के साथ यही है कि ऐसी बद्दुआओं को फ़ौरन नाफ़िज़ नहीं फ़रमाते, ताकि इनसान को सोचने और ग़ौर करने का मौक़ा मिल जाये।

दूसरी आयत में तौहीद व आख़िरत के इनकारियों को एक दूसरे आसान और दिल में उतर जाने वाले अन्दाज़ से क़ायल किया गया है, वह यह कि लोग राहत व इत्मीनान की आम हालत में ख़ुदा व आख़िरत के ख़िलाफ़ हुज्जत बाज़ी करते और ग़ैरों को ख़ुदा तआला का शरीक क़रार देते और उनसे अपनी हाजत पूरी करने की उम्मीदें बाँधे रखते हैं, लेकिन जब कोई बड़ी मुसीबत आ पड़ती है उस वक़्त ये लोग ख़ुद भी अल्लाह तआला के सिवा अपनी सारी उम्मीद की जगहों से मायूस होकर सिर्फ़ अल्लाह ही को पुकारते हैं, और लेटे, बैठे, खड़े ग़र्ज़ कि हर हाल में उसी को पुकारने पर मजबूर होते हैं। मगर इसके साथ एहसान फ़रामोशी का यह आलम है कि जब अल्लाह तआला उनकी मुसीबत दूर कर देते हैं तो ख़ुदा तआला से ऐसे आज़ाद व बेफ़िक्र हो जाते हैं कि गोया कभी उसको पुकारा ही न था और उससे कोई हाजत माँगी ही न थी। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआला के साथ हाजत पूरी करने में किसी दूसरे को शरीक करने वाले ख़ुद भी अपने इस अ़क़ीदे के ग़लत व बातिल होने को देख लेते हैं, मगर फिर दुश्मनी व ज़िद की वजह से उसी बातिल अ़क़ीदे पर जमे रहते हैं।

तीसरी आयत में इसी दूसरी आयत के मज़मून की और अधिक वज़ाहत और ताकीद इस

तरह की गयी है कि कोई अल्लाह तआ़ला के ढील देने से यह न समझे कि दुनिया में अ़ज़ाब आ ही नहीं सकता, पिछली क़ौमों की तारीख़ और उनकी सरकशी व नाफ़रमानी की सज़ा में विभिन्न प्रकार के अ़ज़ाब इसी दुनिया में आ चुके हैं। इस उम्मत में अगरचे अल्लाह तआ़ला ने सैयदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इकराम की वजह से यह वायदा फ़रमा लिया है कि आ़म अ़ज़ाब न आयेगा, और अल्लाह तआ़ला के इसी लुत्फ़ व करम ने उन लोगों को ऐसा बेबाक (निडर) कर दिया है कि वे बड़ी जुर्रत से अल्लाह के अ़ज़ाब को दावत देने और उसका मुतालबा करने के लिये तैयार हो जाते हैं, लेकिन याद रहे कि अल्लाह के अ़ज़ाब से बेफ़िक्री उनके लिये भी किसी हाल में सही नहीं, क्योंकि पूरी उम्मत और पूरी दुनिया पर आ़म अ़ज़ाब न भेजने का वायदा ज़रूरी है मगर ख़ास-ख़ास अफ़राद और क़ौमों पर अ़ज़ाब आ जाना अब भी मुम्किन है।

चौथी आयत में फ़रमायाः

ثُمَّ جَعَلْنٰكُمْ خَلٰٓئِفَ فِى الْاَرْضِ مِنْۢ بَعْدِهِمْ لِنَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُوْنَ۝

यानी फिर पिछली क़ौमों को हलाक करने के बाद हमने तुम्हें उनका क़ायम-मक़ाम (जगह लेने वाला) बनाया और ज़मीन की ख़िलाफ़त तुम्हारे हवाले कर दी, मगर यह न समझो कि यह ज़मीन की ख़िलाफ़त तुम्हारे ऐश व आराम के लिये तुम्हें सुपुर्द की गयी है, बल्कि इस इ़ज़्ज़त व सम्मान का असल मक़सद यह है कि तुम्हारा इम्तिहान लिया जाये कि तुम कैसा अ़मल करते हो। पिछली उम्मतों की तारीख़ से मुतास्सिर होकर अपने हालात की इस्लाह करते हो या हुकूमत व दौलत के नशे में बदमस्त हो जाते हो।

इससे मालूम हुआ कि दुनिया की हुकूमत व ताक़त कोई फ़ख़्र व नाज़ की चीज़ नहीं बल्कि एक भारी बोझ है जिसकी बहुत सी ज़िम्मेदारियाँ हैं।

पाँचवीं, छठी, सातवीं और आठवीं चार आयतों में आख़िरत के इनकारियों के एक ग़लत ख़्याल और बेजा फ़रमाईश का रद्द किया गया है। उन लोगों को न ख़ुदा तआ़ला की मारिफ़त (पहचान) हासिल थी और न वही व रिसालत के सिलसिले से वाक़िफ़ थे, अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को भी आ़म इनसानों की तरह जानते थे। क़ुरआने करीम जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये दुनिया को पहुँचा इसके बारे में भी उनका यह ख़्याल था कि यह ख़ुद आपका कलाम और आपका बनाया हुआ है, इसी ख़्याल की बिना पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से यह मुतालबा किया कि यह क़ुरआन तो हमारे एतिक़ादों व नज़रियों के ख़िलाफ़ है। जिन बुतों की हमारे बाप-दादा हमेशा ताज़ीम करते आये और उनको ज़रूरतें पूरी करने वाला मानते आये हैं क़ुरआन उन सब को बातिल और बेकार क़रार देता है, और फिर क़ुरआन हमें यह बताता है कि मरने के बाद दोबारा ज़िन्दा होना और हिसाब किताब देना होगा, ये सब चीज़ें हमारी समझ में नहीं आतीं, हम इनको मानने के लिये तैयार नहीं, इसलिये आप या तो ऐसा करें कि इस क़ुरआन के बजाय कोई दूसरा क़ुरआन बना दें जिसमें ये चीज़ें न हों, या कम से कम इसी में तब्दीली व संशोधन करके इन चीज़ों को निकाल दें।

क़ुरआने करीम ने पहले उनके ग़लत एतिक़ाद को रद्द करते हुए हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत फ़रमाई कि आप उनसे कह दें कि यह न मेरा कलाम है, न अपनी तरफ़ से इसको बदल सकता हूँ, मैं तो सिर्फ़ अल्लाह की वही का ताबेदार हूँ। अगर मैं ज़रा भी इसमें अपने इख़्तियार से कोई तब्दीली करूँ तो सख़्त गुनाह का करने वाला हूँगा और नाफ़रमानी करने वालों पर जो अ़ज़ाब मुक़र्रर है मैं उससे डरता हूँ इसलिये ऐसा नहीं कर सकता।

फिर फ़रमाया कि मैं जो कुछ करता हूँ अल्लाह के फ़रमान के ताबे करता हूँ, अगर अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी व चाहत यह होती कि तुम्हें यह कलाम न सुनाया जाये तो न मैं तुम्हें सुनाता और न अल्लाह तआ़ला तुम्हें इससे बाख़बर करते, और जब अल्लाह तआ़ला को यही मन्ज़ूर है कि तुम्हें यही कलाम सुनवाया जाये तो किसकी मजाल है जो इसमें कोई कमी-बेशी कर सके।

इसके बाद क़ुरआन के अल्लाह की तरफ़ से और उसका कलाम होने को एक स्पष्ट दलील से समझायाः

فَقَدْ لَبِثْتُ فِيكُمْ عُمُرًا مِّنْ قَبْلِهٖ

यानी तुम ज़रा यह भी तो सोचो कि क़ुरआन नाज़िल होने से पहले मैंने तुम्हारे सामने चालीस साल की लम्बी मुद्दत गुज़ारी है, उस मुद्दत में तुमने कभी मुझे शे'र व शायरी या कोई मज़मून व बात लिखते हुए नहीं सुना, अगर मैं अपनी तरफ़ से ऐसा कलाम कह सकता तो कुछ न कुछ इस चालीस साल के अ़रसे में भी कहा होता। इसके अ़लावा इस चालीस साल की लम्बी ज़िन्दगी में तुम मेरे चाल-चलन में सच्चाई और ईमानदारी का तजुर्बा कर चुके हो कि उम्र भर कभी झूठ नहीं बोला, तो आज चालीस साल के बाद आख़िर झूठ बोलने की क्या वजह हो सकती है। इससे आसानी से साबित हुआ कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सच्चे और अमानतदार हैं, क़ुरआन में जो कुछ है वह अल्लाह तआ़ला का कलाम और उसी की तरफ़ से आया हुआ है।

एक अहम फ़ायदा

क़ुरआने करीम की इस दलील ने सिर्फ़ क़ुरआन के हक़ कलाम होने पर ही मुकम्मल सुबूत पेश नहीं किया बल्कि आ़म मामलात में खरे-खोटे और हक़ व बातिल की पहचान का एक उसूल भी बता दिया कि किसी शख़्स को कोई ओ़हदा या पद सुपुर्द करना हो तो उसकी क़ाबलियत और सलाहियत को जाँचने का बेहतरीन उसूल यह है कि उसकी पिछली ज़िन्दगी का जायज़ा लिया जाये, अगर उसमें सच्चाई व अमानतदारी मौजूद है तो आईन्दा भी उसकी उम्मीद की जा सकती है, और अगर पिछली ज़िन्दगी में उसकी दियानत व अमानत और सिद्क़ व सच्चाई की गवाही मौजूद नहीं तो आईन्दा के लिये महज़ उसके कहने और दावे की वजह से उस पर भरोसा करना कोई अ़क़्लमन्दी नहीं। आज ओ़हदों की तक़सीम और ज़िम्मेदारियों के सौंपने में जिस क़द्र ग़लतियाँ और उनकी वजह से बड़ी ख़राबियाँ पैदा हो रही हैं उन सब की असली वजह इसी फ़ितरी उसूल को छोड़कर रस्मी चीज़ों के पीछे पड़ जाना है।

आठवीं आयत में इसी मज़मून की और ज़्यादा ताकीद बयान हुई है जिसमें किसी कलाम को ग़लत तौर पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मन्सूब करने का सख़्त अ़ज़ाब बयान हुआ है।

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَيَقُولُونَ
هٰٓؤُلَآءِ شُفَعَآؤُنَا عِنْدَ اللّٰهِ ۚ قُلْ أَتُنَبِّـُٔونَ اللّٰهَ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي السَّمٰوٰتِ وَلَا فِي الْأَرْضِ ۚ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى
عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿١٨﴾ وَمَا كَانَ النَّاسُ إِلَّآ أُمَّةً وَّاحِدَةً فَاخْتَلَفُوا ۚ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَّبِّكَ لَقُضِيَ
بَيْنَهُمْ فِيمَا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿١٩﴾ وَيَقُولُونَ لَوْلَآ أُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ ۚ فَقُلْ إِنَّمَا الْغَيْبُ
لِلّٰهِ فَانْتَظِرُوا ۚ إِنِّي مَعَكُمْ مِّنَ الْمُنْتَظِرِينَ ﴿٢٠﴾

व यअ्बुदू-न मिन् दूनिल्लाहि मा ला यज़ुर्रुहुम् व ला यन्फ़अुहुम् व यक़ूलू-न हा-उला-इ शु-फ़आउना अ़िन्दल्लाहि, क़ुल् अतुनब्बिऊनल्ला-ह बिमा ला यअ्लमु फ़िस्समावाति व ला फ़िल्अर्ज़ि, सुब्हानहू व तआ़ला अ़म्मा युश्रिकून (18) व मा कानन्नासु इल्ला उम्मतंव्वाहि-दतन् फ़ख़्त-लफ़ू, व लौ ला कलि-मतुन् स-बक़त् मिर्रब्बि-क लक़ुज़ि-य बैनहुम् फ़ीमा फ़ीहि यख़्तलिफ़ून (19) व यक़ूलू-न लौ ला उन्ज़ि-ल अ़लैहि आयतुम्-मिर्रब्बिही फ़क़ुल् इन्नमल्-ग़ैबु लिल्लाहि फ़न्तज़िरू इन्नी म-अ़कुम् मिनल्-मुन्तज़िरीन (20) ✿

और पूजा करते हैं अल्लाह के सिवा उस चीज़ की जो न नुक़सान पहुँचा सके उनको और न नफ़ा, और कहते हैं ये तो हमारे सिफ़ारशी हैं अल्लाह के पास, तू कह क्या तुम अल्लाह को बतलाते हो जो उसको मालूम नहीं आसमानों में और न ज़मीन में, वह पाक है और बरतर है उससे जिसको शरीक करते हैं। (18) और लोग जो हैं सो एक ही उम्मत हैं, पीछे जुदा जुदा हो गये, और अगर न एक बात पहले हो चुकती तेरे रब की तो फ़ैसला हो जाता उनमें जिस बात में कि वे झगड़ा व विवाद कर रहे हैं। (19) और कहते हैं- क्यों न उतरी उस पर एक निशानी उसके रब की तरफ़ से, सो तू कह दे कि ग़ैब की बात अल्लाह ही जाने, सो मुन्तज़िर हो, मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार करता हूँ। (20) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ये लोग अल्लाह (की तौहीद) को छोड़कर ऐसी चीज़ों की इबादत करते हैं जो (इबादत

न करने की सूरत में) न इनको नुक़सान पहुँचा सकें और न (इबादत करने की सूरत में) इनको नफ़ा पहुँचा सकें। और (अपनी तरफ़ से बिना दलील के एक नफ़ा गढ़कर) कहते हैं कि ये (माबूद) अल्लाह के पास हमारे सिफ़ारिश करने वाले हैं (इसलिये हम इनकी इबादत करते हैं)। आप कह दीजिये कि क्या तुम ख़ुदा तआ़ला को ऐसी चीज़ों की ख़बर देते हो जो ख़ुदा तआ़ला को मालूम नहीं, न आसमानों में और न ज़मीन में, (यानी जो चीज़ अल्लाह के इल्म में न हो उसका वजूद और ज़ाहिर होना मुहाल है, तो तुम एक मुहाल और असंभव चीज़ के पीछे लगे हो) वह पाक और बरतर है इन लोगों के शिर्क से।

और (पहले) तमाम आदमी एक ही तरीक़े के थे (यानी सब अल्लाह पर ईमान रखने वाले थे, क्योंकि आदम अ़लैहिस्सलाम तौहीद का अ़क़ीदा लेकर आये, उनकी औलाद भी एक ज़माने तक उन्हीं के अ़क़ीदे और तरीक़े पर रही) फिर (अपनी ग़लत राय से) उन्होंने (यानी उनमें से कुछ ने) झगड़ा और विवाद पैदा कर लिया (यानी तौहीद से फिर गये, मुश्रिक हो गये और ये मुश्रिक लोग अ़ज़ाब के ऐसे हक़दार हैं कि) अगर एक बात न होती जो आपके रब की तरफ़ से पहले तय हो चुकी है (कि पूरा अ़ज़ाब इनको अभी नहीं बल्कि आख़िरत में दिया जायेगा) तो जिस चीज़ में ये लोग झगड़ा कर रहे हैं इनका क़तई फ़ैसला (दुनिया ही में) हो चुका होता। और ये लोग (दुश्मनी व हठधर्मी के तौर पर सैंकड़ों मोजिज़े ज़ाहिर हो जाने के बावजूद ख़ास कर क़ुरआन का मोजिज़ा देखने और इसके जैसा लाने से आ़जिज़ होने के बावजूद) यूँ कहते हैं कि इनके रब की तरफ़ से इन पर (यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर हमारे फ़रमाईशी मोजिज़ों में से) कोई मोजिज़ा क्यों नाज़िल नहीं हुआ। सो आप फ़रमा दीजिये कि (मोजिज़े का असल मक़सद रसूल की सच्चाई व हक़्क़ानियत को साबित करना है, वह तो बहुत से मोजिज़ों के ज़रिये हो चुकी है, अब फ़रमाईशी मोजिज़ों की ज़रूरत तो है नहीं, हाँ संभावना है कि ज़ाहिर हों, इसका ताल्लुक़ इल्मे ग़ैब से है और) ग़ैब की ख़बर सिर्फ़ ख़ुदा को है (मुझको नहीं), सो तुम भी मुन्तज़िर रहो मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार कर रहा हूँ (कि तुम्हारी हर फ़रमाईश पूरी होती है या नहीं। और फ़रमाईशी मोजिज़ों के ज़ाहिर न करने की हिक्मत क़ुरआने करीम में कई जगह बतला दी गयी है कि उनके ज़ाहिर करने के बाद अल्लाह की आ़दत यह है कि अगर फिर भी ईमान न लायें तो सारी क़ौम हलाक कर दी जाती है, अल्लाह तआ़ला को इस उम्मत के लिये ऐसा आ़म अ़ज़ाब मन्ज़ूर नहीं बल्कि इसको क़ियामत तक बाक़ी रखना मुक़द्दर हो चुका है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

काफ़िर व मुस्लिम दो अलग-अलग क़ौमें हैं, नस्ली और वतनी क़ौमियत बेकार है

كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً.

यानी तमाम औलादे आदम शुरू में एक ही उम्मत, एक ही क़ौम अल्लाह को एक मानने वालों की थी, शिर्क व कुफ़्र का नाम नहीं था, फिर तौहीद में इख़्तिलाफ़ (झगड़ा व विवाद) पैदा करके मुख़्तलिफ़ क़ौमें मुख़्तलिफ़ गिरोह बन गये।

यह ज़माना एक उम्मत और सब के मुसलमान होने का कितना था और कब तक रहा? हदीस व तारीख़ की रिवायतों से मालूम होता है कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के ज़माने तक यही सूरत थी, नूह अ़लैहिस्सलाम के ज़माने में शिर्क व कुफ़्र ज़ाहिर हुआ, हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को इसका मुक़ाबला करना पड़ा। (तफ़सीरे मज़हरी)

यह भी ज़ाहिर है कि हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से नूह अ़लैहिस्सलाम तक एक लम्बा ज़माना है, दुनिया में इनसानों की नस्लें और आबादी काफ़ी फैल चुकी थी, उन तमाम इनसानों में रंग व रूप और रहन-सहन के तरीक़े और सामाजिक ज़िन्दगी का इख़्तिलाफ़ (भिन्न और विविध) होना भी एक तबई चीज़ है और अनेक इलाक़ों में फैल जाने के बाद वतन का इख़्तिलाफ़ (क्षेत्रवाद) भी यक़ीनी है, और मुम्किन है कि बोल-चाल में भाषायें भी कुछ अलग हो गयी हों, मगर क़ुरआने करीम ने इस नसबी, क़बाईली, रंग भेदी, वतनी भिन्नता और विविधता को जो फ़ितरी बातें हैं, उम्मत की एकता में ख़लल डालने वाली क़रार नहीं दिया, और इन भिन्नताओं और विविधताओं की वजह से औलादे आदम को अलग-अलग क़ौमें और मुख़्तलिफ़ उम्मतें नहीं बल्कि एक उम्मत क़रार दिया।

हाँ जब ईमान के ख़िलाफ़ कुफ़्र व शिर्क फैला तो काफ़िर व मुश्रिक को अलग क़ौम अलग मिल्लत क़रार देकर 'फ़ख़्त-लफ़ू' (वे अलग-अलग हो गये) इरशाद फ़रमाया। क़ुरआने करीम की आयतः

هُوَالَّذِیْ خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَّمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ.

ने इस मज़मून को और भी ज़्यादा स्पष्ट कर दिया कि अल्लाह की मख़्लूक़ औलादे आदम को विभिन्न और अलग-अलग क़ौमों में बाँटने वाली चीज़ सिर्फ़ ईमान व इस्लाम से विमुख हो जाना है, नसबी वतनी रिश्तों से क़ौमें अलग-अलग नहीं होतीं, भाषा और वतन या रंग व नस्ल की बिना पर इनसानों को अलग-अलग गिरोह क़रार देने की जहालत यह नई हिमाक़त है जो नई रोशनी ने पैदा की है, और आज के बहुत से लिखे-पढ़े उस नेशनलिज़्म के पीछे लग गये जो हज़ारों फ़ितने और फ़साद अपने दामन में रखता है। अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को उससे अपनी पनाह में रखे और बचाये।

وَاِذَآ اَذَقْنَا النَّاسَ رَحْمَةً مِّنْۢ بَعْدِ ضَرَّآءَ مَسَّتْهُمْ اِذَا لَهُمْ مَّكْرٌ فِیْۤ اٰیَاتِنَا ؕ قُلِ اللّٰهُ اَسْرَعُ مَكْرًا ؕ
اِنَّ رُسُلَنَا یَكْتُبُوْنَ مَا تَمْكُرُوْنَ ﴿۲۱﴾ هُوَ الَّذِیْ یُسَیِّرُكُمْ فِی الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ؕ حَتّٰۤی اِذَا كُنْتُمْ فِی
الْفُلْكِ ۚ وَجَرَیْنَ بِهِمْ بِرِیْحٍ طَیِّبَةٍ وَّفَرِحُوْا بِهَا جَآءَتْهَا رِیْحٌ عَاصِفٌ وَّجَآءَهُمُ الْمَوْجُ مِنْ كُلِّ
مَكَانٍ وَّظَنُّوْۤا اَنَّهُمْ اُحِیْطَ بِهِمْ ۙ دَعَوُا اللّٰهَ مُخْلِصِیْنَ لَهُ الدِّیْنَ ۚ لَئِنْ اَنْجَیْتَنَا مِنْ هٰذِهٖ لَنَكُوْنَنَّ مِنَ

الشّٰكِرِيْنَ ۝ فَلَمَّآ اَنْجٰىهُمْ اِذَا هُمْ يَبْغُوْنَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ ۭ يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اِنَّمَا بَغْيُكُمْ عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ ۙ
مَّتَاعَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۡ ثُمَّ اِلَيْنَا مَرْجِعُكُمْ فَنُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ اِنَّمَا مَثَلُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا
كَمَاۗءٍ اَنْزَلْنٰهُ مِنَ السَّمَاۗءِ فَاخْتَلَطَ بِهٖ نَبَاتُ الْاَرْضِ مِمَّا يَاْكُلُ النَّاسُ وَالْاَنْعَامُ ۭ حَتّٰٓي اِذَآ
اَخَذَتِ الْاَرْضُ زُخْرُفَهَا وَازَّيَّنَتْ وَظَنَّ اَهْلُهَآ اَنَّهُمْ قٰدِرُوْنَ عَلَيْهَآ ۙ اَتٰىهَآ اَمْرُنَا لَيْلًا اَوْ نَهَارًا
فَجَعَلْنٰهَا حَصِيْدًا كَاَنْ لَّمْ تَغْنَ بِالْاَمْسِ ۭ كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝

व इज़ा अज़क़्नन्ना-स रह्म-तम् मिम्-बअ़्दि ज़र्रा-अ मस्सत्हुम् इज़ा लहुम् मक्रुन् फ़ी आयातिना, क़ुलिल्लाहु अस्रअ़ु मक्रन्, इन्-न रुसु-लना यक्तुबू-न मा तम्कुरून (21) हुवल्लज़ी युसय्यिरुकुम् फ़िल्बर्रि वल्बह्रि, हत्ता इज़ा कुन्तुम् फ़िल्फ़ुल्कि व जरै-न बिहिम् बिरीहिन् तय्यि-बतिंव्-व फ़रिहू बिहा जाअत्हा रीहुन् अ़ासिफ़ुंव्-व जा-अहुमुल्-मौजु मिन् कुल्लि मकानिंव्-व ज़न्नू अन्नहुम् उहीत्त बिहिम् द-अ़वुल्ला-ह मुख़्लिसी-न लहुद्दी-न, ल-इन् अन्जैतना मिन् हाज़िही ल-नकूनन्-न मिनश्शाकिरीन (22) फ़-लम्मा अन्जाहुम् इज़ा हुम् यब्ग़ू-न फ़िल्अर्ज़ि बिग़ैरिल्-हक़्क़ि, या अय्युहन्नासु इन्नमा बग़्युकुम् अ़ला अन्फ़ुसिकुम् मताअ़ल् हयातिद्दुन्या

और जब चखायें हम लोगों को मज़ा अपनी रहमत का बाद एक तकलीफ़ के जो उनको पहुँची थी, उसी वक़्त बनाने लगें हीले हमारी क़ुदरतों में, कह दे कि अल्लाह सब से जल्द बना सकता है हीले, तहक़ीक़ कि हमारे फ़रिश्ते लिखते हैं तुम्हारी हीले-बाज़ी। (21) वही तुमको फिराता है जंगल और दरिया में, यहाँ तक कि जब तुम बैठे कश्तियों में और लेकर चलें वो लोगों को अच्छी हवा से और ख़ुश हुए उससे, आई कश्तियों पर हवा सख़्त और आई उन पर मौज हर जगह से, और जान लिया उन्होंने कि वे घिर गये, पुकारने लगे अल्लाह को ख़ालिस होकर उसकी बन्दगी में, (कि) अगर तूने बचा लिया हमको इससे तो बेशक हम रहेंगे शुक्रगुज़ार। (22) फिर जब बचा दिया उनको अल्लाह ने, लगे शरारत करने उसी वक़्त ज़मीन में नाहक़ की, सुनो लोगो! तुम्हारी शरारत है तुम्हीं पर, नफ़ा उठा लो दुनिया की ज़िन्दगानी का फिर हमारे पास है तुमको लौटकर आना, फिर

सुम्-म इलैना मर्जिअ़ुकुम् फ़ नुनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् तअ़मलून (23) इन्नमा म-सलुल्-हयातिद्दुन्या कमा-इन् अन्ज़ल्नाहु मिनस्समा-इ फ़ख़्त-ल-त बिही नबातुल्-अर्ज़ि मिम्मा यअ्कुलुन्नासु वल्-अन्आ़मु, हत्ता इज़ा अ-ख़ा-ज़तिल्-अर्-ज़ु ज़ुख़्रु-फ़हा वज़्ज़य्यनत् व ज़न्-न अह्लुहा अन्नहुम् क़ादिरू-न अ़लैहा अताहा अम्रुना लैलन् औ नहारन् फ़-जअ़ल्नाहा हसीदन् क-अल्लम् तग़्-न बिल्अम्सि, कज़ालि-क नुफ़स्सिलुल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यतफ़क्करून (24)	हम बतला देंगे जो कुछ कि तुम करते थे। (23) दुनिया की ज़िन्दगानी की वही मिसाल है जैसे हमने पानी उतारा आसमान से फिर रला-मिला निकला उससे सब्ज़ा ज़मीन का, जो कि खायें आदमी और जानवर, यहाँ तक कि जब पकड़ी ज़मीन ने रौनक़ और हरी-भरी हो गयी और ख़्याल किया ज़मीन वालों ने कि ये हमारे हाथ लगेगी, अचानक पहुँचा उस पर हमारा हुक्म रात को या दिन को, फिर कर डाला उसको काटकर ढेर गोया कल यहाँ न थी आबादी, इसी तरह हम खोल कर बयान करते हैं निशानियों को उन लोगों के सामने जो ग़ौर करते हैं। (24)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जब हम लोगों को इसके बाद कि उन पर कोई मुसीबत पड़ चुकी हो, किसी नेमत का मज़ा चखा देते हैं तो फ़ौरन ही हमारी आयतों के बारे में शरारत करने लगते हैं (यानी उनसे मुँह मोड़ लेते हैं और उनके साथ झुठलाने व मज़ाक़ उड़ाने से पेश आते हैं और एतिराज़ व दुश्मनी के तौर पर दूसरे मोजिज़ों की फ़रमाईश करते हैं, और गुज़री मुसीबत से सबक़ हासिल नहीं करते। पस मालूम हुआ कि उनके एतिराज़ का असल सबब अल्लाह की नाज़िल की हुई आयतों व मोजिज़ों से विमुख होना और बेतवज्जोही बरतना है और यह बेतवज्जोही और मुँह फेरना दुनिया की नेमतों में मस्त हो जाने से पैदा हुआ है। आगे धमकी है कि) आप कह दीजिये कि अल्लाह तआ़ला (इस शरारत की) सज़ा बहुत जल्द देगा। यक़ीनन हमारे भेजे हुए (यानी फ़रिश्ते) तुम्हारी सब शरारतों को लिख रहे हैं (पस अल्लाह के इल्म में महफ़ूज़ होने के अ़लावा दफ़्तर में भी महफ़ूज़ हैं)। वह (अल्लाह) ऐसा है कि तुमको ख़ुश्की और दरिया में लिये-लिये फिरता है (यानी जिन चीज़ों, मशीनों और माध्यमों से तुम चलते फिरते हो वो सब अल्लाह ही के दिये हुए

हैं) यहाँ तक कि (कई बार) जब तुम कश्ती में सवार होते हो और वो (कश्तियाँ) लोगों को मुवाफ़िक़ हवा के ज़रिये से लेकर चलती हैं और वे लोग उन (की रफ़्तार) से ख़ुश होते हैं (उस हालत में अचानक) उन पर (मुख़ालिफ़) हवा का एक झोंका आता है, और हर तरफ़ से उन (लोगों) पर लहरें (उठी चली) आती हैं, और वे समझते हैं कि (बुरी तरह) आ घिरे, (उस वक़्त) ख़ालिस एतिक़ाद करके सब अल्लाह ही को पुकारने लगते हैं, (कि ऐ अल्लाह) अगर आप हमको इस (मुसीबत) से बचा लें तो हम ज़रूर हक़ को पहचानने वाले (तौहीद के इक़रारी) बन जाएँ। (यानी इस वक़्त जैसा एतिक़ाद तौहीद का हो गया है उस पर क़ायम रहें)। फिर जब अल्लाह तआला उनको (उस तबाही से) बचा लेता है तो फ़ौरन ही वे (चारों तरफ़) ज़मीन में नाहक़ की सरकशी करने लगते हैं (यानी वही शिर्क व नाफ़रमानी)।

ऐ लोगो! (सुन लो) यह तुम्हारी नाफ़रमानी और बग़ावत तुम्हारे लिये वबाले (जान) होने वाली है, (बस) दुनियावी ज़िन्दगी में (इससे थोड़ा-सा) फ़ायदा उठा रहे हो, फिर हमारे पास तुम सब को आना है, फिर हम तुम्हारा किया हुआ सब कुछ तुमको जतला देंगे (और उसकी सज़ा देंगे)। बस दुनियावी ज़िन्दगी की हालत तो ऐसी है जैसे हमने आसमान से पानी बरसाया, फिर उस (पानी) से ज़मीन के पेड़-पौधे जिनको आदमी और चौपाये खाते हैं ख़ूब घने होकर निकले, यहाँ तक कि जब वह ज़मीन अपनी रौनक़ का (पूरा हिस्सा) ले चुकी और उसकी ख़ूब ज़ेबाईश हो गई (यानी हरियाली से अच्छी मालूम होने लगी) और उस (ज़मीन) के मालिकों ने समझ लिया कि अब हम इस (के पेड़-पौधों, वनस्पतियों और फलों) पर बिल्कुल क़ाबिज़ हो चुके, तो (ऐसी हालत में) दिन में या रात में हमारी तरफ़ से कोई हादसा आ पड़ा (जैसे पाला या सूखा या और कुछ) सो हमने उसको ऐसा साफ़ कर दिया गोया कल वह (यहाँ) मौजूद ही न थी। (पस उसी पेड़-पौधों, हरियाली और वनस्पति की तरह दुनियावी ज़िन्दगी है) हम इसी तरह आयतों को साफ़-साफ़ बयान करते हैं, ऐसे लोगों के (समझाने के) लिये जो सोचते हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

قُلِ اللّٰهُ اَسْرَعُ مَكْرًا.

अरबी लुग़त के एतिबार से लफ़्ज़ 'मक्र' गोपनीय तदबीर को कहते हैं जो अच्छी भी हो सकती है बुरी भी। उर्दू भाषा के मुहावरे से धोखा न खायें कि लफ़्ज़ 'मक्र' उर्दू में धोखे फ़रेब के लिये इस्तेमाल होता है, जिससे हक़ तआला बरी है।

اِنَّمَا بَغْيُكُمْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ.

यानी तुम्हारे ज़ुल्म का वबाल तुम्हारे ही ऊपर पड़ रहा है। इससे मालूम हुआ कि ज़ुल्म का वबाल यक़ीनी है और आख़िरत से पहले दुनिया में भी भुगतना पड़ता है।

हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला सिला-रहमी और लोगों पर एहसान करने का बदला भी जल्द देता है (कि आख़िरत से पहले

दुनिया में उसकी बरकतें नज़र आने लगती हैं) और ज़ुल्म और रिश्ता तोड़ने का बदला भी जल्द देता है (कि दुनिया में भुगतना पड़ता है)। (तिर्मिज़ी व इब्ने माजा, हसन सनद के साथ)

और एक हदीस में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- तीन गुनाह ऐसे हैं कि उनका वबाल अपने करने वाले ही पर पड़ता है- ज़ुल्म, अ़हद के ख़िलाफ़ करना और धोखा फ़रेब।

(अबुश्शैख़ व इब्ने मर्दूया फ़ित्तफ़सीर, तफ़सीरे मज़हरी)

وَاللّٰهُ يَدْعُوْٓا اِلٰى دَارِ السَّلٰمِ ۚ وَيَهْدِىْ مَنْ يَّشَآءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۞
لِلَّذِيْنَ اَحْسَنُوا الْحُسْنٰى وَزِيَادَةٌ ۚ وَلَا يَرْهَقُ وُجُوْهَهُمْ قَتَرٌ وَّلَا ذِلَّةٌ ۚ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ الْجَنَّةِ ۚ هُمْ فِيْهَا
خٰلِدُوْنَ ۞ وَالَّذِيْنَ كَسَبُوا السَّيِّاٰتِ جَزَآءُ سَيِّئَةٍ ۭ بِمِثْلِهَا ۙ وَتَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ ۚ مَا لَهُمْ مِّنَ اللّٰهِ مِنْ عَاصِمٍ ۚ
كَاَنَّمَآ اُغْشِيَتْ وُجُوْهُهُمْ قِطَعًا مِّنَ الَّيْلِ مُظْلِمًا ۚ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ۞ وَيَوْمَ
نَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا ثُمَّ نَقُوْلُ لِلَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا مَكَانَكُمْ اَنْتُمْ وَشُرَكَآؤُكُمْ ۚ فَزَيَّلْنَا بَيْنَهُمْ وَقَالَ
شُرَكَآؤُهُمْ مَّا كُنْتُمْ اِيَّانَا تَعْبُدُوْنَ ۞ فَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًاۢ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اِنْ كُنَّا عَنْ عِبَادَتِكُمْ
لَغٰفِلِيْنَ ۞ هُنَالِكَ تَبْلُوْا كُلُّ نَفْسٍ مَّآ اَسْلَفَتْ وَرُدُّوْٓا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰىهُمُ الْحَقِّ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا
كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ۞ قُلْ مَنْ يَّرْزُقُكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ اَمَّنْ يَّمْلِكُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَمَنْ ع
يُّخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَمَنْ يُّدَبِّرُ الْاَمْرَ ۚ فَسَيَقُوْلُوْنَ اللّٰهُ ۚ فَقُلْ
اَفَلَا تَتَّقُوْنَ ۞ فَذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمُ الْحَقُّ ۚ فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ ۚ فَاَنّٰى تُصْرَفُوْنَ ۞

वल्लाहु यद्ऊ इला दारिस्सलामि, व यह्दी मंय्यशा-उ इला सिरातिम्-मुस्तक़ीम (25) लिल्लज़ी-न अह्सनुल्-हुस्ना व ज़िया-दतुन्, व ला यर्हक़ु वुजू-हहुम् क़-तरुंव्-व ला ज़िल्लतुन्, उलाइ-क अस्हाबुल्-जन्नति हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (26) वल्लज़ी-न क-सबुस्सय्यिआति जज़ा-उ	और अल्लाह बुलाता है सलामती के घर की तरफ़, और दिखाता है जिसको चाहे रास्ता सीधा। (25) जिन्होंने की भलाई उनके लिये है भलाई और ज़्यादती, और न चढ़ेगी उनके मुँह पर सियाही और न रुस्वाई, वे हैं जन्नत वाले, वे उसी में रहा करेंगे। (26) और जिन्होंने कमाई बुराईयाँ बदला मिले बुराई का उसके बराबर और ढाँक लेंगी उनको रुस्वाई, कोई नहीं

सय्यि-अतिम् बिमिस्लिहा व तर्हक़ुहुम् ज़िल्लतुन्, मा लहुम् मिनल्लाहि मिन् आसिमिन् क-अन्नमा उग़्शियत् वुजूहुहुम् कि-तअ़म् मिनल्लैलि मुज़्लिमन्, उलाइ-क अस्हाबुन्नारि हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (27) व यौ-म नह्शुरुहुम् जमीअ़न् सुम्-म नक़ूलु लिल्लज़ी-न अश्रकू मकानकुम् अन्तुम् व शु-रकाउकुम् फ़-ज़य्यल्ना बैनहुम् व क़ा-ल शु-रकाउहुम् मा कुन्तुम् इय्याना तअ़्बुदून (28) फ़-कफ़ा बिल्लाहि शहीदम् बैनना व बैनकुम् इन् कुन्ना अ़न् अ़िबादतिकुम् लग़ाफ़िलीन (29) हुनालि-क तब्लू कुल्लु नफ़्सिम् मा अस्ल-फ़त् व रुद्दू इलल्लाहि मौलाहुमुल्-हक़्क़ि व ज़ल्-ल अ़न्हुम् मा कानू यफ़्तरून (30) ✿ ●

उनको अल्लाह से बचाने वाला, गोया कि ढाँक दिये गये उनके चेहरे अंधेरी रात के टुकड़ों से, वे हैं दोज़ख़ वाले, वे उसी में रहा करेंगे। (27) और जिस दिन जमा करेंगे हम उन सब को फिर कहेंगे शिर्क करने वालों को- खड़े हो अपनी अपनी जगह तुम और तुम्हारे शरीक, फिर तुड़ा देंगे हम आपस में उनको और कहेंगे उनके शरीक तुम हमारी तो बन्दगी न करते थे। (28) सो अल्लाह काफ़ी है शायद हमारे और तुम्हारे बीच में, हमको तुम्हारी बन्दगी की ख़बर न थी। (29) वहाँ जाँच लेगा हर कोई जो उसने पहले किया था और रुजू करेंगे अल्लाह की तरफ़ जो सच्चा मालिक है उनका, और जाता रहेगा उनके पास से जो झूठ बाँधा करते थे। (30) ✿ ●

क़ुल् मंय्यर्ज़ुक़ुकुम् मिनस्समा-इ वल्अर्ज़ि अम्-मंय्यम्लिकुस्सम्-अ वल्अब्सा-र व मंय्युख़्रिजुल्-हय्-य मिनल्मय्यिति व युख़्रिजुल्-मय्यि-त मिनल्-हय्यि व मंय्युदब्बिरुल्-अम्-र,

तू पूछ कौन रोज़ी देता है तुमको आसमान से और ज़मीन से या कौन मालिक है कान और आँखों का, और कौन निकालता है ज़िन्दे को मुर्दे से और निकालता है मुर्दे को ज़िन्दे से, और कौन तदबीर करता है कामों की, सो बोल

फ़-स-यक़ूलूनल्लाहु फ़क़ुल् अ-फ़ला तत्तक़ून (31) फ़ज़ालिकुमुल्लाहु रब्बुकुमुल्-हक़्क़ु फ़-माज़ा बअ्दल्-हक़्क़ि इल्लज़्ज़लालु फ़-अन्ना तुस्रफ़ून (32)	उठेंगे कि अल्लाह, तो तू कह फिर डरते नहीं हो? (31) सो यह अल्लाह है रब तुम्हारा सच्चा, फिर क्या रह गया सच के बाद मगर भटकना, सो कहाँ से लौटे जाते हो। (32)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अल्लाह तआ़ला दारुल-बक़ा "यानी जन्नत" की तरफ़ तुमको बुलाता है और जिसको चाहता है सही रास्ते (पर चलने) की तौफ़ीक़ दे देता है (जिससे दारुल-बक़ा तक पहुँच हो सकती है। आगे जज़ा व सज़ा का बयान है कि) जिन लोगों ने नेकी की है (यानी ईमान लाये हैं) उनके वास्ते ख़ूबी (यानी जन्नत) है, और उस पर यह भी कि (ख़ुदा का दीदार) भी, और उनके चेहरों पर न (ग़म की) सियाही छायेगी और न ज़िल्लत, ये लोग जन्नत में रहने वाले हैं, वे उसमें हमेशा रहेंगे। और जिन लोगों ने बुरे काम किये (यानी कुफ़्र व शिर्क किया) उनकी बदी की सज़ा उसके बराबर मिलेगी (बदी से ज़्यादा न होगी), और उनको ज़िल्लत घेर लेगी, उनको अल्लाह तआ़ला (के अ़ज़ाब) से कोई न बचा सकेगा (उनके चेहरों की सियाही की ऐसी हालत होगी कि) गोया उनके चेहरों पर अंधेरी रात के परत-के-परत (यानी टुकड़े) लपेट दिए गये हैं। ये लोग दोज़ख़ (में रहने) वाले हैं, वे उसमें हमेशा-हमेशा रहेंगे।

और (वह दिन भी ज़िक्र करने के क़ाबिल है) जिस दिन हम इन सब (मख़्लूक़ात) को (क़ियामत के मैदान में) जमा करेंगे, फिर (उन तमाम मख़्लूक़ात में से) मुश्रिकों से कहेंगे कि तुम और तुम्हारे (तय किये हुए) शरीक (जिनको तुम इबादत में ख़ुदा का शरीक ठहराते थे ज़रा) अपनी जगह ठहरो (ताकि तुमको तुम्हारे अ़क़ीदे की हक़ीक़त मालूम कराई जाये) फिर हम उन (इबादत करने वालों और उनके माबूदों) के बीच में फूट डालेंगे और उनके वे शरीक (उनसे ख़िताब करके) कहेंगे कि तुम हमारी इबादत नहीं करते थे (क्योंकि इबादत से मक़सूद होता है माबूद का राज़ी करना) सो हमारे और तुम्हारे बीच अल्लाह काफ़ी गवाह है कि हमको तुम्हारी इबादत की ख़बर भी न थी (और राज़ी होना तो दरकिनार बल्कि यह तो शैतानों की तालीम थी और वही राज़ी थे। पस इस एतिबार से उनकी इबादत करते थे) उस मक़ाम पर हर शख़्स अपने अगले किए हुए कामों का इम्तिहान कर लेगा (कि आया वास्तव में ये आमाल लाभदायक थे या फ़ायदा न देने वाले। चुनाँचे उन मुश्रिकों पर भी हक़ीक़त खुल जायेगी कि जिनकी शफ़ाअ़त के भरोसे हम उनको पूजते थे उन्होंने तो उल्टी और हमारे ख़िलाफ़ गवाही दी, नफ़े की तो क्या उम्मीद की जाये), और ये लोग अल्लाह (के अ़ज़ाब) की तरफ़ जो उनका असली मालिक है लौटाए जाएँगे, और जो कुछ (माबूद) उन्होंने गढ़ रखे थे सब उनसे ग़ायब (और गुम) हो जाएँगे

(कोई भी तो काम न आयेगा)।

आप (उन मुश्रिकों से) कहिये कि (बतलाओ) वह कौन है जो तुमको आसमान और ज़मीन में रिज़्क़ पहुँचाता है (यानी आसमान से बारिश करता है और ज़मीन से खेती और पेड़-पौधे पैदा करता है, जिससे तुम्हारा रिज़्क़ तैयार होता है) या (यह बतलाओ कि) वह कौन है जो (तुम्हारे) कानों और आँखों पर पूरा इख़्तियार रखता है (कि पैदा भी उसी ने किया, हिफ़ाज़त भी वही करता है, और अगर चाहता है तो उनको बेकार कर देता है) और वह कौन है जो जानदार (चीज़) को बेजान (चीज़ से) निकालता है, और बेजान (चीज़) को जानदार (चीज़) से निकालता है (जैसे वीर्य का नुत्फ़ा और अण्डा कि वह जानदार से निकलता है और उससे जानदार पैदा होता है) और वह कौन है जो तमाम कामों की तदबीर करता है? (उनसे सवाल कीजिये) सो (इन सवालों के जवाब में) वे (ज़रूर यही) कहेंगे (कि इन सब कामों का करने वाला) अल्लाह (है), तो उनसे कहिये कि फिर (शिर्क से) क्यों परहेज़ नहीं करते? सो (जिसके यह काम और गुण बयान हुए) यह है अल्लाह, जो तुम्हारा वास्तविक रब है, (और जब हक़ मामला साबित हो गया) फिर हक़ (मामले) के बाद और क्या रह गया, सिवाय गुमराही के, (यानी जो चीज़ हक़ के विपरीत होगी वह गुमराही है, और तौहीद का हक़ होना साबित हो गया, पस शिर्क यक़ीनन गुमराही है) फिर (हक़ को छोड़कर बातिल की तरफ़) कहाँ फिरे जाते हो?

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में दुनियावी ज़िन्दगी और इसकी नापायेदारी की मिसाल उस खेती से दी गयी थी जो आसमानी पानी से सैराब होकर लहलहाने लगी और हर तरह के फल-फूल निकल आये, और खेती वाले ख़ुश होने लगे कि अब हमारी सारी ज़रूरतें इससे पूरी होंगी, मगर उनकी नाफ़रमानियों की वजह से रात या दिन में हमारे अ़ज़ाब का कोई हादसा आ पड़ा जिसने उसको ऐसा साफ़ कर दिया कि गोया यहाँ कोई चीज़ मौजूद ही न थी। यह तो दुनिया की ज़िन्दगी का हाल था। उसके बाद उक्त आयत में इसके मुक़ाबले में आख़िरत के घर का हाल बयान किया गया है। इरशाद फ़रमायाः

وَاللّٰهُ يَدْعُوْٓا اِلٰى دَارِ السَّلٰمِ

यानी अल्लाह तआ़ला इनसान को दारुस्सलाम की तरफ़ दावत देता है। यानी ऐसे घर की तरफ़ जिसमें हर तरह की सलामती ही सलामती है, न उसमें किसी तरह की कोई तकलीफ़ है न रंज व ग़म, न बीमारी का ख़तरा, न फ़ना होने या हालत बदल जाने की फ़िक्र।

दारुस्सलाम से मुराद जन्नत है। उसको दारुस्सलाम कहने की एक वजह तो यह है कि उसमें हर तरह की सलामती और अमन व सुकून हर शख़्स को हासिल होगा। दूसरी वजह कुछ रिवायतों में है कि जन्नत का नाम दारुस्सलाम इसलिये भी रखा गया है कि उसमें बसने वालों को हमेशा अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तथा फ़रिश्तों की तरफ़ से सलाम पहुँचता रहेगा, बल्कि

लफ़्ज़ सलाम ही जन्नत वालों की परिभाषा होगी, जिसके ज़रिये वे अपनी इच्छाओं का इज़हार करेंगे और फ़रिश्ते उनको उपलब्ध करायेंगे, जैसा कि इससे पहली आयतों में गुज़र चुका है।

हज़रत यहया बिन मुआज़ रह. ने इस आयत की तफ़सीर में अ़वाम को नसीहत के तौर पर ख़िताब करके फ़रमाया कि ऐ आदम के बेटे! तुझको अल्लाह तआ़ला ने दारुस्सलाम की तरफ़ बुलाया, तू अल्लाह की इस दावत की तरफ़ कब और कहाँ से क़दम उठायेगा। ख़ूब समझ ले कि इस दावत को क़ुबूल करने के लिये अगर तूने दुनिया ही से कोशिश शुरू कर दी तो वह कामयाब होगी और तू दारुस्सलाम में पहुँच जायेगा, और अगर तूने इस दुनिया की उम्र को ज़ाया करने के बाद यह चाहा कि क़ब्र में पहुँचकर इस दावत की तरफ़ चलूँगा तो तेरा रास्ता रोक दिया जायेगा, तू वहाँ एक क़दम आगे न बढ़ सकेगा, क्योंकि वह दारुल-अ़मल हीं।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि दारुस्सलाम जन्नत के सात नामों में से एक नाम है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इससे मालूम हुआ कि दुनिया में किसी घर का नाम दारुस्सलाम रखना मुनासिब नहीं, जैसे जन्नत या फ़िरदौस वग़ैरह नाम रखना भी दुरुस्त नहीं।

इसके बाद ज़िक्र हुई आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَيَهْدِىْ مَنْ يَّشَآءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ○

यानी पहुँचा देता है अल्लाह तआ़ला जिसको चाहे सीधे रास्ते पर।

मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से दारुस्सलाम की दावत तो सारे इनसानों के लिये आ़म है और इसी मायने के एतिबार से सब के लिये हिदायत भी आ़म है, लेकिन हिदायत की ख़ास क़िस्म कि सीधे रास्ते पर खड़ा कर दिया जाये और चलने की तौफ़ीक़ दी जाये यह ख़ास-ख़ास ही लोगों को नसीब होता है।

ऊपर बयान हुई दो आयतों में दुनिया के घर और आख़िरत के घर का मुक़ाबला और आख़िरत वालों के हालात का ज़िक्र था, अगली चार आयतों में दोनों पक्षों की जज़ा व सज़ा का बयान है। पहले जन्नत वालों का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया गया कि जिन लोगों ने नेकी इख़्तियार की यानी सब से बड़ी नेकी ईमान और फिर नेक अ़मल पर क़ायम रहे उनको उनके अ़मल का उम्दा और बेहतर बदला मिलेगा, और सिर्फ़ बदला ही नहीं बल्कि बदले से कुछ ज़्यादा भी।

इस आयत की तफ़सीर जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़ुद फ़रमाई वह यह है कि इस जगह अच्छे बदले से मुराद जन्नत है, और 'ज़ियादती' से मुराद हक़ तआ़ला सुब्हानहू की ज़ियारत है जो जन्नत वालों को हासिल होगी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी हज़रत अनस की रिवायत से)

जन्नत की इतनी हक़ीक़त से तो हर मुसलमान वाक़िफ़ है कि वह ऐसी राहतों और नेमतों का ठिकाना है जिनको इनसान इस वक़्त तसव्वुर में नहीं ला सकता और हक़ तआ़ला की ज़ियारत उन सब नेमतों से ऊपर है।

सही मुस्लिम में हज़रत सुहैब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि आप सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब जन्नत वाले जन्नत में दाख़िल हो चुकेंगे तो हक़ तआ़ला उनसे ख़िताब फ़रमायेंगे कि क्या तुम्हें किसी और चीज़ की ज़रूरत है? अगर हो तो बतलाओ हम उसको पूरा करेंगे। जन्नत वाले जवाब देंगे कि आपने हमारे चेहरे रोशन किये, हमें जन्नत में दाख़िल फ़रमाया, जहन्नम से निजात दी, इससे ज़्यादा और क्या चीज़ तलब करें। उस वक़्त बीच से हिजाब (पर्दा) उठा दिया जायेगा और सब जन्नत वाले हक़ तआ़ला का दीदार करेंगे तो मालूम होगा कि जन्नत की सारी नेमतों से बढ़कर यह नेमत थी जिसकी तरफ़ उनका ध्यान भी न गया था, जो रब्बुल-आ़लमीन ने महज़ अपने करम से बिना माँगे अ़ता फ़रमाई। बक़ौल मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहिः

मा नबूदेम व तक़ाज़ा-ए-मा न बूद
लुत्फ़े तू नागुफ़्ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तक़ाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तक़ाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे क़ुबूल फ़रमाता है। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

और फिर उन्हीं जन्नत वालों का यह हाल बयान फ़रमाया कि न उनके चेहरों पर कभी नागवारी या तकलीफ़ व ग़म का असर छायेगा और न ज़िल्लत का असर होगा, जो दुनिया में हर शख़्स को कभी न कभी पेश आया करता है, और आख़िरत में जहन्नम वालों को पेश आयेगा।

इसके मुक़ाबले में जहन्नम वालों का यह हाल बयान फ़रमाया कि जिन लोगों ने बुरे अ़मल किये उनको बुराई का बदला बराबर-सराबर मिलेगा, उसमें कोई ज़्यादती न होगी। उनके चेहरों पर ज़िल्लत छाई होगी, कोई शख़्स उनको अल्लाह के अ़ज़ाब से बचाने वाला न होगा, उनके चेहरों की सियाही का यह हाल होगा कि गोया अंधेरी रात के परत के परत उन पर लपेट दिये गये हैं।

इसके बाद की दो आयतों में एक मुकालमा (गुफ़्तगू और बातचीत) मज़कूर है जो जहन्नम वालों और उनको गुमराह करने वाले बुतों या शैतानों के बीच मेहशर के मैदान में होगा। इरशाद फ़रमाया कि उस दिन हम सब को जमा कर देंगे फिर मुश्रिकों से कहेंगे कि तुम और तुम्हारे तजवीज़ किये (ठहराये) हुए माबूद ज़रा अपनी जगह ठहरो ताकि तुम्हें अपने अ़क़ीदे की हक़ीक़त मालूम हो जाये। उसके बाद उन लोगों में और उनके माबूदों में जो एकता व ताल्लुक़ का रिश्ता दुनिया में पाया जाता था उसको काट दिया जायेगा, जिसका नतीजा यह होगा कि उनके बुत ख़ुद बोल उठेंगे कि तुम हमारी इबादत नहीं किया करते थे और ख़ुदा को गवाह बनाकर कहेंगे कि हमको तुम्हारी मुश्रिकाना इबादत की कुछ ख़बर भी न थी, क्योंकि न हम में एहसास व हरकत है और न उन मामलात व समस्याओं को समझने के क़ाबिल अ़क़्ल व शऊर है।

छठी आयत में दोनों पक्ष यानी जन्नत वालों और जहन्नम वालों का एक साझा हाल बयान फ़रमाया है कि इस मक़ाम यानी मेहशर में हर शख़्स अपने-अपने किये हुए आमाल को आज़मा

लेगा कि वे नफ़ा देने वाले थे या नुक़सान पहुँचाने वाले, और सब के सब अपने असली माबूद के पास पहुँचा दिये जायेंगे, और सारे भरोसे और सहारे जो दुनिया में इनसान ढूँढता है ख़त्म कर दिये जायेंगे, और मुश्रिक लोग जिन बुतों को अपना मददगार और सिफ़ारिशी समझा करते थे वे सब ग़ायब हो जायेंगे।

सातवीं और आठवीं आयत में क़ुरआने हकीम ने अपने हिक्मत भरे और मुरब्बियाना तरीक़े पर मुश्रिकों की आँखें खोलने के लिये उनसे कुछ सवालात क़ायम किये हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया कि उन लोगों से कहिये कि आसमान और ज़मीन में से तुम्हें रिज़्क़ कौन देता है? या कान और आँखों का कौन मालिक है कि जब चाहे उनमें सुनने और देखने की ताक़त पैदा कर दे और जब चाहे छीन ले, और कौन है जो मुर्दा चीज़ में से ज़िन्दा को पैदा कर देता है जैसे मिट्टी से घास और दरख़्त, या नुत्फ़े से इनसान और जानवर या अण्डे से परिन्दा, और ज़िन्दा से मुर्दा को पैदा कर देता है जैसे इनसान और जानवर से बेजान नुत्फ़ा, और कौन है जो तमाम कायनात के कामों की तदबीर (व्यवस्था) करता है?

फिर फ़रमाया कि जब आप उन लोगों से यह सवाल करेंगे तो सब के सब यही कहेंगे कि इन चीज़ों को पैदा करने वाला एक अल्लाह है। तो आप उनसे फ़रमा दें कि फिर तुम क्यों ख़ुदा से नहीं डरते? जब इन तमाम चीज़ों का पैदा करने वाला और बाक़ी रखने वाला और इन सब के काम में लगाने का इन्तिज़ाम करने वाला सिर्फ़ एक अल्लाह ही है तो फिर इबादत व इताअ़त का हक़दार उसके सिवा किसी को क्यों बनाते हो?

आख़िरी आयत में फ़रमायाः

فَذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمُ الْحَقُّ، فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ.

यानी यही है वह ज़ात जिसकी कमाल वाली सिफ़ात का ज़िक्र अभी-अभी गुज़रा है, फिर हक़ के बाद गुमराही के सिवा क्या है। यानी जब अल्लाह तआ़ला का सच्चा माबूद होना साबित हो गया तो फिर इस हक़ को छोड़कर दूसरों की तरफ़ रुख़ फेरना किस क़द्र नामाक़ूल बात है।

इस आयत के मसाईल व फ़वाईद में से यह बात याद रखने की है कि आयत मेंः

مَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ

से यह साबित होता है कि हक़ और गुमराही के बीच कोई वास्ता नहीं, जो हक़ नहीं होगा वह गुमराही में दाख़िल होगा। ऐसा कोई काम नहीं हो सकता जो न हक़ हो न गुमराही, और यह भी नहीं हो सकता कि दो एक दूसरे के विपरीत चीज़ें हक़ हों। तमाम बुनियादी अ़क़ीदों में यह क़ायदा उम्मत की अक्सरियत के नज़दीक मुसल्लम है, अलबत्ता जुज़ई मसाईल और फ़िक़्ही जुज़ईयात में उलेमा का मतभेद है, कुछ हज़रात के नज़दीक इज्तिहादी मसाईल में दोनों जानिबों को हक़ कहा जायेगा और जमहूर (उम्मत के उलेमा की अक्सरियत) इस पर सहमत हैं कि इज्तिहादी मसाईल में विपरीत जानिब और राय को गुमराही नहीं कह सकते।

كَذٰلِكَ حَقَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ عَلَى الَّذِيْنَ فَسَقُوْٓا اَنَّهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝
قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَآئِكُمْ مَّنْ يَّبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيْدُهٗ ۭ قُلِ اللّٰهُ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيْدُهٗ فَاَنّٰى
تُؤْفَكُوْنَ ۝ قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَآئِكُمْ مَّنْ يَّهْدِيْٓ اِلَى الْحَقِّ ۭ قُلِ اللّٰهُ يَهْدِيْ لِلْحَقِّ ۭ اَفَمَنْ يَّهْدِيْٓ اِلَى
الْحَقِّ اَحَقُّ اَنْ يُّتَّبَعَ اَمَّنْ لَّا يَهِدِّيْٓ اِلَّآ اَنْ يُّهْدٰى ۚ فَمَا لَكُمْ ۣ كَيْفَ تَحْكُمُوْنَ ۝ وَمَا يَتَّبِعُ اَكْثَرُهُمْ اِلَّا
ظَنًّا ۭ اِنَّ الظَّنَّ لَا يُغْنِيْ مِنَ الْحَقِّ شَيْــــًٔا ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِمَا يَفْعَلُوْنَ ۝

कज़ालि-क हक्कत् कलि-मतु रब्बि-क अलल्लज़ी-न फ़-सक़ू अन्नहुम् ला युअ्मिनून (33) कुल् हल् मिन् शु-रकाइकुम् मंय्यब्दउल्-ख़ल्-क़ सुम्-म युईदुहू, कुलिल्लाहु यब्दउल्-ख़ल्-क़ सुम्-म युईदुहू फ़-अन्ना तुअ्फ़कून (34) कुल् हल् मिन् शु-रकाइकुम् मंय्यह्दी इलल्-हक्कि, कुलिल्लाहु यह्दी लिल्हक्कि, अ-फ़मंय्यह्दी इलल्हक्कि अ-हक्क़ु अंय्युत्त-ब-अ़ अम्-मल्ला यहिद्दी इल्ला अंय्युह्दा फ़मा लकुम्, कै-फ़ तह्कुमून (35) व मा यत्तबिअ़ु अक्सरुहुम् इल्ला ज़न्नन्, इन्नज़्ज़न्-न ला युग़्नी मिनल्-हक्कि शैअन्, इन्नल्ला-ह अ़लीमुम्-बिमा यफ़अ़लून (36)	इसी तरह ठीक आई बात तेरे रब की उन नाफ़रमानों पर कि ये ईमान न लायेंगे। (33) पूछ कोई है तुम्हारे शरीकों में जो पैदा करे मख़्लूक को फिर दोबारा ज़िन्दा करे? तू कह अल्लाह पहले पैदा करता है फेर इसको दोहरायेगा, सो कहाँ से पलटे जाते हो? (34) पूछ कोई है तुम्हारे शरीकों में जो राह बतलाये सही? तू कह अल्लाह राह बतलाता है सही, तो अब जो कोई राह बतलाये सही उसकी बात माननी चाहिए या उसकी जो ख़ुद ही न पाये राह मगर जब कोई और उसको राह बतलाये, सो क्या हो गया तुमको, कैसा इन्साफ़ करते हो? (35) और वे अक्सर चलते हैं महज़ अटकल पर, सो अटकल काम नहीं देती हक़ बात में कुछ भी, अल्लाह को ख़ूब मालूम है जो कुछ वे करते हैं। (36)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(आगे तसल्ली है रसूलुल्लाह को कि आप उन लोगों की बातिल-परस्ती पर ग़मगीन हुआ

करते थे। इरशाद है कि जिस तरह ये लोग ईमान नहीं लाते) इसी तरह आपके रब की यह (तक़दीरी) बात कि ये ईमान न लाएँगे तमाम नाफ़रमान (सरकश) लोगों के हक़ में साबित हो चुकी है (फिर आप क्यों रंजीदा हों। और) आप (उनसे यूँ भी) कहिये कि क्या तुम्हारे (बनाये हुए) शरीकों में (चाहे वे अ़क़्ल वाले हों जैसे शयातीन या ग़ैर-अ़क़्ल वाले जैसे बुत) कोई ऐसा है जो पहली बार भी मख़्लूक़ को पैदा करे, फिर (क़ियामत में) दोबारा भी पैदा करे। (अगर वे इस वजह से कि इसमें तौहीन है उन शरीकों की, जवाब में संकोच करें तो) आप कह दीजिये कि अल्लाह तआ़ला ही पहली बार भी पैदा करता है, फिर वही दोबारा भी पैदा करेगा, सो (इसकी तहक़ीक़ के बाद भी) फिर तुम (हक़ से) कहाँ फिरे जाते हो। (और) आप (उनसे यूँ भी) कहिये कि क्या तुम्हारे (तजवीज़ किये हुए अ़क़्ल वाले) शरीकों (जैसे शैतानों) में कोई ऐसा है कि हक़ (मामले) का रास्ता बतलाता हो? आप कह दीजिये कि अल्लाह ही हक़ (मामले) का रास्ता (भी) बतलाता है। (चुनाँचे उसने अ़क़्ल दी, अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम भेजे, बख़िलाफ़ शैतानों के कि अव्वल तो वे इन कामों पर क़ादिर नहीं और सिर्फ़ तालीम देना और सिखाना जिसकी क़ुदरत उनको दी गयी है वे उसको गुमराह और बेराह करने में ख़र्च करते हैं) तो फिर (उनसे कहिये कि यह बतलाओ कि) आया जो शख़्स हक़ (मामले) का रास्ता बतलाता हो वह ज़्यादा पैरवी के लायक़ है या वह शख़्स जिसको बिना बतलाये ख़ुद ही रास्ता न सूझे। (और उससे भी बढ़कर यह कि समझाने पर भी उस पर न चले जैसे शयातीन। फिर जब ये पैरवी के क़ाबिल न हों तो इबादत के लायक़ तो कब हो सकते हैं) तो (ऐ मुश्रिको!) तुमको क्या हो गया, तुम कैसी तजवीज़ें करते हो (कि तौहीद को छोड़कर शिर्क को इख़्तियार करते हो) और (तमाशा यह है कि अपनी इस तजवीज़ और अ़क़ीदे पर ये लोग कोई दलील नहीं रखते बल्कि) इनमें से अक्सर लोग सिर्फ़ बेअसल ख़्यालात पर चल रहे हैं (और) यक़ीनन बेअसल ख़्यालात हक़ (मामले के साबित करने) में ज़रा भी मुफ़ीद नहीं। (ख़ैर) ये जो कुछ कर रहे हैं यक़ीनन अल्लाह को सब ख़बर है (वक़्त पर सज़ा देगा)।

وَمَا كَانَ هٰذَا الْقُرْاٰنُ اَنْ يُّفْتَرٰى مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ تَصْدِيْقَ الَّذِيْ بَيْنَ
يَدَيْهِ وَتَفْصِيْلَ الْكِتٰبِ لَا رَيْبَ فِيْهِ مِنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ اَمْ يَقُوْلُوْنَ افْتَرٰىهُ ۭ قُلْ فَاْتُوْا بِسُوْرَةٍ
مِّثْلِهٖ وَادْعُوْا مَنِ اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝ بَلْ كَذَّبُوْا بِمَا لَمْ يُحِيْطُوْا بِعِلْمِهٖ
وَلَمَّا يَاْتِهِمْ تَاْوِيْلُهٗ ۭ كَذٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الظّٰلِمِيْنَ ۝ وَ
مِنْهُمْ مَّنْ يُّؤْمِنُ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ لَّا يُؤْمِنُ بِهٖ ۭ وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِالْمُفْسِدِيْنَ ۝ ع ٣ ٨

व मा का-न हाज़ल्-क़ुरआनु अंय्युफ़्तरा मिन् दूनिल्लाहि व	और वह नहीं यह क़ुरआन कि कोई बना ले अल्लाह के सिवा, और लेकिन तस्दीक़

लाकिन् तस्दीक़ल्लज़ी बै-न यदैहि व तफ़्सीलल्-किताबि ला रै-ब फ़ीहि मिर्रब्बिल्-आ़लमीन (37) अम् यक़ूलूनफ़्तराहु, क़ुल् फ़अ्तू बिसूरतिम्-मिस्लिही वद्अ़ू मनिस्त-तअ़्तुम् मिन् दूनिल्लाहि इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (38) बल् कज़्ज़बू बिमा लम् युहीतू बिअ़िल्मिही व लम्मा यअ्तिहिम् तअ्वीलुहू, कज़ालि-क कज़्ज़बल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् फ़न्ज़ुर् कै-फ़ का-न आ़क़ि-बतुज़्ज़ालिमीन (39) व मिन्हुम् मंय्युअ्मिनु बिही व मिन्हुम् मल्ला युअ्मिनु बिही, व रब्बु-क अअ़्लमु बिल्मुफ़्सिदीन (40) ✪	करता है पहले कलाम की और बयान करता है उन चीज़ों को जो तुम पर लिखी गईं जिसमें कोई शुब्हा नहीं, परवर्दिगारे आलम की तरफ़ से। (37) क्या लोग कहते हैं कि यह बना लाया है, तू कह दे तुम ले आओ एक ही सूरत ऐसी और बुलाओ जिसको बुला सको अल्लाह के सिवा, अगर तुम सच्चे हो। (38) बात यह है कि झुठलाने लगे जिसके समझने पर उन्होंने क़ाबू न पाया और अभी आई नहीं उसकी हक़ीक़त, इसी तरह झुठलाते रहे इनसे पहले, सो देख ले कैसा हुआ अन्जाम गुनाहगारों का। (39) और बाज़े उनमें यक़ीन करेंगे क़ुरआन का और बाज़े यक़ीन न करेंगे, और तेरा रब ख़ूब जानता है शरारत वालों को। (40) ✪

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और यह क़ुरआन अल्लाह के सिवा किसी और का गढ़ा (बनाया) हुआ नहीं है (कि उनसे सादिर हुआ हो) बल्कि यह तो उन (किताबों) की तस्दीक़ (करने वाला) है जो इससे पहले (नाज़िल) हो चुकी हैं। और किताब (यानी अल्लाह के ज़रूरी अहकाम) की तफ़सील (बयान करने वाला) है, (और) इसमें कोई (बात) शक (व शुब्हे की) नहीं (और वह) रब्बुल-आ़लमीन की तरफ़ से (नाज़िल हुआ) है। क्या (बावजूद इसके गढ़ा हुआ न होने के) ये लोग (यूँ) कहते हैं कि (नऊज़ु बिल्लाह) आपने इसको गढ़ लिया है, आप (इनसे) कह दीजिये कि (अच्छा) तो फिर तुम (भी तो अ़रबी हो और आला दर्जे के अ़रबी भाषा के माहिर भी हो) इसके जैसी एक ही सूरः (बना) लाओ, और (अकेले नहीं बल्कि) जिन-जिनको अल्लाह के सिवा बुला सको (उनको मदद के लिये) बुला लो, अगर तुम सच्चे हो (कि नऊज़ु बिल्लाह मैंने इसको तैयार कर लिया है तो तुम भी बनाकर लाओ, मगर मुश्किल तो यह है कि इस क़िस्म की दलीलों से फ़ायदा उसी को होता है जो समझना भी चाहे, सो इन्होंने तो कभी समझना ही न चाहा) बल्कि ऐसी चीज़ को

झुठलाने लगे जिसके (सही और ग़लत होने) को अपने इल्मी घेरे में नहीं लाये "यानी इन्हें खुद उसके बारे में कुछ इल्म नहीं" (और उसकी हालत समझने का इरादा नहीं किया तो ऐसों से क्या समझने की उम्मीद हो सकती है)। और (उनकी इस बेफ़िक्री और बेपरवाही की वजह यह है कि) अभी उनको इस (क़ुरआन के झुठलाने) का आख़िरी नतीजा नहीं मिला (यानी अ़ज़ाब नहीं आया, वरना सारा नशा उतर जाता और आँखें खुल जातीं, और हक़ व बातिल अलग-अलग हो जाता, लेकिन आख़िर कभी तो वह नतीजा पेश आने वाला है ही, अगरचे उस वक़्त ईमान लाभदायक न हो। चुनाँचे) जो (काफ़िर) लोग (इनसे पहले) हुए हैं इसी तरह (जैसे बिना तहक़ीक़ के ये झुठला रहे हैं) उन्होंने भी (हक़ को) झुठलाया था, सो देख लीजिये कि उन ज़ालिमों का अन्जाम कैसा (बुरा) हुआ (इसी तरह इनका होगा)। और (हम जो उनका बुरा अन्जाम बतला रहे हैं सो सब मुराद नहीं क्योंकि) इनमें से बाज़े ऐसे हैं जो इस (क़ुरआन) पर ईमान ले आएँगे और बाज़े ऐसे हैं कि इस पर ईमान न लाएँगे, और आपका रब (उन) फ़सादियों (शरारत करने वालों) को ख़ूब जानता है (जो ईमान न लायेंगे। पस ख़ास उनको तयशुदा वक़्त पर सज़ा देगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

وَلَمَّا يَأْتِهِمْ تَأْوِيلُهُ.

तावील से मुराद इस जगह नतीजा और अन्जाम है। मतलब यह है कि उन लोगों ने अपनी ग़फ़लत और बेफ़िक्री से क़ुरआन में ग़ौर नहीं किया और इसको झुठलाने के बुरे अन्जाम को नहीं पहचाना, इसलिये झुठलाने में लगे हुए हैं, मगर मौत के बाद ही सब तथ्य खुल जायेंगे और अपने किये का बुरा अन्जाम हमेशा के लिये गले का हार हो जायेगा।

وَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقُلْ لِّيْ عَمَلِيْ وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ ۚ اَنْتُمْ بَرِيْٓـُٔوْنَ مِمَّآ اَعْمَلُ
وَاَنَا بَرِيْٓءٌ مِّمَّا تَعْمَلُوْنَ ۝ وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّسْتَمِعُوْنَ اِلَيْكَ ۭ اَفَاَنْتَ تُسْمِعُ الصُّمَّ وَلَوْ كَانُوْا لَا يَعْقِلُوْنَ ۝
وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّنْظُرُ اِلَيْكَ ۭ اَفَاَنْتَ تَهْدِي الْعُمْيَ وَلَوْ كَانُوْا لَا يُبْصِرُوْنَ ۝ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ النَّاسَ
شَيْـًٔا وَّلٰكِنَّ النَّاسَ اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ ۝

व इन् कज़्ज़बू-क फ़क़ुल्-ली अ़-मली व लकुम् अ-मलुकुम् अन्तुम् बरीऊ-न मिम्मा अअ़्मलु व अ-न बरीउम्-मिम्मा तअ़्मलून (41) व मिन्हुम् मंय्यस्तमिअ़ू-न इलै-क,	और अगर तुझको झुठलायें तो कह- मेरे लिये मेरा काम और तुम्हारे लिये तुम्हारा काम, तुम पर ज़िम्मा नहीं मेरे काम का और मुझ पर ज़िम्मा नहीं जो तुम करते हो। (41) और बाज़े उनमें कान रखते हैं तेरी तरफ़, क्या तू सुनायेगा बहरों को

अ-फ़अन्-त तुस्मिअुस्सुम्-म व लौ कानू ला यअ्क़िलून (42) व मिन्हुम् मंय्यन्ज़ुरु इलै-क, अ-फ़अन्-त तह्दिल्-अुम्-य व लौ कानू ला युब्सिरून (43) इन्नल्ला-ह ला यज़्लिमुन्ना-स शैअंव्-व लाकिन्नन्ना-स अन्फ़ु-सहुम् यज़्लिमून (44)	अगरचे उनको समझ न हो। (42) और बाज़े उनमें निगाह करते हैं तेरी तरफ़, क्या तू राह दिखायेगा अंधों को अगरचे वे सूझ न रखते हों। (43) अल्लाह ज़ुल्म नहीं करता लोगों पर कुछ भी लेकिन लोग अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करते हैं। (44)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर इन दलीलों के बाद भी आपको झुठलाते रहे तो (बस आख़िरी बात यह) कह दीजिए कि (अच्छा साहिब) मेरा किया हुआ मुझको (मिलेगा) और तुम्हारा किया हुआ तुमको (मिलेगा)। तुम मेरे किए हुए के जवाबदेह नहीं हो, और मैं तुम्हारे किए हुए का जवाबदेह नहीं हूँ (जिस तरीक़े पर चाहो रहो, ख़ुद मालूम हो जायेगा)। और (आप उनके ईमान की उम्मीद छोड़ दीजिए क्योंकि) उनमें (अगरचे) बाज़ ऐसे भी हैं जो (ज़ाहिर में) आपकी तरफ़ कान लगा-लगा बैठते हैं (लेकिन दिल में इरादा ईमान और हक़ तलब करने का नहीं है, पस इस एतिबार से उनका सुनना न सुनना बराबर है। पस उनकी हालत बहरों की सी हुई तो) क्या आप बहरों को सुना (कर उनके मानने का इन्तिज़ार कर) रहे हैं, चाहे उनको समझ भी न हो (हाँ अगर समझ होती तो बहरेपन में भी कुछ काम चल सकता)। और (इसी तरह) उनमें बाज़ ऐसे हैं कि (ज़ाहिर में) आपको (मोजिज़ों व कमालात के साथ) देख रहे हैं (लेकिन हक़ तलब करने वाले न होने से उनकी हालत अंधों के जैसी है, तो) फिर क्या आप अंधों को रास्ता दिखलाना चाहते हैं चाहे उनको बसीरत "यानी अक़्ल व समझ" भी न हो (हाँ अगर बसीरत होती तो अंधेपन में भी कुछ काम चल सकता। और उनकी अक़्लें जो इस तरह तबाह हो गयीं तो) यह यक़ीनी बात है कि अल्लाह तआ़ला लोगों पर ज़ुल्म नहीं करता (कि उनको हिदायत की क़ाबलियत न दे और फिर पकड़ फ़रमाये) लेकिन लोग ख़ुद ही अपने आपको तबाह करते हैं (कि ख़ुदा की दी हुई क़ाबलियत को बरबाद कर देते हैं और उससे काम नहीं लेते)।

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ كَاَنْ لَّمْ يَلْبَثُوْٓا اِلَّا سَاعَةً مِّنَ النَّهَارِ
يَتَعَارَفُوْنَ بَيْنَهُمْ ؕ قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِلِقَآءِ اللّٰهِ وَمَا كَانُوْا مُهْتَدِيْنَ ۝ وَاِمَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ
الَّذِيْ نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَاِلَيْنَا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ اللّٰهُ شَهِيْدٌ عَلٰى مَا يَفْعَلُوْنَ ۝ وَلِكُلِّ اُمَّةٍ

رَسُوْلٌ ۚ فَاِذَا جَآءَ رَسُوْلُهُمْ قُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿٤٧﴾ وَيَقُوْلُوْنَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ
اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿٤٨﴾ قُلْ لَّآ اَمْلِكُ لِنَفْسِيْ ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا اِلَّا مَا شَآءَ اللّٰهُ ۗ لِكُلِّ اُمَّةٍ اَجَلٌ ۚ اِذَا جَآءَ
اَجَلُهُمْ فَلَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ ﴿٤٩﴾ قُلْ اَرَءَيْتُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُهٗ بَيَاتًا اَوْ نَهَارًا مَّا
ذَا يَسْتَعْجِلُ مِنْهُ الْمُجْرِمُوْنَ ﴿٥٠﴾ اَثُمَّ اِذَا مَا وَقَعَ اٰمَنْتُمْ بِهٖ ۗ آٰلْـٰٔنَ وَقَدْ كُنْتُمْ بِهٖ تَسْتَعْجِلُوْنَ ﴿٥١﴾
ثُمَّ قِيْلَ لِلَّذِيْنَ ظَلَمُوْا ذُوْقُوْا عَذَابَ الْخُلْدِ ۚ هَلْ تُجْزَوْنَ اِلَّا بِمَا كُنْتُمْ تَكْسِبُوْنَ ﴿٥٢﴾ وَيَسْتَنْۢبِـُٔوْنَكَ
اَحَقٌّ هُوَ ۗ قُلْ اِيْ وَرَبِّيْٓ اِنَّهٗ لَحَقٌّ ۚ وَمَآ اَنْتُمْ بِمُعْجِزِيْنَ ﴿٥٣﴾ وَلَوْ اَنَّ لِكُلِّ نَفْسٍ ظَلَمَتْ مَا فِي
الْاَرْضِ لَافْتَدَتْ بِهٖ ۗ وَاَسَرُّوا النَّدَامَةَ لَمَّا رَاَوُا الْعَذَابَ ۚ وَقُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا
يُظْلَمُوْنَ ﴿٥٤﴾ اَلَآ اِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۗ اَلَآ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَّلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا
يَعْلَمُوْنَ ﴿٥٥﴾ هُوَ يُحْيٖ وَيُمِيْتُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ﴿٥٦﴾

व यौ-म यह्शुरुहुम् क-अल्लम् यल्बसू इल्ला सा-अ़तम् मिनन्नहारि य-तआ़रफ़ू-न बैनहुम्. क़द् ख़ासिरल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिलिक़ा-इल्लाहि व मा कानू मुह्तदीन (45) व इम्मा नुरियन्न-क बअ़्ज़ल्लज़ी नअ़िदुहुम् औ न-तवफ़्फ़-यन्न-क फ़-इलैना मर्जिअ़ुहुम् सुम्मल्लाहु शहीदुन् अ़ला मा यफ़्अ़लून (46) व लिकुल्लि उम्मतिर्रसूलुन् फ़-इज़ा जा-अ रसूलुहुम् क़ुज़ि-य बैनहुम् बिल्क़िस्ति व हुम् ला युज़्लमून (47) व यक़ूलू-न मता हाज़ल्-वअ़्दु इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (48) क़ुल् ला

और जिस दिन उनको जमा करेगा गोया वे न रहे थे मगर एक घड़ी दिन, एक दूसरे को पहचानेंगे, बेशक ख़सारे में पड़े जिन्होंने झुठलाया अल्लाह से मिलने को और न आये वे राह पर। (45) और अगर हम दिखायेंगे तुझको कोई चीज़ उन वायदों में से जो किये हैं हमने उनसे या वफ़ात दें तुझको सो हमारी ही तरफ़ है उनको लौटना, फिर अल्लाह शाहिद (गवाह और देखने वाला) है उन कामों पर जो वे करते हैं। (46) और हर फ़िर्क़े का एक रसूल है, फिर जब पहुँचा उनके पास उनका रसूल फ़ैसला हुआ उनमें इन्साफ़ से और उन पर ज़ुल्म नहीं होता। (47) और कहते हैं कब है यह वायदा अगर तुम सच्चे हो। (48) तू कह मैं मालिक नहीं अपने वास्ते बुरे का न भले

अम्लिकु लिनफ़्सी ज़र्रंव्-व ला नफ़्अ़न् इल्ला मा शा-अल्लाहु, लिकुल्लि उम्मतिन् अ-जलुन्, इज़ा जा-अ अ-जलुहुम् फ़ला यस्तअ्ख़िरू-न सा-अ़तंव्-व ला यस्तक़्दिमून (49) क़ुल् अ-रऐतुम् इन् अताकुम् अ़ज़ाबुहू बयातन् औ नहारम् माज़ा यस्तअ्जिलु मिन्हुल्-मुज्रिमून (50) अ-सुम्-म इज़ा मा व-क़-अ आमन्तुम् बिही, आल्आ-न व क़द् कुन्तुम् बिही तस्तअ्जिलून (51) सुम्-म क़ी-ल लिल्लज़ी-न ज़-लमू ज़ूक़ू अ़ज़ाबल्-ख़ुल्दि हल् तुज्ज़ौ-न इल्ला बिमा कुन्तुम् तक्सिबून (52) व यस्तम्बिऊन-क अ-हक़्क़ुन् हु-व, क़ुल् ई व रब्बी इन्नहू ल-हक़्क़ुन्, व मा अन्तुम् बिमुअ्जिज़ीन (53) ✿ व लौ अन्-न लिकुल्लि नफ़्सिन् ज़-लमत् मा फ़िल्अर्ज़ि लफ़्त-दत् बिही, व अ-सर्रुन्नदाम-त लम्मा र-अवुल्-अ़ज़ा-ब व क़ुज़ि-य बैनहुम् बिल्क़िस्ति व हुम् ला युज़्लमून (54) अला इन्-न लिल्लाहि मा फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि, अला	का मगर जो चाहे अल्लाह, हर फ़िर्क़े का एक वायदा है, जब आ पहुँचेगा उनका वायदा फिर न पीछे सरक सकेंगे एक घड़ी और न आगे सरक सकेंगे। (49) तू कह- भला देखो तो अगर आ पहुँचे तुम पर उसका अ़ज़ाब रातों रात या दिन को तो क्या कर लेंगे उससे पहले गुनाहगार। (50) क्या फिर जब अ़ज़ाब आ चुकेगा तब उस पर यक़ीन करोगे? अब क़ायल हुए और तुम इसी का तक़ाज़ा करते थे। (51) फिर कहेंगे गुनाहगारों को चखते रहो अ़ज़ाब हमेशगी का, वही बदला मिलता है जो कुछ कमाते थे। (52) और तुझसे ख़बर पूछते हैं क्या सच है यह बात? तू कह अलबत्ता क़सम मेरे रब की यह सच है, और तुम थका न सकोगे। (53) ✿ और अगर हो हर गुनाहगार शख़्स के पास जितना कुछ है ज़मीन में तो यक़ीनन डाले अपने बदले में, और छुपे-छुपे पछतायेंगे जब देखेंगे अ़ज़ाब, और उनमें फ़ैसला होगा इन्साफ़ से, और उन पर ज़ुल्म न होगा। (54) सुन रखो! अल्लाह का है जो कुछ है आसमान और ज़मीन

इन्-न वअ्दल्लाहि हक़्कुंव्-व लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यअ्लमून (55) हु-व युह़्यी व युमीतु व इलैहि तुर्जअ़ून (56)	में। सुन रखो! अल्लाह का वायदा सच है पर बहुत लोग नहीं जानते। (55) वही जिलाता है और मारता है और उसी की तरफ़ फिर जाओगे। (56)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उनको वह दिन याद दिलाईये जिसमें अल्लाह तआ़ला उनको इस अन्दाज़ से जमा करेगा कि (वे समझेंगे) जैसे वे (दुनिया या बर्ज़ख़ में) सारे दिन की एक-आध घड़ी रहे होंगे (चूँकि वह दिन लम्बा भी होगा और सख़्त भी होगा, इसलिये दुनिया और बर्ज़ख़ की मुद्दत और तकलीफ़ सब भूलकर ऐसा समझेंगे कि वह ज़माना बहुत जल्द गुज़र गया) और आपस में एक-दूसरे को पहचानेंगे (भी लेकिन एक दूसरे की मदद न कर सकेंगे। इससे और रंज व सदमा होगा, क्योंकि पहचान वाले लोगों से फ़ायदे की उम्मीद हुआ करती है) वाक़ई (उस वक़्त सख़्त) ख़सारे में पड़े वे लोग जिन्होंने अल्लाह के पास जाने को झुठलाया और वे (दुनिया में भी) हिदायत पाने वाले न थे (इसलिये आज ख़सारे में पड़े। पस उनके अ़ज़ाब का असली वक़्त तो यह दिन है उनको याद दिला दीजिये)। और (दुनिया में उन पर अ़ज़ाब आना या न आना इसके बारे में यह बात है कि) जिस (अ़ज़ाब) का उनसे हम वायदा कर रहे हैं, उसमें से कुछ थोड़ा-सा (अ़ज़ाब) अगर हम आपको दिखला दें (यानी आपकी ज़िन्दगी में उन पर वह नाज़िल हो जाये) या (उसके नाज़िल होने से पहले ही) हम आपको वफ़ात दे दें (फिर चाहे बाद में वह नाज़िल हो या न हो) सो (दोनों संभावनायें हैं, कोई एक सूरत ज़रूरी नहीं, लेकिन हर हाल और हर संभावना पर) हमारे पास तो उनको आना (ही) है, फिर (सब को मालूम है कि) अल्लाह तआ़ला उनके सब कामों की इत्तिला रखता ही है (पस उन पर सज़ा देगा। ग़र्ज़ कि दुनिया में चाहे सज़ा हो या न हो मगर असली मौक़े पर ज़रूर होगी)।

और (यह सज़ा जो उनके लिये तजवीज़ हुई है, तो हुज्जत के पूरा करने और उज़्र को दूर करने के बाद हुई है, और उनकी क्या विशेषता है बल्कि हमेशा से हमारी आ़दत रही है कि जिन उम्मतों को हमने क़ानून का पाबन्द बनाना चाहा है उनमें से) हर-हर उम्मत के लिये एक हुक्म पहुँचाने वाला (हुआ) है। सो जब वह उनका रसूल (उनके पास) आ चुकता है (और अहकाम पहुँचा देता है तो उसके बाद) उनका फ़ैसला इन्साफ़ के साथ किया जाता है, (वह फ़ैसला यही है कि न मानने वालों को हमेशा के अ़ज़ाब में मुब्तला किया जाता है) और उन पर (ज़रा भी) ज़ुल्म नहीं किया जाता (क्योंकि हुज्जत पूरी होने के बाद सज़ा देना इन्साफ़ के ख़िलाफ़ नहीं है)।

और ये लोग (अ़ज़ाब की धमकियाँ सुनकर झुठलाने के इरादे से यूँ) कहते हैं कि (ऐ नबी और ऐ मुसलमानो!) यह (अ़ज़ाब का) वायदा कब (ज़ाहिर) होगा अगर तुम सच्चे हो (तो ज़ाहिर

क्यों नहीं करा देते)। आप (सब की तरफ़ से जवाब में) फ़रमा दीजिये कि मैं (ख़ुद) अपनी ख़ास ज़ात के लिये तो किसी नफ़े (के हासिल करने का) और किसी नुक़सान (के दूर करने) का इख़्तियार रखता ही नहीं, मगर जितना (इख़्तियार) ख़ुदा को मन्ज़ूर हो (उतना इख़्तियार अलबत्ता हासिल है। पस जब ख़ास अपने नफ़े व नुक़सान का मालिक नहीं तो दूसरे के नफ़े व नुक़सान का तो क्योंकर मालिक हूँगा, पस अ़ज़ाब का ज़ाहिर करना मेरे इख़्तियार में नहीं, रहा यह कि कब ज़ाहिर होगा सो बात यह है कि) हर उम्मत के (अ़ज़ाब के) लिये (अल्लाह के नज़दीक) एक तय वक़्त है (चाहे दुनिया में या आख़िरत में), सो जब उनका वह तय किया हुआ वक़्त आ पहुँचता है तो (उस वक़्त) एक घड़ी न पीछे हट सकते हैं और न आगे सरक सकते हैं (बल्कि फ़ौरन अ़ज़ाब ज़ाहिर हो जाता है। इसी तरह तुम्हारे अ़ज़ाब का भी वक़्त तयशुदा है, उस वक़्त वह आ जायेगा, और वे जो फ़रमाईश करते हैं कि जो कुछ होना है जल्दी हो जाये जैसा कि आयत नम्बर 48 और 'रब्बना अ़ज्जिल् लना क़ित्तना' में उनकी इस जल्दबाज़ी का ज़िक्र है, तो) आप (उसके बारे में) फ़रमा दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अगर तुम पर उसका (यानी ख़ुदा का) अ़ज़ाब रात को आ पड़े, या दिन को, तो (यह बतलाओ कि) उस (अ़ज़ाब) में कौनसी चीज़ ऐसी है कि मुजरिम लोग उसको जल्दी माँग रहे हैं (यानी अ़ज़ाब तो सख़्त चीज़ और पनाह माँगने की चीज़ है, न कि जल्दी माँगने की, और जल्दबाज़ी से उनका मक़सद झुठलाना है, इसलिये फ़रमाते हैं कि) क्या (अब तो झुठला रहे हो जो कि वक़्त है तस्दीक़ के लाभदायक होने का) फिर जब वह (मुक़र्ररा और तयशुदा वायदा) आ ही पड़ेगा (उस वक़्त) इसकी तस्दीक़ करोगे (जिस वक़्त की तस्दीक़ नफ़ा देने वाली न होगी, और उस वक़्त कहा जायेगा कि) हाँ अब माना हालाँकि (पहले से) तुम (झुठलाने के इरादे से) इसकी जल्दी (मचाया) करते थे। फिर ज़ालिमों (यानी मुश्रिकों) से कहा जायेगा कि हमेशा का अ़ज़ाब चखो, तुमको तो तुम्हारे ही किये का बदला मिला है। और वे (इन्तिहाई ताज्जुब व इनकार से आप से) पूछते हैं कि क्या वह (अ़ज़ाब) वास्तविक (कोई चीज़) है? आप फ़रमा दीजिए कि हाँ क़सम है मेरे रब की, वह वास्तविक (चीज़) है, और तुम किसी तरह उसे (यानी ख़ुदा को) आ़जिज़ नहीं कर सकते (कि वह अ़ज़ाब देना चाहे और तुम बच जाओ)।

और (उस अ़ज़ाब की यह शिद्दत होगी कि) अगर हर-हर मुश्रिक शख़्स के पास इतना (माल) हो कि सारी ज़मीन में भर जाये तब भी उसको देकर अपनी जान बचाने लगे (अगरचे न ख़ज़ाना होगा और न लिया जायेगा, लेकिन शिद्दत इस दर्जे की होगी कि अगर मान लो कि माल हो तो सब देने पर राज़ी हो जायेंगे) और जब अ़ज़ाब देखेंगे तो (और फ़ज़ीहत के ख़ौफ़ से) शर्मिन्दगी को (अपने दिल ही दिल में) छुपाकर रखेंगे (यानी उसके क़ौल व अ़मल के प्रभावों को ज़ाहिर न होने देंगे, ताकि देखने वाले ज़्यादा न हंसें, लेकिन आख़िर में यह संयम व बरदाश्त भी उसकी शिद्दत के सामने न चलेगा) और उनका फ़ैसला इन्साफ़ के साथ होगा, और उन पर (ज़रा भी) ज़ुल्म न होगा। याद रखो कि जितनी चीज़ें आसमानों और ज़मीन में हैं, सब अल्लाह ही की (मिल्क) हैं। (उनमें जिस तरह चाहे इख़्तियार चलाये और उनमें ये मुजरिम भी दाख़िल हैं, इनका

फ़ैसला भी अपनी मर्ज़ी व इख़्तियार से कर सकता है)। याद रखो कि अल्लाह का वायदा सच्चा है (पस क़ियामत ज़रूर आयेगी) लेकिन बहुत-से आदमी यक़ीन ही नहीं करते। वही जान डालता है, वही जान निकालता है (पस दोबारा पैदा करना उसको क्या मुश्किल है), और तुम सब उसी के पास लाये जाओगे (और हिसाब किताब और फिर उस पर सवाब व अ़ज़ाब होगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

يَتَعَارَفُوْنَ بَيْنَهُمْ.

यानी जब क़ियामत में मुर्दे क़ब्रों से उठाये जायेंगे तो एक दूसरे को पहचानेंगे जैसे कोई लम्बी मुद्दत मिले हुए न गुज़री हो।

इमाम बग़वी रह. ने इसकी तफ़सीर में फ़रमाया कि यह पहचान शुरू में होगी, बाद में क़ियामत के हौलनाक वाक़िआ़त सामने आ जायेंगे तो यह पहचान बन्द हो जायेगी और कुछ रिवायतों में है कि पहचान तो फिर भी रहेगी मगर घबराहट के मारे बात न कर सकेंगे। (मज़हरी)

اَثُمَّ اِذَا مَا وَقَعَ اٰمَنْتُمْ بِهٖ اٰلْئٰنَ.

यानी क्या तुम ईमान उस वक़्त लाओगे जब तुम पर अ़ज़ाब आ पड़ेगा, चाहे मौत के वक़्त या उससे पहले ही, मगर उस वक़्त तुम्हारे ईमान के जवाब में यह कहा जायेगा 'आलआ-न' (यानी क्या अब ईमान लाये हो) जबकि ईमान का वक़्त गुज़र चुका। जैसे डूबने के वक़्त फ़िरऔ़न ने जब कहाः

اٰمَنْتُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا الَّذِیْٓ اٰمَنَتْ بِهٖ بَنُوْٓا اِسْرَآءِيْلَ.

जवाब में कहा गया था 'आलआ-न' और उसका यह ईमान क़ुबूल नहीं किया गया, क्योंकि हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि अल्लाह तआ़ला बन्दे की तौबा क़ुबूल करता ही रहता है जब तक कि वह मौत के ग़रग़रे में गिरफ़्तार न हो जाये, यानी मौत के ग़रग़रे के वक़्त का ईमान और तौबा अल्लाह के नज़दीक मोतबर नहीं। इसी तरह दुनिया में अ़ज़ाब आ पड़ने से पहले-पहले तौबा क़ुबूल हो सकती है, जब अ़ज़ाब आ पड़े फिर तौबा क़ुबूल नहीं होती। सूरत के आख़िर में यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम का जो वाक़िआ़ आ रहा है कि उनकी तौबा क़ुबूल कर ली गयी, वह इसी क़ायदे के मातहत है कि उन्होंने अ़ज़ाब को दूर से आता हुआ देखकर सच्चे दिल से रोने-गिड़गिड़ाने के साथ तौबा कर ली इसलिये अ़ज़ाब हटा लिया गया, अगर अ़ज़ाब उन पर आ पड़ता तो फिर तौबा क़ुबूल न होती।

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَتْكُمْ مَّوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ
وَشِفَآءٌ لِّمَا فِي الصُّدُوْرِ ۙ وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ ۞ قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِرَحْمَتِهٖ فَبِذٰلِكَ
فَلْيَفْرَحُوْا ۭ هُوَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ ۞ قُلْ اَرَءَيْتُمْ مَّآ اَنْزَلَ اللّٰهُ لَكُمْ مِّنْ رِّزْقٍ فَجَعَلْتُمْ مِّنْهُ

حَرَامًا وَّحَلٰلًا ۔ قُلْ آٰللّٰهُ اَذِنَ لَكُمْ اَمْ عَلَى اللّٰهِ تَفْتَرُوْنَ ۞ وَمَا ظَنُّ الَّذِيْنَ يَفْتَرُوْنَ
عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۔ اِنَّ اللّٰهَ لَذُوْ فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُوْنَ ۞
وَمَا تَكُوْنُ فِيْ شَاْنٍ وَّمَا تَتْلُوْا مِنْهُ مِنْ قُرْاٰنٍ وَّلَا تَعْمَلُوْنَ مِنْ عَمَلٍ اِلَّا كُنَّا عَلَيْكُمْ
شُهُوْدًا اِذْ تُفِيْضُوْنَ فِيْهِ ۔ وَمَا يَعْزُبُ عَنْ رَّبِّكَ مِنْ مِّثْقَالِ ذَرَّةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي
السَّمَآءِ وَلَآ اَصْغَرَ مِنْ ذٰلِكَ وَلَآ اَكْبَرَ اِلَّا فِيْ كِتٰبٍ مُّبِيْنٍ ۞

या अय्युहन्नासु क़द् जाअत्कुम् मौअ़ि-ज़तुम्-मिर्रब्बिकुम् व शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूरि व हुदंव्-व रह्मतुल्-लिल्मुअ्मिनीन (57) क़ुल् बिफ़ज़्लिल्लाहि व बिरह्मतिही फ़बिज़ालि-क फ़ल्यफ़्रहू, हु-व ख़ैरुम्-मिम्मा यज्मअ़ून (58) क़ुल् अ-रऐतुम् मा अन्ज़लल्लाहु लकुम् मिर्रिज़्किन् फ़-जअ़ल्तुम् मिन्हु हरामंव्-व हलालन्, क़ुल् आल्लाहु अज़ि-न लकुम् अम् अ़लल्लाहि तफ़्तरून (59) व मा ज़न्नुल्लज़ी-न यफ़्तरू-न अ़लल्लाहिल्-कज़ि-ब यौमल्-क़ियामति, इन्नल्ला-ह लज़ू फ़ज़्लिन् अ़लन्नासि व लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यश्कुरून (60) ✿ व मा तकूनु फ़ी शअ्निंव्-व मा तत्लू मिन्हु मिन् क़ुरआनिंव्-व ला तअ़्मलू-न मिन् अ़-मलिन् इल्ला	ऐ लोगो! तुम्हारे पास आई है नसीहत तुम्हारे रब से और शिफ़ा दिलों के रोग की और हिदायत और रहमत मुसलमानों के वास्ते। (57) कह अल्लाह के फ़ज़्ल और उसकी मेहरबानी से, सो इसी पर उनको ख़ुश होना चाहिए, यह बेहतर है उन चीज़ों से जो जमा करते हैं। (58) तू कह भला देखो तो अल्लाह ने जो उतारी तुम्हारे वास्ते रोज़ी फिर ठहराई तुमने उसमें से कोई हराम और कोई हलाल, कह क्या अल्लाह ने हुक्म दिया तुमको या अल्लाह पर झूठ बाँधते हो। (59) और क्या ख़्याल है झूठ बाँधने वालों का अल्लाह पर क़ियामत के दिन, अल्लाह तो फ़ज़्ल करता है लोगों पर और लेकिन बहुत लोग हक़ नहीं मानते। (60) ✿ और नहीं होता तू किसी हाल में और न पढ़ता है इसमें से कुछ क़ुरआन और नहीं करते हो तुम लोग कुछ काम कि हम नहीं

कुन्ना अ़लैकुम् शुहूदन् इज़् तुफ़ीज़ू-न फ़ीहि, व मा यअ़्ज़ुबु अ़र्रब्बि-क मिम्-मिस्क़ालि ज़र्रतिन् फ़िल्अर्ज़ि व ला फ़िस्समा-इ व ला अस्ग़-र मिन् ज़ालि-क व ला अक्ब-र इल्ला फ़ी किताबिम्-मुबीन (61)	होते हाज़िर तुम्हारे पास जब तुम व्यस्त होते हो उसमें, और ग़ायब नहीं रहता तेरे रब से एक ज़र्रा भर ज़मीन में और न आसमान में, और न छोटा उससे और न बड़ा जो नहीं है खुली हुई किताब में। (61)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ लोगो! तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से (एक ऐसी चीज़) आई है जो (बुरे कामों से रोकने के लिये) नसीहत (है) और (अगर उस पर अ़मल करके बुरे कामों से बचें तो) दिलों में जो (बुरे कामों से) रोग (हो जाते हैं) उनके लिये शिफ़ा है, और (नेक कामों के करने के लिये) रहनुमाई करने वाली है, और (अगर उस पर अ़मल करके नेक कामों को इख़्तियार करें तो) रहमत (और सवाब का ज़रिया) है (और ये सब बरकतें) ईमान वालों के लिये (हैं क्योंकि अ़मल वही करते हैं। पस क़ुरआन की ये बरकतें सुनाकर) आप (उनसे) कह दीजिए कि (जब क़ुरआन ऐसी चीज़ है) पस लोगों को ख़ुदा के इस इनाम और रहमत पर ख़ुश होना चाहिए (और इसको बड़ी दौलत समझकर लेना चाहिये) वह इस (दुनिया) से कहीं बेहतर है जिसको वे जमा कर रहे हैं (क्योंकि दुनिया का नफ़ा थोड़ा और फ़ानी है और क़ुरआन का नफ़ा ज़्यादा और बाक़ी)।

आप (उनसे) कह दीजिये कि यह तो बतलाओ कि अल्लाह ने तुम्हारे (फ़ायदा उठाने के) लिए जो कुछ रिज़्क़ भेजा था, फिर तुमने (अपनी तरफ़ से) उसका कुछ हिस्सा हराम और कुछ हिस्सा हलाल क़रार दे लिया (हालाँकि उसके हराम होने की कोई दलील नहीं, तो) आप (उनसे) पूछिये कि क्या तुमको ख़ुदा ने हुक्म दिया है या (सिर्फ़) अल्लाह पर (अपनी तरफ़ से) बोहतान ही बाँधते हो? और जो लोग अल्लाह पर झूठ बोहतान बाँधते हैं उनका क़ियामत के बारे में क्या गुमान है (जो बिल्कुल डरते नहीं क्या यह समझते हैं कि क़ियामत नहीं आयेगी, या आयेगी मगर हमसे पूछगछ न होगी), वाक़ई लोगों पर अल्लाह का बड़ा ही फ़ज़्ल है (कि साथ के साथ सज़ा नहीं देता बल्कि तौबा के लिये मोहलत दे रखी है) लेकिन अक्सर (आदमी) उनमें से बेक़द्र हैं (वरना तौबा कर लेते)।

और आप (चाहे) किसी हाल में हों, और (उन्हीं हालात में से यह कि) आप कहीं से क़ुरआन पढ़ते हों और (इसी तरह और लोग भी जितने हों) तुम जो काम करते हो हमको सब की ख़बर रहती है, जब तुम उस काम को करना शुरू करते हो, और आपके रब (के इल्म) से कोई चीज़ ज़र्रा बराबर भी ग़ायब नहीं, न ज़मीन में और न आसमान में (बल्कि सब उसके इल्म में हाज़िर हैं) और न कोई चीज़ इस (ज़िक्र हुई मात्रा) से छोटी है और न कोई चीज़ (इससे) बड़ी

है, मगर यह सब (अल्लाह तआला के इल्म में होने की वजह से) किताब-ए-मुबीन (यानी लौहे महफ़ूज़) में (लिखा हुआ) है।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में काफ़िरों व मुश्रिकों की बदहाली और आख़िरत में उन पर तरह-तरह के अ़ज़ाबों का बयान था, इन आयतों में से पहली दो आयतों में उनको उस बदहाली और गुमराही से निकलने का तरीक़ा और आख़िरत के अ़ज़ाब से निजात का ज़रिया बतलाया गया है, और वह अल्लाह की किताब क़ुरआन और उसके रसूल मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं।

और इनसान और इनसानियत के लिये ये दोनों ऐसी बड़ी नेमतें हैं कि आसमान व ज़मीन की सारी नेमतों से आला व अफ़ज़ल हैं। क़ुरआनी अहकाम और सुन्नते रसूल की पैरवी इनसान को सही मायने में इनसान बनाती है, और जब इनसान सही मायने में कामिल इनसान बन जाये तो सारा जहान दुरुस्त हो जाये और यह दुनिया भी जन्नत बन जाये।

पहली आयत में क़ुरआने करीम की चार विशेषताओं और ख़ूबियों का ज़िक्र है:

अव्वल 'मौअ़ि-ज़तुम् मिर्रब्बिकुम'। 'मौअ़िज़तु' और 'वअ़ज़' के असल मायने ऐसी चीज़ों का बयान करना है जिनको सुनकर इनसान का दिल नर्म हो और अल्लाह तआला की तरफ़ झुके, दुनिया की ग़फ़लत का पर्दा हटे, आख़िरत की फ़िक्र सामने आ जाये। क़ुरआने करीम अव्वल से आख़िर तक इसी उम्दा नसीहत का बेहतरीन और प्रभावी प्रचारक है, इसमें हर जगह वायदे के साथ वईद, सवाब के साथ अ़ज़ाब, दुनिया व आख़िरत में फ़लाह व कामयाबी के साथ नाकामी और गुमराही वग़ैरह का ऐसा मिला-जुला तज़किरा है जिसको सुनकर पत्थर भी पानी हो जाये, फिर उस पर क़ुरआने करीम का ऐसा बेमिसाल अन्दाज़े बयान जो दिलों की काया पलटने में बेनज़ीर है।

'मौअ़ि-ज़तु' के साथ 'मिर्रब्बिकुम' की क़ैद ने क़ुरआनी वअ़ज़ की हैसियत को और भी ज़्यादा बुलन्द कर दिया। इससे मालूम हुआ कि यह वअ़ज़ (नसीहत) किसी अपने जैसे आजिज़ इनसान की तरफ़ से नहीं जिसके हाथ में किसी का नफ़ा व नुक़सान या अ़ज़ाब व सवाब कुछ नहीं, बल्कि रब्बे करीम की तरफ़ से है जिसके कहने में ग़लती की संभावना नहीं, और जिसके वायदे और वईद (सज़ा की धमकी) में किसी असमर्थता व कमज़ोरी या उज़्र का कोई ख़तरा नहीं।

क़ुरआने करीम की दूसरी सिफ़त 'शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूर' इरशाद फ़रमाई। 'शिफ़ा' के मायने बीमारी दूर होने के हैं, और 'सुदूर' सदूर की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने सीने के हैं, इससे दिल मुराद है।

मायने यह हैं कि क़ुरआने करीम दिलों की बीमारियों का कामयाब इलाज और सेहत व शिफ़ा का कारगर नुस्ख़ा है। हज़रत हसन बसरी रह. ने फ़रमाया कि क़ुरआन की इस सिफ़त से मालूम हुआ कि यह ख़ास दिलों की बीमारी के लिये शिफ़ा है, जिस्मानी बीमारियों का इलाज नहीं। (तफ़सीरे रूहुल-मआ़नी)

मगर दूसरे हज़रात ने फ़रमाया कि दर हक़ीक़त क़ुरआन हर बीमारी की शिफ़ा है चाहे दिल व रूह की हो या बदन और जिस्म की, मगर रूहानी बीमारियों की तबाही इनसान के लिये जिस्मानी बीमारियों से ज़्यादा सख़्त है और उसका इलाज भी हर शख़्स के बस का नहीं, इसलिये इस जगह ज़िक्र सिर्फ़ दिली और रूहानी बीमारियों का किया गया है। इससे यह लाज़िम नहीं आता कि वह जिस्मानी बीमारियों के लिये शिफ़ा नहीं है।

हदीस की रिवायतें और उलेमा-ए-उम्मत के बेशुमार तजुर्बात इस पर सुबूत व गवाह हैं कि क़ुरआने करीम जैसे दिलों की बीमारियों के लिये ज़बरदस्त अक्सीर है इसी तरह वह जिस्मानी बीमारियों का भी बेहतरीन इलाज है।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक शख़्स हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि मेरे सीने में तकलीफ़ है, आपने फ़रमाया कि क़ुरआन पढ़ा करो, क्योंकि हक़ तआ़ला का इरशाद है:

شِفَآءٌ لِّمَا فِى الصُّدُوْرِ○

यानी क़ुरआन शिफ़ा है उन तमाम बीमारियों की जो सीनों में होती हैं। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी, इब्ने मर्दूया की रिवायत से)

इसी तरह हज़रत वासिला बिन असक़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि एक शख़्स रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और बयान किया कि मेरे हलक़ में तकलीफ़ है, आपने उसको भी यही फ़रमाया कि क़ुरआन पढ़ा करो।

उम्मत के उलेमा ने कुछ रिवायतों व आसार से और कुछ अपने तजुर्बों से क़ुरआनी आयतों के ख़्वास व फ़वाईद (विशेषतायें) मुस्तक़िल किताबों में जमा भी कर दिये हैं। इमाम ग़ज़ाली रह. की किताब 'ख़्वास-ए-क़ुरआनी' इसके बयान में मशहूर व परिचित है जिसका ख़ुलासा हज़रत हकीमुल-उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह. ने 'आमाल-ए-क़ुरआनी' के नाम से तरतीब दिया है, और अनुभव व तजुर्बे इतने हैं कि उनका इनकार नहीं किया जा सकता कि क़ुरआने करीम की मुख़्तलिफ़ आयतें मुख़्तलिफ़ जिस्मानी रोगों के लिये भी कामिल शिफ़ा साबित होती हैं। हाँ यह ज़रूर है कि क़ुरआन नाज़िल होने का असली मक़सद दिल व रूह की बीमारियों को ही दूर करना है और ज़िमनी तौर पर जिस्मानी बीमारियों का भी बेहतरीन इलाज है।

इससे उन लोगों की बेवक़ूफ़ी और गुमराही भी ज़ाहिर हो गयी जो क़ुरआने करीम को सिर्फ़ जिस्मानी बीमारियों के इलाज या दुनियावी ज़रूरतों ही के लिये पढ़ते पढ़ाते हैं, न रूहानी रोगों की इस्लाह की तरफ़ ध्यान देते हैं न क़ुरआन की हिदायतों पर अमल करने की तरफ़ तवज्जोह करते हैं, ऐसे ही लोगों के लिये अल्लामा इक़बाल मरहूम ने फ़रमाया है:

तुरा हासिल ज़-यासीनश जुज़ीं नेस्त — कि अज़ हमं ख़्वान्दनश आसाँ बमीरी

यानी तुमने क़ुरआन की सूरः यासीन से सिर्फ़ इतना ही फ़ायदा हासिल किया कि उसके पढ़ने से मौत आसान हो जाये, हालाँकि इस सूरत के मायनों, उलूम और मआ़रिफ़ में ग़ौर करते तो इससे कहीं ज़्यादा फ़ायदे और बरकतें हासिल कर सकते थे।

कुछ मुहक़्क़िक़ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि क़ुरआन की पहली सिफ़त यानी 'मौअ़ि-ज़तु' का ताल्लुक़ इनसान के ज़ाहिरी आमाल के साथ है, जिसको शरीअ़त कहा जाता है। क़ुरआने करीम उन आमाल की इस्लाह (सुधारने और संवारने) का बेहतरीन ज़रिया है। और 'शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूर' का ताल्लुक़ इनसान के बातिनी और अन्दरूनी आमाल के साथ है, जिसको तरीक़त और तसव्वुफ़ के नाम से जाना जाता है।

इस आयत में क़ुरआने करीम की तीसरी सिफ़त 'हुदन' और चौथी 'रहमत' बयान की गयी है। 'हुदन' के मायने हिदायत यानी रहनुमाई के हैं। क़ुरआने करीम इनसान को हक़ व यक़ीन के रास्ते की तरफ़ दावत देता है और इनसान को बतलाता है कि इस कायनात और ख़ुद उनके नफ़्सों में अल्लाह तआ़ला ने जो अपनी अ़ज़ीम निशानियाँ रखी हैं उनमें ग़ौर व फ़िक्र करो ताकि तुम इन सब चीज़ों के ख़ालिक़ और मालिक को पहचानो।

दूसरी आयत में फ़रमायाः

قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِرَحْمَتِهٖ فَبِذٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوْا، هُوَخَيْرٌمِّمَّا يَجْمَعُوْنَ۝

यानी लोगों को चाहिये कि सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व रहमत ही को असली ख़ुशी की चीज़ समझें और सिर्फ़ इसी चीज़ पर ख़ुश हों, दुनिया के चन्द दिन के माल व मता और राहत व इज़्ज़त दर हक़ीक़त ख़ुश होने की चीज़ है नहीं, क्योंकि अव्वल तो वह कितनी ही ज़्यादा किसी को हासिल हो अधूरी ही होती है, मुकम्मल नहीं होती, दूसरे हर वक़्त उसके ज़वाल (ख़त्म होने और जाते रहने) का ख़तरा लगा हुआ है, इसलिये आयत के आख़िर में फ़रमायाः

هُوَخَيْرٌمِّمَّا يَجْمَعُوْنَ۝

यानी अल्लाह का फ़ज़्ल व रहमत उन तमाम माल व दौलत और इ़ज़्ज़त व सल्तनत से बेहतर है जिनको इनसान अपनी ज़िन्दगी भर का सरमाया समझकर जमा करता है।

इस आयत में दो चीज़ों को ख़ुशी व मुसर्रत का सामान क़रार दिया है- एक फ़ज़्ल दूसरे रहमत। इन दोनों से मुराद यहाँ क्या है? इस बारे में एक हदीस हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- अल्लाह के फ़ज़्ल से मुराद क़ुरआन है और रहमत से मुराद यह है कि तुमको क़ुरआन पढ़ने और उस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ बख़्शी। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी, इब्ने मर्दूया की रिवायत से)

यही मज़मून हज़रत बरा बिन आ़ज़िब रज़ियल्लाहु अ़न्हु और अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी मन्क़ूल है, और बहुत से मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि फ़ज़्ल से मुराद क़ुरआन और रहमत से मुराद इस्लाम है, और मतलब इसका भी वही है जो पहले गुज़री हदीस से मालूम हुआ कि रहमत से मुराद यह है कि अल्लाह तआ़ला ने हमें क़ुरआन सिखाया और इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ बख़्शी। क्योंकि इस्लाम इसी हक़ीक़त का एक उनवान है।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की एक रिवायत में है कि फ़ज़्ल से मुराद क़ुरआन और रहमत से मुराद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं। क़ुरआने करीम

की आयतः

وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ٥

'व मा अर्सल्ना-क इल्ला रह्मतल् लिल्आ़लमीन' से इस मज़मून की ताईद होती है। और हासिल इसका भी पहली तफ़सीर से कुछ अलग नहीं, क्योंकि क़ुरआन या इस्लाम पर अ़मल रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही की पैरवी के अलग-अलग उनवानात हैं।

इस आयत में मशहूर क़िराअत के मुताबिक़ 'फ़ल्यफ़रहू' ग़ायब के सीग़े के साथ आया है (कि इसी पर उनको ख़ुश होना चाहिये) हालाँकि इसके असल मुख़ातब उस वक़्त के मौजूद और हाज़िर लोग थे, जिसका तक़ाज़ा यह था कि इस जगह ख़िताब के सीग़े का इस्तेमाल किया जाता (यानी यह कहा जाता कि तुमको ख़ुश होना चाहिये) जैसा कि कुछ क़िराअतों में आया भी है, मगर मशहूर क़िराअत में ग़ायब का सीग़ा इस्तेमाल करने की हिक्मत यह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम या इस्लाम की आ़म रहमत सिर्फ़ उस वक़्त के हाज़िर और मौजूद हज़रात के लिये विशेष नहीं थी बल्कि क़ियामत तक पैदा होने वाली नस्लों को भी यह रहमत शामिल है। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

फ़ायदा

यहाँ यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत के ज़ाहिरी अलफ़ाज़ से मालूम होता है कि ख़ुशी का इस दुनिया में कोई मक़ाम ही नहीं। इरशाद हैः

لَا تَفْرَحْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْفَرِحِيْنَ٥

यानी ख़ुशी में मस्त न हो, अल्लाह ऐसे ख़ुश होने वालों को पसन्द नहीं फ़रमाते।

और ऊपर ज़िक्र हुई आयत में ख़ुश होने का एक तरह से हुक्म दिया गया है। इस ज़ाहिरी टकराव का एक जवाब तो यह है कि जहाँ ख़ुश होने को मना फ़रमाया है वहाँ ख़ुशी का ताल्लुक़ दुनिया की दौलत व सामान से है, और जहाँ ख़ुश होने का हुक्म दिया है वहाँ ख़ुशी का ताल्लुक़ है अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व रहमत से। दूसरा फ़र्क़ यह भी है कि मनाही की जगह में मुतलक़ (बिना किसी क़ैद के) ख़ुशी मुराद नहीं बल्कि ख़ुशी में मगन और मस्त हो जाना मुराद है, और इजाज़त की जगह में आ़म ख़ुशी मुराद है।

तीसरी आयत में उन लोगों को चेताया गया है जो हलाल व हराम के मामले में अपनी ज़ाती राय को दख़ल देते हैं, और क़ुरआन व सुन्नत की सनद के बग़ैर जिस चीज़ को चाहा हलाल क़रार दे दिया जिसको चाहा हराम कह दिया, इस पर क़ियामत की सख़्त वईद ज़िक्र की गयी है, जिससे मालूम हुआ कि किसी चीज़ या किसी काम के हलाल या हराम होने का असल मदार इनसानी राय पर नहीं बल्कि वह ख़ालिस अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल का हक़ है, उनके अहकाम के बग़ैर किसी चीज़ को न हलाल कहना जायज़ है न हराम।

चौथी आयत में अल्लाह जल्ल शानुहू के कामिल इल्म और उसकी बेमिसाल वुस्अ़त का

ज़िक्र रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब करके किया गया है कि आप जिस काम और जिस हाल में हमेशा होते हैं, या क़ुरआन पढ़ते हैं, उसका कोई हिस्सा और भाग हमसे छुपा नहीं। इसी तरह तमाम इनसान जो कुछ अ़मल करते हैं वो हमारी नज़रों के सामने हैं और आसमान व ज़मीन में कोई एक ज़र्रा भी हमसे छुपा हुआ नहीं है बल्कि हर चीज़ 'किताब-ए-मुबीन' यानी लौह-ए-महफ़ूज़ में लिखी हुई है।

बज़ाहिर इस जगह अल्लाह के इल्म की वुस्अ़त और हर चीज़ को घेरने वाला होने के बयान में हिक्मत यह है कि उसके ज़रिये नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली दी जाये कि अगरचे मुख़ालिफ़ और दुश्मन आपके बहुत हैं मगर अल्लाह तआ़ला की हिफ़ाज़त आपके साथ है, आपको कोई तकलीफ़ व नुक़सान न पहुँचेगा।

أَلَآ إِنَّ أَوْلِيَآءَ ٱللَّهِ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟
وَكَانُوا۟ يَتَّقُونَ ۝ لَهُمُ ٱلْبُشْرَىٰ فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا وَفِى ٱلْـَٔاخِرَةِ ۚ لَا تَبْدِيلَ لِكَلِمَٰتِ ٱللَّهِ ۚ ذَٰلِكَ
هُوَ ٱلْفَوْزُ ٱلْعَظِيمُ ۝

अला इन्-न औलिया-अल्लाहि ला ख़ौफ़ुन् अ़लैहिम् व ला हुम् यह्ज़नून (62) अल्लज़ी-न आमनू व कानू यत्तक़ून (63) लहुमुल्-बुश्रा फ़िल्-हयातिद्दुन्या व फ़िल्-आख़िरति, ला तब्दी-ल लि-कलिमातिल्लाहि, ज़ालि-क हुवल् फ़ौज़ुल्-अ़ज़ीम (64)	याद रखो जो लोग अल्लाह के दोस्त हैं न डर है उन पर और न वे ग़मगीन होंगे। (62) जो लोग कि ईमान लाये और डरते रहे (63) उनके लिये है ख़ुशख़बरी दुनिया की ज़िन्दगानी में और आख़िरत में, बदलती नहीं अल्लाह की बातें, यही है बड़ी कामयाबी। (64)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(यह तो अल्लाह के इल्म का बयान हुआ, आगे अल्लाह के नेक और फ़रमाँबरदार बन्दों के महफ़ूज़ व सुरक्षित रहने का बयान है कि) याद रखो कि अल्लाह के दोस्तों पर न कोई अन्देशे (वाला वाक़िआ़ पड़ने वाला) है और न वे (किसी पसन्दीदा चीज़ के जाते रहने पर) ग़मज़दा होते हैं (यानी अल्लाह तआ़ला उनको ख़ौफ़नाक और ग़मनाक हादसों से बचाता है और) वे (अल्लाह के दोस्त वो) हैं जो ईमान लाये और (गुनाहों से) परहेज़ रखते हैं (यानी ईमान और तक़्वे से अल्लाह की निकटता नसीब होती है, और ख़ौफ़ व ग़म से उनके महफ़ूज़ रहने की वजह यह है कि) उनके लिये दुनियावी ज़िन्दगी में भी और आख़िरत में भी (अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से

ख़ौफ़ व रंज से बचने की) ख़ुशख़बरी है (और) अल्लाह की बातों में (यानी वायदों में) कुछ फ़र्क़ नहीं हुआ करता, (पस जब ख़ुशख़बरी में उनसे वायदा किया गया और वायदा हमेशा सही होता है, इसलिये ख़ौफ़ व रंज न होना लाज़िमी चीज़ है और) यह (ख़ुशख़बरी जो ज़िक्र हुई) बड़ी कामयाबी है।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में औलिया-अल्लाह (अल्लाह के दोस्तों) के विशेष फ़ज़ाईल और उनकी तारीफ़ व पहचान, फिर दुनिया व आख़िरत में उनके लिये ख़ुशख़बरी का ज़िक्र है। इरशाद फ़रमाया कि औलिया-अल्लाह को न किसी नागवार चीज़ के पेश आने का ख़तरा होगा और न किसी मक़सद के फ़ौत हो जाने का ग़म, और औलिया-अल्लाह वे लोग हैं जो ईमान लाये और जिन्होंने तक़्वा व परहेज़गारी इख़्तियार की, उनके लिये दुनिया में भी ख़ुशख़बरी है और आख़िरत में भी।

इसमें चन्द बातें ग़ौर करने के क़ाबिले हैं:

अव्वल यह कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म न होने के क्या मायने हैं?

दूसरे यह कि औलिया-अल्लाह की तारीफ़ (परिभाषा) क्या है और उनकी निशानियाँ क्या हैं?

तीसरे यह कि दुनिया व आख़िरत में उनकी ख़ुशख़बरी से क्या मुराद है?

पहली बात, कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म नहीं होता, इससे यह भी मुराद हो सकता है कि आख़िरत में हिसाब किताब के बाद जब उनको उनके मक़ाम यानी जन्नत में दाख़िल कर दिया जायेगा तो ख़ौफ़ व ग़म से उनको हमेशा के लिये निजात हो जायेगी, न किसी तकलीफ़ व परेशानी का ख़तरा रहेगा न किसी प्यारी व पसन्दीदा चीज़ के हाथ से निकल जाने का ग़म होगा, बल्कि जन्नत की नेमतें हमेशा के लिये और कभी फ़ना न होने वाली होंगी। इस मायने के एतिबार से तो आयत के मज़मून पर कोई शुब्हा व इश्काल नहीं, लेकिन यह सवाल ज़रूर पैदा होता है कि इसमें औलिया-अल्लाह की कोई विशेषता न रही बल्कि तमाम जन्नत वाले जिनको जहन्नम से निजात मिल गयी वे इसी हाल में होंगे, हाँ यह कहा जा सकता है कि जो लोग परिणाम स्वरूप जन्नत में पहुँच गये वे सब औलिया-अल्लाह ही कहलायेंगे, दुनिया में उनके आमाल कितने ही भिन्न रहे हों मगर जन्नत में दाख़िल होने के बाद सब के सब औलिया-अल्लाह की ही फ़ेहरिस्त में शुमार होंगे।

लेकिन बहुत से मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि औलिया-अल्लाह पर ख़ौफ़ व ग़म न होना दुनिया व आख़िरत दोनों के लिये आ़म है, और औलिया-अल्लाह की विशेषता यही है कि दुनिया में भी वे ख़ौफ़ व ग़म से महफ़ूज़ हैं और आख़िरत में उन पर ख़ौफ़ व ग़म न होना तो सब ही जानते हैं, और इसमें तमाम जन्नत वाले दाख़िल हैं।

मगर इस पर हालात व वाक़िआत के एतिबार से यह इश्काल है कि दुनिया में तो यह बात अनुभव और तजुर्बे के ख़िलाफ़ है, क्योंकि औलिया-अल्लाह तो क्या अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम भी

इस दुनिया में ख़ौफ़ व ग़म से महफ़ूज़ नहीं, बल्कि उनको ख़ौफ़ व डर औरों से ज़्यादा होता है जैसा कि क़ुरआने करीम का इरशाद है:

اِنَّمَا يَخْشَى اللّٰهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمٰٓؤُا.

यानी अल्लाह तआ़ला से पूरी तरह उलेमा ही डरते हैं। और एक दूसरी जगह में औलिया-अल्लाह ही का यह हाल बयान फ़रमाया है:

وَالَّذِيْنَ هُمْ مِّنْ عَذَابِ رَبِّهِمْ مُّشْفِقُوْنَ. اِنَّ عَذَابَ رَبِّهِمْ غَيْرُ مَاْمُوْنٍ ۝

यानी ये लोग अल्लाह के अ़ज़ाब से हमेशा डरते रहते हैं, क्योंकि उनके रब का अ़ज़ाब ऐसी चीज़ नहीं जिससे कोई बेफ़िक्र होकर बैठ सके।

और वाक़िआ़त भी यही हैं जैसा कि शमाईल-ए-तिर्मिज़ी की हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अक्सर हालात में चिंतित और ग़मगीन नज़र आते थे, और आपने ख़ुद फ़रमाया कि मैं तुम सबसे ज़्यादा ख़ुदा तआ़ला से डरता हूँ।

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम में सबसे अफ़ज़ल हज़रत सिद्दीक़ व फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा और तमाम सहाबा व ताबिईन और औलिया-अल्लाह का रोना व फ़रियाद करना और ख़ौफ़े आख़िरत के वाक़िआ़त बेशुमार हैं।

इसलिये तफ़सीर 'रूहुल-मआ़नी' में अ़ल्लामा आलूसी ने यह फ़रमाया कि हज़राते औलिया-अल्लाह का दुनिया में ख़ौफ़ व ग़म से महफ़ूज़ होना इस एतिबार से है कि जिन चीज़ों के ख़ौफ़ व ग़म में आ़म तौर से दुनिया वाले मुब्तला रहते हैं कि दुनियावी मक़ासिद, आराम व राहत, इ़ज़्ज़त व दौलत में ज़रा सी कमी हो जाने पर मरने लगते हैं और ज़रा-ज़रा सी तकलीफ़ व परेशानी के ख़ौफ़ से उनसे बचने की तदबीरों में रात दिन खोये रहते हैं, औलिया-अल्लाह का मक़ाम उन सबसे ऊपर व बुलन्द होता है, उनकी नज़र में न दुनिया की फ़ानी इ़ज़्ज़त व दौलत, राहत व आराम कोई चीज़ है जिसके हासिल करने में मारे-मारे फिरें, और न यहाँ की मेहनत व मुसीबत और रंज कुछ क़ाबिले तवज्जोह है जिसको दूर करने और उससे बचने के लिये परेशान हों, बल्कि उनका हाल यह होता है:

न शादी दाद सामाने न ग़म आवुर्द नुक़साने
ब-पेशे हिम्मते मा हर चे आमद बूद महमाने

यानी न कोई फ़ायदा हमें ख़ुशी में मस्त कर सकता है और न कोई नुक़सान रंज व ग़म का कारण बन सकता है। हम अपनी हिम्मत व जुर्रत से हर पेश आने वाली हालत का ज़िन्दा दिली से सामना करते हैं। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

अल्लाह जल्ल शानुहू की बड़ाई व मुहब्बत और ख़ौफ़ व डर उन हज़रात पर ऐसा छाया होता है कि उसके मुक़ाबले में दुनिया की रंज व राहत, फ़ायदा व नुक़सान मक्खी के एक पर की भी हैसियत नहीं रखते। जैसे कि किसी शायर ने कहा है:

ये नंग-ए-आ़शिक़ी हैं सूद व हासिल देखने वाले
यहाँ गुमराह कहलाते हैं मन्ज़िल देखने वाले

दूसरी बात औलिया-अल्लाह की परिभाषा और उनकी निशानियों से मुताल्लिक़ हैं। औलिया वली की जमा (बहुवचन) है। लफ़्ज़ वली अ़रबी भाषा में क़रीब के मायने में भी आता है और दोस्त व मुहिब (मुहब्बत करने वाले) के मायने में भी। अल्लाह तआ़ला की निकटता व मुहब्बत का एक आ़म दर्जा तो ऐसा है कि उससे दुनिया का कोई इनसान व हैवान बल्कि कोई चीज़ भी अलग और बाहर नहीं, अगर यह निकटता न हो तो सारे आ़लम में कोई चीज़ वजूद ही में नहीं आ सकती, तमाम आ़लम के वजूद की असली इल्लत (सबब) वही ख़ास राब्ता है जो उसको हक़ तआ़ला से हासिल है, अगरचे उस राब्ते (ताल्लुक़ व निकटता) की हक़ीक़त को न किसी ने समझा और न समझ सकता है मगर एक ऐसा राब्ता होना जिसकी कैफ़ियत का इल्म नहीं, होना यक़ीनी है। मगर लफ़्ज़ औलिया-अल्लाह में विलायत का यह दर्जा मुराद नहीं बल्कि विलायत व मुहब्बत और निकटता का एक दूसरा दर्जा भी है जो अल्लाह तआ़ला के मख़्सूस बन्दों के साथ ख़ास है, यह निकटता मुहब्बत कहलाती है, जिन लोगों को यह ख़ास निकटता हासिल हो वे औलिया-अल्लाह कहलाते हैं, जैसा कि एक हदीस-ए-क़ुदसी में है, हक़ तआ़ला का इरशाद है कि मेरा बन्दा नफ़्ली इबादतों के ज़रिये मेरा क़ुर्ब (निकटता) हासिल करता रहता है यहाँ तक कि मैं भी उससे मुहब्बत करने लगता हूँ, और जब में उससे मुहब्बत करता हूँ तो फिर मैं ही उसके कान बन जाता हूँ, वह जो कुछ सुनता है मेरे ज़रिये सुनता है, मैं ही उसकी आँख बन जाता हूँ, वह जो कुछ देखता है मुझसे देखता है, मैं ही उसके हाथ-पाँव बन जाता हूँ, वह जो कुछ करता है मुझसे करता है। मतलब इसका यह है कि उसकी कोई हरकत व सुकून और कोई काम मेरी रज़ा के ख़िलाफ़ नहीं होता।

और इस ख़ास विलायत के दर्जे बेशुमार और असीमित हैं, इसका आला दर्जा अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का हिस्सा है, क्योंकि हर नबी का वलीयुल्लाह होना लाज़िमी है, और इसमें सबसे ऊँचा मक़ाम सय्यिदुल-अम्बिया नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का है, और अदना (मामूली) दर्जा इस विलायत का वह है जिसको सूफ़िया-ए-किराम की परिभाषा में दर्जा-ए-फ़ना कहा जाता है। जिसका हासिल यह है कि आदमी का दिल अल्लाह तआ़ला की याद में ऐसा डूब जाये कि दुनिया में किसी की मुहब्बत उस पर ग़ालिब न आये, वह जिससे मुहब्बत करता है तो अल्लाह के लिये करता है, जिससे नफ़रत करता है तो अल्लाह के लिये करता है, उसकी मुहब्बत व नफ़रत, दोस्ती व दुश्मनी में अपनी ज़ात का कोई हिस्सा नहीं होता, जिसका लाज़िमी नतीजा यह होता है कि उसका ज़ाहिर व बातिन अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलब करने में मशग़ूल रहता है और वह हर ऐसी चीज़ से परहेज़ करता है जो अल्लाह तआ़ला के नज़दीक नापसन्द हो। इसी हालत की निशानी है ज़िक्र की अधिकता और नेकी पर हमेशगी। यानी अल्लाह तआ़ला को कसरत से याद करना और हमेशा हर हाल में उसके अहकाम की फ़रमाँबरदारी करना। ये दो गुण जिस शख़्स में मौजूद हों वह वलीयुल्लाह कहलाता है, जिसमें इन दोनों में से कोई एक न हो वह इस सूची में दाख़िल नहीं। फिर जिसमें ये दोनों मौजूद हों उसके अदना व आला दर्जों की कोई हद नहीं, उन्हें दर्जों के एतिबार से औलिया-अल्लाह के दर्जों में फ़र्क़ और कमी-बेशी होती है।

एक हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया गया कि इस आयत में औलिया-अल्लाह से कौन लोग मुराद हैं? आपने फ़रमाया- वे लोग जो ख़ालिस अल्लाह के लिये आपस में मुहब्बत करते हैं, कोई दुनियावी ग़र्ज़ बीच में नहीं होती। (तफ़सीरे मज़हरी, इब्ने मर्दूया के हवाले से) और ज़ाहिर है कि यह हालत उन्हीं लोगों की हो सकती है जिनका ज़िक्र ऊपर किया गया है।

यहाँ एक सवाल और भी पैदा होता है कि विलायत के इस दर्जे को हासिल करने का तरीक़ा क्या है?

हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि उम्मत के अफ़राद को विलायत का यह दर्जा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही की सोहबत के फ़ैज़ से हासिल हो सकता है, इसी से अल्लाह के साथ ताल्लुक़ का वह रंग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हासिल था अपने हौसले के मुताबिक़ उसका कोई हिस्सा उम्मत के औलिया को मिलता है। फिर सोहबत का यह फ़ैज़ सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को बिना किसी वास्ते के हासिल था, इसी वजह से उनका दर्जा-ए-विलायत तमाम उम्मत के औलिया व क़ुतबों से ऊँचा था, बाद के लोगों को यही फ़ैज़ एक वास्ते या चन्द वास्तों से हासिल होता है, जितने वास्ते बढ़ते जाते हैं उतना ही इसमें फ़र्क़ पड़ा जाता है। यह वास्ता सिर्फ़ वही लोग बन सकते हैं जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रंग में रंगे हुए आपकी सुन्नत के पैरो हैं, ऐसे लोगों की मजलिस व सोहबत की अधिकता जबकि उसके साथ उनके इरशादात की पैरवी, इताअ़त और ज़िक्रुल्लाह की कसरत भी हो, यही नुस्ख़ा है दर्जा-ए-विलायत हासिल करने का, जो तीन चीज़ों से मिलकर बनता है। किसी वलीयुल्लाह की सोहबत, उसकी इताअ़त और ज़िक्रुल्लाह की अधिकता। शर्त यह है कि यह ज़िक्र की अधिकता मस्नून तरीक़े पर हो, क्योंकि ज़िक्र की अधिकता से दिल के आईने को जिला (रोशनी मिलती और सफ़ाई) होती है, तो वह विलायत के नूर को समोने के क़ाबिल बन जाता है। हदीस में है कि हर चीज़ के लिये सफ़ाई का कोई तरीक़ा होता है, दिल की सफ़ाई ज़िक्रुल्लाह से होती है। इसको इमाम बैहक़ी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ि. की रिवायत से नक़ल फ़रमाया है। (मज़हरी)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि एक शख़्स ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया कि आप उस शख़्स के बारे में क्या फ़रमाते हैं जो किसी बुज़ुर्ग से मुहब्बत करता है मगर अ़मल के एतिबार से उनके दर्जे तक नहीं पहुँचता? आपने फ़रमायाः

اَلْمَرْءُ مَعَ مَنْ اَحَبَّ.

यानी हर शख़्स उसी के साथ होगा जिससे उसको मुहब्बत है। इससे मालूम हुआ कि औलिया-अल्लाह की मुहब्बत व सोहबत इनसान के लिये विलायत के हासिल होने का ज़रिया है। और इमाम बैहक़ी न शुअ़बुल-ईमान में हज़रत रज़ीन रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत रज़ीन से फ़रमाया कि मैं तुम्हें

दीन का एक उसूल बतलाता हूँ जिससे तुम दुनिया व आख़िरत की फ़लाह व कामयाबी हासिल कर सकते हो। वह यह है कि ज़िक्र वालों की मज्लिस व सोहबत को लाज़िम पकड़ो और जब तन्हाई में जाओ तो जितना ज़्यादा हो सके अल्लाह के ज़िक्र से अपनी ज़बान को हरकत दो, जिससे मुहब्बत करो अल्लाह के लिये करो, जिससे नफ़रत करो अल्लाह के लिये करो। (मज़हरी)

मगर यह सोहबत व पास बैठना उन्हीं लोगों का मुफ़ीद है जो ख़ुद अल्लाह के वली और सुन्नत के पैरो हों, और जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत के ताबे नहीं वे ख़ुद विलायत के दर्जे से मेहरूम हैं, चाहे कश्फ़ व करामात उनसे कितने ही ज़ाहिर हों। और जो शख़्स ज़िक्र हुई सिफ़ात के एतिबार से वली हो अगरचे उससे कभी कोई कश्फ़ व करामत ज़ाहिर न हुई हो वह अल्लाह का वली है। (तफ़सीरे मज़हरी)

औलिया-अल्लाह की निशानी और पहचान तफ़सीरे मज़हरी में एक हदीसे क़ुदसी के हवाले से यह नक़ल की है कि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि मेरे औलिया मेरे बन्दों में से वे लोग हैं जो मेरी याद के साथ याद आयें और जिनकी याद के साथ मैं याद आऊँ। और इब्ने माजा में हज़रत असमा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने औलिया-अल्लाह की यह पहचान बतलाई:

اَلَّذِیْنَ اِذَا رُءُوْا ذُکِرَ اللّٰہُ.

यानी जिनको देखकर ख़ुदा याद आये।

ख़ुलासा यह है कि जिन लोगों की सोहबत में बैठकर इनसान को अल्लाह के ज़िक्र की तौफ़ीक़ और दुनियावी फ़िक्रों की कमी महसूस हो, यह पहचान उसके वलीयुल्लाह होने की है।

तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि अ़वाम ने जो औलिया-अल्लाह की पहचान कश्फ़ व करामत या ग़ैब की चीज़ें मालूम होने को समझ रखा है, यह ग़लत और धोखा है। हज़ारों औलिया-अल्लाह हैं जिनसे इस तरह की कोई चीज़ साबित नहीं, और इसके उलट ऐसे लोगों से कश्फ़ और ग़ैब की ख़बरें मन्क़ूल हैं जिनका ईमान भी दुरुस्त नहीं।

आयत के आख़िर में जो यह फ़रमाया गया कि औलिया के लिये दुनिया में भी ख़ुशख़बरी है और आख़िरत में भी। आख़िरत की ख़ुशख़बरी तो यह है कि मौत के वक़्त जब उसकी रूह को अल्लाह के पास ले जाया जायेगा उस वक़्त उसको ख़ुशख़बरी जन्नत की मिलेगी, फिर क़ियामत के दिन क़ब्र से उठने के वक़्त जन्नत की ख़ुशख़बरी दी जायेगी जैसा कि तबरानी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' वालों को न मौत के वक़्त कोई घबराहट होगी न क़ब्र में और न क़ब्र से उठने के वक़्त। गोया मेरी आँखें उस वक़्त का हाल देख रही हैं जब ये लोग अपनी क़ब्रों से मिट्टी झाड़ते हुए और यह कहते हुए उठेंगे:

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْٓ اَذْهَبَ عَنَّا الْحَزَنَ.

यानी शुक्र है अल्लाह का जिसने हमारा ग़म दूर कर दिया।

और दुनिया की ख़ुशख़बरी के मुताल्लिक हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वो सच्चे सपने जो इनसान ख़ुद देखे या उसके लिये कोई दूसरा देखे, जिनमें उनके लिये ख़ुशख़बरी हो। (बुख़ारी, अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से)

और दुनिया की दूसरी ख़ुशख़बरी यह है कि आ़म मुसलमान बग़ैर किसी ग़र्ज़ के उससे मुहब्बत करें और अच्छा समझें। इसके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

تِلْكَ عَاجِلُ بُشْرَى الْمُؤْمِنِ.

यानी आ़म मुसलमानों का अच्छा समझना और तारीफ़ करना मोमिन के लिये नक़द ख़ुशख़बरी है। (मुस्लिम व बग़वी)

وَلَا يَحْزُنْكَ قَوْلُهُمْ ۘ إِنَّ الْعِزَّةَ لِلَّهِ جَمِيعًا ۚ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٦٥﴾
أَلَا إِنَّ لِلَّهِ مَن فِي السَّمَاوَاتِ وَمَن فِي الْأَرْضِ ۗ وَمَا يَتَّبِعُ الَّذِينَ يَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ
شُرَكَاءَ ۚ إِن يَتَّبِعُونَ إِلَّا الظَّنَّ وَإِنْ هُمْ إِلَّا يَخْرُصُونَ ﴿٦٦﴾

व ला यस्ज़ुन्-क क़ौलुहुम। इन्नल् अ़िज़्ज़-त लिल्लाहि जमीअ़न्, हुवस्समीअ़ुल्-अ़लीम (65) अला इन्-न लिल्लाहि मन् फ़िस्समावाति व मन् फ़िल्अर्ज़ि, व मा यत्तबिअ़ुल्-लज़ी-न यद्अ़ू-न मिन् दूनिल्लाहि शु-रका-अ, इंय्यत्तबिअ़ू-न इल्लज़्ज़न्-न व इन् हुम् इल्ला यख़्रुसून (66)	और रंज मत कर उनकी बात से, असल में सब ज़ोर अल्लाह के लिये है, वही है सुनने वाला जानने वाला। (65) सुनता है! अल्लाह का है जो कोई है आसमानों में और जो कोई है ज़मीन में, और ये जो पीछे पड़े हैं अल्लाह के सिवा शरीकों को पुकारने वाले, सो ये कुछ नहीं मगर पीछे पड़े हैं अपने ख़्याल के, और कुछ नहीं मगर अटकलें दौड़ाते हैं। (66)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आपको उनकी बातें ग़म में न डालें (यानी उनकी कुफ़्रिया बातों से ग़मगीन न हों, क्योंकि इल्म और उक्त हिफ़ाज़त के अ़लावा) पूरी तरह ग़लबा (और क़ुदरत भी) ख़ुदा ही के लिये (साबित) है, (वह अपनी क़ुदरत से वायदे के अनुसार आपकी हिफ़ाज़त करेगा) वह (उनकी बातें) सुनता है (और उनकी हालत) जानता है (वह आपका बदला उनसे ख़ुद ले लेगा)। याद रखो कि जितने कुछ आसमानों में हैं और जितने ज़मीन में हैं (यानी जिन्नात, इनसान और फ़रिश्ते) ये सब अल्लाह तआ़ला ही की (मिल्क में) हैं। (उसकी हिफ़ाज़त या बदला देने को कोई

रोक नहीं सकता। पस इसलिये तसल्ली रखनी चाहिये) और (अगर किसी को शुब्हा हो कि शायद ये जिनको शरीक बनाया जा रहा है कुछ रुकावट पैदा कर सकें तो इसकी हक़ीक़त सुन लो कि) जो लोग अल्लाह तआ़ला को छोड़कर दूसरे शरीकों की इबादत कर रहे हैं (ख़ुदा जाने) किस चीज़ की पैरवी कर रहे हैं? (यानी उनके उस अ़क़ीदे की क्या दलील है, हक़ीक़त तो यह है कि कुछ भी दलील नहीं) महज़ बे-सनद ख़्याल की पैरवी कर रहे हैं, और बिल्कुल ख़्याली बातें कर रहे हैं (पस वास्तव में उनमें माबूद होने की सिफ़ात जैसे इल्म व क़ुदरत वग़ैरह नहीं हैं, फिर उनमें बाधा और रुकावट पैदा करने का शुब्हा व गुंजाईश कब है)।

هُوَ الَّذِیْ جَعَلَ لَكُمُ الَّیْلَ لِتَسْكُنُوْا فِیْهِ وَالنَّهَارَ مُبْصِرًا ۭ اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیٰتٍ
لِّقَوْمٍ یَّسْمَعُوْنَ ۝ قَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا سُبْحٰنَهٗ ۭ هُوَ الْغَنِیُّ ۭ لَهٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ وَمَا فِی الْاَرْضِ ۭ
اِنْ عِنْدَكُمْ مِّنْ سُلْطٰنٍۢ بِهٰذَا ۭ اَتَقُوْلُوْنَ عَلَی اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝ قُلْ اِنَّ الَّذِیْنَ یَفْتَرُوْنَ
عَلَی اللّٰهِ الْكَذِبَ لَا یُفْلِحُوْنَ ۝ مَتَاعٌ فِی الدُّنْیَا ثُمَّ اِلَیْنَا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ نُذِیْقُهُمُ الْعَذَابَ الشَّدِیْدَ
بِمَا كَانُوْا یَكْفُرُوْنَ ۝ ع ١٢

हुवल्लज़ी ज-अ़-ल लकुमुल्लै-ल लितस्कुनू फ़ीहि वन्नहा-र मुब्सिरन्, इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयातिल् लिक़ौमिंय्-यस्मअ़ून (67) क़ालुत्त-ख़ज़ल्लाहु व-लदन् सुब्हानहू, हुवल्-ग़निय्यु, लहू मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्अर्ज़ि इन् ज़िन्दकुम् मिन् सुल्तानिम्-बिहाज़ा, अ-तक़ूलू-न अ़लल्लाहि मा ला तअ़्लमून (68) क़ुल् इन्नल्लज़ी-न यफ़्तरू-न अ़लल्लाहिल्-कज़ि-ब ला युफ़्लिहून (69) मताअ़ुन् फ़िद्दुन्या सुम्-म इलैना मर्जिअ़ुहुम् सुम्-म नुज़ीक़ुहुमुल्-अ़ज़ाबश्शदी-द बिमा

वही है जिसने बनाया तुम्हारे वास्ते रात को कि चैन हासिल करो उसमें, और दिन दिया दिखलाने वाला, बेशक इसमें निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो सुनते हैं। (67) कहते हैं ठहरा लिया अल्लाह ने बेटा, वह पाक है, वह बेनियाज़ है, उसी का है जो कुछ है आसमानों में और जो कुछ है ज़मीन में, नहीं तुम्हारे पास कोई सनद इसकी, क्यों झूठ कहते हो अल्लाह पर जिस बात की तुमको ख़बर नहीं। (68) कह- जो लोग बाँधते हैं अल्लाह पर झूठ, भलाई नहीं पाते। (69) थोड़ा सा नफ़ा उठा लेना दुनिया में फिर हमारी तरफ़ उनको लौटना है, फिर चखायेंगे हम उनको सख़्त अ़ज़ाब बदला

कानू यक्फ़ुरून (70) ✽ ▲	उनके कुफ़्र का। (70) ✽ ▲

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम्हारे लिये रात बनाई ताकि तुम उसमें आराम करो, और दिन भी (इस अन्दाज़ से बनाया कि रोशन होने की वजह से) देखने-भालने का ज़रिया है। इस (बनाने) में उन लोगों के लिये (तौहीद) की दलीलें हैं जो (ग़ौर व फ़िक्र के साथ इन मज़ामीन को) सुनते हैं। (मुश्रिक लोग इन दलीलों में ग़ौर नहीं करते और शिर्क की बातें करते हैं, चुनाँचे) वे कहते हैं (अल्लाह की पनाह!) कि अल्लाह औलाद रखता है। सुब्हानल्लाह! (कैसी सख़्त बात कही) वह तो किसी का मोहताज नहीं (और सब उसके मोहताज हैं)। उसी की (मिल्क) है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है (पस सब मम्लूक हुए और वह मालिक हुआ। तो साबित हुआ कि कमालात में कोई उसका साझी, उसके बराबर या उसके जैसा नहीं। पस अगर औलाद को अल्लाह की जिन्स वाला कहा जाये तो किसी का उसका हम-जिन्स होने का रद्द पहले हो चुका, और अगर ग़ैर-जिन्स वाली कहो तो अपनी जिन्स के अ़लावा औलाद होना ऐब है और ऐबों से अल्लाह तआ़ला पाक है, जैसा कि "सुब्हानहू" में इस तरफ़ इशारा भी है, पस औलाद का होना बिल्कुल ही बातिल हो गया। हमने जो औलाद के न होने का दावा किया था उस पर तो हमने दलील क़ायम कर दी है, अब रहा तुम्हारा दावा सो) तुम्हारे पास (सिवाय बेहूदा दावे के) इस (दावे) पर कोई दलील (भी) नहीं, (तो) क्या अल्लाह के ज़िम्मे ऐसी बात लगाते हो जिसका तुम (किसी दलील से) इल्म नहीं रखते। आप (उनका झूठा और बोहतान बाँधने वाला होना साबित करके इस झूठ बाँधने की वईद सुनाने के लिये) कह दीजिये कि जो लोग अल्लाह तआ़ला पर झूठ गढ़ते हैं (जैसे मुश्रिक लोग) वे (कभी) कामयाब न होंगे। (और अगर किसी को शुब्हा हो कि हम तो ऐसों को दुनिया में ख़ूब कामयाब और आराम व राहत में पाते हैं तो जवाब यह है कि) यह दुनिया में (चन्द दिनों का) थोड़ा-सा ऐश है (जो बहुत जल्द ख़त्म होने वाला है) फिर (मरकर) हमारे (ही) पास उनको आना है, फिर (आख़िरत में) हम उनको उनके कुफ़्र के बदले सख़्त सज़ा (का मज़ा) चखा देंगे।

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ نُوْحٍ ۘ اِذْ قَالَ لِقَوْمِهٖ يٰقَوْمِ اِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكُمْ مَّقَامِيْ
وَتَذْكِيْرِيْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَعَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْتُ فَاَجْمِعُوْٓا اَمْرَكُمْ وَشُرَكَآءَكُمْ ثُمَّ لَا يَكُنْ اَمْرُكُمْ عَلَيْكُمْ
غُمَّةً ثُمَّ اقْضُوْٓا اِلَيَّ وَلَا تُنْظِرُوْنِ ۝ فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَمَا سَاَلْتُكُمْ مِّنْ اَجْرٍ ۭ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى
اللّٰهِ ۙ وَاُمِرْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ ۝ فَكَذَّبُوْهُ فَنَجَّيْنٰهُ وَمَنْ مَّعَهٗ فِي الْفُلْكِ وَجَعَلْنٰهُمْ خَلٰٓئِفَ
وَاَغْرَقْنَا الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا ۚ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُنْذَرِيْنَ ۝

वत्लु अ़लैहिम न-ब-अ नूहिन्। इज़् क़ा-ल लिक़ौमिही या क़ौमि इन् का-न कबु-र अ़लैकुम् मक़ामी व तज़्कीरी बिआयातिल्लाहि फ़-अ़लल्लाहि तवक्कल्तु फ़-अज्मिअू अम्रकुम् व शु-रका-अकुम् सुम्-म ला यकुन् अम्रुकुम् अ़लैकुम् ग़ुम्म-तन् सुम्मक़्ज़ू इलय्-य व ला तुन्ज़िरून (71) फ़-इन् तवल्लैतुम् फ़मा सअल्तुकुम् मिन् अज्रिन्, इन् अज्रि-य इल्ला अ़लल्लाहि व उमिर्तु अन् अकू-न मिनल्-मुस्लिमीन (72) फ़-कज़्ज़बूहु फ़-नज्जैनाहु व मम्-म-अ़हू फ़िल्फ़ुल्कि व जअ़ल्नाहुम् ख़लाइ-फ़ व अग़्रक़्नल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना फ़न्ज़ुर् कै-फ़ का-न आ़क़ि-बतुल्-मुन्ज़रीन (73)	और सुना उनको हाल नूह का। जब कहा अपनी क़ौम को- ऐ क़ौम अगर भारी हुआ है तुम पर मेरा खड़ा होना और नसीहत करना अल्लाह की आयतों से तो मैंने अल्लाह पर भरोसा किया, अब तुम सब मिलकर मुक़र्रर करो अपना काम और जमा करो अपने शरीकों को, फिर न रहे तुमको अपने काम में शुब्हा, फिर कर गुज़रो मेरे साथ और मुझको मोहलत न दो। (71) फिर अगर मुँह फेरोगे तो मैंने नहीं चाही तुमसे मज़दूरी, मेरी मज़दूरी है अल्लाह पर, और मुझको हुक्म है कि रहूँ फ़रमाँबरदार। (72) फिर उसको झुठलाया सो हमने बचा लिया उसको और जो उसके साथ थे कश्ती में, और उनको क़ायम कर दिया जगह पर, और डुबा दिया उनको जो झुठलाते थे हमारी बातों को, सो देख ले कैसा हुआ उनका अन्जाम जिनको डराया था। (73)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आप इनको नूह (अ़लैहिस्सलाम) का क़िस्सा पढ़कर सुनाईये (जो कि उस वक़्त पेश आया था) जबकि उन्होंने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! अगर तुमको (नसीहत व भलाई की बात कहने की हालत में) मेरा रहना और अल्लाह के अहकाम की नसीहत करना भारी (और नागवार) मालूम होता है तो (हुआ करे, मैं कुछ परवाह नहीं करता, क्योंकि) मेरा तो ख़ुदा ही पर भरोसा है, सो तुम (मुझको नुक़सान पहुँचाने के बारे में) अपनी तदबीर (जो कुछ कर सको) अपने शरीकों के साथ (यानी बुतों के) पुख़्ता कर लो, (यानी तुम और तुम्हारे माबूद सब मिलकर मुझे नुक़सान पहुँचाने में अपना अरमान निकाल लो) फिर तुम्हारी (वह) तदबीर तुम्हारी घुटन (और दिल की तंगी) का सबब न होनी चाहिये, (यानी अक्सर ख़ुफ़िया तदबीर से तबीयत

घुटा करती है, सो खुफ़िया तदबीर की ज़रूरत नहीं, जो कुछ तदबीर करो दिल खोलकर ऐलानिया करो, मेरा न लिहाज़ पास करो और न मेरे चले जाने और निकल जाने का अन्देशा करो, क्योंकि इतने आदमियों के पहरे में से एक आदमी का निकल जाना भी दूर की बात है, फिर छुपाने की क्या ज़रूरत है) फिर मेरे साथ (जो कुछ करना है) कर गुज़रो, और मुझको (बिल्कुल) मोहलत न दो (हासिल यह कि मैं तुम्हारी इन बातों से न डरता हूँ और न तब्लीग़ से रुक सकता हूँ)।

(यहाँ तक तो डरने की नफ़ी फ़रमाई, आगे किसी लालच व तमन्ना की नफ़ी फ़रमाते हैं, यानी) फिर भी अगर तुम मुँह ही मोड़े जाओ तो यह (समझो कि) मैंने तुमसे (इस तब्लीग़ पर) कोई मुआवज़ा तो नहीं माँगा (और मैं तुमसे क्यों माँगता, क्योंकि) मेरा मुआवज़ा तो (करम के वायदे के मुताबिक़) सिर्फ़ अल्लाह ही के ज़िम्मे है। (ग़र्ज़ कि न तुमसे डरता हूँ न कोई इच्छा रखता हूँ) और (चूँकि) मुझको हुक्म किया गया है कि मैं इताअ़त करने वालों में रहूँ (इसलिये तब्लीग़ में हुक्म की तामील रखता हूँ। अगर तुम न मानोगे मेरा क्या नुक़सान है) सो (बावजूद इस खुली और स्पष्ट नसीहत के भी) वे लोग उनको झुठलाते रहे, पस (उन पर तूफ़ान का अ़ज़ाब मुसल्लत हुआ और) हमने (उस अ़ज़ाब से) उनको और जो उनके साथ कश्ती में थे उनको निजात दी और उनको (ज़मीन) पर आबाद किया, और (बाक़ी जो लोग रह गये थे) जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था उनको (उस तूफ़ान में) ग़र्क़ कर दिया। सो देखना चाहिए उन लोगों का कैसा (बुरा) अन्जाम हुआ जो (अल्लाह के अ़ज़ाब) से डराये जा चुके थे (यानी बेख़बरी में हलाक नहीं किये गये, पहले कह दिया, समझा दिया, न माना तो सज़ा पाई)।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهٖ رُسُلًا اِلٰى قَوْمِهِمْ فَجَآءُوْهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَمَا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْا بِمَا

كَذَّبُوْا بِهٖ مِنْ قَبْلُ ۭ كَذٰلِكَ نَطْبَعُ عَلٰى قُلُوْبِ الْمُعْتَدِيْنَ ۝

सुम्-म बअ़स्ना मिम्-बअ़्दिही रुसुलन् इला क़ौमिहिम् फजाऊहुम् बिल्बय्यिनाति फ़मा कानू लियुअ्मिनू बिमा कज़्ज़बू बिही मिन् क़ब्लु, कज़ालि-क नत्बअ़ु अ़ला क़ुलूबिल्-मुअ़्तदीन (74)	फिर भेजे हमने नूह के बाद कितने पैग़म्बर उनकी क़ौम की तरफ़, फिर लाये उनके पास खुली दलीलें, सो उनसे यह न हुआ कि ईमान ले आयें उस बात पर जिसको झुठला चुके थे पहले से। इसी तरह हम मुहर लगा देते हैं दिलों पर हद से निकल जाने वालों के। (74)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर उन (नूह अ़लैहिस्सलाम) के बाद हमने और रसूलों को उनकी क़ौमों की तरफ़ भेजा, सो वे उनके पास मोजिज़े लेकर आये (मगर) फिर (भी उनकी ज़िद और हठ की यह कैफ़ियत

थी कि) जिस चीज़ को उन्होंने अव्वल (मर्तबा में एक बार) झूठा कह दिया, यह न हुआ कि फिर उसको मान लेते (और जैसे ये लोग दिल के सख़्त थे) अल्लाह तआ़ला इसी तरह काफ़िरों के दिल पर बन्द लगा देते हैं।

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ مُّوسٰى وَهٰرُوْنَ اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۟ئِهٖ بِاٰيٰتِنَا فَاسْتَكْبَرُوْا وَكَانُوْا
قَوْمًا مُّجْرِمِيْنَ ﴿٧٥﴾ فَلَمَّا جَآءَهُمُ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِنَا قَالُوْٓا اِنَّ هٰذَا لَسِحْرٌ مُّبِيْنٌ ﴿٧٦﴾ قَالَ مُوْسٰٓى اَتَقُوْلُوْنَ
لِلْحَقِّ لَمَّا جَآءَكُمْ ؕ اَسِحْرٌ هٰذَا ؕ وَلَا يُفْلِحُ السّٰحِرُوْنَ ﴿٧٧﴾ قَالُوْٓا اَجِئْتَنَا لِتَلْفِتَنَا عَمَّا وَجَدْنَا عَلَيْهِ
اٰبَآءَنَا وَتَكُوْنَ لَكُمَا الْكِبْرِيَآءُ فِى الْاَرْضِ ؕ وَمَا نَحْنُ لَكُمَا بِمُؤْمِنِيْنَ ﴿٧٨﴾ وَقَالَ فِرْعَوْنُ ائْتُوْنِىْ
بِكُلِّ سٰحِرٍ عَلِيْمٍ ﴿٧٩﴾ فَلَمَّا جَآءَ السَّحَرَةُ قَالَ لَهُمْ مُّوْسٰٓى اَلْقُوْا مَآ اَنْتُمْ مُّلْقُوْنَ ﴿٨٠﴾ فَلَمَّآ اَلْقَوْا
قَالَ مُوْسٰى مَا جِئْتُمْ بِهِ ۙ السِّحْرُ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَيُبْطِلُهٗ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُصْلِحُ عَمَلَ الْمُفْسِدِيْنَ ﴿٨١﴾ ع
وَيُحِقُّ اللّٰهُ الْحَقَّ بِكَلِمٰتِهٖ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُوْنَ ﴿٨٢﴾

सुम्-म बअ़स्ना मिम्-बअ़्दिहिम् मूसा व हारू-न इला फ़िर्औ-न व म-लइही बिआयातिना फ़स्तक्बरू व कानू क़ौमम्-मुज्रिमीन (75) फ़-लम्मा जा-अहुमुल्-हक़्क़ु मिन् अ़िन्दिना क़ालू इन्-न हाज़ा लसिह्रुम्-मुबीन (76) क़ा-ल मूसा अ-तक़ूलू-न लिल्हक़्क़ि लम्मा जा-अकुम्, असिह्रुन् हाज़ा, व ला युफ़्लिहुस्साहिरून (77) क़ालू अजिअ्-तना लितल्फ़ि-तना अ़म्मा वजद्ना अ़लैहि आबा-अना व तकू-न लकुमल्-किब्रिया-उ फ़िल्अर्ज़ि, व मा नह्नु लकुमा बिमुअ्मिनीन (78) व क़ा-ल फ़िर्औ़नुअ्तूनी

फिर भेजा हमने उनके बाद मूसा और हारून को फ़िरऔन और उसके सरदारों के पास अपनी निशानियाँ देकर, फिर तकब्बुर करने लगे और वे लोग थे गुनाहगार। (75) फिर जब पहुँची उनको सच्ची बात हमारे पास से, कहने लगे यह तो खुला जादू है। (76) कहा मूसा ने क्या तुम यह कहते हो हक़ बात को जब वह पहुँचे तुम्हारे पास, क्या यह जादू है? और निजात नहीं पाते जादू करने वाले। (77) बोले क्या तू आया है कि हमको फेर दे उस रास्ते से जिस पर पाया हमने अपने बाप-दादों को, और तुम दोनों को सरदारी मिल जाये इस मुल्क में, और हम नहीं हैं तुमको मानने वाले। (78) और बोला फ़िरऔन- लाओ मेरे पास जो

बिकुल्लि साहिरिन् अ़लीम (79) फ़-लम्मा जाअस्स-ह-रतु क़ा-ल लहुम् मूसा अल्क़ू मा अन्तुम्-मुल्क़ून (80) फ़-लम्मा अल्क़ौ क़ा-ल मूसा मा जिअ्तुम् बिहिस्-सिस्रु, इन्नल्ला-ह सयुब्तिलुहू, इन्नल्ला-ह ला युस्लिहु अ़-मलल्-मुफ़्सिदीन (81) व युहिक़्क़ुल्लाहुल्-हक़्-क़ बि-कलिमातिही व लौ करिहल्-मुज्रिमून (82) ✿	जादूगर हो पढ़ा हुआ। (79) फिर जब आये जादूगर कहा उनको मूसा ने- डालो जो तुम डालते हो। (80) फिर जब उन्होंने डाला मूसा बोला कि जो तुम लाये हो सो जादू है, अब अल्लाह इसको बिगाड़ता है, बेशक अल्लाह नहीं संवारता शरीरों के काम। (81) और अल्लाह सच्चा करता है हक़ बात को अपने हुक्म से और पड़े बुरा मानें गुनाहगार। (82) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर इन (ज़िक्र हुए) पैग़म्बरों के बाद हमने मूसा और हारून (अ़लैहिमस्सलाम) को फ़िरऔ़न और उसके सरदारों के पास अपने मोजिज़े (लाठी और चमकता हुआ हाथ) देकर भेजा, सो उन्होंने (दावे के साथ ही उनकी तस्दीक़ करने से) तकब्बुर किया (और हक़ की तलब के लिये ग़ौर भी तो न किया) और वे लोग अपराधों के आदी थे (इसलिये इताअ़त न की)। फिर जब (दावे के बाद) उनको हमारे पास से (मूसा अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत पर) सही दलील पहुँची (मुराद इससे मोजिज़ा है) तो वे लोग कहने लगे कि यक़ीनन यह ख़ुला जादू है। मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया- क्या तुम इस सही दलील के बारे में जबकि वह तुम्हारे पास पहुँची, (ऐसी बात) कहते हो (कि यह जादू है)। क्या यह जादू है? और (हालाँकि) जादूगर (जबकि दावा नुबुव्वत का करें तो मोजिज़े के ज़ाहिर करने में) कामयाब नहीं हुआ करते (और मैं कामयाब हुआ कि पहले दावा किया फिर मोजिज़े ज़ाहिर कर दिये)। वे लोग (इस तक़रीर का कुछ जवाब न दे सके, वैसे ही जहालत के तौर पर) कहने लगे क्या तुम हमारे पास इसलिए आये हो कि हमको उस तरीक़े से हटा दो जिस पर हमने अपने बुज़ुर्गों को देखा है? और (इसलिए आये हो कि) तुम दोनों को दुनिया में रियासत (और सरदारी) मिल जाये? और (तुम अच्छी तरह समझ लो कि) हम तुम दोनों को कभी न मानेंगे।

और फ़िरऔ़न ने (अपने सरदारों से) कहा कि मेरे पास तमाम माहिर जादूगरों को (जो हमारे मुल्क में हैं) हाज़िर करो। (चुनाँचे जमा किये गये) सो जब वे आये (और मूसा अ़लैहिस्सलाम से मुक़ाबला हुआ तो) मूसा ने उनसे फ़रमाया कि डालो जो कुछ तुमको (मैदान में) डालना है। सो जब उन्होंने (अपना जादू का सामान) डाला तो मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि जो कुछ तुम (बनाकर) लाये हो, जादू (यह) है, (न वह जिसको फ़िरऔ़न वाले जादू कहते हैं) यक़ीनी बात है कि अल्लाह तआ़ला इस (जादू) को अभी दरहम-बरहम "यानी तहस-नहस" किये देता है,

(क्योंकि) अल्लाह तआ़ला ऐसे फ़सादियों का काम बनने नहीं देता (जो मोजिज़े के साथ मुक़ाबले से पेश आयें) और अल्लाह तआ़ला (जिस तरह बातिल वालों के बातिल को हक़ मोजिज़ों के मुक़ाबले में बातिल कर देता है इसी तरह) हक़ (यानी सही दलील और मोजिज़े) को अपने वायदों के मुवाफ़िक़ (जो कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की नुबुव्वत को साबित करने के मुताल्लिक़ हैं) साबित कर देता है, चाहे मुजरिम (और काफ़िर) लोग (कैसा ही) नागवार समझें।

فَمَآ اٰمَنَ لِمُوْسٰٓى اِلَّا ذُرِّيَّةٌ مِّنْ قَوْمِهٖ عَلٰى خَوْفٍ
مِّنْ فِرْعَوْنَ وَمَلَا۟ئِهِمْ اَنْ يَّفْتِنَهُمْ ۭ وَاِنَّ فِرْعَوْنَ لَعَالٍ فِى الْاَرْضِ ۚ وَاِنَّهٗ لَمِنَ الْمُسْرِفِيْنَ ۝ وَقَالَ
مُوْسٰى يٰقَوْمِ اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ فَعَلَيْهِ تَوَكَّلُوْٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّسْلِمِيْنَ ۝ فَقَالُوْا عَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْنَا ۚ
رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا فِتْنَةً لِّلْقَوْمِ الظّٰلِمِيْنَ ۝ وَنَجِّنَا بِرَحْمَتِكَ مِنَ الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ۝

फ़मा आम-न लिमूसा इल्ला ज़ुर्रिय्यतुम्-मिन् क़ौमिही अ़ला ख़ौफ़िम् मिन् फ़िर्औ़-न व म-लइहिम् अंय्यफ़्ति-नहुम्, व इन्-न फ़िर्औ़-न लआ़लिन् फ़िल्अर्ज़ि व इन्नहू लमिनल् मुस्रिफ़ीन (83) व क़ा-ल मूसा या क़ौमि इन् कुन्तुम् आमन्तुम् बिल्लाहि फ़-अ़लैहि तवक्कलू इन् कुन्तुम् मुस्लिमीन (84) फ़क़ालू अ़लल्लाहि तवक्कल्ना रब्बना ला तज्अ़ल्ना फ़ित्नतल् लिल्क़ौमिज़्ज़ालिमीन (85) व नज्जिना बिरह़्मति-क मिनल् क़ौमिल्-काफ़िरीन (86)	फिर कोई ईमान न लाया मूसा पर मगर कुछ लड़के उसकी क़ौम के डरते हुए फ़िरऔ़न से और उनके सरदारों से कि कहीं उनको बिचला न दे, और फ़िरऔ़न चढ़ रहा है मुल्क में, और उसने हाथ छोड़ रखा है। (83) और कहा मूसा ने ऐ मेरी क़ौम! अगर तुम ईमान लाये हो अल्लाह पर तो उसी पर भरोसा करो अगर हो तुम फ़रमाँबरदार। (84) तब वे बोले हमने अल्लाह पर भरोसा किया, ऐ हमारे रब! न आज़मा हम पर ज़ोर इस ज़ालिम क़ौम का। (85) और छुड़ा दे हमको मेहरबानी फ़रमाकर इन काफ़िर लोगों से। (86)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

पस (जब लाठी का मोजिज़ा ज़ाहिर हुआ तो) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) पर (शुरू-शुरू में)

उनकी कौम में से सिर्फ़ थोड़े-से आदमी ईमान लाये, वे भी फ़िरऔन से और अपने हाकिमों से डरते-डरते, कि कहीं (ज़ाहिर होने पर) उनको तकलीफ़ (न) पहुँचाये, और (हकीकत में उनका डरना बेजा न था) क्योंकि फ़िरऔन उस मुल्क में ज़ोर (हुकूमत) रखता था, और यह (बात भी थी) कि वह (इन्साफ़) की हद से बाहर हो जाता था (ज़ुल्म करने लगता था। फिर जो शख़्स हुकूमत के साथ ज़ुल्म करता हो उससे तो डर लगता ही है)। और मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (जब उनको डरा हुआ देखा तो उनसे) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! अगर तुम (सच्चे दिल से) अल्लाह पर ईमान रखते हो तो (सोच-विचार मत करो बल्कि) उसी पर तवक्कुल करो, अगर तुम (उसकी) इताअ़त करने वाले हो। उन्होंने (जवाब में) अ़र्ज़ किया कि हमने अल्लाह ही पर तवक्कुल (भरोसा) किया। (उसके बाद अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की कि) ऐ हमारे परवर्दिगार! हमको इन ज़ालिमों की मश्क़ का तख़्ता "यानी ज़ुल्म का निशाना" न बना। और हमको अपनी रहमत के सदके में इन काफ़िरों से निजात दे।

وَاَوْحَيْنَآ

اِلٰى مُوْسٰى وَاَخِيْهِ اَنْ تَبَوَّاٰ لِقَوْمِكُمَا بِمِصْرَ بُيُوْتًا وَّاجْعَلُوْا بُيُوْتَكُمْ قِبْلَةً وَّاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ ؕ
وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝۸۷ وَقَالَ مُوْسٰى رَبَّنَآ اِنَّكَ اٰتَيْتَ فِرْعَوْنَ وَمَلَاَهٗ زِيْنَةً وَّاَمْوَالًا فِى
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۙ رَبَّنَا لِيُضِلُّوْا عَنْ سَبِيْلِكَ ۚ رَبَّنَا اطْمِسْ عَلٰٓى اَمْوَالِهِمْ وَاشْدُدْ عَلٰى
قُلُوْبِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْا حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَلِيْمَ ۝۸۸ قَالَ قَدْ اُجِيْبَتْ دَّعْوَتُكُمَا فَاسْتَقِيْمَا وَلَا
تَتَّبِعٰٓنِّ سَبِيْلَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝۸۹ وَجٰوَزْنَا بِبَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ الْبَحْرَ فَاَتْبَعَهُمْ فِرْعَوْنُ وَ
جُنُوْدُهٗ بَغْيًا وَّعَدْوًا ۭ حَتّٰٓى اِذَآ اَدْرَكَهُ الْغَرَقُ ۙ قَالَ اٰمَنْتُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا الَّذِىْٓ اٰمَنَتْ بِهٖ
بَنُوْٓا اِسْرَآءِيْلَ وَاَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ ۝۹۰ اٰۗلْـٰٔنَ وَقَدْ عَصَيْتَ قَبْلُ وَكُنْتَ مِنَ الْمُفْسِدِيْنَ ۝۹۱

व औहैना इला मूसा व अख़ीहि अन् तबव्वआ लिक़ौमिकुमा बिमिस्-र बुयूतंव्-वज्अ़लू बुयू-तकुम् किब्लतंव्-व अक़ीमुस्सला-त, व बश्शिरिल्-मुअ्मिनीन (87) व क़ा-ल मूसा रब्बना इन्न-क आतै-त फ़िरऔ-न व म-ल-अहू ज़ीनतंव्-व	और हुक्म भेजा हमने मूसा को और उसके भाई को कि मुक़र्रर करो अपनी क़ौम के वास्ते मिस्र में से घर और बनाओ अपने घर क़िब्ला-रू, और क़ायम करो नमाज़ और ख़ुशख़बरी दे ईमान वालों को। (87) और कहा मूसा ने ऐ हमारे रब! तूने दी है फ़िरऔन को और उसके सरदारों को रौनक़ और माल

अम्वालन् फ़िल्हयातिद्दुन्या रब्बना लियुज़िल्लू अ़न् सबीलि-क रब्बनत्मिस् अ़ला अम्वालिहिम् वश्दुद् अ़ला क़ुलूबिहिम् फ़ला युअ्मिनू हत्ता य-रवुल् अ़ज़ाबल्-अलीम (88) क़ा-ल क़द् उजीबद्-दअ्वतुकुमा फ़स्तक़ीमा व ला तत्तबिअ़ान्नि सबीलल्लज़ी-न ला यअ्लमून (89) व जावज़्ना बि-बनी इस्राईलल्-बह्-र फ़अत्ब-अ़हुम् फ़िरऔनु व जुनूदुहू बग़्यंव्-व अ़द्वन्, हत्ता इज़ा अद्र-कहुल्ग़-रक़ु क़ा-ल आमन्तु अन्नहू ला इला-ह इल्लल्लज़ी आ-मनत् बिही बनू इस्राई-ल व अ-न मिनल्-मुस्लिमीन (90) आल्आ-न व क़द् अ़सै-त क़ब्लु व कुन्-त मिनल्-मुफ़्सिदीन (91)	दुनिया की ज़िन्दगी में, ऐ रब! इस वास्ते कि बहकायें तेरी राह से, ऐ रब! मिटा दे उनके माल और सख़्त कर दे उनके दिल कि न ईमान लायें जब तक देख लें दर्दनाक अ़ज़ाब। (88) फ़रमाया- क़ुबूल हो चुकी तुम्हारी दुआ़, सो तुम दोनों साबित (जमे) रहो और मत चलो राह उनकी जो नावाक़िफ़ हैं। (89) और पार कर दिया हमने बनी इस्राईल को दरिया से, फिर पीछा किया उनका फ़िरऔ़न ने और उसके लश्कर ने शरारत और ज़ुल्म व ज़्यादती से, यहाँ तक कि जब डूबने लगा बोला- यक़ीन कर लिया मैंने कि कोई माबूद नहीं मगर जिस पर ईमान लाये बनी इस्राईल, और मैं हूँ फ़रमाँबरदारों में। (90) अब यह कहता है और तू नाफ़रमानी करता रहा इससे पहले और रहा गुमराहों में। (91)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने (इस दुआ़ के क़ुबूल करने का सामान किया कि) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) और उनके भाई (हारून अ़लैहिस्सलाम) के पास वही भेजी कि तुम दोनों अपने उन लोगों के लिये (बदस्तूर) मिस्र में घर बरक़रार रखो (यानी वे डरकर घर न छोड़ें, हम उनके मुहाफ़िज़ हैं) और (नमाज़ के वक़्त में) तुम सब अपने उन्हीं घरों को नमाज़ पढ़ने की जगह निर्धारित कर लो (मस्जिदों की हाज़िरी डर की वजह से माफ़ है) और (यह ज़रूरी है कि) नमाज़ के पाबन्द रहो (ताकि नमाज़ की बरकत से अल्लाह तआ़ला जल्दी इस मुसीबत से छुड़ा दे)। और (ऐ मूसा!) आप मुसलमानों को ख़ुशख़बरी दे दें (कि अब जल्दी यह मुसीबत ख़त्म हो जायेगी) और मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने (दुआ़ में) अ़र्ज़ किया कि ऐ हमारे रब! (हमको यह बात मालूम हो गई कि) आपने फ़िरऔ़न को और उसके सरदारों को दुनियावी ज़िन्दगी में ठाट-बाट के सामान और

तरह-तरह के माल ऐ हमारे रब! इसी वास्ते दिये हैं कि वे (लोगों को) आपकी राह से गुमराह करें (पस जब हिदायत उनके मुक़द्दर में है नहीं और जो हिक्मत थी वह हासिल हो चुकी तो अब उनके मालों और जानों को क्यों बाक़ी रखा जाये, पस) ऐ हमारे रब! उनके मालों को तबाह व बरबाद कर दीजिये और उनके दिलों को (ज़्यादा) सख़्त कर दीजिये (जिससे वे हलाकत के हक़दार हो जाएँ) सो ये ईमान न लाने पायें (बल्कि दिन-ब-दिन उनका कुफ़्र ही बढ़ता रहे) यहाँ तक कि दर्दनाक अ़ज़ाब (के हक़दार होकर उस) को देख लें (सो उस वक़्त ईमान कोई नाफ़ा नहीं देता। मूसा अ़लैहिस्सलाम ने यह दुआ़ की और हारून अ़लैहिस्सलाम आमीन कहते रहे। जैसा कि दुर्रे मन्सूर में बयान किया गया है)।

हक़ तआ़ला ने फ़रमाया कि तुम दोनों की दुआ़ क़ुबूल कर ली गई (क्योंकि आमीन कहना भी दुआ़ में शरीक होना है, यानी हम उनके मालों व जानों को अब हलाक करने वाले हैं) सो तुम (अपने ज़िम्मेदारी के काम यानी तब्लीग़ पर) साबित-क़दम रहो (यानी अगरचे हिदायत उनकी तक़दीर में न हो मगर तब्लीग़ में तुम्हारा तो फ़ायदा है), और उन लोगों की राह न चलना जिनको (हमारे वायदे के सच्चे होने का या देरी में हिक्मत होने का या तब्लीग़ के ज़रूरी होने का) इल्म नहीं (यानी हमारे वायदे को सच्चा समझो और अगर हलाक़त में देर हो जाये तो उसमें हिक्मत समझो और अपने ज़िम्मेदारी के काम में लगे रहो)।

और (जब हमने फ़िरऔ़न को हलाक करना चाहा तो मूसा अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि बनी इस्राईल को मिस्र से बाहर निकाल ले जाईये। चुनाँचे वह सब को लेकर चले और रास्ते में दरिया-ए-शोर बाधा बना, और मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से उसमें रास्ता हो गया और) हमने बनी इस्राईल को (उस) दरिया से पार कर दिया। फिर उनके पीछे-पीछे फ़िरऔ़न अपने लश्कर के साथ ज़ुल्म और ज़्यादती के इरादे से (दरिया में) चला (कि दरिया से निकलकर उनसे क़त्ल व क़िताल का मामला करे लेकिन वह दरिया से पार न हो सका) यहाँ तक कि जब डूबने लगा (और अ़ज़ाब के फ़रिश्ते नज़र आने लगे) तो (घबराकर) कहने लगा कि मैं ईमान लाता हूँ कि सिवाय उसके कि जिस पर बनी इस्राईल ईमान लाये हैं कोई माबूद नहीं, और मैं मुसलमानों में दाख़िल होता हूँ (सो मुझको इस डूबने और आख़िरत के अ़ज़ाब से निजात दी जाये। फ़रिश्ते के ज़रिये से) जवाब दिया गया कि अब ईमान लाता है (जबकि आख़िरत का नज़ारा शुरू हो गया) और (आख़िरत को देखने से) पहले सरकशी करता रहा, और फ़सादियों में दाख़िल रहा (अब निजात चाहता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम, बनी इस्राईल और फ़िरऔ़न की क़ौम के कुछ हालात और उनसे संबन्धित अहकाम बयान हुए हैं। पहली आयत में एक ख़ास वाक़िए से मुताल्लिक़ हुक्म है, वह यह कि बनी इस्राईल जो मूसा के दीन पर अ़मल करने वाले थे ये सब आ़म आ़दत के मुताबिक़ नमाज़ें सिर्फ़ अपने सूमओं (इबादत-गाहों) में अदा

करते थे, और पिछली उम्मतों के लिये हुक्म भी यही था कि उनकी नमाज़ अपने घरों में अदा नहीं होती थी, यह खुसूसी सहूलियत उम्मते मुहम्मदिया को अ़ता हुई कि हर जगह जहाँ चाहें नमाज़ अदा कर लें। सही मुस्लिम की एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी छह खुसूसियात में से एक यह भी बयान फ़रमाई है कि मेरे लिये सारी ज़मीन को मस्जिद बना दिया गया है कि नमाज़ हर जगह अदा हो जाती है, यह दूसरी बात है कि फ़र्ज़ नमाज़ों का मस्जिदों में ही अदा करना जमाअ़त के साथ सुन्नत-ए-मुअक्कदा क़रार दिया गया और नफ़्ली नमाज़ों का घरों में अदा करना अफ़ज़ल है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अ़मल इसी पर था कि मस्जिद में सिर्फ़ फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ते थे, सुन्नतें और नवाफ़िल घर में जाकर अदा फ़रमाते थे। बनी इस्राईल अपने मज़हब के मुताबिक़ इसके पाबन्द थे कि नमाज़ सिर्फ़ अपने इबादत-ख़ानों में अदा करें, फ़िरऔन जो उनको तरह-तरह की तकलीफ़ें देता और उन पर ज़ुल्म ढहाता था, उसने यह देखकर उनके तमाम इबादत-ख़ानों को ढहा दिया ताकि ये अपने मज़हब के मुताबिक़ नमाज़ न पढ़ सकें, इस पर हक़ तआ़ला ने बनी इस्राईल के दोनों पैग़म्बरों हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम को वह हुक्म दिया जो इस आयत में बयान हुआ है कि बनी इस्राईल के लिये मिस्र में नये मकान बनाये जायें और उन मकानात का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ हो, ताकि वे उन्हीं रहने के मकानों में नमाज़ अदा कर सकें।

इससे मालूम हुआ कि पिछली उम्मतों में अगरचे आ़म हुक्म यही था कि नमाज़ें सिर्फ़ इबादत-ख़ानों में पढ़ी जायें, लेकिन इस ख़ास हादसे की वजह से बनी इस्राईल के लिये इसकी वक़्ती और अस्थायी इजाज़त दे दी गयी कि घरों ही में नमाज़ अदा कर लिया करें और अपने घरों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ सीधा रखें। और यह भी कहा जा सकता है कि इस ज़रूरत के वक़्त भी उनको मख़्सूस घरों में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त दी गयी थी जिनका रुख़ क़िब्ले की तरफ़ किया गया था, आ़म घरों और आ़म मक़ामात पर नमाज़ की इजाज़त उस वक़्त भी नहीं थी, जिस तरह उम्मते मुहम्मदिया को शहर और जंगल के हर मक़ाम पर नमाज़ अदा करने की सहूलियत हासिल है। (रूहुल-मआ़नी)

यहाँ यह सवाल भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि इस आयत में बनी इस्राईल को जिस क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म दिया गया है उससे मुराद कौनसा क़िब्ला है, काबा या बैतुल-मुक़द्दस? हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि इससे मुराद काबा है और काबा ही हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों का क़िब्ला है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व रूहुल-मआ़नी) बल्कि कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि पिछले तमाम अम्बिया का क़िब्ला असल में काबा ही था।

और जिस हदीस में यह इरशाद है कि यहूद अपनी नमाज़ों में बैतुल-मुक़द्दस के सख़रा की तरफ़ रुख़ करते हैं उसको उस ज़माने पर महमूल किया जायेगा जबकि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम मिस्र छोड़कर बैतुल-मुक़द्दस की तरफ़ रवाना हुए। यह इसके ख़िलाफ़ नहीं है कि मिस्र में क़ियाम के ज़माने में आपका क़िब्ला बैतुल्लाह ही हो।

इस आयत से यह भी साबित हुआ कि नमाज़ के लिये क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने की शर्त पहले अम्बिया के ज़माने में भी थी, इसी तरह तहारत (पाकी) और सतरे-औरत (बदन के छुपाने वाले ज़रूरी हिस्से का छुपाना) पहले तमाम अम्बिया की शरीअ़तों में नमाज़ के लिये शर्त होना भी मोतबर रिवायतों से साबित है।

घरों को क़िब्ला-रुख़ बनाने का मक़सद ही यह था कि उनमें नमाज़ें अदा की जायें, इसलिये इसके बाद 'अक़ीमुस्सला-त' का हुक्म देकर यह हिदायत कर दी गयी कि अगर फ़िरऔन इबादत-गाहों में नमाज़ अदा करने से रोकता है तो इससे नमाज़ माफ़ नहीं होती, अपने घरों में अदा करो।

आयत के आख़िर में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को ख़िताब करके हुक्म दिया गया कि मोमिनों को आप ख़ुशख़बरी सुना दें कि उनका मक़सद पूरा होगा, दुश्मन पर उनको ग़लबा नसीब होगा और आख़िरत में जन्नत मिलेगी। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

आयत के शुरू में हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम दोनों को ख़िताब किया गया क्योंकि मकानात क़िब्ला-रुख़ करके उनमें नमाज़ पढ़ने की इजाज़त उन्हीं का काम था, उसके बाद सब बनी इस्राईल को शामिल करके नमाज़ क़ायम करने का हुक्म दिया गया, क्योंकि इस हुक्म में पैग़म्बर और उम्मत सब दाख़िल हैं, आख़िर में ख़ुशख़बरी देने का हुक्म ख़ास मूसा अ़लैहिस्सलाम को दिया गया क्योंकि असल शरीअ़त वाले नबी आप ही थे, जन्नत की ख़ुशख़बरी देने का आप ही को हक़ था।

दूसरी आयत में फ़िरऔन की क़ौम की इस्लाह (सुधार) से मायूस होकर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की बद्दुआ़ का ज़िक्र है, जिसके शुरू में उन्होंने हक़ तआ़ला की बारगाह में यह अ़र्ज़ किया है कि आपने फ़िरऔन की क़ौम को दुनिया की ज़ीनत के साज़ व सामान और माल व दौलत बहुत अ़ता फ़रमा रखा है, मिस्र से लेकर हब्शा की ज़मीन तक सोने चाँदी और ज़बर्जद व ज़मर्रुद याक़ूत वग़ैरह जवाहिरात की कानें अ़ता फ़रमा रखी हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) जिसका असर यह है कि वे लोगों को तेरे रास्ते से गुमराह करते हैं, क्योंकि आ़म लोग उनके ज़ाहिरी साज़ व सामान और ऐश व राहत को देखकर इस शक में पड़ जाते हैं कि अगर ये गुमराही पर होते तो इनको अल्लाह तआ़ला की ये नेमतें क्यों मिलतीं, क्योंकि आ़म लोगों की नज़रें इस हक़ीक़त तक नहीं पहुँचती कि दुनिया की तरक़्क़ी बग़ैर नेक अ़मल के किसी इनसान के हक़ पर होने की अ़लामत नहीं हो सकती। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने फ़िरऔन की क़ौम के सुधार से मायूस होने के बाद उनके माल व दौलत से दूसरों की गुमराही का ख़तरा महसूस करके बद्दुआ़ की 'रब्बनत्मिस् अ़ला अमवालिहिम' यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! इनके मालों की सूरत बदलकर बेशक्ल और बेकार कर दे।

हज़रत क़तादा रह. का बयान है कि इस दुआ़ का असर यह ज़ाहिर हुआ कि फ़िरऔन की क़ौम के तमाम ज़र व जवाहिरात और नक़द सिक्के और बाग़ों खेतों की सब पैदावार पत्थरों की शक्ल में तब्दील हो गये। हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रह. के ज़माने में एक थैला पाया गया

जिसमें फ़िरऔन के ज़माने की चीज़ें थीं, उनमें अण्डे और बादाम भी देखे गये जो बिल्कुल पत्थर थे। तफ़सीर के इमामों ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने उनके तमाम फलों, तरकारियों और ग़ल्ले को पत्थर बना दिया था, और यह अल्लाह तआ़ला की उन नौ आयतों (मोजिज़ों) में से है जिसका ज़िक्र क़ुरआने करीम में आया है:

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍ م بَيِّنٰتٍ.

दूसरी बद्दुआ़ हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उनके लिये यह की:

وَاشْدُدْ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوْا حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَلِيْمَo

यानी ऐ परवर्दिगार! उनके दिलों को ऐसा सख़्त कर दे कि उनमें ईमान और किसी ख़ैर की सलाहियत ही न रहे, ताकि वे दर्दनाक अ़ज़ाब आने से पहले ईमान न ला सकें।

यह बद्दुआ़ बज़ाहिर एक रसूल व पैग़म्बर की ज़बान से बहुत दूर की मालूम होती है क्योंकि पैग़म्बर का वज़ीफ़ा-ए-ज़िन्दगी ही यह होता है कि लोगों को ईमान और नेक अ़मल की तरफ़ दावत दें और इसके लिये तदबीरें करें।

मगर यहाँ वाक़िआ़ यह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम सारी तदबीरें करने के बाद उनकी इस्लाह से मायूस हो चुके थे और अब चाहते थे कि ये अपने आमाल की सज़ा देखें। इसमें यह शंका व संभावना भी थी कि कहीं ये लोग अ़ज़ाब आता देखकर ईमान का इक़रार न कर लें, और इस तरह अ़ज़ाब टल जाये, इसलिये कुफ़्र से बुग़ज़ व नफ़रत इस दुआ़ का सबब बनी। जैसे फ़िरऔन ग़र्क़ होने के वक़्त ईमान का इक़रार करने लगा तो जिब्रीले अमीन ने उसका मुँह बन्द कर दिया कि कहीं अल्लाह की रहमत मुतवज्जह न हो जाये और यह अ़ज़ाब से न बच जाये।

और यह भी हो सकता है कि यह बद्दुआ़ दर हक़ीक़त बद्दुआ़ न हो बल्कि ऐसी हो जैसे शैतान पर लानत, कि वह तो क़ुरआनी वज़ाहत के मुताबिक़ ख़ुद ही मलऊन है फिर उस पर लानत करने का मन्शा इसके सिवा नहीं कि जिस पर अल्लाह तआ़ला ने लानत मुसल्लत कर दी हम भी उस पर लानत करते हैं। इस सूरत में मतलब इसका यह होगा कि उनके दिलों का सख़्त और ईमान व सुधार के योग्य न होना अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर हो चुका था, हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने बद्दुआ़ की सूरत में उसका इज़हार फ़रमाया।

तीसरी आयत में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की इस दुआ़ की क़ुबूलियत को बयान फ़रमाया है, मगर उनवान में हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम को भी दुआ़ में शरीक क़रार देकर यह ख़िताब किया गया:

قَدْ اُجِيْبَتْ دَّعْوَتُكُمَا.

यानी तुम दोनों की दुआ़ क़ुबूल कर ली गयी। वजह यह थी कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम यह दुआ़ कर रहे थे तो हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम आमीन कहते जाते थे। इससे मालूम हुआ कि किसी दुआ़ पर आमीन कहना भी दुआ़ ही में दाख़िल है, और चूँकि दुआ़ का मस्नून तरीक़ा क़ुरआने करीम में आहिस्ता आवाज़ से करने का बतलाया गया है तो इससे

आमीन को भी आहिस्ता कहने की तरजीह मालूम होती है।

इस आयत में दुआ के क़ुबूल होने की इत्तिला इन दोनों पैग़म्बरों को दे दी गयी मगर थोड़ा सा इम्तिहान इनका भी लिया गया कि दुआ की क़ुबूलियत का असर बक़ौल इमाम बग़वी चालीस साल बाद ज़ाहिर हुआ, इसी लिये इस आयत में दुआ के क़ुबूल होने के ज़िक्र के साथ इन दोनों हज़रात को यह भी हिदायत कर दी गयी किः

فَاسْتَقِيْمَا وَلَا تَتَّبِعٰۤنِّ سَبِيْلَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ۝

यानी अपनी ज़िम्मेदारी के काम यानी दावत व तब्लीग़ में लगे रहें, दुआ के क़ुबूल होने का असर देर में ज़ाहिर हो तो जाहिलों की तरह जल्दबाज़ी न करें।

चौथी आयत में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के मशहूर मोजिज़े दरिया से पार होने का और फ़िरऔन के ग़र्क़ होने का वाक़िआ ज़िक्र करने के बाद फ़रमाया हैः

حَتّٰىٓ اِذَآ اَدْرَكَهُ الْغَرَقُ قَالَ اٰمَنْتُ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّا الَّذِيْٓ اٰمَنَتْ بِهٖ بَنُوْٓا اِسْرَآءِيْلَ وَاَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ۝

यानी जब उसको पानी में डूबने ने पकड़ लिया तो बोल उठा कि मैं ईमान लाता हूँ इस बात पर कि जिस ख़ुदा पर बनी इस्राईल ईमान लाये हैं उसके सिवा कोई माबूद नहीं, और मैं इताअत करने वालों में से हूँ।

पाँचवीं आयत में ख़ुद हक़ तआला शानुहू की तरफ़ से इसका यह जवाब आया हैः

آٰلْـٰٔنَ وَقَدْ عَصَيْتَ قَبْلُ وَكُنْتَ مِنَ الْمُفْسِدِيْنَ۝

यानी क्या तू अब मुसलमान होता है जबकि ईमान व इस्लाम का वक़्त गुज़र चुका।

इससे साबित हुआ कि ऐन मौत के वक़्त का ईमान लाना शरअन मोतबर नहीं। इसकी अधिक वज़ाहत उस हदीस से होती है जिसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला बन्दे की तौबा क़ुबूल फ़रमाते रहते हैं जब तक ग़रग़रा-ए-मौत का वक़्त न आ जाये। (तिर्मिज़ी)

ग़रग़रा-ए-मौत से मुराद वह वक़्त है जब रूह के निकलने के वक़्त फ़रिश्ते सामने आ जाते हैं, उस वक़्त दारुल-अमल (यानी दुनिया) की ज़िन्दगी ख़त्म होकर आख़िरत के अहकाम शुरू हो जाते हैं, इसलिये उस वक़्त का कोई अमल काबिले क़ुबूल नहीं, न ईमान न कुफ़्र। ऐसे वक़्त जो ईमान लाता है उसको भी मोमिन नहीं कहा जायेगा और उसके साथ कफ़न दफ़न में मुसलमानों के जैसा मामला न किया जायेगा, जैसा कि फ़िरऔन के इस वाक़िए से साबित है कि तमाम हज़रात इस पर एकमत हैं कि फ़िरऔन की मौत कुफ़्र पर हुई है, क़ुरआनी वज़ाहतों से भी यही स्पष्ट है, और जिस किसी ने फ़िरऔन के इस ईमान को मोतबर कहा है या तो उसकी कोई तावील की जाये वरना उसे ग़लत कहा जायेगा। (तफ़सीर रूहुल-मआनी)

इसी तरह अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता ऐसे ही रूह निकलने की हालत में किसी शख़्स की ज़बान से कुफ़्र का कलिमा निकल जाये तो उसको काफ़िर भी न कहा जायेगा बल्कि उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़कर मुसलमानों की तरह दफ़न किया जायेगा और उसके कलिमा-ए-कुफ़्र की तावील

की जायेगी जैसा कि बाज़ औलिया-अल्लाह के हालात से इसकी ताईद होती है कि जो कलिमा उनकी ज़बान से निकल रहा था लोग उसको कलिमा-ए-कुफ़्र समझकर परेशान थे बाद में कुछ होश आया और अपना मतलब बतलाया तो सब को इत्मीनान हो गया कि वह तो ईमान ही का कलिमा था।

ख़ुलासा यह है कि जिस वक़्त रूह निकल रही हो और नज़ा का आ़लम हो वह वक़्त दुनिया की ज़िन्दगी में शुमार नहीं, उस वक़्त का कोई अ़मल भी शरअ़न मोतबर नहीं, उससे पहले पहले हर अ़मल मोतबर है। मगर देखने वालों को इसमें बड़ी एहतियात लाज़िम है, क्योंकि इसका सही अन्दाज़ा करने में ग़लती हो सकती है कि यह वक़्त रूह के निकलने का और ग़रग़रा-ए-मौत का है या उससे पहले का।

فَالْيَوْمَ نُنَجِّيْكَ بِبَدَنِكَ لِتَكُوْنَ لِمَنْ خَلْفَكَ اٰيَةً ۭ وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ عَنْ اٰيٰتِنَا
لَغٰفِلُوْنَ ۝ وَلَقَدْ بَوَّاْنَا بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ مُبَوَّاَ صِدْقٍ وَّرَزَقْنٰهُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ ۚ فَمَا اخْتَلَفُوْا ٩ ع ١٠ ١٣
حَتّٰى جَاۗءَهُمُ الْعِلْمُ ۭ اِنَّ رَبَّكَ يَقْضِيْ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيْمَا كَانُوْا فِيْهِ يَخْتَلِفُوْنَ ۝ فَاِنْ
كُنْتَ فِيْ شَكٍّ مِّمَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ فَسْـَٔـلِ الَّذِيْنَ يَقْرَءُوْنَ الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكَ ۚ لَقَدْ جَاۗءَكَ
الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۝ وَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ
فَتَكُوْنَ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۝ اِنَّ الَّذِيْنَ حَقَّتْ عَلَيْهِمْ كَلِمَتُ رَبِّكَ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝ وَلَوْ جَاۗءَتْهُمْ
كُلُّ اٰيَةٍ حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَلِيْمَ ۝ فَلَوْلَا كَانَتْ قَرْيَةٌ اٰمَنَتْ فَنَفَعَهَآ اِيْمَانُهَآ اِلَّا قَوْمَ
يُوْنُسَ ۭ لَمَّآ اٰمَنُوْا كَشَفْنَا عَنْهُمْ عَذَابَ الْخِزْيِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَمَتَّعْنٰهُمْ اِلٰى حِيْنٍ ۝

फ़ल्यौ-म नुनज्जी-क बि-ब-दनि-क लितकू-न लिमन् ख़ल्फ़-क आयतन्, व इन्-न कसीरम् मिनन्नासि अ़न् आयातिना लग़ाफ़िलून (92) ✿	सो आज बचाये देते हैं हम तेरे बदन को ताकि हो तू अपने पिछलों के वास्ते निशानी, और बेशक बहुत लोग हमारी क़ुदरतों पर तवज्जोह नहीं करते। (92) ✿
व ल-क़द् बव्वअ्ना बनी इस्राई-ल मुबव्व-अ सिद्क़िंव्-व रज़क़्नाहुम् मिनत्तय्यिबाति फ़मख़्त-लफ़ू हत्ता जा-अहुमुल्-ज़िल्मु, इन्-न रब्ब-क	और जगह दी हमने बनी इस्राईल को पसन्दीदा जगह और खाने को दीं सुथरी चीज़ें सो उनमें फूट नहीं पड़ी यहाँ तक कि पहुँची उनको ख़बर, बेशक तेरा रब उनमें फ़ैसला करेगा क़ियामत के दिन

यक़्ज़ी बैनहुम् यौमल्-क़ियामति फ़ीमा कानू फ़ीहि यख़्तलिफ़ून (93) फ़-इन् कुन्-त फ़ी शक्किम् मिम्मा अन्ज़ल्ना इलै-क फ़स्अलिल्लज़ी-न यक़्रऊनल्-किता-ब मिन् क़ब्लि-क ल-क़द् जा-अकल्-हक़्क़ु मिर्रब्बि-क फ़ला तकूनन्-न मिनल्-मुम्तरीन (94) व ला तकूनन्-न मिनल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिल्लाहि फ़-तकू-न मिनल्ख़ासिरीन (95) इन्नल्लज़ी-न हक़्क़त् अ़लैहिम् कलि-मतु रब्बि-क ला युअ्मिनून (96) व लौ जाअत्हुम् कुल्लु आयतिन् हत्ता य-रवुल् अ़ज़ाबल्-अलीम (97) फ़लौ ला कानत् क़र्यतुन् आम-नत् फ़-न-फ़-अ़हा ईमानुहा इल्ला क़ौ-म यूनु-स, लम्मा आमनू कशफ़्ना अ़न्हुम् अ़ज़ाबल्-ख़िज़्यि फ़िल्हयातिद्दुन्या व मत्तअ्नाहुम् इला हीन (98)	जिस बात में कि उनमें फूट पड़ी। (93) सो अगर तू है शक में उस चीज़ से जो कि उतारी हमने तेरी तरफ़ तो पूछ उनसे जो पढ़ते हैं किताब तुझसे पहले, बेशक आई है तेरे पास हक़ बात तेरे रब से, सो तू हरगिज़ मत हो शक करने वाला। (94) और मत हो उनमें जिन्होंने झुठलाया अल्लाह की बातों को फिर तू भी हो जाये ख़राबी में पड़ने वाला। (95) जिन पर साबित हो चुकी बात तेरे रब की वे ईमान न लायेंगे। (96) अगरचे पहुँचें उनको सारी निशानियाँ, जब तक न देख लें वे दर्दनाक अ़ज़ाब। (97) सो क्यों न हुई कोई बस्ती कि ईमान लाती फिर काम आता उनको ईमान लाना मगर यूनुस की क़ौम, जब वह ईमान लाई उठा लिया हमने उन पर से ज़िल्लत का अ़ज़ाब दुनिया की ज़िन्दगानी में, और फ़ायदा पहुँचाया हमने उनको एक वक़्त तक। (98)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

सो (जो तू निजात चाहता है उसके बजाय) आज हम तेरे बदन (यानी तेरी लाश को, पानी में नीचे बैठ जाने से) निजात देंगे, ताकि तू उनके लिये (इब्रत का) निशान हो जो तेरे बाद (मौजूद) हैं (कि तेरी बदहाली और तबाही देखकर अल्लाह के अहकाम की मुख़ालफ़त से बचें) और हक़ीक़त यह है कि (फिर भी) बहुत-से आदमी हमारी (ऐसी-ऐसी) निशानियों से (यानी सीख लेने वाली चीज़ों से) ग़ाफ़िल हैं (और अल्लाह के अहकाम की मुख़ालफ़त से नहीं डरते)।

और हमने (फ़िरऔन को ग़र्क़ करने के बाद) बनी इस्राईल को बहुत अच्छा ठिकाना रहने को दिया (कि उस वक़्त तो मिस्र के मालिक हो गये और उनकी पहली ही नस्ल को बैतुल-मुक़द्दस और मुल्के शाम अमालिक़ा पर फ़तह देकर अ़ता फ़रमाया) और हमने उनको उम्दा और पाक चीज़ें (बाग़ों और चश्मों वग़ैरह से) खाने को दीं। (मिस्र में भी बाग़ात व चश्मे थे और मुल्क शाम के बारे में 'बारक्ना फ़ीहा' आया है) सो (चाहिये था कि हमारी इताअ़त में ज़्यादा सक्रिय रहते लेकिन उन्होंने उल्टा दीन में इख़्तिलाफ़ करना शुरू किया और ग़ज़ब यह कि) उन्होंने (जहालत की वजह से) इख़्तिलाफ़ नहीं किया, यहाँ तक कि उनके पास (अहकाम का) इल्म पहुँच गया (था और फिर इख़्तिलाफ़ किया। आगे उस इख़्तिलाफ़ व झगड़े पर वईद है कि) यक़ीनी बात है कि आपका रब उन (इख़्तिलाफ़ करने वालों) के बीच क़ियामत के दिन उन मामलों में (अ़मली) फ़ैसला करेगा जिनमें वे इख़्तिलाफ़ किया करते थे। फिर (दीने मुहम्मदी की हक़ीक़त को साबित करने के वास्ते हम एक ऐसा काफ़ी तरीक़ा बतलाते हैं कि जिसके पास अल्लाह की वही न आयी हो उसके लिये तो कैसे काफ़ी न होगा, वह ऐसा है कि आप वही वाले यानी पैग़म्बर हैं मगर आप से भी इसका ख़िताब अगर एक शर्त के साथ किया जाये तो मुम्किन है, इस तरह से कि) अगर मान लीजिये आप उस (किताब) की तरफ़ से शक (व शुब्हे) में हों जिसको हमने आपके पास भेजा है, तो (उस शक के दूर करने का एक आसान तरीक़ा यह भी है कि) आप उन लोगों से पूछ लीजिये जो आप से पहले (की) किताबों को पढ़ते हैं (मुराद तौरात व इन्जील हैं, वे एक पढ़ने वाले की हैसियत से इसकी भविष्यवाणियों की बिना पर इस क़ुरआन को सच बतलाएँगे), बेशक आपके पास आपके रब की तरफ़ से सच्ची किताब आई है, आप हरगिज़ शक करने वालों में न हों। और न (शक करने वालों से बढ़कर) उन लोगों में से हों जिन्होंने अल्लाह तआ़ला की आयतों को झुठलाया, कहीं आप (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) तबाह न हो जाएँ।

यक़ीनन जिन लोगों के हक़ में आपके रब की (यह तक़दीरी) बात (कि ईमान न लाएँगे) साबित हो चुकी है वे (कभी) ईमान न लाएँगे। चाहे उनके पास (हक़ के सुबूत की) तमाम दलीलें पहुँच जाएँ, जब तक कि दर्दनाक अ़ज़ाब को न देख लें (मगर उस वक़्त ईमान फ़ायदेमन्द नहीं होता)। चुनाँचे (जिन बस्तियों पर अ़ज़ाब आ चुका है उनमें से) कोई बस्ती ईमान न लाई कि ईमान लाना उसको फ़ायदेमन्द होता, (क्योंकि उनके ईमान के साथ अल्लाह की मर्ज़ी शामिल न हुई थी) हाँ मगर यूनुस (अ़लैहिस्सलाम) की क़ौम, (कि उनके ईमान के साथ अल्लाह की मशीयत शामिल हुई थी, इसलिये वे आने वाले अ़ज़ाब की प्रारम्भिक निशानियों को देखकर ईमान ले आये, और) जब वे ईमान ले आये तो हमने रुस्वाई के अ़ज़ाब को दुनियावी ज़िन्दगी में उन पर से टाल दिया, और उनको एक ख़ास वक़्त (यानी मौत के वक़्त) तक (ख़ैर व ख़ूबी के साथ) ऐश "यानी चैन व सुकून" दिया (पस दूसरी बस्तियों का ईमान न लाना और क़ौमे यूनुस का ईमान लाना दोनों अल्लाह की मशीयत व मर्ज़ी से हुए)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में फ़िरऔ़न को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि पानी में ग़र्क़ होने के बाद हम तेरे बदन को पानी से निकाल देंगे, ताकि तेरा यह बदन बाद के लोगों के लिये अल्लाह की क़ुदरत की निशानी और इब्रत बन जाये।

इसका वाक़िआ़ यह है कि दरिया से पार होने के बाद जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल को फ़िरऔ़न के हलाक होने की ख़बर दी तो वे लोग फ़िरऔ़न से कुछ इस क़द्र मरऊब व मग़लूब थे कि इसका इनकार करने लगे और कहने लगे कि फ़िरऔ़न हलाक नहीं हुआ, अल्लाह तआ़ला ने उनकी रहनुमाई और दूसरों की इब्रत के लिये दरिया की एक लहर के ज़रिये फ़िरऔ़न की मुर्दा लाश को किनारे पर डाल दिया जिसको सब ने देखा और उसके हलाक होने का यक़ीन आया, और उसकी यह लाश सब के लिये इब्रत का नमूना बन गयी। फिर मालूम नहीं कि इस लाश का क्या अन्जाम हुआ। जिस जगह फ़िरऔ़न की लाश पाई गयी थी आज तक वह जगह जबल-ए-फ़िरऔ़न के नाम से परिचित है।

कुछ मुद्दत हुई अख़बारों में यह ख़बर छपी थी कि फ़िरऔ़न की लाश सही सालिम बरामद हुई और आ़म लोगों ने उसको देखा और वह आज तक क़ाहिरा के अ़जायब-घर में सुरक्षित है, मगर यह यक़ीन से नहीं कहा जा सकता कि यह वही फ़िरऔ़न है जिसका मुक़ाबला हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से हुआ था या कोई दूसरा फ़िरऔ़न है, क्योंकि लफ़्ज़ **फ़िरऔ़न** किसी एक शख़्स का नाम नहीं, उस ज़माने में मिस्र के हर बादशाह को फ़िरऔ़न का लक़ब दिया जाता था।

मगर कुछ अ़जब नहीं कि क़ुदरत ने जिस तरह ग़र्क़ हुई लाश को इब्रत के लिये किनारे पर डाल दिया था इसी तरह आने वाली नस्लों की इब्रत के लिये उसको गलने सड़ने से भी महफ़ूज़ रखा हो, और अब तक मौजूद हो।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया कि बहुत से लोग हमारी आयतों और निशानियों से ग़ाफ़िल हैं, उनमें ग़ौर व फ़िक्र नहीं करते और इब्रत हासिल नहीं करते, वरना आ़लम के हर ज़र्रे ज़र्रे में ऐसी निशानियाँ मौजूद हैं जिनको देखकर अल्लाह तआ़ला को और उसकी कामिल क़ुदरत को पहचाना जा सकता है।

दूसरी आयत में फ़िरऔ़न के बुरे अन्जाम के मुक़ाबले में उस क़ौम का भविष्य दिखलाया है जिसको फ़िरऔ़न ने हक़ीर व ज़लील बना रखा था। फ़रमाया कि हमने बनी इस्राईल को अच्छा ठिकाना अ़ता फ़रमाया कि पूरा मुल्के मिस्र भी उनको मिल गया और उर्दुन व फ़िलिस्तीन की पवित्र ज़मीन भी उनको मिल गयी, जिसको अल्लाह तआ़ला ने अपने ख़लील हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम और उनकी औलाद के लिये मीरास बना दिया था।

अच्छे ठिकाने को क़ुरआन में 'मुबव्व-अ सिद्क़िन्' के लफ़्ज़ से ताबीर किया है। 'सिद्क़' के मायने इस जगह नेक और मुनासिब के हैं। मतलब यह है कि ऐसा ठिकाना उनको दिया जो उनके लिये हर एतिबार से लायक़ और मुनासिब था। फिर फ़रमाया कि हमने उनको हलाल व

पाक चीज़ों से रिज़्क़ दिया कि दुनिया की तमाम लज़्ज़तें और राहतें उनको अ़ता फ़रमा दीं।

आयत के आख़िर में फिर उनकी टेढ़ी चाल और ग़लत आमाल का ज़िक्र है कि उनमें भी बहुत से लोगों ने सत्ता व ताक़त पाने के बाद अल्लाह तआ़ला की नेमतों की क़द्र न की और उसकी इताअ़त से फिर गये। तौरात में जो निशानियाँ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ये लोग पढ़ते थे उसका तक़ाज़ा यह था कि आपके तशरीफ़ लाने के बाद सबसे पहले यही लोग ईमान लाते, मगर यह अ़जीब इत्तिफ़ाक़ हुआ कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने से पहले तो ये सब लोग नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ पर एतिक़ाद रखते और उनकी निशानियाँ और उनके ज़ाहिर होने का वक़्त क़रीब होने की ख़बरें लोगों को बताया करते थे और अपनी दुआ़ओं में नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ का वसीला देकर दुआ़ किया करते थे, मगर जब नबी-ए-आख़िरुज़्ज़माँ अपनी पूरी गवाहियों और तौरात की बतलाई हुई निशानियों के साथ तशरीफ़ लाये तो ये लोग आपस में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) करने लगे, कुछ लोग ईमान लाये बाक़ियों ने इनकार किया। इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने को लफ़्ज़ 'जा-अहुमुल्-इल्मु' से ताबीर किया है। यहाँ 'इल्म' से मुराद यक़ीन भी हो सकता है, तो मायने यह होंगे कि जब सुबूत और आँखों देखे के साथ यक़ीन के असबाब जमा हो गये तो ये लोग इख़्तिलाफ़ (मतभेद और विवाद) करने लगे।

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह इल्म से मुराद मालूम है, यानी जब वह हस्ती सामने आ गयी जो तौरात की भविष्यवाणियों के ज़रिये पहले से मालूम थी तो अब लगे इख़्तिलाफ़ करने।

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उनके इख़्तिलाफ़ का फ़ैसला फ़रमा देंगे, हक़ व बातिल निखर जायेगा, हक़ वाले जन्नत में और बातिल (ग़ैर-हक़) वाले दोज़ख़ में भेजे जायेंगे।

तीसरी आयत में बज़ाहिर ख़िताब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है मगर यह ज़ाहिर है कि आपको वही में शक होने की संभावना और गुमान नहीं, इसलिये इस ख़िताब के ज़रिये मक़सूद उम्मत को सुनाना है, ख़ुद आप मक़सूद नहीं। और यह भी हो सकता है कि यह ख़िताब आ़म इनसान को हो, कि ऐ इनसान! अगर तुझको अल्लाह की इस वही में कोई शक है जो मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के माध्यम से तेरी तरफ़ भेजी गयी तो तू उन लोगों से मालूम कर जो तुझसे पहले अल्लाह की किताब तौरात व इन्जील पढ़ते थे, वे तुझे बतलायेंगे कि पिछले तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी किताबें मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़ुशख़बरी देती आई हैं, जिससे तेरी शंकायें दूर हो जायेंगी।

तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि जिस शख़्स को दीन के मामले में कोई शुब्हा पेश आ जाये तो उस पर लाज़िम है कि उलेमा-ए-हक़ से सवाल करके अपने शुब्हों को दूर करे, उनको पालता न रहे।

चौथी, पाँचवीं और छठी आयतों में इसी मज़मून की ताईद व ताकीद और ग़फ़लत बरतने

वालों को चेतावनी है।

सातवीं आयत में ग़फ़लत बरतने वाले इनकारी लोगों को इस पर तंबीह की गयी है कि ज़िन्दगी की फ़ुर्सत को ग़नीमत जानो, इनकार व नाफ़रमानी से अब भी बाज़ आ जाओ, वरना एक ऐसा वक़्त आने वाला है जब तौबा करोगे तो तौबा क़ुबूल न होगी, ईमान लाओगे तो ईमान मक़बूल न होगा, और वह वक़्त वह होगा जबकि मौत के वक़्त आख़िरत का अ़ज़ाब सामने आ जाये। इसी सिलसिले में हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम का एक वाक़िआ़ ज़िक्र फ़रमाया गया जिसमें बड़ी इब्रतें और नसीहतें हैं।

इस आयत में इरशाद है कि ऐसा क्यों न हुआ कि इनकारी क़ौमें ऐसे वक़्त ईमान ले आतीं कि उनका ईमान उनको नफ़ा देता, यानी मौत के वक़्त या अ़ज़ाब ज़ाहिर होने और अ़ज़ाब में मुब्तला हो चुकने के बाद या क़ियामत क़ायम होने के वक़्त जबकि तौबा का दरवाज़ा बन्द हो जायेगा किसी की तौबा और ईमान मक़बूल न होगा, उससे पहले पहले अपनी नाफ़रमानी व हठधर्मी से बाज़ आ जातीं और ईमान ले आतीं, सिवाय यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम के, कि उन्होंने ऐसा वक़्त आने से पहले ही जब ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब आता देखा तो फ़ौरन तौबा कर ली और ईमान ले आये, जिसकी वजह से हमने उनसे रुस्वा करने वाला अ़ज़ाब हटा लिया।

इस तफ़सीर का हासिल यह है कि दुनिया का अ़ज़ाब सामने आ जाने पर भी तौबा का दरवाज़ा बन्द नहीं होता बल्कि तौबा हो सकती है, लेकिन आख़िरत का अ़ज़ाब सामने आ जाने के वक़्त तौबा क़ुबूल नहीं होती, और आख़िरत के अ़ज़ाब का सामने आना या तो क़ियामत के दिन होगा या मौत के वक़्त, चाहे वह तबई मौत हो या किसी दुनियावी अ़ज़ाब में मुब्तला होकर हो, जैसे फ़िरऔ़न को पेश आया।

इसलिये यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की तौबा क़ुबूल हो जाना अल्लाह के आ़म उसूल के ख़िलाफ़ नहीं बल्कि उसके मातहत है, क्योंकि उन्होंने अगरचे अ़ज़ाब आता हुआ देखकर तौबा की मगर अ़ज़ाब में मुब्तला होने और मौत से पहले कर ली, जबकि फ़िरऔ़न और दूसरे लोगों ने अ़ज़ाब में मुब्तला होने के बाद और ग़रग़रा-ए-मौत के वक़्त तौबा की और ईमान का इक़रार किया इसलिये उनका ईमान मोतबर न हुआ और तौबा क़ुबूल न हुई।

यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम के वाक़िए की एक नज़ीर ख़ुद क़ुरआने करीम में बनी इस्राईल का वह वाक़िआ़ है जिसमें तूर पहाड़ को उनके सरों पर लटका करके उनको डराया गया और तौबा करने का हुक्म दिया गया, उन्होंने तौबा कर ली तो वह तौबा क़ुबूल हुई, जिसका ज़िक्र सूरः ब-क़रह में आया है:

رَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّوْرَ خُذُوْا مَآ اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ.

'हमने उनके सरों पर तूर पहाड़ को लटकाकर हुक्म दिया कि जो अहकाम तुम्हें दिये गये हैं उनको मज़बूती से पकड़ो।'

वजह यह थी कि उन्होंने अ़ज़ाब के पड़ने और मौत में मुब्तला होने से पहले महज़ अ़ज़ाब

का अन्देशा देखकर तौबा कर ली थी। इसी तरह यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने अ़ज़ाब को आता हुआ देखकर सच्चे दिल और रो-गिड़गिड़ा कर तौबा कर ली जिसकी तफ़सील आगे आती है, तो उस तौबा का क़ुबूल हो जाना ज़िक्र हुए नियम के ख़िलाफ़ नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इस जगह मौजूदा ज़माने के बाज़ हज़रात से एक सख़्त ग़लती हुई है कि हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ रिसालत के फ़रीज़े के अदा करने में कोताहियों की निस्बत कर दी और क़ौम से अ़ज़ाब हट जाने का सबब पैग़म्बर की कोताही को क़रार दिया, और उसी कोताही को उन पर नाराज़गी का सबब बनाया जिसका ज़िक्र सूरः अम्बिया और सूरः सॉफ़्फ़ात में आया है। उनके अलफ़ाज़ ये हैं:

"क़ुरआन के इशारात और सहीफ़ा-ए-यूनुस की तफ़सीलात पर ग़ौर करने से इतनी बात साफ़ मालूम हो जाती है कि हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम से फ़रीज़ा-ए-रिसालत अदा करने में कुछ कोताहियाँ हो गयी थीं और ग़ालिबन उन्होंने बेसब्र होकर वक़्त से पहले अपना ठिकाना छोड़ दिया था इसलिये जब अ़ज़ाब के आसार देखकर आशोरियों ने तौबा व इस्तिग़फ़ार की तो अल्लाह तआ़ला ने उन्हें माफ़ कर दिया। क़ुरआन में ख़ुदाई दस्तूर के जो उसूल व नियम बयान किये गये हैं उनमें एक मुस्तक़िल धारा यह भी है कि अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम को उस वक़्त तक अ़ज़ाब नहीं देता जब तक उस पर अपनी हुज्जत पूरी नहीं कर देता, पस जब नबी अल्लाह के पैग़ाम (रिसालत) की अदायेगी में कोताही कर गया और अल्लाह के मुक़र्रर किये गये वक़्त से पहले ख़ुद ही अपनी जगह से हट गया तो अल्लाह तआ़ला के इन्साफ़ ने उस क़ौम को अ़ज़ाब देना गवारा न किया। (तफ़हीमुल-क़ुरआन, मौलाना मौदूदी, पेज 312 जिल्द 2, प्रकाशित सन् 1964 ईसवी) (1)

यहाँ सबसे पहले देखने की बात यह है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का गुनाहों से मासूम (पाक और सुरक्षित) होना तो एक माना हुआ अ़क़ीदा है जिस पर तमाम उम्मत का इजमा (इत्तिफ़ाक़) है, इसकी तफ़सीलात में कुछ आंशिक मतभेद भी हैं कि यह सुरक्षित होना हर क़िस्म के छोटे गुनाहों से है या सिर्फ़ बड़े गुनाहों से, और यह कि यह मासूम होना नुबुव्वत से पहले के ज़माने को भी शामिल है या नहीं, लेकिन इसमें किसी फ़िर्क़े किसी शख़्स का मतभेद नहीं है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम सब के सब अपनी रिसालत की अदायेगी के फ़रीज़े में कभी कोताही

(1) तफ़सीर तफ़हीमुल-क़ुरआन के बाद के संस्करणों में इस इबारत से किसी रुजू के ऐलान के बग़ैर यहाँ इबारत में मामूली तब्दीली की गयी है यानी "फ़रीज़ा-ए-रिसालत की अदायेगी में कोताही" के अलफ़ाज़ नई इबारत में मौजूद नहीं, लेकिन यह बात अब भी इबारत में बाक़ी है कि "जब नबी ने उस क़ौम के मोहलत के आख़िरी लम्हे तक नसीहत का सिलसिला जारी न रखा और अल्लाह के मुक़र्रर किये हुए वक़्त से पहले ख़ुद ही यह हिजरत कर गया तो अल्लाह तआ़ला के इन्साफ़ ने उसकी क़ौम को अ़ज़ाब देना गवारा न किया, क्योंकि उस पर हुज्जत पूरी होने की क़ानूनी शर्तें पूरी नहीं हुई थीं।" लिहाज़ा 'तफ़हीमुल-क़ुरआन' की इबारत में तब्दीली के बावजूद 'मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन' की टिप्पणी अपनी असली हालत पर बरक़रार है।

प्रकाशक (अक्तूबर सन् 1991 ई.)

नहीं कर सकते, क्योंकि अम्बिया के लिये इससे बड़ा कोई गुनाह नहीं हो सकता कि जिस पद और ज़िम्मेदारी के लिये अल्लाह तआ़ला ने उनका चयन फ़रमाया है ख़ुद उसी में कोताही कर बैठें। यह तो अपने ओ़हदे की ज़िम्मेदारी में खुली हुई ख़ियानत है जो आ़म शरीफ़ इनसानों से भी दूर की बात है, इस कोताही से भी अगर पैग़म्बर मासूम (बचने वाला और सुरक्षित) न हुआ तो फिर दूसरे गुनाहों से बचना और सुरक्षित होना बेफ़ायदा है।

क़ुरआन व सुन्नत के माने हुए उसूल और इत्तिफ़ाक़े राय वाले अ़क़ीदे यानी नबियों के गुनाहों से सुरक्षित होने के बज़ाहिर ख़िलाफ़ अगर किसी जगह क़ुरआन व हदीस में भी कोई बात नज़र आती तो माने हुए उसूल की रू से ज़रूरी था कि उसकी तफ़सीर व मायने की ऐसी वज़ाहत व व्याख्या तलाश की जाती, जिससे वह क़ुरआन व हदीस के निश्चित और न कटने वाले उसूल से भिन्न और टकराने वाली न रहे।

मगर यहाँ तो अ़जीब बात यह है कि लेखक (यानी तफ़सीर तफ़हीमुल-क़ुरआन के लेखक मौलाना मौदूदी) ने जिस बात को क़ुरआनी इशारात और सहीफ़ा-ए-यूनुस की तफ़सीलात के हवाले से पेश किया है वह सहीफ़ा-ए-यूनुस में हो तो हो जिसका इस्लाम के मानने वालों में कोई एतिबार नहीं, क़ुरआनी इशारा तो एक भी नहीं। बल्कि हुआ यह कि कई मुक़द्दमे जोड़कर यह नतीजा ज़बरदस्ती निकाला गया है। पहले तो यह फ़र्ज़ कर लिया गया कि क़ौमे यूनुस से अ़ज़ाब का टल जाना ख़ुदाई दस्तूर के ख़िलाफ़ वाक़े हुआ, जो ख़ुद इसी आयत के आगे पीछे के मज़मून के भी बिल्कुल ख़िलाफ़ है और तहक़ीक़ का दर्जा रखने वाले तफ़सीर के इमामों की वज़ाहतों व स्पष्टताओं के भी ख़िलाफ़ है। इसके साथ यह फ़र्ज़ कर लिया गया कि ख़ुदाई क़ानून को इस मौक़े पर इसलिये तोड़ा गया था कि ख़ुद पैग़म्बर से रिसालत के फ़रीज़े की अदायगी में कोताहियाँ हो गयी थीं। इसके साथ यह भी फ़र्ज़ कर लिया कि पैग़म्बर के लिये अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कोई ख़ास वक़्त निकलने का मुक़र्रर कर दिया गया था, वह उस मुक़र्ररा वक़्त से पहले दावत के फ़रीज़े को छोड़कर भाग खड़े हुए।

अगर ज़रा भी ग़ौर व इन्साफ़ से काम लिया जाये तो साबित हो जायेगा कि क़ुरआन व हदीस का कोई इशारा इन फ़र्ज़ी मुक़द्दमात की तरफ़ नहीं पाया जाता। ख़ुद क़ुरआन की आयत के मज़मून पर ग़ौर कीजिए तो आयत के अलफ़ाज़ ये हैं:

فَلَوْلَا كَانَتْ قَرْيَةٌ اٰمَنَتْ فَنَفَعَهَآ اِيْمَانُهَآ اِلَّا قَوْمَ يُوْنُسَ.

जिसका मफ़्हूम साफ़ यह है कि दुनिया के आ़म बस्ती वालों के बारे में अफ़सोस का इज़हार करके यह इरशाद है कि वे ऐसे क्यों न हो गये कि ईमान उस वक़्त ले आते जिस वक़्त तक ईमान मक़बूल और नफ़ा देने वाला होता है, यानी अ़ज़ाब में या मौत में मुब्तला होने से पहले पहले ईमान ले आते तो उनका ईमान क़ुबूल हो जाता, मगर क़ौमे यूनुस इससे अलग है कि वह अ़ज़ाब के आसार और निशानियाँ देखकर अ़ज़ाब में मुब्तला होने से पहले ही ईमान ले आई तो उनका ईमान और तौबा क़ुबूल हो गयी।

आयत का यह स्पष्ट मफ़्हूम ख़ुद बतला रहा है कि यहाँ कोई ख़ुदाई क़ानून नहीं तोड़ा गया

बल्कि खुदाई दस्तूर के मुताबिक़ ही उनका ईमान और तौबा क़ुबूल कर ली गयी है।

अक्सर मुफ़स्सिरीन- बहरे मुहीत, क़ुर्तुबी, ज़मख़्शरी, मज़हरी, रूहुल-मआ़नी वग़ैरह के लेखकों ने आयत का यही मफ़्हूम लिखा है जिसमें यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की तौबा क़ुबूल होना अल्लाह के आ़म क़ानून के तहत है। तफ़सीरे क़ुर्तुबी के अलफ़ाज़ ये हैं:

وقال ابنُ جُبَیرغَشِیَهم العذابُ کما یَغشَی الثوبُ القَبرَ فلما صحّت توبتُهم رَفَعَ اللّٰہُ عنهم العذاب وقال الطبری خص قوم یونسؑ من بین سائر الامم بان تِیبَ عَلَیهم بَعدَ مُعَاینَةِ العذابِ وذُکِرَ ذٰلِك عن جماعة من المفسرین وقال الزجاج انهم لم یقع بهم العذاب وانما رَأَوُا العلامةَ التی تدُلُّ علی العذاب ولورَأَوْا عینَ العذابِ لَمَا نَفَعَهُمْ ایمانهم. قلتُ قولُ الزجاج حَسَنٌ فانَّ المعاینة التی لا تنفعُ التوبَةُ معها هی التلبُّس بالعذابِ کقصَّةِ فرعونَ ولهذاجآء بقصة قَوم یونسؑ علی اثرقصة فرعون ویعضد هٰذاقوله علیه السلام اِنَّ اللّٰہ یقبل توبة العبد مالَم یُغَرغِرْ والغَرغَرَةُ الحَشرَجة وذٰلك هوحال التلبس بالموت وقد روی معنٰی ماقلناه عن ابن مسعودؓ (الٰی) وهٰذایدل علی ان توبتهم قبل رؤیة العذاب (الٰی) وعلٰی هٰذا فلا اشکال ولا تعارض ولاخصوص.

तर्जुमाः इब्ने जुबैर कहते हैं कि अ़ज़ाब ने उनको इस तरह ढाँप लिया था जैसे क़ब्र पर चादर, फिर चूँकि उनकी तौबा सही हो गयी (कि अ़ज़ाब उन पर पड़ने से पहले थी) तो उनका अ़ज़ाब उठा दिया गया। तबरी फ़रमाते हैं कि यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम को दुनिया की तमाम क़ौमों से यह ख़ुसूसियत दी गयी है कि अ़ज़ाब देखने के बाद उनकी तौबा क़ुबूल कर ली गयी। ज़ुजाज ने फ़रमाया कि उन लोगों पर अभी अ़ज़ाब पड़ा नहीं था बल्कि अ़ज़ाब की निशानियाँ देखी थीं और अगर अ़ज़ाब पड़ जाता तो उनकी तौबा भी क़ुबूल न होती। क़ुर्तुबी फ़रमाते हैं कि ज़ुजाज का क़ौल अच्छा और बेहतर है क्योंकि जिस अ़ज़ाब के देखने के बाद तौबा क़ुबूल नहीं होती वह वह है कि अ़ज़ाब में मुब्तला हो जाये, जैसा कि फ़िरऔन के वाक़िए में पेश आया, और इसी लिये इस सूरः में क़ौमे यूनुस का वाक़िआ़ फ़िरऔन के वाक़िए के बाद साथ ही ज़िक्र फ़रमाते हैं, ताकि फ़र्क़ वाज़ेह हो जाये कि फ़िरऔन का ईमान अ़ज़ाब में मुब्तला होने के बाद था, बख़िलाफ़ क़ौमे यूनुस के, कि वह अ़ज़ाब के पड़ने से पहले ही ईमान ले आई। इस बात की ताईद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद से भी होती है कि अल्लाह तआ़ला बन्दे की तौबा उस वक़्त तक क़ुबूल फ़रमाता है जब तक वह ग़रग़रे की हालत में न पहुँच जाये, और ग़रग़रा मौत के वक़्त तारी होने वाली हालत को कहते हैं, और यही बात हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मालूम होती है जिसमें बतलाया है कि क़ौमे यूनुस ने अ़ज़ाब के पड़ने से पहले तौबा कर ली थी। अ़ल्लामा क़ुर्तुबी फ़रमाते हैं कि इस तक़रीर व तफ़सीर पर न कोई इश्काल है न टकराव, न क़ौमे यूनुस की विशेषता।

और इमाम तबरी वग़ैरह मुफ़स्सिरीन ने भी जो इस वाक़िए को यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की ख़ुसूसियत बतलाया है उनमें से भी किसी ने यह नहीं कहा कि इस ख़ुसूसियत का सबब यूनुस अ़लैहिस्सलाम की कोताहियाँ थीं, बल्कि उस क़ौम का सच्चे दिल से तौबा करना और अल्लाह के इल्म में मुख़्लिस होना वग़ैरह वुजूहात लिखी हैं।

और जब यह मालूम हो गया कि क़ौमे यूनुस का अ़ज़ाब टल जाना क़ुदरत के आ़म क़ानून के ख़िलाफ़ ही नहीं था बल्कि ऐन मुताबिक़ था तो इस कलाम की बुनियाद ही ख़त्म हो गयी।

इसी तरह किसी क़ुरआनी इशारे से यह साबित नहीं कि अ़ज़ाब की वईद (धमकी) सुनने के बाद यूनुस अ़लैहिस्सलाम अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर अपनी क़ौम से अलग हो गये, बल्कि आयतों के मज़मून और तफ़सीरी रिवायतों से यही मालूम होता है कि जैसे पिछली तमाम उम्मतों के साथ मामला होता आया था कि जब उनकी उम्मत पर अ़ज़ाब आने का फ़ैसला कर लिया जाता तो अल्लाह तआ़ला अपने रसूल और उनके साथियों को वहाँ से निकल जाने का हुक्म दे देते थे, जैसे लूत अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ़ स्पष्ट रूप से क़ुरआन में बयान हुआ है, इसी तरह यहाँ भी जब अल्लाह का यह हुक्म यूनुस अ़लैहिस्सलाम के ज़रिये उन लोगों को पहुँचा दिया गया कि तीन दिन के बाद अ़ज़ाब आयेगा तो यूनुस अ़लैहिस्सलाम का उस जगह से निकल जाना ज़ाहिर यही है कि अल्लाह के हुक्म से हुआ है।

अलबत्ता यूनुस अ़लैहिस्सलाम से जो पैग़म्बराना शान के एतिबार से एक चूक हुई और उस पर सूरः अम्बिया और सूरः सॉफ़्फ़ात की आयतों में नाराज़गी के अलफ़ाज़ आये और उसी के नतीजे में मछली के पेट में रहने का वाक़िआ़ पेश आया, वह यह नहीं कि उन्होंने रिसालत के फ़रीज़े में कोताही कर दी थी, बल्कि वाक़िआ़ वह है जो ऊपर विश्वसनीय तफ़सीरों के हवाले से लिखा गया है कि जब यूनुस अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम को अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ तीन दिन के बाद अ़ज़ाब के आने की वईद सुना दी और फिर अल्लाह की इजाज़त से अपनी जगह को छोड़कर बाहर चले गये और बाद में यह साबित हुआ कि अ़ज़ाब नहीं आया तो अब यूनुस अ़लैहिस्सलाम को इसकी फ़िक्र लाहिक़ हुई कि मैं अपनी क़ौम में वापस जाऊँगा तो झूठा क़रार दिया जाऊँगा और उस क़ौम का यह दस्तूर था कि जिसका झूठ साबित हो जाये उसको क़त्ल कर दें, तो अब अपनी क़ौम की तरफ़ लौटकर जाने में जान का भी अन्देशा हुआ। ऐसे वक़्त में इसके सिवाय कोई रास्ता न था कि अब उस वतन ही से हिजरत कर जायें, लेकिन अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का तरीक़ा और सुन्नत यह है कि जब तक अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हिजरत की इजाज़त न आ जाये महज़ अपनी राय से हिजरत नहीं करते, तो यूनुस अ़लैहिस्सलाम की चूक यह थी कि अल्लाह की इजाज़त आने से पहले हिजरत का इरादा करके कश्ती पर सवार हो गये, जो अगरचे अपनी ज़ात में कोई गुनाह नहीं था मगर अम्बिया की सुन्नत से अलग था। अगर क़ुरआन की आयतों के अलफ़ाज़ में ग़ौर करें तो यूनुस अ़लैहिस्सलाम की चूक व ख़ता रिसालत के फ़रीज़े की अदायेगी में कोई कोताही नहीं बल्कि क़ौम के ज़ुल्म व सितम से बचने के लिये इजाज़त से पहले हिजरत के सिवा और कुछ नहीं साबित होगी। सूरः

सॉफ़्फ़ात की आयत इस मज़मून के लिये तकरीबन स्पष्ट है, जिसमें फ़रमाया है:

اِذْاَبَقَ اِلَى الْفُلْكِ الْمَشْحُوْنِo

इसमें हिजरत के इरादे से कश्ती पर सवार होने को अबक़ के लफ़्ज़ से बतौर नाराज़गी के ताबीर किया गया है, जिसके मायने हैं किसी गुलाम का अपने आक़ा की इजाज़त के बग़ैर भाग जाना। और सूरः अम्बिया की आयत में है:

وَذَا النُّوْنِ اِذْذَّهَبَ مُغَاضِبًا فَظَنَّ اَنْ لَّنْ نَّقْدِرَعَلَيْهِ.

जिसमें तबई ख़ौफ़ की बिना पर क़ौम से जान बचाकर हिजरत करने को बतौर इताब (नाराज़गी) के इस सख़्त उनवान से बयान फ़रमाया है। और यह सब रिसालत की ज़िम्मेदारी की मुकम्मल अदायेगी के बाद उस वक़्त पेश आया जबकि अपनी क़ौम में वापस जाने से जान का ख़तरा महसूस हो गया। तफ़सीर रूहुल-मआनी में यही मज़मून इन अलफ़ाज़ में लिखा है:

اى غضبان على قومه لشدّة شكيمتهم وتمادى اصرارهم مع طول دعوته اياهم وكان ذهابهٗ هذا هجرة عنهم لكنهٗ لم يؤمربه.

यानी यूनुस अलैहिस्सलाम अपनी क़ौम से नाराज़ होकर इसलिये चल दिये कि क़ौम की सख़्त मुख़ालफ़त और अपने कुफ़्र पर अड़े होने के बावजूद लम्बे ज़माने तक रिसालत की दावत पहुँचाते रहने को देख चुके थे और उनका यह सफ़र हिजरत के तौर पर था मगर अभी तक उनको हिजरत की इजाज़त नहीं मिली थी।

इसमें स्पष्ट कर दिया है कि दावत व रिसालत में कोई कोताही नाराज़गी का सबब नहीं थी बल्कि इजाज़त से पहले हिजरत करना नाराज़गी का कारण बना है जो अपने आप में कोई गुनाह न था मगर अम्बिया की सुन्नत के ख़िलाफ़ होने की वजह से इस पर नाराज़गी नाज़िल हुई है। हमारे ज़माने के इन लेखक साहिब को कुछ उलेमा ने इस ग़लती पर तवज्जोह दिलाई तो सूरः सॉफ़्फ़ात की तफ़सीर में उन्होंने अपने पक्ष और राय की हिमायत व ताईद में बहुत से मुफ़स्सिरीन के अक़वाल भी नक़ल फ़रमाये हैं जिनमें वहब बिन मुनब्बेह वग़ैरह की बाज़ इस्राईली रिवायतों के सिवा किसी से उनका यह पक्ष और राय सही साबित नहीं होती, कि हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम से मआज़ल्लाह रिसालत के फ़रीज़े की अदायेगी में कोताहियाँ हो गयी थीं।

और यह बात इल्म रखने वालों से छुपी नहीं कि आ़म तौर पर मुफ़स्सिरीन हज़रात अपनी तफ़सीरों में इस्राईली रिवायतें भी नक़ल कर देते हैं जिनके बारे में उन सब का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि ये रिवायतें विश्वसनीय व मोतबर नहीं, किसी शरई हुक्म का इन पर मदार नहीं रखा जा सकता। इस्राईली रिवायतें चाहे मुस्लिम मुफ़स्सिरीन की किताबों में हों या सहीफ़ा-ए-यूनुस में, सिर्फ़ उन्हीं के सहारे हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम पर यह ज़बरदस्त बोहतान लगाया जा सकता है कि उनसे रिसालत के फ़रीज़े की अदायेगी में कोताहियाँ हो गयी थीं, और किसी मुस्लिम मुफ़स्सिर ने इसको क़ुबूल नहीं किया। और हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआ़ला ही असल और सबसे ज़्यादा इल्म रखने वाले हैं, हम उन्हीं की बारगाह में दुआ़ के लिये हाथ उठाते हैं कि वह

हमें ख़ताओं और ग़लतियों से महफ़ूज़ रखें।

हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम का तफ़सीली वाक़िआ

हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ जिसका कुछ हिस्सा तो ख़ुद क़ुरआन में बयान हुआ है और कुछ हदीस व तारीख़ की रिवायतों से साबित है, वह यह है कि हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम की क़ौम इराक़ में मूसल के मशहूर मक़ाम नेनवा में बस्ती थी। उनकी संख्या क़ुरआने करीम में एक लाख से ज़्यादा बतलाई गयी है। उनकी हिदायत के लिये अल्लाह तआ़ला ने यूनुस अ़लैहिस्सलाम को भेजा। उन्होंने ईमान लाने से इनकार किया, हक़ तआ़ला ने यूनुस अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि इन लोगों को आगाह कर दो कि तीन दिन के अन्दर अन्दर तुम पर अ़ज़ाब आने वाला है। हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम ने क़ौम में इसका ऐलान कर दिया, क़ौमे यूनुस ने आपस में मश्विरा किया तो इस पर सब की सहमति हुई कि हमने कभी यूनुस अ़लैहिस्सलाम को झूठ बोलते नहीं देखा इसलिये उनकी बात नज़र-अन्दाज़ करने के क़ाबिल नहीं। मश्विरे में यह तय हुआ कि यह देखा जाये कि यूनुस अ़लैहिस्सलाम रात को हमारे अन्दर अपनी जगह में ठहरे रहते हैं तो समझ लो कि कुछ नहीं होगा, और अगर वह यहाँ से कहीं चले गये तो यक़ीन कर लो कि सुबह को हम पर अ़ज़ाब आयेगा। हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के इशारे से रात को उस बस्ती से निकल गये। सुबह हुई तो अल्लाह का अ़ज़ाब एक सियाह धुएँ और बादल की शक्ल में उनके सरों पर मण्डराने लगा और आसमानी फ़िज़ा से नीचे उनके क़रीब होने लगा तो उनको यक़ीन हो गया कि अब हम सब हलाक होने वाले हैं।

यह देखकर हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम को तलाश किया कि उनके हाथ पर ईमान ले आयें और पिछले इनकार से तौबा कर लें, मगर यूनुस अ़लैहिस्सलाम को न पाया तो ख़ुद ही सच्ची नीयत के साथ तौबा व इस्तिग़फ़ार में लग गये। बस्ती से एक मैदान में निकल आये, औरतें बच्चे और जानवर सब उस मैदान में जमा कर दिये गये, टाट के कपड़े पहन कर पूरी आ़जिज़ी व विनम्रता के साथ उस मैदान में तौबा करने और अ़ज़ाब से पनाह माँगने में इस तरह मशग़ूल हुए कि पूरा मैदान रोने-गिड़गिड़ाने और फ़रियाद से गूँजने लगा। अल्लाह तआ़ला ने उनकी तौबा क़ुबूल फ़रमा ली और अ़ज़ाब उनसे हटा दिया जैसा कि इस आयत में ज़िक्र किया गया है। रिवायतों में है कि यह आ़शूरा यानी दसवीं मुहर्रम का दिन था।

उधर हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम बस्ती से बाहर इस इन्तिज़ार में थे कि अब इस क़ौम पर अ़ज़ाब नाज़िल होगा। उनके तौबा व इस्तिग़फ़ार का हाल उनको मालूम न था। जब अ़ज़ाब टल गया तो इनको फ़िक्र हुई कि मुझे झूठा क़रार दिया जायेगा क्योंकि मैंने ऐलान किया था कि तीन दिन के अन्दर अ़ज़ाब आ जायेगा। उस क़ौम में क़ानून यह था कि जिस शख़्स का झूठ मालूम हो और वह अपने कलाम पर कोई गवाही न पेश करे तो उसको क़त्ल कर दिया जाता था। यूनुस अ़लैहिस्सलाम को फ़िक्र हुई कि मुझे झूठा क़रार देकर क़त्ल कर दिया जायेगा।

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम हर गुनाह व नाफ़रमानी से सुरक्षित व महफ़ूज़ होते हैं मगर

इनसानी फ़ितरत व तबीयत से अलग नहीं होते। उस वक़्त यूनुस अलैहिस्सलाम को तबई तौर पर यह मलाल हुआ कि मैंने अल्लाह के हुक्म से ऐलान किया था और अब मैं ऐलान की वजह से झूठा क़रार दिया जाऊँगा, अपनी जगह वापस जाऊँ तो किस मुँह से जाऊँ, और क़ौम के क़ानून के मुताबिक़ क़त्ल होने का हक़दार बनूँ। इस रंज व ग़म और परेशानी के आलम में उस शहर से निकल जाने का इरादा करके चल दिये यहाँ तक कि रूम के दरिया के किनारे पर पहुँच गये, वहाँ एक कश्ती देखी जिसमें लोग सवार हो रहे थे। यूनुस अलैहिस्सलाम को उन लोगों ने पहचान लिया और बग़ैर किराये के सवार कर लिया। कश्ती रवाना होकर जब दरिया के बीच में पहुँच गयी तो अचानक ठहर गयी, न आगे बढ़ती है न पीछे चलती है। कश्ती वालों ने मुनादी की कि हमारी इस कश्ती की अल्लाह की ओर से यही शान है कि जब इसमें कोई ज़ालिम, गुनाहगार, भागा हुआ गुलाम सवार हो जाता है तो यह कश्ती अपने आप रुक जाती है, उस आदमी को ज़ाहिर कर देना चाहिये ताकि एक आदमी की वजह से सब पर मुसीबत न आये।

हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम बोल उठे कि वह भागा हुआ गुलाम गुनाहगार मैं हूँ। क्योंकि अपने शहर से ग़ायब होकर कश्ती में सवार होना एक तबई ख़ौफ़ की वजह से था, अल्लाह की इजाज़त से न था। इस बग़ैर इजाज़त के इस तरफ़ आने को हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम की पैग़म्बराना शान ने एक गुनाह क़रार दिया कि पैग़म्बर की कोई नक़ल व हरकत बिना इजाज़त के न होनी चाहिये थी, इसलिये फ़रमाया कि मुझे दरिया में डाल दो तो तुम सब इस अ़ज़ाब से बच जाओगे। कश्ती वाले इस पर तैयार न हुए बल्कि उन्होंने क़ुर्आ डाला ताकि क़ुरे में जिसका नाम निकल आये उसको दरिया में डाल जाये। इत्तिफ़ाक़ से क़ुरे में हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का नाम निकल आया। उन लोगों को इस पर ताज्जुब हुआ तो कई मर्तबा क़ुर्आ डाला, हर मर्तबा तक़दीरी और क़ुदरती हुक्म से हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का ही नाम आता रहा। क़ुरआने करीम में इस क़ुर्आ डालने और उसमें यूनुस अलैहिस्सलाम का नाम निकलने का ज़िक्र मौजूद है:

فَسَاهَمَ فَكَانَ مِنَ الْمُدْحَضِيْنَ ○

यूनुस अलैहिस्सलाम के साथ हक़ तआ़ला का यह मामला उनके विशेष पैग़म्बराना मर्तबे की वजह से था, कि अगरचे उन्होंने अल्लाह के किसी हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी नहीं की थी जिसको गुनाह और नाफ़रमानी कहा जाता है और किसी पैग़म्बर से इसकी संभावना नहीं, क्योंकि वे मासूम (गुनाहों से सुरक्षित) होते हैं, लेकिन पैग़म्बर के बुलन्द मक़ाम के मुनासिब न था कि महज़ ख़ौफ़े तबई से बग़ैर अल्लाह की इजाज़त के मुन्तक़िल हो जायें। इस ख़िलाफ़े शान अ़मल पर बतौर नाराज़गी यह मामला किया गया।

इस तरफ़ क़ुर्आ में नाम निकल कर दरिया में डाले जाने का सामान हो रहा था दूसरी तरफ़ एक बहुत बड़ी मछली अल्लाह के हुक्म से कश्ती के क़रीब मुँह फैलाये हुए लगी हुई थी कि यह दरिया में आयें तो इनको अपने पेट में जगह दे, जिसको हक़ तआ़ला ने पहले से हुक्म दे रखा था कि यूनुस अलैहिस्सलाम का जिस्म जो तेरे पेट के अन्दर रखा जायेगा यह तेरी ग़िज़ा नहीं

बल्कि हमने तेरे पेट को उनका ठिकाना बनाया है। यूनुस अ़लैहिस्सलाम दरिया में गये तो फ़ौरन उस मछली ने मुँह में ले लिया। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि यूनुस अ़लैहिस्सलाम उस मछली के पेट में चालीस दिन रहे, वह उनको ज़मीन की तह तक ले जाती और दूर-दराज़ के मक़ामात में फिराती रही। कुछ हज़रात ने सात, कुछ ने पाँच दिन और कुछ ने एक दिन के चन्द घन्टे मछली के पेट में रहने की मुद्दत बतलाई है। (मज़हरी) असल हक़ीक़त हक़ तआ़ला को मालूम है। उस हालत में हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम ने यह दुआ़ की:

لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ سُبْحٰنَكَ اِنِّیْ كُنْتُ مِنَ الظّٰلِمِیْنَ۝

ला इला-ह इल्ला अन्-त सुब्हान-क इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालिमीन।

अल्लाह तआ़ला ने इस दुआ़ को क़ुबूल फ़रमा लिया और बिल्कुल सही व सालिम हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम को दरिया के किनारे पर डाल दिया।

मछली के पेट की गर्मी से उनके बदन पर कोई बाल न रहा था, अल्लाह तआ़ला ने उनके क़रीब एक कद्दू (लोकी) का दरख़्त उगा दिया, जिसके पत्तों का साया भी हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम के लिये एक राहत बन गयी, और एक जंगली बकरी को अल्लाह तआ़ला ने इशारा फ़रमा दिया कि वह सुबह व शाम उनके पास आ खड़ी होती और वह उसका दूध पी लेते थे। इस तरह हज़रत यूनुस अ़लैहिस्सलाम को उस चूक पर तंबीह भी हो गयी और बाद में उनकी क़ौम को भी पूरा हाल मालूम हो गया।

इस क़िस्से में जितने अंश और हिस्से क़ुरआन में बयान हुए या हदीस की मोतबर रिवायतों से साबित हैं वो तो यक़ीनी हैं बाक़ी हिस्से तारीख़ी रिवायतों के हैं जिन पर किसी शरई मसले का मदार नहीं रखा जा सकता।

وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ لَاٰمَنَ مَنْ فِی الْاَرْضِ كُلُّهُمْ جَمِیْعًا ؕ
اَفَاَنْتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتّٰی یَكُوْنُوْا مُؤْمِنِیْنَ ۝ وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تُؤْمِنَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ ؕ وَ
یَجْعَلُ الرِّجْسَ عَلَی الَّذِیْنَ لَا یَعْقِلُوْنَ ۝

व लौ शा-अ रब्बु-क लआम-न मन् फ़िल्अर्ज़ि कुल्लुहुम् जमीअ़न्, अ-फ़अन्-त तुक्रिहुन्ना-स हत्ता यकूनू मुअ्मिनीन (99) व मा का-न लिनफ़्सिन् अन् तुअ्मि-न इल्ला बि-इज़्निल्लाहि, व यज्अ़लुर्रिज्-स	और अगर तेरा रब चाहता बेशक ईमान ले आते जितने लोग कि ज़मीन में हैं सारे तमाम, अब क्या तू ज़बरदस्ती करेगा लोगों पर कि हो जायें ईमान वाले। (99) और किसी से नहीं हो सकता कि ईमान लाये मगर अल्लाह के हुक्म से, और वह डालता है गन्दगी उन पर जो नहीं

अ़लल्लज़ी-न ला यअ़्क़िलून (100)	सोचते। (100)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (इन क़ौमों और बस्तियों की क्या विशेषता है) अगर आपका रब चाहता तो तमाम रू-ए-ज़मीन के लोग सब के सब ईमान ले आते (मगर बाज़ हिक्मतों की वजह से यह न चाहा इसलिये सब ईमान नहीं लाये), सो (जब यह बात है तो) क्या आप लोगों पर ज़बरदस्ती कर सकते हैं जिससे वे ईमान ही ले आएँ। हालाँकि किसी शख़्स का ईमान बिना ख़ुदा के हुक्म (यानी उसकी मर्ज़ी) के मुम्किन नहीं, और वह (यानी अल्लाह तआ़ला) बेअ़क़्ल लोगों पर (कुफ़्र की) गन्दगी डाल देता है।

قُلِ انْظُرُوْا مَاذَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ وَمَا تُغْنِي الْاٰيٰتُ وَالنُّذُرُ عَنْ قَوْمٍ لَّا يُؤْمِنُوْنَ ﴿١٠١﴾
فَهَلْ يَنْتَظِرُوْنَ اِلَّا مِثْلَ اَيَّامِ الَّذِيْنَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ قُلْ فَانْتَظِرُوْٓا اِنِّيْ مَعَكُمْ مِّنَ
الْمُنْتَظِرِيْنَ ﴿١٠٢﴾ ثُمَّ نُنَجِّيْ رُسُلَنَا وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كَذٰلِكَ ۚ حَقًّا عَلَيْنَا نُنْجِ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٠٣﴾ ع ١٠ ١١ ١٥

क़ुलिन्ज़ुरू माज़ा फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि, व मा तुग़्निल्-आयातु वन्नुज़ुरु अ़न् क़ौमिल् ला युअ्मिनून (101) फ़-हल् यन्तज़िरू-न इल्ला मिस्-ल अय्यामिल्लज़ी-न ख़लौ मिन् क़ब्लिहिम्, क़ुल् फ़न्तज़िरू इन्नी म-अ़कुम् मिनल्-मुन्तज़िरीन (102) सुम्-म नुनज्जी रुसु-लना वल्लज़ी-न आमनू कज़ालि-क हक़्क़न् अ़लैना नुन्जिल्-मुअ्मिनीन (103) ✿	तू कह- देखो तो क्या कुछ है आसमानों में और ज़मीन में, और कुछ काम नहीं आतीं निशानियाँ और डराने वाले उन लोगों को जो नहीं मानते। (101) सो अब कुछ नहीं जिसका इन्तिज़ार करें मगर उन्हीं के जैसे दिन जो गुज़र चुके हैं उनसे पहले, तू कह अब राह देखो मैं भी तुम्हारे साथ राह देखता हूँ। (102) फिर हम बचा लेते हैं अपने रसूलों को और उनको जो ईमान लाये इसी तरह ज़िम्मा है हमारा बचा लेंगे ईमान वालों को। (103) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि तुम ग़ौर करो (और देखो) कि क्या-क्या चीज़ें हैं आसमानों और ज़मीन में (आसमानों में सितारे वग़ैरह और ज़मीन में बेइन्तिहा मख़्लूक़ नज़र आती है। यानी

इनमें ग़ौर करने से तौहीद की अ़क़्ली दलील हासिल होगी। यह बयान हुआ उनके ख़ुदाई क़ानून के पाबन्द होने का)। और जो लोग (दुश्मनी के तौर पर) ईमान नहीं लाते उनको दलीलें और धमकियाँ कुछ फ़ायदा नहीं पहुँचातीं (यह बयान हुआ उनकी दुश्मनी और बैर का), सो (उनकी इस दुश्मनी की हालत से ऐसा मालूम होता है कि) वे लोग (जैसा कि उनके हाल से ज़ाहिर है) सिर्फ़ उन लोगों के जैसे वाक़िआ़त का इन्तिज़ार कर रहे हैं जो उनसे पहले गुज़र चुके हैं (यानी बावजूद दलीलों और धमकियों के जो ईमान नहीं लाते, तो उनकी हालत उस शख़्स के जैसी है जो ऐसे अ़ज़ाब का मुन्तज़िर हो जो कि पहली क़ौमों पर आया था, सो) आप फ़रमा दीजिये कि अच्छा तो तुम (तो उसके) इन्तिज़ार में रहो, मैं भी तुम्हारे साथ (उसके) इन्तिज़ार करने वालों में हूँ (जिन पहले गुज़री क़ौमों का ऊपर ज़िक्र था हम उन पर तो अ़ज़ाब डालते थे) फिर हम (उस अ़ज़ाब से) अपने पैग़म्बरों को और ईमान वालों को बचा लेते थे। (जिस तरह हमने उन मोमिनों को निजात दी थी) हम इसी तरह सब ईमान वालों को निजात दिया करते हैं। यह (वायदे के मुताबिक़) हमारे ज़िम्मे है (पस इसी तरह अगर इन काफ़िरों पर कोई मुसीबत व आफ़त पड़ी तो मुसलमान उससे महफ़ूज़ रहेंगे चाहे दुनिया में चाहे आख़िरत में)।

قُلْ يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اِنْ كُنْتُمْ فِيْ شَكٍّ مِّنْ دِيْنِيْ فَلَآ اَعْبُدُ الَّذِيْنَ
تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ اَعْبُدُ اللّٰهَ الَّذِيْ يَتَوَفّٰىكُمْ ۚ وَاُمِرْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۙ
وَاَنْ اَقِمْ وَجْهَكَ لِلدِّيْنِ حَنِيْفًا ۚ وَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ وَلَا تَدْعُ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا
لَا يَنْفَعُكَ وَلَا يَضُرُّكَ ۚ فَاِنْ فَعَلْتَ فَاِنَّكَ اِذًا مِّنَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ وَاِنْ يَّمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا
كَاشِفَ لَهٗٓ اِلَّا هُوَ ۚ وَاِنْ يُّرِدْكَ بِخَيْرٍ فَلَا رَآدَّ لِفَضْلِهٖ ۚ يُصِيْبُ بِهٖ مَنْ يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖ ۚ وَهُوَ
الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ ۝

क़ुल् या अय्युहन्नासु इन् कुन्तुम् फ़ी शक्किम् मिन् दीनी फ़ला अअ़्बुदुल्लज़ी-न तअ़्बुदू-न मिन् दूनिल्लाहि व लाकिन् अअ़्बुदुल्लाह--ल्लज़ी य-तवफ़्फ़ाकुम् व उमिर्तु अन् अकू-न मिनल्-मुअ्मिनीन (104) व अन् अक़िम् वज्ह-क लिद्दीनि	कह दे ऐ लोगो! अगर तुम शक में हो मेरे दीन से तो मैं इबादत नहीं करता जिनकी तुम इबादत करते हो अल्लाह के सिवा, और लेकिन मैं इबादत करता हूँ अल्लाह की जो खींच लेता है तुमको, और मुझको हुक्म है कि रहूँ ईमान वालों में। (104) और यह कि सीधा कर मुँह अपना दीन पर हनीफ़ होकर, और मत हो

हनीफ़न् व ला तकूनन्-न मिनल्-मुश्रिकीन (105) व ला तद्अु मिन् दूनिल्लाहि मा ला यन्फ़अु-क व ला यज़ुर्रु-क फ़-इन् फ़अ़ल्-त फ़-इन्न-क इज़म् मिनज़्ज़ालिमीन (106) व इंय्यम्सस्कल्लाहु बिज़ुर्रिन् फ़ला काशि-फ़ लहू इल्ला हु-व व इंय्युरिद्-क बिख़ैरिन् फ़ला राद्-द लिफ़ज़्लिही, युसीबु बिही मंय्यशा-उ मिन् अ़िबादिही, व हुवल् ग़फ़ूरुर्रहीम (107)	शिर्क वालों में। (105) और मत पुकार अल्लाह के सिवा ऐसे को कि न भला करे तेरा और न बुरा, फिर अगर तू ऐसा करे तो तू भी उस वक़्त हो ज़ालिमों में। (106) और अगर पहुँचा दे तुझको अल्लाह कुछ तकलीफ़ तो कोई नहीं उसको हटाने वाला उसके सिवा, और अगर पहुँचाना चाहे तुझको कुछ भलाई तो कोई फेरने वाला नहीं उसके फ़ज़्ल को, पहुँचाये अपना फ़ज़्ल जिस पर चाहे अपने बन्दों में, और वही है बख़्शने वाला मेहरबान। (107)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उनसे) कह दीजिये कि ऐ लोगो! अगर तुम मेरे दीन की तरफ़ से शक (और शुब्हे) में हो तो (मैं तुमको उसकी हक़ीक़त बतलाता हूँ। वह यह है कि) मैं उन माबूदों की इबादत नहीं करता ख़ुदा के अ़लावा जिनकी तुम इबादत करते हो, लेकिन हाँ उस माबूद की इबादत करता हूँ जो तुम (यानी तुम्हारी जान) को क़ब्ज़ करता है। और मुझको (अल्लाह की तरफ़ से) यह हुक्म हुआ है कि मैं (ऐसे माबूद पर) ईमान लाने वालों में से हूँ। और (मुझको) यह (हुक्म हुआ है) कि अपने आपको इस (ज़िक्र हुए) दीन (और ख़ालिस तौहीद) की तरफ़ इस तरह मुतवज्जह रखना कि अन्य सब तरीक़ों से अलग हो जाऊँ, और (मुझको यह हुक्म हुआ है कि) कभी मुश्रिक मत बनना। और (यह हुक्म हुआ है कि) ख़ुदा (की तौहीद) को छोड़कर ऐसी चीज़ की इबादत मत करना जो तुझको न (इबादत करने की हालत में) कोई नफ़ा पहुँचा सके और न (इबादत छोड़ देने की हालत में) कोई नुक़सान पहुँचा सके। फिर अगर (मान लो) तुमने ऐसा किया (यानी अल्लाह के अ़लावा किसी और की इबादत की) तो तुम उस हालत में (अल्लाह का) हक़ ज़ाया करने वालों में से हो जाओगे। और (मुझसे यह कहा गया है कि) अगर तुमको अल्लाह तआ़ला कोई तकलीफ़ पहुँचाये तो सिवाय उसके और कोई उसका दूर करने वाला नहीं है, और अगर वह तुमको कोई राहत पहुँचाना चाहे तो उसके फ़ज़्ल का कोई हटाने वाला नहीं (बल्कि) वह अपना फ़ज़्ल अपने बन्दों में से जिस पर चाहे मुतवज्जह फ़रमाये, और वह बड़ी मग़फ़िरत वाले (और) रहमत वाले हैं (और फ़ज़्ल की तमाम किस्में मग़फ़िरत और रहमत में दाख़िल हैं

और वह मग़फ़िरत और ज़बरदस्त रहमत वाले हैं, पस लाज़िमी तौर पर फ़ज़्ल वाले भी हैं)।

قُلْ يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ فَمَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِيْ
لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ۚ وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ ۞ وَاتَّبِعْ مَا يُوْحٰۤى اِلَيْكَ
وَاصْبِرْ حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ ۚ وَهُوَ خَيْرُ الْحٰكِمِيْنَ ۞

क़ुल् या अय्युहन्नासु क़द् जा-अकुमुल्-हक़्क़ु मिर्रब्बिकुम् फ़-मनिह्तदा फ़-इन्नमा यह्तदी लिनफ़्सिही व मन् ज़ल्-ल फ़-इन्नमा यज़िल्लु अ़लैहा, व मा अ-न अ़लैकुम् बि-वकील (108) वत्तबिअ् मा यूहा इलै-क वस्बिर् हत्ता यह्कुमल्लाहु व हु-व ख़ैरुल्-हाकिमीन (109) ✿	कह दे ऐ लोगो! पहुँच चुका हक़ तुमको तुम्हारे रब से, अब जो कोई राह पर आये सो वह राह पाता है अपने भले को, और जो कोई बहका फिरे सो बहका फिरेगा अपने बुरे को, और मैं तुम पर नहीं हूँ मुख़्तार। (108) और तू चल उसी पर जो हुक्म पहुँचे तेरी तरफ़ और सब्र कर जब तक फ़ैसला करे अल्लाह, और वह है सबसे बेहतर फ़ैसला करने वाला। (109) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (यह भी) कह दीजिये कि ऐ लोगो! तुम्हारे पास हक़ (दीन) तुम्हारे रब की तरफ़ से (दलील के साथ) पहुँच चुका है, सो (उसके पहुँच जाने के बाद) जो शख़्स सही रास्ते पर आ जायेगा सो वह अपने (नफ़े के) वास्ते सही रास्ते पर आयेगा, और जो शख़्स (अब भी) बेराह रहेगा तो उसका बेराह होना (यानी उसका वबाल भी) उसी पर पड़ेगा, और मैं तुम पर (कुछ बतौर ज़िम्मेदारी के) मुसल्लत नहीं किया गया (कि तुम्हारे बेराह होने की पूछगछ मुझसे होने लगे, तो मेरा क्या नुक़सान है) और आप उसकी पैरवी करते रहिये जो कुछ आपके पास वही भेजी जाती है (इसमें सब आमाल के साथ तब्लीग़ भी आ गयी), और (उनके कुफ़्र और तकलीफ़ पहुँचाने पर) सब्र कीजिये, यहाँ तक कि अल्लाह (उनका) फ़ैसला कर देंगे (चाहे दुनिया में हलाकत के साथ चाहे आख़िरत में अ़ज़ाब के साथ। मतलब यह है कि आप अपने ज़ाती और पैग़म्बरी के पद के काम में लगे रहिये, उनकी फ़िक्र न कीजिए), और वह सब फ़ैसला करने वालों में अच्छे (फ़ैसला करने वाले) हैं।

* सूरः हूद *

यह सूरत मक्की है। इसमें 123 आयतें और 10 रुकूअ़ हैं।

सूरः हूद

اٰیَاتُهَا ۱۲۳ (۱۱) سُوْرَةُ هُوْدٍ مَكِّيَّةٌ (۵۲) رُكُوْعَاتُهَا ۱۰

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝

الٓرٰ ۚ كِتٰبٌ اُحْكِمَتْ اٰيٰتُهٗ ثُمَّ فُصِّلَتْ مِنْ لَّدُنْ حَكِيْمٍ خَبِيْرٍ ۝ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّا اللّٰهَ ؕ اِنَّنِيْ لَكُمْ
مِّنْهُ نَذِيْرٌ وَّبَشِيْرٌ ۝ وَّاَنِ اسْتَغْفِرُوْا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوْبُوْٓا اِلَيْهِ يُمَتِّعْكُمْ مَّتَاعًا حَسَنًا اِلٰٓى اَجَلٍ
مُّسَمًّى وَّيُؤْتِ كُلَّ ذِيْ فَضْلٍ فَضْلَهٗ ؕ وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنِّيْٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ كَبِيْرٍ ۝
اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ ۚ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ اَلَآ اِنَّهُمْ يَثْنُوْنَ صُدُوْرَهُمْ لِيَسْتَخْفُوْا مِنْهُ ؕ اَلَا
حِيْنَ يَسْتَغْشُوْنَ ثِيَابَهُمْ ۙ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّوْنَ وَمَا يُعْلِنُوْنَ ۚ اِنَّهٗ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۝

सूरः हूद मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 123 आयतें और 10 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-रा। किताबुन् उह़्किमत् आयातुहू सुम्-म फ़ुस्सिलत् मिल्लदुन् हकीमिन् ख़बीर (1) अल्ला तअ़्बुदू इल्लल्ला-ह, इन्ननी लकुम् मिन्हु नज़ीरुंव्-व बशीर (2) व अनिस्तग़्फ़िरू रब्बकुम् सुम्-म तूबू इलैहि युमत्तिअ़्कुम् मताअ़न् ह-सनन् इला अ-जलिम्-मुसम्मंव्-व युअ्ति कुल्-ल ज़ी फ़ज़्लिन् फ़ज़्लहू, व इन् तवल्लौ फ़-इन्नी अख़ाफ़ु अ़लैकुम् अ़ज़ा-ब यौमिन् कबीर (3) इलल्लाहि	अलिफ़्-लाम-रा। यह किताब है कि जाँच लिया है इसकी बातों को फिर खोली गई हैं एक हिक्मत वाले ख़बर रखने वाले के पास से, (1) कि इबादत न करो मगर अल्लाह की, मैं तुमको उसी की तरफ़ से डर और ख़ुशख़बरी सुनाता हूँ। (2) और यह कि गुनाह बख़्शवाओ अपने रब से फिर रुजू करो उसकी तरफ़ ताकि फ़ायदा पहुँचाये तुमको अच्छा फ़ायदा एक निर्धारित वक़्त तक और दे हर ज़्यादती वाले को ज़्यादती अपनी, और अगर तुम फिर जाओगे तो मैं डरता हूँ तुम पर एक

मर्जिअ़ुकुम् व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (4) अला इन्नहुम् यस्नू-न सुदू-रहुम् लियस्तख़्फ़ू मिन्हु, अला ही-न यस्तग़्शू-न सियाबहुम् यअ़्लमु मा युसिर्रू-न व मा युअ़्लिनू-न इन्नहू अ़लीमुम्-बिज़ातिस्सुदूर (5)	बड़े दिन के अ़ज़ाब से। (3) अल्लाह की तरफ़ है तुमको लौटकर जाना और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। (4) सुनता है! वे दोहरे करते हैं अपने सीने ताकि छुपायें उससे। सुनता है! जिस वक़्त ओढ़ते हैं अपने कपड़े जानता है जो कुछ छुपाते और जो ज़ाहिर करते हैं, वह तो जानने वाला है दिलों की बात। (5)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम-रा (के मायने तो अल्लाह को मालूम हैं)। यह (क़ुरआन) एक ऐसी किताब है कि इसकी आयतें (दलीलों से) मज़बूत की गई हैं (फिर इसी के साथ) साफ़-साफ़ (भी) बयान की गई हैं। (और वह किताब ऐसी है कि) एक ख़बर रखने वाले हकीम (यानी अल्लाह तआ़ला) की तरफ़ से (आई है जिसका बड़ा मक़सद) यह (है) कि अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी की इबादत मत करो, मैं तुमको अल्लाह की तरफ़ से (ईमान न लाने पर अ़ज़ाब से) डराने वाला और (ईमान लाने पर सवाब की) ख़ुशख़बरी देने वाला हूँ। और (इस किताब के मक़ासिद में से) यह (भी है) कि तुम लोग अपने गुनाह (यानी शिर्क व कुफ़्र वग़ैरह) अपने रब से माफ़ कराओ, (यानी ईमान लाओ और) फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ़ (इबादत से) मुतवज्जह रहो (यानी नेक अ़मल करो। पस ईमान और नेक अ़मल की बरकत से) वह तुमको मुक़र्ररा वक़्त (यानी मौत के वक़्त) तक (दुनिया में) ख़ुशऐशी "यानी अच्छी पुरसुकून ज़िन्दगी" देगा, और (आख़िरत में) हर ज़्यादा अ़मल करने वाले को ज़्यादा सवाब देगा (यह कहना भी एक तरह से ख़ुशख़बरी देने वाले की तरह है)। और अगर (ईमान लाने से) तुम लोग मुँह (ही) मोड़ते रहे तो मुझको (उस सूरत में) तुम्हारे लिये एक बड़े दिन के अ़ज़ाब का अन्देशा है (यह कहना एक तरह से डराने वाले के कहने की तरह है, और अ़ज़ाब को मुहाल और दूर की चीज़ मत समझो, क्योंकि) तुम (सब) को अल्लाह ही के पास जाना है, और वह हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखता है (फिर मुहाल या दूर की बात होने की कोई वजह नहीं, अलबत्ता अगर वहाँ तुम्हारी हाज़िरी न होती या नऊज़ु बिल्लाह उसको क़ुदरत न होती तो अ़ज़ाब न पड़ता। पस ऐसी हालत में ईमान और तौहीद से मुँह न मोड़ना चाहिये। आगे अल्लाह के इल्म का बयान है, और ऐसा इल्म व क़ुदरत दोनों तौहीद की दलील हैं)।

याद रखो कि वे लोग अपने सीनों को दोहरा किये देते हैं (और ऊपर से कपड़ा लपेट लेते हैं) ताकि (अपनी बातें) उससे (यानी ख़ुदा से) छुपा सकें। (यानी इस्लाम और मुसलमानों की

मुख़ालफ़त में जो बातें करते हैं तो इस अन्दाज़ से करते हैं ताकि किसी को ख़बर न हो जाये और जिसको एतिक़ाद होगा कि ख़ुदा को ज़रूर ख़बर होती है और आपका वही वाला (यानी पैग़म्बर) होना दलीलों से साबित है, पस वह छुपाने की ऐसी तदबीर कभी न करेगा, क्योंकि ऐसी तदबीर करना गोया अपने अ़मल और हालत से अल्लाह से छुपे रहने की कोशिश करना है, सो) याद रखो कि वे लोग जिस वक़्त (दोहरे होकर) अपने कपड़े (अपने ऊपर) लपेटते हैं, वह (उस वक़्त भी) सब जानता है, जो कुछ चुपके-चुपके (बातें) करते हैं और जो कुछ (बातें) वे ज़ाहिर करते हैं, (क्योंकि) यक़ीनन वह (तो) दिलों के अन्दर की बातें जानता है (तो ज़बान से कही हुई तो क्यों न जानेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः हूद उन सूरतों में से है जिनमें पिछली क़ौमों पर नाज़िल होने वाले अल्लाह के क़हर और मुख़्तलिफ़ क़िस्म के अ़ज़ाब का और फिर क़ियामत के हौलनाक वाक़िआ़त और जज़ा व सज़ा का ज़िक्र ख़ास अन्दाज़ में आया है।

यही वजह है कि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दाढ़ी मुबारक में कुछ बाल सफ़ेद हो गये तो हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रंज व ग़म के इज़हार के तौर पर अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! आप बूढ़े हो गये, तो आपने फ़रमाया कि हाँ! मुझे सूरः हूद ने बूढ़ा कर दिया। और कुछ रिवायतों में सूरः हूद के साथ सूरः वाक़िआ़ और सूरः मुर्सलात और सूरः अ़म्-म यतसाअलून और सूरः तकवीर का भी ज़िक्र है। (हाकिम व तिर्मिज़ी)

मतलब यह था कि इन वाक़िआ़त के ख़ौफ़ व दहशत की वजह से बुढ़ापे के आसार ज़ाहिर हो गये।

इसकी पहली आयत को 'अलिफ़्-लाम-रा' से शुरू किया गया है। ये उन हुरूफ़ में से हैं जिनकी मुराद अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल के बीच राज़ है, दूसरों को इस पर मुत्तला नहीं किया गया, उनको इसकी फ़िक्र में पड़ने से भी रोका गया है।

इसके बाद क़ुरआन मजीद के मुताल्लिक़ फ़रमाया कि यह एक ऐसी किताब है जिसकी आयतों को मोहकम बनाया गया है। लफ़्ज़ मोहकम अहकाम से बना है, जिसके मायने यह हैं कि किसी कलाम को ऐसा दुरुस्त किया जाये जिसमें किसी लफ़्ज़ी और मानवी ग़लती या ख़राबी का शुब्हा व गुंजाईश न रहे। इस बिना पर आयतों के मोहकम बनाने का मतलब यह होगा कि हक़ तआ़ला ने इन आयतों को ऐसा बनाया है कि इनमें किसी लफ़्ज़ी ग़लती या मानवी ख़राबी और ख़लल या बातिल का कोई इमकान व शुब्हा भी नहीं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मोहकम इस जगह मन्सूख़ के मुक़ाबले में है, और मुराद यह है कि इस किताब यानी क़ुरआन की आयतों को अल्लाह तआ़ला ने मजमूई हैसियत से मोहकम ग़ैर-मन्सूख़ (निरस्त व रद्द न होने वाली) बनाया है। यानी जिस तरह पिछली किताबें तौरात व इंजील वग़ैरह क़ुरआन के नाज़िल होने के बाद

मन्सूख़ हो गयीं, इस किताब के नाज़िल होने के बाद चूँकि नुबुव्वत व वही का सिलसिला ही ख़त्म हो गया इसलिये यह किताब क़ियामत तक मन्सूख़ (तब्दील, रद्द या निरस्त) न होगी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) और क़ुरआन की कुछ आयतों का ख़ुद क़ुरआन ही के ज़रिये मन्सूख़ हो जाना इसके विरुद्ध नहीं।

इसी आयत में क़ुरआन की दूसरी शान यह बतलाई गयी 'सुम्-म फ़ुस्सिलत्' यानी फिर इन आयतों की तफ़सील की गयी। तफ़सील के असली मायने यह हैं कि दो चीज़ों के बीच फ़ासला व फ़र्क़ किया जाये। इसी लिये आम किताबों में मुख़्तलिफ़ मज़ामीन को फ़स्ल फ़स्ल के उनवान से बयान किया जाता है। इस जगह आयतों की तफ़सील से यह मुराद भी हो सकती है कि अक़ीदे, इबादतें, मामलात, रहन-सहन, अख़्लाक़ वग़ैरह मज़ामीन की आयतों को अलग-अलग करके स्पष्ट रूप से बयान फ़रमाया गया है।

और यह मायने भी हो सकते हैं कि क़ुरआन मजीद अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तो एक ही बार में पूरा का पूरा लौह-ए-महफ़ूज़ में उतार दिया गया था मगर फिर मुख़्तलिफ़ क़ौमों और मुल्कों के हालात व ज़रूरतों के तहत बहुत सी क़िस्तों में थोड़ा-थोड़ा नाज़िल फ़रमाया गया ताकि इसका याद करना भी आसान हो और उन पर दर्जा-ब-दर्जा अ़मल भी आसान हो जाये।

इसके बाद फ़रमाया 'मिल्लदुन् हकीमिन् ख़बीर' यानी ये सब आयतें एक ऐसी हस्ती की तरफ़ से आई हैं जो हकीम भी है और ख़बर रखने वाला भी। यानी जिसके हर काम में इतनी हिक्मतें छुपी होती हैं कि इनसान उनको नहीं पा सकता, और वह आ़लम की कायनात के मौजूदा और आने वाले ज़र्रे ज़र्रे से पूरी तरह बाख़बर है। उनके सब मौजूदा व आईन्दा हालात को जानता है, उन सब पर नज़र करके अहकाम नाज़िल फ़रमाता है। इनसानों की तरह नहीं कि वे कितने ही अ़क्लमन्द, होशियार, तजुर्बेकार हों मगर उनकी अ़क्ल व समझ एक सीमित दायरे में घिरी हुई और उनका तजुर्बा सिर्फ़ अपने आस-पास के हालात की पैदावार होता है, जो बहुत सी बार आने वाले समय और आईन्दा के हालात में नाकाम व ग़लत साबित होता है।

उपर्युक्त आयतों में से दूसरी आयत में एक सबसे अहम और मुक़द्दम चीज़ के बयान से मज़मून शुरू होता है, यानी हक़ तआ़ला की तौहीद। इरशाद होता है:

أَلَّا تَعْبُدُوٓا إِلَّا اللّٰهَ

यानी इन आयतों में जो मज़ामीन बयान किये गये हैं उनमें सबसे अहम और मुक़द्दम (पहली चीज़) यह है कि एक अल्लाह के सिवा किसी की इबादत और पूजा न की जाये। उसके बाद इरशाद फ़रमाया:

إِنَّنِي لَكُم مِّنْهُ نَذِيرٌ وَبَشِيرٌ○

यानी इन आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हुक्म फ़रमाया है कि वह सारे जहान के लोगों से कह दें कि मैं अल्लाह की तरफ़ से तुमको डराने वाला और ख़ुशख़बरी देने वाला हूँ। मुराद यह है कि नाफ़रमानी और अपनी नाजायज़ इच्छाओं की पैरवी

करने वालों को अल्लाह के अ़ज़ाब से डराता हूँ और इताअ़त व फ़रमाँबरदारी करने वाले और नेक लोगों को आख़िरत की नेमतों और दोनों आ़लम की राहतों की ख़ुशख़बरी देता हूँ।

'नज़ीर' का तर्जुमा डराने वाले का किया जाता है, लेकिन यह लफ़्ज़ डराने वाले दुश्मन या दरिन्दे या दूसरे नुक़सान पहुँचाने वालों के लिये नहीं बोला जाता, बल्कि 'नज़ीर' उस शख़्स के लिये बोला जाता है जो किसी अपने प्यारे को शफ़क़त व मुहब्बत की बिना पर ऐसी चीज़ों से डराये और बचाये जो उसके लिये दुनिया या आख़िरत या दोनों में नुक़सान पहुँचाने वाली हैं।

तीसरी आयत में क़ुरआनी आयतों की हिदायतों में से एक दूसरी हिदायत का बयान इस तरह फ़रमाया है:

وَاَنِ اسْتَغْفِرُوْا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوْبُوْٓا اِلَيْهِ.

यानी इन मोहकम आयतों में अल्लाह तआ़ला ने अपने बन्दों को यह भी हिदायत फ़रमाई है कि वे अपने रब से मग़फ़िरत और माफ़ी माँगा करें और तौबा किया करें। मग़फ़िरत का ताल्लुक़ पिछले गुनाहों से है और तौबा का ताल्लुक़ आईन्दा उनके पास न जाने के अ़हद से है। और हक़ीक़त में सही तौबा यही है कि पिछले गुनाहों पर शर्मिन्दा होकर अल्लाह तआ़ला से उनकी माफ़ी तलब करे और आईन्दा उनके न करने का पुख़्ता अ़ज़्म व इरादा करे। इसी लिये कुछ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है कि आईन्दा को गुनाह से न बचने का पुख़्ता इरादा और एहतिमाम किये बग़ैर महज़ ज़बान से इस्तिग़फ़ार करना 'कज़्ज़ाबीन' यानी झूठे लोगों की तौबा है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) और ऐसे ही इस्तिग़फ़ार के बारे में कुछ हज़रात ने फ़रमाया है कि:

मासियत रा ख़न्दा मी आयद ज़-इस्तिग़फ़ारे मा

यानी हमारे इस्तिग़फ़ार और गुनाह की माफ़ी से जिस पर शर्मिन्दगी और उसको छोड़ने का पुख़्ता इरादा न हो गुनाह व नाफ़रमानी को ख़ुद हंसी आती है। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

या यह कि ऐसी तौबा ख़ुद तौबा के क़ाबिल है।

इसके बाद सही तौर पर इस्तिग़फ़ार व तौबा करने वालों को दुनिया व आख़िरत की कामयाबी और ऐश व राहत की ख़ुशख़बरी इस तरह दी गयी है:

يُمَتِّعْكُمْ مَّتَاعًا حَسَنًا اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى.

यानी जिन लोगों ने सही तौर पर अपने पिछले गुनाहों से इस्तिग़फ़ार किया और आईन्दा उनसे बचने का पुख़्ता इरादा और पूरा एहतिमाम किया तो सिर्फ़ यही नहीं कि उनकी ख़ता बख़्श दी जायेगी बल्कि उनको अच्छी ज़िन्दगी अ़ता की जायेगी, और ज़ाहिर यह है कि यह ज़िन्दगी आ़म है, दुनिया की ज़िन्दगी और आख़िरत की हमेशा की ज़िन्दगी दोनों को शामिल है। जैसे एक दूसरी आयत में ऐसे ही लोगों के बारे में इरशाद हुआ है:

لَنُحْيِيَنَّهٗ حَيٰوةً طَيِّبَةً.

यानी हम ज़रूर उनको पाकीज़ा ज़िन्दगी अ़ता करेंगे। इस आयत के बारे में भी मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत की तहक़ीक़ यही है कि दुनिया व आख़िरत की दोनों ज़िन्दगियाँ इसमें शामिल

हैं। सूरः नूह में इसकी वज़ाहत भी इस तरह आ गयी है कि इस्तिग़फ़ार करने वालों के मुताल्लिक़ यह फ़रमाया है:

يُرْسِلِ السَّمَآءَ عَلَيْكُمْ مِّدْرَارًا ۙ وَّيُمْدِدْكُمْ بِاَمْوَالٍ وَّبَنِيْنَ وَيَجْعَلْ لَّكُمْ جَنّٰتٍ وَّيَجْعَلْ لَّكُمْ اَنْهٰرًا ٥

यानी अगर तुमने सही तौर से अल्लाह से मग़फ़िरत माँगी तो अल्लाह तआ़ला तुम पर रहमत की बारिश नाज़िल फ़रमायेगा और तुमको माल व औलाद से बामुराद करेगा और तुम्हारे लिये बाग़ात और नहरें अ़ता फ़रमायेगा। ज़ाहिर है कि रहमत की बारिश और माल व औलाद का ताल्लुक़ इसी दुनिया की ज़िन्दगी से है।

इसी लिये उक्त आयत में **मता-ए-हसन** की तफ़सीर भी अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यह की है कि इस्तिग़फ़ार व तौबा के नतीजे में अल्लाह तआ़ला तुमको रिज़्क़ की वुस्अ़त और ऐश की सहूलियतें अ़ता फ़रमायेगा और आफ़तों और अ़ज़ाबों से तुम्हारी हिफ़ाज़त करेगा। और चूँकि दुनिया की ज़िन्दगी का एक रोज़ ख़त्म हो जाना लाज़िमी है और इसकी ऐश व राहत क़ानूने क़ुदरत के तहत हमेशगी वाली नहीं हो सकती, इसलिये 'इला अ-जलिम् मुसम्मन्' फ़रमाकर हिदायत कर दी कि दुनिया में पाकीज़ा ज़िन्दगी और ऐश की सहूलियतें एक ख़ास मियाद यानी मौत तक हासिल रहेंगी, आख़िरकार मौत इन सब चीज़ों का ख़ात्मा कर देगी।

मगर इस मौत के फ़ौरन बाद ही दूसरे आ़लम की ज़िन्दगी शुरू हो जायेगी और उसमें भी तौबा व इस्तिग़फ़ार करने वालों के लिये हमेशा की राहतें मयस्सर होंगी।

और हज़रत सहल बिन अ़ब्दुल्लाह ने फ़रमाया कि 'मता-ए-हसन' से मुराद यह है कि इनसान की तवज्जोह मख़्लूक़ से हटकर ख़ालिक़ पर जम जाये। और कुछ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि 'मता-ए-हसन' यह है कि इनसान मौजूदा (यानी जो हासिल हो) पर क़नाअ़त (सब्र व शुक्र) करे और मफ़क़ूद (जो हाथ से निकल जाये और हासिल न हो उस) के ग़म में न पड़े। यानी दुनिया जिस क़द्र मयस्सर हो उस पर मुत्मईन हो जाये, जो हासिल नहीं उसके ग़म में न पड़े।

दूसरी ख़ुशख़बरी तौबा व इस्तिग़फ़ार करने वालों को यह दी गयी कि:

وَيُؤْتِ كُلَّ ذِىْ فَضْلٍ فَضْلَهٗ

इसमें पहले फ़ज़्ल से मुराद इनसान का नेक अ़मल और दूसरे फ़ज़्ल से अल्लाह का फ़ज़्ल यानी जन्नत है। मतलब यह है कि हर नेक अ़मल वाले को अल्लाह तआ़ला अपना फ़ज़्ल यानी जन्नत अ़ता फ़रमायेंगे।

पहले जुमले में दुनिया व आख़िरत दोनों में मता-ए-हसन यानी अच्छी ज़िन्दगी का वायदा फ़रमाया है और दूसरे जुमले में जन्नत की कभी न ख़त्म होने वाली नेमतों का। आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنِّىْٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ كَبِيْرٍ ٥

यानी अगर इस नसीहत व ख़ैरख़्वाही से मुँह मोड़ा और पिछले गुनाहों से इस्तिग़फ़ार और आईन्दा उनसे बचने का एहतिमाम न किया तो यह प्रबल अन्देशा है कि तुम एक बड़े दिन के

अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हो जाओगे। बड़े दिन से मुराद क़ियामत का दिन है, क्योंकि वह अपने फैलाव के एतिबार से भी एक हज़ार साल का दिन होगा और उसमें पेश आने वाले हालात व वाकिआ़त के एतिबार से भी वह सबसे बड़ा दिन होगा।

पाँचवीं आयत में इसी मज़मून की अधिक ताकीद फ़रमाई गयी है कि दुनिया में तुम कुछ भी करो और किसी तरह भी बसर करो मगर अंततः मरने के बाद तुम्हें ख़ुदा तआ़ला ही की तरफ़ लौटना है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है, उसके लिये कुछ मुश्किल नहीं कि मरने और ख़ाक हो जाने के बाद तुम्हारे सब ज़र्रों को जमा करके तुमको नये सिरे से इनसान बनाकर खड़ा कर दे।

छठी आयत में मुनाफ़िक़ों के एक बुरे गुमान और ग़लत ख़्याल की तरदीद है कि ये लोग अपनी दुश्मनी और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त को अपने नज़दीक ख़ूब छुपाने की कोशिश करते हैं, इनके सीनों में जो हसद व बुग़ज़ की आग भरी हुई है उस पर हर तरह के पर्दे डालते हैं और यह ख़्याल करते हैं कि इस तरह हमारा असल हाल किसी को मालूम न होगा, मगर हक़ीक़त यह है कि वे कपड़ों की तह में पर्दों के पीछे जो कुछ करते हैं अल्लाह तआ़ला पर सब कुछ खुला हुआ है:

اِنَّهٗ عَلِیْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ۝

क्योंकि वह तो दिलों के छुपे भेदों को भी ख़ूब जानते हैं।

पारा (12) व मा मिन् दाब्बतिन्

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِی الْاَرْضِ اِلَّا عَلَی اللّٰهِ رِزْقُهَا وَیَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا ؕ كُلٌّ فِیْ كِتٰبٍ مُّبِیْنٍ۝۶
وَهُوَ الَّذِیْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ فِیْ سِتَّةِ اَیَّامٍ وَّكَانَ عَرْشُهٗ عَلَی الْمَآءِ لِیَبْلُوَكُمْ اَیُّكُمْ
اَحْسَنُ عَمَلًا ؕ وَلَئِنْ قُلْتَ اِنَّكُمْ مَّبْعُوْثُوْنَ مِنْۢ بَعْدِ الْمَوْتِ لَیَقُوْلَنَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْۤا اِنْ هٰذَاۤ
اِلَّا سِحْرٌ مُّبِیْنٌ۝۷ وَلَئِنْ اَخَّرْنَا عَنْهُمُ الْعَذَابَ اِلٰۤی اُمَّةٍ مَّعْدُوْدَةٍ لَّیَقُوْلُنَّ مَا یَحْبِسُهٗ ؕ اَلَا یَوْمَ
یَاْتِیْهِمْ لَیْسَ مَصْرُوْفًا عَنْهُمْ وَحَاقَ بِهِمْ مَّا كَانُوْا بِهٖ یَسْتَهْزِءُوْنَ۝۸

الجزء الثاني عشر — ١٢ — ع ٨

व मा मिन् दाब्बतिन् फ़िल्अर्ज़ि इल्ला अ़लल्लाहि रिज़्क़ुहा व यअ्लमु मुस्तक़र्रहा व मुस्तौद-अ़हा, कुल्लुन् फ़ी किताबिम् मुबीन (6) व हुवल्लज़ी ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ फ़ी	और कोई नहीं चलने वाला ज़मीन पर मगर अल्लाह पर है उसकी रोज़ी, और जानता है जहाँ वह ठहरता है और जहाँ सौंपा जाता है, सब कुछ मौजूद है खुली किताब में। (6) और वही है जिसने

सित्तति अय्यामिंव्-व का-न अ़र्शुहू अ़लल्मा-इ लि-यब्लुवकुम् अय्युकुम् अह्सनु अ़-मलन्, व ल-इन् क़ुल्-त इन्नकुम् मब्अ़ूसू-न मिम्-बअ़्दिल्-मौति ल-यक़ूलन्नल्लज़ी-न क-फ़रू इन् हाज़ा इल्ला सिह्रुम्-मुबीन (7) व ल-इन् अख़्ख़र्ना अ़न्हुमुल्-अ़ज़ा-ब इला उम्मतिम् मअ़्दूदतिल्-ल-यक़ूलुन्-न मा यह्बिसुहू, अला यौ-म यअ्तीहिम् लै-स मस्रूफ़न् अ़न्हुम् व हा-क़ बिहिम् मा कानू बिही यस्तह्ज़िऊन (8) ❁	बनाये आसमान और ज़मीन छह दिन में और था उसका तख़्त पानी पर ताकि आज़माये तुमको कि कौन तुम में अच्छा करता है काम, और अगर तू कहे कि तुम उठोगे मरने के बाद तो अलबत्ता काफ़िर कहने लगेंगे यह कुछ नहीं मगर जादू है खुला हुआ। (7) और अगर हम रोके रखें उनसे अ़ज़ाब को एक मालूम मुद्दत तक तो कहने लगें- किस चीज़ ने रोक दिया अ़ज़ाब को, सुनता है! जिस दिन आयेगा उन पर न फेरा जायेगा उनसे और घेर लेगी उनको वह चीज़ जिस पर ठट्ठे किया करते थे। (8) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और कोई (रिज़्क़ खाने वाला) जानदार रू-ए-ज़मीन पर चलने वाला ऐसा नहीं कि उसकी रोज़ी अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे न हो (और रिज़्क़ पहुँचाने के लिये इल्म की ज़रूरत होती है, सो) और वह हर एक की ज़्यादा रहने की जगह को और चन्द दिन रहने की जगह को जानता है (और हर एक को वहाँ रिज़्क़ पहुँचाता है। और अगरचे सब चीज़ें अल्लाह के इल्म में तो हैं ही मगर इसके साथ ही) सब चीज़ें किताबे मुबीन (यानी लौह-ए-महफ़ूज़) में (भी दर्ज और मुक़र्रर) हैं। (ग़र्ज़ कि वाकिआ़त हर तरह महफ़ूज़ हैं। आगे पैदा करने और बनाने का मय उसकी कुछ हिक्मतों के बयान है जिससे क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने के भी ताईद होती है, क्योंकि शुरू की पैदाईश दलील है इस पर कि वह दोबारा भी पैदा करता है) और वह (अल्लाह) ऐसा है कि सब आसमान और ज़मीन को छह दिन (की मात्रा) में पैदा किया, और (उस वक़्त) उसका अ़र्श पानी पर था (कि ये दोनों चीज़ें पहले से पैदा हो चुकी थीं और यह पैदा करना इसलिये है) ताकि तुमको आज़माये कि (देखें) तुममें अच्छा अ़मल करने वाला कौन है। (मतलब यह है कि ज़मीन व आसमान को पैदा किया, तुम्हारी ज़रूरत की चीज़ें और फ़ायदे इसमें पैदा किये ताकि तुम उनको देखकर तौहीद पर दलील पकड़ो और उनसे फ़ायदा उठकार नेमत देने वाले का शुक्र और ख़िदमत (यानी नेक अ़मल) करो, सो कुछ ने ऐसा किया, कुछ ने न किया)।

और अगर आप (लोगों से) कहते हैं कि यक़ीनन तुम लोग मरने के बाद (क़ियामत के दिन दोबारा) ज़िन्दा किये जाओगे तो (उनमें) जो लोग काफ़िर हैं वे (क़ुरआन के बारे में, जिसमें क़ियामत में ज़िन्दा होकर उठने की ख़बर है) कहते हैं कि यह तो बिल्कुल खुला जादू है (जादू इसलिये कहते हैं कि वह बेहक़ीक़त होता है मगर प्रभावी। इसी तरह क़ुरआन को नऊज़ु बिल्लाह बातिल समझते थे लेकिन इसके मज़ामीन का असरदार होना भी महसूस करते थे, इसलिये इस स्थिति में यह हुक्म लगाया, नऊज़ु बिल्लाहि मिन्हा। मक़सूद इससे आख़िरत का इनकार था, आगे उनके इनकार के मन्शा का जवाब इरशाद है) और अगर थोड़े दिनों तक (मुराद दुनियावी ज़िन्दगी है) हम उनसे (वायदा किये गये) अ़ज़ाब को मुल्तवी "यानी टाले" रखते हैं (कि इसमें हिक्मतें हैं) तो (बतौर इनकार व मज़ाक़ उड़ाने के) कहने लगते हैं कि (जब हम तुम्हारे नज़दीक अ़ज़ाब के पात्र हैं तो) उस (अ़ज़ाब) को कौनसी चीज़ रोक रही है? (यानी अगर अ़ज़ाब कोई चीज़ होती तो अब तक हो चुकता, जब नहीं हुआ तो मालूम हुआ कि कुछ भी नहीं। हक़ तआ़ला जवाब देते हैं कि) याद रखो जिस दिन (मुक़र्ररा वक़्त पर) वह (अ़ज़ाब) उन पर आ पड़ेगा तो फिर (किसी के) टाले न टलेगा, और जिस (अ़ज़ाब) के साथ ये हंसी-ठट्ठा कर रहे थे वह इनको आ घेरेगा (मतलब यह कि हक़दार होने के बावजूद यह ताख़ीर और देरी इसलिये है कि कुछ हिक्मतों से उसका वक़्त निर्धारित है फिर उस वक़्त सारी कसर निकल जायेगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में हक़ तआ़ला के कामिल और हर चीज़ को घेरने वाले इल्म का ज़िक्र था जिससे कायनात का कोई ज़र्रा और दिलों के छुपे हुए राज़ भी बचे नहीं, इन आयतों में से पहली आयत में उसकी मुनासबत से इनसान पर एक ज़बरदस्त एहसान का ज़िक्र किया गया है, वह यह कि उसके रिज़्क़ की ज़िम्मेदारी हक़ तआ़ला ने ख़ुद अपने ऊपर ले ली है, और न सिर्फ़ इनसान की बल्कि ज़मीन पर चलने वाले हर जानदार की, वह जहाँ कहीं रहता है या चला जाता है उसकी रोज़ी उसके पास पहुँचती है। तो काफ़िरों के ये इरादे कि अपने किसी काम को अल्लाह तआ़ला से छुपा लें जहालत और बेवक़ूफ़ी के सिवा कुछ नहीं। फिर इसके आ़म होने में जंगल के तमाम दरिन्दे, परिन्दे और ज़मीनी कीड़े-मकोड़े, दरिया और ख़ुश्की के तमाम जानवर दाख़िल हैं। इस आ़म होने की ताकीद के लिये लफ़्ज़ 'मिन' का इज़ाफ़ा करके 'व मा मिन् दाब्बतिन्' फ़रमाया है। 'दाब्बतिन' हर उस जानवर को कहते हैं जो ज़मीन पर चले। पक्षी जानवर भी इसमें दाख़िल हैं क्योंकि उनका आशियाना भी कहीं ज़मीन ही पर होता है, दरियाई जानवरों का भी ताल्लुक़ ज़मीन से होना कुछ किसी से छुपा नहीं, इन सब जानवरों के रिज़्क़ की ज़िम्मेदारी हक़ तआ़ला ने अपने ज़िम्मे लेकर ऐसे अलफ़ाज़ से इसको बयान किया है जैसे कोई फ़रीज़ा किसी के ज़िम्मे हो। इरशाद फ़रमायाः

عَلَى اللّٰهِ رِزْقُهَا

यानी अल्लाह के ज़िम्मे है उसका रिज़्क़। यह ज़ाहिर है कि यह ज़िम्मेदारी हक़ तआ़ला पर डालने वाली कोई और ताक़त नहीं सिवाय इसके कि उसी ने अपने फ़ज़्ल से यह वायदा फ़रमा लिया। मगर वायदा एक सच्चे करीम का है जिसमें ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) की कोई संभावना नहीं, इसी यक़ीन को ज़ाहिर करने के लिये इस जगह लफ़्ज़ 'अ़ला' लाया गया है जो फ़राईज़ के बयान के लिये इस्तेमाल होता है, हालाँकि अल्लाह तआ़ला न किसी हुक्म का पाबन्द है न उसके ज़िम्मे कोई चीज़ फ़र्ज़ या वाजिब है।

रिज़्क़ लुग़त में उस चीज़ को कहा जाता है जिससे जानदार अपनी ग़िज़ा हासिल करे और जिसके ज़रिये उसकी रूह की बक़ा और जिस्म में तरक़्क़ी और बढ़ोतरी होती है।

'रिज़्क़' के लिये यह ज़रूरी नहीं कि जिसका रिज़्क़ है वह उसका मालिक भी हो, क्योंकि तमाम जानवरों को रिज़्क़ दिया जाता है मगर वे उसके मालिक नहीं होते, उनमें मालिक होने की योग्यता ही नहीं। इसी तरह छोटे बच्चे अपने रिज़्क़ के मालिक नहीं होते मगर रिज़्क़ उनको मिलता है।

रिज़्क़ के इस आ़म मायने के एतिबार से उलेमा ने फ़रमाया कि रिज़्क़ हलाल भी हो सकता है हराम भी, क्योंकि जो शख़्स किसी दूसरे का माल नाजायज़ तौर पर लेकर खा ले तो यह माल ग़िज़ा तो उस शख़्स की बन गया मगर हराम तौर पर बना, अगर यह अपनी हिर्स में अंधा होकर नाजायज़ तरीक़े इस्तेमाल न करता तो जो रिज़्क़ उसके लिये मुक़र्रर था, वह जायज़ तौर पर उसको मिलता।

रिज़्क़ की ख़ुदाई ज़िम्मेदारी पर एक सवाल और जवाब

यहाँ एक सवाल यह पैदा होता है कि जब हर जानदार का रिज़्क़ अल्लाह तआ़ला ने अपने ज़िम्मे ले लिया है तो फिर ऐसे वाक़िआ़त क्यों पेश आते हैं कि बहुत से जानवर और इनसान ग़िज़ा न मिलने के सबब भूखे प्यासे मर जाते हैं। इसके उलेमा ने अनेक जवाब लिखे हैं।

एक जवाब यह भी हो सकता है कि रिज़्क़ की ज़िम्मेदारी उसी वक़्त तक है जब तक उसकी उम्र पूरी नहीं हो जाती, जब यह उम्र पूरी हो गयी तो उसको बहरहाल मरना है और इस जहान से गुज़रना है जिसका आ़म सबब रोग होते हैं, कभी जलना या ग़र्क़ होना या चोट और ज़ख़्म भी सबब होता है, इसी तरह एक सबब यह भी हो सकता है कि उसका रिज़्क़ बन्द कर दिया गया, उससे मौत वाक़े हुई।

इमाम क़ुर्तुबी रह. ने इस आयत के तहत अबू मूसा और अबू मालिक वग़ैरह क़बीला अश्अ़रिय्यीन का एक वाक़िआ़ ज़िक्र किया है कि ये लोग हिजरत करके मदीना तय्यिबा पहुँचे तो जो कुछ तोशा और खाने पीने का सामान इनके पास था वह ख़त्म हो गया। इन्होंने अपना एक आदमी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में इस ग़र्ज़ के लिये भेजा कि उनके खाने वग़ैरह का कुछ इन्तिज़ाम फ़रमा दें। यह शख़्स जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दरवाज़े पर पहुँचा तो अन्दर से आवाज़ आई कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम यह आयत पढ़ रहे हैं:

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ رِزْقُهَا.

उस शख़्स को यह आयत सुनकर ख़्याल आया कि जब अल्लाह ने सब जानदारों का रिज़्क़ अपने ज़िम्मे ले लिया है तो फिर हम अश्अ़री भी अल्लाह के नज़दीक दूसरे जानवरों से गये गुज़रे नहीं, वह ज़रूर हमें भी रिज़्क़ देंगे। यह ख़्याल करके वहीं से वापस हो गया, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपना कुछ हाल नहीं बतलाया। वापस जाकर अपने साथियों से कहा कि ख़ुश हो जाओ, तुम्हारे लिये अल्लाह तआ़ला की मदद आ रही है। उसके अश्अ़री साथियों ने इसका यह मतलब समझा कि उनके क़ासिद ने क़रारदाद (तजवीज़ व प्रस्ताव) के अनुसार रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अपनी हाजत का ज़िक्र किया है और आपने इन्तिज़ाम करने का वायदा फ़रमा लिया है, वे यह समझकर मुत्मईन बैठ गये। वे अभी बैठे ही थे, देखा कि दो आदमी एक क़सआ़ गोश्त और रोटियों से भरा हुआ उठाये ला रहे हैं, क़सआ़ एक बड़ा बर्तन होता है जैसे तशला या सैनी। लाने वालों ने यह खाना अश्अ़री लोगों को दे दिया, उन्होंने ख़ूब पेट भरकर खाया फिर भी बच रहा तो उन लोगों ने यह मुनासिब समझा कि बाक़ी खाना हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास भेज दें ताकि उसको आप अपनी ज़रूरत में इस्तेमाल फ़रमा लें। अपने दो आदमियों को यह खाना देकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास भेज दिया।

उसके बाद ये सब हज़रात हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! आपका भेजा हुआ खाना बहुत ज़्यादा और बहुत उम्दा व लज़ीज़ था, आपने फ़रमाया कि मैंने तो कोई खाना नहीं भेजा। तब उन्होंने पूरा वाक़िआ़ अ़र्ज़ किया कि हमने अपने फ़ुलाँ आदमी को आपके पास भेजा था, उसने यह जवाब दिया, जिससे हमने समझा कि आपने खाना भेजा है। यह सुनकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह मैंने नहीं बल्कि उस पाक ज़ात ने भेजा है जिसने हर जानदार का रिज़्क़ अपने ज़िम्मे लिया है।

कुछ रिवायतों में है कि जिस वक़्त हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम आग की तलाश में तूर पहाड़ पर पहुँचे और वहाँ आग के बजाय अल्लाह की तजल्लियाँ सामने आईं और उनको नुबुव्वत व रिसालत अ़ता होकर फ़िरऔ़न और उसकी क़ौम की हिदायत के लिये मिस्र जाने का हुक्म मिला तो ख़्याल आया कि मैं अपनी बीवी को जंगल में तन्हा छोड़कर आया हूँ उसका कौन ख़्याल रखेगा। इस ख़्याल की इस्लाह के लिये हक़ तआ़ला ने मूसा अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि सामने पड़ी हुई पत्थर की चट्टान पर लकड़ी मारें, उन्होंने हुक्म की तामील की तो यह चट्टान फट कर उसके अन्दर से एक दूसरा पत्थर बरामद हुआ, हुक्म हुआ इस पर भी लकड़ी मारें, ऐसा किया तो वह पत्थर फटा और अन्दर से तीसरा पत्थर बरामद हुआ, उस पर भी लकड़ी मारने का हुक्म हुआ तो वह फटा और अन्दर से एक जानवर बरामद हुआ जिसके मुँह में हरा पत्ता था।

हक़ तआ़ला की कामिल क़ुदरत का यक़ीन तो मूसा अ़लैहिस्सलाम को पहले भी था मगर अनुभव और नज़ारा देखने का असर कुछ और ही होता है, यह देखकर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम वहीं से सीधे मिस्र को रवाना हो गये, बीवी साहिबा को यह बतलाने भी न गये कि मुझे मिस्र जाने का हुक्म हुआ है, वहाँ जा रहा हूँ।

सारी मख़्लूक़ को रिज़्क़ पहुँचाने का अ़जीब व ग़रीब क़ुदरती निज़ाम

इस आयत में हक़ तआ़ला ने सिर्फ़ इस पर बस नहीं फ़रमाया कि हर जानदार का रिज़्क़ अपने ज़िम्मे ले लिया, बल्कि इनसान के मज़ीद इत्मीनान के लिये फ़रमायाः

وَيَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا.

इस आयत में **मुस्तक़र** और **मुस्तौदा** की विभिन्न तफ़सीरें नक़ल की गयी हैं मगर लुग़त के एतिबार से वह ज़्यादा क़रीब है जिसको कश्शाफ़ ने इख़्तियार किया है कि मुस्तक़र उस जगह को कहा जाता है जहाँ कोई शख़्स मुस्तक़िल तौर पर रहने की जगह या वतन बना ले, और मुस्तौदा उस जगह को जहाँ अस्थायी तौर पर किसी ज़रूरत के लिये ठहरे।

मतलब यह हुआ कि अल्लाह तआ़ला की ज़िम्मेदारी को दुनिया के लोगों और हुकूमतों की ज़िम्मेदारी पर क़ियास न करो, दुनिया में अगर कोई शख़्स या कोई संस्था आपके रिज़्क़ की ज़िम्मेदारी ले ले तो इतना काम बहरहाल आपको करना पड़ेगा कि अगर अपनी मुक़र्ररा जगह को छोड़कर किसी दूसरी जगह जाना हो तो उस व्यक्ति या संस्था को इत्तिला दें कि मैं फ़ुलाँ तारीख़ से फ़ुलाँ तक फ़ुलाँ शहर या गाँव में रहूँगा, रिज़्क़ के वहाँ पहुँचने-पहुँचाने का इन्तिज़ाम किया जाये। मगर हक़ तआ़ला की ज़िम्मेदारी में आप पर इसका भी कोई भार नहीं, क्योंकि वह आपकी हर नक़्ल व हरकत से बाख़बर है, आपके मुस्तक़िल रहने के ठिकाने को भी जानता है और अस्थायी और वक़्ती तौर पर रहने की जगह से भी वाक़िफ़ है। बग़ैर किसी दरख़्वास्त और निशानदेही के आपका राशन वहाँ मुन्तक़िल कर दिया जाता है।

अल्लाह तआ़ला के कामिल और हर चीज़ को घेरने वाले इल्म और कामिल क़ुदरत के पेशे नज़र सिर्फ़ इसका इरादा फ़रमा लेना तमाम कामों के अन्जाम पाने के लिये काफ़ी था, किसी किताब या रजिस्टर में लिखने लिखाने की कोई ज़रूरत न थी, मगर बेचारा इनसान जिस निज़ाम का आदी होता है उसको उस निज़ाम पर क़ियास करके भूल-चूक का खटका हो सकता है इसलिये उसके अधिक इत्मीनान के लिये फ़रमायाः

كُلٌّ فِيْ كِتٰبٍ مُّبِيْنٍ٥

यानी यह सब कुछ एक वाज़ेह किताब में लिखा हुआ है। इस वाज़ेह किताब से मुराद लौहे महफ़ूज़ है जिसमें तमाम कायनात की रोज़ी, उम्र, अ़मल वग़ैरह की पूरी तफ़सीलात लिखी हुई हैं

जो मौके व ज़रूरत के मुताबिक संबन्धित फ़रिश्तों के सुपुर्द कर दी जाती हैं।

सही मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नकल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने तमाम मख़्लूकात की तकदीरें आसमान और ज़मीन की पैदाईश से भी पचास हज़ार साल पहले लिख दी थीं।

और बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक लम्बी हदीस में फ़रमाया जिसका ख़ुलासा यह है कि इनसान अपनी पैदाईश से पहले विभिन्न और अनेक दौर से गुज़रता है, जब उसके बदनी अंगों की तकमील हो जाती है तो अल्लाह तआ़ला एक फ़रिश्ते को हुक्म करते हैं जो उसके मुताल्लिक चार चीज़ें लिख लेता है- अव्वल उसका अ़मल जो कुछ वह करेगा, दूसरे उसकी उम्र के साल, महीने, दिन और मिनट और साँस तक लिख लिये जाते हैं, तीसरे उसको कहाँ मरना और कहाँ दफ़न होना है, चौथे उसका रिज़्क कितना और किस-किस तरीके से पहुँचना है (और लौह-ए-महफ़ूज़ में आसमान ज़मीन की पैदाईश से भी पहले लिखा होना इसके ख़िलाफ़ नहीं)।

दूसरी आयत में हक तआ़ला के कामिल इल्म और ज़बरदस्त क़ुदरत का एक और निशान ज़िक्र किया गया है कि उसने तमाम आसमानों और ज़मीन को छह दिन में पैदा फ़रमाया और इन चीज़ों के पैदा करने से पहले रहमान का अ़र्श पानी पर था।

इससे मालूम हुआ कि आसमान व ज़मीन की पैदाईश से पहले पानी पैदा किया गया है और आसमान व ज़मीन को छह दिन में पैदा करनें की तफ़सील सूरः 'हा-मीम सज्दा' की आयत 10 व 11 में इस तरह आई है कि दो दिन में ज़मीन बनाई गयी, दो दिन में ज़मीन के पहाड़, दरिया, दरख़्त और जानदारों की ग़िज़ा व बका का सामान बनाया गया, दो दिन में सात आसमान बनाये गये।

तफ़सीर-ए-मज़हरी में है कि आसमान से मुराद तमाम बुलन्द चीज़ें हैं जो ऊपर की दिशा में हैं और ज़मीन से मुराद तमाम नीचे की चीज़ें हैं जो नीचे की दिशा में हैं। और दिन से मुराद वक्त की वह मात्रा है जो आसमान ज़मीन की पैदाईश के बाद सूरज के निकलने से गुरूब होने तक होती है अगरचे आसमान व ज़मीन की पैदाईश के वक्त न सूरज था न उसका निकलना और गुरूब होना।

हक तआ़ला की कामिल क़ुदरत में यह भी था कि इन तमाम चीज़ों को एक आन में पैदा फ़रमा दें मगर उसने अपनी हिक्मत से इस आ़लम के निज़ाम को दर्जा-ब-दर्जा बनाया है जो इनसान के मिज़ाज के मुताबिक है।

आयत के आख़िर में आसमान व ज़मीन के पैदा करने का मकसद यह बतलाया है:

لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا.

यानी ये सब चीज़ें इसलिये पैदा की गयीं कि हम तुम्हारा इम्तिहान लें कि कौन तुम में से अच्छा अ़मल करने वाला है।

इससे मालूम हुआ कि आसमान व ज़मीन का पैदा करना ख़ुद कोई मकसद न था बल्कि

इनको अ़मल करने वाले इनसानों के लिये बनाया गया है ताकि वे इन चीज़ों से अपने गुज़ारे का फ़ायदा भी हासिल करें और इनमें ग़ौर करके अपने मालिक और रब को भी पहचानें।

हासिल यह हुआ कि आसमान व ज़मीन की पैदाईश से असल मक़सूद इनसान है बल्कि इनसानों में भी ईमान वाले हैं, और उनमें भी वह इनसान जो सबसे अच्छा अ़मल करने वाला है। और यह ज़ाहिर है कि सारे इनसानों में सबसे अच्छा अ़मल करने वाले हमारे रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं, इसलिये यह कहना सही हुआ कि तमाम कायनात के पैदा करने का असल मक़सद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मुबारक वजूद है। (तफ़सीरे मज़हरी)

यहाँ यह बात भी ग़ौर करने के क़ाबिल है कि हक़ तआ़ला ने इस जगह 'अह्सनु अ़-मला' फ़रमाया है, यानी कौन अच्छा अ़मल करने वाला है, यह नहीं फ़रमाया कि कौन ज़्यादा अ़मल करने वाला है। इससे मालूम हुआ कि नेक आमाल नमाज़, रोज़ा, तिलावत व ज़िक्र की अ़मली अधिकता और बहुत बड़ी मात्रा से ज़्यादा अल्लाह तआ़ला की नज़र अच्छे अ़मल पर है। इसी अ़मल की अच्छाई को एक हदीस में एहसान से ताबीर किया गया है, जिसका हासिल यह है कि अ़मल ख़ालिस अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलब करने के लिये हो और कोई दुनियावी ग़र्ज़ उसमें न हो, और उस अ़मल की सूरत भी वह इख़्तियार की जाये जो अल्लाह तआ़ला के नज़दीक पसन्दीदा है, जिसको रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने अ़मल से बतलाया और उम्मत के लिये सुन्नत की पैरवी को लाज़िम क़रार दिया है। ख़ुलासा यह है कि थोड़ा अ़मल जो पूरे इख़्लास के साथ सुन्नत के मुताबिक़ हो वह उस ज़्यादा अ़मल से बेहतर है जिसमें ये चीज़ें न हों, या कम हों।

सातवीं आयत में क़ियामत व आख़िरत का इनकार करने वालों का हाल बयान हुआ है कि ये लोग जो बात उनकी समझ में न आये उसको जादू कहकर टाल देना चाहते हैं।

आठवीं आयत में उन लोगों के शुब्हे का जवाब है जो अ़ज़ाब की वईदों (धमकियों) पर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का एतिबार न करके कहा करते थे कि अगर आप सच्चे हैं तो जिस अ़ज़ाब की वईद थी वह क्यों नहीं आ जाता।

وَلَئِنْ اَذَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً

ثُمَّ نَزَعْنٰهَا مِنْهُ ۚ اِنَّهٗ لَيَئُوْسٌ كَفُوْرٌ ۝ وَلَئِنْ اَذَقْنٰهُ نَعْمَآءَ بَعْدَ ضَرَّآءَ مَسَّتْهُ لَيَقُوْلَنَّ ذَهَبَ
السَّيِّاٰتُ عَنِّيْ ۗ اِنَّهٗ لَفَرِحٌ فَخُوْرٌ ۝ اِلَّا الَّذِيْنَ صَبَرُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۗ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ
وَّاَجْرٌ كَبِيْرٌ ۝ فَلَعَلَّكَ تَارِكٌۢ بَعْضَ مَا يُوْحٰٓى اِلَيْكَ وَضَآئِقٌۢ بِهٖ صَدْرُكَ اَنْ يَّقُوْلُوْا لَوْلَآ اُنْزِلَ
عَلَيْهِ كَنْزٌ اَوْ جَآءَ مَعَهٗ مَلَكٌ ۗ اِنَّمَآ اَنْتَ نَذِيْرٌ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَّكِيْلٌ ۝ اَمْ يَقُوْلُوْنَ افْتَرٰىهُ ۗ
قُلْ فَاْتُوْا بِعَشْرِ سُوَرٍ مِّثْلِهٖ مُفْتَرَيٰتٍ وَّادْعُوْا مَنِ اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝
فَاِلَّمْ يَسْتَجِيْبُوْا لَكُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَآ اُنْزِلَ بِعِلْمِ اللّٰهِ وَاَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ۝

व ल-इन् अज़क़्नल्-इन्सा-न मिन्ना रह्म-तन् सुम्-म न-ज़अ्नाहा मिन्हु इन्नहू ल-यऊसुन् कफ़ूर (9) व ल-इन् अज़क़्नाहु नअ्मा-अ बअ्-द ज़र्रा-अ मस्सत्हु ल-यक़ूलन्-न ज़-हबस्सय्यिआतु अ़न्नी, इन्नू ल-फ़रिहुन् फ़ख़ूर (10) इल्लल्लज़ी-न स-बरू व अ़मिलुस्सालिहाति, उलाइ-क लहुम् मग़्फ़ि-रतुंव्-व अज्रुन् कबीर (11) फ़-लअ़ल्ल-क तारिकुम् बअ्-ज़ मा यूहा इलै-क व ज़ाइक़ुम् बिही सद्रु-क अंय्यक़ूलू लौ ला उन्ज़ि-ल अ़लैहि कन्ज़ुन् औ जा-अ म-अ़हू म-लकुन्, इन्नमा अन्-त नज़ीरुन्, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइंव्-वकील (12) अम् यक़ूलूनफ़्तराहु, क़ुल् फ़अ्तू बिअ़शिर सु-वरिम्-मिस्लिही मुफ़्त-रयातिंव्वद्अ़ू मनिस्त-तअ़्तुम् मिन् दूनिल्लाहि इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (13) फ़-इल्लम् यस्तजीबू लकुम् फ़अ्लमू अन्नमा उन्ज़ि-ल बिअ़िल्मि-ल्लाहि व अल्ला इला-ह इल्ला हु-व फ़-हल् अन्तुम् मुस्लिमून (14)	और अगर हम चखा दें आदमी को अपनी तरफ़ से रहमत फिर वह छीन लें उससे, तो वह नाउम्मीद नाशुक्रा होता है। (9) और अगर हम चखा दें उसको आराम तकलीफ़ के बाद जो पहुँची थी उसको तो बोल उठे दूर हुईं बुराईयाँ मुझसे, वह तो इतराने वाला शेख़ीबाज़ है। (10) मगर जो लोग साबिर हैं और करते हैं नेकियाँ, उनके वास्ते बख़्शिश है और बड़ा सवाब। (11) सो कहीं तू छोड़ बैठेगा कुछ चीज़ उसमें से जो वही आई तेरी तरफ़, और तंग होगा उससे तेरा जी इस बात पर कि वे कहते हैं क्यों न उतरा इस पर ख़ज़ाना या क्यों न आया इसके साथ फ़रिश्ता, तू तो डराने वाला है, और अल्लाह है हर चीज़ का ज़िम्मेदार। (12) क्या कहते हैं कि बना लाया है तू क़ुरआन को, कह दे कि तुम भी ले आओ एक दस सूरतें ऐसी बनाकर और बुला लो जिसको बुला सको अल्लाह के सिवा, अगर हो तुम सच्चे। (13) फिर अगर न पूरा करें तुम्हारा कहना तो जान लो कि क़ुरआन तो उतरा है अल्लाह की वही से, और यह कि कोई हाकिम नहीं उसके सिवा, फिर अब तुम हुक्म मानते हो? (14)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर हम इनसान को अपनी मेहरबानी का मज़ा चखाकर उससे छीन लेते हैं तो वह

नाउम्मीद और नाशुक्रा हो जाता है। और अगर उसको किसी तकलीफ़ के बाद जो कि उस पर आ पड़ी हो किसी नेमत का मज़ा चखा दें तो (ऐसा इतराता है कि) कहने लगता है कि मेरा सब दुख-दर्द रुख़सत हुआ (अब कभी न होगा), पस वह इतराने लगता है, शेख़ी बघारने लगता है। मगर जो लोग मुस्तक़िल-मिज़ाज हैं और नेक काम करते हैं (इससे मुराद मोमिन हज़रात हैं कि उनमें कम व बेश ये ख़स्लतें होती हैं, सो) वे ऐसे नहीं होते (बल्कि नेमत के जाते रहने और छिन जाने के वक़्त सब्र से काम लेते हैं और नेमत मिलने के वक़्त शुक्र व नेकी बजा लाते हैं पस) ऐसे लोगों के लिये बड़ी मग़फ़िरत और बड़ा अज्र है। (ख़ुलासा यह है कि सिवाय मोमिनों के अक्सर आदमी ऐसे ही हैं कि ज़रा सी देर में निडर हो जायें, ज़रा सी देर में नाउम्मीद हो जायें, इसलिये ये लोग अ़ज़ाब में देरी के सबब बेख़ौफ़ और मुन्किर हो गये। ये लोग जो इनकार व मज़ाक़ उड़ाने से पेश आते हैं) सो शायद आप (तंग होकर) उन (अहकाम) में से जो कि आपके पास वही के ज़रिये से भेजे जाते हैं कुछ को (कि वह तब्लीग़ है) छोड़ देना चाहते हैं? (यानी क्या ऐसा मुम्किन है कि आप तब्लीग़ करना छोड़ दें? सो ज़ाहिर है कि ऐसा इरादा तो आप कर नहीं सकते, फिर तंग होने से क्या फ़ायदा) और आपका दिल इस बात से तंग होता है कि वे कहते हैं कि (अगर यह नबी हैं तो) इन पर कोई ख़ज़ाना क्यों नाज़िल नहीं हुआ, या इनके साथ कोई फ़रिश्ता (जो हमसे भी बातचीत करता) क्यों नहीं आया? (यानी ऐसे मोजिज़े क्यों नहीं दिये गये, सो ऐसी बातों से आप तंग न होजिये क्योंकि) आप तो (इन काफ़िरों के एतिबार से) सिर्फ़ डराने वाले हैं (यानी पैग़म्बर हैं, जिसके लिये दर असल किसी भी मोजिज़े की ज़रूरत नहीं) और हर चीज़ पर पूरा इख़्तियार रखने वाला (तो) अल्लाह ही है (आप नहीं हैं)।

(जब यह बात है तो उन मोजिज़ों का ज़ाहिर करना आपके इख़्तियार से बाहर है फिर उसकी फ़िक्र और उस फ़िक्र से तंगी क्यों हो, और चूँकि पैग़म्बर के लिये सिर्फ़ मोजिज़े की ज़रूरत है और आपका बड़ा मोजिज़ा क़ुरआन है तो इसको न मानने की क्या वजह) क्या (इसके बारे में यूँ) कहते हैं (नऊज़ु बिल्लाह) कि आपने इसको (अपनी तरफ़ से) ख़ुद बना लिया है? आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि अगर (यह मेरा बनाया हुआ है) तो (अच्छा) तुम भी इस जैसी दस सूरतें (जो तुम्हारी) बनाई हुई (हों) ले आओ, और (अपनी मदद के लिये) जिन-जिन को अल्लाह के अ़लावा बुला सको बुला लो, अगर तुम सच्चे हो।

फिर ये (काफ़िर लोग) अगर तुम लोगों का (यानी पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मोमिनों का यह) कहना (कि इसके जैसा बना लाओ) न कर सकें तो तुम (इनसे कह दो कि अब तो) यक़ीन कर लो कि (यह क़ुरआन) अल्लाह ही के इल्म (और क़ुदरत) से उतरा है (इसमें और किसी के न इल्म का दख़ल है और न क़ुदरत का), और यह भी (यक़ीन कर लो) कि अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई माबूद नहीं (क्योंकि माबूद ख़ुदाई की सिफ़ात में कामिल होता है फिर अगर और कोई होता तो उसकी क़ुदरत भी पूरी होती और उस क़ुदरत से वह तुम लोगों की मदद करता कि तुम इसके जैसा ले आते, क्योंकि दीन की तहक़ीक़ का मौक़ा इसको चाहता था, पस इसके जैसा बनाने से उनके आ़जिज़ होने से रिसालत और तौहीद दोनों साबित हो गये,

जब दोनों साबित हो गये) तो फिर अब भी मुसलमान होते हो (या नहीं)?

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत की तस्दीक़ और उसमें शुब्हात निकालने वालों का जवाब बयान हुआ है, और इसके शुरू यानी पहली तीन आयतों में इनसान की एक तबई बुरी आ़दत का ज़िक्र और मुसलमानों को उससे बचने की हिदायत है।

पहली दो आयतों में फ़ितरी तौर पर इनसान का ग़ैर-मुस्तक़िल मिज़ाज, जल्दी-पसन्द होना और मौजूदा हालत में खप कर अतीत और भविष्य को भुला देना बयान फ़रमाया है। इरशाद है कि अगर हम इनसान को कोई नेमत चखाते हैं और फिर उससे वापस ले लेते हैं तो वह बड़ा हिम्मत हारने वाला, नाउम्मीद और नाशुक्रा बन जाता है, और अगर उसको किसी तकलीफ़ के बाद जो उसको पेश आई हो किसी नेमत का मज़ा चखा दें तो कहने लगता है कि मेरा सब दुख-दर्द रुख़्सत हुआ और वह इतराने और शेख़ी बधारने लगता है।

मतलब यह है कि इनसान फ़ितरी तौर पर जल्द-बाज़ी पसन्द और मौजूदा हालत को सब कुछ समझने का आ़दी होता है, अगले पिछले हालात व वाक़िआ़त में ग़ौर व फ़िक्र और उनको याद रखने का आ़दी नहीं होता, इसी लिये नेमत के बाद तकलीफ़ आ जाये तो रहमत से नाउम्मीद होकर नाशुक्री करने लगता है, यह ख़्याल नहीं करता कि जिस पाक ज़ात ने पहले नेमत दी थी वह फिर भी दे सकता है। इसी तरह अगर उसको तकलीफ़ व मुसीबत के बाद कोई राहत व नेमत मिल जाये तो बजाय इसके कि पिछली हालत में ग़ौर करके अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू होता, उसका शुक्र करता, और ज़्यादा अकड़ने इतराने लगता है और पिछली हालत को भूलकर यूँ समझने लगता है कि यह नेमत तो मेरा हक़ है, मुझे मिलनी ही चाहिये और मैं हमेशा इसी तरह रहूँगा। ग़ाफ़िल यह ख़्याल नहीं करता कि जिस तरह पहली हालत बाक़ी नहीं रही, यह भी हो सकता है कि यह नेमत व राहत की हालत भी बाक़ी न रहे।

इनसान की मौजूद-परस्ती और अतीत व भविष्य को भूल जाने का यह आ़लम है कि एक सत्ताधारी (ताक़त व इख़्तियार के मालिक) के ख़ाक व ख़ून पर दूसरा शख़्स अपने इक़्तिदार की बुनियाद क़ायम करता है और कभी नीचे की तरफ़ नज़र नहीं करता कि इससे पहला ताक़त व हुकूमत वाला भी इसी तरह रहा करता था, उसके अन्जाम से बेख़बर होकर ताक़त व हुकूमत के नशे के मज़े लेता है।

इसी मौजूद-परस्ती और वर्तमान में मस्त रहने की इस्लाह (सुधार) के लिये अल्लाह तआ़ला की किताबें और रसूल आते हैं जो इनसान को गुज़रे ज़माने के इब्रतनाक वाक़िआ़त याद दिलाकर भविष्य की फ़िक्र सामने कर देते हैं और यह सबक़ सिखाते हैं कि कायनात के बदलते हुए हालात व तब्दीलियों में ग़ौर करो कि कौनसी ताक़त उनके पर्दे में काम कर रही है। बक़ौल हज़रत शैख़ुल-हिन्द रह्मतुल्लाहि अ़लैहिः

इन्क़िलाबात-ए-जहाँ वाइज़-ए-रब हैं देखो
हर तग़य्युर से सदा आती है फ़फ़्हम् फ़फ़्हम्

यानी दुनिया की यह अदलती-बदलती हालतें अल्लाह की तरफ़ से नसीहत का पैग़ाम हैं। हर बदलाव से यही आवाज़ आती है कि यह सब कुछ स्थिर नहीं है, समझ लो ख़ूब समझ लो। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

कामिल मोमिन बल्कि कामिल इनसान वही है जो हर तब्दीली व इन्क़िलाब और हर रंज व राहत में क़ुदरत के छुपे हुए हाथ की ताक़त को समझे, आनी फ़ानी राहत व रंज और उसके सिर्फ़ माद्दी असबाब पर दिल न लगाये।

अ़क़्लमन्द का काम यह है कि असबाब से ज़्यादा असबाब के बनाने वाले की तरफ़ नज़र करे, उसी से अपना रिश्ता मज़बूत बाँधे।

तीसरी आयत में ऐसे ही कामिल इनसानों को आ़म इनसानी फ़ितरत से अलग और नुमायाँ करने के लिये फ़रमाया है:

إِلَّا الَّذِينَ صَبَرُوا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ.

यानी इस आ़म इनसानी कमज़ोरी से वे लोग अलग हैं जिनमें दो सिफ़तें पाई जायें- एक सब्र, दूसरे नेक अ़मल।

लफ़्ज़ **सब्र** अ़रबी भाषा में उर्दू मुहावरे से बहुत आ़म मायने में इस्तेमाल होता है, और असली मायने लफ़्ज़ सब्र के बाँधने और रोकने के हैं। क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में नफ़्स को उसकी नाजायज़ इच्छाओं से रोकने का नाम सब्र है, इसलिये सब्र के मफ़्हूम में तमाम गुनाहों और ख़िलाफ़े शरीअ़त कामों से परहेज़ आ गया, और नेक अ़मल में तमाम फ़राईज़ व वाजिबात और सुन्नतें व मुस्तहब चीज़ें आ गयीं। मायने यह हो गये कि इस आ़म इनसानी कमज़ोरी से वे लोग बचे रहेंगे जो अल्लाह तआ़ला पर ईमान और क़ियामत के हिसाब के डर की वजह से हर ऐसी चीज़ से परहेज़ करते रहें जो अल्लाह व रसूल को नापसन्द है, और हर ऐसे अ़मल की तरफ़ दौड़ें जिनसे अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ुश हों।

इसी आयत के आख़िर में उन कामिल इनसानों का सिला और जज़ा भी यह बतलाई गयी है कि:

أُولٰٓئِكَ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ كَبِيْرٌ○

यानी ऐसे लोगों के लिये अल्लाह तआ़ला का वायदा है कि उनकी ख़तायें बख़्श दी जायेंगी और उनके नेक अ़मल का बहुत बड़ा बदला उनको मिलेगा।

इस जगह यह बात भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि दुनिया की नेमत और परेशानी दोनों के बारे में क़ुरआने करीम ने 'अज़क़्ना' यानी चखाने का लफ़्ज़ इस्तेमाल करके इसकी तरफ़ भी इशारा कर दिया कि असल नेमत और परेशानी व मुसीबत आख़िरत की है, दुनिया में न राहत मुकम्मल है न तकलीफ़ बल्कि चखने और नमूने के दर्जे में है ताकि इनसान को आख़िरत की

नेमतों और तकलीफ़ों का कुछ अन्दाज़ा हो सके, इसलिये भी दुनिया की न राहत कुछ ज़्यादा ख़ुश होने की चीज़ है न मुसीबत कुछ ज़्यादा ग़म करने की। अगर ग़ौर करो तो आजकल की परिभाषा में यह सारी दुनिया आख़िरत का शोरूम है जिसमें राहत व मुसीबत के सिर्फ़ नमूने रखे हैं।

चौथी आयत एक ख़ास वाक़िए में नाज़िल हुई है। वाक़िआ यह था कि मक्का के मुश्रिक लोगों ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहिं व सल्लम के सामने विभिन्न प्रकार की फ़रमाईशें पेश कीं, एक यह कि इस क़ुरआन में हमारे बुतों को बुरा कहा गया है इसलिये हम इस पर ईमान नहीं ला सकते, इसलिये या तो आप कोई दूसरा क़ुरआन लायें या इसी में बदल कर तरमीम कर दें:

اِئْتِ بِقُرْاٰنٍ غَيْرِ هٰذَآ اَوْ بَدِّلْهُ.

(तफ़सीरे बग़वी, तफ़सीरे मज़हरी)

दूसरे यह कि हम आपके रसूल होने पर जब यक़ीन करें कि या तो दुनिया के बादशाहों की तरह आप पर कोई ख़ज़ाना नाज़िल हो जाये जिससे सब को बख़्शिश करें, या फिर कोई फ़रिश्ता आसमान से आ जाये, वह आपके साथ यह तस्दीक़ करता फिरे कि बेशक यह अल्लाह के रसूल हैं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनकी बेकार व बेहूदा फ़रमाईशों से दिल-तंग हुए, क्योंकि रह्मतुल्-लिल्आ़लमीन से यह भी मुम्किन न था कि उनको उनके हाल पर छोड़ दें, उनके ईमान लाने की फ़िक्र को दिल से निकाल दें, और न यह मुम्किन था कि उनकी बेहूदा फ़रमाईशों को पूरा करें। क्योंकि अव्वल तो ये फ़रमाईशें ख़ालिस बेअ़क़्ली पर आधारित हैं, बुत और बुत-परस्ती और दूसरी बुरी चीज़ों को बुरा न कहा जाये तो हिदायत कैसे हो? और ख़ज़ाने का नुबुव्वत के साथ क्या जोड़। उन लोगों ने नुबुव्वत को बादशाहत पर क़्यास कर लिया।

इसी तरह अल्लाह तआ़ला का यह दस्तूर नहीं कि ऐसी हालत पैदा कर दें कि लोग ईमान लाने से माद्दी तौर से मजबूर हो जायें, वरना सारा जहान उसकी क़ुदरत के क़ब्ज़े में है, किसी की क्या मजाल थी कि अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई अ़क़ीदा या अ़मल रख सकता, मगर उसने अपनी कामिल हिक्मत से इस दुनिया को इम्तिहान की जगह बनाया है, यहाँ किसी नेकी पर अ़मल या बदी से परहेज़ पर माद्दी असबाब के ज़रिये किसी को मजबूर नहीं किया जाता, अलबत्ता आसमानी किताबों और रसूलों के ज़रिये नेक व बद और अच्छे-बुरे का फ़र्क़ और उनके परिणाम बतलाकर नेकी पर अ़मल और बदी से परहेज़ पर तैयार किया जाता है। अगर रसूल के साथ मोजिज़े के तौर पर कोई फ़रिश्ता उसके क़ौल की तस्दीक़ (पुष्टि) के लिये लगाया जाता और जब कोई न मानता तो उसी वक़्त उसको नक़द अ़ज़ाब का सामना होता तो यह ईमान पर मजबूर करने की एक सूरत होती, न इसमें ग़ैब पर ईमान रहता जो ईमान की असल रूह है और न इनसान का अपना कोई इख़्तियार रहता जो उसके अ़मल की रूह है, और अ़लावा इसके कि उनकी फ़रमाईशें बेकार और बेहूदा थीं, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से इस तरह की फ़रमाईशें करना ख़ुद इसकी दलील थी कि ये लोग रसूल व नबी की हक़ीक़त को नहीं पहचानते, रसूल और ख़ुदा में कोई फ़र्क़ नहीं करते, रसूल को ख़ुदा तआ़ला की तरह

असीमित इख़्तियार वाला समझते हैं, इसी लिये उससे ऐसे कामों की फ़रमाईश करते हैं जो अल्लाह के सिवा कोई नहीं कर सकता।

ग़र्ज़ कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनकी ऐसी फ़रमाईशों से सख़्त दुखी और परेशान हो गये तो आपकी तसल्ली और उनके ख़्यालात की इस्लाह (सुधार) के लिये यह आयत नाज़िल हुई, जिसमें पहले हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया गया कि क्या आप उनके कहने से मजबूर होकर अल्लाह के भेजे हुए क़ुरआन का कोई हिस्सा छोड़ देंगे जिससे ये लोग नाख़ुश होते हैं? मसलन जिसमें बुतों के मजबूर व बेकस होने और किसी चीज़ पर क़ादिर न होने का बयान है, और क्या आप उनकी ऐसी फ़रमाईशों से दुखी हो जायेंगे? यहाँ लफ़्ज़ 'लअ़ल्ल-क' से इस मज़मून को ताबीर करने का यह मतलब नहीं कि वास्तव में आपके बारे में ऐसा गुमान हो सकता था, बल्कि मक़सद आपका इन चीज़ों से बरी होना बयान करना है, कि आप न क़ुरआन का कोई हिस्सा उनकी रियायत से छोड़ सकते हैं और न आपको उनकी फ़रमाईशों से दिली तंगी होनी चाहिये, क्योंकि आप तो अल्लाह की तरफ़ से नज़ीर यानी डराने वाले बनाकर भेजे गये हैं, और सब कामों को अन्जाम देना और पूरा करना तो अल्लाह ही की क़ुदरत में है। डराने वाला होने की सिफ़त ख़ास तौर पर इसलिये बयान की गयी क्योंकि ये काफ़िर तो डराने ही के हक़दार हैं वरना रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जैसे नज़ीर यानी डराने वाले हैं ऐसे ही बशीर यानी नेक लोगों को ख़ुशख़बरी सुनाने वाले भी हैं। इसके अ़लावा नज़ीर हक़ीक़त में उस डराने वाले को कहते हैं जो शफ़क़त व मुहब्बत की बिना पर ख़राब और नुक़सान देने वाली चीज़ों से डराये, इसलिये नज़ीर के मफ़्हूम में बशीर का मफ़्हूम भी एक हैसियत से शामिल है।

ज़िक्र की गयी आयतों में मुश्रिकों की तरफ़ से ख़ास क़िस्म के मोजिज़ों का मुतालबा था, अगली आयतों में उनको इस बात से आगाह किया गया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का क़ुरआन का मोजिज़ा एक ऐसा मोजिज़ा तुम्हारे सामने आ चुका है जिसके मोजिज़ा होने का तुम भी इनकार नहीं कर सकते, तो अगर यह मोजिज़ों का मुतालबा सही नीयत से रसूल की सच्ची हक़्क़ानियत मालूम करने के लिये है तो वह पूरा हो चुका, और अगर महज़ दुश्मनी व मुख़ालफ़त के लिये है तो अगर तुम्हारे मतलूबा मोजिज़े भी दिखला दिये जायें तो विरोधियों व दुश्मनों से क्या उम्मीद है कि उनको देखकर भी वे इस्लाम क़ुबूल करेंगे। बहरहाल क़ुरआने करीम का स्पष्ट और खुला मोजिज़ा होना नाक़ाबिले इनकार है।

इस पर मुश्रिकों व काफ़िरों की तरफ़ से जो ग़लत शुब्हे पैदा किये गये उनकी तरदीद (रद्द करना) अगली दो आयतों में इस तरह की गयी है कि ये लोग यूँ कहते हैं कि क़ुरआन को ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बना लिया है, अल्लाह का कलाम नहीं।

इसके जवाब में फ़रमाया कि अगर तुम्हारा ऐसा ही ख़्याल है कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ऐसा क़ुरआन ख़ुद बना सकते हैं तो तुम भी इस जैसी सिर्फ़ दस सूरतें ही बनाकर दिखला दो, और यह भी ज़रूरी नहीं कि ये दस सूरतें कोई एक ही आदमी बनाये बल्कि दुनिया

जहान के लोग सब मिलकर भी बना लायें। और जब वे दस सूरतें बनाने से भी आ़जिज़ हों तो आप फ़रमा दीजिये कि अब तो हक़ीक़त खुल गयी, क्योंकि अगर यह क़ुरआन किसी इनसान का कलाम होता तो दूसरे इनसान भी इस जैसा कलाम बना सकते, और सब का आ़जिज़ होना इसकी मज़बूत दलील है कि यह क़ुरआन अल्लाह ही के इल्म से नाज़िल हुआ है जिसमें किसी मामूली कमी-बेशी की गुंजाईश नहीं, और इनसानी ताक़त से ऊपर है।

क़ुरआने करीम ने इस जगह दस सूरतें मुक़ाबले में बनाकर लाने का इरशाद फ़रमाया है, और दूसरी एक आयत में यह भी ज़िक्र फ़रमाया है कि एक ही सूरत इस जैसी बना लाओ।

वजह यह है कि पहले दस सूरतें बनाने का हुक्म दिया गया, जब वे इससे आ़जिज़ हो गये तो फिर उनके आ़जिज़ होने को और ज़्यादा वाज़ेह करने के लिये सूरः ब-क़रह की आयत में फ़रमाया कि अगर तुम क़ुरआन को किसी इनसान का कलाम समझते हो तो तुम भी ज़्यादा नहीं सिर्फ़ एक ही सूरत इस जैसी बना लाओ, मगर वे क़ुरआने करीम की इस चुनौती और उनके लिये इन्तिहाई आसानी कर देने के बावजूद कुछ न कर सके तो क़ुरआने करीम का मोजिज़ा होना और बिला शुब्हा अल्लाह का कलाम होना साबित हो गया। इसी लिये आख़िर में फ़रमायाः

فَهَلْ اَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ○

यानी क्या तुम अब भी मुसलमान और फ़रमाँबरदार बनोगे, या इसी ग़फ़लत की नींद में रहोगे?

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَزِيْنَتَهَا نُوَفِّ اِلَيْهِمْ اَعْمَالَهُمْ فِيْهَا وَهُمْ فِيْهَا لَا يُبْخَسُوْنَ ۞ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَيْسَ لَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا النَّارُ ۖ وَحَبِطَ مَا صَنَعُوْا فِيْهَا وَبٰطِلٌ مَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۞ اَفَمَنْ كَانَ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّهٖ وَيَتْلُوْهُ شَاهِدٌ مِّنْهُ وَمِنْ قَبْلِهٖ كِتٰبُ مُوْسٰٓى اِمَامًا وَّرَحْمَةً ۭ اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ مِنَ الْاَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُهٗ ۚ فَلَا تَكُ فِيْ مِرْيَةٍ مِّنْهُ ۤ اِنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۞

मन् का-न युरीदुल्-हयातद्दुन्या व ज़ीन-तहा नुवफ़्फ़ि इलैहिम् अअ्मालहुम् फ़ीहा व हुम् फ़ीहा ला युब्ख़सून (15) उलाइकल्लज़ी-न लै-स लहुम् फ़िल्-आख़िरति इल्लन्नारु व हबि-त मा स-नअू फ़ीहा व बातिलुम्-मा कानू यअ्मलून (16)	जो कोई चाहे दुनिया की ज़िन्दगानी और इसकी ज़ीनत, भुगता देंगे हम उनको उनके अ़मल दुनिया में और उनको इसमें कुछ नुक़सान नहीं। (15) यही हैं जिनके वास्ते कुछ नहीं आख़िरत में आग के सिवा, और बरबाद हुआ जो कुछ किया था यहाँ, और ख़राब गया जो कमाया था। (16) भला एक शख़्स जो है साफ़

अ-फ़मन् का-न अ़ला बय्यिनतिम् मिर्रब्बिही व यत्लूहु शाहिदुम् मिन्हु व मिन् क़ब्लिही किताबु मूसा इमामंव्-व रह्मतन्, उलाइ-क युअ्मिनू-न बिही, व मंय्यक्फ़ुर् बिही मिनल्-अह्ज़ाबि फ़न्नारु मौअिदुहू फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु, इन्नहुल्-हक़्कु मिर्रब्बि-क व लाकिन्-न अक्सरन्नासि ला युअ्मिनून (17)	रास्ते पर अपने रब के और उसके साथ साथ है एक गवाह अल्लाह की तरफ़ से, और इससे पहले गवाह थी मूसा की किताब रास्ता बताती और बख़्शवाती (औरों की बराबर है?) यही लोग मानते हैं क़ुरआन को, और जो कोई मुन्किर हो उससे सब फ़िर्क़ों में से सो दोज़ख़ है उसका ठिकाना, सो तू मत रह शुब्हे में उससे, बेशक वह हक़ है तेरे रब की तरफ़ से, और पर बहुत से लोग यक़ीन नहीं करते। (17)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो शख़्स (अपने अच्छे आमाल से) महज़ दुनियावी ज़िन्दगी (के फ़ायदों) और इसकी रौनक़ (को हासिल करना) चाहता है (जैसे शोहरत व नेकनामी और रुतबा, और आख़िरत का सवाब हासिल करने की उसकी नीयत न हो) तो हम उन लोगों के (उन) आमाल (का बदला) उनको इस (दुनिया) ही में पूरे तौर से भुगता देते हैं, और उनके लिये (दुनिया) में कुछ कमी नहीं होती (यानी दुनिया ही में उनके आमाल के बदले में उनको नेकनामी, सेहत व फ़रागत, ऐश और माल व औलाद में अधिकता व ज़्यादती इनायत कर दी जाती है जबकि उनके आमाल का असर उनके विपरीत कामों पर ग़ालिब हो, और अगर विपरीत यानी बुरे काम ग़ालिब हों तो फिर यह असर मुरत्तब नहीं होता। यह तो दुनिया में हुआ, रहा आख़िरत में, सो) ये ऐसे लोग हैं कि इनके लिये आख़िरत में सिवाय दोज़ख़ के और कुछ (सवाब वग़ैरह) नहीं, और इन्होंने इस (दुनिया) में जो कुछ किया था वह (आख़िरत में सब-का-सब) नाकारा (साबित) होगा, और (हक़ीक़त में तो) जो कुछ कर रहे हैं वह अब भी बेअसर है (नीयत में ख़राबी की वजह से, मगर ज़ाहिरी सूरत के एतिबार से साबित समझा जाता है आख़िरत में यह सुबूत भी ख़त्म और दूर हो जायेगा)।

क्या (क़ुरआन का इनकार करने वाला ऐसे शख़्स की बराबरी कर सकता है) जो क़ुरआन पर क़ायम हो? जो कि उसके रब की तरफ़ से आया है, और इस (क़ुरआन) के साथ एक गवाह तो इसी में (मौजूद) है (यानी इसका अपने जैसा लाने से सब को आ़जिज़ करने वाला होना, जो कि अ़क़्ली दलील है) और एक इससे पहले (यानी) मूसा (अ़लैहिस्सलाम) की किताब (यानी तौरात इसके साथ गवाही के लिये मौजूद) है, जो (अहकाम बतलाने के एतिबार से) इमाम है और (अहकाम पर जो फल व सवाब मिलेगा उसके एतिबार से वह किताब) रहमत (का सबब)

है (और यह किताबी व रिवायती दलील है। ग़र्ज़ कि क़ुरआन की सच्चाई और सही होने के लिये अक़्ली और नक़ली दोनों दलीलें मौजूद हैं, पस इन ही दलीलों के सबब से) ऐसे लोग (जिनका ज़िक्र हुआ कि वे सही रास्ते वाले हैं) इस (क़ुरआन) पर ईमान रखते हैं। और (काफ़िर का यह हाल है कि) (दूसरे) फ़िर्क़ों में से जो शख़्स इस (क़ुरआन) का इनकार करेगा तो दोज़ख़ उसके वायदे की जगह है (फिर क़ुरआन का इनकार करने वाला इसकी तस्दीक़ करने वाले के बराबर कैसे हुआ)। सो (ऐ मुख़ातब!) तुम क़ुरआन की तरफ़ से शक में मत पड़ना, इसमें कोई शक व शुब्हा नहीं कि वह सच्ची (किताब) है, तुम्हारे रब के पास से (आई है) लेकिन (बावजूद इन दलीलों के ग़ज़ब है कि) बहुत-से आदमी ईमान नहीं लाते।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस्लाम के मुख़ालिफ़ों और विरोधियों को जब अ़ज़ाब की वईदें (डाँट और धमकियाँ) सुनाई जातीं तो वे अपनी ख़ैरात व सदक़ात, मख़्लूक़ की ख़िदमत और अ़वामी फ़ायदों के कामों को सनद में पेश करते थे कि हम ऐसे नेक काम करते हैं फिर हमको अ़ज़ाब कैसा? और आज तो बहुत से नावाक़िफ़ मुसलमान भी इस शुब्हे में गिरफ़्तार नज़र आते हैं कि जो काफ़िर ज़ाहिरी आमाल व अख़्लाक़ दुरुस्त रखते हैं, अल्लाह की मख़्लूक़ की ख़िदमत और ख़ैरात व सदक़ात करते हैं, सड़कें, पुल, शिफ़ाख़ाने, पानी की सबीलें बनाते और चलाते हैं उनको मुसलमानों से अच्छा जानते हैं, उक्त आयतों में से पहली आयत में इसका जवाब दिया गया है।

ख़ुलासा जवाब का यह है कि हर अ़मल के मक़बूल और आख़िरत की निजात का ज़रिया होने की पहली शर्त यह है कि वह अ़मल अल्लाह के लिये किया गया हो, और अल्लाह के लिये करना वही मोतबर है जो उसके रसूल के बतलाये हुए तरीक़े पर किया गया हो। जो शख़्स अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान ही नहीं रखता उसके तमाम आमाल व अख़्लाक़ एक बेरूह ढाँचा है जिसकी शक्ल व सूरत तो अच्छी भली है मगर रूह न होने की वजह से आख़िरत के घर में उसका कोई वज़न और असर नहीं, अलबत्ता दुनिया में चूँकि उससे लोगों को फ़ायदा पहुँचता है और ज़ाहिरी सूरत के एतिबार से वह नेक अ़मल है इसलिये अल्लाह जल्ल शानुहू ने अपने अ़दल व इन्साफ़ की बिना पर उस अ़मल को भी बिल्कुल ज़ाया नहीं क़रार दिया बल्कि उसके करने वाले के पेशे नज़र जो मक़सद था कि दुनिया में उसकी इज़्ज़त हो, लोग उसको सख़ी, करीम, बड़ा आदमी समझें, दुनिया की दौलत, तन्दुरुस्ती और राहत नसीब हो, अल्लाह तआ़ला उसको यह सब कुछ दुनिया में दे देते हैं, आख़िरत का तसव्वुर और वहाँ की निजात उसके पेशे नज़र ही न थी और न उसका बेरूह अ़मल वहाँ की नेमतों की क़ीमत बन सकता था इसलिये उन आमाल का वहाँ कुछ बदला न मिलेगा और कुफ़्र व नाफ़रमानी की वजह से जहन्नम में रहेगा। यह ख़ुलासा-ए-मज़मून है पहली आयत का, अब उसके अलफ़ाज़ को देखिये।

इरशाद है कि जो शख़्स सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी और इसकी रौनक़ ही का इरादा करता रहा तो हम उसके आमाल का बदला दुनिया ही में पूरा दे देते हैं, उनके लिये दुनिया में कुछ

कमी नहीं होती, ये ऐसे लोग हैं कि इनके लिये आख़िरत में सिवाय दोज़ख़ के और कुछ नहीं।

यहाँ यह भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि क़ुरआन में इस जगह 'मन् अरा-द' का मुख़्तसर लफ़्ज़ छोड़कर 'मन् का-न युरीदु' का लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाया है जो किसी काम के हमेशा होते रहने पर दलालत करता है, जिसका तर्जुमा "इरादा करता रहा" किया गया है। इससे मालूम हुआ कि यह हाल सिर्फ़ ऐसे लोगों का है जो अपने आमाल और नेकियों से सिर्फ़ दुनिया ही का फ़ायदा चाहते रहे, कभी आख़िरत की फ़िक्र ही न हुई। और जो शख़्स आख़िरत की फ़िक्र और वहाँ की निजात के लिये अ़मल करता है फिर उसके साथ कुछ दुनिया का भी इरादा कर ले तो वह इसमें दाख़िल नहीं।

तफ़सीर के इमामों का इसमें मतभेद है कि यह आयत काफ़िरों के हक़ में आई है या मुसलमानों के, या मुस्लिम व काफ़िर दोनों से मुताल्लिक़ है।

आयत के आख़िरी जुमले में जो अलफ़ाज़ आये हैं कि आख़िरत में उनके लिये सिवाय दोज़ख़ के कुछ हीं, इससे बज़ाहिर यह मालूम होता है कि काफ़िरों ही के बारे में है क्योंकि मुसलमान कितना ही गुनाहगार हो, गुनाहों की सज़ा भुगतने के बाद आख़िरकार जन्नत में जायेगा। इसी लिये इमाम ज़ह्हाक रह. वग़ैरह मुफ़स्सिरीन ने इसको काफ़िर ही के बारे में क़रार दिया है।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद वे मुसलमान हैं जो अपने नेक आमाल से सिर्फ़ दुनिया की भलाई, राहत, दौलत, इज़्ज़त के तलबगार हैं, नेक अ़मल इसी नीयत से करते हैं कि दुनिया में इज़्ज़त व राहत मिले, और मज़कूरा जुमले का मतलब यह है कि जब तक अपने बुरे आमाल की सज़ा न भुगत लेंगे उस वक़्त तक उनको सिवाय दोज़ख़ के कुछ न मिलेगा।

और ज़्यादा वरीयता प्राप्त और वाज़ेह बात यह है कि यह आयत उन लोगों से संबन्धित है जो अपने नेक आमाल को सिर्फ़ दुनिया के फ़ायदों दौलत, इज़्ज़त, सेहत वग़ैरह की नीयत से करते हैं, चाहे ऐसा करने वाले काफ़िर हों जो आख़िरत के क़ायल ही नहीं या मुसलमान हों जो ज़बान से आख़िरत के क़ायल हैं मगर अ़मल में उसकी फ़िक्र नहीं रखते, बल्कि सारी फ़िक्र दुनिया ही के फ़ायदों से जोड़े रखते हैं। मुफ़स्सिरीन हज़रात में से मुजाहिद, मैमून बिन मेहरान, मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने इसी को इख़्तियार फ़रमाया है।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मशहूर हदीसः

إِنَّمَا الْأَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ.

(आमाल का दारोमदार नीयतों पर है) से भी इसी मायने की ताईद होती है कि जो शख़्स अपने अ़मल में जिस चीज़ की नीयत करता है उसको वही मिलती है, जो दुनिया की नीयत करता है उसको दुनिया मिलती है, जो आख़िरत की नीयत करता है आख़िरत मिलती है, जो दोनों की नीयत करता है उसको दोनों मिलती हैं। तमाम आमाल का मदार नीयत पर होना एक ऐसा उसूल है जो हर मिल्लत व मज़हब में तस्लीम किया गया है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

इसी लिये एक हदीस में है कि क़ियामत के दिन उन लोगों को लाया जायेगा जो दुनिया में इबादत इसलिये करते थे कि लोगों की नज़र में उनकी इज़्ज़त हो, उनसे कहा जायेगा कि तुमने नमाज़ पढ़ी, सदक़ा ख़ैरात किया, जिहाद किया, क़ुरआन की तिलावत की मगर यह सब इस नीयत से किया कि तुम नमाज़ी और सख़ी और ग़ाज़ी और क़ारी कहलाओ तो जो तुम चाहते थे वह तुम्हें मिल गया, दुनिया में तुम्हें यह ख़िताबात मिल चुके अब यहाँ तुम्हारे इन आमाल का कोई बदला नहीं, और सबसे पहले जहन्नम में उन लोगों को डाला जायेगा।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु यह हदीस नक़ल करके रो पड़े और फ़रमाया कि क़ुरआने करीम की आयतः

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَزِيْنَتَهَا.

(यानी यही आयत जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है) से इस हदीस की तस्दीक़ होती है।

सही मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला किसी पर ज़ुल्म नहीं करते, मोमिन जो नेक काम करता है उसको दुनिया में भी कुछ बदला मिलता है और आख़िरत में सवाब मिलता है, और काफ़िर (चूँकि आख़िरत की फ़िक्र ही नहीं रखता इसलिये उस) का हिसाब दुनिया ही में भुगता दिया जाता है, उसके नेक आमाल के बदले में दुनिया की दौलत, इज़्ज़त, सेहत, राहत उसको दे दी जाती है, यहाँ तक कि जब वह आख़िरत में पहुँचता है तो उसके पास कुछ नहीं होता जिसका मुआवज़ा वहाँ पाये।

तफ़सीरे मज़हरी में है कि मोमिन अगरचे दुनिया की फ़लाह का भी इच्छुक होता है मगर आख़िरत का इरादा ग़ालिब रहता है इसलिये उसको दुनिया में ज़रूरत के मुताबिक़ ही मिलता है और बड़ा मुआवज़ा आख़िरत में पाता है।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु एक मर्तबा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मकान पर हाज़िर हुए तो सारे घर में चन्द गिनी-चुनी चीज़ों के सिवा कुछ न देखा तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि दुआ फ़रमाईये कि अल्लाह तआ़ला आपकी उम्मत को भी दुनिया की वुस्अत अता फ़रमायें, क्योंकि हम ईरान व रूम को देखते हैं वे दुनिया में बड़ी वुस्अत और फ़राख़ी में हैं, हालाँकि वे ख़ुदा तआ़ला की इबादत नहीं करते। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तकिये से कमर लगाये हुए थे, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के ये अलफ़ाज़ सुनकर सीधे बैठ गये और फ़रमाया- ऐ उमर! तुम अब तक इसी ख़्याल में पड़े हो, ये तो वे लोग हैं जिनकी नेकियों का बदला उन्हें दुनिया ही में दे दिया गया है। (मज़हरी)

जामे तिर्मिज़ी और मुस्नद अहमद में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जिस शख़्स की नीयत अपने आमाल में आख़िरत की तलब की होती है अल्लाह तआ़ला दुनिया में उसके दिल को ग़नी कर देते हैं और उसकी ज़रूरतों को पूरा फ़रमा देते हैं और दुनिया उसके पास ज़लील होकर आती है, और जिस शख़्स की नीयत दुनिया तलब करने की होती है तो अल्लाह तआ़ला मोहताजी उसके

सामने कर देते हैं कि उसकी हाजत कभी पूरी ही नहीं होती क्योंकि दुनिया की हवस उसको चैन से नहीं बैठने देती, एक हाजत पूरी होने से पहले दूसरी हाजत सामने आ जाती है और बेशुमार फ़िक्रें उसको लग जाती हैं, और मिलता सिर्फ़ वही है जो अल्लाह तआ़ला ने उसके लिये लिख दिया है।

ऊपर ज़िक्र हुई आयत में जो यह इरशाद हुआ है कि दुनिया का इरादा करने वालों को उनके अ़मल का बदला दुनिया ही में पूरा दे दिया जाता है, इस पर यह शुब्हा हो सकता है कि बहुत से ऐसे लोग भी हैं कि बावजूद दुनिया का इरादा करने और कोशिश करने के दुनिया में भी उनका मतलब पूरा नहीं होता और बाज़ दफ़ा कुछ भी नहीं मिलता। इसका जवाब यह है कि क़ुरआने करीम की आयत में इस जगह संक्षिप्तता है इसकी पूरी तफ़सील सूरः बनी इस्राईल की इस आयत में है, जिसमें फ़रमाया है:

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهٗ فِيْهَا مَانَشَآءُ لِمَنْ نُّرِيْدُ.

यानी जो शख़्स दुनिया ही का इरादा करता रहता है हम उसको दुनिया ही में नक़द दे देते हैं। मगर यह देना दो शर्तों के साथ बंधा है- अव्वल यह कि जिस क़द्र देना चाहें उतना ही देते हैं उनकी माँग और तलब के बराबर देना ज़रूरी नहीं, दूसरे यह कि सिर्फ़ उसी शख़्स को देते हैं जिसको देना हिक्मत के तक़ाज़े के एतिबार से मुनासिब समझते हैं हर एक को देना ज़रूरी नहीं।

दूसरी आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सच्चे मोमिनों का हाल उन लोगों के मुक़ाबले में पेश किया गया जिनकी सोच, इल्म और मक़सद दौड़-धूप सिर्फ़ दुनिया है ताकि दुनिया देख ले कि ये दो गिरोह बराबर नहीं हो सकते। फिर उनका यह हाल बयान करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत व रिसालत का तमाम इनसानी दुनिया के लिये क़ियामत तक आ़म होना, और जो शख़्स आप पर ईमान न लाये चाहे आमाल कुछ भी करे उसका गुमराह और जहन्नमी होना बयान फ़रमाया है।

पहले जुमले में फ़रमाया कि क्या क़ुरआन का इनकार करने वाला ऐसे शख़्स की बराबरी कर सकता है जो क़ुरआन पर क़ायम हो, जो कि उसके रब की तरफ़ से आया है, और इसके साथ एक गवाह तो इसी में मौजूद है, और इससे पहले मूसा की किताब गवाह है जो क़ाबिले पैरवी और लोगों के लिये रहमत बनाकर भेजी गयी थी।

इस आयत में 'बय्यिना' से मुराद क़ुरआन है, और 'शाहिद' के मायने में तफ़सीर के इमामों के मुख़्तलिफ़ अक़वाल हैं। बयानुल-क़ुरआन में हज़रत थानवी रह. ने इसको इख़्तियार किया है कि शाहिद से मुराद वह क़ुरआनी कमाल और उसका बेनज़ीर होना है जो ख़ुद क़ुरआन में मौजूद है। तो मायने यह हो गये कि वे लोग जो क़ुरआन पर क़ायम हैं और उनके पास क़ुरआन की हक़्क़ानियत (सही और हक़ होने) का एक गवाह तो ख़ुद क़ुरआन में मौजूद है यानी उसका बेनज़ीर और दूसरों को उसके जैसा कलाम लाने से आ़जिज़ कर देना और दूसरा गवाह उससे पहले तौरात के शक्ल में आ चुका है जो मूसा अ़लैहिस्सलाम लोगों के लिये क़ाबिले पैरवी और रहमते हक़ की हैसियत से लाये थे, क्योंकि तौरात में क़ुरआने करीम का हक़ होना स्पष्ट रूप से

बयान किया गया है।

दूसरे जुमले में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान को कियामत तक निजात का मदार क़रार देने का बयान इस तरह फ़रमाया है कि दुनिया के तमाम धर्मों और मिल्लतों (तरीक़ों और रास्तों) में से जो शख़्स भी आपका इनकार करेगा उसका ठिकाना जहन्नम है।

सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कि जो यहूदी या ईसाई मेरी दावत को सुने और इसके बावजूद मेरी लाई हुई तालीमात पर ईमान न लाये तो वह जहन्नम वालों में से होगा।

इससे उन लोगों की ग़लत-फ़हमी दूर हो जानी चाहिये जो बहुत से यहूदियों व ईसाईयों या दूसरे मज़हब पर चलने वालों के बाज़ ज़ाहिरी आमाल की बिना पर उनको हक़ पर कहते हैं और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन पर ईमान के बग़ैर सिर्फ़ ज़ाहिरी आमाल को निजात के लिये काफ़ी समझते हैं। यह क़ुरआन मजीद की मज़कूरा आयत और हदीस की इस सही रिवायत से खुला टकराव है। अल्लाह हम सबको अपनी पनाह में रखे।

وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرَىٰ عَلَى اللَّهِ كَذِبًا ۚ أُولَٰئِكَ
يُعْرَضُونَ عَلَىٰ رَبِّهِمْ وَيَقُولُ الْأَشْهَادُ هَٰؤُلَاءِ الَّذِينَ كَذَبُوا عَلَىٰ رَبِّهِمْ ۚ أَلَا لَعْنَةُ اللَّهِ عَلَى
الظَّالِمِينَ ۝ الَّذِينَ يَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللَّهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا وَهُمْ بِالْآخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ۝
أُولَٰئِكَ لَمْ يَكُونُوا مُعْجِزِينَ فِي الْأَرْضِ وَمَا كَانَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ مِنْ أَوْلِيَاءَ ۘ يُضَاعَفُ
لَهُمُ الْعَذَابُ ۚ مَا كَانُوا يَسْتَطِيعُونَ السَّمْعَ وَمَا كَانُوا يُبْصِرُونَ ۝ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ خَسِرُوا أَنْفُسَهُمْ
وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ۝ لَا جَرَمَ أَنَّهُمْ فِي الْآخِرَةِ هُمُ الْأَخْسَرُونَ ۝ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَ
عَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَأَخْبَتُوا إِلَىٰ رَبِّهِمْ أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ مَثَلُ الْفَرِيقَيْنِ
كَالْأَعْمَىٰ وَالْأَصَمِّ وَالْبَصِيرِ وَالسَّمِيعِ ۚ هَلْ يَسْتَوِيَانِ مَثَلًا ۚ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ۝

व मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबन्, उलाइ-क युअ़्रज़ू-न अ़ला रब्बिहिम् व यक़ूलुल्-अश्हादु हा-उलाइल्लज़ी-न क-ज़बू अ़ला रब्बिहिम् अला लअ़्नतुल्लाहि	और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन जो बाँधे अल्लाह पर झूठ वे लोग रू-ब-रू आयेंगे अपने रब के और कहेंगे गवाही देने वाले- यही हैं जिन्होंने झूठ कहा था अपने रब पर, सुन लो! फटकार है अल्लाह की ना-इन्साफ़ लोगों पर। (18) जो कि रोकते

अज़्ज़ालिमीन (18) अल्लज़ी-न यसुद्दू-न अ़न् सबीलिल्लाहि व यब्ग़ूनहा अि-वजन्, व हुम् बिल्आख़िरति हुम् काफ़िरून (19) उलाइ-क लम् यकूनू मुअ्जिज़ी-न फ़िल्अर्ज़ि व मा का-न लहुम् मिन् दूनिल्लाहि मिन् औलिया-अ। युज़ा-अफ़ु लहुमुल् अ़ज़ाबु, मा कानू यस्ततीअ़ूनस्सम्-अ़ व मा कानू युब्सिरून (20) उलाइ-कल्लज़ी-न ख़सिरू अन्फ़ु-सहुम् व ज़ल्-ल अ़न्हुम् मा कानू यफ़्तरून (21) ला ज-र-म अन्नहुम् फ़िल्-आख़िरति हुमुल्-अख़्सरून (22) इन्नल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति व अख़्बतू इला रब्बिहिम् उलाइ-क अस्हाबुल्-जन्नति हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (23) म-सलुल्-फ़रीक़ैनि कल्-अअ़्मा वल्-असम्मि वल्बसीरि वस्समीअ़ि, हल् यस्तवियानि म-सलन्, अ-फ़ला तज़क्करून (24) ✿

हैं अल्लाह की राह से और ढूँढते हैं उसमें टेढ़, और वही हैं आख़िरत से मुन्किर। (19) वे लोग नहीं थकाने वाले ज़मीन में भागकर और नहीं उनके वास्ते अल्लाह के सिवा कोइ हिमायती, दूना है उनके लिये अ़ज़ाब, न ताक़त रखते थे सुनने की और न देखते थे। (20) वही हैं जो खो बैठे अपनी जान और गुम हो गया उनसे जो झूठ बाँधा था। (21) इसमें शक नहीं कि ये लोग आख़िरत में यही हैं सबसे ज़्यादा नुक़सान में। (22) अलबत्ता जो लोग ईमान लाये और काम किये नेक और आ़जिज़ी की अपने रब के सामने, वे हैं जन्नत के रहने वाले वे उसी में रहा करेंगे। (23) मिसाल इन दोनों फ़िर्क़ों की जैसे एक तो अंधा और बहरा और दूसरा देखता और सुनता, क्या बराबर है दोनों का हाल? फिर क्या तुम ग़ौर नहीं करते। (24) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और ऐसे शख़्स से ज़्यादा कौन ज़ालिम है जो अल्लाह तआ़ला पर झूठ बाँधे (कि उसकी तौहीद का, उसके रसूल की रिसालत का और उसके कलाम होने का इनकार करे) ऐसे लोग (क़ियामत के दिन) अपने रब के सामने (झूठ बाँधने वाले होने की हैसियत से) पेश किये जाएँगे

और (आमाल के) गवाह (फ़रिश्ते सब के सामने यूँ) कहेंगे कि ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने रब के बारे में झूठी बातें लगाई थीं, (सब) सुन लो कि ऐसे ज़ालिमों पर ख़ुदा की (ज़्यादा) लानत है जो कि (अपने कुफ़्र व ज़ुल्म के साथ) दूसरों को भी ख़ुदा की राह (यानी दीन) से रोकते थे, और उस (दीन की राह) में टेढ़ (और शुब्हात) निकालने की तलाश (और फ़िक्र) में रहा करते थे (ताकि दूसरों को गुमराह करें) और वे आख़िरत के भी इनकारी थे। (यह फ़रिश्तों के ऐलान का मज़मून था, आगे अल्लाह तआ़ला का इरशाद है कि) ये लोग (तमाम) ज़मीन (के तख़्ते) पर (भी) ख़ुदा तआ़ला को आ़जिज़ नहीं कर सकते थे (कि कहीं जा छुपते और ख़ुदा तआ़ला के हाथ न आते) और न इनका ख़ुदा के सिवा कोई मददगार हुआ (कि गिरफ़्तारी के बाद छुड़ा लेता), ऐसों को (औरों से) दोगुनी सज़ा होगी (एक काफ़िर होने की और एक दूसरों को काफ़िर बनाने की कोशिश करने की), ये लोग (नफ़रत के सबब अल्लाह के अहकाम को) न सुन सकते थे और न (हद से बढ़ी हुई दुश्मनी की वजह से हक़ रास्ते को) देखते थे। ये वे लोग हैं जो अपने आपको बरबाद कर बैठे, और जो (माबूद) इन्होंने गढ़ रखे थे (आज) इनसे सब ग़ायब (और गुम) हो गये (कोई भी तो काम न आया)। पस लाज़िमी बात है कि आख़िरत में ज़्यादा ख़सारा "यानी घाटा" पाने वाले यही लोग होंगे।

(यह तो अन्जाम होगा काफ़िरों का, आगे मुसलमानों का अन्जाम बयान हुआ है कि) बेशक जो लोग ईमान लाये और उन्होंने अच्छे-अच्छे काम किये और दिल से अपने रब की तरफ़ झुके (यानी आ़जिज़ी व फ़रमाँबरदारी दिल में पैदा की) ऐसे लोग जन्नत वाले हैं, और वे उसमें हमेशा रहा करेंगे। (यह दोनों के अन्जाम और परिणाम का फ़र्क़ बयान हो गया, आगे उनके हाल के फ़र्क़ की मिसाल है जिस पर अन्जाम का यह फ़र्क़ मुरत्तब होता है। पस इरशाद है कि) दोनों फ़रीक़ (जिनका ज़िक्र हुआ यानी मोमिन व काफ़िर) की हालत ऐसी है जैसे एक शख़्स हो अंधा भी और बहरा भी, (जो न मज़मून को सुने न इशारे को देखे तो उसके समझने की आ़दतन कोई सूरत ही नहीं) और एक शख़्स हो कि देखता भी हो और सुनता भी हो, (जिसको समझना बहुत आसान हो) क्या ये दोनों शख़्स हालत में बराबर हैं? (हरगिज़ नहीं। यही हालत काफ़िर और मुसलमान की है कि वह हिदायत से बहुत दूर है और यह हिदायत पाये हुए है) क्या तुम (इस फ़र्क़ को) समझते नहीं? (इन दोनों में खुला और आसानी से समझ में आने वाला फ़र्क़ है, इसमें शुब्हे की गुंजाईश नहीं)

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوْحًا اِلٰى

قَوْمِهٖٓ اِنِّيْ لَكُمْ نَذِيْرٌ مُّبِيْنٌ ۝ اَنْ لَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّا اللّٰهَ ۭ اِنِّيْٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ اَلِيْمٍ ۝ فَقَالَ

الْمَلَاُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَوْمِهٖ مَا نَرٰىكَ اِلَّا بَشَرًا مِّثْلَنَا وَمَا نَرٰىكَ اتَّبَعَكَ اِلَّا الَّذِيْنَ هُمْ

اَرَاذِلُنَا بَادِيَ الرَّاْيِ ۚ وَمَا نَرٰى لَكُمْ عَلَيْنَا مِنْ فَضْلٍۢ بَلْ نَظُنُّكُمْ كٰذِبِيْنَ ۝ قَالَ يٰقَوْمِ اَرَءَيْتُمْ

اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ وَاٰتٰىنِيْ رَحْمَةً مِّنْ عِنْدِهٖ فَعُمِّيَتْ عَلَيْكُمْ ۗ اَنُلْزِمُكُمُوْهَا وَاَنْتُمْ
لَهَا كٰرِهُوْنَ ۝ وَيٰقَوْمِ لَآ اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مَالًا ۗ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ وَمَآ اَنَا بِطَارِدِ الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا ۗ اِنَّهُمْ مُّلٰقُوْا رَبِّهِمْ وَلٰكِنِّيْٓ اَرٰىكُمْ قَوْمًا تَجْهَلُوْنَ ۝ وَيٰقَوْمِ مَنْ يَّنْصُرُنِيْ مِنَ اللّٰهِ اِنْ
طَرَدْتُّهُمْ ۗ اَفَلَا تَذَكَّرُوْنَ ۝ وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِيْ خَزَآىِٕنُ اللّٰهِ وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَآ اَقُوْلُ اِنِّيْ
مَلَكٌ وَّلَآ اَقُوْلُ لِلَّذِيْنَ تَزْدَرِيْٓ اَعْيُنُكُمْ لَنْ يُّؤْتِيَهُمُ اللّٰهُ خَيْرًا ۗ اَللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ ۚ
اِنِّيْٓ اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ قَالُوْا يٰنُوْحُ قَدْ جٰدَلْتَنَا فَاَكْثَرْتَ جِدَالَنَا فَاْتِنَا بِمَا تَعِدُنَآ اِنْ كُنْتَ
مِنَ الصّٰدِقِيْنَ ۝ قَالَ اِنَّمَا يَاْتِيْكُمْ بِهِ اللّٰهُ اِنْ شَآءَ وَمَآ اَنْتُمْ بِمُعْجِزِيْنَ ۝ وَلَا يَنْفَعُكُمْ نُصْحِيْٓ
اِنْ اَرَدْتُّ اَنْ اَنْصَحَ لَكُمْ اِنْ كَانَ اللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يُّغْوِيَكُمْ ۗ هُوَ رَبُّكُمْ ۗ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ۝ اَمْ ع ۳ ۱۱
يَقُوْلُوْنَ افْتَرٰىهُ ۗ قُلْ اِنِ افْتَرَيْتُهٗ فَعَلَيَّ اِجْرَامِيْ وَاَنَا بَرِيْٓءٌ مِّمَّا تُجْرِمُوْنَ ۝

व ल-क़द् अर्सल्ना नूहन् इला क़ौमिही इन्नी लकुम् नज़ीरुम् मुबीन (25) अल्ला तअ्बुदू इल्लल्ला-ह, इन्नी अख़ाफ़ु अलैकुम् अज़ा-ब यौमिन् अलीम (26) फ़क़ालल्-म-लउल्लज़ी-न क-फ़रू मिन् क़ौमिही मा नरा-क इल्ला ब-शरम् मिस्लना व मा नराकत्त-ब-अ-क इल्लल्लज़ी-न हुम् अराज़िलुना बादियर्-रअ्यि व मा नरा लकुम् अलैना मिन् फ़ज़्लिम्-बल् नज़ुन्नुकुम् काज़िबीन (27) क़ा-ल या क़ौमि अ-रऐतुम् इन् कुन्तु अला बय्यिनतिम्-मिर्रब्बी व आतानी रह्म-तम् मिन् अिन्दिही

और हमने भेजा नूह को उसकी क़ौम की तरफ़ कि मैं तुमको डर की बात सुनाता हूँ खोलकर। (25) कि न इबादत करो अल्लाह के सिवा, मैं डरता हूँ तुम पर दर्दनाक दिन के अज़ाब से। (26) फिर बोले सरदार जो काफ़िर थे उसकी क़ौम के- हमको तो तू नज़र नहीं आता मगर एक आदमी हम जैसा, और देखते नहीं कोई ताबे हुआ हो तेरा मगर जो हम में नीच क़ौम है बिना सोचे और ग़ौर करे, और हम नहीं देखते तुमको ऊपर अपने कुछ बड़ाई बल्कि हमको तो ख़्याल है कि तुम सब झूठे हो। (27) बोला ऐ क़ौम! देखो तो अगर मैं हूँ साफ़ रास्ते पर अपने रब के और उसने भेजी मुझ पर रहमत अपने पास से, फ़िर उसको तुम्हारी आँख

फ़अुम्मियत् अ़लैकुम्, अनुल्ज़िमुकुमूहा व अन्तुम् लहा कारिहून (28) व या कौमि ला अस्अलुकुम् अ़लैहि मालन्, इन् अज्रि-य इल्ला अ़लल्लाहि व मा अ-न बितारिदिल्लज़ी-न आमनू, इन्नहुम् मुलाक़ू रब्बिहिम् व लाकिन्नी अराकुम् कौमन् तज्हलून (29) व या कौमि मंय्यन्सुरुनी मिनल्लाहि इन् तरत्तुहुम्, अ-फ़ला तज़क्करून (30) व ला अक़ूलु लकुम् अ़िन्दी ख़ज़ाइनुल्लाहि व ला अअ़्लमुल्-ग़ै-ब व ला अक़ूलु इन्नी म-लकुंव्-व ला अक़ूलु लिल्लज़ी-न तज़्दरी अअ़्युनुकुम् लंय्युअ्ति-यहुमुल्लाहु ख़ैरन्, अल्लाहु अअ़्लमु बिमा फ़ी अन्फ़ुसिहिम् इन्नी इज़ल्-लमिनज़्ज़ालिमीन (31) क़ालू या नूहु क़द् जादल्तना फ़-अक्सर्-त जिदालना फ़अ्तिना बिमा तअ़िदुना इन् कुन्-त मिनस्सादिक़ीन (32) क़ा-ल इन्नमा यअ्तीकुम् बिहिल्लाहु इन् शा-अ व मा अन्तुम् बिमुअ़्जिज़ीन (33) व ला यन्फ़अ़ुकुम् नुस्ही इन् अरत्तु अन् अन्स-ह लकुम् इन् कानल्लाहु

से छुपा रखा, तो क्या हम तुमको मजबूर कर सकते हैं उस पर और तुम उससे बेज़ार हो। (28) और ऐ मेरी क़ौम! नहीं माँगता मैं तुम से इस पर कुछ माल, मेरी मज़दूरी नहीं मगर अल्लाह पर, और मैं नहीं हाँकने वाला ईमान वालों को, उनको मिलना है अपने रब से, लेकिन मैं देखता हूँ तुम लोग जाहिल हो। (29) और ऐ क़ौम! कौन छुड़ाये मुझको अल्लाह से अगर उनको हाँक दूँ, क्या तुम ध्यान नहीं करते? (30) और मैं नहीं कहता तुमको कि मेरे पास हैं ख़ज़ाने अल्लाह के, और न मैं ख़बर रखूँ ग़ैब की, और न कहूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ, और न कहूँगा कि जो लोग तुम्हारी आँख में हक़ीर हैं न देगा उनको अल्लाह भलाई, अल्लाह ख़ूब जानता है जो कुछ उनके जी में है, यह कहूँ तो मैं बेइन्साफ़ हूँ। (31) बोले ऐ नूह! तूने हमसे झगड़ा किया और बहुत झगड़ चुका अब ले आ जो तू वायदा करता है हमसे अगर तू सच्चा है। (32) कहा कि लायेगा तो उसको अल्लाह ही अगर चाहेगा और तुम न थका सकोगे भागकर। (33) और न कारगार होगी तुमको मेरी नसीहत जो चाहूँ कि तुमको नसीहत करूँ अगर अल्लाह चाहता होगा

युरीदु अंय्युग़्वि-यकुम्, हु-व रब्बुकुम्, व इलैहि तुर्जअ़ून (34) अम् यक़ूलूनफ़्तराहु, क़ुल् इनिफ़्तरैतुहू फ़-अ़लय्-य इज्रामी व अ-न बरीउम्-मिम्मा तुज्रिमून (35) ✿	कि तुमको गुमराह करे, वही है रब तुम्हारा और उसी की तरफ़ लौट जाओगे। (34) क्या कहते हैं कि बना लाया क़ुरआन को? कह दे अगर मैं बना लाया हूँ तो मुझ पर है मेरा गुनाह, और मेरा ज़िम्मा नहीं जो तुम गुनाह करते हो। (35) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने नूह (अ़लैहिस्सलाम) को उनकी क़ौम के पास रसूल बनाकर (यह पैग़ाम देकर) भेजा कि तुम अल्लाह के सिवा किसी और की इबादत मत करना (और जो बुत तुमने क़रार दे रखे हैं, वद्द और सुवाअ़ और यग़ूस और यऊक़ और नस्र उनको छोड़ दो। चुनाँचे हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने जाकर उनसे फ़रमाया कि) मैं तुमको (अल्लाह के अ़लावा किसी और की इबादत करने की सूरत में) साफ़-साफ़ डराता हूँ (और इस डराने की तफ़सील यह है कि) मैं तुम्हारे हक़ में एक बड़े तकलीफ़ देने वाले दिन के अ़ज़ाब का अन्देशा करता हूँ। सो उनकी क़ौम में जो काफ़िर सरदार थे वे (जवाब में) कहने लगे कि (तुम जो नुबुव्वत का दावा करते हो जैसा कि 'नज़ीरुम् मुबीन' से मालूम होता है तो हमारे जी को यह बात नहीं लगती, क्योंकि) हम तो तुमको अपने ही जैसा आदमी देखते हैं (और इनसान का नबी होना एक दूर की बात है) और अगर (कुछ लोगों की पैरवी करने से दलील ली जाये तो वह तर्क देने के क़ाबिल नहीं क्योंकि) तुम्हारी पैरवी उन्हीं लोगों ने की है जो हम में बिल्कुल कम दर्जे के और हक़ीर हैं (जिनकी अ़क़्ल अक्सर कम होती है। फिर वह पैरवी भी महज़) सरसरी राय से (हुई है यानी अव्वल तो उनकी अ़क़्ल ही सही रहनुमाई करने वाली नहीं, ग़ौर के बाद भी ग़लती करते, दूसरे फिर ग़ौर भी नहीं किया, इसलिये ऐसे लोगों का तुमको नबी समझ लेना यह कोई हुज्जत नहीं बल्कि इसके उलट हमारे पैरवी करने से रुकावट है, क्योंकि शरीफ़ों और इज़्ज़तदार लोगों को रज़ीलों और कम-दर्जे के लोगों की मुवाफ़क़त करने से शर्म आती है, और अक्सर ऐसे कम हौसले वाले लोगों का मक़सद भी माल का हासिल करना या ऊपर उठना हुआ करता है, सो ये लोग भी दिल से ईमान नहीं लाये) और (अगर यह कहा जाये कि बावजूद रज़ील होने के उन लोगों को किसी ख़ास मामले में हम पर फ़ज़ीलत है जिसके एतिबार से उनकी राय इस बारे में सही है सो) हम तुम लोगों में (यानी तुम में और मुसलमानों में) कोई बात अपने से ज़्यादा भी नहीं पाते, (इसलिये तुम मुसलमानों की राय को सही नहीं समझते) बल्कि हम तुमको (बिल्कुल) झूठा समझते हैं।

(हज़रत नूह ने) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! (तुम जो कहते हो कि तुम्हारी नुबुव्वत जी को नहीं लगती तो) भला यह तो बतलाओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (क़ायम) हूँ (जिससे मेरी नुबुव्वत साबित होती हो) और उसने मुझको अपने पास से रहमत (यानी

नुबुव्वत) अता फ़रमाई हो, फिर वह (नुबुव्वत या उसकी हुज्जत) तुमको न सूझती हो, तो (मैं क्या करूँ, मजबूर हूँ) क्या हम इस (दावे या दलील) को तुम्हारे सर मंढ़ दें और तुम उससे नफ़रत किये चले जाओ। (मतलब यह है कि तुम्हारा यह कहना कि जी को नहीं लगती यह महज़ इस वजह से है कि तुम यह समझते हो कि इनसान रसूल नहीं हो सकता जिसकी तुम्हारे पास कोई दलील नहीं, और मेरे पास इसके वास्तविक और सही होने की दलील मौजूद है यानी मोजिज़ा वग़ैरह न कि किसी की पैरवी। इससे इसका जवाब भी हो गया कि उनका पैरवी करना हुज्जत नहीं, लेकिन किसी दलील का फ़ायदा टिका है ग़ौर व फ़िक्र और सोच-विचार पर, वह तुम करते नहीं, और यह मेरे बस से बाहर है)।

और (इतनी बात और भी फ़रमाई कि) ऐ मेरी क़ौम! (यह तो सोचो कि अगर मैं नुबुव्वत का ग़लत दावा करता तो आख़िर इसमें मेरा कुछ मतलब तो होता, मसलन यही होता कि उसके ज़रिये से ख़ूब माल कमाऊँगा तो तुमको मालूम है कि) मैं तुमसे इस (तब्लीग़) पर कुछ माल नहीं माँगता, मेरा मुआवज़ा तो सिर्फ़ अल्लाह ही के ज़िम्मे है (उसी से आख़िरत में उसका तालिब हूँ। इसी तरह अगर विचार करोगे तो कोई और मक़सद व स्वार्थ भी न पाओगे, फिर जब कोई ग़र्ज़ नहीं तो मुझको झूठ बोलने से क्या फ़ायदा था। ख़ुलासा यह है कि झूठा दावा करने पर कोई चीज़ मजबूर करने वाली नहीं और दावे के सच्चा होने पर दलील क़ायम है, फिर नुबुव्वत में क्या शुब्हा हो सकता है)। और (तुम जो कमज़ोर और ग़रीब लोगों के पैरवी करने को अपने इत्तिबा यानी ईमान लाने से रुकावट बतलाते हो और खुले लफ़्ज़ों में या इशारों में यह कहना चाहते हो कि मैं उनको अपने पास से निकाल दूँ सो) मैं तो इन ईमान वालों को निकालता नहीं (क्योंकि) ये लोग अपने रब के पास (इज़्ज़त व मक़बूलियत के साथ) जाने वाले हैं, (और भला कोई शख़्स शाही दरबार के क़रीबी लोगों को निकाला करता है? और इससे इसका भी जवाब हो गया कि ये लोग दिल से ईमान नहीं लाये) लेकिन वाक़ई मैं तुम लोगों को देखता हूँ कि (ख़्वाह-मख़्वाह) की जहालत कर रहे हो (और बेढंगी बातें कर रहे हो)।

और (मान लो जबकि ऐसा होगा नहीं) ऐ मेरी क़ौम! अगर मैं इनको निकाल भी दूँ तो (यह बतलाओ) मुझको ख़ुदा की पकड़ से कौन बचा लेगा (क्या तुम में इतनी हिम्मत है जो ऐसे बेहूदा मश्विरे दे रहे हो)? क्या तुम इतनी बात भी नहीं समझते? और (इस तक़रीर में उनके तमाम शुब्हात का जवाब हो गया, लेकिन आगे उन सब जवाबों का फिर पूरक है, यानी जब मेरी नुबुव्वत दलील से साबित है तो अव्वल तो दलील के सामने मुहाल और दूर की बात होना कोई चीज़ नहीं, फिर यह कि वह दूर की बात भी नहीं, अलबत्ता अगर मैं किसी अ़जीब व ग़रीब चीज़ का दावा करता तो इनकार व दूर भागना समझ में आने वाली बात भी थी अगरचे दलील के बाद फिर वह भी सुने जाने के क़ाबिल नहीं, अलबत्ता अगर दलील भी किसी चीज़ के दूर की बात और मुहाल होने को चाहे तो फिर वाजिब है लेकिन मैं तो किसी ऐसे अ़जीब मामले का दावा नहीं करता, चुनाँचे) मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के (तमाम) ख़ज़ाने हैं, और न मैं (यह कहता हूँ कि मैं) तमाम ग़ैब की बातें जानता हूँ, और न यह कहता हूँ कि मैं

फ़रिश्ता हूँ। और (यह तो अपनी नुबुव्वत के बारे में इरशाद फ़रमाया, आगे अपने पैरोकारों और मानने वालों के बारे में इरशाद है, यानी) जो लोग तुम्हारी निगाहों में हक़ीर हों, मैं उनके मुताल्लिक़ (तुम्हारी तरह) यह नहीं कह सकता कि (ये लोग दिल से ईमान नहीं लाये इसलिये) अल्लाह हरगिज़ इनको सवाब न देगा, उनके दिल में जो कुछ हो उसको अल्लाह ही ख़ूब जानता है (तो मुम्किन है कि उनके दिलों में सच्चाई हो तो फिर मैं ऐसी बात क्योंकर कह दूँ) मैं तो (अगर ऐसी बात कह दूँ तो) उस सूरत में सितम ही कर दूँ (क्योंकि बिना दलील दावा करना गुनाह है)।

(जब नूह अ़लैहिस्सलाम ने सब बातों का पूरा-पूरा जवाब दे दिया जिसका जवाब फिर उनसे कुछ बन न पड़ा तो आ़जिज़ होकर) वे लोग कहने लगे कि ऐ नूह! तुम हमसे बहस कर चुके, फिर उस बहस को बढ़ा भी चुके, सो (अब बहस छोड़ो और) जिस चीज़ से तुम हमको धमकाया करते हो (कि अ़ज़ाब आ जायेगा) वह हमारे सामने ले आओ, अगर तुम सच्चे हो। उन्होंने फ़रमाया कि (उसको लाने वाला मैं कौन हूँ मुझको पहुँचा देने सुना देने का हुक्म था सो मैं उसको पूरा कर चुका) अल्लाह तआ़ला उसको तुम्हारे सामने लायेगा, बशर्तेकि उसको मन्ज़ूर हो, और (उस वक़्त फिर) तुम उसको आ़जिज़ न कर सकोगे (कि वह अ़ज़ाब डालना चाहे और तुम न होने दो) और (जो मेरा काम था पहुँचा देना और सुना देना इसमें मैंने तुम्हारी पूरी ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी की लेकिन) मेरी ख़ैरख़्वाही तुम्हारे काम नहीं आ सकती, चाहे मैं तुम्हारी (कैसी ही) ख़ैरख़्वाही करना चाहूँ जबकि अल्लाह ही को तुम्हारा गुमराह करना मन्ज़ूर हो, (जिसकी वजह तुम्हारा घमण्ड और तकब्बुर करना है। मतलब यह कि जब तुम ही अपनी बदक़िस्मती से अपने लिये नफ़ा हासिल करना और नुक़सान से बचना न चाहो तो मेरे चाहने से क्या होता है) वही तुम्हारा मालिक है (और तुम मम्लूक, तो तुम पर उसके तमाम हुक़ूक़ वाजिब हैं और तुम उनको दुश्मनी व मुख़ालफ़त के सबब ज़ाया करके मुजरिम हो रहे हो) और उसी के पास तुमको जाना है (वह तुम्हारे इस कुफ़्र व दुश्मनी की कसर निकाल देगा)।

क्या ये लोग कहते हैं कि इन्होंने (यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने नऊज़ु बिल्लाह) यह (क़ुरआन) गढ़ लिया है। आप (जवाब में) फ़रमा दीजिये कि अगर (मान लो) मैंने ख़ुद बनाया और गढ़ा होगा तो मेरा (यह) जुर्म मुझ पर आयद होगा (और तुम मेरे जुर्म से बरी होगे), और (अगर तुमने यह दावा गढ़ा और बनाया होगा यानी मुझ पर बोहतान लगाया होगा तो तुम्हारा यह जुर्म तुम पर आयद होगा, और) मैं तुम्हारे इस जुर्म से बरी रहूँगा।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने जब अपनी क़ौम को ईमान की दावत दी तो क़ौम ने उनकी नुबुव्वत व रिसालत पर चन्द शुब्हात व एतिराज़ात पेश किये। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से उनके जवाबात दिये जिनके ज़िमन में बहुत से बुनियादी और उनसे निकलने वाले मसाईल दियानत और सामाजिक ज़िन्दगी के भी आ गये हैं, उक्त आयतों में यही गुफ़्तगू

और दो तरफ़ा बातचीत बयान फ़रमायी गयी है।

तीसरी आयत में मुश्रिकों की गुफ़्तगू है जिसमें चन्द शुब्हात व एतिराज़ात किये गये हैं। उन लोगों का पहला एतिराज़ हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की नुबुव्वत व रिसालत पर यह था किः

مَا نَرٰىكَ اِلَّا بَشَرًا مِّثْلَنَا.

यानी आप तो हमीं जैसे इनसान और आदमी हो, हमारी ही तरह खाते पीते चलते फिरते और सोते जागते हो, फिर हम आपकी यह असाधारण विशेषता कैसे तस्लीम कर लें कि आप ख़ुदा के रसूल और पैग़म्बर हैं।

उन लोगों का ख़्याल यह था कि इनसानों की तरफ़ जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से रसूल बनाकर भेजा जाये वह इनसानी नस्ल से न होना चाहिये बल्कि कोई फ़रिश्ता हो जिसकी विशेषता और श्रेष्टता सारे इनसानों को चार व नाचार तस्लीम करनी पड़े।

इसका जवाब चौथी आयत में यह दिया गयाः

يٰقَوْمِ اَرَءَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ وَاٰتٰىنِيْ رَحْمَةً مِّنْ عِنْدِهٖ فَعُمِّيَتْ عَلَيْكُمْ اَنُلْزِمُكُمُوْهَا وَاَنْتُمْ لَهَا كٰرِهُوْنَ٥

इसमें बतलाया गया कि रसूल का बशर या आदमी होना तो नुबुव्वत व रिसालत के विरुद्ध नहीं बल्कि ग़ौर करो तो यही ज़रूरी है कि आदमियों का रसूल आदमी होना चाहिये ताकि आदमियों को उससे दीन सीखना आसान हो, इनसान और फ़रिश्ते के मिज़ाज में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है, अगर फ़रिश्ते को रसूल बनाकर भेज दिया जाता तो इनसानों को उससे दीन सीखना सख़्त मुश्किल हो जाता, क्योंकि फ़रिश्ते को तो न भूख लगती है न प्यास, न नींद आती है न थकान होती है, न उसको इनसानी ज़रूरतें व हाजतें पेश आती हैं, वह इनसानों की इस कमज़ोरी का एहसास कैसे करता, और बग़ैर इस एहसास के इनसान अ़मल में उसका इत्तिबा (पैरवी और अनुसरण) कैसे कर सकते। यह मज़मून क़ुरआन की दूसरी आयतों में स्पष्ट रूप से और इशारे में कई जगह आ चुका है, यहाँ उसका ज़िक्र करने के बजाय यह बतलाया कि अगर अ़क़्ल से काम लो तो रसूल व पैग़म्बर के लिये यह तो ज़रूरी नहीं कि वह आदमी न हो, हाँ यह ज़रूरी है कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कोई गवाह, दलील और हुज्जत उसके साथ हो, जिसको देखकर लोगों को यह तस्लीम करना आसान हो जाये कि यह ख़ुदा ही की तरफ़ से भेजा हुआ रसूल है। वह गवाह व सुबूत और हुज्जत आ़म लोगों के लिये अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के मोजिज़े होते हैं, इसी लिये हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं अपने साथ अल्लाह की तरफ़ से दलील व हुज्जत और रहमत लेकर आया हूँ तुम उसको देखते और ग़ौर करते तो इनकार न करते, मगर तुम्हारे इनकार व दुश्मनी ने तुम्हारी निगाहों को उससे अन्धा कर दिया और तुम इनकार कर बैठे और अपनी ज़िद पर जम गये।

मगर ख़ुदा तआ़ला की यह रहमत जो पैग़म्बर के ज़रिये आती है ऐसी चीज़ नहीं कि ज़बरदस्ती लोगों के सर डाल दी जाये, जब तक वे ख़ुद उसकी तरफ़ रग़बत (दिलचस्पी) न करें। इसमें इशारा पाया गया कि ईमान की दौलत जो मैं लेकर आया हूँ अगर मेरा बस चलता तो

तुम्हारे इनकार और ज़िद के बावजूद तुम्हें दे ही देता, मगर यह क़ानूने क़ुदरत के ख़िलाफ़ है, यह नेमत ज़बरदस्ती किसी के सर नहीं डाली जा सकती। इससे यह भी साबित हो गया कि ज़बरदस्ती किसी को मोमिन या मुसलमान बनाना नुबुव्वत के किसी दौर में जायज़ नहीं रखा गया, तलवार के ज़ोर पर इस्लाम फैलाने का सफ़ेद झूठ गढ़ने वाले ख़ुद भी इस हक़ीक़त से बेख़बर नहीं मगर एक बात है जो नावाक़िफ़ों के दिलों में शंका व भ्रम पैदा करने के लिये चलती की जाती है।

इसके ज़िमन में इसकी वजह भी समझ में आ गयी कि फ़रिश्ते को रसूल क्यों नहीं बनाया गया। वजह यह है कि फ़रिश्ता जो असाधारण क़ुव्वत व ताक़त रखता है और अपने वजूद की हर हैसियत में इनसान से नुमायाँ और विशेष है, उसको देखकर ईमान लाना तो एक जबरी (ज़बरदस्ती का) अ़मल हो जाता, किसकी मजाल थी कि फ़रिश्ते के सामने वह हठधर्मी करता जो अम्बिया के सामने की जाती है, और शरई तौर पर वह ईमान मक़बूल नहीं जो किसी दबाव वाली क़ुव्वत से मजबूर होकर इख़्तियार किया जाये, बल्कि मतलूब ग़ैब पर ईमान लाना है कि अल्लाह तआ़ला की ग़ालिब क़ुव्वत का पूरा मुशाहदा किये बग़ैर ईमान इख़्तियार किया जाये।

उनका दूसरा एतिराज़ यह थाः

وَمَا نَرٰكَ اتَّبَعَكَ اِلَّا الَّذِيْنَ هُمْ اَرَاذِلُنَا بَادِىَ الرَّاْىِ.

यानी हम देखते हैं कि आप पर ईमान लाने वाले सब सरसरी नज़र में हक़ीर व ज़लील कमीने लोग हैं, कोई शरीफ़ बड़ा आदमी नहीं। इस एतिराज़ के दो पहलू हैं- एक यह कि तुम्हारी बात अगर हक़ और सही होती तो क़ौम के बड़े लोग उसको क़ुबूल करते, इन छोटे और कम दर्जे के लोगों का क़ुबूल करना इसकी निशानी है कि आपकी दावत ही क़ुबूल करने के क़ाबिल नहीं। दूसरा पहलू यह है कि हमारे लिये आपकी ईमानी दावत क़ुबूल करने से रुकावट यह है कि हम ईमान ले आयें तो बहैसियत मुसलमान हम भी उनके बराबर समझे जायेंगे, नमाज़ों की सफ़ों और दूसरी मज्लिसों में हमें उनके साथ उनके बराबर में बैठना पड़ेगा, यह हमसे नहीं हो सकता।

हक़ीक़त से दूर उन नावाक़िफ़ों ने ग़रीबों फ़क़ीरों को जिनके पास माल की अधिकता नहीं और दुनियावी माल व रुतबा नहीं उनको घटिया और कमीने क़रार दे रखा था, हालाँकि यह ख़ुद एक जाहिलाना ख़्याल है, इ़ज़्ज़त व ज़िल्लत और अ़क़्ल व समझ माल व दौलत के ताबे नहीं बल्कि तजुर्बा गवाह है कि पद व रुतबे और माल का एक नशा होता है जो इनसान को बहुत सी माक़ूल और सही बातों के समझने और क़ुबूल करने से रोक देता है। कमज़ोर ग़रीब आदमी की नज़र के सामने ये रुकावटें नहीं होतीं, वह हक़ और सही बात को क़ुबूल करने में आगे बढ़ता है, यही वजह है कि पुराने ज़माने से अल्लाह तआ़ला का यही दस्तूर रहा है कि पैग़म्बरों पर शुरू में ईमान लाने वाले ग़रीब व तंगदस्त ही होते हैं, और पिछली आसमानी किताबों में इसकी स्पष्टतायें भी मौजूद हैं। इसी वजह से जब रूम के बादशाह हिरक़्ल के पास हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पत्र मुबारक ईमान की दावत के लिये पहुँचा और उसको यह

फ़िक्र हुई कि मामले की तहक़ीक़ करे, चूँकि उसने तौरात व इन्जील में अम्बिया की निशानियाँ पढ़ी हुई थीं इसलिये उस वक़्त अ़रब के जो लोग मुल्क शाम में आये हुए थे उनको जमा करके उन निशानियों के बारे में चन्द सवालात किये।

उन सवालात में से एक यह भी था कि उनकी पैरवी करने वाले क़ौम के कमज़ोर और ग़रीब लोग हैं या वे जो क़ौम के बड़े कहलाते हैं? उन लोगों ने बतलाया कि कमज़ोर और ग़रीब लोग हैं। इस पर हिरक़्ल ने इक़रार किया कि यह निशानी तो सच्चे नबी होने की है, क्योंकि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का शुरू-शुरू में इत्तिबा करने वाले यही कमज़ोर ग़रीब लोग होते हैं।

ख़ुलासा यह है कि ग़रीबों व फ़क़ीरों को घटिया और कम-दर्जे का समझना उनकी जहालत थी, हक़ीक़त में रज़ील (घटिया और कमीना) तो वह है जो अपने पैदा करने वाले और पालने वाले मालिक को न पहचाने, उसके अहकाम से मुँह फेरे, इसी लिये हज़रत सुफ़ियान सौरी रह. से किसी ने पूछा कि कमीना और रज़ील कौन है? तो फ़रमाया वे लोग जो बादशाहों और अफ़सरों की ख़ुशामद में लगे रहें। और इब्ने आराबी ने फ़रमाया कि कमीना वह आदमी है जो अपना दीन बेचकर दुनिया कमाये। किसी ने पूछा कि सबसे ज़्यादा कमीना कौन है तो फ़रमाया वह शख़्स जो अपना दीन बरबाद करके किसी दूसरे की दुनिया संवारे। इमाम मालिक रह. ने फ़रमाया कि कमीना वह शख़्स है जो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को बुरा कहे, क्योंकि वह पूरी उम्मत के सबसे बड़े मोहसिन (एहसान करने वाले) हैं जिनके ज़रिये ईमान व शरीअ़त की दौलत उनको पहुँची है।

बहरहाल उनके इस जाहिलाना ख़्याल की तरदीद तीसरी आयत में पहले तो इस तरह की गयी है कि पैग़म्बर की नज़र किसी के माल पर नहीं होती, वह किसी से अपनी ख़िदमत व हमदर्दी का मुआवज़ा नहीं लेता, उसका मुआवज़ा तो सिर्फ़ अल्लाह के ज़िम्मे होता है, इसलिये उसकी नज़र में अमीर व ग़रीब बराबर होते हैं, तुम इससे न डरो कि हम मालदार हैं, मुसलमान हो जायेंगे तो हमसे माल का मुतालबा किया जायेगा।

दूसरे यह बतलाया गया कि तुम जो ईमान क़ुबूल करने के लिये यह शर्त पेश करते हो कि मैं ग़रीब लोगों को अपने पास से निकाल दूँ तो समझ लो कि यह मैं नहीं कर सकता, क्योंकि ये लोग अगरचे ग़रीब हैं मगर अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त की बारगाह में उनकी पहुँच और सम्मान है, ऐसे लोगों को निकालना कोई अ़क़्ल का काम नहीं।

और 'मुलाक़ू रब्बिहिम' के यह मायने भी हो सकते हैं कि अगर फ़र्ज़ करो मैं इनको निकाल दूँ तो क़ियामत के दिन ये लोग जब अपने रब के सामने जायेंगे और फ़रियाद करेंगे तो मेरे पास क्या जवाब होगा। चौथी आयत का यही मज़मून है कि अगर मैं इनको निकाल दूँ तो मुझे ख़ुदा के अ़ज़ाब से कौन बचायेगा। आख़िर में फ़रमाया कि यह सब तुम्हारी जहालत है कि तुम आदमियत को नुबुव्वत के ख़िलाफ़ समझते हो, या ग़रीब लोगों को निकाल देने की फ़रमाईश करते हो।

पाँचवीं आयत में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की वह तक़रीर (भाषण) नक़्ल की गयी है जो

उन्होंने अपनी क़ौम के सब एतिराज़ात सुनने के बाद उनको कुछ उसूली हिदायतें देने के लिये इरशाद फ़रमाई, जिसमें बतलाया गया है कि नुबुव्वत व रिसालत के लिये वो चीज़ें ज़रूरी नहीं जो तुमने समझ रखी हैं।

मसलन पहले फ़रमायाः

وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِىْ خَزَآئِنُ اللّٰهِ.

यानी मैं तुमसे यह नहीं कहता कि अल्लाह के ख़ज़ाने मेरे हाथ में हैं। इसमें उन लोगों के इस ख़्याल की तरदीद (रद्द और खण्डन करना) है कि जब अल्लाह की तरफ़ से रसूल होकर आये हैं तो इनके हाथ में ख़ज़ाने होने चाहियें, जिनसे लोगों को ख़ूब लेना-देना करते रहें। नूह अ़लैहिस्सलाम ने बतला दिया कि अम्बिया के भेजे जाने का यह मक़सद नहीं होता कि वे लोगों को दुनिया की धन-दौलत में उलझायें, इसलिये ख़ज़ानों से उनका क्या काम।

और यह भी हो सकता है कि इसमें उन लोगों के इस ख़्याल की तरदीद हो जो कुछ लोग समझा करते हैं कि अल्लाह ने अम्बिया को बल्कि औलिया को भी मुकम्मल अधिकार दे दिये हैं, अल्लाह की क़ुदरत के ख़ज़ाने उनके हाथ में होते हैं जिसको चाहें दें जिसको चाहें न दें, तो नूह अ़लैहिस्सलाम के इस इरशाद से स्पष्ट हो गया कि अल्लाह ने अपनी क़ुदरत के ख़ज़ानों का मुकम्मल इख़्तियार किसी नबी को भी सुपुर्द नहीं किया, औलिया का तो क्या ज़िक्र है, अलबत्ता अल्लाह तआ़ला उनकी दुआ़यें और तमन्नायें अपनी क़ुदरत से पूरी फ़रमाते हैं।

दूसरे फ़रमायाः

وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ.

इन जाहिलों का यह भी ख़्याल था कि जो शख़्स ख़ुदा तआ़ला का रसूल हो वह आ़लिमुल-ग़ैब भी होना चाहिये। इस जुमले ने स्पष्ट कर दिया कि नुबुव्वत व रिसालत इल्मे-ग़ैब को नहीं चाहती, और यह कैसे हो जबकि इल्मे-ग़ैब हक़ तआ़ला की ख़ुसूसी सिफ़त है जिसमें कोई नबी या फ़रिश्ता शरीक नहीं हो सकता, हाँ अल्लाह तआ़ला अपने पैग़म्बरों में से जिसको चाहते हैं जितना चाहते हैं ग़ैब के भेदों पर बाख़बर (अवगत) कर देते हैं, मगर उसकी वजह से उनको आ़लिमुल-ग़ैब (हर ग़ैब की और छुपी बात का जानने वाला) कहना दुरुस्त नहीं होता, क्योंकि उनके इख़्तियार में नहीं होता कि जिस ग़ैब को चाहें मालूम कर लें।

तीसरी बात यह फ़रमाईः

وَلَآ اَقُوْلُ اِنِّىْ مَلَكٌ.

यानी मैं तुमसे यह भी नहीं कहता कि मैं फ़रिश्ता हूँ। इसमें उनके इस ख़्याल की तरदीद हो गयी कि रसूल कोई फ़रिश्ता होना चाहिये।

चौथी बात यह इरशाद फ़रमाई कि तुम्हारी नज़रें जिन ग़रीब निर्धन लोगों को हक़ीर व ज़लील देखती हैं मैं तुम्हारी तरह यह नहीं कह सकता कि अल्लाह तआ़ला उनको कोई ख़ैर और भलाई न देगा, क्योंकि ख़ैर और भलाई का ताल्लुक़ माल व दौलत से नहीं बल्कि इनसान के

दिल से है, और दिलों का हाल अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं कि किसका दिल ख़ैर व बेहतरी के काबिल है किसका नहीं।

फिर फ़रमाया कि अगर मैं भी तुम्हारी तरह उनको हक़ीर व ज़लील कहने लगूँ तो मैं भी ज़ालिम हो जाऊँगा।

وَاُوْحِيَ اِلٰى نُوْحٍ اَنَّهٗ لَنْ يُّؤْمِنَ مِنْ قَوْمِكَ اِلَّا مَنْ قَدْ اٰمَنَ فَلَا تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ۝ وَاصْنَعِ الْفُلْكَ بِاَعْيُنِنَا وَوَحْيِنَا وَلَا تُخَاطِبْنِيْ فِي الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا ۚ اِنَّهُمْ مُّغْرَقُوْنَ ۝ وَيَصْنَعُ الْفُلْكَ ۗ وَكُلَّمَا مَرَّ عَلَيْهِ مَلَاٌ مِّنْ قَوْمِهٖ سَخِرُوْا مِنْهُ ۚ قَالَ اِنْ تَسْخَرُوْا مِنَّا فَاِنَّا نَسْخَرُ مِنْكُمْ كَمَا تَسْخَرُوْنَ ۝ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۙ مَنْ يَّاْتِيْهِ عَذَابٌ يُّخْزِيْهِ وَيَحِلُّ عَلَيْهِ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ۝ حَتّٰۤى اِذَا جَآءَ اَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُّوْرُ ۙ قُلْنَا احْمِلْ فِيْهَا مِنْ كُلٍّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ وَاَهْلَكَ اِلَّا مَنْ سَبَقَ عَلَيْهِ الْقَوْلُ وَمَنْ اٰمَنَ ۚ وَمَاۤ اٰمَنَ مَعَهٗۤ اِلَّا قَلِيْلٌ ۝

व ऊहि-य इला नूहिन् अन्नहू लंय्युअ्मि-न मिन् क़ौमि-क इल्ला मन् क़द् आम-न फ़ला तब्तइस् बिमा कानू यफ़्अ़लून (36) वस्नअ़िल्-फ़ुल्-क बिअअ़्युनिना व वह्यिना व ला तुख़ातिब्नी फ़िल्लज़ी-न ज़-लमू इन्नहुम् मुग़्रक़ून (37) व यस्नअ़ुल्फ़ुल्-क, व कुल्लमा मर्-र अ़लैहि म-लउम् मिन् क़ौमिही सख़िरू मिन्हु, क़ा-ल इन् तस्ख़रू मिन्ना फ़-इन्ना नस्ख़रु मिन्कुम् कमा तस्ख़रून (38) फ़सौ-फ़ तअ़्लमू-न मंय्यअ्तीहि अज़ाबुंय्-युख़्ज़ीहि व यहिल्लु अ़लैहि अ़ज़ाबुम् मुक़ीम (39) हत्ता इज़ा जा-अ अम्रुना व	और हुक्म हुआ नूह की तरफ़ कि अब ईमान न लायेगा तेरी क़ौम में मगर जो ईमान ला चुका, सो ग़मगीन न रह उन कामों पर जो वे कर रहे हैं। (36) और बना कश्ती हमारे रू-ब-रू और हमारे हुक्म से, और न बात कर मुझसे ज़ालिमों के हक़ में, ये बेशक ग़र्क़ होंगे। (37) और वह कश्ती बनाता था और जब गुज़रते उस पर सरदार उसकी क़ौम के उससे हंसी करते, बोला अगर तुम हंसते हो हम से तो हम हंसते हैं तुमसे, जैसे तुम हंसते हो। (38) अब जल्द जान लोगे कि किस पर आता है अ़ज़ाब कि रुस्वा करे उसको, और उतरता है उस पर अ़ज़ाब हमेशा के लिये। (39) यहाँ तक कि जब पहुँचा हमारा हुक्म और जोश

फ़ारत्तन्नूरु क़ुल्नह्मिल् फ़ीहा मिन् कुल्लिन् ज़ौजैनिस्नैनि व अह्ल-क इल्ला मन् स-ब-क़ अ़लैहिल्-क़ौलु व मन् आम-न, व मा आम-न म-अ़हू इल्ला क़लील (40)	मारा तन्नूर ने, कहा हमने चढ़ा ले कश्ती में हर किस्म से जोड़ा दो अ़दद और अपने घर के लोग, मगर जिस पर पहले हो चुका है हुक्म, और सब ईमान वालों को, और ईमान न लाये थे उसके साथ मगर थोड़े। (40)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जब नसीहत करते हुए एक लम्बा ज़माना गुज़र गया और कुछ असर न हुआ तो) नूह (अ़लैहिस्सलाम) के पास वही भेजी गई कि सिवाय उनके जो (इस वक़्त तक) ईमान ला चुके हैं और कोई (नया शख़्स) तुम्हारी क़ौम में से ईमान न लायेगा, सो जो कुछ ये लोग (कुफ़्र, तकलीफ़ देना और हंसी मज़ाक़) कर रहे हैं, उस पर कुछ ग़म न करो (क्योंकि ग़म तो ख़िलाफ़े उम्मीद चीज़ से होता है, जब उनसे मुख़ालफ़त के सिवा कोई और उम्मीद ही नहीं फिर क्यों ग़म किया जाये) और (चूँकि हमारा इरादा अब उनको ग़र्क़ करने का है और इसलिये तूफ़ान आने को है, पस) तुम (उस तूफ़ान से बचने के लिये) हमारी निगरानी में और हमारे हुक्म से कश्ती तैयार कर लो (कि उसके ज़रिये से तूफ़ान से तुम और मोमिन लोग महफ़ूज़ रहोगे)। और (यह सुन लो कि) मुझसे काफ़िरों (की निजात) के बारे में कुछ गुफ़्तगू मत करना (क्योंकि) वे सब ग़र्क़ किये जाएँगे (उनके लिये यह निश्चित तौर पर तय हो चुका है, तो उनकी सिफ़ारिश बेकार होगी। ग़र्ज़ कि नूह अ़लैहिस्सलाम ने कश्ती का सामान जमा किया) और वह कश्ती तैयार करने लगे (चाहे ख़ुद या दूसरे कारीगरों के ज़रिये से) और (तैयारी के दौरान में) जब कभी उनकी क़ौम के किसी गिरोह के सरदार का उन पर गुज़र होता तो (उनको कश्ती बनाता देखकर और यह सुनकर कि तूफ़ान आने वाला है) उनसे हंसी करते, (कि देखा पानी का कहीं नाम व निशान नहीं, मुफ़्त में मुसीबत झेल रहे हैं)। आप फ़रमाते कि अगर तुम हम पर हंसते हो तो हम तुम पर हंसते हैं, जैसा कि तुम (हम पर) हंसते हो (कि अ़ज़ाब इतने नज़दीक आ पहुँचा है और तुमको हंसी सूझ रही है, हम इस पर हंसते हैं) सो अभी तुमको मालूम हुआ जाता है कि वह कौनसा शख़्स है जिस पर (दुनिया में) ऐसा अ़ज़ाब आया चाहता है जो उसको रुस्वा कर देगा, और (मरने के बाद) उस पर हमेशा का अ़ज़ाब नाज़िल होगा।

(ग़र्ज़ कि इसी तरह की गुफ़्तगूयें और मामलात हुआ करते) यहाँ तक कि जब हमारा (अ़ज़ाब का) हुक्म (क़रीब) आ पहुँचा और तन्नूर (यानी ज़मीन से पानी) उबलना शुरू हुआ, हमने (नूह अ़लैहिस्सलाम से) फ़रमाया कि हर एक (क़िस्म के जानवरों) में से (जो कि इनसान के लिये कारामद हैं और पानी में ज़िन्दा नहीं रह सकते) एक-एक नर और एक-एक मादा यानी दो अ़दद इस (कश्ती) पर चढ़ा लो और अपने घर वालों को भी (चढ़ा लो) उसको छोड़कर जिस पर

(ग़र्क़ होने का) हुक्म नाफ़िज़ हो चुका है (यानी उनमें जो काफ़िर हो जिनके बारे में 'इन्नहुम् मुग़्रक़ून' कह दिया गया है, उसको सवार मत करना, और घर वालों के अलावा) और दूसरे ईमान वालों को भी (सवार कर लो), और सिवाय थोड़े से आदमियों के उनके साथ (यानी उन पर) कोई ईमान न लाया था (बस उन्हीं के सवार करने का हुक्म हो गया)।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को हक़ तआला ने तक़रीबन एक हज़ार साल की लम्बी उम्र अता फ़रमाई, इसके साथ अल्लाह की तरफ़ दावत देने और क़ौम की इस्लाह (सुधार) करने की फ़िक्र और पैग़म्बराना जिद्दोजहद अता फ़रमायी कि उम्र की इस लम्बी मुद्दत में हमेशा अपनी क़ौम को दीने हक़ और कलिमा-ए-तौहीद की दावत देते रहे, क़ौम की तरफ़ से सख़्त-सख़्त तकलीफ़ों का सामना करना पड़ा, उनकी क़ौम उन पर पथराव करती यहाँ तक कि बेहोश हो जाते, फिर जब होश आता तो दुआ करते कि या अल्लाह! मेरी क़ौम को माफ़ कर दे, ये बेवक़ूफ़ जाहिल हैं, जानते नहीं। क़ौम की एक नस्ल के बाद दूसरी को और दूसरी के बाद तीसरी को इस उम्मीद पर दावत देते कि शायद ये हक़ को क़ुबूल कर लें।

जब इस अमल पर सदियाँ गुज़र गयीं तो अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त के सामने उनकी बदहाली की शिकायत की जो सूरः नूह में बयान हुई है:

رَبِّ اِنِّیْ دَعَوْتُ قَوْمِیْ لَیْلًا وَّنَهَارًا٥ فَلَمْ یَزِدْهُمْ دُعَآءِیْۤ اِلَّا فِرَارًا٥

और इतने लम्बे दुखों और मुसीबतों के दौर के बाद इस मर्दे ख़ुदा की ज़बान पर यह दुआ आई:

رَبِّ انْصُرْنِیْ بِمَا كَذَّبُوْنِ٥

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! उनके झुठलाने के मुक़ाबले में आप मेरी मदद कीजिए।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की क़ौम का ज़ुल्म व सितम हद से गुज़र जाने के बाद हक़ तआला ने हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को इन आयतों से ख़िताब फ़रमाया जो ऊपर बयान हुई हैं। (तफ़सीरे बग़वी, तफ़सीरे मज़हरी)

इनमें सबसे पहले तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को यह बतलाया गया कि आपकी क़ौम में जिनको ईमान लाना था, ले आये, अब कोई और शख़्स ईमान क़ुबूल न करेगा। उनके दिलों पर उनकी हठधर्मी और नाफ़रमानी की बिना पर मुहर लग चुकी है, इसलिये अब आप इस क़ौम का ग़म न खायें और इनके ईमान क़ुबूल न करने से परेशान न हों।

दूसरी बात यह बतलाई गयी कि अब हम इस क़ौम पर पानी के तूफ़ान का अ़ज़ाब भेजने वाले हैं, इसलिये आप एक कश्ती तैयार करें जिसमें आपके घर वाले और जितने मुसलमान हैं वे सब अपनी ज़रूरत की चीज़ों के साथ समा सकें, ताकि तूफ़ान के वक़्त ये सब उसमें सवार होकर निजात पा सकें। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ कश्ती बनाई। फिर जब

तूफ़ान के शुरू होने की निशानियाँ सामने आ गयीं कि ज़मीन से पानी उबलने लगा तो नूह अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया गया कि ख़ुद मय अपने घर वालों और बाल-बच्चों के, और उन लोगों के जो आप पर ईमान लाये हैं, इस कश्ती में सवार हो जायें, और इनसानों की ज़रूरतें जिन जानवरों से संबन्धित हैं जैसे गाय, बैल, बकरी, घोड़ा, गधा वग़ैरह उनका भी एक-एक जोड़ा कश्ती में सवार कर लें। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने हुक्म के मुताबिक़ सबको सवार कर लिया।

आख़िर में फ़रमाया कि नूह अ़लैहिस्सलाम पर ईमान लाने वाले और कश्ती में सवार होने वाले मुसलमानों की संख्या बहुत कम थी।

यह ख़ुलासा-ए-मज़मून है उपर्युक्त आयतों का। अब हर एक आयत के मतलब की वज़ाहत व व्याख्या और उनसे संबन्धित मज़ामीन व मसाईल देखिये।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि नूह अ़लैहिस्सलाम पर यह वही भेजी गयी कि उनकी क़ौम में से जो ईमान लाने वाले थे ला चुके हैं, आईन्दा और कोई ईमान न लायेगा, इसलिये ये लोग जो कुछ मामला आपके साथ करते हैं उससे आप ग़मगीन व परेशान न हों, क्योंकि ग़म व परेशानी उमूमन तब होती है जब किसी से बेहतरी और भलाई की उम्मीद जुड़ी हो। मायूसी भी एक किस्म की राहत होती है, आप उनसे मायूस हो जायें। और जो तकलीफ़ व सदमा हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को उनकी तकलीफ़ों से पहुँच रहा था उसके इन्तिज़ाम की तरफ़ दूसरी आयत में इशारा किया गया कि उनको पानी के तूफ़ान में ग़र्क़ कर दिया जायेगा। इन्हीं हालात में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की ज़बान पर अपनी क़ौम के लिये वह बद्दुआ आई थी जिसका ज़िक्र सूरः नूह में किया गया हैः

رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكٰفِرِيْنَ دَيَّارًا○ اِنَّكَ اِنْ تَذَرْهُمْ يُضِلُّوْا عِبَادَكَ وَلَا يَلِدُوْٓا اِلَّا فَاجِرًا كَفَّارًا○

यानी ऐ मेरे परवर्दिगार! अब इन काफ़िरों में से कोई ज़मीन पर बसने वाला न छोड़िये, क्योंकि अगर ये रहे तो इनकी आने वाली नस्ल भी ऐसी ही नाफ़रमान और बदकार व काफ़िर होगी। यही दुआ क़ुबूल होकर पूरी क़ौमे नूह तूफ़ान में ग़र्क़ की गयी।

नूह अ़लैहिस्सलाम को कश्ती बनाने का प्रशिक्षण

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को जब कश्ती बनाने का हुक्म मिला उस वक़्त वह न कश्ती को जानते थे न उसके बनाने को, इसलिये दूसरी आयत में उनके कश्ती बनाने की हक़ीक़त ज़ाहिर करने के लिये फ़रमायाः

وَاصْنَعِ الْفُلْكَ بِاَعْيُنِنَا وَوَحْيِنَا

यानी आप कश्ती बनायें हमारी निगरानी में और हमारी वही के मुताबिक़।

हदीस की रिवायतों में है कि हज़रत जिब्रील ने अल्लाह की वही के ज़रिये हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को कश्ती बनाने की तमाम ज़रूरतें और उसका तरीक़ा बतलाया। उन्होंने साल की लकड़ी से यह कश्ती तैयार की।

कुछ तारीख़ी रिवायतों में उसकी पैमाईश यह बतलाई गयी है कि यह तीन सौ गज़ लम्बा, पचास गज़ चौड़ा, तीस गज़ ऊँचा तीन मन्ज़िला जहाज़ था और रोशन दान रिवाजी तरीक़े के मुताबिक़ दायें बायें खुलते थे। इस तरह यह जहाज़ बनाने की कारीगरी अल्लाह की वही के ज़रिये सबसे पहले हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के हाथों शुरू हुई, फिर इसमें तरक़्क़ियाँ होती रहीं।

तमाम ज़रूरी उद्योगों की शुरूआत वही के ज़रिये हुई

हाफ़िज़ शमसुद्दीन ज़हबी की किताब 'अत्तिबुन्-नबवी" में कुछ पुराने बुज़ुर्गों से नक़ल किया गया है कि इनसान के लिये जितनी कारीगरी और उद्योगों की ज़रूरत है उन सब की शुरूआत अल्लाह की वही के ज़रिये किसी पैग़म्बर के माध्यम से अ़मल में आई है, फिर ज़रूरत के अनुसार उसमें इज़ाफ़े और सहूलियतें विभिन्न ज़मानों में होती रहीं। सब से पहले पैग़म्बर हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ जो वही आई है उसका ज़्यादातर हिस्सा ज़मीन की आबादकारी और विभिन्न प्रकार की कारीगरी से संबन्धित है। बोझ उठाने के लिये पहियों के ज़रिये चलने वाली गाड़ी की ईजाद भी इसी सिलसिले की ईजादों में से है।

सर सैयद साहिब (संस्थापक अ़लीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी) ने ख़ूब फ़रमाया है कि ज़माने ने तरह-तरह की गाड़ियाँ ईजाद कर लीं लेकिन काम का मदार हर क़िस्म की गाड़ियों का धुरी और पहिये पर ही रहा, वह बैलगाड़ी और गधागाड़ी से लेकर रेलों और बेहतरीन क़िस्म की मोटर गाड़ियों तक सब में संयुक्त है, इसलिये गाड़ियों का सबसे बड़ा मूजिद (आविष्कारक) वह शख़्स है जिसने पहिया ईजाद किया, कि दुनिया की सारी मशीनरी की रूह पहिये ही हैं, और मालूम हो चुका कि यह ईजाद पहले पैग़म्बर हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के हाथों अल्लाह की वही के ज़रिये अ़मल में आई है।

इससे यह भी मालूम हो गया कि ज़रूरत की चीज़ों की कारीगरी (यानी उनको बनाना और तैयार करना) इतनी अहमियत रखती है कि वही के द्वारा अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को यह सिखाई गयी है।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को कश्ती बनाने की हिदायत देने के साथ यह भी फ़रमा दिया कि आपकी क़ौम पर तूफ़ान आयेगा, वे ग़र्क़ होंगे। उस वक़्त आप अपनी शफ़क़त की बिना पर उनके बारे में कोई सिफ़ारिश न करें।

तीसरी आयत में कश्ती बनाने के ज़माने में नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम की ग़फ़लत और बुरे अन्जाम से बेफ़िक्री का हाल ज़िक्र किया गया है कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के हुक्म से कश्ती बनाने में मशग़ूल थे, उनकी क़ौम के सरदार जब उनको देखते और पूछते कि क्या कर रहे हो? तो यह फ़रमाते कि तूफ़ान आने वाला है इसलिये कश्ती तैयार कर रहा हूँ। उनकी क़ौम उनका मज़ाक़ उड़ाती और ठठ्ठे लगाती थी कि यहाँ पीने के लिये तो पानी का काल पड़ा हुआ है, यह बड़े मियाँ इस ख़ुश्की में कश्ती चलाने की फ़िक्र में हैं। हज़रत नूह

अ़लैहिस्सलाम ने उनके जवाब में फ़रमाया कि "अगर आज तुम हमसे मज़ाक़ दिल्लगी करते हो तो याद रखो कि एक दिन ऐसा भी आने वाला है जिसमें हम तुमसे मज़ाक़ करेंगे।" मुराद यह है कि हालात ऐसे पेश आयेंगे जो ख़ुद तुम्हारे मज़ाक़ उड़ाये जाने का कारण बनेंगे। क्योंकि हक़ीक़त में मज़ाक़ उड़ाना और किसी की खिल्ली उड़ाना अम्बिया की शान के ख़िलाफ़ है, वह किसी के लिये जायज़ नहीं बल्कि हराम है। क़ुरआने करीम का इरशाद है:

لَا يَسْخَرْ قَوْمٌ مِّنْ قَوْمٍ عَسٰۤى اَنْ يَّكُوْنُوْا خَيْرًا مِّنْهُمْ.

यानी कोई किसी के साथ मज़ाक़ व ठट्ठा न करे, हो सकता है कि वह उस मज़ाक़ उड़ाने वाले से बेहतर हो। इसलिये यहाँ मज़ाक़ और खिल्ली उड़ाने से मुराद उनके मज़ाक़ उड़ाने का अ़मली जवाब है, कि जब तुम अ़ज़ाब में गिरफ़्तार होगे तो हम तुम्हें बतलायेंगे कि यह है तुम्हारे मज़ाक़ उड़ाने का अन्जाम, जैसा कि इसके बाद चौथी आयत में फ़रमाया है कि "जल्द ही तुम्हें मालूम हो जायेगा कि किस पर ऐसा अ़ज़ाब आया चाहता है जो उसको रुस्वा कर देगा, और किस पर हमेशा का अ़ज़ाब होता है।" पहले अ़ज़ाब से दुनिया का और 'अ़ज़ाब-ए-मुक़ीम' से आख़िरत का हमेशा का अ़ज़ाब मुराद है।

पाँचवीं आयत में तूफ़ान की शुरूआ़त और उससे संबन्धित हिदायतों और वाक़िआ़त का सिलसिला शुरू हुआ है। इसमें इरशाद फ़रमायाः

حَتّٰۤى اِذَا جَآءَ اَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُّوْرُ.

यानी जब हमारा हुक्म आ पहुँचा और तन्नूर से पानी उबलना शुरू हो गया।

लफ़्ज़ 'तन्नूर' कई मायने में इस्तेमाल होता है, ज़मीन की सतह को भी 'तन्नूर' कहते हैं, रोटी पकाने के तन्दूर को भी 'तन्नूर' कहा जाता है, ज़मीन के ऊँचे हिस्से के लिये भी लफ़्ज़ 'तन्नूर' बोला जाता है। इसी लिये तफ़सीर के इमामों में से कुछ ने फ़रमाया कि इस जगह तन्नूर से मुराद ज़मीन की सतह (ऊपरी हिस्सा) है कि उससे पानी उबलने लगा। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम का तन्नूर 'ऐन-ए-वरदा' के स्थान पर मुल्के शाम में था, वह मुराद है, उससे पानी निकलने लगा। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम का अपना तन्नूर कोफ़े में था, वह मुराद है। अक्सर मुफ़स्सिरीन हज़रात- हज़रत हसन, हज़रत मुजाहिद, इमाम शाबी रह., हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह ने इसी को इख़्तियार फ़रमाया है।

और इमाम शाबी रह. तो क़सम खाकर कहा करते थे कि यह तन्नूर शहर कूफ़ा के एक किनारे में था और यह कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी कश्ती कूफ़ा की मस्जिद के अन्दर बनाई थी। उसी मस्जिद के दरवाज़े पर यह तन्नूर था। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हक़ तआ़ला ने हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम से फ़रमाया था कि आप यह देखें कि आपके घर के तन्नूर से पानी उबलने लगा तो समझ लें कि तूफ़ान आ गया। (क़ुर्तुबी व मज़हरी)

मशहूर मुफ़स्सिर इमाम क़ुर्तुबी रह. ने फ़रमाया कि अगरचे तन्नूर के मायने में मुफ़स्सिरीन के अक़वाल विभिन्न नज़र आते हैं मगर हक़ीक़त यह है कि यह कोई इख़्तिलाफ़ (मतभेद) नहीं। जब तूफ़ान का पानी उबलना शुरू हुआ तो रोटी पकाने के तन्दूर से भी निकला, ज़मीन की सतह से भी उबला, मुल्के शाम में ऐनुल-वरदा के तन्नूर से भी निकला, जैसा कि क़ुरआने करीम ने खुद स्पष्ट फ़रमाया है:

فَفَتَحْنَآ اَبْوَابَ السَّمَآءِ بِمَآءٍ مُّنْهَمِرٍ وَّفَجَّرْنَا الْاَرْضَ عُيُوْنًا.

यानी हमने आसमान के दरवाज़े मूसलाधार बारिश के लिये खोल दिये और ज़मीन से (पानी के) चश्मे ही चश्मे फूट पड़े।

इमाम शाबी रह. ने अपने बयान में यह भी फ़रमाया कि यह कूफ़ा की जामा मस्जिद, मस्जिदे हराम और मस्जिदे नबवी और मस्जिदे अक़्सा के बाद चौथी मस्जिद है जो एक विशेष और अलग शान रखती है।

आयत में आगे यह बयान फ़रमाया कि जब तूफ़ान शुरू हो गया तो हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया गयाः

اِحْمِلْ فِيْهَا مِنْ كُلٍّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ.

यानी सवार कर लीजिये इस कश्ती में हर जोड़े वाले जानवरों का एक-एक जोड़ा।

इससे मालूम हुआ कि नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती में तमाम दुनिया भर के जानवर जमा नहीं किये गये थे बल्कि सिर्फ़ वे जानवर जो नर व मादा के जोड़े से पैदा होते हैं और पानी में ज़िन्दा नहीं रह सकते। इसलिये तमाम दरियाई जानवर इससे निकल गये और खुश्की के जानवरों में भी बग़ैर नर व मादा के पैदा होने वाले ज़मीनी कीड़े-मकोड़े और जानवर सब निकल गये, सिर्फ़ पालतू जानवर गाय, बैल भैंस, बकरी वग़ैरह रह गये।

इससे वह शुब्हा दूर हो गया जो पहली और ऊपरी नज़र में पैदा हो सकता है कि कश्ती में इतनी गुंजाईश कैसे हो गयी कि दुनिया भर के जानवर उसमें समा गये।

और फिर हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को इरशाद फ़रमाया कि आप अपने घर वालों और बाल-बच्चों को सिवाय उनके जो कुफ़्र पर हैं, कश्ती में सवार कर लें, और उन सब लोगों को भी जो आप पर ईमान लाये हैं, मगर ईमान लाने वालों की तायदाद बहुत कम है।

कश्ती वालों की सही तायदाद क़ुरआन व हदीस में निर्धारित नहीं की गयी। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया गया है कि कुल संख्या अस्सी आदमियों की थी, जिनमें हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के तीन बेटे साम, हाम, याफ़िस और उनकी तीन बीवियाँ थीं, चौथा बेटा काफ़िरों के साथ रहकर तूफ़ान में ग़र्क़ हुआ।

وَقَالَ ارْكَبُوا فِيهَا بِسْمِ اللّٰهِ مَجْرٖىهَا وَمُرْسٰىهَا ۚ إِنَّ رَبِّي لَغَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿٤١﴾ وَهِيَ تَجْرِي بِهِمْ فِي مَوْجٍ
كَالْجِبَالِ ۫ وَنَادٰى نُوحُ ۨابْنَهُ وَكَانَ فِي مَعْزِلٍ يّٰبُنَيَّ ارْكَبْ مَّعَنَا وَلَا تَكُنْ مَّعَ الْكٰفِرِينَ ﴿٤٢﴾
قَالَ سَاٰوِي إِلٰى جَبَلٍ يَّعْصِمُنِي مِنَ الْمَاءِ ۚ قَالَ لَا عَاصِمَ الْيَوْمَ مِنْ أَمْرِ اللّٰهِ إِلَّا مَنْ رَّحِمَ ۚ وَحَالَ
بَيْنَهُمَا الْمَوْجُ فَكَانَ مِنَ الْمُغْرَقِينَ ﴿٤٣﴾ وَقِيلَ يٰأَرْضُ ابْلَعِي مَاءَكِ وَيٰسَمَاءُ أَقْلِعِي وَغِيضَ الْمَاءُ وَقُضِيَ
ربع الْأَمْرُ وَاسْتَوَتْ عَلَى الْجُودِيِّ وَقِيلَ بُعْدًا لِّلْقَوْمِ الظّٰلِمِينَ ﴿٤٤﴾

व क़ालर्कबू फ़ीहा बिस्मिल्लाहि मज्रेहा व मुर्साहा इन्-न रब्बी ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (41) व हि-य तज्री बिहिम् फ़ी मौजिन् कल्जिबालि, व नादा नूहु-निब्नहू व का-न फ़ी मअ्ज़िलिंय्-या बुनय्यर्कब् म-अना व ला तकुम् मअल्-काफ़िरीन (42) क़ा-ल स-आवी इला ज-बलिंय्-यअ्सिमुनी मिनल्मा-इ, क़ा-ल ला आसिमल्यौ-म मिन् अम्रिल्लाहि इल्ला मर्रहि-म व हा-ल बैनहुमल्-मौजु फ़का-न मिनल्-मुग़्रक़ीन (43) व क़ी-ल या अर्ज़ुब्लअ़ी मा-अकि व या समा-उ अक़्लिअ़ी व ग़ीज़ल्-मा-उ व क़ुज़ियल्-अम्रु वस्तवत् अ़लल्-जूदिय्यि व क़ी-ल बुअ़्दल् लिल्-क़ौमिज़्ज़ालिमीन (44) ❖	और बोला सवार हो जाओ इसमें, अल्लाह के नाम से है इसका चलना और ठहरना, बेशक मेरा रब है बख़्शने वाला मेहरबान। (41) और वह लिये जा रही थी उनको लहरों में जैसे पहाड़, और पुकारा नूह ने अपने बेटे को और वह हो रहा था किनारे, ऐ बेटे! सवार हो जा हमारे साथ और मत रह काफ़िरों के साथ। (42) बोला जा लगूँगा किसी पहाड़ को जो बचा लेगा मुझको पानी से, कहा कोई बचाने वाला नहीं आज अल्लाह के हुक्म से मगर जिस पर वही रहम करे, और आड़ हो गई दोनों में लहर, फिर हो गया डूबने वालों में। (43) और हुक्म आया ऐ ज़मीन! निगल जा अपना पानी और ऐ आसमान! थम जा, और सुखा दिया पानी और हो चुका काम, और कश्ती ठहरी जूदी पहाड़ पर, और हुक्म हुआ कि दूर हो ज़ालिम क़ौम। (44) ❖

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और नूह (अ़लैहिस्सलाम) ने (सब जानवरों को सवार करके अपने मानने वालों से) फ़रमाया

कि (आओ) इस कश्ती में सवार हो जाओ (और डूबने की आशंका दिल में मत लाना, क्योंकि) इसका चलना और ठहरना (सब) अल्लाह ही के नाम से है (और वही इसके मुहाफ़िज़ हैं, फिर अन्देशा क्यों किया जाये, और अगरचे बन्दों के गुनाह डूबने का सबब हैं मगर) यक़ीनन मेरा रब मग़फ़िरत करने वाला (है), रहीम है (वह अपनी रहमत से गुनाह बख़्श देता है और हिफ़ाज़त भी करता है। ग़र्ज़ कि सब कश्ती पर सवार हो गये और इस दौरान में पानी बढ़ गया) और वह कश्ती उनको लेकर पहाड़ जैसी लहरों में चलने लगी, और नूह (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने (एक सगे या सौतेले) बेटे को (जिसका नाम किनआ़न था और वह बावजूद समझाने के ईमान न लाया था, और ईमान न लाने की वजह से कश्ती में सवार न किया गया था, और उस वक़्त कश्ती किनारे के क़रीब ही थी और वह किनारे पर मौजूद था, आख़िरी दावत के तौर पर) पुकारा, और वह (कश्ती से) अलग जगह पर था, कि ऐ मेरे (प्यारे) बेटे! (कश्ती में सवार होने की शर्त जो कि ईमान है उसको क़ुबूल करके जल्दी) हमारे साथ सवार हो जा और (अ़क़ीदे में) काफ़िरों के साथ मत हो (यानी कुफ़्र को छोड़ दे ताकि ग़र्क़ होने से बच जाये)।

वह कहने लगा कि मैं अभी किसी पहाड़ की पनाह ले लूँगा जो मुझको पानी (में ग़र्क़ होने) से बचा लेगा (क्योंकि वह वक़्त तूफ़ान की शुरूआत का था, पहाड़ों के ऊपर पानी न पहुँचा था) नूह (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि आज अल्लाह के हुक्म (यानी क़हर से) कोई बचाने वाला नहीं (न पहाड़ और न कोई चीज़), लेकिन जिस पर वही रहम करे (तो उसको ख़ुद ही बचा ले। ग़र्ज़ कि किनआ़न उस वक़्त भी ईमान न लाया और पानी ज़ोर शोर के साथ उस तरफ़ से बढ़ गया) और दोनों (बाप बेटों) के बीच में एक मौज "यानी पानी की लहर" आड़ हो गई। पस वह भी दूसरे काफ़िरों की तरह ग़र्क़ हो गया। और (जब काफ़िर सब ग़र्क़ हो चुके तो) हुक्म हो गया कि ऐ ज़मीन! अपना पानी (जो कि तेरी सतह पर मौजूद है) निगल जा, और ऐ आसमान! (बरसने से) थम जा, (चुनाँचे दोनों बातें हो गईं) और पानी घट गया और किस्सा ख़त्म हुआ, और कश्ती जूदी (पहाड़) पर आ ठहरी, और कह दिया गया कि काफ़िर लोग रहमत से दूर।

मआ़रिफ़ व मसाईल

कश्तियों और दूसरी सवारियों पर सवार होने के आदाब

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में कश्ती और सवारी पर सवार होने के आदाब की तालीम है कि:

بِسْمِ اللّٰهِ مَجْرٖهَا وَمُرْسٰهَا.

"बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुरसाहा" कहकर सवार हों। मजरे के मायने जारी होना और चलना, और मुरसा के मायने रुकना और ठहरना हैं। मायने यह हैं कि इस कश्ती और सवारी का चलना भी अल्लाह तआ़ला ही की क़ुदरत और उसके नाम से है और रुकना और ठहरना भी उसी की क़ुदरत के ताबे है।

हर सवारी का चलना और ठहरना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत से है

इनसान अगर ज़रा भी ग़ौर से काम ले तो उसे मालूम होगा कि कश्ती हो या ख़ुश्की पर चलने वाली कोई सवारी, न उसका पैदा करना बनाना उसकी क़ुदरत में है न चलाना और ठहराना उसके बस का है। इनसान अपनी ऊपरी और सरसरी नज़र की बिना पर समझता है कि मैंने इसको बनाया और चलाया है हालाँकि हक़ीक़त यह है कि न उसने वह लोहा, लकड़ी, पीतल, एल्यूमीनियम वग़ैरह पैदा किये हैं जो उन तमाम सवारियों का कच्चा मैटेरियल है और न उसके बस में है कि एक तौला लोहा या एक फ़ुट लकड़ी पैदा कर सके। फिर इन कच्ची जिन्सों (मैटेरियल) से तरह-तरह के कल-पुर्ज़े बनाने की अ़क़्ल व समझ किसने दी? क्या यह अ़क़्ल व समझ इनसान ने ख़ुद पैदा कर ली है? अगर ख़ुद पैदा कर लेना इनसान के बस में होता तो दुनिया में कोई बेवक़ूफ़ कम-अ़क़्ल न रहता, हर शख़्स अफ़लातून व अरस्तू ही बनकर रहता। कहीं की लकड़ी, कहीं का लोहा, कहीं के उपकरण व औज़ार इस्तेमाल करके सवारी का ढाँचा भी बन गया, अब इस मनों और टनों के भारी बोझ को लेकर ज़मीन पर दौड़ने या हवा पर उड़ने के लिये जिस ताक़त (पॉवर) की ज़रूरत है वह चाहे पैट्रोल से हासिल की जाये या हवा और पानी के टकराव से ऊर्जा की सूरत में हासिल की जाये, बहरहाल सोचने की बात यह है कि इनमें से इनसान ने किस चीज़ को पैदा किया है। पैट्रोल इसने पैदा किया या हवा, पानी इसने बनाया, उनमें ऑक्सीजन, हाईड्रोजन की ताक़तें इसने पैदा कीं?

अगर इनसान ज़रा भी अ़क़्ल से काम ले तो उसको विज्ञान की अ़जीब-अ़जीब चीज़ों और तरक़्क़ी के इस ज़माने में भी अपनी बेबसी और आ़जिज़ी ही का अनुभव होगा, और इस इक़रार के बग़ैर न रह सकेगा कि हर सवारी का चलना और रुकना सब इस कायनात के पैदा करने वाले यानी हक़ तआ़ला ही के क़ब्ज़े में है।

ग़ाफ़िल इनसान अपने ज़ाहिरी जोड़-तोड़ के अ़मल-दख़ल और उलट-फेर जिनका दूसरा नाम वैज्ञानिक आविष्कार है उन पर फ़ख़्र व गुरूर के नशे में ऐसा मस्त हो जाता है कि असल हक़ीक़त नज़रों से ओझल हो जाती है, अल्लाह तआ़ला अपने पैग़म्बरों के ज़रिये इस ग़फ़लत का पर्दा हटाते हैं और 'बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुरसाहा' की असल हक़ीक़त सामने कर देते हैं। देखने में तो यह एक दो लफ़्ज़ का फ़िक़रा है मगर ग़ौर कीजिए तो यह कुन्जी और चाबी है एक ऐसे दरवाज़े की जहाँ से इनसान इस माद्दी दुनिया में रहते हुए रूहानी दुनिया का बाशिन्दा बन जाता है, और कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे में हक़ तआ़ला के रूप को देखने लगता है।

यहीं से मोमिन की दुनिया और काफ़िर की दुनिया में फ़र्क़ नुमायाँ (स्पष्ट और ज़ाहिर) हो जाता है। सवारी पर दोनों सवार होते हैं लेकिन मोमिन का जो क़दम सवारी पर आता है वह उसको सिर्फ़ ज़मीन की दूरी तय नहीं कराता बल्कि ऊपर की दुनिया से भी अवगत करा देता है।

दूसरी और तीसरी आयत में बतलाया कि जब हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के सब घर वाले और बाल-बच्चे कश्ती में सवार हो गये मगर एक लड़का जिसका नाम किनआ़न बतलाया जाता है सवार होने से रह गया तो बाप वाली शफ़क़त से हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने उसको पुकारा कि हमारे साथ कश्ती में आ जाओ, काफ़िरों के साथ न रहो कि ग़र्क़ हो जाओगे। यह लड़का काफ़िरों दुश्मनों के साथ साज़-बाज़ रखता था और हक़ीक़त में काफ़िर था मगर ग़ालिबन हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को इसके काफ़िर होने का यक़ीनी तौर पर इल्म न था, और अगर इल्म था तो कुफ़्र से तौबा करके ईमान लाने की दावत के तौर पर उसको कश्ती में सवार होने और काफ़िरों का साथ छोड़ने की नसीहत फ़रमाई, मगर उस बदबख़्त ने उस वक़्त भी तूफ़ान को मामूली समझा और कहने लगा कि आप फ़िक्र न करें, मैं पहाड़ पर चढ़कर तूफ़ान से बच जाऊँगा। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने फिर सचेत किया कि ज़ालिम किस ख़्याल में है, आज कोई ऊँची इमारत या पहाड़ किसी को अल्लाह के अ़ज़ाब से बचाने वाला नहीं, और बचने की कोई सूरत सिवाय इसके नहीं कि अल्लाह तआ़ला ही उस पर रहम फ़रमायें। बाप बेटे की यह गुफ़्तगू दूर से चल ही रही थी कि एक मौज (पानी की लहर) उस तूफ़ान की आई और बेटे को बहा ले गयी। तारीख़ी रिवायतों में है कि तूफ़ाने नूह का पानी बड़े से बड़े पहाड़ की चोटी से पन्द्रह गज़ और कुछ रिवायतों के अनुसार चालीस गज़ ऊँचाई पर था।

चौथी आयत में तूफ़ान के ख़त्म होने और हालात के हमवार होने का बयान इस तरह किया गया है कि हक़ तआ़ला ने ज़मीन को ख़िताब करके हुक्म दियाः

يٰٓاَرْضُ ابْلَعِىْ مَآءَكِ.

ऐ ज़मीन! तू अपना पानी निगल ले। मुराद यह थी कि जिस क़द्र पानी ज़मीन से उबला था उसके लिये यह हुक्म दे दिया कि उसको फिर ज़मीन अपने अन्दर उतार ले। आसमान को हुक्म दिया गया कि अब पानी बरसाना बन्द कर दे। इस तरह ज़मीन से निकला हुआ पानी फिर ज़मीन में चला गया और आसमान से आगे पानी बरसना बन्द हो गया। आसमान से बरसा हुआ जितना पानी ज़मीन पर मौजूद था उसको क़ुदरत ने दरियाओं और नहरों की शक्ल दे दी जिससे इनसान फ़ायदा उठाये। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

इस आयत में हक़ तआ़ला ने आसमान और ज़मीन को ख़िताब करके अहकाम दिये हैं, हालाँकि ज़ाहिर नज़र में वो कोई शऊर व समझ वाली चीज़ें नहीं हैं, इसी लिये कुछ हज़रात ने इसको मजाज़ व इस्तिआ़रे पर महमूल किया है, मगर वाक़िआ़ यह है कि हमारी नज़र और हमारे एतिबार से दुनिया की जितनी चीज़ें बेशऊर, बेहिस, बेजान हैं, हक़ीक़त में वो सब रूह और शऊर रखने वाली चीज़ें हैं, अलबत्ता उनका शऊर व समझ इस दर्जे का नहीं जिस दर्जे का इनसान वग़ैरह को हासिल है, इसी लिये उनको बिना शऊर वाली क़रार देकर शरई अहकाम का पाबन्द नहीं बनाया गया। क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतें इस पर सुबूत हैं जैसेः

وَاِنْ مِّنْ شَىْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ.

यानी कोई चीज़ ऐसी नहीं जो अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व पाकी बयान न करती हो। और यह ज़ाहिर है कि अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ व सना उसकी मारिफ़त (पहचान) पर मौक़ूफ़ है, और मारिफ़त अ़क्ल व शऊर पर। इससे मालूम हुआ कि हर चीज़ में अ़क्ल व शऊर अपने अपने हौसले के मुताबिक़ मौजूद है, उसी अ़क्ल व शऊर से वह अपने ख़ालिक़ (पैदा करने वाले) को पहचानती है और जिस काम पर उसको उसके पैदा करने वाले ने लगा दिया है उस काम को हर चीज़ ख़ूब समझती है, और उसकी अदायेगी में बड़ी मज़बूती से लगी हुई है। क़ुरआन की आयतः

وَاَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى○

का यही मतलब है। इसलिये इस आयत में अगर आसमान व ज़मीन के ख़िताब को वास्तविक मायने में ख़िताब क़रार दिया जाये तो कोई हर्ज नहीं, क्योंकि बक़ौल मौलाना रूमी रहः

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा-मन् व तू मुर्दा बा-हक़ ज़िन्दा अन्द

तर्जुमाः मिट्टी, हवा, पानी और आग हुक्म के ताबे हैं अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

चौथी आयत के आख़िर में फ़रमाया कि ज़मीन व आसमान ने अहकाम की तामील की तो तूफ़ान का क़िस्सा ख़त्म हो गया, और नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहर गयी, और ज़ालिमों को हमेशा के लिये 'रहमत से दूर' कह दिया गया।

जूदी पहाड़ आज भी इस नाम से क़ायम है, इसका स्थान हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के असली वतन इराक़ में मूसल के उत्तर में इब्ने उमर द्वीप के क़रीब आरमीनिया की सरहद पर है। यह एक पहाड़ी श्रृंखला है जिसके एक हिस्से का नाम जूदी है, इसी के एक हिस्से को **अरारात** कहा जाता है। मौजूदा तौरात में कश्ती ठहरने का मक़ाम अरारात पहाड़ को बतलाया है, इन दोनों रिवायतों में कोई ऐसा टकराव नहीं, मगर मशहूर पुरानी तारीख़ों में भी यही है कि नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर आकर ठहरी थी।

पुरानी तारीख़ों में यह भी बयान हुआ है कि इराक़ के बहुत से मक़ामात में इस कश्ती के टुकड़े अब तक मौजूद हैं जिनको तबर्रुक (बरकत वाली चीज़) के तौर पर रखा और इस्तेमाल किया जाता है।

तफ़सीर-ए-तबरी और तफ़सीर-ए-बग़वी में है कि नूह अ़लैहिस्सलाम रजब महीने की 10 तारीख़ को कश्ती में सवार हुए थे, छह महीने तक यह कश्ती तूफ़ान के ऊपर चलती रही। जब बैतुल्लाह शरीफ़ के मक़ाम पर पहुँची तो सात मर्तबा तवाफ़ किया, अल्लाह तआ़ला ने अपने घर को ऊँचा करके डूबने से बचा लिया था। फिर 10 मुहर्रम आ़शूरा के दिन में तूफ़ान ख़त्म होकर कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहरी। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने उस दिन शुक्राने के तौर पर रोज़ा रखा

और कश्ती में जितने आदमी साथ थे सब को रोज़ा रखने का हुक्म दिया। कुछ रिवायतों में है कि कश्ती के शरीक सब जानवरों ने भी उस दिन रोज़ा रखा। (मज़हरी व क़ुर्तुबी)

आ़शूरा के दिन यानी मुहर्रम की दसवीं तारीख़ की अहमियत पहले तमाम नबियों की शरीअ़तों में पुराने ज़माने से चली आती है। इस्लाम के शुरू ज़माने में रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ होने से पहले आ़शूरा (दस मुहर्रम) का रोज़ा फ़र्ज़ था, रमज़ान की फ़र्ज़ियत नाज़िल होने के बाद फ़र्ज़ नहीं, मगर सुन्नत और बड़ा सवाब हमेशा के लिये है।

وَنَادَىٰ نُوحٌ رَّبَّهُ فَقَالَ رَبِّ إِنَّ ابْنِي مِنْ أَهْلِي وَإِنَّ وَعْدَكَ الْحَقُّ وَأَنتَ أَحْكَمُ
الْحَاكِمِينَ ۞ قَالَ يَا نُوحُ إِنَّهُ لَيْسَ مِنْ أَهْلِكَ ۖ إِنَّهُ عَمَلٌ غَيْرُ صَالِحٍ ۖ فَلَا تَسْأَلْنِ مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ ۖ
إِنِّي أَعِظُكَ أَن تَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۞ قَالَ رَبِّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ أَنْ أَسْأَلَكَ مَا لَيْسَ لِي بِهِ عِلْمٌ ۖ
وَإِلَّا تَغْفِرْ لِي وَتَرْحَمْنِي أَكُن مِّنَ الْخَاسِرِينَ ۞ قِيلَ يَا نُوحُ اهْبِطْ بِسَلَامٍ مِّنَّا وَبَرَكَاتٍ عَلَيْكَ وَ
عَلَىٰ أُمَمٍ مِّمَّن مَّعَكَ ۚ وَأُمَمٌ سَنُمَتِّعُهُمْ ثُمَّ يَمَسُّهُم مِّنَّا عَذَابٌ أَلِيمٌ ۞ تِلْكَ مِنْ أَنبَاءِ
الْغَيْبِ نُوحِيهَا إِلَيْكَ ۖ مَا كُنتَ تَعْلَمُهَا أَنتَ وَلَا قَوْمُكَ مِن قَبْلِ هَٰذَا ۖ فَاصْبِرْ ۖ إِنَّ الْعَاقِبَةَ
لِلْمُتَّقِينَ ۞ ع

व नादा नूहुर्-रब्बहू फ़क़ा-ल रब्बि इन्नब्नी मिन् अस्ली व इन्-न वअ्दकल्-हक़्क़ु व अन्-त अस्कमुल्-हाकिमीन (45) क़ा-ल या नूहु इन्नहू लै-स मिन् अह्लि-क इन्नहू अ-मलुन् ग़ैरु सालिहिन् फ़ला तस्अल्नि मा लै-स ल-क बिही ज़िल्मुन्, इन्नी अज़िज़ु-क अन् तकू-न मिनल्-जाहिलीन (46) क़ा-ल रब्बि इन्नी अऊज़ु बि-क अन् अस्अ-ल-क मा लै-स ली बिही ज़िल्मुन्, व इल्ला तग़्फ़िर् ली व तर्हम्नी अकुम् मिनल्-	और पुकारा नूह ने अपने रब को, कहा ऐ रब! मेरा बेटा है मेरे घर वालों में और बेशक तेरा वायदा सच्चा है और तू सबसे बड़ा हाकिम है। (45) फ़रमाया ऐ नूह! वह नहीं तेरे घर वालों में, उसके काम हैं ख़राब, सो मत पूछ मुझसे जो तुझको मालूम नहीं, मैं नसीहत करता हूँ तुझको कि न हो जाये तू जाहिलों में। (46) बोला ऐ रब! मैं पनाह लेता हूँ तेरी इससे कि पूछूँ तुझसे जो मालूम न हो मुझको, और अगर तू न बख़्शे मुझको और रहम न करे तो मैं हूँ नुक़सान वालों में। (47) हुक्म हुआ ऐ नूह! उतर सलामती के साथ हमारी तरफ़ से और बरकतों के साथ

ख़ासिरीन (47) क़ी-ल या नूहुस्बित् बिसलामिम्-मिन्ना व ब-रकातिन् अ़लै-क व अ़ला उ-ममिम् मिम्-मम्म-अ़-क, व उ-ममुन् सनुमत्तिअ़ुहुम् सुम्-म यमस्सुहुम् मिन्ना अ़ज़ाबुन् अलीम (48) तिल्-क मिन् अम्बाइल्-ग़ैबि नूहीहा इलै-क मा कुन्-त तअ़्लमुहा अन्-त व ला क़ौमु-क मिन् क़ब्लि हाज़ा, फ़स्बिर्, इन्नल् आ़क़ि-ब-त लिल्मुत्तक़ीन (49) ✿	तुझ पर और इन फ़िर्क़ों पर जो तेरे साथ हैं, और दूसरे फ़िर्क़े हैं कि हम फ़ायदा देंगे उनको, फिर पहुँचेगा उनको हमारी तरफ़ से दर्दनाक अ़ज़ाब। (48) ये कुछ बातें हैं ख़बरों में से कि हम भेजते हैं तेरी तरफ़, न तुझको इनकी ख़बर थी और न तेरी क़ौम को इससे पहले, सो तू सब्र कर, अलबत्ता अन्जाम भला है डरने वालों का। (49) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जब) नूह (अ़लैहिस्सलाम ने किनआ़न को ईमान लाने के लिये फ़रमाया और उसने न माना तो उसके ग़र्क़ होने से पहले उन्हों) ने इस उम्मीद पर कि शायद हक़ तआ़ला अपनी क़ुदरत से इसके दिल में ईमान डाल दे और ईमान ले आये) अपने रब को पुकारा और अ़र्ज़ किया कि मेरा यह बेटा मेरे घर वालों में से है, और आपका (यह) वायदा बिल्कुल सच्चा है (कि घर वालों में जो ईमान वाले हैं उनको बचा लूँगा) और (अगरचे यह फ़िलहाल ईमान वाला और निजात का हक़दार नहीं है लेकिन) आप हाकिमों के हाकिम (और बड़ी क़ुदरत वाले) हैं (अगर आप चाहें तो इसको मोमिन बना दें, ताकि यह भी उस हक़ वायदे का महल बन जाये। अ़र्ज़ करने का ख़ुलासा दुआ़ थी उसके मोमिन हो जाने के लिये) अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ नूह! यह शख़्स (हमारे अज़ली इल्म में) तुम्हारे (उन) घर वालों में से नहीं (जो ईमान लाकर निजात पायेंगे यानी इसकी क़िस्मत में ईमान नहीं बल्कि) यह (ख़ात्मे तक) तबाहकार (यानी काफ़िर रहने वाला) है। सो मुझसे ऐसी चीज़ की दरख़्वास्त मत करो जिसकी तुमको ख़बर नहीं (यानी ऐसे अस्पष्ट और संदिग्ध मामले की दुआ़ मत करो) मैं तुमको नसीहत करता हूँ कि तुम नादानों में दाख़िल न हो जाओ। उन्होंने अ़र्ज़ किया कि ऐ मेरे रब! मैं इस (बात) से आपकी पनाह माँगता हूँ कि (आईन्दा) आप से ऐसे मामले की दरख़्वास्त करूँ जिसकी मुझको ख़बर न हो, और (गुज़री हुई बात को माफ़ कर दीजिये क्योंकि) अगर आप मेरी मग़फ़िरत न फ़रमाएँगे और मुझ पर रहम न फ़रमाएँगे तो मैं बिल्कुल ही तबाह हो जाऊँगा।

(जब जूदी पहाड़ पर कश्ती ठहरने के चन्द दिन बाद पानी बिल्कुल उतर गया उस वक़्त नूह अलैहिस्सलाम से) कहा गया (यानी अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद या किसी फ़रिश्ते के ज़रिये से इरशाद फ़रमाया) कि ऐ नूह! (अब जूदी पर से ज़मीन पर) उतरो हमारी तरफ़ से सलाम और बरकतें लेकर जो तुम पर नाज़िल होंगी, और उन जमाअ़तों पर जो कि तुम्हारे साथ हैं (क्योंकि साथ वाले सब मुसलमान थे और इस्लाम में साझी होने की वजह से क़ियामत तक के मुसलमानों पर भी सलाम व बरकत का उतरना मालूम हो गया) और (चूँकि यह कलाम बाद वाले मुसलमानों पर भी बरकत के नाज़िल होने पर दलालत करता है, और बाद वालों में बाज़े काफ़िर भी होंगे इसलिये उनका हाल भी बयान फ़रमाते हैं कि) बहुत-सी ऐसी जमाअ़तें भी होंगी कि उनको हम (दुनिया में) चन्द दिन की ऐश देंगे, फिर (आख़िरत में) उन पर हमारी तरफ़ से सख़्त सज़ा डाली जायेगी। यह क़िस्सा (आपके एतिबार से) ग़ैब की ख़बरों में से है जिसको हम वही के ज़रिये से आपको पहुँचाते हैं, इस (क़िस्से) को इस (हमारे बतलाने) से पहले न आप जानते थे और न आपकी क़ौम (जानती थी। इस एतिबार से ग़ैब था और सिवाय वही के जानकारी के दूसरे तमाम माध्यम और सूत्र नहीं पाये जाते, पस साबित हो गया कि आपको वही के ज़रिये से मालूम हुआ है, और यही नुबुव्वत है, लेकिन ये लोग सुबूत के बाद भी आपकी मुख़ालफ़त करते हैं) सो सब्र कीजिये (जैसा कि इस क़िस्से में नूह अ़लैहिस्सलाम का सब्र आपको मालूम हुआ है) यक़ीनन अच्छे अन्जाम वाला होना मुत्तक़ियों के लिये है (जैसा कि नूह अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से में मालूम हुआ कि काफ़िर का अन्जाम बुरा और मुसलमानों का अन्जाम अच्छा हुआ, इसी तरह इन काफ़िरों का चन्द दिन का ज़ोर-शोर है फिर आख़िर में ग़लबा हक़ ही को होगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः हूद की ज़िक्र हुई इन पाँच आयतों में तूफ़ाने नूह का बाक़ी क़िस्सा और उससे संबन्धित हिदायतें बयान हुई हैं।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम का बेटा किनआ़न जब अपने वालिद साहिब की नसीहत और दावत के बावजूद कश्ती में सवार न हुआ तो उसको तूफ़ान की मौज में मुब्तला देखकर बाप की शफ़क़त ने एक दूसरा रास्ता इख़्तियार किया कि अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त की बारगाह में अ़र्ज़ किया कि आपने मुझसे वायदा फ़रमाया है कि मेरे घर वालों को तूफ़ान से बचायेंगे और बिला शुब्हा आपका वायदा हक़ व सही है, मगर सूरतेहाल यह है कि मेरा बेटा जो मेरे घर वालों में दाख़िल है वह तूफ़ान की भेंट चढ़ रहा है और आप तो अह्कमुल-हाकिमीन हैं, हर चीज़ आपकी क़ुदरत में है, अब भी उसको तूफ़ान से बचा सकते हैं।

दूसरी आयत में हक़ तआ़ला की तरफ़ से इसके जवाब में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को तंबीह की गयी कि यह लड़का आपके घर वालों में दाख़िल नहीं रहा, क्योंकि इसका अ़मल अच्छा नहीं बल्कि तबाही वाला है, इसलिये आपको नहीं चाहिये कि इस हक़ीक़ते हाल से बेख़बर रहकर मुझसे कोई सवाल करें। हम तुम्हें नसीहत करते हैं कि नादानों में दाख़िल न हो जाओ।

हक़ तआ़ला के इस इरशाद से दो बातें मालूम हुईं- अव्वल यह कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को इस बेटे के कुफ़्र का पूरा हाल मालूम न था, उसके निफ़ाक़ की वजह से वह उसको मुसलमान ही जानते थे, इसी लिये उसको अपने घर वालों में का एक फ़र्द क़रार देकर तूफ़ान से बचाने की दुआ़ कर बैठे, वरना अगर उनको असल हक़ीक़त मालूम होती तो ऐसी दुआ़ न करते, क्योंकि उनको स्पष्ट तौर पर पहले ही यह हिदायत दे दी गयी थी कि जब तूफ़ान आ जाये तो फिर आप उन नाफ़रमानों में से किसी के मुताल्लिक़ कोई सिफ़ारिश की गुफ़्तगू न फ़रमायें, जैसा कि पिछली आयतों में गुज़र चुका है:

وَلَا تُخَاطِبْنِىْ فِى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا، اِنَّهُمْ مُّغْرَقُوْنَ٥

इस साफ़ व स्पष्ट हुक्म के बाद नामुम्किन था कि पैग़म्बरे ख़ुदा इसके उल्लंघन की जुर्रत करते, सिवाय उस संदेह व गुमान के जिसको ऊपर ख़ुलासा-ए-तफ़सीर में लिया गया है, कि इस दुआ़ का हासिल उस बेटे के मोमिन हो जाने की दुआ़ है, यह नहीं कि उसके मौजूदा हाल में उसको तूफ़ान से बचाया जाये। लेकिन हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की उसके कुफ़्र से अज्ञानता और उसकी बिना पर निजात की दुआ़ को भी हक़ तआ़ला ने सही उज़्र क़रार नहीं दिया और इसी लिये तंबीह की गयी कि बग़ैर इल्म के ऐसी दुआ़ क्यों की, और यह पैग़म्बराना शान की एक ऐसी चूक है जिसको हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम उस वक़्त भी अपने उज़्र में पेश करेंगे जब मेहशर में पूरी मख़्लूक़े ख़ुदा आप से शफ़ाअ़त करने की दरख़्वास्त करेगी तो वह फ़रमायेंगे कि मुझसे ऐसी ख़ता और चूक हो चुकी है इसलिये मैं शफ़ाअ़त की जुर्रत नहीं कर सकता।

काफ़िर और ज़ालिम के लिये दुआ़ जायज़ नहीं

इससे एक मसला यह भी मालूम हुआ कि दुआ़ करने के लिये यह ज़रूरी है कि दुआ़ करने वाला पहले यह मालूम कर ले कि जिस काम की दुआ़ कर रहा है वह जायज़ व हलाल है या नहीं, संदिग्ध हालत में दुआ़ करने से मना फ़रमाया गया है। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में क़ाज़ी बैज़ावी के हवाले से नक़ल किया है कि जब इस आयत से संदिग्ध हालत वाले के लिये दुआ़ करने की मनाही मालूम हुई तो जिस मामले का नाजायज़ व हराम होना मालूम हो उसके लिये दुआ़ का नाजायज़ होना अच्छी तरह साबित हो गया।

इससे मालूम हुआ कि आजकल के बुज़ुर्गों और पीरों में जो यह आ़म रिवाज हो गया है कि जो शख़्स किसी दुआ़ के लिये आया उसके वास्ते हाथ उठा दिये और दुआ़ कर दी, हालाँकि अक्सर उनको यह भी मालूम होता है कि जिस मुक़द्दमे के लिये वह दुआ़ करा रहा है उसमें वह ख़ुद नाहक़ पर है या ज़ालिम है, या किसी ऐसे मक़सद के लिये दुआ़ करा रहा है जो उसके लिये हलाल नहीं, कोई ऐसी नौकरी और पद है जिसमें यह हराम में मुब्तला होगा या किसी का हक़ मारकर अपने मक़सद में कामयाब हो सकेगा।

ऐसी दुआ़यें हालत मालूम होने की सूरत में तो हराम व नाजायज़ हैं ही, अगर हालत संदिग्ध

भी हो तो असल हक़ीक़त और मामले के जायज़ होने का इल्म हासिल किये बग़ैर दुआ के लिये हाथ उठाना और शुरूआत करना भी मुनासिब नहीं।

मोमिन व काफ़िर में बिरादराना रिश्ता नहीं हो सकता

मोमिन व काफ़िर में भाईचारे का रिश्ता नहीं हो सकता, वतनी या नसबी बुनियाद पर क़ौमियत की तामीर इस्लामी उसूल से बग़ावत है।

दूसरा मसला इससे यह मालूम हुआ कि मोमिन और काफ़िर के बीच अगरचे रिश्तेदारी का संबन्ध हो मगर दीनी और सामूहिक मामलात में उस रिश्तेदारी का कोई असर नहीं होगा। कोई शख़्स कितना ही ऊँचे ख़ानदान व नसब वाला हो, कितने ही बड़े बुज़ुर्ग की औलाद हो, यहाँ तक कि तमाम अम्बिया के सरदार हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की औलाद में दाख़िल होने का सम्मान रखता हो, अगर वह मोमिन नहीं है तो दीनी मामलात में उसके इस ऊँचे नसब और नबी-ए-पाक से नसबी रिश्ते का भी कोई लिहाज़ न किया जायेगा। तमाम दीनी मामलात में काम का मदार ईमान और नेकी व परहेज़गारी पर है, जो नेक व मुत्तक़ी है वह अपना है, जो ऐसा नहीं वह बेगाना है:

हज़ार ख़ेश कि बेगाना अज़ ख़ुदा बाशद
फ़िदा-ए-यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि ख़ुदा तआ़ला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व क़ुरबान हैं जो कि अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदार है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

अगर दीनी मामलात में भी इन रिश्तेदारियों की रियायत होती तो बदर व उहुद के मैदानों में भाई की तलवार भाई पर न चलती। बदर व उहुद और अहज़ाब की लड़ाईयाँ तो सब की सब एक ही ख़ानदानों के अफ़राद के बीच पेश आई हैं, जिसने स्पष्ट कर दिया कि इस्लाम क़ौमियत और बिरादरी नसबी ताल्लुक़ात या वतनी और भाषाई एकताओं पर क़ायम नहीं होती बल्कि ईमान व अ़मल पर क़ायम होती और घूमती है। ईमान वाले चाहे किसी मुल्क के रहने वाले और किसी ख़ानदान के अफ़राद और कोई भाषा बोलने वाले हों सब एक क़ौम और एक बिरादरी हैं:

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ اِخْوَةٌ.

का यही मतलब है। और जो ईमान व नेक अ़मल से मेहरूम हैं वे इस्लामी बिरादरी के फ़र्द नहीं। क़ुरआने करीम ने हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम की ज़बान से इस हक़ीक़त को बहुत स्पष्ट अलफ़ाज़ में बयान कर दिया है। फ़रमायाः

اِنَّا بُرَءٰٓؤُا مِنْكُمْ وَمِمَّا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ.

यानी हम तुमसे भी बरी हैं और तुम्हारे माबूदों से भी।

इस मसले में अहक़र (यानी इस किताब के लेखक) ने दीनी मामलात की क़ैद इसलिये लगाई है कि दुनियावी मामलात में अच्छे बर्ताव, अच्छे अख़्लाक़ और एहसान व करम का सुलूक

करना अलग चीज़ है, वह जो नेक न हो उससे भी जायज़ बल्कि पसन्दीदा और सवाब है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का अ़मली नमूना और ग़ैर-मुस्लिमों के साथ एहसान व सुलूक के बेशुमार वाक़िआ़त इस पर सुबूत हैं।

आजकल जो वतनी और भाषायी या रंगभेदी बुनियादों पर क़ौमियत की तामीर की जाती है, अ़रब बिरादरी एक क़ौम, हिन्दी, सिन्धि दूसरी क़ौम क़रार दी जाती है, यह क़ुरआन व सुन्नत के ख़िलाफ़ और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के उसूले सियासत से एक तरह से बग़ावत करने के बराबर है।

तीसरी आयत में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ से जो माज़िरत पेश हुई उसका ज़िक्र है। जिसका ख़ुलासा अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ रुजू व प्रार्थना और ग़लत कामों से बचने के लिये अल्लाह तआ़ला ही की पनाह लेने की दुआ़ और फिर पहले हुई चूक और ख़ता की माफ़ी और मग़फ़िरत व रहमत की दरख़्वास्त है।

इससे मालूम हुआ कि इनसान से अगर कोई ख़ता हो जाये तो आईन्दा उससे बचने के लिये तन्हा अपने अ़ज़्म व इरादे पर भरोसा न करे बल्कि अल्लाह तआ़ला से पनाह और यह दुआ़ माँगे कि या अल्लाह! आप ही मुझे ख़ताओं और गुनाहों से बचा सकते हैं।

चौथी आयत में तूफ़ान के क़िस्से का ख़ात्मा इस तरह बयान फ़रमाया है कि जब तूफ़ान ख़त्म हो चुका और हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती जूदी पहाड़ पर ठहर गयी, और ज़मीन का पानी ज़मीन ने निगल लिया और आसमान का बाक़ी बचा पानी नहरों, दरियाओं की शक्ल में सुरक्षित हो गया, जिसके नतीजे में ज़मीन इनसानों के रहने के क़ाबिल हो गयी तो हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम से कहा गया कि अब आप पहाड़ से ज़मीन पर उतरिये, और कोई फ़िक्र न कीजिये क्योंकि आपके साथ हमारी तरफ़ से सलामती और बरकतें होंगी, यानी आफ़तों और मुसीबतों से सलामती और माल व औलाद में तरक़्क़ी व बरकत होगी।

इस इरशाद के मुताबिक़ तूफ़ान के बाद दुनिया में सारी इनसानी आबादी हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद है। क़ुरआने करीम ने एक दूसरी जगह फ़रमाया है:

وَجَعَلْنَا ذُرِّيَّتَهُ هُمُ الْبٰقِيْنَ○

यानी इस वाक़िए के बाद दुनिया में बाक़ी रहने वाली सब क़ौमें सिर्फ़ नूह अ़लैहिस्सलाम ही की नस्ल व औलाद होंगी। इसी लिये हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को इतिहासकारों ने दूसरे आदम का नाम दिया है।

फिर यह सलामती व बरकत का वायदा जो हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम से किया गया है सिर्फ़ उनकी ज़ात तक सीमित नहीं बल्कि फ़रमाया गया:

وَعَلٰٓى اُمَمٍ مِّمَّنْ مَّعَكَ.

यानी जो उम्मतें और जमाअ़तें आपके साथ कश्ती में सवार हैं उन पर भी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से सलामती और बरकत नाज़िल होगी। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के साथ कश्ती में

सवार होने वालों को आयत में उमम (उम्मतों और क़ौमों) के लफ़्ज़ से ताबीर किया है जो 'उम्मत' की जमा है, जिसका मतलब यह है कि ये कश्ती में सवार होने वाले विभिन्न क़ौमों और उम्मतों पर मुश्तमिल थे, हालाँकि पहले मालूम हो चुका है कि कश्ती में सवार होने वाले ज़्यादातर हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के ख़ानदान के लोग थे और सिर्फ़ बहुत थोड़े से दूसरे मोमिन भी थे, तो उन लोगों को विभिन्न और अनेक उम्मतें और क़ौमें इस लिहाज़ से फ़रमाया गया है कि उनकी आने वाली नस्लों में विभिन्न उम्मतें और क़ौमें होंगी। इससे मालूम हुआ कि 'उ-ममिम् मिम्मम् म-अ़-क' के अलफ़ाज़ में वो तमाम इनसानी नस्ल दाख़िल है जो क़ियामत तक पैदा होगी।

इसी लिये इसकी ज़रूरत पड़ी कि सलामती व बरकत के मज़मून को ज़रा विस्तार से बयान किया जाये, क्योंकि क़ियामत तक आने वाली इनसानी नस्ल में तो मोमिन भी होंगे काफ़िर भी, मोमिन के लिये तो सलामती व बरकत अपने आ़म मायने के एतिबार से दुरुस्त है कि दुनिया में भी उनको सलामती व बरकत नसीब होगी, आख़िरत में भी, लेकिन इसी नस्ल में जो काफ़िर होंगे वे तो जहन्नम के हमेशा के अ़ज़ाब में मुब्तला होंगे, उनको सलामती व बरकत का महल क़रार देना किस तरह सही होगा, इसलिये आयत के आख़िर में फ़रमा दियाः

وَاُمَمٌ سَنُمَتِّعُهُمْ ثُمَّ يَمَسُّهُمْ مِّنَّا عَذَابٌ اَلِيْمٌ ○

यानी दुनिया की सलामती व बरकत तो अल्लाह तआ़ला का आ़म दस्तरख़्वान है जिससे दोस्त दुश्मन सभी खाते पीते हैं। इसमें वे लोग भी शरीक होंगे जो नूह अ़लैहिस्सलाम की औलाद में कुफ़्र इख़्तियार करेंगे, लेकिन आख़िरत की निजात व कामयाबी यह सिर्फ़ मोमिनों के लिये मख़्सूस होगी, काफ़िर को उसके नेक आमाल का बदला दुनिया ही में दे-दिलाकर फ़ारिग़ कर दिया जायेगा, आख़िरत में उसके लिये सिवाय अ़ज़ाब के कुछ न होगा।

तूफ़ान-ए-नूह की ये तफ़सीली ख़बरें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वही के ज़रिये मालूम करके अपनी क़ौम को सुनायीं तो यह वाक़िआ़ ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चा नबी होने की एक गवाही और सुबूत बन गया। इस पर सचेत करने के लिये पाँचवीं आयत में इरशाद फ़रमाया कि नूह अ़लैहिस्सलाम और उनके तूफ़ान के वाक़िआ़त ये ग़ैब की ख़बरें हैं जिनको न आप पहले से जानते थे और न आपकी क़ौम यानी अ़रब वाले इससे वाक़िफ़ थे, आपने उनको बतलाया तो इसका रास्ता सिवाय इसके क्या हो सकता है कि अल्लाह तआ़ला ही ने वही (अपनी तरफ़ से भेजे हुए पैग़ाम) के ज़रिये आपको बतलाया है। क्योंकि अगर आपकी क़ौम के लोग लिखे-पढ़े और दुनिया के इतिहास से जानकारी रखने वाले होते तो यह ख़्याल भी हो सकता था कि आपने उन लोगों से सुनकर ये वाक़िआ़त बयान कर दिये हैं, लेकिन जबकि पूरी क़ौम भी इन वाक़िआ़त से बेख़बर थी, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तालीम हासिल करने के लिये कभी किसी दूसरे मुल्क में तशरीफ़ नहीं ले गये तो इस ख़बर का रास्ता सिर्फ़ वही मुतैयन हो गया जो नबी के सच्चा पैग़म्बर होने की स्पष्ट दलील है।

आयत के आख़िर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली देने के लिये

फ़रमाया कि आपकी नुबुव्वत व रिसालत पर सूरज से ज़्यादा रोशन दलीलों के होते हुए भी अगर कुछ बदबख़्त नहीं मानते और आप से झगड़ा करते हैं तो आपको अपने से पहले पैग़म्बर नूह अलैहिस्सलाम का नमूना देखना चाहिये कि उन्होंने एक हज़ार साल की लम्बी उम्र सारी इन्हीं तकलीफ़ों और मुसीबतों में गुज़ार दी। तो जिस तरह उन्होंने सब्र किया आप भी ऐसे ही सब्र से काम लें, क्योंकि यह तय है कि अन्जाम के एतिबार से कामयाबी मुत्तक़ी लोगों को ही मिलेगी।

وَإِلَىٰ عَادٍ أَخَاهُمْ هُودًا ۚ قَالَ يَٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللَّهَ مَا لَكُم مِّنْ إِلَٰهٍ غَيْرُهُ ۖ إِنْ أَنتُمْ إِلَّا
مُفْتَرُونَ ﴿٥٠﴾ يَٰقَوْمِ لَا أَسْأَلُكُمْ عَلَيْهِ أَجْرًا ۖ إِنْ أَجْرِيَ إِلَّا عَلَى الَّذِي فَطَرَنِي ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٥١﴾ وَيَٰقَوْمِ
اسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوبُوا إِلَيْهِ يُرْسِلِ السَّمَاءَ عَلَيْكُم مِّدْرَارًا وَيَزِدْكُمْ قُوَّةً إِلَىٰ قُوَّتِكُمْ وَلَا تَتَوَلَّوْا
مُجْرِمِينَ ﴿٥٢﴾ قَالُوا يَٰهُودُ مَا جِئْتَنَا بِبَيِّنَةٍ وَمَا نَحْنُ بِتَارِكِي آلِهَتِنَا عَن قَوْلِكَ وَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ ﴿٥٣﴾
إِن نَّقُولُ إِلَّا اعْتَرَاكَ بَعْضُ آلِهَتِنَا بِسُوءٍ ۗ قَالَ إِنِّي أُشْهِدُ اللَّهَ وَاشْهَدُوا أَنِّي بَرِيءٌ مِّمَّا
تُشْرِكُونَ ﴿٥٤﴾ مِن دُونِهِ ۖ فَكِيدُونِي جَمِيعًا ثُمَّ لَا تُنظِرُونِ ﴿٥٥﴾ إِنِّي تَوَكَّلْتُ عَلَى اللَّهِ رَبِّي وَرَبِّكُم ۚ
مَّا مِن دَابَّةٍ إِلَّا هُوَ آخِذٌ بِنَاصِيَتِهَا ۚ إِنَّ رَبِّي عَلَىٰ صِرَاطٍ مُّسْتَقِيمٍ ﴿٥٦﴾ فَإِن تَوَلَّوْا فَقَدْ أَبْلَغْتُكُم
مَّا أُرْسِلْتُ بِهِ إِلَيْكُمْ ۚ وَيَسْتَخْلِفُ رَبِّي قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّونَهُ شَيْئًا ۚ إِنَّ رَبِّي عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ حَفِيظٌ ﴿٥٧﴾
وَلَمَّا جَاءَ أَمْرُنَا نَجَّيْنَا هُودًا وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِّنَّا وَنَجَّيْنَاهُم مِّنْ عَذَابٍ غَلِيظٍ ﴿٥٨﴾
وَتِلْكَ عَادٌ ۖ جَحَدُوا بِآيَاتِ رَبِّهِمْ وَعَصَوْا رُسُلَهُ وَاتَّبَعُوا أَمْرَ كُلِّ جَبَّارٍ عَنِيدٍ ﴿٥٩﴾ وَأُتْبِعُوا فِي هَٰذِهِ
الدُّنْيَا لَعْنَةً وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ ۗ أَلَا إِنَّ عَادًا كَفَرُوا رَبَّهُمْ ۗ أَلَا بُعْدًا لِّعَادٍ قَوْمِ هُودٍ ﴿٦٠﴾ وَإِلَىٰ ثَمُودَ ع
أَخَاهُمْ صَالِحًا ۚ قَالَ يَٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللَّهَ مَا لَكُم مِّنْ إِلَٰهٍ غَيْرُهُ ۖ هُوَ أَنشَأَكُم مِّنَ الْأَرْضِ وَ
اسْتَعْمَرَكُمْ فِيهَا فَاسْتَغْفِرُوهُ ثُمَّ تُوبُوا إِلَيْهِ ۚ إِنَّ رَبِّي قَرِيبٌ مُّجِيبٌ ﴿٦١﴾ قَالُوا يَٰصَالِحُ قَدْ كُنتَ
فِينَا مَرْجُوًّا قَبْلَ هَٰذَا ۖ أَتَنْهَانَا أَن نَّعْبُدَ مَا يَعْبُدُ آبَاؤُنَا وَإِنَّنَا لَفِي شَكٍّ مِّمَّا تَدْعُونَا
إِلَيْهِ مُرِيبٍ ﴿٦٢﴾ قَالَ يَٰقَوْمِ أَرَأَيْتُمْ إِن كُنتُ عَلَىٰ بَيِّنَةٍ مِّن رَّبِّي وَآتَانِي مِنْهُ رَحْمَةً فَمَن
يَنصُرُنِي مِنَ اللَّهِ إِنْ عَصَيْتُهُ ۖ فَمَا تَزِيدُونَنِي غَيْرَ تَخْسِيرٍ ﴿٦٣﴾ وَيَٰقَوْمِ هَٰذِهِ نَاقَةُ اللَّهِ لَكُمْ
آيَةً فَذَرُوهَا تَأْكُلْ فِي أَرْضِ اللَّهِ وَلَا تَمَسُّوهَا بِسُوءٍ فَيَأْخُذَكُمْ عَذَابٌ قَرِيبٌ ﴿٦٤﴾ فَعَقَرُوهَا
فَقَالَ تَمَتَّعُوا فِي دَارِكُمْ ثَلَاثَةَ أَيَّامٍ ۖ ذَٰلِكَ وَعْدٌ غَيْرُ مَكْذُوبٍ ﴿٦٥﴾ فَلَمَّا جَاءَ أَمْرُنَا نَجَّيْنَا
صَالِحًا وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِّنَّا وَمِنْ خِزْيِ يَوْمِئِذٍ ۗ إِنَّ رَبَّكَ هُوَ الْقَوِيُّ الْعَزِيزُ ﴿٦٦﴾

وَاَخَذَ الَّذِيْنَ ظَلَمُوا الصَّيْحَةُ فَاَصْبَحُوْا فِيْ دِيَارِهِمْ جٰثِمِيْنَ ۙ﴿٦٧﴾ كَاَنْ لَّمْ يَغْنَوْا فِيْهَا ۗ اَلَآ اِنَّ
ثَمُوْدَا۟ كَفَرُوْا رَبَّهُمْ ۗ اَلَا بُعْدًا لِّثَمُوْدَ ﴿٦٨﴾

व इला आदिन् अख़ाहुम् हूदन्, क़ा-ल या क़ौमिअ्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, इन् अन्तुम् इल्ला मुफ़्तरून (50) या क़ौमि ला अस्अलुकुम् अलैहि अज्रन्, इन् अज्रि-य इल्ला अलल्लज़ी फ़-त-रनी, अ-फ़ला तअ्क़िलून (51) व या क़ौमिस्तग़्फ़िरू रब्बकुम् सुम्-म तूबू इलैहि युर्सिलिस्समा-अ अलैकुम् मिद्रारंव्-व यज़िद्कुम् क़ुव्व-तन् इला क़ुव्वतिकुम् व ला त-तवल्लौ मुज्रिमीन (52) क़ालू या हूदु मा जिअ्तना बि-बय्यि-नतिंव्-व मा नह्नु बितारिकी आलि-हतिना अन् क़ौलि-क व मा नह्नु ल-क बिमुअ्मिनीन (53) इन्नक़ूलु इल्लअ्तरा-क बअ्ज़ु आलि-हतिना बिसूइन्, क़ा-ल इन्नी उश्हिदुल्ला-ह वश्हदू अन्नी बरीउम्-मिम्मा तुश्रिकून (54) मिन् दूनिही फ़कीदूनी जमीअ़न् सुम्-म ला तुन्ज़िरून (55) इन्नी तवक्कल्तु

और आद की तरफ़ हमने भेजा उनके भाई हूद को, बोला ऐ क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई तुम्हारा हाकिम नहीं सिवाय उसके, तुम सब झूठ कहते हो। (50) ऐ क़ौम! मैं तुमसे नहीं माँगता इस पर मज़दूरी, मेरी मज़दूरी उसी पर है जिसने मुझको पैदा किया, फिर क्या तुम नहीं समझते? (51) और ऐ क़ौम! गुनाह बख़्शवाओ अपने रब से फिर रुजू करो उसी की तरफ़, छोड़ देगा तुम पर आसमान से धारें और ज़्यादा देगा तुमको ज़ोर पर ज़ोर, और मुँह न मोड़ो गुनाहगार होकर। (52) बोले ऐ हूद! तू हमारे पास कोई सनद लेकर नहीं आया और हम नहीं छोड़ने वाले अपने ठाकुरों (माबूदों) को तेरे कहने से, और हम नहीं तुझको मानने वाले। (53) हम तो यही कहते हैं कि तुझको आसेब पहुँचाया है किसी हमारे ठाकुरों (माबूदों) ने बुरी तरह। बोला मैं गवाह करता हूँ अल्लाह को और तुम गवाह हो कि मैं बेज़ार हूँ उनसे जिनको तुम शरीक करते हो (54) उसके सिवा, सो बुराई करो मेरे हक़ में तुम सब मिलकर, फिर मुझको मोहलत न दो। (55) मैंने भरोसा किया अल्लाह पर जो

अ़लल्लाहि रब्बी व रब्बिकुम्, मा मिन् दाब्बतिन् इल्ला हु-व आख़िज़ुम् बिनासि-यतिहा, इन्-न रब्बी अ़ला सिरातिम् मुस्तक़ीम (56) फ़-इन् तवल्लौ फ़-क़द् अब्लग़्तुकुम् मा उर्सिल्तु बिही इलैकुम्, व यस्तख़्लिफ़ु रब्बी क़ौमन् ग़ैरकुम् व ला तज़ुर्रूनहू शैअन्, इन्-न रब्बी अ़ला कुल्लि शैइन् हफ़ीज़ (57) व लम्मा जा-अ अम्रुना नज्जैना हूदंव्-वल्लज़ी-न आमनू म-अ़हू बिरह्मतिम्-मिन्ना व नज्जैनाहुम् मिन् अ़ज़ाबिन् ग़लीज़ (58) व तिल्-क आ़दुन्, ज-हदू बिआयाति रब्बिहिम् व अ़सौ रुसु-लहू वत्त-बअ़ू अम्-र कुल्लि जब्बारिन् अ़नीद (59) व उत्बिअ़ू फ़ी हाज़िहिद्दुन्या लअ़्नतंव्-व यौमल्-क़ियामति, अला इन्-न आ़दन् क-फ़रू रब्बहुम्, अला बुअ़्दल्-लिआ़दिन् क़ौमि हूद (60) ✿

रब है मेरा और तुम्हारा, कोई नहीं ज़मीन पर पाँव धरने वाला मगर अल्लाह के हाथ में है उसकी चोटी, बेशक मेरा रब है सीधी राह पर। (56) फिर अगर तुम मुँह फेरोगे तो मैं पहुँचा चुका तुमको जो मेरे हाथ भेजा था तुम्हारी तरफ़, और क़ायम-मक़ाम करेगा मेरा रब कोई और लोग, और न बिगाड़ सकोगे अल्लाह का कुछ, तहक़ीक़ कि मेरा रब है हर चीज़ पर निगाहबान। (57) और जब पहुँचा हमारा हुक्म, बचा दिया हमने हूद को और जो लोग ईमान लाये थे उसके साथ अपनी रहमत से, और बचा दिया उनको एक भारी अ़ज़ाब से। (58) और ये थे आ़द कि इनकारी हुए अपने रब की बातों से और न माना उसके रसूलों को, और माना हुक्म उनका जो सरकश थे मुख़ालिफ़। (59) और पीछे से आई उनको इस दुनिया में फटकार और क़ियामत के दिन भी, सुन लो! आ़द मुन्किर हुए अपने रब से, सुन लो! फटकार है आ़द को जो क़ौम थी हूद की। (60) ✿

व इला समू-द अख़ाहुम् सालिहन्। क़ा-ल या क़ौमिअ़्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, हु-व अन्शा-अकुम् मिनल्-अर्ज़ि वस्तअ़्म-रकुम् फ़ीहा फ़स्तग़्फ़िरूहु

और समूद की तरफ़ भेजा उनका भाई सालेह। बोला ऐ क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई हाकिम नहीं तुम्हारा उसके सिवा, उसी ने बनाया तुमको ज़मीन से और बसाया तुमको इसमें, सो गुनाह

सुम्-म तूबू इलैहि, इन्-न रब्बी क़रीबुम् मुजीब (61) क़ालू या सालिहु क़द् कुन्-त फ़ीना मर्जुव्वन् क़ब्-ल हाज़ा अतन्हाना अन्नअ्बु-द मा यअ्बुदु आबाउना व इन्नना लफ़ी शक्किम् मिम्मा तद्अूना इलैहि मुरीब (62) क़ा-ल या क़ौमि अ-रऐतुम् इन् कुन्तु अ़ला बय्यि-नतिम् मिर्रब्बी व आतानी मिन्हु रह्म-तन् फ़-मंय्यन्सुरुनी मिनल्लाहि इन् अ़सैतुहू, फ़मा तज़ीदू-ननी ग़ै-र तख़्सीर (63) व या क़ौमि हाज़िही नाक़तुल्लाहि लकुम् आयतन् फ़-ज़रूहा तअ्कुल् फ़ी अर्ज़िल्लाहि व ला तमस्सूहा बिसूइन् फ़-यअ्ख़ु-ज़कुम् अज़ाबुन् क़रीब (64) फ़-अ़-क़रूहा फ़क़ा-ल तमत्तअू फ़ी दारिकुम् सलास-त अय्यामिन्, ज़ालि-क वअ्दुन् ग़ैरु मक्ज़ूब (65) फ़-लम्मा जा-अ अम्रुना नज्जैना सालिहंव्-वल्लज़ी-न आमनू म-अ़हू बिरह्मतिम्-मिन्ना व मिन् ख़िज़्यि यौमिइज़िन्, इन्-न रब्ब-क हुवल् क़विय्युल्-अ़ज़ीज़ (66) व अ-ख़ज़ल्लज़ी-न ज़-लमुस्सैहतु

बख़्शवाओ उससे और रुजू करो उसकी तरफ़, तहक़ीक़ कि मेरा रब नज़दीक है क़ुबूल करने वाला। (61) बोले ऐ सालेह! तुझसे तो हमको उम्मीद थी इससे पहले, क्या तू हमको मना करता है कि पूजा करें जिनकी पूजा करते रहे हमारे बाप दादे, और हमको तो शुब्हा है उसमें जिसकी तरफ़ तू बुलाता है ऐसा कि दिल नहीं मानता। (62) बोला ऐ क़ौम! भला देखो तो अगर मुझको समझ मिल गई अपने रब की तरफ़ से और उसने मुझको दी रहमत अपनी तरफ़ से, फिर कौन बचाये मुझको उससे अगर उसकी नाफ़रमानी करूँ, सो तुम कुछ नहीं बढ़ाते मेरा सिवाय नुक़सान के। (63) और ऐ क़ौम! यह ऊँटनी है अल्लाह की तुम्हारे लिये निशानी, सो छोड़ दो इसको खाती फिरे अल्लाह की ज़मीन में, और मत हाथ लगाओ बुरी तरह, फिर आ पकड़ेगा तुम को अज़ाब बहुत जल्द। (64) फिर उसके पाँव काटे तब कहा फ़ायदा उठा लो अपने घरों में तीन दिन, यह वादा है जो झूठा न होगा। (65) फिर जब पहुँचा हमारा हुक्म बचा दिया हमने सालेह को और जो ईमान लाये उसके साथ अपनी रहमत से, और उस दिन की रुस्वाई से, बेशक तेरा रब वही है ज़ोर वाला ज़बरदस्त। (66) और पकड़ लिया उन ज़ालिमों को हौलनाक आवाज़ ने, फिर

फ़-अस्बहू फ़ी दियारिहिम् जासिमीन (67) कअल्लम् यग़्नौ फ़ीहा, अला इन्-न समू-द क-फ़रू रब्बहुम्, अला बुअ़्दल्-लि-समूद (68) ✿	सुबह को रह गये अपने घरों में औंधे पड़े हुए (67) जैसे कभी रहे ही न थे वहाँ। सुन लो! समूद मुन्किर हुए अपने रब से, सुन लो! फटकार है समूद को। (68) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने आ़द (क़ौम) की तरफ़ उनके (बिरादरी या वतन के) भाई (हज़रत) हूद (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (अपनी क़ौम से) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के क़ाबिल) नहीं, तुम (इस बुत-परस्ती के एतिक़ाद में) बिल्कुल झूठ गढ़ने वाले हो (क्योंकि इसका बातिल होना दलील से साबित है)। ऐ मेरी क़ौम! (मेरी नुबुव्वत दलीलों से साबित है, इसकी मज़ीद ताईद इससे भी होती है कि) मैं तुमसे इस (तब्लीग़) पर कुछ मुआ़वज़ा नहीं माँगता, मेरा मुआ़वज़ा तो सिर्फ़ उस (अल्लाह) के ज़िम्मे है जिसने मुझको (बिल्कुल अ़दम से) पैदा किया, फिर क्या तुम (इसको) नहीं समझते (कि नुबुव्वत की दलील मौजूद है और उसके ख़िलाफ़ कोई वजह शुब्हे की नहीं, फिर नुबुव्वत में शुब्हे की क्या वजह)। और ऐ मेरी क़ौम! तुम अपने गुनाह (कुफ़्र व शिर्क वग़ैरह) अपने रब से माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ और) फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ़ (इबादत से) मुतवज्जह रहो, (यानी नेक अ़मल करो, पस ईमान और नेक अ़मल की बरकत से) वह तुम पर ख़ूब बारिश बरसायेगा (दुर्रे मन्सूर में है कि क़ौम-ए-आ़द पर तीन साल लगातार सूखा पड़ा था और वैसे बारिश ख़ुद भी मतलूब है) और (ईमान व अ़मल की बरकत से) तुमको और क़ुव्वत देकर तुम्हारी (मौजूदा) क़ुव्वत में तरक़्क़ी कर देगा (पस ईमान ले आओ) और मुजरिम रहकर (ईमान से) मुँह मत फेरो।

उन लोगों ने जवाब दिया कि ऐ हूद! आपने हमारे सामने (अल्लाह की तरफ़ से अपने रसूल होने की) कोई दलील तो पेश नहीं की, (यह क़ौल उनका दुश्मनी और मुख़ालफ़त के तौर पर था) और हम आपके कहने से तो अपने माबूदों को छोड़ने वाले नहीं, और हम किसी तरह आपका यक़ीन करने वाले नहीं। (और) हमारा क़ौल तो यह है कि हमारे माबूदों में से किसी ने आपको किसी ख़राबी में (जैसे जुनून वग़ैरह में) मुब्तला कर दिया है (चूँकि आपने उनकी शान में गुस्ताख़ी की उन्होंने पागल कर दिया, इसलिये ऐसी बहकी-बहकी बातें करते हो कि ख़ुदा एक है, मैं नबी हूँ)। हूद (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (तुम जो कहते हो कि किसी बुत ने मुझको बावला कर दिया है तो) मैं (ऐलानिया) अल्लाह को गवाह करता हूँ और तुम भी (सुन लो और) गवाह रहो कि मैं उन चीज़ों से (बिल्कुल) बेज़ार हूँ जिनको तुम ख़ुदा के सिवा (इबादत में) शरीक क़रार देते हो, सो (मेरी दुश्मनी अव्वल तो पहले से ही ज़ाहिर है और अब इस बरी होने

के ऐलान से और ज़्यादा मज़बूत हो गयी, तो अगर उन बुतों में कुछ क़ुव्वत है तो) तुम (और वो) सब मिलकर मेरे साथ (हर तरह का) दाव-घात कर लो (और) फिर मुझको ज़रा भी मोहलत न दो (और कोई कसर न छोड़ो। देखूँ तो सही मेरा क्या कर लेंगे, और जब वो मय तुम्हारे कुछ नहीं कर सकते तो अकेले तो क्या ख़ाक कर सकते हैं। और मैं यह दावा इसलिये दिल खोलकर कर रहा हूँ कि बुत तो पूरी तरह आजिज़ हैं उनसे तो इसलिये नहीं डरता, रह गये तुम, सो अगरचे तुमको कुछ क़ुदरत व ताक़त हासिल है लेकिन मैं तुमसे इसलिये नहीं डरता कि) मैंने अल्लाह पर भरोसा कर लिया है, जो मेरा भी मालिक है और तुम्हारा भी मालिक है, जितने (रू-ए-ज़मीन पर) चलने वाले हैं सब की चोटी उसने पकड़ रखी है (यानी सब उसके क़ब्ज़े में हैं, बिना उसके हुक्म के कोई कान नहीं हिला सकता, इसलिये मैं तुमसे भी नहीं डरता। और इस तक़रीर से एक नया मोजिज़ा भी ज़ाहिर हो गया कि एक शख़्स बिल्कुल अकेला ऐसे बड़े-बड़े दबंग और ताक़तवर लोगों से ऐसी मुख़ालिफ़ाना बातें करे और वे उसका कुछ न कर सकें, वे जो कहते थे कि तुमने हमारे सामने कोई दलील पेश नहीं की। इससे इसका भी एक जवाब हो गया कि अगर पहले मोजिज़े को भी एक तरफ़ रखें तो लो यह दूसरा मोजिज़ा है, पस नुबुव्वत पर दलील क़ायम हो गयी। और इसमें जो शुब्हे व संदेह का मन्शा था कि हमारे कुछ माबूदों ने तुम पर अपना असर डालकर तुमको बावला कर दिया है, इसका भी जवाब हो गया। पस नुबुव्वत साबित हो गयी। इससे तौहीद (अल्लाह के एक और अकेला माबूद होने) का वजूब भी साबित हो गया, जिसकी तरफ़ मैं दावा करता हूँ। और तुम्हारा कहना कि हम तो तेरे कहने से अपने माबूदों को छोड़ने वाले नहीं, बातिल हो गया। और सिराते मुस्तक़ीम यानी सीधा रास्ता यही है, और) यक़ीनन मेरा रब सीधे रास्ते पर (चलने से मिलता) है (पस तुम भी इस सीधे रास्ते को इख़्तियार करो ताकि मक़बूल और ख़ास हो जाओ)।

फिर अगर (इस स्पष्ट और दिल में उतर जाने वाले बयान के बाद भी) तुम (हक़ रास्ते से) फिरे रहोगे तो मैं तो (माज़ूर समझा जाऊँगा, क्योंकि) जो पैग़ाम देकर मुझको भेजा गया है वह तुमको पहुँचा चुका हूँ (लेकिन तुम्हारी कमबख़्ती आयेगी कि तुमको अल्लाह तआ़ला हलाक कर देगा) और तुम्हारी जगह मेरा रब दूसरे लोगों को (ज़मीन में आबाद कर) देगा (सो तुम इस मुँह फेरने और कुफ़्र में अपना ही नुक़सान कर रहे हो) और उसका तुम कुछ नुक़सान नहीं कर रहे हो (और अगर इस हलाकत में किसी को यह शुब्हा हो कि ख़ुदा को क्या ख़बर कि कौन क्या कर रहा है तो ख़ूब समझ लो कि) यक़ीनन मेरा रब हर चीज़ की हिफ़ाज़त और देखभाल करता है (उसको सब ख़बर रहती है। ग़र्ज़ कि इन तमाम हुज्जतों पर भी उन लोगों ने न माना) और (अ़ज़ाब का सामान शुरू हुआ। सो) जब (अ़ज़ाब के लिये) हमारा हुक्म पहुँचा (और हवा के तूफ़ान का अ़ज़ाब नाज़िल हुआ तो) हमने हूद (अ़लैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ ईमान वाले थे उनको अपनी इनायत से (उस अ़ज़ाब से बचा लिया) और उनको एक बहुत ही सख़्त अ़ज़ाब से बचा लिया। (आगे औरों को सीख दिलाने के लिये फ़रमाते हैं) और यह (जिनका ज़िक्र हुआ) आ़द (क़ौम) थी जिन्होंने अपने रब की आयतों (यानी दलीलों और अहकाम) का

इनकार किया और उसके रसूल का कहना न माना, और मुकम्मल तौर पर ऐसे लोगों के कहने पर चलते रहे जो ज़ालिम (और) ज़िद्दी थे। और (इन हरकतों का यह नतीजा हुआ कि) इस दुनिया में भी लानत उनके साथ-साथ रही और कियामत के दिन भी (उनके साथ-साथ रहेगी। चुनाँचे दुनिया में इसका असर तूफ़ान के अ़ज़ाब से हलाक होना था और आख़िरत में हमेशा का अ़ज़ाब होगा) ख़ूब सुन लो आ़द (क़ौम) ने अपने रब के साथ कुफ़्र किया, ख़ूब सुन लो (इस कुफ़्र का ख़मियाज़ा यह हुआ कि दोनों जहान में) रहमत से दूरी हुई आ़द को जो कि हूद (अ़लैहिस्सलाम) की क़ौम थी।

और हमने समूद (क़ौम) के पास उनके भाई सालेह (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (अपनी क़ौम से) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के क़ाबिल) नहीं। (उसका तुम पर यह इनाम है कि) उसने तुमको ज़मीन (के माद्दे) से पैदा किया और उसने तुमको इस (ज़मीन) में आबाद किया (यानी तुमको पैदा करने और बाक़ी रखने की दोनों नेमतें अ़ता फ़रमायीं जिसमें सब नेमतें आ गयीं। जब वह ऐसा नेमतें देने वाला है) तो तुम अपने गुनाह (शिर्क व कुफ़्र वग़ैरह) उससे माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ), फिर (ईमान लाकर) उसकी तरफ़ (इबादत से) मुतवज्जह रहो (यानी नेक अ़मल करो), बेशक मेरा रब (उस शख़्स से) क़रीब है (जो उसकी तरफ़ मुतवज्जह हो और उस शख़्स की दरख़्वास्त और दुआ़) क़ुबूल करने वाला है (जो उससे गुनाह माफ़ कराता है)। वे लोग कहने लगे कि ऐ सालेह! तुम तो इससे पहले हम में होनहार (मालूम होते) थे, (यानी हमको तुमसे उम्मीद थी कि अपनी क़ाबलियत और शान व रुतबे से क़ौम के लिये गर्व और हमारे लिये नाज़ का सामान और हमारे लिये सरपरस्त बनोगे, अफ़सोस इस वक़्त जो बातें कर रहे हो इससे तो सारी उम्मीदें ख़ाक में मिलती नज़र आती हैं) क्या तुम हमको उन चीज़ों की इबादत से मना करते हो जिनकी इबादत हमारे बड़े करते आये हैं (यानी तुम उनसे मना मत करो), और जिस (दीन) की तरफ़ तुम हमको बुला रहे हो (यानी तौहीद) वाक़ई हम तो उसकी तरफ़ से बड़े (भारी) शुब्हे में हैं। जिसने हमको फ़िक्र में डाल रखा है (कि तौहीद का मसला हमारे ख़्याल ही में नहीं आता)।

आपने (जवाब में) फ़रमाया- ऐ मेरी क़ौम! (तुम जो कहते हो कि तुम तौहीद की दावत न दो और बुत-परस्ती से मनाही मत करो तो) (भला) यह तो बताओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (क़ायम) हूँ (जिससे तौहीद साबित है) और उसने मुझको अपनी तरफ़ से रहमत (यानी नुबुव्वत) अ़ता फ़रमाई हो (जिससे उस तौहीद की दावत का मैं पाबन्द और हुक्म दिया हुआ हूँ) सो (इस हालत में) अगर मैं उसका कहना न मानूँ (और तौहीद की दावत को छोड़ दूँ जैसा कि तुम कहते हो) तो (यह बतलाओ कि) फिर मुझको ख़ुदा (के अ़ज़ाब) से कौन बचा लेगा? तुम तो (ऐसा बुरा मश्विरा देकर) सरासर मेरा नुक़सान ही कर रहे हो (यानी अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता मैं इसको क़ुबूल कर लूँ तो सिवाय नुक़सान के और क्या हाथ आयेगा। और चूँकि उन्होंने मोजिज़े की भी रिसालत के सुबूत के लिये दरख़्वास्त की थी इसलिये आपने

फ़रमाया) और ऐ मेरी क़ौम! (तुम जो मोजिज़ा चाहते थे, सो) यह ऊँटनी है अल्लाह की जो तुम्हारे लिये दलील (बनाकर ज़ाहिर की गयी) है। (और इसी लिये अल्लाह की ऊँटनी कहलाई कि अल्लाह की दलील है) सो (इसके अतिरिक्त कि यह मोजिज़ा होने की वजह से मेरी रिसालत पर दलील है, ख़ुद इसके भी कुछ हुक़ूक़ हैं, उन हुक़ूक़ में से यह है कि) इसको छोड़ दो कि अल्लाह की ज़मीन में (घास-चारा) खाती फिरा करे, (इसी तरह अपनी बारी के दिन पानी पीती रहे। जैसा कि एक दूसरी आयत में है) और इसको बुराई (और तकलीफ़ देने) के साथ हाथ भी मत लगाना, कभी तुमको फ़ौरी अ़ज़ाब आ पकड़े (यानी देर न लगे)।

सो उन्होंने (इस हुज्जत पूरी होने के बावजूद) उस (ऊँटनी) को मार डाला, तो सालेह (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि (ख़ैर) तुम अपने घरों में तीन दिन और बसर कर लो (तीन दिन के बाद अ़ज़ाब आता है, और) यह ऐसा वायदा है जिसमें ज़रा झूठ नहीं (क्योंकि यह अल्लाह की तरफ़ से है) सो (तीन दिन गुज़रने के बाद) जब हमारा हुक्म (अ़ज़ाब के लिये) आ पहुँचा, हमने सालेह (अ़लैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ ईमान वाले थे उनको अपनी इनायत से (उस अ़ज़ाब से) बचा लिया। और (उनको कैसी चीज़ से बचा लिया) उस दिन की बड़ी रुस्वाई से बचा लिया (क्योंकि अल्लाह के क़हर में मुब्तला होने से बढ़कर क्या रुस्वाई होगी), बेशक आपका रब ही बड़ी क़ुव्वत वाला, ग़लबे वाला है (जिसको चाहे सज़ा दे दे, जिसको चाहे बचा ले)।

और उन ज़ालिमों को एक नारे "यानी ज़ोर की चीख़" ने आ दबाया (कि वह आवाज़ थी जिब्रीलं अ़लैहिस्सलाम की) जिससे वे अपने घरों में औंधे पड़े रह गये (और उनकी यह हालत हो गयी) जैसे कभी उन घरों में बसे ही न थे। ख़ूब सुन लो! समूद (क़ौम) ने अपने रब के साथ कुफ़्र किया, ख़ूब सुन लो! (उस कुफ़्र का यह ख़मियाज़ा हुआ कि) रहमत से समूद (क़ौम) को दूरी हुई।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई सूरः हूद की पहली ग्यारह आयतों में अल्लाह तआ़ला के मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का ज़िक्र है जिनके नाम से यह सूरत नामित है। इस सूरः में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम से लेकर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम तक क़ुरआने करीम के ख़ास अन्दाज़ में सात अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के वाक़िआ़त बयान हुए हैं, जिनमें इब्रत व नसीहत के ऐसे निशानात मौजूद हैं कि जिस दिल में ज़रा भी ज़िन्दगी और शऊर बाक़ी हो वह उनसे मुतास्सिर हुए बग़ैर नहीं रह सकता। नसीहत व सीख के अ़लावा ईमान और नेक अ़मल के बहुत से उसूल व फ़ुरू (बुनियादी चीज़ें और उनसे निकलने वाले अहकाम) और इनसान के लिये बेहतरीन हिदायतें मौजूद हैं।

क़िस्से और वाक़िआ़त तो इसमें सात पैग़म्बरों के दर्ज हैं मगर सूरत का नाम हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम के नाम से जोड़ा गया है जिससे मालूम होता है कि इसमें हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम

के क़िस्से को ख़ास अहमियत हासिल है।

हज़रत हूद अलैहिस्सलाम को हक् तआ़ला ने आद कौम में नबी बनाकर भेजा। यह क़ौम अपने डीलडोल और क़ुव्वत व बहादुरी के एतिबार से पूरी दुनिया में विशेष और नुमायाँ समझी जाती थी। हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम भी इसी क़ौम के फ़र्द थे, लफ़्ज़ 'अख़ाहुम् हूदन्' में इसी तरफ़ इशारा फ़रमाया गया है, मगर अफ़सोस कि यह इतनी ताक़तवर और बहादुर क़ौम अपनी अ़क्ल व सोच को खो बैठी थी और अपने हाथों से बनाई हुई पत्थरों की मूर्तियों को अपना ख़ुदा व माबूद बना रखा था।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम ने जो दीन की दावत अपनी क़ौम के सामने पेश की उसकी तीन उसूली बातें शुरू की तीन आयतों में बयान हुई हैं:

अव्वल तौहीद की दावत और यह कि अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी को इबादत के लायक़ समझना झूठ और बोहतान है। दूसरे यह कि मैं जो यह तौहीद की दावत लेकर आया हूँ और इसके लिये अपनी ज़िन्दगी को समर्पित कर रखा है, तुम यह तो सोचो समझो कि मैंने यह मशक़्क़त व मेहनत क्यों इख़्तियार कर रखी है, न मैं तुमसे इस ख़िदमत का कोई मुआ़वज़ा माँगता हूँ, न मुझे तुम्हारी तरफ़ से कोई माद्दी फ़ायदा पहुँचता है। अगर मैं इसको अल्लाह तआ़ला का फ़रमान और हक् न समझता तो आख़िर ज़रूरत क्या थी कि तुम्हें दावत देने और तुम्हारी इस्लाह (सुधार) करने में इतनी मेहनत बरदाश्त करता।

वअ़ज़ व नसीहत और दीन की दावत पर उजरत

क़ुरआने करीम ने यह बात तक़रीबन सब ही अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की ज़बान से नक़ल की है कि हम तुमसे अपनी दावत व मेहनत का कोई मुआ़वज़ा (बदला) नहीं माँगते। इससे मालूम होता है कि दावत व तब्लीग़ का अगर मुआ़वज़ा लिया जाये तो दावत असरदार नहीं रहती, जिस पर तजुर्बा गवाह है कि वअ़ज़ व नसीहत पर उजरत लेने वालों की बात सुनने वालों पर असर डालने वाली नहीं होती।

तीसरी बात यह फ़रमाई कि अपनी पिछली ज़िन्दगी में जो कुफ़्र व गुनाह तुम कर चुके हो, अल्लाह तआ़ला से उनकी मग़फ़िरत माँगो और आगे की ज़िन्दगी में उन सब गुनाहों से तौबा करो यानी इसका पुख़्ता इरादा और अ़हद करो कि अब उनके पास न जायेंगे। अगर तुमने यह इस्तिग़फ़ार व तौबा का अ़मल कर लिया तो इसके नतीजे में आख़िरत की हमेशा की कामयाबी तो मिल ही जायेगी, दुनिया में भी इसके बड़े फ़ायदों को अपनी आँखों से देखोगे। एक यह कि तौबा व इस्तिग़फ़ार करने से तुम्हारी क़हत (सूखा पड़ने) की हालत दूर हो जायेगी, वक़्त पर ख़ूब बारिश होगी जिससे तुम्हारे रिज़्क़ में तरक़्क़ी और बढ़ोतरी होगी, दूसरे यह कि तुम्हारी ताक़त व क़ुव्वत बढ़ जायेगी।

यहाँ ताक़त व क़ुव्वत का लफ़्ज़ आ़म है, जिसमें बदनी सेहत व क़ुव्वत भी दाख़िल है और वह ताक़त भी जो माल और औलाद की अधिकता से इनसान को हासिल होती है।

इससे मालूम हुआ कि गुनाहों से तौबा व इस्तिग़फ़ार का ख़ास्सा (विशेषता) यह है कि दुनिया में भी रिज़्क़ में बढ़ोतरी और माल व औलाद में बरकत होती है।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने उनकी दावत का जवाब वही अपनी जाहिलाना रविश से यह दिया कि आपने हमें कोई मोजिज़ा तो दिखलाया नहीं, सिर्फ़ ज़बानी बात है, इसलिये हम आपके कहने से अपने माबूदों को न छोड़ेंगे और आप पर ईमान न लायेंगे, बल्कि हमारा ख़्याल तो यह है कि हमारे माबूद बुतों को बुरा कहने की वजह से आप किसी दिमाग़ी ख़राबी में मुब्तला हो गये, इसलिये ऐसी बातें करते हैं।

इसके जवाब में हूद अ़लैहिस्सलाम ने पैग़म्बराना जुर्रत के साथ फ़रमाया कि अगर तुम मेरी बात नहीं मानते तो सुन लो कि मैं अल्लाह को गवाह बनाता हूँ और तुम भी गवाह रहो कि मैं अल्लाह के सिवा तुम्हारे सब माबूदों से बेज़ार हूँ। अब तुम और तुम्हारे बुत सब मिलकर मेरे ख़िलाफ़ जो कुछ दाव-घात कर सकते हो कर लो, और अगर मेरा कुछ बिगाड़ सकते हो तो बिगाड़ लो और मुझे ज़रा सी मोहलत भी न दो।

और फ़रमाया कि इतनी बड़ी बात मैं इसलिये कह रहा हूँ कि मैंने अल्लाह पर तवक्कुल और भरोसा कर लिया है जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी। जितने रू-ए-ज़मीन पर चलने वाले हैं सब की चोटी उसने पकड़ रखी है, किसी की मजाल नहीं कि उसकी इजाज़त व मर्ज़ी के बग़ैर किसी को ज़र्रा बराबर नुक़सान या तकलीफ़ पहुँचा सके, यक़ीनन मेरा रब सिराते मुस्तक़ीम पर है, यानी जो सिराते मुस्तक़ीम (सही और सीधे रास्ते) पर चलता है, रब उसको मिलता है, उसकी मदद करता है।

पूरी क़ौम के मुक़ाबले में इस तरह बुलन्द आवाज़ से दावा करना और उनको ग़ैरत दिलाना और फिर पूरी बहादुर क़ौम में से किसी की मजाल न होना कि उनके मुक़ाबले में कोई हरकत करे, यह सब एक मुस्तक़िल मोजिज़ा था हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का, जिससे उनकी इस बात का भी जवाब हो गया कि आपने हमें कोई मोजिज़ा नहीं दिखलाया, और इसका भी जवाब हो गया कि हमारे बुतों ने आपको दिमाग़ी ख़राबी में मुब्तला कर दिया है, क्योंकि अगर बुतों में यह ताक़त होती तो उस वक़्त उनको ज़िन्दा न छोड़ते।

इसके बाद फ़रमाया कि अगर तुम इसी तरह हक़ से बरगश्ता रहोगे तो समझ लो कि जो पैग़ाम देकर मुझे भेजा गया है मैं तुम्हारे सामने पहुँचा चुका हूँ तो अब इसका नतीजा इसके सिवा क्या है कि तुम पर ख़ुदा का क़हर व ग़ज़ब आ जाये और तुम सब नेस्त व नाबूद हो जाओ, और मेरा रब तुम्हारी जगह किसी दूसरी क़ौम को इस ज़मीन पर आबाद कर दे। और इस मामले में जो कुछ कर रहे हो अपना ही नुक़सान कर रहे हो, अल्लाह तआ़ला का कुछ नुक़सान नहीं कर रहे, यक़ीनन मेरा रब हर चीज़ की हिफ़ाज़त व निगरानी करता है, वह तुम्हारे हर काम और ख़्याल से बाख़बर है।

उन लोगों ने इन बातों में से किसी चीज़ पर कान न धरा और अपनी नाफ़रमानी पर क़ायम रहे तो ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब हवा के तूफ़ान की सूरत में उन पर नाज़िल हुआ, जिसने मकानों

और पेड़ों को जड़ों से उखाड़ दिया, आदमी और जानवर हवा में उड़कर आसमानी फ़िज़ा तक जाते और वहाँ से औंधे गिरते थे, आसमान की तरफ़ से इनसानों की चीख़ पुकार सुनाई देती थी, यहाँ तक कि यह बेमिसाल क़ुव्वत और डीलडोल रखने वाली क़ौम पूरी की पूरी हलाक व बरबाद हो गयी।

जब इस क़ौम पर अल्लाह के अ़ज़ाब का हुक्म नाफ़िज़ हुआ तो अल्लाह तआ़ला ने अपने क़ानून व दस्तूर के मुताबिक़ अपने पैग़म्बर और उनके साथियों को इस सख़्त अ़ज़ाब से बचा लिया, कि अ़ज़ाब आने से पहले उनको उस जगह से निकल जाने का हुक्म दे दिया गया।

आ़द क़ौम के वाक़िए और अ़ज़ाब का ज़िक्र करने के बाद दूसरों को इब्रत हासिल करने की तालीम व हिदायत करने के लिये इरशाद फ़रमाया कि यह है वह आ़द क़ौम जिन्होंने अपने रब की निशानियों को झुठलाया और अपने रसूलों की नाफ़रमानी की, और ऐसे लोगों के कहने पर चलते रहे जो ज़ालिम और ज़िद्दी थे।

इसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया में भी लानत यानी रहमत से दूरी उनके साथ-साथ लगी रही और क़ियामत में भी इसी तरह साथ लगी रहेगी।

इस वाक़िए से मालूम हुआ कि आ़द क़ौम पर हवा का तूफ़ान मुसल्लत हुआ था, मगर सूरः मोमिनून में यह बयान हुआ है कि उनको एक सख़्त आवाज़ के ज़रिये हलाक किया गया। हो सकता है कि हूद अ़लैहिस्सलाम की क़ौम पर दोनों क़िस्म के अ़ज़ाब नाज़िल हुए हों। आ़द क़ौम और हूद अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ़ पूरा हुआ।

इसके बाद आठ आयतों में हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा बयान हुआ है जो आ़द क़ौम की दूसरी शाख़ यानी समूद क़ौम की तरफ़ भेजे गये थे। उन्होंने भी अपनी क़ौम को सबसे पहले तौहीद की दावत दी, क़ौम ने आ़दत के मुताबिक़ इनको झुठलाया और यह ज़िद की कि आपका सच्चा नबी होना हम तब मानेंगे जबकि हमारे सामने इस पहाड़ की चट्टान में से एक ऊँटनी ऐसी ऐसी निकल आये।

हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने उनको डराया कि तुम्हारा मुँह माँगा मोजिज़ा अगर अल्लाह तआ़ला ने ज़ाहिर कर दिया और फिर भी तुमने ईमान लाने में कोई कोताही की तो अल्लाह के दस्तूर व आ़दत के मुताबिक़ तुम पर अ़ज़ाब आ जायेगा और सब हलाक व बरबाद हो जाओगे, मगर वे अपनी ज़िद से बाज़ न आये। अल्लाह तआ़ला ने उनका माँगा हुआ मोजिज़ा अपनी कामिल क़ुदरत से ज़ाहिर फ़रमा दिया, पहाड़ की चट्टान फटी और उनके बताये हुए गुणों और सिफ़तों वाली ऊँटनी उसमें से निकल आयी। अल्लाह तआ़ला ने हुक्म दिया कि इस ऊँटनी को कोई तकलीफ़ न पहुँचाये वरना तुम पर अ़ज़ाब आ जायेगा। मगर वे इस पर भी क़ायम न रहे, ऊँटनी को हलाक कर डाला, आख़िरकार ख़ुदा तआ़ला ने उनको पकड़ लिया। हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम और उनके मोमिन साथी अ़ज़ाब से बचा लिये गये, बाक़ी पूरी क़ौम एक सख़्त डरावनी आवाज़ के ज़रिये हलाक कर दी गयी।

इस वाक़िए में हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने उनसे कहाः

قَدْ كُنْتَ فِينَا مَرْجُوًّا قَبْلَ هٰذَا.

यानी आपके नुबुव्वत के दावे और बुत-परस्ती को मना करने से पहले हमको आपसे बड़ी उम्मीदें बंधी हुई थीं कि आप हमारी क़ौम के लिये बड़े सुधारक और रास्ता दिखाने वाले साबित होंगे। इसकी वजह यह है कि हक़ तआ़ला अपने नबियों की परवरिश बचपन ही से निहायत पाकीज़ा अख़्लाक़ व आ़दात में करते हैं, जिसको देखकर सभी उनसे मुहब्बत करते और इ़ज़्ज़त से पेश आते हैं जैसा कि हमारे नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी नुबुव्वत के ऐलान से पहले सारा अ़रब अमीन का ख़िताब देता और सच्चा और नेक एतिक़ाद रखता था। नुबुव्वत के दावे और बुत-परस्ती से मना करने पर ये सब मुख़ालिफ़ हो गये।

تَمَتَّعُوْا فِىْ دَارِكُمْ ثَلٰثَةَ اَيَّامٍ.

यानी जब उन लोगों ने अल्लाह के हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी करके उस मोजिज़े वाली ऊँटनी को मार डाला तो जैसा कि पहले ही उनको संचेत कर दिया गया था कि ऐसा करोगे तो अल्लाह का अ़ज़ाब तुम पर आयेगा, अब वह अ़ज़ाब इस तरह आया कि उनको तीन दिन की मोहलत दी गयी और बतला दिया गया कि चौथे रोज़ तुम सब हलाक किये जाओगे।

तफ़सीर क़ुर्तुबी में है कि ये तीन दिन जुमेरात, जुमा और शनिवार थे, इतवार के दिन उन पर अ़ज़ाब नाज़िल हुआः

وَاَخَذَ الَّذِيْنَ ظَلَمُوا الصَّيْحَةُ.

यानी उन ज़ालिमों को पकड़ लिया एक सख़्त आवाज़ ने। यह सख़्त आवाज़ हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम की थी जिसमें सारी दुनिया की बिजलियों की कड़क से ज़्यादा हैबतनाक (डरावनी) आवाज़ थी, जिसको इनसानी दिल व दिमाग़ बरदाश्त नहीं कर सका, दहशत से सब के दिल फट गये और सब के सब हलाक हो गये।

इस आयत से मालूम हुआ कि सालेह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम सख़्त आवाज़ के ज़रिये हलाक की गयी है, लेकिन सूरः आराफ़ में उनके बारे में यह आया हैः

فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ.

यानी पकड़ लिया उनको ज़लज़ले ने। इससे मालूम होता है कि उन पर ज़लज़ले का अ़ज़ाब आया था। अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि इसमें कोई टकराव नहीं, हो सकता है कि पहले ज़लज़ला आया हो फिर सख़्त आवाज़ से सब हलाक कर दिये गये हों। वल्लाहु आलम

وَلَقَدْ جَآءَتْ رُسُلُنَآ اِبْرٰهِيْمَ بِالْبُشْرٰى قَالُوْا سَلٰمًا ۭ قَالَ سَلٰمٌ فَمَا لَبِثَ اَنْ جَآءَ بِعِجْلٍ حَنِيْذٍ ۝
فَلَمَّا رَآٰ اَيْدِيَهُمْ لَا تَصِلُ اِلَيْهِ نَكِرَهُمْ وَاَوْجَسَ مِنْهُمْ خِيْفَةً ۭ قَالُوْا لَا تَخَفْ اِنَّآ اُرْسِلْنَآ اِلٰى
قَوْمِ لُوْطٍ ۝ وَامْرَاَتُهٗ قَآئِمَةٌ فَضَحِكَتْ فَبَشَّرْنٰهَا بِاِسْحٰقَ ۙ وَمِنْ وَّرَآءِ اِسْحٰقَ يَعْقُوْبَ ۝ قَالَتْ
يٰوَيْلَتٰٓى ءَاَلِدُ وَاَنَا عَجُوْزٌ وَّهٰذَا بَعْلِىْ شَيْخًا ۭ اِنَّ هٰذَا لَشَىْءٌ عَجِيْبٌ ۝ قَالُوْٓا اَتَعْجَبِيْنَ مِنْ اَمْرِ

اللہِ رَحْمَتُ اللّٰهِ وَبَرَكٰتُهٗ عَلَيْكُمْ اَهْلَ الْبَيْتِ ۚ اِنَّهٗ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ ۝

व ल-क़द् जाअत् रुसुलुना इब्राही-म बिल्बुश्रा क़ालू सलामन्, क़ा-ल सलामुन् फ़मा लबि-स अन् जा-अ बिअिज्लिन् हनीज़ (69) फ़-लम्मा रआ ऐदि-यहुम् ला तसिलु इलैहि नकि-रहुम् व औज-स मिन्हुम् ख़ीफ़तन्, क़ालू ला तख़फ़् इन्ना उर्सिल्ना इला क़ौमि लूत (70) वम्र-अतुहू क़ाइ-मतुन् फ़-ज़हिकत् फ़-बश्शर्नाहा बि-इस्हा-क़ व मिंव्वरा-इ इस्हा-क़ यअ़्क़ूब (71) क़ालत् या वैलता अ-अलिदु व अ-न अजूज़ुंव्-व हाज़ा बअ़्ली शैख़न्, इन्-न हाज़ा लशैउन् अ़जीब (72) क़ालू अतअ़्जबी-न मिन् अम्रिल्लाहि रह्मतुल्लाहि व ब-रकातुहू अ़लैकुम् अह्लल्-बैति; इन्नहू हमीदुम्-मजीद (73)	और अलबत्ता आ चुके हमारे भेजे हुए इब्राहीम के पास ख़ुशख़बरी लेकर, बोले सलाम। वह बोला सलाम है, फिर देर न की कि ले आया एक बछड़ा तला हुआ। (69) फिर जब देखा उनके हाथ नहीं आते खाने पर तो खटका और दिल में उनसे डरा, वे बोले मत डर हम भेजे हुए आये हैं क़ौमे लूत की तरफ़। (70) और उसकी औरत खड़ी थी तब वह हंस पड़ी, फिर हमने ख़ुशख़बरी दी उसको इस्हाक़ के पैदा होने की, और इस्हाक़ के पीछे याक़ूब की। (71) बोली ऐ ख़राबी! क्या मैं बच्चा जनूँगी और मैं बुढ़िया हूँ और यह मेरा शौहर बूढ़ा है, यह तो एक अ़जीब बात है। (72) वे बोले क्या तू ताज्जुब करती है अल्लाह के हुक्म से? अल्लाह की रहमत है और बरकतें तुम पर ऐ घर वालो, तहक़ीक़ कि अल्लाह है तारीफ़ किया गया बड़ाईयों वाला। (73)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमारे भेजे हुए फ़रिश्ते (इनसानी शक्ल में) इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) के पास (उनके बेटे इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम की) ख़ुशख़बरी लेकर आये (अगरचे उनके आने का बड़ा उद्देश्य क़ौमे लूत पर अ़ज़ाब डालना था, जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया 'फ़मा ख़त्बुकुम') और (आने के वक़्त) उन्होंने सलाम किया। उन्होंने (यानी इब्राहीम ने) भी सलाम किया (और पहचाना नहीं कि ये फ़रिश्ते हैं। मामूली मेहमान समझे) फिर देर नहीं लगाई कि एक तला हुआ

(मोटा-ताज़ा) बछड़ा लाये (और उनके सामने रख दिया। ये तो फ़रिश्ते थे क्यों खाने लगे थे) सो जब उन्होंने (यानी इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने) देखा कि इनके हाथ उस (खाने) तक नहीं बढ़ते तो उनसे घबराहट महसूस की, और उनसे दिल में डर गये (कि ये मेहमान तो नहीं, कोई मुख़ालिफ़ न हों कि किसी बुरे इरादे से आये हों और मैं घर में हूँ। दोस्त और कोई साथी पास नहीं, यहाँ तक कि बेतकल्लुफ़ी से इसको ज़बान से भी ज़ाहिर कर दिया जैसा कि अल्लाह तआ़ला का क़ौल है 'क़ा-ल इन्ना मिन्कुम वजिलून) वे (फ़रिश्ते) कहने लगे डरो मत (हम आदमी नहीं हैं, फ़रिश्ते हैं, आपके पास ख़ुशख़बरी लेकर आये हैं कि आपके एक बेटा पैदा होगा इस्हाक़ और उसके बाद में एक बेटा होगा यअ़क़ूब। और ख़ुशख़बरी इसलिये कहा कि अव्वल तो औलाद ख़ुशी की चीज़ है फिर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम बूढ़े हो गये थे, बीवी भी बहुत बूढ़ी थीं, उम्मीद औलाद की न रही थी। आपने नुबुव्वत के नूर से तवज्जोह करके पहचान लिया कि वाक़ई फ़रिश्ते हैं, लेकिन नुबुव्वत की समझ से यह भी मालूम हो गया कि इसके सिवा और भी किसी बड़े काम के लिये आये हैं, इसलिये उसके मुतैयन करने के साथ सवाल किया 'फ़मा ख़त्बुकुम' यानी किस काम के लिये आये हैं? उस वक़्त उन्होंने कहा कि) हम क़ौमे लूत की तरफ़ भेजे गये हैं (कि उनको उनके कुफ़्र की सज़ा में हलाक करें। उनमें तो यह गुफ़्तगू हो रही थी) और उनकी (यानी इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की) बीवी (हज़रत सारा कहीं) खड़ी (सुन रही) थीं, पस (औलाद की ख़बर सुनकर जिसकी हज़रत हाजरा के पेट से इस्माईल अ़लैहिस्सलाम के पैदा होने के बाद तमन्ना भी थी, ख़ुशी से) हंसीं (और बोलती पुकारती आयीं और ताज्जुब से माथे पर हाथ मारा जैसा कि एक आयत में अल्लाह तआ़ला ने उनकी इस कैफ़ियत को इस तरह बयान फ़रमाया है 'फ़-अक़्ब-लतिमूर-अतुहू फ़ी सर्रतिन् फ़सक्कत् वज्हहा')।

सो हमने (यानी हमारे फ़रिश्तों ने) उनको (एक बार फिर) इस्हाक़ (के पैदा होने की) ख़ुशख़बरी दी, और इस्हाक़ के बाद याक़ूब की (जो कि हज़रत इस्हाक़ के बेटे होंगे, जिससे मालूम हो गया कि तुम्हारे यहाँ बेटा होगा और ज़िन्दा रहेगा, यहाँ तक कि वह भी औलाद वाला होगा। उस वक़्त) कहने लगीं कि हाय ख़ाक पड़े, अब मैं बुढ़िया होकर बच्चा जनूँगी? और यह मेरे मियाँ (बैठे) हैं बिल्कुल बूढ़े, वाक़ई यह भी अ़जीब बात है। फ़रिश्तों ने कहा- क्या (नुबुव्वत के घराने में रहकर और हमेशा मोजिज़े और अ़जीब मामलात देख-देखकर) तुम ख़ुदा के कामों में ताज्जुब करती हो? और (ख़ासकर) इस ख़ानदान के लोगों पर तो अल्लाह तआ़ला की (ख़ास) रहमत और उसकी (तरह-तरह की) बरकतें (नाज़िल होती रहती) हैं, बेशक वह (अल्लाह तआ़ला) तारीफ़ के लायक़ (और) बड़ी शान वाला है (वह बड़े से बड़ा काम कर सकता है, पस बजाय ताज्जुब के उसकी तारीफ़ और शुक्र में मशग़ूल हो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन पाँच आयतों में हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम का एक वाक़िआ़ बयान हुआ है कि अल्लाह तआ़ला ने चन्द फ़रिश्तों को उनके पास औलाद की ख़ुशख़बरी देने के लिये

भेजा, क्योंकि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की बीवी मोहतरमा हज़रत सारा से कोई औलाद न थी और उनको औलाद की तमन्ना थी, मगर दोनों का बुढ़ापा था बज़ाहिर कोई उम्मीद न थी, अल्लाह तआ़ला ने फ़रिश्तों के ज़रिये ख़ुशख़बरी भेजी और वह भी इस शान की कि औलाद में बेटा होगा और उनका नाम भी इस्हाक़ तजवीज़ फ़रमा दिया, और फिर यह भी बतला दिया कि वह ज़िन्दा रहेंगे और वह भी औलाद वाले होंगे, उनके लड़के का नाम याक़ूब होगा और दोनों अल्लाह तआ़ला के रसूल व पैग़म्बर होंगे। ये फ़रिश्ते चूँकि इनसानी शक्ल में आये थे इसलिये इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने इनको आ़म मेहमान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की, भुना हुआ गोश्त लाकर सामने रखा, मगर वे तो हक़ीक़त में फ़रिश्ते थे, खाने पीने से पाक, इसलिये खाना सामने होने के बावजूद उसकी तरफ़ हाथ नहीं बढ़ाया। इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को यह देखकर शंका हुई कि ये मेहमान नहीं मालूम होते, मुम्किन है किसी बुराई की नीयत से आये हों। फ़रिश्तों ने उनका यह अन्देशा मालूम करके बात खोल दी और बतला दिया कि हम अल्लाह तआ़ला के फ़रिश्ते हैं आप घबरायें नहीं, हम आपको औलाद की ख़ुशख़बरी देने के अ़लावा एक और काम के लिये भी भेजे गये हैं कि क़ौमे लूत पर अ़ज़ाब नाज़िल करें।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की बीवी मोहतरमा हज़रत सारा पर्दे के पीछे से यह गुफ़्तगू सुन रही थीं, जब मालूम हो गया कि ये इनसान नहीं फ़रिश्ते हैं तो पर्दे की ज़रूरत न रही, बुढ़ापे में औलाद की ख़ुशख़बरी सुनकर हंस पड़ीं और कहने लगीं कि क्या मैं बुढ़िया होकर औलाद जनूँगी? और यह मेरे शौहर भी बूढ़े हैं। फ़रिश्तों ने जवाब दिया कि क्या तुम अल्लाह तआ़ला के हुक्म पर ताज्जुब करती हो? जिसकी क़ुदरत में सब कुछ है, ख़ुसूसन तुम नुबुव्वत के ख़ानदान में रहकर इसको देखती और अनुभव भी करती रहती हो कि इस ख़ानदान पर अल्लाह तआ़ला की असाधारण रहमत व बरकत नाज़िल होती रहती है जो अक्सर ज़ाहिरी असबाब के सिलसिले से ऊपर होती है, फिर ताज्जुब की क्या बात है? यह इस वाक़िए का ख़ुलासा है, आगे ऊपर बयान हुई इन आयतों की पूरी तफ़सील देखिये।

पहली आयत में बतलाया है कि ये फ़रिश्ते हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के पास कोई ख़ुशख़बरी लेकर आये थे, उस ख़ुशख़बरी का ज़िक्र आगे तीसरी आयत में है 'फ़बश्शरनाहा बिइस्हा-क़'।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि ये फ़रिश्ते जिब्रील, मीकाईल और इस्राफ़ील थे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) इन्होंने इनसानी शक्ल में आकर इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को सलाम किया, हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने सलाम का जवाब दिया और इनको इनसान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम वह पहले इनसान हैं जिन्होंने दुनिया में मेहमान-नवाज़ी की रस्म जारी फ़रमाई। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) उनका मामूल यह था कि कभी अकेले खाना न खाते बल्कि हर खाने के वक़्त तलाश करते थे कि कोई मेहमान आ जाये तो उसके साथ खायें।

अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने बाज़ इस्राईली रिवायतों से नक़ल किया है कि एक दिन खाने के वक़्त

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने मेहमान की तलाश शुरू की तो एक अजनबी आदमी मिला, जब वह खाने पर बैठा तो इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि 'बिस्मिल्लाह' कहो। उसने कहा कि मैं जानता नहीं अल्लाह कौन और क्या है? इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने उसको दस्तरख़्वान से उठा दिया। जब वह बाहर चला गया तो जिब्रीले अमीन आये और कहा कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि "हमने तो उसके कुफ़्र के बावजूद सारी उम्र उसको रिज़्क़ दिया और आपने एक लुक़्मा देने में भी कन्जूसी की।" यह सुनते ही इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम उसके पीछे दौड़े और उसको वापस बुलाया। उसने कहा कि जब तक आप इसकी वजह न बतलायेंगे कि पहले क्यों मुझे निकाला था और अब फिर क्यों बुला रहे हैं मैं उस वक़्त तक आपके साथ न जाऊँगा।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने वाक़िआ बतला दिया तो यही वाक़िआ उसके मुसलमान होने का सबब बन गया। उसने कहा कि वह रब जिसने यह हुक्म भेजा है बड़ा करीम है, मैं उस पर ईमान लाता हूँ। फिर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के साथ गया और मोमिन होकर बाक़ायदा 'बिस्मिल्लाह' पढ़कर खाना खाया।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने अपनी मेहमान-नवाज़ी की आ़दत के मुताबिक़ इनसानी शक्ल में आने वाले फ़रिश्तों को इनसान और मेहमान समझकर मेहमान-नवाज़ी शुरू की और फ़ौरन ही एक तला हुआ बछड़ा सामने लाकर रख दिया।

दूसरी आयत में बतलाया गया कि आने वाले फ़रिश्ते अगरचे इनसानी शक्ल में आये थे और यह भी मुम्किन था कि उस वक़्त उनको इनसानी तक़ाज़े खाने पीने के भी अ़ता कर दिये जाते मगर हिक्मत इसी में थी कि ये खाना न खायें ताकि इनके फ़रिश्ते होने का राज़ खुले, इसलिये इनसानी शक्ल में भी इनके फ़रिश्ता होने के गुणों और ख़ुसूसियतों को बाक़ी रखा गया जिसकी वजह से उन्होंने खाने पर हाथ न बढ़ाया।

कुछ रिवायतों में है कि उनके हाथ में कुछ तीर थे उनकी नोक उस तले हुए गोश्त में लगाने लगे। उनके इस अ़मल से हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को अपने यहाँ के रिवाज के मुताबिक़ यह ख़तरा महसूस हुआ कि शायद ये कोई दुश्मन हों, क्योंकि उनके समाज में किसी मेहमान का खाने से इनकार करना ऐसे ही शर व फ़साद की निशानी होता था। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) फ़रिश्तों ने बात खोल दी कि हम फ़रिश्ते हैं इसलिये नहीं खाते, आप कोई ख़तरा महसूस न करें।

अहकाम व मसाईल

उक्त आयतों में रहन-सहन और सामाजिक ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ बहुत से अहकाम और अहम हिदायतें आई हैं जिनको इमाम क़ुर्तुबी ने अपनी तफ़सीर में तफ़सील से लिखा है।

'सलाम' की सुन्नत

قَالُوْا سَلٰمًا قَالَ سَلٰمٌ.

इससे मालूम हुआ कि मुसलमानों के लिये सुन्नत है कि जब आपस में मिलें तो सलाम करें,

आने वाले मेहमान को इसमें पहल करनी चाहिये और दूसरों को जवाब देना चाहिये।

यह रस्म तो हर क़ौम व मिल्लत में पाई जाती है कि मुलाक़ात के वक़्त एक दूसरे को खुश करने के लिये कुछ अलफ़ाज़ बोलते हैं मगर इस्लाम की तालीम इस मामले में भी बेनज़ीर और बेहतरीन है, क्योंकि सलाम का मस्नून लफ़्ज़ 'अस्सलामु अ़लैकुम' अल्लाह के नाम पर मुश्तमिल होने की वजह से अल्लाह का ज़िक्र भी है और मुख़ातब के लिये अल्लाह तआ़ला से सलामती की दुआ भी, और अपनी तरफ़ से उसकी जान व माल और आबरू के लिये सलामती की ज़मानत भी।

क़ुरआने करीम में इस जगह फ़रिश्तों की तरफ़ से सिर्फ़ 'सलामन' और हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की तरफ़ से जवाब में 'सलामुन' ज़िक्र किया गया है। बज़ाहिर यहाँ सलाम के पूरे अलफ़ाज़ के ज़िक्र करने की ज़रूरत न समझी, जैसे उर्फ़ व मुहावरे में कहा जाता है कि फ़ुलाँ ने फ़ुलाँ को सलाम किया, मुराद यह होती है कि पूरा कलिमा 'अस्सलामु अ़लैकुम' कहा। इसी तरह यहाँ लफ़्ज़ 'सलाम' से सलाम का पूरा कलिमा-ए-मस्नूना मुराद है जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने क़ौल व अ़मल से लोगों को बतलाया है, यानी सलाम के शुरू करने में 'अस्सलामु अ़लैकुम' और सलाम के जवाब में 'व अ़लैकुमुस्सलाम व रह्मतुल्लाहि'।

मेहमानी और मेहमानदारी के चन्द उसूल

فَمَا لَبِثَ اَنْ جَآءَ بِعِجْلٍ حَنِيْذٍo

यानी नहीं ठहरे इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम मगर सिर्फ़ इस क़द्र कि ले आये तला हुआ बछड़ा।

इससे चन्द बातें मालूम हुईं- अव्वल यह कि मेहमान-नवाज़ी के आदाब में से यह है कि मेहमान के आते ही जो कुछ खाने पीने की चीज़ मयस्सर हो और जल्दी से मुहैया हो सके वह ला रखे, फिर अगर गुंजाईश वाला है तो मज़ीद मेहमानी का इन्तिज़ाम बाद में करे। (क़ुर्तुबी)

दूसरी बात यह मालूम हुई कि मेहमान के लिये बहुत ज़्यादा तकल्लुफ़ात की फ़िक्र में न पड़े, आसानी से जो अच्छी चीज़ मयस्सर हो जाये वह मेहमान की ख़िदमत में पेश कर दे। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के यहाँ गाय बैल रहते थे, इसलिये बछड़ा ज़िबह करके फ़ौरी तौर पर उसका गोश्त तलकर सामने ला रखा। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

तीसरे यह कि आने वालों की मेहमानी करना इस्लाम के आदाब और अख़्लाक़ी बातों में से है, अम्बिया और नेक लोगों की आ़दत है। इसमें उलेमा का मतभेद है कि मेहमानी करना वाजिब है या नहीं? उलेमा की अक्सरियत की राय यह है कि वाजिब नहीं, सुन्नत और पसन्दीदा है। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि गाँव वालों पर वाजिब है कि जो शख़्स उनके गाँव में ठहरे उसकी मेहमानी करें, क्योंकि वहाँ खाने का कोई दूसरा इन्तिज़ाम नहीं हो सकता, और शहर में होटल वग़ैरह से इसका इन्तिज़ाम हो सकता है इसलिये शहर वालों पर वाजिब नहीं। अ़ल्लामा क़ुर्तुबी रह. ने अपनी तफ़सीर में ये मुख़्तलिफ़ अक़वाल नक़ल किये हैं।

فَلَمَّا رَآٰ اَيْدِيَهُمْ لَا تَصِلُ اِلَيْهِ نَكِرَهُمْ

यानी जब देखा इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने कि उनके हाथ खाने तक नहीं पहुँचते तो घबराये और अन्देशा करने लगे।

इससे मालूम हुआ कि मेहमान के आदाब में से यह है कि मेहमान के सामने जो चीज़ पेश की जाये उसको क़ुबूल करे (खाने को दिल न चाहे या नुक़सान देने वाला समझे तो मामूली सी शिर्कत मेज़बान का दिल रखने के लिये कर ले)।

इसी जुमले से दूसरी बात यह मालूम हुई कि मेज़बान को चाहिये कि सिर्फ़ खाना सामने रखकर फ़ारिग़ न हो जाये बल्कि इस पर नज़र रखे कि मेहमान खा रहा है या नहीं, जैसा कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने किया कि फ़रिश्तों के खाना न खाने को महसूस किया।

मगर यह नज़र रखना इस तरह हो कि मेहमान के खाने को तकता न रहे, सरसरी नज़र से देख ले। क्योंकि मेहमान के लुक़्मों को देखना मेहमान-नवाज़ी के आदाब के ख़िलाफ़ और आमंत्रित के लिये शर्मिन्दगी का कारण होता है, जैसे कि हिशाम बिन अ़ब्दुल-मलिक के दस्तरख़्वान पर एक रोज़ एक देहाती को यह वाक़िआ़ पेश आया कि देहाती के लुक़्मे में बाल था, अमीरुल-मोमिनीन हिशाम ने देखा तो बतलाया। देहाती फ़ौरन उठ खड़ा हुआ और कहने लगा कि हम ऐसे शख़्स के पास खाना नहीं खाते जो हमारे लुक़्मों को देखता है।

इमाम तबरी ने इस जगह नक़ल किया है कि शुरू में जब फ़रिश्तों ने खाने से इनकार किया तो यह कहा था कि हम मुफ़्त का खाना नहीं खाते, अगर आप क़ीमत ले लें तो खायेंगे। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने जवाब में फ़रमाया कि हाँ इस खाने की एक क़ीमत है वह अदा कर दो। वह क़ीमत यह है कि शुरू में अल्लाह का नाम लो और आख़िर में उसकी तारीफ़ करो। जिब्रीले अमीन ने यह सुनकर अपने साथियों को बतलाया कि अल्लाह तआ़ला ने इनको जो ख़लील (अपना दोस्त) बनाया है यह इसी के मुस्तहिक़ हैं।

इस वाक़िए से मालूम हुआ कि खाने के शुरू में 'बिस्मिल्लाह' और आख़िर में 'अल्हम्दु लिल्लाह' कहना सुन्नत है।

فَلَمَّا ذَهَبَ عَنْ اِبْرٰهِيْمَ الرَّوْعُ وَجَآءَتْهُ الْبُشْرٰى يُجَادِلُنَا فِىْ قَوْمِ
لُوْطٍ ۝ اِنَّ اِبْرٰهِيْمَ لَحَلِيْمٌ اَوَّاهٌ مُّنِيْبٌ ۝ يٰٓاِبْرٰهِيْمُ اَعْرِضْ عَنْ هٰذَا ۚ اِنَّهٗ قَدْ جَآءَ اَمْرُ
رَبِّكَ ۚ وَاِنَّهُمْ اٰتِيْهِمْ عَذَابٌ غَيْرُ مَرْدُوْدٍ ۝ وَلَمَّا جَآءَتْ رُسُلُنَا لُوْطًا سِيْٓءَ بِهِمْ وَضَاقَ
بِهِمْ ذَرْعًا وَّقَالَ هٰذَا يَوْمٌ عَصِيْبٌ ۝ وَجَآءَهٗ قَوْمُهٗ يُهْرَعُوْنَ اِلَيْهِ ۭ وَمِنْ قَبْلُ كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ
السَّيِّاٰتِ ۭ قَالَ يٰقَوْمِ هٰٓؤُلَآءِ بَنَاتِىْ هُنَّ اَطْهَرُ لَكُمْ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَلَا تُخْزُوْنِ فِىْ ضَيْفِىْ ۭ اَلَيْسَ
مِنْكُمْ رَجُلٌ رَّشِيْدٌ ۝ قَالُوْا لَقَدْ عَلِمْتَ مَا لَنَا فِىْ بَنٰتِكَ مِنْ حَقٍّ ۚ وَاِنَّكَ لَتَعْلَمُ مَا نُرِيْدُ ۝
قَالَ لَوْ اَنَّ لِىْ بِكُمْ قُوَّةً اَوْ اٰوِىْٓ اِلٰى رُكْنٍ شَدِيْدٍ ۝ قَالُوْا يٰلُوْطُ اِنَّا رُسُلُ رَبِّكَ لَنْ

يَّصِلُوْٓا اِلَيْكَ فَاَسْرِ بِاَهْلِكَ بِقِطْعٍ مِّنَ الَّيْلِ وَلَا يَلْتَفِتْ مِنْكُمْ اَحَدٌ اِلَّا امْرَاَتَكَ ؕ اِنَّهٗ مُصِيْبُهَا
مَآ اَصَابَهُمْ ؕ اِنَّ مَوْعِدَهُمُ الصُّبْحُ ؕ اَلَيْسَ الصُّبْحُ بِقَرِيْبٍ ۝ فَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا جَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا
وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهَا حِجَارَةً مِّنْ سِجِّيْلٍ ۙ مَّنْضُوْدٍ ۝ مُّسَوَّمَةً عِنْدَ رَبِّكَ ؕ وَمَا هِيَ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ
بِبَعِيْدٍ ۝

फ़लम्मा ज़-ह-ब अ़न् इब्राहीमर्-रौअ़ु व जाअत्हुल्-बुश्रा युजादिलुना फ़ी क़ौमि लूत (74) इन्-न इब्राही-म ल-हलीमुन् अव्वाहुम् मुनीब (75) या इब्राहीमु अअ्रिज़् अ़न् हाज़ा इन्नहू क़द् जा-अ अम्रु रब्बि-क व इन्नहुम् आतीहिम् अ़ज़ाबुन् ग़ैरु मर्दूद (76) व लम्मा जाअत् रुसुलुना लूतन् सी-अ बिहिम् व ज़ा-क़ बिहिम् ज़र्अ़ंव्-व क़ा-ल हाज़ा यौमुन् अ़सीब (77) व जा-अहू क़ौमुहू युहरअ़ू-न इलैहि, व मिन् क़ब्लु कानू यअ्मलूनस्-सय्यिआति, क़ा-ल या क़ौमि हा-उला-इ बनाती हुन्-न अत्हरु लकुम् फ़त्तक़ुल्ला-ह व ला तुख़्ज़ूनि फ़ी ज़ैफ़ी, अलै-स मिन्कुम् रजुलुर्रशीद (78) क़ालू ल-क़द् अ़लिम्-त मा लना फ़ी बनाति-क मिन् हक़्क़िन् व इन्न-क ल-तअ़्लमु मा नुरीद (79) क़ा-ल लौ अन्-न ली

फिर जब जाता रहा इब्राहीम से डर और आई उसको ख़ुशख़बरी, झगड़ने लगा हमसे क़ौमे लूत के हक़ में। (74) अलबत्ता इब्राहीम संयम वाला, नरम दिल है रुजू रहने वाला। (75) ऐ इब्राहीम! छोड़ यह ख़्याल वह तो आ चुका हुक्म तेरे रब का, और उन पर आता है अ़ज़ाब जो लौटाया नहीं जाता। (76) और जब पहुँचे हमारे भेजे हुए लूत के पास, ग़मगीन हुआ उनके आने से और तंग हुआ दिल में, और बोला आज दिन बड़ा सख़्त है। (77) और आई उसके पास उसकी क़ौम दौड़ती बेइख़्तियार, और वे लोग पहले से कर रहे थे बुरे काम, बोला ऐ क़ौम! ये मेरी बेटियाँ हाज़िर हैं, ये पाक हैं तुमको, सो डरो अल्लाह से और मत रुस्वा करो मुझको मेरे मेहमानों में, क्या तुम में एक मर्द भी नहीं नेक-चलन। (78) बोले तू तो जानता है हमको तेरी बेटियों से कुछ ग़र्ज़ नहीं, और तुझको तो मालूम है जो हम चाहते हैं। (79) कहने

बिकुम् क़ुव्वतन् औ आवी इला रुक्निन् शदीद (80) क़ालू या लूतु इन्ना रुसुलु रब्बि-क लंय्यसिलू इलै-क फ़-अस्रि बिअह्लि-क बिक़ित्ञिम्-मिनल्लैलि व ला यल्तफ़ित् मिन्कुम् अ-हदुन् इल्लम्र-अ-त-क, इन्नहू मुसीबुहा मा असाबहुम्, इन्-न मौञि-दहुमुस्-स्सुब्हु, अलैसस्-सुब्हु बि-क़रीब (81) फ़-लम्मा जा-अ अम्रुना जअ़ल्ना आ़लि-यहा साफ़ि-लहा व अम्तर्ना अ़लैहा हिजा-रतम् मिन् सिज्जीलिम्-मन्ज़ूद (82) मुसव्व-मतन् अिन्-द रब्बि-क, व मा हि-य मिनज़्ज़ालिमी-न बि-बअ़ीद (83) ❁ ●

लगा काश मुझको तुम्हारे मुक़ाबले में ज़ोर (यानी बल हासिल) होता या जा बैठता किसी मज़बूत पनाह में। (80) मेहमान बोले ऐ लूत! हम भेजे हुए हैं तेरे रब के, हरगिज़ न पहुँच सकेंगे ये तुझ तक, सो ले निकल अपने लोगों को कुछ रात से, और मुड़कर न देखे तुम में से कोई मगर तेरी औरत कि उसको पहुँच कर रहेगा जो उनको पहुँचेगा, उनके वादे का वक़्त है सुबह, क्या सुबह नहीं है नज़दीक? (81) फिर जब पहुँचा हमारा हुक्म कर डाली हमने वह बस्ती ऊपर नीचे और बरसाये हमने उस पर पत्थर कंकर के तह-ब-तह। (82) निशान किये हुए तेरे रब के पास (से), और नहीं वह बस्ती इन ज़ालिमों से कुछ दूर। (83) ❁ ●

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर जब इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) का वह ख़ौफ़ दूर हो गया (जब फ़रिश्तों ने "ला तख़फ़्" यानी डर मत कहा और उनका फ़रिश्ता होना मालूम हो गया) और उनको ख़ुशी की ख़बर मिली (कि औलाद पैदा होगी) तो (इधर से बेफ़िक्र होकर दूसरी तरफ़ मुतवज्जह हुए कि क़ौमे लूत हलाक की जायेगी और) हमसे लूत (अ़लैहिस्सलाम) की क़ौम के बारे में (बहुत ज़ोर देकर और इसरार से सिफ़ारिश जो कि देखने में एक तरह का) झगड़ा (था) करना शुरू किया (जिसकी तफ़सील दूसरी आयत में है कि वहाँ तो लूत अ़लैहिस्सलाम भी मौजूद हैं इसलिये अ़ज़ाब न भेजा जाये कि उनको तकलीफ़ व मुसीबत पहुँचेगी, मतलब यह होगा कि इस बहाने से क़ौम बच जाये जैसा कि 'फ़ी क़ौमि लूतिन्' से ज़ाहिरन मालूम होता है, और शायद इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को उनके मोमिन होने की उम्मीद हो) वाक़ई इब्राहीम बड़े बरदाश्त करने वाले और नरम दिल वाले थे (इसलिये सिफ़ारिश में ज़्यादा ज़ोर दिया। इरशाद हुआ कि) ऐ इब्राहीम! (अगरचे बहाना लूत

अ़लैहिस्सलाम का है मगर असली मतलब मालूम हो गया कि क़ौम की सिफ़ारिश है, सो) इस बात को जाने दो (ये ईमान न लायेंगे, इसी लिये) तुम्हारे रब का हुक्म (इसके मुताल्लिक़) आ पहुँचा है, और (उसके सबब से) उन पर ज़रूर ऐसा अ़ज़ाब आने वाला है जो किसी तरह हटने वाला नहीं (इसलिये इस बारे में कुछ कहना सुनना बेकार है। रहा लूत अ़लैहिस्सलाम का वहाँ होना सो उनको और सब ईमान वालों को वहाँ से अलग कर दिया जायेगा, उसके बाद अ़ज़ाब आयेगा, ताकि उनको कोई तकलीफ़ न पहुँचे। चुनाँचे इस पर बात ख़त्म हो गयी) और (इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के पास से फ़ारिग़ होकर) जब हमारे भेजे हुए (फ़रिश्ते) लूत (अ़लैहिस्सलाम) के पास आये तो वह (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम) उन (के आने) की वजह से (इसलिये) ग़मगीन हुए (कि वे बहुत हसीन नौजवानों की शक्ल में आये थे और लूत अ़लैहिस्सलाम ने उनको आदमी समझा और अपनी क़ौम की नामाक़ूल हरकत का ख़्याल आया) और (इस वजह से) उनके आने के सबब तंगदिल हुए (और हद से ज़्यादा तंगदिली से) कहने लगे कि आज का दिन बहुत भारी है (कि इनकी तो ऐसी सूरतें और क़ौम की ये हरकतें और मैं तने तन्हा, देखिये क्या होता है?) और उनकी क़ौम (ने जो यह ख़बर सुनी तो) उनके (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम के) पास दौड़ी हुई आई और वे पहले से नामाक़ूल हरकतें किया ही करते थे (इसी ख़्याल से अब भी आये)।

वह (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम बड़े घबराये और समझाने व ख़ुशामद करने के तौर पर) फ़रमाने लगे कि ऐ मेरी क़ौम! ये मेरी (बहू) बेटियाँ (जो तुम्हारे घरों में मौजूद) हैं, वे तुम्हारे (नफ़्स की इच्छा पूरी करने के) लिये (अच्छी-) ख़ासी हैं, सो (नवयुवकों पर निगाह करने के बारे में) अल्लाह तआ़ला से डरो और मेरे मेहमानों में मुझको रुस्वा और फ़ज़ीहत मत करो (यानी इन मेहमानों को कुछ कहना मुझको शर्मिन्दा और रुस्वा करना है, अगर इनकी रियायत नहीं करते कि मुसाफ़िर हैं तो मेरा ख़्याल करो कि तुम में रहता सहता हूँ, अफ़सोस और ताज्जुब है) क्या तुम में कोई भी (माक़ूल आदमी और) भला मानस नहीं (कि इस बात को समझे और औरों को समझाये)?

वे लोग कहने लगे कि आपको तो मालूम है कि हमको आपकी (बहू-) बेटियों की ज़रूरत नहीं, (क्योंकि औ़रतों में हमको रुचि ही नहीं) और आपको तो मालूम है (यहाँ आने से) जो हमारा मतलब है। वह (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम निहायत आ़जिज़ और परेशान होकर) फ़रमाने लगे- क्या अच्छा होता अगर मेरा तुम पर कुछ ज़ोर चलता (कि ख़ुद तुम्हारे शर को दूर करता) या मैं किसी मज़बूत सहारे की पनाह पकड़ता (मुराद यह कि मेरा कोई कुनबा-क़बीला होता कि मेरी मदद करता। लूत अ़लैहिस्सलाम की जो इस क़द्र बेचैनी देखी तो) वे (फ़रिश्ते) कहने लगे कि ऐ लूत! (हम आदमी नहीं जो आप इस क़द्र घबराते हैं) हम तो आपके रब के भेजे हुए (फ़रिश्ते) हैं (तो हमारा तो क्या कर सकते हैं आप अपने लिये भी अन्देशा न करें) आप तक (भी) हरगिज़ उनकी रसाई न होगी (कि आपको कुछ तकलीफ़ पहुँचा सकें और हम उन पर अ़ज़ाब नाज़िल करने आये हैं) सो आप रात के किसी हिस्से में अपने घर वालों को लेकर (यहाँ से बाहर) चलिये, और तुम में से कोई (पीछे) फिरकर भी न देखे (यानी सब जल्दी चले जायें) हाँ

मगर आपकी बीवी (मुसलमान न होने के कारण न जायेगी) उस पर भी वही आफ़त आने वाली है जो और लोगों पर आयेगी (और हम रात के वक़्त निकल जाने को इसलिये कहते हैं कि) उनके (अ़ज़ाब के) वायदे का वक़्त सुबह (का वक़्त) है। (लूत अ़लैहिस्सलाम बहुत परेशान हो गये थे, फ़रमाने लगे कि जो कुछ हो अभी हो जाये जैसा कि तफ़सीर दुर्रे मन्सूर में है, फ़रिश्तों ने कहा) क्या सुबह (का वक़्त) क़रीब नहीं?

(ग़र्ज़ कि लूत अ़लैहिस्सलाम रातों-रात दूर निकल गये और सुबह हुई और अ़ज़ाब का सामान शुरू हुआ) सो जब हमारा हुक्म (अ़ज़ाब के लिये) आ पहुँचा तो हमने उस ज़मीन (को उलटकर उस) का ऊपर का तख़्ता तो नीचे कर दिया (और नीचे का ऊपर) और उस ज़मीन पर खंगर के पत्थर (यानी झाँवा जो पककर पत्थर के जैसा हो जाता है) बरसाना शुरू किये (जो) लगातार (गिर रहे थे) जिन पर आपके रब के पास (यानी ग़ैब के आ़लम में) ख़ास निशान भी था (जिससे और पत्थरों से वो पत्थर अलग थे), और (मक्का वालों को चाहिये कि इस क़िस्से से सबक़ लें और नसीहत पकड़ें क्योंकि) ये (क़ौमे लूत की बस्तियाँ) इन ज़ालिमों से कुछ दूर नहीं हैं (मुल्क शाम को आते-जाते हमेशा उनकी बरबादी के निशानात देखते हैं, पस इनको अल्लाह और रसूल की मुख़ालफ़त से डरना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः हूद में अक्सर पहले नबियों और उनकी उम्मतों के हालात और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की मुख़ालफ़त की बिना पर विभिन्न प्रकार के आसमानी अ़ज़ाबों का बयान आया है। इन ज़िक्र हुई आयतों में हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम का हाल और क़ौमे लूत पर सख़्त अ़ज़ाब का बयान है।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की क़ौम काफ़िर होने के अ़लावा एक ऐसी ख़बीस बदकारी और बेहयाई में मुब्तला थी जो दुनिया में कभी पहले न पाई गयी थी, जिससे जंगल के जानवर भी नफ़रत करते हैं, कि मर्द मर्द के साथ मुँह काला करे, जिसका वबाल व अ़ज़ाब आ़म बदकारी से कई दर्जे ज़्यादा है, इसी लिये इस क़ौम पर ऐसा सख़्त अ़ज़ाब आया जो आ़म बेहयाई और बदकारी करने वालों पर कभी नहीं आया।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम का वाक़िआ़ जो इन आयतों में बयान हुआ है इस तरह है कि अल्लाह तआ़ला ने अपने चन्द फ़रिश्ते जिनमें जिब्रीले अमीन भी शामिल थे इस क़ौम पर अ़ज़ाब नाज़िल करने के लिये भेजे, जो पहले हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के यहाँ फ़िलिस्तीन पहुँचे जिसका वाक़िआ़ पिछली आयतों में बयान हो चुका है, उसके बाद हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के पास आये जिनका स्थान वहाँ से दस बारह मील के फ़ासले पर था।

अल्लाह तआ़ला शानुहू जिसको अ़ज़ाब में पकड़ते हैं उस पर उनके अ़मल के मुनासिब ही अ़ज़ाब मुसल्लत फ़रमाते हैं। इस मौक़े पर भी अल्लाह तआ़ला के ये फ़रिश्ते हसीन लड़कों की शक्ल में भेजे, जब वे हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के घर पहुँचे तो उनको इनसानी शक्ल में

देखकर उन्होंने भी मेहमान समझा और उस वक़्त वह सख़्त फ़िक्र व ग़म में मुब्तला हो गये कि मेहमानों की मेहमानी न की जाये तो यह पैग़म्बरी शान के ख़िलाफ़ है और अगर इनको मेहमान बनाया जाता है तो अपनी क़ौम की ख़बासत मालूम है, इसका ख़तरा है कि वे मकान पर चढ़ आयें और इन मेहमानों को तकलीफ़ पहुँचायें, और वह इनका बचाव न कर सकें। और दिल में कहने लगे कि आज बड़ी सख़्त मुसीबत का दिन है।

अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस दुनिया को अ़जीब इब्रत की जगह बनाया है जिसमें उसकी कामिल क़ुदरत और हिक्मत के बेशुमार प्रदर्शन सामने आते हैं। बुत-परस्त आज़र के घर में अपना ख़लील हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पैदा कर दिया, हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम जैसे मक़बूल व ख़ास पैग़म्बर के घर में उनकी बीवी काफ़िरों से मिलती और हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की मुख़ालफ़त करती थी। जब ये सम्मानित मेहमान हसीन लड़कों की शक्ल में हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के घर में ठहर गये तो उनकी बीवी ने उनकी क़ौम के आवारा लोगों को ख़बर कर दी कि आज हमारे घर में इस तरह के मेहमान आये हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम को पहले ही से जो आशंका थी वह सामने आ गयी, जिसका बयान एक दूसरी आयत में है:

وَجَآءَهٗ قَوْمُهٗ يُهْرَعُوْنَ اِلَيْهِ

यानी आ गयी उनके पास उनकी क़ौम दौड़ी हुई, और वे पहले से नामाक़ूल हरकतें किया ही करते थे।

इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये अपने ख़बीस अ़मल की नहूसत से इस क़द्र बेहया हो चुके थे कि खुलेआ़म हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के मकान पर चढ़ दौड़े।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम ने जब देखा कि उनसे बचाव करना मुश्किल है तो उनको शर से बाज़ रखने के लिये फ़रमाया कि तुम इस शर व फ़साद से बाज़ आ जाओ तो मैं अपनी लड़कियाँ तुम्हारे सरदारों के निकाह में दे दूँगा। उस ज़माने में मुसलमान लड़की का निकाह काफ़िर से जायज़ था, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के शुरू के ज़माने तक यही हुक्म जारी था, इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी दो बेटियों का निकाह उतबा बिन अबी लहब और अबुल-आ़स बिन रबीअ़ से कर दिया था, हालाँकि ये दोनों कुफ़्र पर थे, बाद में वो आयतें नाज़िल हुईं जिनमें मुसलमान औरत का निकाह काफ़िर मर्द से हराम क़रार पाया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह अपनी लड़कियों से मुराद अपनी पूरी क़ौम की लड़कियाँ हैं, क्योंकि हर पैग़म्बर अपनी क़ौम के लिये बाप के जैसा होता है और पूरी उम्मत उसकी रूहानी औलाद होती है, जैसा कि क़ुरआन की आयते करीमा:

اَلنَّبِیُّ اَوْلٰی بِالْمُؤْمِنِیْنَ مِنْ اَنْفُسِهِمْ وَاَزْوَاجُهٗۤ اُمَّهٰتُهُمْ

के साथ हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की किराअत में:

وَهُوَابٌ لَّهُمْ

के अलफ़ाज़ भी आये हैं। जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपनी तमाम उम्मत का बाप क़रार दिया है। इस तफ़सीर के मुताबिक़ हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के इस क़ौल (कहने) का मतलब यह होगा कि तुम अपनी ख़बीस आ़दत से बाज़ आओ, शराफ़त के साथ क़ौम की लड़कियों से निकाह करो, उनको बीवियाँ बनाओ।

फिर लूत अ़लैहिस्सलाम ने उनको ख़ुदा तआ़ला के अ़ज़ाब से डराने के लिये फ़रमायाः

فَاتَّقُوا اللّٰهَ

(कि तुम अल्लाह से डरो) और फिर आ़जिज़ी के साथ दरख़्वास्त कीः

وَلَا تُخْزُوْنِ فِيْ ضَيْفِيْ

यानी मुझको मेरे मेहमानों के बारे में रुस्वा न करो। और फ़रमायाः

اَلَيْسَ مِنْكُمْ رَجُلٌ رَّشِيْدٌ ۝

यानी क्या तुम में कोई एक भी भला-मानस और शरीफ़ आदमी नहीं जो मेरी फ़रियाद सुने।

मगर वहाँ शराफ़त व इनसानियत का कोई असर किसी में बाक़ी न था, सब ने जवाब में कहाः

لَقَدْ عَلِمْتَ مَا لَنَا فِيْ بَنٰتِكَ مِنْ حَقٍّ وَّاِنَّكَ لَتَعْلَمُ مَا نُرِيْدُ ۝

यानी आप जानते हैं कि हमें आपकी लड़कियों की कोई ज़रूरत नहीं, हम जो कुछ चाहते हैं वह आपको मालूम है।

उस वक़्त हर तरह से आ़जिज़ होकर लूत अ़लैहिस्सलाम की ज़बान पर यह कलिमा आयाः

لَوْ اَنَّ لِيْ بِكُمْ قُوَّةً اَوْ اٰوِيْٓ اِلٰى رُكْنٍ شَدِيْدٍ ۝

यानी काश मुझमें इतनी क़ुव्वत होती कि मैं इस पूरी क़ौम का ख़ुद मुक़ाबला कर सकता या फिर कोई जत्था और जमाअ़त होती जो मुझे इन ज़ालिमों के हाथ से निजात दिलाती।

फ़रिश्तों ने हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की यह बेचैनी और परेशानी देखकर बात खोल दी और कहा कि घबराईये नहीं, आपकी जमाअ़त बड़ी ताक़तवर और मज़बूत है, हम अल्लाह के फ़रिश्ते हैं, इनके क़ाबू में आने वाले नहीं, इन पर अ़ज़ाब डालने के लिये आये हैं।

सही बुख़ारी की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसके मुताल्लिक़ फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला लूत अ़लैहिस्सलाम पर रहम फ़रमाये वह किसी मज़बूत जमाअ़त की पनाह लेने पर मजबूर हो गये। और तिर्मिज़ी में इसके साथ यह जुमला भी है कि हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के बाद अल्लाह तआ़ला ने कोई नबी ऐसा नहीं भेजा जिसका कुनबा क़बीला उसका हिमायती न हो। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी) ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में क़ुरैश के काफ़िरों ने हज़ार तरह की तदबीरें कीं लेकिन आपके पूरे ख़ानदान ने आपकी हिमायत की, अगरचे मज़हब में वे सब आपके मुवाफ़िक़ न थे, इसी वजह से पूरे बनू हाशिम उस

समाजी बायकाट में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ शरीक रहे जिसमें क़ुरैश के काफ़िरों ने उन पर दाना-पानी बन्द कर दिया था।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि इस वाक़िए में जब क़ौमे लूत उनके घर पर चढ़ आई तो लूत अ़लैहिस्सलाम ने अपने घर का दरवाज़ा बन्द कर लिया था और यह गुफ़्तगू उस शरीर क़ौम से पर्दे के पीछे हो रही थी, फ़रिश्ते भी मकान के अन्दर थे, उन लोगों ने दीवार फाँदकर अन्दर घुसने का और दरवाज़ा तोड़ने का इरादा किया, इस पर हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की ज़बान पर ये कलिमात आये। जब फ़रिश्तों ने हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की यह बेचैनी व परेशानी देखी तो हक़ीक़त खोल दी और कह दिया कि आप दरवाज़ा खोल दें, अब हम इनको अ़ज़ाब का मज़ा चखाते हैं। दरवाज़ा खोला तो जिब्रीले अमीन ने अपने पर (पंख) का इशारा उनकी आँखों की तरफ़ किया जिससे सब अन्धे हो गये और भागने लगे।

उस वक़्त फ़रिश्तों ने अल्लाह के हुक्म से हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम को कहाः

فَاَسْرِ بِاَهْلِكَ بِقِطْعٍ مِّنَ الَّيْلِ

यानी आप रात के आख़िरी हिस्से में अपने घर वालों को लेकर यहाँ से निकल जाईये। और यह हिदायत कर दीजिये कि उनमें से कोई पीछे मुड़कर न देखे, सिवाय आपकी बीवी के, क्योंकि उस पर तो वही अ़ज़ाब पड़ने वाला है जो क़ौम पर पड़ेगा।

इसके यह मायने भी हो सकते हैं कि बीवी को साथ न लें, और यह भी हो सकते हैं कि बीवी होने की हैसियत से वह आपके घर वालों में दाख़िल होकर साथ चलेगी मगर वह आपके इस हुक्म पर अ़मल न करेगी जो आप अपने घर वालों को देंगे कि कोई मुड़कर न देखे। कुछ रिवायतों में है कि यूँ ही हुआ कि यह बीवी भी साथ चली मगर जब क़ौम पर अ़ज़ाब आने का धमाका सुना तो पीछे मुड़कर देखा और क़ौम की तबाही पर अफ़सोस ज़ाहिर करने लगी, उसी वक़्त एक पत्थर आया जिसने इसका भी ख़ात्मा कर दिया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी व मज़हरी)

फ़रिश्तों ने यह भी बतला दिया किः

اِنَّ مَوْعِدَهُمُ الصُّبْحُ

यानी उन पर सुबह होते ही अ़ज़ाब आ जायेगा। हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि मैं चाहता हूँ कि और भी जल्दी अ़ज़ाब आ जाये। इस पर फ़रिश्तों ने कहाः

اَلَيْسَ الصُّبْحُ بِقَرِيْبٍ ۝

यानी सुबह तो कुछ दूर नहीं, होने ही वाली है।

फिर उस अ़ज़ाब का वाक़िआ क़ुरआन ने इस तरह बयान फ़रमाया कि जब हमारा अ़ज़ाब आ गया तो हमने उन बस्तियों के ऊपर का हिस्सा नीचे कर दिया और उन पर ऐसे पत्थर बरसाये जिन पर हर एक के नाम की निशानी लगी हुई थी।

रिवायतों में है कि ये चार बड़े-बड़े शहर थे जिनमें ये लोग बसते थे, इन्हीं बस्तियों को क़ुरआने करीम में दूसरी जगह "मुअ्तफ़िकात" के नाम से नामित किया गया है। जब अल्लाह

तआला का हुक्म हुआ तो जिब्रीले अमीन ने अपना पंख उन सब शहरों की ज़मीन के नीचे पहुँचाकर सब को इस तरह ऊपर उठा लिया कि हर चीज़ अपनी जगह रही, पानी के बरतन से पानी भी नहीं गिरा, आसमान की तरफ़ से कुत्तों, जानवरों और इनसानों की आवाज़ें आ रही थीं, उन सब बस्तियों को आसमान की तरफ़ सीधा उठाने के बाद औंधा करके पलट दिया, जो उनके बुरे और ख़बीस अ़मल के मुनासिबे हाल था।

आयत के आख़िर में क़ौमे लूत का अ़ज़ाब ज़िक्र करने के बाद दुनिया की मौजूदा क़ौमों को चेतावनी देने के लिये इरशाद फ़रमायाः

وَمَا هِيَ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ بِبَعِيْدٍ۝

यानी पथराव का अ़ज़ाब आज भी ज़ालिमों से कुछ दूर नहीं। जो लोग इस क़ौम की तरह ज़ुल्म व बेहयाई पर जमे रहें वे अपने आपको इस अ़ज़ाब से दूर न समझें, आज भी यह अ़ज़ाब आ सकता है। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी उम्मत में भी कुछ लोग वह अ़मल करेंगे जो क़ौमे लूत करती थी, जब ऐसा होने लगे तो इन्तिज़ार करो कि उन पर भी वही अ़ज़ाब आयेगा जो क़ौमे लूत पर आया है।

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا ۚ قَالَ يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ ۚ وَلَا
تَنْقُصُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيْزَانَ اِنِّيْٓ اَرٰىكُمْ بِخَيْرٍ وَّاِنِّيْٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ مُّحِيْطٍ ﴿٨٤﴾ وَيٰقَوْمِ اَوْفُوا
الْمِكْيَالَ وَالْمِيْزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِدِيْنَ ﴿٨٥﴾
بَقِيَّتُ اللّٰهِ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۚ وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيْظٍ ﴿٨٦﴾ قَالُوْا يٰشُعَيْبُ اَصَلٰوتُكَ
تَاْمُرُكَ اَنْ نَّتْرُكَ مَا يَعْبُدُ اٰبَآؤُنَآ اَوْ اَنْ نَّفْعَلَ فِيْٓ اَمْوَالِنَا مَا نَشٰٓؤُا ۭ اِنَّكَ لَاَنْتَ الْحَلِيْمُ الرَّشِيْدُ ﴿٨٧﴾
قَالَ يٰقَوْمِ اَرَءَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ وَرَزَقَنِيْ مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا ۭ وَمَآ اُرِيْدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ
اِلٰى مَآ اَنْهٰىكُمْ عَنْهُ ۭ اِنْ اُرِيْدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ ۭ وَمَا تَوْفِيْقِيْٓ اِلَّا بِاللّٰهِ ۭ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ
وَاِلَيْهِ اُنِيْبُ ﴿٨٨﴾ وَيٰقَوْمِ لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شِقَاقِيْٓ اَنْ يُّصِيْبَكُمْ مِّثْلُ مَآ اَصَابَ قَوْمَ نُوْحٍ اَوْ قَوْمَ هُوْدٍ اَوْ
قَوْمَ صٰلِحٍ ۭ وَمَا قَوْمُ لُوْطٍ مِّنْكُمْ بِبَعِيْدٍ ﴿٨٩﴾ وَاسْتَغْفِرُوْا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوْبُوْٓا اِلَيْهِ ۭ اِنَّ رَبِّيْ رَحِيْمٌ وَّدُوْدٌ ﴿٩٠﴾ قَالُوْا
يٰشُعَيْبُ مَا نَفْقَهُ كَثِيْرًا مِّمَّا تَقُوْلُ وَاِنَّا لَنَرٰىكَ فِيْنَا ضَعِيْفًا ۚ وَلَوْلَا رَهْطُكَ لَرَجَمْنٰكَ ۡ وَمَآ اَنْتَ
عَلَيْنَا بِعَزِيْزٍ ﴿٩١﴾ قَالَ يٰقَوْمِ اَرَهْطِيْٓ اَعَزُّ عَلَيْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ ۭ وَاتَّخَذْتُمُوْهُ وَرَاۗءَكُمْ ظِهْرِيًّا ۭ اِنَّ رَبِّيْ بِمَا
تَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ﴿٩٢﴾ وَيٰقَوْمِ اعْمَلُوْا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنِّيْ عَامِلٌ ۭ سَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۙ مَنْ يَّاْتِيْهِ عَذَابٌ
يُّخْزِيْهِ وَمَنْ هُوَ كَاذِبٌ ۭ وَارْتَقِبُوْٓا اِنِّيْ مَعَكُمْ رَقِيْبٌ ﴿٩٣﴾ وَلَمَّا جَاۗءَ اَمْرُنَا نَجَّيْنَا شُعَيْبًا وَّالَّذِيْنَ

آمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِّنَّا ۚ وَأَخَذَتِ الَّذِينَ ظَلَمُوا الصَّيْحَةُ فَأَصْبَحُوا فِي دِيَارِهِمْ جَاثِمِينَ ﴿٩٤﴾ كَأَن لَّمْ يَغْنَوْا فِيهَا ۗ أَلَا بُعْدًا لِّمَدْيَنَ كَمَا بَعِدَتْ ثَمُودُ ﴿٩٥﴾

व इला मद्य-न अख़ाहुम् शुऐबन्, क़ा-ल या क़ौमिअ्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, व ला तन्क़ुसुल्-मिक्या-ल वल्मीज़ा-न इन्नी अराकुम् बिख़ैरिंव्-व इन्नी अख़ाफ़ु अ़लैकुम् अ़ज़ा-ब यौमिम्-मुहीत (84) व या क़ौमि औफ़ुल्-मिक्या-ल वल्-मीज़ा-न बिल्-क़िस्ति व ला तब्ख़सुन्ना-स अश्या-अहुम् व ला तअ्सौ फ़िल्अर्ज़ि मुफ़्सिदीन (85) बक़िय्यतुल्लाहि ख़ैरुल्लकुम् इन् कुन्तुम् मुअ्मिनी-न, व मा अ-न अ़लैकुम् बि-हफ़ीज़ (86) क़ालू या शुऐबु अ-सलातु-क तअ्मुरु-क अन् नत्रु-क मा यअ्बुदु आबाउना औ अन्-नफ़्अ़-ल फ़ी अम्वालिना मा नशा-उ, इन्न-क ल-अन्तल् हलीमुर्-रशीद (87) क़ा-ल या क़ौमि अ-रऐतुम् इन् कुन्तु अ़ला बय्यि-नतिम् मिर्रब्बी व र-ज़-क़नी मिन्हु रिज़्क़न् ह-सनन्, व मा उरीदु अन् उख़ालि-फ़कुम् इला मा अन्हाकुम् अ़न्हु, इन् उरीदु इल्लल्-

और मदयन की तरफ़ भेजा उनके भाई शुऐब को, बोला ऐ मेरी क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की कोई नहीं तुम्हारा माबूद उसके सिवा, और न घटाओ माप और तौल को, मैं देखता हूँ तुमको ख़ुशहाल और डरता हूँ तुम पर अ़ज़ाब से एक घेर लेने वाले दिन के। (84) और ऐ क़ौम! पूरा करो माप और तौल को इन्साफ़ से और न घटाओ लोगों को उनकी चीज़ें, और मत मचाओ ज़मीन में फ़साद। (85) जो बच रहे अल्लाह का दिया वह बेहतर है तुमको अगर हो तुम ईमान वाले, और मैं नहीं हूँ तुम पर निगहबान। (86) बोले ऐ शुऐब! क्या तेरे नमाज़ पढ़ने ने तुझको यह सिखाया कि हम छोड़ दें जिनको पूजते रहे हमारे बाप-दादे, या छोड़ दें करना जो कुछ कि करते हैं अपने मालों में, तू ही बड़ा वक़ार वाला है नेक-चलन। (87) बोला ऐ क़ौम! देखो तो अगर मुझको समझ आ गई अपने रब की तरफ़ से और उसने रोज़ी दी मुझको नेक रोज़ी, और मैं नहीं चाहता कि बाद में ख़ुद करूँ वह काम जो तुमसे छुड़ाऊँ, मैं तो चाहता हूँ संवारना जहाँ तक हो सके, और बन

इस्ला-ह मस्त-तअ़्तु, व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहि, अ़लैहि तवक्कल्तु व इलैहि उनीब (88) व या क़ौमि ला यज्रिमन्नकुम् शिक़ाक़ी अंय्युसी-बकुम् मिस्लु मा असा-ब क़ौ-म नूहिन् औ क़ौ-म हूदिन् औ क़ौ-म सालिहिन्, व मा क़ौमु लूतिम्-मिन्कुम् बि-बअ़ीद (89) वस्तग़्फ़िरू रब्बकुम् सुम्-म तूबू इलैहि, इन्-न रब्बी रहीमुंव्-वदूद (90) क़ालू या शुअ़ैबु मा नफ़्क़हु कसीरम्-मिम्मा तक़ूलु व इन्ना ल-नरा-क फ़ीना ज़अ़ीफ़न्, व लौ ला रह्तु-क ल-रजम्ना-क व मा अन्-त अ़लैना बि-अ़ज़ीज़ (91) क़ा-ल या क़ौमि अ-रह्ती अ-अ़ज़्ज़ु अ़लैकुम् मिनल्लाहि, वत्तख़ज़्तुमूहु वरा-अकुम् ज़िह्रिय्यन्, इन्-न रब्बी बिमा तअ़्मलू-न मुहीत (92) व या क़ौमिअ़्मलू अ़ला मकानतिकुम् इन्नी आमिलुन्, सौ-फ़ तअ़्लमू-न मंय्यअ्तीहि अ़ज़ाबुंय्युख़्ज़ीहि व मन् हु-व काज़िबुन्, वर्तक़िबू इन्नी म-अ़कुम् रक़ीब (93) व लम्मा जा-अ अम्रुना नज्जैना शुअ़ैबंव्-वल्लज़ी-न आमनू म-अ़हू बिरह्मतिम्-मिन्ना व अ-ख़ज़तिल्लज़ी-न

आना है अल्लाह की मदद से उसी पर मैंने भरोसा किया है और उसी की तरफ़ मेरा रुजू है। (88) और ऐ मेरी क़ौम! न कमाओ मेरी ज़िद करके यह कि पड़े तुम पर जैसा कुछ कि पड़ चुका क़ौमे नूह पर या क़ौमे हूद या क़ौमे सालेह पर और क़ौमे लूत तुमसे कुछ दूर ही नहीं। (89) और गुनाह बख़्शवाओ अपने रब से और रुजू करो उसकी तरफ़ अलबत्ता मेरा रब है मेहरबान मुहब्बत वाला। (90) बोले ऐ शुऐब! हम नहीं समझते बहुत बातें जो तू कहता है, और हम तो देखते हैं कि तू हम में कमज़ोर है, और अगर न होते तेरे भाई-बन्द तो तुझको हम संगसार कर डालते, और हमारी निगाह में तेरी कुछ इज़्ज़त नहीं। (91) बोला ऐ क़ौम! क्या मेरे भाई-बन्दों का दबाव तुम पर ज़्यादा है अल्लाह से? और उसको डाल रखा है तुमने पीठ पीछे भुलाकर, तहक़ीक़ कि मेरे रब के क़ाबू में है जो कुछ तुम करते हो। (92) और ऐ मेरी क़ौम! काम किये जाओ अपनी जगह, मैं भी काम करता हूँ, आगे मालूम कर लोगे किस पर आता है अ़ज़ाब रुस्वा करने वाला और कौन है झूठा, और ताकते रहो मैं भी तुम्हारे साथ ताक रहा हूँ। (93) और जब पहुँचा हमारा हुक्म, बचा दिया हमने शुऐब को और जो ईमान लाये थे उसके साथ अपनी मेहरबानी से, और आ पकड़ा उन

ज़-लमुस्सैहतु फ़-अस्बहू फ़ी दियारिहिम् जासिमीन (94) कअल्लम् यग़्नौ फ़ीहा, अला बुअ्दल् लिमद्य-न कमा बअिदत् समूद (95) ❁	ज़ालिमों को कड़क ने, फिर सुबह को रह गये अपने घरों में औंधे पड़े हुए। (94) गोया कभी वहाँ बसे ही न थे। सुन लो! फटकार है मदयन को जैसे फटकार हुई थी समूद को। (95) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मदयन (वालों) की तरफ़ उनके भाई शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (मदयन वालों से) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद (बनने के क़ाबिल) नहीं, (यह हुक्म तो दीन व अ़क़ीदों के बारे में उनके हाल के मुनासिब था) और (दूसरा हुक्म मामलात के मुताल्लिक़ उनके मुनासिब यह फ़रमाया कि) तुम नाप और तौल में कमी न किया करो (क्योंकि) मैं तुमको ख़ुशहाली की हालत में देखता हूँ (फिर तुमको नाप-तौल में कमी करने की क्या ज़रूरत पड़ी है, और हक़ीक़त में तो किसी को भी ज़रूरत नहीं होती) और (अ़लावा इसके कि नाप-तौल में कमी न करना, अल्लाह तआ़ला की नेमतों का तक़ाज़ा है ख़ुद नुक़सान का ख़ौफ़ भी इसको चाहता है, क्योंकि इसमें) मुझको तुम पर ऐसे दिन के अ़ज़ाब का अन्देशा है जो (क़िस्म-क़िस्म की मुसीबतों) को अपने अन्दर रखने वाला होगा। और (अगरचे कमी न करने से ही यह हुक्म समझ में आ गया कि पूरा नापो-तौलो मगर ताकीद के लिये इसकी मनाही के बाद इस हुक्म को स्पष्टता के साथ भी बयान फ़रमाया कि) ऐ मेरी क़ौम! तुम नाप और तौल पूरी-पूरी किया करो इन्साफ़ से, और लोगों का उनकी चीज़ों में नुक़सान मत किया करो (जैसा कि तुम्हारी आ़दत है) और (शिर्क और लोगों के हुक़ूक़ में कमी करके) ज़मीन में फ़साद करते हुए (तौहीद व इन्साफ़ की) हद से न निकलो। (लोगों के हुक़ूक़ अदा करने के बाद) अल्लाह का दिया हुआ जो कुछ (हलाल माल) बच जाये वह तुम्हारे लिये (इस हराम कमाई से) बहुत ही बेहतर है, (क्योंकि हराम में चाहे वह ज़्यादा हो बरकत नहीं और उसका अन्जाम जहन्नम है, और हलाल में अगरचे वह थोड़ा हो बरकत होती है और उसका अन्जाम अल्लाह की रज़ा है) अगर तुमको यक़ीन आये (तो मान लो) और (अगर यक़ीन न आये तो तुम जानो) मैं तुम्हारा पहरा देने वाला तो हूँ नहीं (कि तुमसे जबरन ये काम छुड़ा दूँ, जैसा करोगे वैसा भुगतोगे)।

वे लोग (ये तमाम उपदेश और नसीहतें सुनकर) कहने लगे कि ऐ शुऐब! क्या तुम्हारी (नक़ली और वहमी) पाकबाज़ी तुमको (ऐसी-ऐसी बातों की) तालीम कर रही है कि (तुम हमसे कहते हो कि) हम उन चीज़ों (की पूजा) को छोड़ दें जिनकी परस्तिश "यानी पूजा और इबादत" हमारे बड़े करते आये हैं? या (इस बात को छोड़ दें कि) हम अपने माल में जो चाहें इख़्तियार चलायें? वाक़ई आप हैं बड़े अ़क़्लमन्द, दीन पर चलने वाले (यानी जिन बातों से हमको मना

करते हो दोनों में से कोई बुरी नहीं, क्योंकि एक की दलील तो रिवायती है कि हमारे बड़ों से बुत परस्ती होती आई है, दूसरे की दलील अ़क्ली है कि अपना माल है इसमें हमें हर तरह का इख़्तियार है, पस हमको मना न करना चाहिये। और अ़क्लमन्द और दीन पर चलने वाले मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर कहा, जैसा कि बददीनों की आ़दत होती है दीनदारों के साथ मज़ाक़ करने की, और उनकी रिवायती व अ़क्ली दोनों दलीलों का ग़लत होना बिल्कुल स्पष्ट है)।

शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) ने फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! (तुम जो मुझसे चाहते हो कि मैं तौहीद व इन्साफ़ की नसीहत न करूँ तो) भला यह बताओ कि अगर मैं अपने रब की जानिब से दलील पर (क़ायम) हूँ (जिससे तौहीद व इन्साफ़ साबित है) और उसने मुझको अपनी तरफ़ से एक उम्दा दौलत (यानी नुबुव्वत) दी हो, (जिससे मुझ पर इन अहकाम की तब्लीग़ वाजिब हो, यानी तौहीद व अ़दल का हक़ होना भी साबित और उनकी तब्लीग़ भी वाजिब) तो फिर कैसे तब्लीग़ न करूँ और मैं (जिस तरह इन बातों की तुमको तालीम करता हूँ ख़ुद भी तो इन पर अ़मल करता हूँ) यह नहीं चाहता कि तुम्हारे उलट उन कामों को करूँ जिनसे मैं तुमको मना करता हूँ (उलट से यही मुराद है कि तुमको दूसरी राह बतलाऊँ और ख़ुद दूसरी राह पर चलूँ। मतलब यह है कि मेरी नसीहत सिर्फ़ ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी से है जिसका सुबूत यह है कि मैं वही बातें बतलाता हूँ जो अपने नफ़्स के लिये भी पसन्द करता हूँ। ग़र्ज़ कि) मैं तो इस्लाह "यानी सुधार" चाहता हूँ जहाँ तक मेरे बस में है, और मुझको जो कुछ (अ़मल व सुधार की) तौफ़ीक़ हो जाती है सिर्फ़ अल्लाह ही की मदद से है (वरना क्या मैं और क्या मेरा इरादा) उसी पर मैं भरोसा रखता हूँ और उसी की तरफ़ (तमाम मामलात में) रुजू करता हूँ (ख़ुलासा यह कि तौहीद व अ़दल के वाजिब होने पर दलीलें भी क़ायम, और अल्लाह के हुक्म से उसकी तब्लीग़, और नसीहत करने वाला और सुधारक ऐसा हमदर्द, फिर भी नहीं मानते बल्कि उल्टी मुझसे उम्मीद रखते हो कि मैं कहना छोड़ दूँ। चूँकि इस तक़रीर में दिली हमदर्दी और सुधार की अपनी तरफ़ निस्बत की है, इसलिये 'व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहि.............' फ़रमा दिया)।

(यहाँ तक तो उनके क़ौल का जवाब हो गया, आगे शौक़ दिलाने और डराने के लिये फ़रमाते हैं) और ऐ मेरी क़ौम! मेरी ज़िद "और मुख़ालफ़त" (व दुश्मनी) तुम्हारे लिये इसका सबब न हो जाये कि तुम पर भी उसी तरह की मुसीबतें आ पड़ें जैसी नूह की क़ौम, या हूद की क़ौम, या सालेह की क़ौम पर आ पड़ी थीं, और लूत की क़ौम तो (अभी) तुम से (बहुत) दूर (ज़माने में) नहीं (हुई)। (यानी उन क़ौमों की तुलना में इनका ज़माना नज़दीक है। यह तो डरावे का मज़मून हो गया, आगे शौक़ व रुचि दिलाने का मज़मून है) और तुम अपने रब से अपने गुनाह (यानी शिर्क व ज़ुल्म) माफ़ कराओ (यानी ईमान लाओ, क्योंकि ईमान से सब गुनाह माफ़ हो जाते हैं, अगरचे हुक़ूक़ अदा करने पड़ें) फिर (इबादत की नेकी के साथ) उसकी तरफ़ मुतवज्जह होओ, बिला शुब्हा मेरा रब बड़ा मेहरबान (और) बड़ी मुहब्बत वाला है (वह गुनाह को माफ़ कर देता है और नेकी को क़ुबूल करता है)। वे लोग (यह लाजवाब और दिल को पिघला देने वाली तक़रीर सुनकर माक़ूल जवाब से आ़जिज़ होकर जहालत के तौर पर) कहने लगे कि ऐ

शुऐब! बहुत-सी बातें तुम्हारी कही हुई हमारी समझ में नहीं आतीं (यह बात या तो इस वजह से कही हो कि अच्छी तरह तवज्जोह से आपकी बातें न सुनी हों, या अपमानित करने को कहा हो कि नऊज़ु बिल्लाह यह बकवास है समझने के क़ाबिल नहीं। चुनाँचे बददीन लोगों से इस तरह की सब बातें सामने आती हैं) और हम तुमको अपने (मजमे) में कमज़ोर देख रहे हैं। और अगर तुम्हारे ख़ानदान का (जो कि हमारे ही मज़हब वाले हैं हमको) लिहाज़ न होता तो हम तुमको (कभी का) संगसार "यानी पत्थरों से मार-मारकर हलाक" कर चुके होते। और हमारी नज़र में तो तुम्हारी कुछ इज़्ज़त व क़द्र ही नहीं (लेकिन जिसका लिहाज़ होता है उसके कारण उसके रिश्तेदार की भी रियायत होती है। मतलब उनका यह था कि तुम हमको ये मज़ामीन मत सुनाओ वरना तुम्हारी जान का ख़तरा है। पहले मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर तब्लीग़ से रोका था कि 'क्या तेरे नमाज़ पढ़ने ने तुझको यह सिखाया है............' और अब धमकी देकर रोका)।

शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) ने (जवाब में) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! (अफ़सोस और ताज्जुब है कि मेरा जो ताल्लुक़ अल्लाह तआ़ला के साथ है कि मैं उसका नबी हूँ वह तो मेरे हलाक करने से रोक और बाधा न हुआ और जो मेरा ताल्लुक ख़ानदान के साथ है कि मैं उनका रिश्तेदार हूँ वह उससे रोक हुआ, बस इससे तो यह लाज़िम आता है कि तुम ख़ानदान का लिहाज़ अल्लाह से भी ज़्यादा करते हो, तो) क्या मेरा ख़ानदान तुम्हारे नज़दीक (नऊज़ु बिल्लाह) अल्लाह से भी ज़्यादा इज़्ज़त वाला है (कि ख़ानदान का तो लिहाज़ किया) और उसको (यानी अल्लाह तआ़ला को) तुमने पीठ पीछे डाल दिया (यानी उसका लिहाज़ न किया। सो इसका ख़मियाज़ा बहुत जल्दी भुगतोगे, क्योंकि) यक़ीनन मेरा रब तुम्हारे सब आमाल को (अपने इल्म के) घेरे में लिए हुए है।

और ऐ मेरी क़ौम! (अगर तुमको अ़ज़ाब का भी यक़ीन नहीं आता तो आख़िरी बात यह है कि तुम जानो बेहतर है) तुम अपनी हालत पर अ़मल करते रहो मैं भी (अपने तौर पर) अ़मल कर रहा हूँ। (सो) अब जल्द ही तुमको मालूम होने वाला है कि वह कौन शख़्स है जिस पर अ़ज़ाब आया चाहता है, जो उसको रुस्वा कर देगा। और वह कौन शख़्स है जो झूठा था (यानी तुम मुझको नुबुव्वत के दावे में झूठा कहते हो और हक़ीर व कम दर्जे का समझते हो, तो अब मालूम हो जायेगा कि झूठ बोलने का अपराध करने वाला और ज़िल्लत की सज़ा को अपने लिये वाजिब करने वाला कौन था, तुम या मैं) और तुम भी इन्तिज़ार करो मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार कर रहा हूँ (कि देखें अ़ज़ाब आता है जैसा कि मैं कहता हूँ, या नहीं आता है जैसा कि तुम्हारा गुमान है। ग़र्ज़ कि एक ज़माने के बाद अ़ज़ाब का सामान शुरू हुआ)। और जब हमारा हुक्म (अ़ज़ाब के लिये) आ पहुँचा (तो) हमने (उस अ़ज़ाब से) शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) को और जो उनके साथ में ईमान वाले थे उनको अपनी (ख़ास मेहरबानी और) इनायत से बचा लिया। और उन ज़ालिमों को एक सख़्त आवाज़ ने (जो कि जिब्राईल अ़लैहिस्सलाम की चीख़ थी) आ पकड़ा, सो अपने घरों के अन्दर औंधे गिरे रह गये (और मर गये)। जैसे उन घरों में बसे ही न थे। ख़ूब सुन लो (और नसीहत पकड़ो) कि मद्यन को रहमत से दूरी हुई जैसा कि समूद रहमत से दूर हुए थे।

मआरिफ़ व मसाईल

ऊपर दर्ज हुई आयतों में हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम का वाक़िआ़ बयान हुआ है। उनकी क़ौम कुफ़्र व शिर्क के अ़लावा नाप-तौल में कमी भी करती थी, हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने उनको ईमान की दावत दी और नाप-तौल में कमी करने से मना किया और इसके ख़िलाफ़ करने पर अल्लाह के अ़ज़ाब से डराया मगर ये अपने इनकार और नाफ़रमानी पर क़ायम रहे तो पूरी क़ौम एक सख़्त अ़ज़ाब के ज़रिये हलाक कर दी गयी। जिसकी तफ़सील इस तरह है।

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا.

यानी हमने भेजा मद्यन की तरफ़ उनके भाई शुऐब को। 'मदयन' असल में एक शहर का नाम था जिसको मदयन बिन इब्राहीम ने बसाया था, इसका स्थान मुल्के शाम के मौजूदा मक़ाम "मआ़न" को बतलाया जाता है। इस शहर के रहने वालों को भी बजाय मदयन वालों के मदयन कह दिया जाता है। शुऐब अ़लैहिस्सलाम अल्लाह तआ़ला के बड़े रुतबे वाले पैगम्बर हैं जो इसी मद्यन क़ौम में से हैं, इसी लिये उनको मदयन का भाई फ़रमाकर इस नेमत की तरफ़ इशारा कर दिया कि इस क़ौम के रसूल को अल्लाह तआ़ला ने इसी क़ौम से बनाया ताकि उनसे मानूस होकर उनकी हिदायतों को आसानी से क़ुबूल कर सकें।

قَالَ يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَالَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ، وَلَا تَنْقُصُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيْزَانَ.

इसमें हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने पहले तो अपनी क़ौम को तौहीद की दावत दी, क्योंकि ये लोग मुश्रिक थे, पेड़ों की पूजा-पाठ किया करते थे, जिसको क़ुरआन में लफ़्ज़ 'ऐका' से ताबीर किया गया है, और इसी की निस्बत से मदयन वालों को 'अस्हाबुल-ऐका' का भी लक़ब दिया गया है। इस कुफ़्र व शिर्क के साथ उनमें एक और निहायत सख़्त ऐब और गुनाह यह था कि व्यापार और लेन-देन के वक़्त नाप-तौल में कमी करके लोगों का हक़ मार लेते थे। हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने उनको इससे मना फ़रमाया।

फ़ायदाः यहाँ यह बात ख़ास तौर से ध्यान देने के क़ाबिल है कि कुफ़्र व शिर्क सब गुनाहों की जड़ है, जो क़ौम इसमें मुब्तला है उसको पहले ईमान ही की दावत दी जाती है, ईमान से पहले दूसरे मामलात और आमाल पर तवज्जोह नहीं दी जाती। दुनिया में उनकी निजात या अ़ज़ाब भी इसी ईमान व कुफ़्र की बुनियाद पर होता है, पहले तमाम अम्बिया और उनकी क़ौमों के वाक़िआ़त जो क़ुरआन में बयान हुए हैं इसी तर्ज़े-अ़मल के गवाह हैं, सिर्फ़ दो क़ौमें ऐसी हैं जिन पर अ़ज़ाब नाज़िल होने में कुफ़्र के साथ उनके बुरे आमाल को भी दख़ल रहा है- एक लूत अ़लैहिस्सलाम की क़ौम, जिसका ज़िक्र इससे पहले आ चुका है कि उन पर जो अ़ज़ाब पूरी बस्ती उलट देने का आया उसका सबब उनके ख़बीस और बुरे अ़मल को बतलाया गया है, दूसरी क़ौम शुऐब अ़लैहिस्सलाम की है जिनके अ़ज़ाब का सबब कुफ़्र व शिर्क के अ़लावा नाप-तौल में कमी

करने को भी क़रार दिया गया है।

इससे मालूम हुआ कि ये दोनों काम अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सब गुनाहों से ज़्यादा नापसन्दीदा और सख़्त हैं। बज़ाहिर वजह यह है कि ये दोनों काम ऐसे हैं कि पूरी इनसानी नस्ल को इससे सख़्त नुक़सान पहुँचता है और पूरे आ़लम में इससे ज़बरदस्त ख़राबी फैल जाती है।

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम को नाप-तौल में कमी करने के ख़बीस अ़मल से रोकने के लिये पैग़म्बराना शफ़क़त के साथ पहले तो यह फ़रमायाः

اِنِّیْۤ اَرٰىكُمْ بِخَيْرٍ وَّاِنِّیْۤ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ مُّحِيْطٍ○

यानी मैं तुम्हें इस वक़्त ख़ुशहाली में देखता हूँ, कोई ग़रीबी, फ़ाक़ा और माली तंगी नहीं जिसकी वजह से इस बला में मुब्तला हो। इसके अ़लावा अल्लाह तआ़ला की नेमत का शुक्र यह होना चाहिये कि तुम उसकी मख़्लूक़ पर ज़ुल्म न करो, और फिर यह भी बतला दिया कि अगर तुमने मेरी बात न सुनी और इस बुरे अ़मल से बाज़ न आये तो मुझे ख़तरा है कि ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब तुम्हें घेर ले। इस अ़ज़ाब से आख़िरत का अ़ज़ाब भी मुराद हो सकता है और दुनिया का भी, फिर दुनिया के अ़ज़ाब भी विभिन्न प्रकार के आ सकते हैं, मामूली अ़ज़ाब यह है कि तुम्हारी यह ख़ुशहाली ख़त्म हो जाये और तुम सूखे और चीज़ों की महंगाई में मुब्तला हो जाओ, जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया किः

"जब कोई क़ौम नाप-तौल में कमी करने लगती है तो अल्लाह तआ़ला उसको क़हत (सूखे) और चीज़ों के महंगा होने के अ़ज़ाब में मुब्तला कर देते हैं।"

और अगरचे नाप-तौल में कमी को मना करने से पूरा नापना-तौलना ख़ुद ही ज़रूरी हो जाता है लेकिन और ज़्यादा ताकीद के लिये शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमायाः

وَيٰقَوْمِ اَوْفُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيْزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِی الْاَرْضِ مُفْسِدِيْنَ○

यानी ऐ मेरी क़ौम! तुम नाप और तौल को इन्साफ़ के साथ पूरा किया करो और लोगों की चीज़ों को कम न करो, और ज़मीन में फ़साद फैलाते न फिरो। फिर उनको शफ़क़त के साथ समझाया।

بَقِيَّتُ اللّٰهِ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ، وَمَاۤ اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيْظٍ○

यानी लोगों के हुक़ूक़ नाप-तौल पूरा करके अदा करने के बाद जो कुछ बच रहे तुम्हारे लिये वही बेहतर है अगर तुम मेरी बात मानो, और अगर मेरी बात न मानोगे तो याद रखो मैं इसका ज़िम्मेदार नहीं कि तुम पर कोई अ़ज़ाब आ जाये।

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम के बारे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वह ख़तीबुल-अम्बिया हैं। आपने अपने उम्दा और बेहतरीन अन्दाज़े बयान से अपनी क़ौम को समझाने और हिदायत पर लाने की पूरी कोशिश में इन्तिहा कर दी, मगर यह सब कुछ सुनने के बाद क़ौम ने वही जवाब दिया जो जाहिल क़ौमें अपने सुधारकों को दिया करती हैं। उन पर फब्तियाँ कसीं, मज़ाक़ उड़ाया। कहने लगेः

اَصَلٰوتُكَ تَاْمُرُكَ اَنْ نَّتْرُكَ مَا يَعْبُدُ اٰبَآؤُنَآ اَوْ اَنْ نَّفْعَلَ فِيْٓ اَمْوَالِنَا مَا نَشٰٓؤُا، اِنَّكَ لَاَنْتَ الْحَلِيْمُ الرَّشِيْدُ○

यानी क्या तुम्हारी नमाज़ तुम्हें यह बतलाती है कि हम उन माबूदों को छोड़ दें जिनकी पूजा और इबादत हमारे बाप-दादा करते चले आये हैं, और यह कि हम अपने मिल्क वाले मालों में ख़ुदमुख़्तार न रहें कि जिस तरह हमारा जी चाहे मामला करें बल्कि अपने मामलात भी आप से पूछ-पूछकर किया करें कि क्या हलाल है क्या हराम?

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की नमाज़ पूरी क़ौम में मशहूर थी कि बहुत ज़्यादा नवाफ़िल व इबादत में लगे रहते थे इसलिये उनके इरशादात को मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर नमाज़ की तरफ़ मन्सूब किया कि तुम्हारी यह नमाज़ ही तुम्हें (अल्लाह की पनाह) ऐसी ग़लत बातें बताती है। उनके इस कलाम से मालूम हुआ कि ये लोग भी यूँ समझते थे कि दीन व शरीअ़त का काम सिर्फ़ इबादतों तक सीमित है, मामलात में इसका क्या दख़ल है। हर शख़्स अपने माल में जिस तरह चाहे अपना इख़्तियार चलाये, उस पर कोई पाबन्दी लगाना दीन का काम नहीं, जैसे इस ज़माने में भी बहुत से बेसमझ लोग ऐसा ख़्याल रखते हैं।

क़ौम ने ख़ालिस हमदर्दी, दिली तड़प और नसीहत का जवाब इस क़द्र कड़वा दिया मगर हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम पैग़म्बरी शान रखते हैं, यह सब कुछ सुनने के बाद भी उसी हमदर्दी के साथ मुख़ातिब होकर फिर भी समझाने के लिये फ़रमाने लगेः

يٰقَوْمِ اَرَءَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ وَرَزَقَنِيْ مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا.

यानी ऐ मेरी क़ौम! मुझे बतलाओ कि अगर मैं अपने रब की तरफ़ से अपनी बात के हक़ होने पर दलील और काफ़ी गवाही रखता हूँ और अल्लाह तआ़ला ने बेहतरीन रिज़्क़ भी अ़ता फ़रमाया हो, कि ज़ाहिरी रिज़्क़ जिस पर गुज़ारे का मदार है वह भी अ़ता फ़रमाया और बातिनी रिज़्क़ समझ व अ़क्ल और उस पर वही व नुबुव्वत का बेशक़ीमती इनाम भी अ़ता फ़रमाया तो फिर क्या तुम्हारी राय यह है कि इन सब चीज़ों के होते हुए मैं भी तुम्हारी तरह गुमराही और ज़ुल्म को इख़्तियार कर लूँ और हक़ बात तुम्हें न पहुँचाऊँ? इसके बाद फ़रमायाः

وَمَآ اُرِيْدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَآ اَنْهٰكُمْ عَنْهُ.

यानी यह भी तो समझो कि मैं जिस चीज़ से तुम्हें रोकता हूँ ख़ुद भी तो उसके पास नहीं जाता। अगर मैं तुम्हें मना करता और ख़ुद उसको करता तो तुम्हारे लिये कहने की गुंजाईश थी।

इससे मालूम हुआ कि दावत देने वाले और वाअ़िज़ व मुबल्लिग़ के अ़मल को उसके वअ़ज़ व नसीहत में बड़ा दख़ल होता है, जिस चीज़ पर वाअ़िज़ ख़ुद आ़मिल न हो उसकी बात का दूसरों पर कोई असर नहीं होता। फिर फ़रमायाः

اِنْ اُرِيْدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ.

यानी मेरा मक़सद इस सारी जिद्दोजहद और तुम्हें बार-बार के समझाने से सिवाय इसके कुछ नहीं कि अपनी हिम्मत भर इस्लाह (सुधार) की कोशिश करूँ। और फिर फ़रमाया कि यह

कोशिश भी दर हक़ीक़त मेरे अपने इख़्तियार से नहीं बल्कि:

وَمَا تَوْفِيْقِيْٓ اِلَّا بِاللّٰهِ، عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُنِيْبُo

यानी मैं जो कुछ करता हूँ वह सब अल्लाह तआ़ला की दी हुई तौफ़ीक़ से करता हूँ, वरना मेरे बस में कुछ न था, उसी पर मेरा भरोसा है और उसी की तरफ़ हर काम में मैं रुजू करता हूँ।

इस पन्द व नसीहत के बाद फिर उनको अल्लाह तआ़ला के अ़ज़ाब से डराया:

وَيٰقَوْمِ لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شِقَاقِيْٓ اَنْ يُّصِيْبَكُمْ مِّثْلُ مَآ اَصَابَ قَوْمَ نُوْحٍ اَوْ قَوْمَ هُوْدٍ اَوْ قَوْمَ صٰلِحٍ، وَمَا قَوْمُ لُوْطٍ مِّنْكُمْ بِبَعِيْدٍo

यानी तुम सोचो समझो, ऐसा न हो कि मेरी मुख़ालफ़त और दुश्मनी तुम पर कोई ऐसा अ़ज़ाब ला डाले जैसा तुमसे पहले क़ौमे नूह या क़ौमे हूद या क़ौमे सालेह पर आ चुका है, और लूत अ़लैहिस्सलाम की क़ौम और उनका इब्रतनाक अ़ज़ाब तो तुमसे कुछ दूर भी नहीं। यानी स्थान व जगह के एतिबार से भी क़ौमे लूत की उल्टी हुई बस्तियाँ मदयन के क़रीब ही हैं और ज़माने के एतिबार से भी तुमसे बहुत क़रीब ज़माने में उन पर अ़ज़ाब आया है, उससे इब्रत और सबक़ हासिल करो और अपनी ज़िद से बाज़ आ जाओ। उनकी क़ौम इसको सुनकर और भी ज़्यादा उत्तेजना में आ गयी और कहने लगी कि अगर आपके ख़ानदान की हिमायत आपको हासिल न होती तो हम आपको संगसार कर देते। हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने इस पर भी उनको नसीहत फ़रमाई कि तुमको मेरे ख़ानदान का तो ख़ौफ़ हुआ मगर ख़ुदा तआ़ला का कुछ ख़ौफ़ न आया जिसके क़ब्ज़े में सब कुछ है।

आख़िरकार जब क़ौम ने कोई बात न मानी तो शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि अच्छा तुम अब अ़ज़ाब का इन्तिज़ार करो। उसके बाद हक़ तआ़ला ने शुऐब अ़लैहिस्सलाम और उन पर ईमान लाने वालों को दस्तूर के मुताबिक़ उस बस्ती से निकाल लिया और बाक़ी सब के सब जिब्रील अ़लैहिस्सलाम की एक सख़्त आवाज़ से एक ही बार में हलाक हो गये।

अहकाम व मसाईल

नाप-तौल की कमी का मसला

ज़िक्र हुई आयतों में शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम पर अ़ज़ाब आने का एक सबब उनका नाप-तौल में कमी करना था जिसको 'ततफ़ीफ़' कहा जाता है, और क़ुरआने करीम ने सूरः 'वैलुल्-लिल्मुतफ़्फ़िफ़ीन' में उनके सख़्त अ़ज़ाब का बयान फ़रमाया है और तमाम उम्मत के नज़दीक ऐसा करना सख़्त हराम है। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के एक इरशाद के मातहत हज़रत इमाम मालिक रह. ने अपनी किताब मुवत्ता में फ़रमाया कि नाप-तौल की कमी से असल मुराद यह है कि किसी का जो हक़ किसी के ज़िम्मे हो उसको पूरा अदा न करे बल्कि उसमें कमी करे, चाहे वह नापने तौलने की चीज़ हो या दूसरी तरह की। अगर कोई मुलाज़िम

अपनी ड्यूटी की अदायेगी में कोताही करता है, किसी दफ़्तर का मुलाज़िम या कोई मज़दूर अपने काम के निर्धारित वक़्त में कमी करता है या मुक़र्ररा काम करने में कोताही करता है वह भी इसी सूची में दाख़िल है। कोई शख़्स नमाज़ के आदाब व सुन्नतें पूरे नहीं बजा लाता वह भी इसी ततफ़ीफ़ का मुजरिम है। अल्लाह तआ़ला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

मसलाः तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी में है कि क़ौमे शुऐब की एक आ़दत यह थी कि मुल्क के राईज सिक्कों दिरहम व दीनार में से किनारे काटकर सोना चाँदी बचा लेते और यह कटे हुए सिक्के पूरी क़ीमत से चलते कर देते थे, हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने उनको इससे मना फ़रमाया।

हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी इस्लामी हुकूमत के सिक्कों का तोड़ना हराम क़रार दिया है, और आयतः

تِسْعَةُ رَهْطٍ يُّفْسِدُوْنَ فِى الْاَرْضِ وَلَا يُصْلِحُوْنَ٥

की तफ़सीर में इमामे तफ़सीर हज़रत ज़ैद बिन असलम ने यही फ़रमाया है कि ये लोग दिरहम व दीनार को तोड़कर अपना फ़ायदा हासिल कर लिया करते थे, जिसको क़ुरआन पाक ने 'फ़साद-ए-अ़ज़ीम' क़रार दिया है।

हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रह. की ख़िलाफ़त के ज़माने में एक शख़्स को इस जुर्म में गिरफ़्तार किया गया कि वह दिरहम को काट रहा था, आपने उसको कोड़ों की सज़ा दी और सर मुंडवाकर शहर में गश्त कराया। (तफ़सीर-ए-क़ुर्तुबी)

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوْسٰى بِاٰيٰتِنَا وَسُلْطٰنٍ مُّبِيْنٍ ﴿٩٦﴾

اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۟ئِهٖ فَاتَّبَعُوْٓا اَمْرَ فِرْعَوْنَ ۚ وَمَآ اَمْرُ فِرْعَوْنَ بِرَشِيْدٍ ﴿٩٧﴾ يَقْدُمُ قَوْمَهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فَاَوْرَدَهُمُ النَّارَ ۖ وَبِئْسَ الْوِرْدُ الْمَوْرُوْدُ ﴿٩٨﴾ وَاُتْبِعُوْا فِىْ هٰذِهٖ لَعْنَةً وَّيَوْمَ الْقِيٰمَةِ ۚ بِئْسَ الرِّفْدُ الْمَرْفُوْدُ ﴿٩٩﴾ ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْقُرٰى نَقُصُّهٗ عَلَيْكَ مِنْهَا قَآئِمٌ وَّحَصِيْدٌ ﴿١٠٠﴾ وَمَا ظَلَمْنٰهُمْ وَلٰكِنْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ فَمَآ اَغْنَتْ عَنْهُمْ اٰلِهَتُهُمُ الَّتِىْ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ شَىْءٍ لَّمَّا جَآءَ اَمْرُ رَبِّكَ ۗ وَمَا زَادُوْهُمْ غَيْرَ تَتْبِيْبٍ ﴿١٠١﴾

व ल-क़द् अर्सल्ना मूसा बिआयातिना व सुल्तानिम्-मुबीन (96) इला फ़िर्औ-न व म-लइही फ़त्तबअू अम्-र फ़िरऔ-न व मा अम्रु फ़िरऔ-न बि-रशीद (97) यक़्दुमु क़ौमहू यौमल्-	और अलबत्ता भेज चुके हैं हम मूसा को अपनी निशानियाँ और वाज़ेह सनद देकर (96) फ़िरऔन और उसके सरदारों के पास, फिर वे चले हुक्म पर फ़िरऔन के, और नहीं बात फ़िरऔन की कुछ काम की। (97) आगे होगा अपनी क़ौम के

क़ियामति फ़औ-र-दहुमुन्ना-र, व बिअ्सल् विर्दुल्-मौरूद (98) व उत्बिअ़् फ़ी हाज़िही लअ़्-नतंव्-व यौमल्-क़ियामति, बिअ्सर्रिफ़्दुल् मर्फ़ूद (99) ज़ालि-क मिन् अम्बाइल्-क़ुरा नक़ुस्सुहू अलै-क मिन्हा क़ाइमुंव्-व हसीद (100) व मा ज़लम्नाहुम् व लाकिन् ज़-लमू अन्फ़ु-सहुम् फ़मा अग़्नत् अ़न्हुम् आलि-हतुहुमुल्लती यद्अ़ू-न मिन् दूनिल्लाहि मिन् शैइल्-लम्मा जा-अ अम्रु रब्बि-क, व मा ज़ादूहुम् ग़ै-र तत्बीब (101)	क़ियामत के दिन फिर पहुँचायेगा उनको आग पर, और बुरा घाट है जिस पर पहुँचे। (98) और पीछे से मिलती रही इस जहान में लानत और क़ियामत के दिन भी, बुरा इनाम है जो उनको मिला। (99) ये थोड़े से हालात हैं बस्तियों के हम सुनाते हैं तुझको कुछ उनमें से अब तक क़ायम हैं और कुछ की जड़ कट गई। (100) और हमने उन पर ज़ुल्म नहीं किया लेकिन ज़ुल्म कर गये वही अपनी जान पर, फिर कुछ काम न आये उनके ठाकुर (माबूद) जिनको वे पुकारते थे अल्लाह के अ़लावा किसी चीज़ में जिस वक़्त पहुँचा हुक्म तेरे रब का, और नहीं बढ़ाया उनके हक़ में सिवाय हलाक करने के। (101)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को (भी) अपने मोजिज़े और रोशन दलील देकर फ़िरऔ़न और उसके सरदारों के पास भेजा। सो (न फ़िरऔ़न ने माना और न उनके सरदारों ने माना बल्कि फ़िरऔ़न भी अपने कुफ़्र पर रहा और) वे लोग (भी) फ़िरऔ़न (ही) की राय पर चलते रहे, और फ़िरऔ़न की राय कुछ सही न थी। वह (फ़िरऔ़न) क़ियामत के दिन अपनी क़ौम के आगे-आगे होगा, फिर उन (सब) को दोज़ख़ में जा उतारेगा, और वह (दोज़ख़) उतरने की बहुत ही बुरी जगह है, जिसमें ये लोग उतारे जाएँगे। और इस (दुनिया) में भी लानत उनके साथ-साथ रही और क़ियामत के दिन भी (उनके साथ रहेगी, चुनाँचे यहाँ क़हर से ग़र्क़ हुए और वहाँ दोज़ख़ नसीब होगी) बुरा इनाम है जो उनको दिया गया। यह (जो कुछ ऊपर क़िस्सों में बयान हुआ) उन (तबाह हुई) बस्तियों के कुछ हालात थे, जिनको हम आप से बयान करते हैं, (सो) कुछ (बस्तियाँ) तो उनमें (अब भी) क़ायम हैं (मसलन मिस्र कि फ़िरऔ़न की आल के हलाक होने के बाद भी आबाद रहा) और कुछ का बिल्कुल ख़ात्मा हो गया। और (हमने जो इन ज़िक्र हुई बस्ती वालों को सज़ायें दीं सो) हमने उन पर ज़ुल्म नहीं किया (कि बिना क़सूर के सज़ा दी हो जो कि देखने में ज़ुल्म है) लेकिन उन्होंने ख़ुद ही अपने ऊपर ज़ुल्म किया (कि ऐसी हरकतें कीं जिनसे

सज़ा के हक़दार हुए) सो उनके वे माबूद जिनको वे अल्लाह के अ़लावा पूजते थे उनको कुछ फ़ायदा न पहुँचा सके, जब आपके रब का हुक्म (अ़ज़ाब के लिये) आ पहुँचा (कि उनको अ़ज़ाब से बचा लेते) और (फ़ायदा तो क्या पहुँचा और) उल्टा उनको नुक़सान पहुँचाया (यानी नुक़सान का सबब हुए कि उनकी पूजा व इबादत की बदौलत सज़ा पाने वाले हुए)।

وَكَذٰلِكَ اَخْذُ رَبِّكَ اِذَآ اَخَذَ الْقُرٰى وَهِىَ ظَالِمَةٌ ۭ اِنَّ اَخْذَهٗٓ
اَلِيْمٌ شَدِيْدٌ ۝ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّمَنْ خَافَ عَذَابَ الْاٰخِرَةِ ۭ ذٰلِكَ يَوْمٌ مَّجْمُوْعٌ ۙ لَّهُ النَّاسُ وَ
ذٰلِكَ يَوْمٌ مَّشْهُوْدٌ ۝ وَمَا نُؤَخِّرُهٗٓ اِلَّا لِاَجَلٍ مَّعْدُوْدٍ ۝ يَوْمَ يَاْتِ لَا تَكَلَّمُ نَفْسٌ اِلَّا بِاِذْنِهٖ ۚ
فَمِنْهُمْ شَقِيٌّ وَّسَعِيْدٌ ۝ فَاَمَّا الَّذِيْنَ شَقُوْا فَفِى النَّارِ لَهُمْ فِيْهَا زَفِيْرٌ وَّشَهِيْقٌ ۝ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا مَا
دَامَتِ السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ اِلَّا مَا شَاۗءَ رَبُّكَ ۭ اِنَّ رَبَّكَ فَعَّالٌ لِّمَا يُرِيْدُ ۝ وَاَمَّا الَّذِيْنَ سُعِدُوْا
فَفِى الْجَنَّةِ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا مَا دَامَتِ السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ اِلَّا مَا شَاۗءَ رَبُّكَ ۭ عَطَاۗءً غَيْرَ مَجْذُوْذٍ ۝
فَلَا تَكُ فِىْ مِرْيَةٍ مِّمَّا يَعْبُدُ هٰٓؤُلَاۗءِ ۭ مَا يَعْبُدُوْنَ اِلَّا كَمَا يَعْبُدُ اٰبَاۗؤُهُمْ مِّنْ قَبْلُ ۭ وَاِنَّا لَمُوَفُّوْهُمْ
نَصِيْبَهُمْ غَيْرَ مَنْقُوْصٍ ۝ وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ فَاخْتُلِفَ فِيْهِ ۭ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ ع ۹ ۱۳ ۹
مِنْ رَّبِّكَ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ ۭ وَاِنَّهُمْ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ مُرِيْبٍ ۝ وَاِنَّ كُلًّا لَّمَّا لَيُوَفِّيَنَّهُمْ رَبُّكَ
اَعْمَالَهُمْ ۭ اِنَّهٗ بِمَا يَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ۝

व कज़ालि-क अख़्ज़ु रब्बि-क इज़ा अ-ख़ज़ल्-क़ुरा व हि-य ज़ालि-मतुन्, इन्-न अख़्ज़हू अलीमुन् शदीद (102) इन्-न फ़ी ज़ालि-क लआयतल् लिमन् ख़ा-फ़ अ़ज़ाबल्-आख़िरति, ज़ालि-क यौमुम्-मज्मूअुल्-लहुन्नासु व ज़ालि-क यौमुम्-मश्हूद (103) व मा नु-अख़्ख़िरुहू इल्ला लि-अ-जलिम् मअ़्दूद (104) यौ-म यअ्ति ला तकल्लमु नफ़्सुन् इल्ला बि-इज़्निही	और ऐसी ही है पकड़ तेरे रब की जब पकड़ता है बस्तियों को और वे ज़ुल्म करते होते हैं, बेशक उसकी पकड़ दर्दनाक है शिद्दत की। (102) इस बात में निशानी है उसको जो डरता है आख़िरत के अ़ज़ाब से, वह एक दिन है जिस में जमा होंगे सब लोग और वह दिन है सब के पेश होने का। (103) और उसको हम देर जो करते हैं सो एक वायदे के लिये जो मुक़र्रर है। (104) जिस दिन वह आयेगा बात न कर सकेगा कोई जानदार मगर उसके हुक्म से, सो उनमें कुछ

फ़-मिन्हुम् शक़िय्युंव्-व सअ़ीद (105) फ़-अम्मल्लज़ी-न शक़ू फ़फ़िन्नारि लहुम् फ़ीहा ज़फ़ीरुंव्-व शहीक़ (106) ख़ालिदी-न फ़ीहा मा दामतिस्समावातु वल्अर्ज़ु इल्ला मा शा-अ रब्बु-क, इन्-न रब्ब-क फ़अ़्आ़लुल्लिमा युरीद (107) व अम्मल्लज़ी-न सुअ़िदू फ़फ़िल्-जन्नति ख़ालिदी-न फ़ीहा मा दामतिस्समावातु वल्अर्ज़ु इल्ला मा शा-अ रब्बु-क, अ़ताअन् ग़ै-र मज्ज़ूज़ (108) फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिम्मा यअ़्बुदु हाउला-इ मा यअ़्बुदू-न इल्ला कमा यअ़्बुदु आबाउहुम् मिन् क़ब्लु, व इन्ना लमुवफ़्फ़ूहुम् नसीबहुम् ग़ै-र मन्क़ूस (109) ❁

बदबख़्त हैं और कुछ नेक बख़्त। (105) सो जो लोग बदबख़्त हैं वे तो आग में हैं उनको वहाँ चीख़ना है और दहाड़ना। (106) हमेशा रहेंगे उसमें जब तक रहे आसमान और ज़मीन मगर जो चाहे तेरा रब, बेशक तेरा रब कर डालता है जो चाहे। (107) और जो लोग नेकबख़्त हैं सो जन्नत में हैं हमेशा रहेंगे उसमें जब तक रहे आसमान और ज़मीन मगर जो चाहे तेरा रब, बख़्शिश है बेइन्तिहा। (108) सो तू न रह धोखे में उन चीज़ों से जिनको पूजते हैं ये लोग, कुछ नहीं पूजते मगर वैसा ही जैसा कि पूजते थे उनके बाप दादे इससे पहले, और हम देने वाले हैं उनको उनका हिस्सा यानी अ़ज़ाब से बिना नुक़सान। (109) ❁

व ल-क़द् आतैना मूसल्-किता-ब फ़ख़्तुलि-फ़ फ़ीहि, व लौ ला कलि-मतुन् स-बक़त् मिर्रब्बि-क लक़ुज़ि-य बैनहुम्, व इन्नहुम् लफ़ी शक्किम् मिन्हु मुरीब (110) व इन्-न कुल्लल्-लम्मा लयुवफ़्फ़ियन्नहुम् रब्बु-क अअ़्मालहुम्, इन्नहू बिमा यअ़्मलू-न ख़बीर (111)

और अलबत्ता हमने दी थी मूसा को किताब फिर उसमें फूट पड़ गई, और अगर न होता एक लफ़्ज़ कि पहले फ़रमा चुका था तेरा रब तो फ़ैसला हो जाता उनमें और उनको उसमें शुब्हा है कि मुत्मईन नहीं होने देता। (110) और जितने लोग हैं जब वक़्त आया पूरा देगा तेरा रब उनको उनके आमाल, उसको सब ख़बर है जो कुछ वे कर रहे हैं। (111)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आपके रब की पकड़ ऐसी ही (सख़्त) है, जब वह किसी बस्ती पर पकड़ करता है जबकि वे ज़ुल्म (व कुफ़्र) किया करते हों। बेशक उसकी पकड़ बड़ी दर्दनाक (और) सख़्त है (कि उससे सख़्त तकलीफ़ पहुँचती है और उससे कोई बच नहीं सकता)। इन (वाक़िआत) में उस शख़्स के लिये बड़ी इब्रत है जो आख़िरत के अ़ज़ाब से डरता हो। (इब्रत और सबक़ लेने की वजह ज़ाहिर है कि जब दुनिया का अ़ज़ाब ऐसा सख़्त है हालाँकि यह बदले की जगह नहीं तो आख़िरत का जो कि बदला और जज़ा मिलने की जगह है कैसा सख़्त अ़ज़ाब होगा)। वह (यानी आख़िरत का दिन) ऐसा दिन होगा कि उसमें तमाम आदमी जमा किये जाएँगे और यह (सब की) हाज़िरी का दिन है। और (वह दिन अगरचे अब तक आया नहीं लेकिन इससे कोई उसके आने में शक न करे, आयेगा ज़रूर) हम उसको सिर्फ़ थोड़ी मुद्दत के लिये (कुछ मस्लेहतों से) टाले हुए हैं (फिर) जिस वक़्त वह दिन आयेगा (मारे ख़ौफ़ और दहशत के लोगों का यह हाल होगा कि) कोई शख़्स बिना उसकी (यानी ख़ुदा की) इजाज़त के बात तक (भी) न कर सकेगा (हाँ जब हिसाब-किताब के लिये हाज़िरी होगी और उनके आमाल पर जवाब तलब किया जायेगा उस वक़्त अलबत्ता मुँह से बात निकलेगी, चाहे वह बात मक़बूल हो या मक़बूल न हो, सो इस हालत में तो सब मैदाने क़ियामत में खड़े होने वाले शरीक होंगे) फिर (आगे) उनमें (यह फ़र्क़ होगा कि) बाज़े तो शक़ी "बदबख़्त" (यानी काफ़िर) होंगे और बाज़े सईद "नेकबख़्त" (यानी मोमिन) होंगे। सो जो लोग शक़ी हैं वे तो दोज़ख़ में (ऐसे हाल से) होंगे कि उसमें उनकी चीख़-पुकार पड़ी रहेगी और हमेशा-हमेशा को उसमें रहेंगे जब तक आसमान और ज़मीन क़ायम हैं (यह मुहावरा है हमेशा रहने को बयान करने के लिये), हाँ अगर उसके रब ही को (निकालना) मन्ज़ूर हो (तो दूसरी बात है) (क्योंकि) आपका रब जो कुछ चाहे उसको पूरा कर सकता है (मगर बावजूद क़ुदरत के यह यक़ीनी है कि ख़ुदा यह बात न चाहेगा इसलिये निकलना नसीब न होगा)। और रह गये वे लोग जो सईद हैं, सो वे जन्नत में होंगे (और) वे उसमें (दाख़िल होने के बाद) हमेशा-हमेशा को रहेंगे जब तक आसमान और ज़मीन क़ायम हैं (यह अलग बात है कि जाने से पहले कुछ सज़ा भुगती हो), हाँ अगर आपके रब को (निकालना) मन्ज़ूर हो तो दूसरी बात है (मगर यह यक़ीनी है कि ख़ुदा यह बात कभी न चाहेगा, पस निकलना भी कभी न होगा बल्कि) वह ख़त्म न होने वाला अ़तीया होगा।

(और जब कुफ़्र का वबाल ऊपर की आयतों से मालूम हो चुका) सो (ऐ मुख़ातब!) जिस चीज़ की ये पूजा करते हैं उसके बारे में ज़रा शुब्हा न करना (बल्कि यक़ीन रखना कि उनका यह अ़मल सज़ा दिलाने वाला है बातिल होने की वजह से, और बातिल होने की दलील यह है कि) ये लोग भी इसी तरह (बिना दलील के बल्कि ख़िलाफ़े दलील अल्लाह के ग़ैर की) इबादत कर रहे हैं जिस तरह इनसे पहले इनके बाप-दादा इबादत करते थे (ख़िलाफ़े दलील काम बातिल और सज़ा का सबब होता है)। और हम यक़ीनन उनका (अ़ज़ाब का) हिस्सा उनको (क़ियामत के दिन)

पूरा-पूरा बिना किसी कमी के पहुँचा देंगे। और हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को किताब (यानी तौरात) दी थी, सो उसमें (भी क़ुरआन की तरह) झगड़ा किया गया (कि किसी ने माना किसी ने न माना, यह कोई आपके लिये नई बात नहीं हुई, पस आप ग़मगीन न हों) और (ये इनकारी लोग अ़ज़ाब के ऐसे हक़दार हैं कि) अगर एक बात न होती जो आपके रब की तरफ़ से पहले मुक़र्रर हो चुकी है (कि पूरा अ़ज़ाब इनको आख़िरत में दूँगा) तो (जिस चीज़ में ये झगड़ा और विवाद कर रहे हैं) इनका (क़तई) फ़ैसला (दुनिया ही में) हो चुका होता (यानी वह वायदा किया हुआ अ़ज़ाब आ पड़ता) और ये लोग (दलीलें क़ायम होने के बावजूद अभी तक) उस (फ़ैसले यानी वायदा किये गये अ़ज़ाब) की तरफ़ से ऐसे शक में (पड़े) हैं जिसने इनको दुविधा और असमंजस में डाल रखा है (कि इनको अ़ज़ाब का यक़ीन ही नहीं आता। शक का मतलब यही है) और (किसी के शक व इनकार से यह अ़ज़ाब टलेगा नहीं बल्कि) यक़ीनन सब-के-सब ऐसे ही हैं कि आपका रब उनको उनके आमाल (की जज़ा) का पूरा-पूरा हिस्सा देगा, वह यक़ीनन उनके आमाल की पूरी-पूरी ख़बर रखता है (जब उनकी सज़ा का मामला आप से कुछ सरोकार नहीं रखता तो आप और मुसलमान अपने काम में लगे रहें, वो काम ये हैं जो अगली आयतों में बयान हुए हैं)।

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْا، اِنَّهٗ
بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ۝ وَلَا تَرْكَنُوْٓا اِلَى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ، وَمَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ
مِنْ اَوْلِيَآءَ ثُمَّ لَا تُنْصَرُوْنَ۝

फ़स्तक़िम् कमा उमिर्-त व मन् ता-ब म-अ़-क व ला ततग़ौ, इन्नहू बिमा तअ़्मलू-न बसीर (112) व ला तर्कनू इलल्लज़ी-न ज़-लमू फ़-तमस्सकुमुन्नारु व मा लकुम् मिन् दूनिल्लाहि मिन् औलिया-अ सुम्-म ला तुन्सरून (113)	सो तू सीधा चला जा जैसा तुझको हुक्म हुआ और जिसने तौबा की तेरे साथ और हद से न बढ़ो, बेशक वह देखता है जो कुछ तुम करते हो। (112) और मत झुको उनकी तरफ़ जो ज़ालिम हैं फिर तुमको लगेगी आग, और कोई नहीं तुम्हारा अल्लाह के सिवा मददगार, फिर कहीं मदद न पाओगे। (113)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तो आप जिस तरह कि आपको हुक्म हुआ है (दीन की राह पर) मुस्तक़ीम रहिये "यानी सही रास्ते पर क़ायम रहिये" और वे लोग भी (मुस्तक़ीम रहें) जो (कुफ़्र से) तौबा करके आपके

साथ में हैं, और (दीन के) दायरे से ज़रा मत निकलो, यक़ीनी तौर पर वह तुम सब के आमाल को ख़ूब देखता है। और (ऐ मुसलमानो! उन) ज़ालिमों की तरफ़ (या जो उनके जैसे हों उनकी तरफ़ दिली दोस्ती से या आमाल व हालात में उनका साझी होने या उन जैसा बनकर) मत झुको, कभी तुमको दोज़ख़ की आग लग जाये और (उस वक़्त) ख़ुदा के सिवा कोई तुम्हारा साथ देने वाला न हो, फिर तुम्हारी हिमायत किसी तरफ़ से भी न हो (क्योंकि साथ देना तो हिमायत से आसान है, जब साथ देने वाला भी कोई नहीं तो हिमायत करने वाला कौन होता)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः हूद में पहले अम्बिया और उनकी क़ौमों के वाक़िआत नूह अलैहिस्सलाम से शुरू करके हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम तक ख़ासी तरतीब व तफ़सील से ज़िक्र किये गये हैं। जिनमें सैकड़ों नसीहतें, हिक्मत की बातें और अहकाम व हिदायतें हैं। इन वाक़िआत के ख़त्म पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मुख़ातब करके उम्मते मुहम्मदिया को उनसे सबक़ व नसीहत हासिल करने की दावत दी गयी। फ़रमायाः

ذٰلِكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْقُرٰى نَقُصُّهٗ عَلَيْكَ مِنْهَا قَآئِمٌ وَّحَصِيْدٌ○

यानी ये हैं पहले शहरों और बस्तियों के वाक़िआत जो हमने आपको सुनाये हैं। ये बस्तियाँ जिन पर अल्लाह तआला के अज़ाब आये इनमें से कुछ के तो अभी कुछ खण्डरात और इमारतें मौजूद हैं और कुछ बस्तियाँ ऐसी कर दी गयी हैं जैसे खेती काटने के बाद ज़मीन हमवार कर दी जाये, पिछली खेती का निशान तक नहीं रहता।

इसके बाद फ़रमाया कि हमने उन पर कोई ज़ुल्म नहीं किया बल्कि ख़ुद उन्होंने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया कि अपने पैदा करने वाले और पालने वाले को छोड़कर बुतों और दूसरी चीज़ों को अपना ख़ुदा बना बैठे, जिसका अन्जाम यह हुआ कि जब ख़ुदा तआला का अज़ाब आया तो उन ख़ुद बनाये हुए ख़ुदाओं ने उनकी कोई मदद न की। और अल्लाह तआला जब बस्तियों को अज़ाब में पकड़ते हैं तो उनकी पकड़ ऐसी ही सख़्त और दर्दनाक हुआ करती है।

इसके बाद उनको आख़िरत की फ़िक्र में मशग़ूल करने के लिये फ़रमाया कि इन वाक़िआत में उन लोगों के लिये बड़ी इब्रत और निशानी है जो आख़िरत के अज़ाब से डरते हैं, जिस दिन तमाम औलादे आदम एक जगह जमा और मौजूद होगी, उस दिन का हाल यह होगा कि किसी शख़्स की मजाल न होगी कि अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर एक हर्फ़ भी ज़बान से बोल सके।

इसके बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को एक बार फिर ख़िताब करके इरशाद फ़रमायाः

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْا اِنَّهٗ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ○

यानी आप दीन के रास्ते पर इसी तरह मुस्तक़ीम रहिये जिस तरह आपको हुक्म दिया गया है और वे लोग भी मुस्तक़ीम (सीधे) रहें जो कुफ़्र से तौबा करके आपके साथ हो गये हैं और

अल्लाह तआला की निर्धारित हदों से न निकलो क्योंकि वह तुम्हारे सब आमाल को देख रहे हैं।

'इस्तिक़ामत' का मतलब और अहम फ़ायदे व मसाईल

'इस्तिक़ामत' (मुस्तक़ीम रहने) के मायने सीधा खड़ा रहने के हैं, जिसमें किसी तरफ़ ज़रा सा झुकाव न हो, ज़ाहिर है कि यह काम आसान नहीं। किसी लोहे, पत्थर वग़ैरह के खम्बों को माहिर इंजीनियर एक मर्तबा इस तरह खड़ा कर सकते हैं कि वह हर तरफ़ से बिल्कुल सीधा ही रहे, किसी तरफ़ मामूली सा झुकाव न हो, लेकिन किसी हरकत करने वाली चीज़ का हर वक़्त हर हाल में इस हालत पर क़ायम रहना किस क़द्र मुश्किल है यह समझ रखने वालों से छुपा हुआ नहीं।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और तमाम मुसलमानों को इस आयत में अपने हर काम में हर हाल में इस्तिक़ामत पर रहने का हुक्म फ़रमाया गया है। "इस्तिक़ामत" लफ़्ज़ तो छोटा सा है मगर इसका मतलब व मफ़्हूम एक अ़ज़ीमुश्शान फैलाव रखता है, क्योंकि इसके मायने यह हैं कि इनसान अपने अ़क़ीदों, इबादतों, मामलों, अख़्लाक़, रहन-सहन, रोज़ी कमाने और उसकी आमद व ख़र्च वग़ैरह में अल्लाह जल्ल शानुहू की क़ायम की हुई हदों के अन्दर उसके बतलाये हुए रास्ते पर सीधा चलता रहे, इनमें से किसी बाब के किसी अ़मल और किसी हाल में किसी एक तरफ़ झुकाव या कमी ज़्यादती हो जाये तो इस्तिक़ामत बाक़ी नहीं रहती।

दुनिया में जितनी गुमराहियाँ और अ़मली ख़राबियाँ आती हैं वे सब इसी इस्तिक़ामत से हट जाने का नतीजा होती हैं। अ़क़ीदों में इस्तिक़ामत न रहे तो बिदअ़तों से शुरू होकर कुफ़्र व शिर्क तक नौबत पहुँचती है, अल्लाह तआला की तौहीद और उसकी ज़ात व सिफ़ात के मुताल्लिक़ जो दरमियानी और सही उसूल रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाये उसमें कमी बेशी करने वाले चाहे नेक-नीयती ही से उसमें मुब्तला हों गुमराह कहलायेंगे। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की बड़ाई व मुहब्बत की जो हदें मुक़र्रर कर दी गयी हैं उनमें कमी करने वालों का गुमराह व गुस्ताख़ होना तो सब ही जानते हैं, उनमें ज़्यादती करके और हद से बढ़कर रसूल को ख़ुदाई सिफ़ात व इख़्तियारात का मालिक बना देना भी इसी तरह की गुमराही है, यहूदी व ईसाई इसी गुमराही में खो गये। इबादतों और अल्लाह की निकटता के लिये जो तरीक़े क़ुरआने पाक और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुतैयन फ़रमा दिये हैं, उनमें ज़रा सी कमी कोताही जिस तरह इनसान को इस्तिक़ामत (सही राह पर क़ायम और जमे रहने) से गिरा देती है इसी तरह उनमें अपनी तरफ़ से कोई ज़्यादती भी इस्तिक़ामत को बरबाद करके इनसान को बिद्अ़तों में मुब्तला कर देती है। वह बड़ी नेक-नीयती से यह समझता रहता है कि मैं अपने रब को राज़ी कर रहा हूँ और जबकि वह काम नाराज़गी का सबब होता है। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उम्मत को बिद्अ़तों और दीन में नयी बातों के निकालने से बड़ी ताकीद के साथ मना फ़रमाया है, और इसको सख़्त गुमराही क़रार दिया है। इसलिये इनसान पर लाज़िम है कि जब वह कोई काम इबादत और अल्लाह व रसूल को रज़ा करने के लिये करे तो

करने से पहले इसकी पूरी तहक़ीक़ कर ले कि यह काम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से इस अन्दाज़ व सूरत के साथ साबित है या नहीं? अगर साबित नहीं तो उसमें अपना वक़्त और ताक़त बरबाद न करे।

इसी तरह मामलात, अख़्लाक़ और सामाजिक रहन-सहन के तमाम मामलात में क़ुरआने करीम के बताये हुए उसूल पर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपनी अ़मली तालीम के ज़रिये एक मोतदिल (दरमियानी) और सही रास्ता क़ायम कर दिया है, जिसमें दोस्ती, दुश्मनी, नर्मी, गर्मी, गुस्सा और बुर्दबारी, कंजूसी और सख़ावत, रोज़ी कमाने और दुनिया को छोड़ने, अल्लाह पर भरोसे और संभावित तदबीर, ज़रूरी असबाब की उपलब्धता और जमा करने असबाब के पैदा करने वाले पर नज़र, इन सब चीज़ों में एक ऐसा मोतदिल सिराते मुस्तक़ीम (दरमियानी सही और सीधा रास्ता) मुसलमानों को दिया है कि इसकी नज़ीर जहान में नहीं मिल सकती। उनको इख़्तियार करने से ही इनसान, कामिल इनसान बनता है, उसमें इस्तिक़ामत से ज़रा गिरने ही के नतीजे में समाज के अन्दर ख़राबियाँ पैदा होती हैं।

ख़ुलासा यह है कि इस्तिक़ामत एक ऐसा जामे और मुकम्मल लफ़्ज़ है कि दीन के तमाम हिस्से व अंश और उन पर सही अ़मल इसकी तफ़सीर है।

हज़रत सुफ़ियान बिन अ़ब्दुल्लाह सक़फ़ी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मुझे इस्लाम के मामले में कोई ऐसी जामे (मुकम्मल) बात बतला दीजिये कि आपके बाद मुझे किसी से कुछ पूछने की ज़रूरत न रहे। आपने फ़रमायाः

قُلْ اٰمَنْتُ بِاللّٰهِ ثُمَّ اسْتَقِمْ.

यानी अल्लाह पर ईमान लाओ और फिर उस पर मुस्तक़ीम रहो। (मुस्लिम, अज़ क़ुर्तुबी)

और उस्मान बिन हाज़िर अज़दी रह. फ़रमाते हैं कि मैं एक मर्तबा क़ुरआन के मुफ़स्सिर हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास हाज़िर हुआ और अ़र्ज़ किया कि मुझे कोई वसीयत फ़रमा दीजिये। आपने फ़रमायाः

عَلَيْكَ بِتَقْوَى اللّٰهِ وَالْاِسْتِقَامَةِ اِتَّبِعْ وَلَا تَبْتَدِعْ. (رواه الدارمی فی مسنده. از قرطبی)

यानी तुम तक़वे और ख़ौफ़े ख़ुदा को लाज़िम पकड़ो और इस्तिक़ामत को भी, जिसका तरीक़ा यह है कि दीन के मामले में शरीअ़त की पैरवी करो, अपनी तरफ़ से कोई बिद्अ़त (दीन में नई बात) ईजाद न करो।

इस दुनिया में सबसे ज़्यादा दुश्वार काम इस्तिक़ामत ही है, इसी लिये सूफ़िया हज़रात में आला दर्जा रखने वाले हज़रात ने फ़रमाया है कि इस्तिक़ामत का मक़ाम करामत से ऊँचा है। यानी जो शख़्स दीन के कामों में इस्तिक़ामत (सही राह पर जमाव) इख़्तियार किये हुए है, अगरचे उम्र भर उससे कोई करामत सादिर न हो, वह आला दर्जे का वली है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि पूरे क़ुरआन में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर इस आयत से ज़्यादा सख़्त और भारी कोई आयत नाज़िल नहीं

हुई। और फ़रमाया कि जब सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दाढ़ी मुबारक में कुछ सफ़ेद बाल देखकर हसरत व अफ़सोस के तौर पर अ़र्ज़ किया कि अब तेज़ी से बुढ़ापा आपकी तरफ़ आ रहा है तो फ़रमाया कि मुझे सूरः हूद ने बूढ़ा कर दिया। सूरः हूद में जो पिछली क़ौमों पर सख़्त व शदीद अ़ज़ाब के वाक़िआ़त मज़कूर हैं वो भी इसका सबब हो सकते हैं, मगर इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि यह आयत ही उसका सबब है।

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में अबू अ़ली सिर्री से नक़ल किया है कि उन्होंने सपने में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत की तो अ़र्ज़ किया कि क्या आपने ऐसा फ़रमाया है कि मुझे सूरः हूद ने बूढ़ा कर दिया? आपने फ़रमाया हाँ। इन्होंने फिर मालूम किया कि इस सूरत में जो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के वाक़िआ़त और उनकी क़ौमों के अ़ज़ाब का ज़िक्र है उसने आपको बूढ़ा किया? तो फ़रमाया नहीं, बल्कि अल्लाह तआ़ला के इस इरशाद नेः

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ.

(जिस तरह कि आपको हुक्म हुआ है उसी तरह दीन की राह पर मुस्तक़ीम रहिये) यह ज़ाहिर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो कामिल इनसान की मिसाली सूरत बनकर इस दुनिया में तशरीफ़ लाये थे और फ़ितरी तौर पर इस्तिक़ामत आपकी आ़दत थी मगर फिर इस क़द्र बोझ या तो इसलिये महसूस फ़रमाया कि आयत में आ़म इस्तिक़ामत का हुक्म नहीं बल्कि हुक्म यह है कि अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ इस्तिक़ामत होना चाहिये। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम पर जिस क़द्र अल्लाह का ख़ौफ़ व डर का ग़लबा होता है वह सब को मालूम है, उस ख़ौफ़ ही का यह असर था कि बावजूद पूरी इस्तिक़ामत के यह फ़िक्र लग गयी कि अल्लाह जल्ल शानुहू को जैसी इस्तिक़ामत मतलूब है वह पूरी हुई या नहीं।

और यह भी हो सकता है कि आपको अपनी इस्तिक़ामत की तो ज़्यादा फ़िक्र न थी क्योंकि अल्लाह के फ़ज़्ल से वह हासिल थी मगर इस आयत में पूरी उम्मत को भी यही हुक्म दिया गया है, उम्मत का इस्तिक़ामत पर क़ायम रहना दुश्वार देखकर यह फ़िक्र व ग़म तारी हुआ।

इस्तिक़ामत के हुक्म के बाद फ़रमाया 'व ला ततग़ौ' यह लफ़्ज़ 'तुग़यान' से बना है, इसके मायने हद से निकल जाने के हैं, जो उलट है इस्तिक़ामत के। आयत में इस्तिक़ामत का हुक्म सकारात्मक अन्दाज़ में फ़रमाने पर बस नहीं फ़रमाया बल्कि इसके नकारात्मक पहलू की मनाही भी स्पष्ट रूप से ज़िक्र कर दी कि अ़क़ीदों, इबादतों, मामलों और अख़्लाक़ वग़ैरह में अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल की मुक़र्रर की हुई हदों से बाहर न निकलो, क्योंकि यह हर फ़साद और दीनी व दुनियावी ख़राबी का रास्ता है।

दूसरी आयत में इनसान को ख़राबी और बरबादी से बचाने के लिये एक और अहम हिदायत नामा दिया गया हैः

وَلَا تَرْكَنُوْٓا اِلَى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ.

यानी ज़ालिमों की तरफ़ मामूली और ज़रा सा मैलान भी न रखो, कहीं ऐसा न हो कि उनके साथ तुम्हें भी जहन्नम की आग लग जाये।

'ला तर्कनू' कौन से बना है, जिसके मायने किसी तरफ़ हल्के से मैलान, झुकाव और भरोसे व रज़ामन्दी के हैं। इसलिये आयत का मफ़्हूम यह हुआ कि ज़ुल्म व ज़्यादती में ख़ुद मुब्तला होने को तो दीन व दुनिया की तबाही सभी जानते हैं मगर ज़ालिमों की तरफ़ मामूली सा झुकाव और मैलान, उनसे राज़ी होना, उन पर भरोसा करना भी इनसान को उसी बरबादी के किनारे लगा देता है।

झुकाव और मैलान से क्या मुराद है? इसके बारे में सहाबा व ताबिईन के चन्द अक़वाल नक़ल किये जाते हैं जिनमें कोई टकराव और भिन्नता नहीं, सब अपनी-अपनी जगह सही हैं।

हज़रत क़तादा रह. ने फ़रमाया कि मुराद यह है कि ज़ालिमों से दोस्ती न करो और उनका कहना न मानो। इब्ने जुरैज रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों की तरफ़ किसी तरह का भी मैलान न रखो। अबुल-आ़लिया रह. ने फ़रमाया कि उनके आमाल और कामों को पसन्द न करो। (क़ुर्तुबी) इमाम सुद्दी रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों से मुदाहनत न करो, यानी उनके बुरे आमाल पर ख़ामोशी या रज़ामन्दी का इज़हार न करो। हज़रत इक्रिमा रह. ने फ़रमाया कि ज़ालिमों की सोहबत में न बैठो। क़ाज़ी बैज़ावी रह. ने फ़रमाया कि शक्ल व सूरत, फ़ैशन और रहन-सहन के तरीक़ों में उनकी पैरवी और अनुसरण करना यह सब इसी मनाही में दाख़िल है।

क़ाज़ी बैज़ावी रह. ने फ़रमाया कि ज़ुल्म व ज़्यादती की मनाही और हराम होने के लिये इस आयत में वह हद से ज़्यादा शिद्दत है जिसकी ज़्यादा से ज़्यादा कल्पना की जा सकती है, क्योंकि ज़ालिमों के साथ दोस्ती और गहरे ताल्लुक़ ही को नहीं बल्कि उनकी तरफ़ मामूली दर्जे के मैलान और झुकाव और उनके पास बैठने को भी इसमें ममनू (वर्जित) क़रार दिया गया है।

इमाम औज़ाई रह. ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक कोई शख़्स उस आ़लिम से ज़्यादा नापसन्दीदा नहीं जो अपने दुनियावी फ़ायदे की ख़ातिर किसी ज़ालिम से मिलने के लिये जाये। (तफ़सीरे मज़हरी)

तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि काफ़िरों, नाफ़रमानों और बिद्अ़ती लोगों की सोहबत से बचना और परहेज़ करना वाजिब है, सिवाय इसके कि किसी मजबूरी से उनसे मिलना पड़े। और हक़ीक़त यही है कि इनसान की बेहतरी व ख़राबी, संवरने और बिगड़ने में सबसे बड़ा दख़ल सोहबत और माहौल का होता है, इसी लिये हज़रत हसन बसरी रह. ने इन दोनों आयतों के दो लफ़्ज़ों के बारे में फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने पूरे दीन को 'ला' के दो हर्फ़ों के अन्दर जमा कर दिया है, एक पहली आयत में 'ला ततग़ौ' और दूसरा दूसरी आयत में 'ला तर्कनू'। पहले लफ़्ज़ में शरई हदों से निकलने की और दूसरे लफ़्ज़ में बुरे लोगों की सोहबत की मनाही है, और यही सारे दीन का ख़ुलासा है।

وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ طَرَفَيِ النَّهَارِ وَزُلَفًا مِّنَ الَّيْلِ ۭ اِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ
السَّيِّاٰتِ ۭ ذٰلِكَ ذِكْرٰى لِلذّٰكِرِيْنَ ﴿١١٤﴾ وَاصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿١١٥﴾ فَلَوْلَا
كَانَ مِنَ الْقُرُوْنِ مِنْ قَبْلِكُمْ اُولُوْا بَقِيَّةٍ يَّنْهَوْنَ عَنِ الْفَسَادِ فِي الْاَرْضِ اِلَّا قَلِيْلًا مِّمَّنْ
اَنْجَيْنَا مِنْهُمْ ۚ وَاتَّبَعَ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا مَآ اُتْرِفُوْا فِيْهِ وَكَانُوْا مُجْرِمِيْنَ ﴿١١٦﴾ وَمَا كَانَ رَبُّكَ لِيُهْلِكَ
الْقُرٰى بِظُلْمٍ وَّاَهْلُهَا مُصْلِحُوْنَ ﴿١١٧﴾ وَلَوْ شَاۗءَ رَبُّكَ لَجَعَلَ النَّاسَ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلَا يَزَالُوْنَ
مُخْتَلِفِيْنَ ﴿١١٨﴾ اِلَّا مَنْ رَّحِمَ رَبُّكَ ۭ وَلِذٰلِكَ خَلَقَهُمْ ۭ وَتَمَّتْ كَلِمَةُ رَبِّكَ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنَ الْجِنَّةِ
وَالنَّاسِ اَجْمَعِيْنَ ﴿١١٩﴾ وَكُلًّا نَّقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ اَنْۢبَاۗءِ الرُّسُلِ مَا نُثَبِّتُ بِهٖ فُؤَادَكَ ۚ وَجَاۗءَكَ فِيْ
هٰذِهِ الْحَقُّ وَمَوْعِظَةٌ وَّذِكْرٰى لِلْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٢٠﴾ وَقُلْ لِّلَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ اعْمَلُوْا عَلٰي مَكَانَتِكُمْ ۭ اِنَّا
عٰمِلُوْنَ ﴿١٢١﴾ وَانْتَظِرُوْا ۚ اِنَّا مُنْتَظِرُوْنَ ﴿١٢٢﴾ وَلِلّٰهِ غَيْبُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاِلَيْهِ يُرْجَعُ الْاَمْرُ كُلُّهٗ فَاعْبُدْهُ ع ١٠
وَتَوَكَّلْ عَلَيْهِ ۭ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُوْنَ ﴿١٢٣﴾

व अक़िमिस्सला-त त-र-फ़यिन्नहारि व ज़ु-लफ़म् मिनल्लैलि, इन्नल्-ह-सनाति युज़्हिब्नस्सय्यिआति, ज़ालि-क ज़िक्रा लिज़्ज़ाकिरीन (114) वस्बिर् फ़-इन्नल्ला-ह ला युज़ीअ़ु अज्रल्-मुह्सिनीन (115) फ़लौ ला का-न मिनल्-क़ुरूनि मिन् क़ब्लिकुम् उलू बक़िय्यतिंय्-यन्हौ-न अ़निल्फ़सादि फ़िल्अर्ज़ि इल्ला क़लीलम् मिम्-मन् अन्जैना मिन्हुम् वत्त-बअ़ल्लज़ी-न ज़-लमू मा उतरिफ़ू फ़ीहि व कानू मुज्रिमीन (116) व मा का-न रब्बु-क

और क़ायम कर नमाज़ को दोनों तरफ़ दिन के और कुछ टुकड़ों में रात के, अलबत्ता नेकियाँ दूर करती हैं बुराईयों को, यह यादगारी है याद रखने वालों को। (114) और सब्र कर अलबत्ता अल्लाह ज़ाया नहीं करता सवाब नेकी करने वालों का। (115) सो क्यों न हुए उन जमाअ़तों में जो तुमसे पहले थीं, ऐसे लोग जिनमें ख़ैर का असर रहा हो, कि मना करते रहते बिगाड़ करने से मुल्क में मगर थोड़े कि जिनको हमने बचा लिया उनमें से, और चले वे लोग जो ज़ालिम थे वही राह जिसमें ऐश से रहे थे और थे गुनाहगार। (116) और तेरा रब हरगिज़ ऐसा नहीं कि हलाक करे बस्तियों को ज़बरदस्ती से

लियुह्लिकल्-क़ुरा बिज़ुल्मिंव्-व अह्लुहा मुस्लिहून (117) व लौ शा-अ रब्बु-क ल-ज-अ़लन्ना-स उम्मतंव्-वाहि-दतंव्-व ला यज़ालू-न मुख़्तलिफ़ीन (118) इल्ला मर्रहि-म रब्बु-क, व लिज़ालि-क ख़ा-ल-क़हुम्, व तम्मत् कलि-मतु रब्बि-क ल-अम्ल-अन्-न जहन्न-म मिनल्-जिन्नति वन्नासि अज्मईन (119) व कुल्लन् नक़ुस्सु अ़लै-क मिन् अम्बाइर्रुसुलि मा नुसब्बितु बिही फ़ुआद-क व जाअ-क फ़ी हाज़िहिल्-हक़्क़ु व मौअ़ि-ज़तुंव्- व ज़िक्रा लिल्मुअ्मिनीन (120) व क़ुल् लिल्लज़ी-न ला युअ्मिनूनअ़्मलू अ़ला मकानतिकुम्, इन्ना आ़मिलून (121) वन्तज़िरू इन्ना मुन्तज़िरून (122) व लिल्लाहि ग़ैबुस्समावाति वल्अर्ज़ि व इलैहि युर्जअ़ुल्-अम्रु कुल्लुहू फ़अ़्बुद्हु व तवक्कल् अ़लैहि, व मा रब्बु-क बिग़ाफ़िलिन् अ़म्मा तअ़्मलून (123) ❁	और लोग वहाँ के नेक हों। (117) और अगर चाहता तेरा रब कर डालता लोगों को एक रस्ते पर और हमेशा रहते हैं इख़्तिलाफ़ (विवाद) में (118) मगर जिन पर रहम किया तेरे रब ने और इसी वास्ते उनको पैदा किया है और पूरी हुई बात तेरे रब की कि अलबत्ता भर दूँगा दोज़ख़ जिन्नों से और आदमियों से इकट्ठे। (119) और सब चीज़ बयान करते हैं हम तेरे पास रसूलों के अहवाल से जिससे तसल्ली दें तेरे दिल को, और आई तेरे पास इस सूरः में तहक़ीक़ी बात और नसीहत और याददाश्त ईमान वालों के लिये। (120) और कह दे उनको जो ईमान नहीं लाते- काम किये जाओ अपनी जगह पर हम भी काम करते हैं (121) और इन्तिज़ार करो हम भी मुन्तज़िर हैं। (122) और अल्लाह के पास है छुपी बात आसमानों की और ज़मीन की और उसी की तरफ़ रुजू है सब काम का, सो उसी की बन्दगी कर और उसी पर भरोसा रख और तेरा रब बेख़बर नहीं जो काम तुम करते हो। (123) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप नमाज़ की पाबन्दी रखिये दिन के दोनों

सिरों पर (यानी शुरू और आख़िर में) और रात के कुछ हिस्सों में। बेशक नेक काम (नामा-ए-आमाल से) मिटा देते हैं बुरे कामों को। यह बात (कि नेकियों से गुनाह माफ़ हो जाते हैं) एक (जामे) नसीहत है नसीहत मानने वालों के लिये। (क्योंकि हर नेकी इस कुल्ली क़ायदे में दाख़िल है, पस इससे हर नेकी की तरफ़ रुचि होनी चाहिये) और (उन इनकारियों की तरफ़ से जो मामलात पेश आते हैं उन पर) सब्र किया कीजिये कि अल्लाह तआला नेक काम करने वालों का अज्र ज़ाया नहीं करते (सब्र भी आला दर्जे की नेकी है उसका पूरा अज्र मिलेगा और ऊपर जो पहली क़ौमों की तबाही के वाक़िआत बयान हुए) तो (वजह उसकी यह हुई कि) जो उम्मतें तुमसे पहले हो गुज़री हैं उनमें ऐसे समझदार लोग न हुए जो कि (दूसरों को) मुल्क में फ़साद (यानी कुफ़्र व शिर्क) फैलाने से मना करते, सिवाय चन्द आदमियों के कि जिनको उनमें से हमने (अ़ज़ाब से) बचा लिया था (कि उन्होंने तो अलबत्ता जैसे ख़ुद कुफ़्र व शिर्क से तौबा की थी ऐसे ही औरों को भी मना करते रहते थे, और इन्हीं दोनों अ़मल की बरकत से वे अ़ज़ाब से बच गये थे, बाक़ी और लोग चूँकि ख़ुद ही कुफ़्र में मुब्तला थे उन्होंने औरों को भी मना न किया)।

और जो लोग नाफ़रमान थे वे जिस ऐश व आराम में थे, उसी के पीछे पड़े रहे और अपराधों के आ़दी हो गये (कि उससे बाज़ ही न आये। ख़ुलासा यह कि नाफ़रमानी तो उनमें आ़म तौर पर रही और मना करने वाला कोई हुआ नहीं इसलिये सब एक ही अ़ज़ाब में मुब्तला हुए वरना कुफ़्र का अ़ज़ाब आ़म होता और फ़साद का ख़ास। अब मना न करने की वजह से जो फ़साद फैलाने वाले न थे वे भी फ़साद व बिगाड़ वालों में शरीक क़रार दिये गये, इसलिये जो अ़ज़ाब कुफ़्र व फ़साद के मजमूए पर नाज़िल हुआ वह भी आ़म रहा) और (इससे साबित हो गया कि) आपका रब ऐसा नहीं कि बस्तियों को कुफ़्र के सबब हलाक कर दे और उनके रहने वाले (अपने और दूसरों के) सुधार में लगे हों (बल्कि जब बजाय इस्लाह और सुधार के फ़साद करें और फ़साद करने वालों को मना न करें उस वक़्त ख़ास अ़ज़ाब के पात्र हो जाते हैं)। और अगर आपके रब को मन्ज़ूर होता तो सब आदमियों को एक ही तरीक़े का बना देता (यानी सब को मोमिन कर देता, लेकिन कुछ हिक्मतों से ऐसा मन्ज़ूर न हुआ, इसलिये दीन के ख़िलाफ़ विभिन्न और अनेक तरीक़ों पर हो गये) और (आगे भी) हमेशा इख़्तिलाफ़ (ही) करते रहेंगे, मगर जिस पर आपके रब की रहमत हो (वह दीन के ख़िलाफ़ वाला तरीक़ा इख़्तियार न करेगा)। और (इस इख़्तिलाफ़ और झगड़े डालने का ग़म न कीजिये, क्योंकि) उसने (यानी अल्लाह तआ़ला ने) लोगों को इसी वास्ते पैदा किया है (कि उनमें इख़्तिलाफ़ रहे) और (इख़्तिलाफ़ के लिये पैदा करने की वजह यह है कि) आपके रब की (यह) बात पूरी होगी कि मैं जहन्नम को जिन्नात और इनसानों दोनों से भर दूँगा (और ख़ुद इसकी हिक्मत यह है कि जिस तरह मरहूमीन यानी जिन पर रहम किया जाये उनमें रहमत वाली सिफ़त का ज़हूर हो' मग़ज़ूबीन यानी जिन पर ग़ज़ब हो उनमें ग़ज़ब की सिफ़त ज़ाहिर हो, फिर इस ज़हूर की हिक्मत या उस हिक्मत की हिक्मत अल्लाह ही को मालूम है। ग़र्ज़ कि इस ज़हूर की हिक्मत से जहन्नम में जाना बाज़ों का ज़रूरी है और जहन्नम में जाने के लिये काफ़िरों का वजूद फ़ितरी और तक़दीरी तौर पर ज़रूरी है और

काफ़िरों के वजूद के लिये इख़्तिलाफ़ लाज़िमी। यह वजह है सब के मुसलमान न होने की)।

और पैग़म्बरों के क़िस्सों में से हम ये सारे (ज़िक्र हुए) क़िस्से आपसे बयान करते हैं जिनके ज़रिये से हम आपके दिल को मज़बूती देते हैं (क़िस्सों के बयान करने का एक फ़ायदा तो यह हुआ जिसका हासिल आपको तसल्ली देना है) और उन (क़िस्सों) में आपके पास (ऐसा मज़मून) पहुँचा है (जो ख़ुद भी) सच्चा (और यक़ीनी) है और मुसलमानों के लिये (बुरे कामों से रोकने के लिये) नसीहत (है) और (अच्छे काम करने के लिये) याददेहानी है (यह दूसरा फ़ायदा क़िस्सों के बयान का हुआ। एक फ़ायदा नबी के लिये, दूसरा उम्मत के लिये)। और जो लोग (बावजूद इन मज़बूत दलीलों के भी) ईमान नहीं लाते उनसे कह दीजिये कि (मैं तुमसे उलझता नहीं) तुम अपनी हालत पर अ़मल करते रहो, हम भी (अपने तौर पर) अ़मल कर रहे हैं। और (उन आमाल के नतीजे के) तुम (भी) मुन्तज़िर रहो हम भी मुन्तज़िर हैं (सो बहुत जल्दी यह खुल जायेगा कि हक़ के ख़िलाफ़ कौनसा रास्ता है)।

और आसमानों और ज़मीन में जितनी ग़ैब की बातें हैं उनका इल्म ख़ुदा ही को है (तो बन्दों के आमाल तो ग़ैब भी नहीं उनका इल्म तो ज़्यादा बेहतर तरीक़े पर हक़ तआ़ला को है) और सब मामलात उसी की तरफ़ लौटाये जाएँगे (यानी इल्म व इख़्तियार दोनों अल्लाह ही के हैं फिर उसको क्या मुश्किल है, अगर आमाल की जज़ा व सज़ा दे दे, और जब वह ऐसा इल्म व इख़्तियार रखता है) तो (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप उसी की इबादत कीजिये (जिसमें तब्लीग़ भी दाख़िल है) और उसी पर भरोसा कीजिये (अगर तब्लीग़ में किसी तकलीफ़ पहुँचने का अन्देशा हो। यह बीच में एक अलग बात के तौर आप से ख़िताब फ़रमा दिया, आगे फिर वही मज़मून है, यानी) और आपका रब उन बातों से बेख़बर नहीं जो कुछ तुम (लोग) कर रहे हो (जैसा कि ऊपर ग़ैब के इल्म से आमाल का इल्म कहीं ज़्यादा अच्छी तरह साबित हो गया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़ुरआनी अन्दाज़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बड़ाई वाली शान की तरफ़ इशारा

सूरः हूद में पहले नबियों और उनकी क़ौमों के इब्रतनाक हालात व वाक़िआ़त ज़िक्र करने के बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और उम्मते मुहम्मदिया को चन्द हिदायतें दी गयी हैं जिनका सिलसिला पिछली आयत नम्बर 112 से शुरू हुआ है। इन हिदायतों में क़ुरआने करीम का यह बेहतरीन अन्दाज़े बयान किस क़द्र दिलकश और अदब सिखाने वाला है कि जिस काम का हुक्म मुस्बत (करने और साबित होने के) अन्दाज़ में दिया गया उसमें तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब बनाया गया है और उम्मते मुहम्मदिया को ताबे बनाकर

उसमें शामिल किया गया है। जैसेः

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ

(सो आपको जिस तरह हुक्म हुआ आप दीन की राह पर मुस्तक़ीम रहिये.....) और ऊपर बयान हुई आयत में 'नमाज़ क़ायम कर......' और उसके बाद 'और सब्र कीजिये....'। और जिस काम से रोका गया और उससे बचने की हिदायत की गयी तो उसमें डायरेक्ट उम्मत को ख़िताब किया गया। जैसे पिछली आयतों में 'ला ततग़ौ' और 'ला तर्कनू इलल्लज़ी-न ज़-लमू'। और ग़ौर किया जाये तो पूरे क़ुरआन में आ़म तौर पर यही अन्दाज़ और तरीक़ा इस्तेमाल हुआ है कि किसी काम के करने का मुख़ातब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बनाया गया है और किसी काम से रोकने और मनाही करने का मुख़ातब उम्मत को, जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शान की बड़ाई का इज़हार है, कि जो काम छोड़ देने के क़ाबिल हैं रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ुद ही उनसे परहेज़ करते हैं, आपकी सही व सलीम फ़ितरत और तबीयत ही अल्लाह तआ़ला ने ऐसी बनाई थी कि किसी बुरी इच्छा और बुरी चीज़ की तरफ़ मैलान ही न होता था, यहाँ तक कि ऐसी चीज़ें जो इस्लाम के शुरू ज़माने में जायज़ व हलाल थीं मगर अन्जाम कार उनका हराम होना अल्लाह तआ़ला के इल्म में तयशुदा था, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनके हलाल होने के ज़माने में कभी उनके पास नहीं गये, जैसे शराब या सूद और जुआ वग़ैरह।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब करके आपको और आपकी पूरी उम्मत को नमाज़ क़ायम करने का हुक्म दिया गया है। तफ़सीर के उलेमा और सहाबा व ताबिईन का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि इस जगह 'सलात' से मुराद फ़र्ज़ नमाज़ें हैं। (तफ़सीर बहरे मुहीत, तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

और 'नमाज़ को क़ायम करने' से मुराद उसकी पूरी पाबन्दी और हमेशगी है। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि नमाज़ को उसके तमाम आदाब के साथ अदा करना मुराद है। बाज़ ने फ़रमाया कि नमाज़ को उसके अफ़ज़ल वक़्त में अदा करना मुराद है, यही तीन क़ौल आयत 'अक़िमिस्सला-त........' (जो सूरः बनी इस्राईल में है) की तफ़सीर में नक़ल किये गये हैं और दर हक़ीक़त यह कोई विविधता नहीं, ये सभी चीज़ें ''नमाज़ क़ायम करने'' के मफ़्हूम में शामिल हैं।

नमाज़ को क़ायम करने का हुक्म देने के बाद नमाज़ के वक़्तों का संक्षिप्त बयान यह है कि 'दिन के दोनों सिरों यानी शुरू और आख़िर में, और रात के कुछ हिस्सों में नमाज़ क़ायम करो।' क्योंकि 'ज़ु-लफ़न्' 'ज़ुल्फ़तुन्' की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने एक हिस्से और टुकड़े के हैं, दिन के दोनों सिरों की नमाज़ के बारे में इस पर तो सब का इत्तिफ़ाक़ है कि पहले सिरे की नमाज़ फ़जर की नमाज़ है, आख़िरी सिरे की नमाज़ कुछ हज़रात ने मग़रिब को क़रार दिया है जो कि दिन के बिल्कुल ख़त्म पर है और कुछ हज़रात ने अ़सर की नमाज़ को दिन के आख़िरी सिरे की नमाज़ क़रार दिया है, क्योंकि दिन की आख़िरी नमाज़ वही है, मग़रिब का वक़्त दिन का

हिस्सा नहीं बल्कि दिन गुज़रने के बाद आता है। और 'ज़ु-लफ़म् मिनल्लैलि' यानी रात के हिस्सों की नमाज़ से मुराद मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत और एक बड़ी जमाअत- इमाम हसन बसरी, इमाम मुजाहिद, इमाम मुहम्मद बिन कअ़ब, इमाम क़तादा, इमाम ज़ह्हाक वग़ैरह हज़रात ने मग़रिब व इशा की नमाज़ को क़रार दिया है। और एक हदीस से इसी की ताईद होती है जिसमें इरशाद फ़रमाया है कि 'ज़ु-लफ़म् मिनल्लैलि' (रात के कुछ टुकड़ों में) मग़रिब व इशा हैं। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

जबकि 'त-र-फ़यिन्नहारि' (दिन के दोनों सिरों) से मुराद सुबह और अ़सर की नमाज़ हुई और 'ज़ु-लफ़म् मिनल्लैलि' (रात के कुछ टुकड़ों) से मग़रिब व इशा की तो इस आयत में चार नमाज़ों के वक़्तों का बयान आ गया, सिर्फ़ ज़ोहर की नमाज़ का बयान रह गया जो दूसरी आयतः

اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوْكِ الشَّمْسِ.

(सूरः बनी इस्राईल आयत 78) में आया है।

इस आयत में उक्त वक़्तों में 'नमाज़ क़ायम करने' के हुक्म के बाद इनका एक अ़ज़ीम फ़ायदा भी बतलाया गया है, किः

اِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّاٰتِ.

यानी नेक काम मिटा देते हैं बुरे कामों को। मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि "नेक काम" से तमाम नेक काम मुराद हैं, जिनमें नमाज़, रोज़ा, ज़कात, सदक़ात, अच्छा अख़्लाक़, अच्छा व्यवहार वग़ैरह सब दाख़िल हैं, मगर नमाज़ को इन सब में पहला दर्जा हासिल है। इसी तरह 'सय्यिआत' का लफ़्ज़ तमाम बुरे कामों को शामिल है चाहे वो बड़े गुनाह हों या छोटे, लेकिन क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अनेक इरशादात ने इसको छोटे गुनाहों के साथ मख़्सूस क़रार दिया है। मायने यह हैं कि नेक काम जिनमें नमाज़ सबसे अफ़ज़ल है, छोटे गुनाहों का कफ़्फ़ारा कर देते हैं और उनके गुनाह को मिटा देते हैं। क़ुरआने करीम में हैः

اِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَآئِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ.

यानी अगर तुम बड़े गुनाहों से बचते रहो तो हम तुम्हारे छोटे गुनाहों का ख़ुद कफ़्फ़ारा कर देंगे।

सही मुस्लिम की हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पाँच नमाज़ें और एक जुमा दूसरे जुमे तक और एक रमज़ान दूसरे रमज़ान तक उन तमाम गुनाहों का कफ़्फ़ारा (बदला और मिटाने वाले) हो जाते हैं जो उनके दरमियान सादिर हों, जबकि यह शख़्स बड़े गुनाहों से बचा रहा हो। मतलब यह है कि बड़े गुनाह तो बग़ैर तौबा के माफ़ नहीं होते मगर छोटे गुनाह दूसरे नेक काम- नमाज़, रोज़ा, सदक़ा वग़ैरह करने से ख़ुद भी माफ़ हो जाते हैं, मगर तफ़सीर बहरे मुहीत में मुहक़्क़िक़ीन उलेमा-ए-उसूल का यह क़ौल नक़ल है कि

छोटे गुनाह भी नेक काम करने से तभी माफ़ होते हैं जबकि आदमी उनके करने पर शर्मिन्दा हो और आईन्दा के लिये न करने का इरादा करे, उन पर जमा न रहे। हदीस की रिवायतों में जितने वाक़िआत कफ़्फ़ारा हो जाने के नक़ल किये गये हैं उन सब में यह वज़ाहत भी है कि उनका करने वाला जब अपने फ़ेल पर शर्मिन्दा हो और आईन्दा के लिये तौबा करे, इस पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसको गुनाह माफ़ हो जाने की ख़ुशख़बरी सुनाई। वल्लाहु आलम

हदीस की मशहूर व परिचित रिवायतों में बड़े गुनाह इन चीज़ों को बतलाया है:

1. अल्लाह तआ़ला की ज़ात या सिफ़ात में किसी को शरीक या बराबर क़रार देना।
2. जान-बूझकर किसी फ़र्ज़ नमाज़ का छोड़ना।
3. किसी को नाहक़ क़त्ल करना।
4. हराम कारी।
5. चोरी।
6. शराब पीना।
7. माँ-बाप की नाफ़रमानी।
8. झूठी क़सम खाना।
9. झूठी गवाही देना।
10. जादू करना।
11. सूद खाना।
12. यतीम का माल नाजायज़ तौर पर लेना।
13. जिहाद के मैदान से भागना।
14. पाकदामन औ़रतों पर तोहमत लगाना।
15. किसी का माल नाजायज़ तौर पर ग़सब करना (छीनना या दबाना)।
16. अ़हद करके उसे तोड़ना।
17. अमानत में ख़ियानत करना।
18. किसी को गाली देना।
19. किसी शख़्स को नाहक़ मुजरिम क़रार दे देना, वग़ैरह।

कबीरा और सग़ीरा यानी बड़े और छोटे गुनाहों की तफ़सील मुस्तक़िल रिसालों में उलेमा ने लिख दी हैं, मेरे रिसाले 'गुनाह-ए-बेलज़्ज़त' में भी मज़कूर है, वहाँ देखी जा सकती है।

बहरहाल ऊपर बयान हुई आयत से यह बात साबित हुई कि नेक काम करने से भी गुनाह माफ़ हो जाते हैं, इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बुरे काम के बाद नेक काम को कर लो तो वह उसकी बुराई को मिटा देगा, और फ़रमाया कि लोगों से अच्छे अख़्लाक़ के साथ मामला करो। (इब्ने कसीर, मुस्नद अहमद के हवाले से)

हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मुझे कोई वसीयत फ़रमाईये। आपने फ़रमाया कि "अगर तुमसे कोई

गुनाह हो जाये तो उसके बाद कोई नेक काम करो ताकि वह उसको मिटा दे।''

दर हक़ीक़त इन हदीसों में गुनाह से तौबा करने का मस्नून व पसन्दीदा तरीक़ा बतलाया गया है जैसा कि मुस्नद अहमद में हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर किसी मुसलमान से कोई गुनाह हो जाये तो उसको चाहिये कि वुज़ू करके दो रकअ़त नफ़िल अदा कर ले तो उस गुनाह की माफ़ी हो जायेगी। (ये तमाम रिवायतें तफ़सीर इब्ने कसीर में मौजूद हैं) इस नमाज़ को नमाज़-ए-तौबा ही कहा जाता है।

ذٰلِكَ ذِكْرٰى لِلذّٰكِرِيْنَ○

यानी यह एक नसीहत है नसीहत मानने वालों के लिये। इसमें 'ज़ालि-क' का इशारा क़ुरआने करीम की तरफ़ भी हो सकता है और अम्र व नही (हुक्म किये गये और मना किये गये) अहकाम की तरफ़ भी, जिनका ज़िक्र इससे पहले आया है, मुराद यह है कि यह क़ुरआन या इसके ज़िक्र किये हुए अहकाम उन लोगों के लिये हिदायत व नसीहत हैं जो नसीहत सुनने और मानने के आ़दी हैं। इसमें इशारा यह है कि हठधर्म, ज़िद्दी आदमी जो किसी चीज़ पर ग़ौर ही न करे वह हर हिदायत से मेहरूम रहता है।

وَاصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِيْنَ○

यानी आप सब्र व साबित-क़दमी (जमाव) के साथ रहें क्योंकि अल्लाह तआ़ला नेक अ़मल करने वालों का अज्र ज़ाया नहीं किया करते।

''सब्र'' के लफ़्ज़ी मायने बाँधने के हैं, इसी लिये अपने नफ़्स को क़ाबू में रखने के लिये भी ''सब्र'' बोला जाता है, जिसके मफ़्हूम में यह भी दाख़िल है कि नेक कामों के करने पर अपने नफ़्स को साबित-क़दम रखे और यह भी कि बुरे कामों में मुब्तला होने से उसको रोके। इस जगह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सब्र का हुक्म देने से यह मुराद भी हो सकती है कि जो अहकाम इन आयतों में आपको दिये गये हैं- मसलन इस्तिक़ामत (मुस्तक़ीम और सीधा रहने), नमाज़ क़ायम करने वग़ैरह इन पर आप मज़बूती से क़ायम रहें, और यह भी हो सकता है कि मुख़ालिफ़ों की मुख़ालफ़त और तकलीफ़ें देने पर सब्र की तालीम व हिदायत मक़सूद हो। और इसके बाद जो यह इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला मोहसिनीन यानी नेक काम करने वालों का अज्र बरबाद नहीं करते, इसमें बज़ाहिर ''मोहसिनीन'' से मुराद वे लोग हैं जो उक्त आयतों के करने वाले और न करने वाले अहकाम के पाबन्द हों। यानी दीन में इस्तिक़ामत (जमाव और मुस्तक़ीम रहने) का मक़ाम उनको हासिल हो, शरीअ़त की हदों की पूरी रियायत करते हों, ज़ालिमों के साथ दोस्ती और बेज़रूरत ताल्लुक़ न रखते हों, नमाज़ को आदाब के साथ उसके अफ़ज़ल वक़्त में अदा करने के पाबन्द हों, दीन के तमाम अहकाम पर साबित-क़दम (जमने वाले) हों।

और ख़ुलासा इन सब का वही है जो 'एहसान' की तारीफ़ में ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला की इताअ़त व इबादत इस तरह करो कि गोया तुम अल्लाह तआ़ला को देख रहे हो, या कम से कम यह कि अल्लाह तआ़ला तुम्हें देख रहे हैं। जब इनसान को हक़ तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात के यक़ीन का यह दर्जा हासिल हो जाये तो उसके तमाम काम और बातें ख़ुद-बख़ुद सही हो जाती हैं। पहले बुज़ुर्गों में तीन कलिमे ऐसे मारूफ़ (मशहूर व परिचित) थे जो आपस में एक दूसरे को लिखा करते थे। वो याद रखने के क़ाबिल हैं- अव्वल यह कि जो शख़्स आख़िरत के लिये काम में मशग़ूल हो जाता है अल्लाह तआ़ला उसके दुनिया के कामों को ख़ुद-बख़ुद दुरुस्त फ़रमा देते हैं और उनकी ज़िम्मेदारी ख़ुद ले लेते हैं। दूसरे यह कि जो शख़्स अपनी बातिनी (अन्दरूनी) हालत को दुरुस्त कर ले कि दिल का रुख़ सबसे हटाकर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ फेर दे तो अल्लाह तआ़ला उसकी ज़ाहिरी हालत को ख़ुद-बख़ुद दुरुस्त फ़रमा देते हैं। तीसरे यह कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला के साथ अपने मामले को सही व दुरुस्त कर ले तो अल्लाह तआ़ला उसके और तमाम लोगों के बीच के मामलात को ख़ुद दुरुस्त फ़रमा देते हैं। इन तीन कलिमात की असल इबारत यह है:

وَكَانَ اَهْلُ الْخَيْرِ يَكْتُبُ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ بِثَلَاثِ كَلِمٰتٍ، مَنْ عَمِلَ لِاٰخِرَتِهٖ كَفَاهُ اللّٰهُ اَمْرَ دُنْيَاهُ، وَمَنْ اَصْلَحَ سَرِيْرَتَهٗ اَصْلَحَ اللّٰهُ عَلَانِيَتَهٗ، وَمَنْ اَصْلَحَ فِيْمَا بَيْنَهٗ وَبَيْنَ اللّٰهِ اَصْلَحَ اللّٰهُ مَابَيْنَهٗ وَبَيْنَ النَّاسِ. (تفسیر روح البیان ج۴ ص۱۳۱)

तीसरी और चौथी आयतों में पिछली क़ौमों पर अल्लाह का अ़ज़ाब नाज़िल होने की वजह और लोगों को उससे बचने की हिदायत इस तरह दी गयी हैं कि फ़रमायाः

"इन पिछली क़ौमों में अफ़सोस है कि ऐसा न हुआ कि उनमें कुछ भी समझदार नेक लोग होते जो अपनी क़ौम को फ़साद करने से बाज़ रखते सिवाय थोड़े से लोगों के, जिन्होंने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की पैरवी की, और वही अ़ज़ाब से महफ़ूज़ रहे, और बाक़ी पूरी क़ौम दुनिया की लज़्ज़तों में फंसकर जराईम (बुराईयों और अपराधों) की आ़दी बन गयी।"

इस आयत में समझदार लोगों को लफ़्ज़ 'उलू बक़िय्यतिन्' से ताबीर किया है। 'बक़िय्यतिन्' का लफ़्ज़ बाक़ी बची चीज़ के लिये बोला जाता है, और इनसान की आ़दत यह है कि जो चीज़ सबसे ज़्यादा प्यारी व महबूब होती है उसको हर हाल में अपने लिये महफ़ूज़ और बाक़ी रखने का एहतिमाम करता है, ज़रूरत पड़ने पर दूसरी सारी चीज़ें क़ुरबान कर देता है मगर उसको नहीं देता। इसी लिये अ़क़्ल व समझ को "बक़िय्या" कहा जाता है कि वह सबसे ज़्यादा प्यारी है।

चौथी आयत में फ़रमाया कि आपका रब शहरों और बस्तियों को ज़ुल्म से हलाक नहीं करता जबकि उनके बसने वाले नेक काम करने वाले यानी मुसलमान हों। मतलब यह है कि ख़ुदा तआ़ला के यहाँ ज़ुल्म व ज़्यादती की कोई संभावना नहीं, जिनको हलाक किया जाता है वह उसी के मुस्तहिक़ होते हैं। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इस आयत में ज़ुल्म से मुराद शिर्क है और 'मुस्लिहून' से मुराद वे लोग हैं जो बावजूद काफ़िर व मुश्रिक होने के मामलात और अख़्लाक़ अच्छे रखते हैं, किसी को नुक़सान और तकलीफ़ नहीं पहुँचाते, झूठ नहीं बोलते, धोखा नहीं देते, और आयत का मतलब यह है कि दुनिया का अ़ज़ाब किसी क़ौम पर महज़ उनके

मुश्रिक व काफ़िर होने की वजह से नहीं आता जब तक कि वे आमाल व अख़्लाक़ में भी ऐसे काम न करने लगें जिनसे ज़मीन में फ़साद फैलता है। पिछली जितनी क़ौमों पर अ़ज़ाब आये उनके ख़ास-ख़ास बुरे आमाल उसका सबब बने। नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम को तरह-तरह की तकलीफ़ें पहुँचायीं, क़ौमे शुऐब ने नाप-तौल में कमी करके फ़साद फैलाया, क़ौमे लूत ने बदतरीन क़िस्म की बदकारी को अपना चलन बनाया, क़ौमे मूसा व ईसा ने अपने पैग़म्बरों पर ज़ुल्म ढहाये, क़ुरआने करीम ने दुनिया में उन पर अ़ज़ाब आने का सबब इन्हीं आमाल और हरकतों को बतलाया है, सिर्फ़ कुफ़्र व शिर्क की वजह से दुनिया में अ़ज़ाब नहीं आता, इसकी सज़ा तो जहन्नम की हमेशा वाली आग है। इसी लिये कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि मुल्क व सल्तनत कुफ़्र व शिर्क के साथ तो चल सकते हैं मगर ज़ुल्म व ज़्यादती के साथ नहीं चल सकते।

अच्छा और बुरा इख़्तिलाफ़ (मतभेद)

पाँचवीं आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया कि अगर अल्लाह तआ़ला चाहता तो सब इनसानों को एक ही उम्मत व मिल्लत बना देता। मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला चाहते तो तमाम इनसानों को ज़बरदस्ती इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर कर डालते, सब के सब मुसलमान ही हो जाते, उनमें कोई इख़्तिलाफ़ (मतभेद व विवाद) न रहता, मगर हिक्मत के तक़ाज़े की वजह से इस दुनिया में अल्लाह तआ़ला किसी को किसी अ़मल पर मजबूर नहीं करते बल्कि उसने इनसान को एक क़िस्म का इख़्तियार सौंप दिया है उसके मातहत वह अच्छा या बुरा जो चाहे अ़मल कर सकता है, और इनसानों की तबीयतें विभिन्न हैं इसलिये राहें भिन्न और अलग-अलग होती हैं और अ़मल मुख़्तलिफ़ होते हैं। इसका नतीजा यह है कि कुछ लोग हमेशा हक़ और सच्चे दीन से इख़्तिलाफ़ (झगड़ा) करते ही रहेंगे सिवाय उन लोगों के जिन पर अल्लाह तआ़ला ने रहमत फ़रमाई, यानी अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की पैरवी करने वाले।

इससे मालूम हुआ कि इख़्तिलाफ़ (विवाद) से मुराद इस जगह हक़ दीन और अम्बिया की तालीम की मुख़ालफ़त है, इज्तिहादी इख़्तिलाफ़ जो दीन के इमामों और मुस्लिम फ़ुक़हा में होना लाज़िमी है और सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के ज़माने से होता चला आया है, वह इसमें दाख़िल नहीं, न वह रहमत-ए-इलाही के ख़िलाफ़ है, बल्कि हिक्मत व रहमत का तक़ाज़ा है। जिन हज़रात ने मुज्तहिद इमामों के इख़्तिलाफ़ात (मतभेदों) को इस आयत की रू से ग़लत, ख़िलाफ़े रहमत क़रार दिया है यह ख़ुद आयत के मज़मून के भी ख़िलाफ़ है और सहाबा व ताबिईन के तरीक़े और अ़मली नमूने के भी। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम।

अल्लाह तआ़ला का शुक्र है कि सूरः हूद और साथ ही तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन की चौथी जिल्द पूरी हुई।

कुछ अलफ़ाज़ और उनके मायने

इस्लामी महीनों के नामः- मुहर्रम, सफ़र, रबीउल-अव्वल, रबीउस्सानी, जमादियुल-अव्वल, जमादियुस्सानी, रजब, शाबान, रमज़ान, शव्वाल, ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा।

चार मशहूर आसमानी किताबें

तौरातः- वह आसामानी किताब जो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

ज़बूरः- वह आसमानी किताब जो हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

इन्जीलः- वह आसमानी किताब जो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर उतरी।

क़ुरआन मजीदः- वह आसामानी किताब जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल हुई। यह आख़िरी आसमानी किताब है।

चार बड़े फ़रिश्ते

हज़रत जिब्राईलः- अल्लाह तआ़ला का एक ख़ास फ़रिश्ता जो अल्लाह का पैग़ाम (वही) उसके रसूलों के पास लाता था।

हज़रत इस्राफ़ीलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो इस दुनिया को तबाह करने के लिये सूर फूँकेगा।

हज़रत मीकाईलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो बारिश का इन्तिज़ाम करने और मख़्लूक़ को रोज़ी पहुँचाने पर मुक़र्रर है।

हज़रत इज़्राईलः- अल्लाह का एक ख़ास फ़रिश्ता जो जानदारों की जान निकालने पर लगाया गया है।

रिश्ते और निस्बतें

अबूः- बाप (जैसे अबू हुज़ैफ़ा)।

इब्नः- बेटा, पुत्र (जैसे इब्ने उमर)।

उम्मः- माँ (जैसे उम्मे कुलसूम)।

बिन्तः- बेटी, पुत्री (जैसे बिन्ते उमर)।

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

कफ़्फ़ाराः- गुनाह को धो देने वाला, गुनाह या ख़ता का बदला, क़ुसूर का दंड जो ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से मुक़र्रर है। प्रायशचित।

क़ियासः- अन्दाज़ा, अटकल, जाँच।

क़िसासः- बदला, इन्तिक़ाम, ख़ून का बदला ख़ून।

ख़ल्कः- मख़्लूक़, सृष्टि।

ख़ालिकः- पैदा करने वाला। अल्लाह तआ़ला का एक सिफ़ाती नाम।

ख़ियानतः- दग़ा, धोखा, बेईमानी, बद्-दियानती, अमानत में चोरी।

ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ः- आ़जिज़ी करना, गिड़गिड़ाना, सर झुकाना, विनम्रता इख़्तियार करना।

ख़ुतबाः- तक़रीर, नसीहत, संबोधन।

ख़ुलाः- बीवी का कुछ माल वग़ैरह देकर अपने पति से तलाक़ लेना।

ग़ज़वाः- वह जिहाद जिसमें ख़ुद रसूले ख़ुदा सल्ल. शरीक हुए हों। दीनी जंग।

ग़ैबः- ग़ैर-मौजूदगी, पोशीदगी की हालत, जो आँखों से ओझल हो। जो अभी भविष्य में हो।

ज़माना-ए-जाहिलीयतः- अ़रब में इस्लाम से पहले का ज़माना और दौर।

ज़िरहः- लोहे का जाली दार कुर्ता जो लड़ाई में पहनते हैं। आजकल बुलेट-प्रूफ़ जाकेट।

जिहादः- कोशिश, जिद्दोजहद, दीन की हिमायत के लिये हथियार उठाना, जान व माल की क़ुरबानी देना।

ज़िनाः- बदकारी, हराम कारी।

जिज़याः- वह टैक्स जो इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों से लिया जाता है। बच्चे, बूढ़े, औ़रतें और धर्मगुरु इससे बाहर रहते हैं। इस टैक्स के बदले हुकूमत उनके जान माल आबरू की सुरक्षा करती है।

ज़िहारः- एक क़िस्म की तलाक़, फ़िक़्हा की इस्तिलाह में मर्द का अपनी बीवी को माँ बहन या उन औ़रतों से तशबीह देना जो शरीअ़त के हिसाब से उस पर हराम हैं।

टट्टीः- बाँस का छप्पर, पर्दा खड़ा करना, क़नात।

तक़दीरः- वह अन्दाज़ा जो अल्लाह तआ़ला ने पहले दिन से हर चीज़ के लिये मुक़र्रर कर दिया है। नसीब, क़िस्मत, भाग्य।

तर्काः- मीरास, मरने वाले की जायदाद व माल।

तौहीदः- एक मानना, ख़ुदा तआ़ला के एक होने पर यक़ीन करना।

दारुल-हरबः- वह मुल्क जहाँ ग़ैर-मुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को मज़हबी फ़राईज़ के अदा करने से रोका जाये।

दारुल-इस्लामः- वह मुल्क जिसमें इस्लामी हुकूमत हो।

अ़ज़ाबः- गुनाह की सज़ा, तकलीफ़, दुख, मुसीबत।

अज्रः- नेक काम का बदला, सवाब, फल।

अ़क़ीदाः- दिल में जमाया हुआ यक़ीन, ईमान, एतिबार, आस्था आदि। इसका बहुवचन अ़क़ीदे और अ़क़ायद आता है।

अ़दमः- नापैदी, न होना।

अबदः हमेशगी। वह ज़माना जिसकी कोई इन्तिहा न हो।

(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी एम. ए. अ़लीग.)